भा० दि० जैन संघग्रन्थमालायाः प्रथमपुष्पस्य नवमो दलः

श्रीयतिवृषभाचार्यरचितचूर्णिसूत्रसमन्वितम्
श्रीभगवद्गुणधराचार्यप्रणीतम्

कसायपाहुडं

तयोश्च
श्रीवीरसेनाचार्यविरचिता जयधवला टीका
[षष्ठोऽधिकारः बन्धकः २]

सम्पादकौ

पं० फूलचन्द्र
सिद्धान्तशास्त्री
सम्पादक महाबन्ध, सहसम्पादक
धवला

पं० कैलाशचन्द्र
सिद्धान्तरत्न, सिद्धान्तशास्त्री, न्यायतीर्थ
प्रधानाचार्य स्याद्वाद महाविद्यालय
काशी

प्रकाशक
मन्त्री साहित्य विभाग
भा० दि० जैन संघ, चौरासी, मथुरा,

वि० सं० २०२०] वीरनिर्वाणाब्द २४८९ [ई० सं० १९६३

मूल्यं रूप्यकद्वादशकम्

भा० दि० जैनसंघ-ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालाका उद्देश्य

प्राकृत संस्कृत आदि भाषाओंमें निबद्ध दि० जैनागम,
दर्शन, साहित्य, पुराण आदिका यथासम्भव
हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित करना
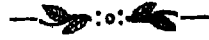
सञ्चालक

भा० दि० जैनसंघ

ग्रन्थाङ्क १-९

प्राप्तिस्थान
मैनेजर
भा० दि० जैनसंघ
चौरासी, मथुरा

मुद्रक
नया संसार प्रेस, वाराणसी | कैलाश प्रेस, वाराणसी

स्थापनाब्द] प्रति ८०० [वी० नि० सं० २४६८

Sri Dig. Jain Sangha Granthamala No 1-IX

KASAYA-PAHUDAM
IX
BANDHAK

BY

GUNADHARACHARYA

WITH

Churni Sutra Of Yativrashabhacharya

AND

THE JAYADHAVALA COMMENTARY OF

VIRASENACHARYA THERE-UPON

EDITED BY

Pandit Phulchandra Siddhantashastri

EDITOR MAHABANDHA

JOINT EDITOR DHAVALA.

Pandit Kailashachandra Siddhantashastri

Nyayatirtha, Siddhantaratna,

Pradhanadhyapak, Syadvada Digambara Jain

Vidyalaya, Varanasi.

PUBLISHED BY

THE SECRETARY PUBLICATION DEPARTMENT.

THE ALL-INDIA DIGAMBAR JAIN SANGHA

CHAURASI, MATHURA

VIKRAMA S. 2020 VIRA-SAMVAT 2489 1963 A. C

Sri Dig. Jain Sangha Granthamala

Foundation year—] **[—Vira Niravan Samvat 2468**

Aim Of the Series:—

Publication of Digambara Jain Siddhanta, Darsana. Purana, Sahitya and other works in Prakrit Sanskrit etc, possibly with Hindi Commentary and Translation

DIRECTOR—

SRI BHARATA VARSHIYA DIGAMBARA JAIN SANGHA

NO. 1. VOL. IX.

To be had from:—

THE MANAGER
SRI DIG. JAIN SANGHA,
CHAURASI, MATHURA.

Printed by

Naya Sansar Press,
Bhadaini, Varanasi-1

Kailash Press,
Sonarpura, Varanasi-1

800 Copies, **Price Rs. Twelve only**

प्रकाशक की ओरसे

कसाय पाहुडका नौवाँ भाग पाठकोंके करकमलोंमें अर्पित है। हमने इरादा किया था कि शीघ्रसे शीघ्र कसायपाहुडके शेष भागोंका प्रकाशन हो जाये। किन्तु कहावत प्रसिद्ध है कि 'श्रेयांसि बहुविघ्नानि' अच्छे कार्यमें बहुत विघ्न आते हैं। तदनुसार इस सत्कार्यमें भी महान विघ्न उपस्थित हो गया। प्रारम्भसे ही कसायपाहुडके सम्पादनादिके भारको वहन करनेवाले पं० फूलचन्द्रजी सिद्धान्तशास्त्रीको मोतियाबिन्दने कार्य करनेसे लाचार कर दिया। लगभग एक डेढ़ वर्ष तक पण्डितजी बहुत परेशान रहे। सफल उपचारसे अब वह कार्यक्षम हो गये हैं। यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है। इसीसे यह भाग दो वर्षके पश्चात् प्रकाशित हो रहा है।

सिद्धान्त ग्रन्थोंके विशिष्ट अभ्यासी तथा स्वाध्याय प्रेमी बन्धुद्वय श्री ब्र० पं० रतनचन्दजी तथा श्री ब्र० पं० नेमिचन्द्रजी सहारनपुर कसायपाहुडके प्रकाशनमें बहुत रुचि रखते हैं और विघ्नबाधाओंको दूर करनेमें क्रियात्मक सहयोग देकर सतत् प्रेरणा करते रहते हैं। आपकी ही प्रेरणासे जगाधरीके स्वाध्याय प्रेमी लाला इन्द्रसेनजीने इस भागके प्रकाशनमें २५००) रुपया प्रदान किया है। अतः हम लालाजीके साथ उक्त बन्धुद्वयका भी आभार मानते हुए धन्यवाद प्रदान करते हैं।

संघके अध्यक्ष दानवीर सेठ भागचन्द्जी डोंगरगढ़ और उनकी धर्मशीला पत्नीके द्वारा प्रदत्त राशिका सहयोग इस भागके प्रकाशनमें भी रहा है। अतः हम इन धर्मप्रेमी दम्पत्तिको भी धन्यवाद प्रदान करते हैं।

पं० फूलचन्द्जी शास्त्रीने पूर्ण कार्यक्षम न होते हुए भी जिस तत्परतासे इस भागको पूर्ण किया है उसके लिए वे भी धन्यवादके पात्र हैं।

यह भाग काफी बड़ा हो गया है। फिर भी इसका मूल्य वही बारह रुपया रखा गया है।

जयधवला कार्यालय
वाराणसी
वि० नि० सं० २४८६

कैलाशचन्द्र शास्त्री
मंत्री साहित्य विभाग
भा० दि० जैन संघ

भा० दि० जैन संघके साहित्य विभागके सदस्योंकी नामावली

संरक्षक सदस्य

१३०००) दानवीर सेठ भागचन्दजी डोंगरगढ़
८१२५) दानवीर साहू शान्तिप्रसादजी कलकत्ता
५०००) स्व० श्रीमन्त सर सेठ हुकुमचन्दजी इन्दौर
५०००) सेठ छदामीलालजी फिरोजाबाद
३००१) सेठ नानचन्दजी हीरालालजी गांधी उस्मानाबाद
२५००) लाला इन्द्रसेनजी जगाधरी

सहायक सदस्य

१२५०) सेठ भगवानदासजी मथुरा
१०००) बा० कैलाशचन्दजी S. D. O. बम्बई
१००१) सकल दि० जैन परवार पञ्चान नागपुर
१००१) सेठ श्यामलालजी फर्रुखाबाद
१००१) सेठ घनश्यामदासजी सरावगी लालगढ़
[रा० ब० सेठ चुन्नीलालजीके सुपुत्र स्व० निहालचन्दजीकी स्मृति में]
१०००) लाला रघुवीरसिंहजी जैना वाच कम्पनी देहली
१०००) रायसाहब लाला उल्फतरायजी देहली।
१०००) स्व० लाला महावीर प्रसाद जी ठेकेदार देहली।
१०००) स्व० लाला रतनलालजी मादिपुरिये देहली
१०००) लाला धूमीमल धर्मदास ,,
१००१) श्रीमती मनोहरीदेवी मातेश्वरी
लाला बसन्तलालजी फिरोजीलालजी ,,
१०००) बाबू प्रकाशचन्दजी खण्डेलवाल ग्लासवर्क्स सासनी
१०००) लाला छीतरमल शंकरलालजी मथुरा
१००१) सेठ गणेशीलाल आनन्दीलालजी आगरा
१०००) सकल दि० जैन पञ्चान गया
१०००) सेठ सुखानन्द शंकरलालजी मुल्तानवाले देहली
१००१) सेठ मगनमलजी हीरालालजी पाटनी आगरा
१००१) स्व० श्रीमती चन्द्रावतीजी धर्मपत्नी स्व० साहू रामस्वरूपजी नजीबाबाद
१००१) सेठ सुदर्शनलालजी जसवन्तनगर
१०००) प्रोफेसर खुशालचन्दजी गोरावाला वाराणसी

[स्व० पूज्य पिता शाह फुन्दीलालजी तथा मातेश्वरी केशरबाई गोरावालाकी स्मृति में]

विषय-परिचय

यह बन्धक नामका छटा अधिकार है। इसके बन्ध और संक्रम ये दो भेद हैं। जिस अनुयोग द्वारमें कर्मवर्गणाओंका मिथ्यात्व आदिके निमित्तसे प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेशके भेदसे चार प्रकारके कर्मरूप परिणमकर आत्मप्रदेशोंके साथ एक क्षेत्रावगाहरूप बन्धका व्याख्यान किया गया है वह बन्ध अधिकार है और जिसमें बन्धरूप मिथ्यात्व आदि कर्मोंका प्रकृति, स्थिति, अनुभाग और प्रदेश के भेद से अन्य कर्मरूप परिणमनका विधान किया गया है वह संक्रम अधिकार है। इस प्रकार इस बन्धक अधिकारमें बन्ध और संक्रम इन दो विषयोंका व्याख्यान किया गया है। प्रश्न यह है कि बन्धक अधिकारमें बन्धका व्याख्यान हो यह तो ठीक है परन्तु उसमें संक्रमका व्याख्यान कैसे किया जा सकता है? समाधान यह है कि संक्रमका भी बन्धमें ही अन्तर्भाव होता है, क्यों कि बन्धके दो भेद हैं— एक अकर्मबन्ध और दूसरा कर्मबन्ध। जो कार्मणवर्गणाएँ कर्मरूप परिणत नहीं हैं उनका कर्मरूप परिणत होना यह अकर्मबन्ध है और कर्मरूप परिणत पुद्गलस्कन्धोंका एक कर्मसे अपने सजातीय अन्य कर्म रूप परिणमना कर्मबन्ध है। यही कारण है कि इस बन्धक अधिकारमें बन्ध और संक्रम दोनोंका समावेश किया है। इस विषयका विशेष व्याख्यान करनेके लिए 'कदि पयडीओ बंधदि' २३ संख्यावाली मूलगाथा आई है और इसी आधारपर आचार्य यतिवृषभने अपने उत्तर भेदों के साथ बन्धक अधिकारके अन्तर्गत बन्ध और संक्रम ये दो अधिकार सूचित किये हैं। उनमेंसे चारों प्रकारके बन्धका विस्तृत व्याख्यान अन्यत्र बहुत बार या विस्तार से किया गया जानकर गुणधर आचार्य और यतिवृषभ आचार्य दोनोंने यहाँ उसका व्याख्यान न कर मात्र संक्रमका विशेष व्याख्यान किया है।

संक्रम

यतिवृषभ आचार्यने संक्रमका उपक्रम पाँच प्रकारका किया है—आनुपूर्वी, नाम, प्रमाण, वक्तव्यता और अर्थाधिकार। उसके बाद संक्रमका निक्षेप करते हुए वह नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके भेदसे छह प्रकारका बतलाकर कौन नय किन निक्षेपरूप संक्रमोंको स्वीकार करता है इसका व्याख्यान किया है और अन्तमें क्षेत्रसंक्रम, कालसंक्रम और भावसंक्रमका खुलासा करनेके साथ नोआगमद्रव्यसंक्रमनिक्षेपके कर्म और नोकर्म ऐसे दो भेद करके तथा उनका संक्षेपमें व्याख्यान करते हुए कर्मसंक्रमके प्रकृति, स्थिति अनुभाग और प्रदेश ऐसे चार भेद करके और प्रकृतिसंक्रमको भी एकैकप्रकृतिसंक्रम और प्रकृतिस्थानसंक्रम ऐसे दो भेद करके प्रकृतमें प्रकृतिसंक्रमसे प्रयोजन है यह बतलाकर उसके व्याख्यानका प्रारम्भ किया है।

प्रकृतिसंक्रम

प्रकृतिसंक्रमके व्याख्यानमें २४, २५ और २६ संख्याकी तीन गाथाएँ आई हैं। उनमें से प्रथम गाथामें पाँच प्रकारके उपक्रम, चार प्रकारके निक्षेप, नयविधि और आठ प्रकारके निर्गमका संकेत कर दूसरी गाथामें प्रकृतिसंक्रमके एकैकप्रकृतिसंक्रम और प्रकृतिस्थानसंक्रम ऐसे दो भेद करके संक्रममें प्रतिग्रह-विधि उत्तम और जघन्यके भेदसे दो प्रकारकी बतलाई है। तथा तीसरी गाथामें

निर्गमके आठ भेदोंका निर्देश करते हुए प्रकृतिसंक्रमके उक्त दोनों भेदोंमें संक्रम, असंक्रम, प्रतिग्रहविधि और अप्रतिग्रहविधि इन चारोंको दो दो प्रकारका बतलाया है। यह तीन मूलगाथाओंका विषयस्पर्श है। आचार्य यतिवृषभने अपने चूर्णिसूत्रों द्वारा इन गाथाओंके प्रत्येक पदका स्वयं खुलासा किया है। तथा जयधवला टीकामें भी इसपर विशेष प्रकाश डाला गया है।

एकैकप्रकृतिसंक्रम

आगे एकैकप्रकृतिसंक्रममें एकैकप्रकृति असंक्रम, प्रकृति प्रतिग्रह और प्रकृति अप्रतिग्रह इन अन्य तीन निर्गमोंको अन्तर्भूत करके उसका २४ अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे निरूपण किया है। वे २४ अनुयोगद्वार ये हैं—समुत्कीर्तना, सर्वसंक्रम, नोसर्वसंक्रम, उत्कृष्टसंक्रम, अनुत्कृष्टसंक्रम, जघन्यसंक्रम, अजघन्यसंक्रम, सादिसंक्रम, अनादिसंक्रम, ध्रुवसंक्रम, अध्रुवसंक्रम, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल, अन्तर, नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, सन्निकर्ष, भाव और अल्पबहुत्व। इनमेंसे प्रारम्भके ११ अनुयोगद्वारोंका सूत्रकारने वर्णन नहीं किया है। जयधवलामें उनका उच्चारणाके अनुसार निर्देश किया गया है। उसके अनुसार खुलासा इस प्रकार है—

समुत्कीर्तना—ओघसे सब प्रकृतियोंका संक्रम होता है। चारों गतियोंमें भी इस प्रकार जानना चाहिए। मात्र अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धिमें सम्यक्त्वका असंक्रम है।

सर्व नोसर्वसंक्रम—सब प्रकृतियोंका संक्रम करनेवालेके सर्वसंक्रम होता है और उनसे कम प्रकृतियोंका संक्रम करनेवालेके नोसर्वसंक्रम होता है।

उत्कृष्ट-अनुत्कृष्टसंक्रम—२७ प्रकृतियोंका संक्रम करनेवालेके उत्कृष्टसंक्रम होता है और इनसे कमका संक्रम करनेवालेके अनुत्कृष्टसंक्रम होता है।

जघन्य अजघन्यसंक्रम—सबसे कम प्रकृतियोंका संक्रम करनेवाले के जघन्यसंक्रम होता है और इससे अधिकका संक्रम करनेवालेके अजघन्यसंक्रम होता है। यहाँ संख्याकी अपेक्षा उत्कृष्ट-अनुत्कृष्ट तथा जघन्य-अजघन्यका विचार करना चाहिए।

सादि-अनादि-ध्रुव-अध्रुवसंक्रम - ओघसे दर्शन मोहनीयकी तीन प्रकृतियोंका सादि और अध्रुवसंक्रम होता है, शेषका सादि आदि चारों प्रकारका संक्रम होता है। चारों गतियोंमें सबका सादि और अध्रुवसंक्रम होता है।

एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व—इस अनुयोगद्वारमें मिथ्यात्व आदि २८ प्रकृतियोंके संक्रमके स्वामीका निर्देश किया है। उदाहरणार्थ मिथ्यात्वका संक्रम सब वेदकसम्यग्दृष्टि जीव और सासादनके बिना उपशमसम्यग्दृष्टि जीव करते हैं। वेदकसम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वका संक्रम करते हैं, चूर्णिके इस वचनका खुलासा करते हुए उसकी जयधवला टीकामें बतलाया है कि जिन वेदक सम्यग्दृष्टियोंके संक्रमके योग्य मिथ्यात्वकी सत्ता है, वेदक सम्यग्दृष्टियोंमें वे ही उसका संक्रम करते हैं। इसी प्रकार सब प्रकृतियोंके संक्रमके स्वामीका निर्देश इस अनुयोगद्वारमें किया गया है। प्रसंगसे यह भी बतला दिया है कि दर्शन मोहनीयका चरित्रमोहनीयमें और चरित्रमोहनीयका दर्शनमोहनीयमें संक्रम नहीं होता। जयधवला टीकामें चूर्णिसूत्रोंके अर्थका स्पष्टीकरण कर इतना और बतलाया है कि चारों गतियोंमें इसीप्रकार जानना चाहिए। मात्र अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सम्यक्त्वका संक्रम सम्भव न होनेसे २७ प्रकृतियोंके संक्रमका निर्देश किया है।

एक जीवकी अपेक्षा काल—इसमें एक जीवकी अपेक्षा २८ प्रकृतियोंके संक्रमके कालका निर्देश किया गया है। उदाहरणार्थ मिथ्यात्वके संक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक छ्यासठ सागर बतलाया है। जयधवला टीकामें ओघसे और आदेशसे चारों गतियोंमें एक जीवकी अपेक्षा २८ प्रकृतियोंके संक्रमका काल तो बतलाया ही है। साथ ही इनके असंक्रमका भी जघन्य और उत्कृष्ट काल बतलाया है।

एक जीवकी अपेक्षा अन्तर—इसमें एक जीवकी अपेक्षा २८ प्रकृतियोंके संक्रमके अन्तरकालका विधान किया है। उदाहरणार्थ मिथ्यात्व और सम्यक्त्व इन दो प्रकृतियोंके संक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलप्रमाण बतलाया है तथा जयधवला टीकामें चारों गतियोंमें भी एक जीवकी अपेक्षा सब प्रकृतियोंके संक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर बतलाया है।

नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचय—इस अनुयोगद्वारका प्रारम्भ करते हुए चूर्णिसूत्रमें नाना जीवोंसे कौन जीव लिये गये हैं ऐसी शंकाको ध्यानमें रखकर सर्वप्रथम यह सूचना की है कि जिन जीवोंके मोहनीय कर्मप्रकृतियोंकी सत्ता है वे ही यहाँ प्रकृत हैं। उसके बाद मिथ्यात्व आदि २८ प्रकृतियोंके संक्रामकों और असंक्रामकोंको ध्यानमें रखकर जहाँ जितने भंग सम्भव हैं उनका निर्देश किया है। जयधवला टीकामें चारों गतियोंमें इसका विचार अलगसे किया है।

भागाभाग—परिमाण-क्षेत्र-स्पर्शन—इन चारों अनुयोगद्वारों पर चूर्णिसूत्र नहीं हैं। मात्र उच्चारणाके अनुसार जयधवला टीकामें इनकी मीमांसा की गई है। भागाभागमें २८ प्रकृतियोंमेंसे प्रत्येक प्रकृतिके संक्रामक और असंक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं यह बतलाया है। परिमाणमें २८ प्रकृतियोंमेंसे प्रत्येक प्रकृतिके संक्रामक जीवोंकी संख्या ओघसे और चारों गतियोंमें कहाँ कितनी है यह बतलाया है। इसी प्रकार क्षेत्र अनुयोगद्वारमें क्षेत्रका और स्पर्शन अनुयोगद्वारमें स्पर्शनका विचार किया है।

नाना जीवोंकी अपेक्षा काल—इसमें नाना जीवोंकी अपेक्षा प्रत्येक प्रकृतिके संक्रमका काल सर्वदा बतलाया है। जयधवला टीकामें चारों गतियोंमें भी कालका निर्देश किया है।

नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर—इसमें चूर्णिसूत्र और जयधवला टीका द्वारा उक्त पद्धतिसे अन्तरका विधान किया है।

सन्निकर्ष—इसमें किस प्रकृतिका संक्रामक किस पद्धतिसे किस प्रकृतिका संक्रामक या असंक्रामक होता है यह बतलाया है। जयधवलामें चारों गतियोंकी अपेक्षा अलगसे व्याख्यान किया है।

भाव—इसपर चूर्णिसूत्र नहीं हैं। जयधवलामें बतलाया है कि सर्वत्र एक औदयिक भाव है।

अल्पबहुत्व—इसमें प्रत्येक प्रकृतिके संक्रामक जीवों की अपेक्षा अल्पबहुत्वका निर्देश किया है। यहां इतना विशेष जानना चाहिए कि ओघसे अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा चूर्णिसूत्रों द्वारा तो की ही है, चारों गतियों और एकेन्द्रिय मार्गणाकी अपेक्षा भी अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा चूर्णिसूत्रों द्वारा की गई है।

प्रकृतिस्थानसंक्रम

इस अनुयोगद्वारके प्ररूपणमें २७ से लेकर ५८ तक ३२ गाथाएँ आई हैं। इनमें संक्रम स्थान कितने हैं और वे कौन-कौन हैं, प्रतिग्रहस्थान कितने हैं और वे कौन कौन हैं, किन संक्रमस्थानोंका किन प्रतिग्रहस्थानोंमें संक्रम होता है, इनके स्वामी कौन हैं, इनकी साद्यादि प्ररूपणा किस प्रकारकी है और एक तथा नाना जीवोंकी अपेक्षा काल आदि क्या हैं इन सब बातोंमेंसे किन्हींका स्पष्ट खुलासा किया है और किन्हींका संकेतमात्र किया है।

आचार्य यतिवृषभने इन गाथाओंमेंसे प्रथम गाथापर ही चूर्णिसूत्र लिखे हैं। उसमें भी इसका व्याख्यान करनेके पहले इस प्रकरणसम्बन्धी अनुयोगद्वारोंका नामनिर्देश किया है—स्थानसमुत्कीर्तना, सर्वसंक्रम, नोसर्वसंक्रम, उत्कृष्ट संक्रम, अनुत्कृष्ट संक्रम, जघन्यसंक्रम, अजघन्यसंक्रम, सादिसंक्रम, अनादिसंक्रम, ध्रुवसंक्रम, अध्रुवसंक्रम, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल और अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, काल, अन्तर, सन्निकर्ष, अल्पबहुत्व तथा भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि।

इसके बाद आचार्य यतिवृषभने २७ संख्याक प्रथम गाथाका व्याख्यान करते हुए अपने चूर्णिसूत्रों द्वारा २८, २४, १७, १६ और १५ प्रकृतिकस्थान क्यों संक्रमस्थान नहीं हैं और शेष संक्रमस्थान कैसे हैं इसका विस्तारके साथ खुलासा किया है। २८ से लेकर ५८ संख्या तककी शेष ३१ गाथाओंका विशेष स्पष्टीकरण जयधवला टीका द्वारा किया गया है। आगे पूर्वोक्त अनुयोगद्वारोंका व्याख्यान प्रारम्भ होता है। उसमें भी स्थानसमुत्कीर्तना अनुयोगद्वारका व्याख्यान प्रथम गाथाके व्याख्यानके प्रसंगसे चूर्णिसूत्रोंमें पहले ही आ गया है, इसलिए यहाँ मात्र जयधवला द्वारा उसका व्याख्यान करते हुए बतलाया है कि ओघसे २७, २६, २५, २३, २२, २१, २०, १९, १८, १४, १३, १२, ११, १०, ९, ८, ७, ६, ५, ४, ३, २, और १ ये २३ संक्रमस्थान हैं। साथ ही इनमेंसे किस गतिमें कितने संक्रमस्थान होते हैं यह भी बतलाया है

आगे जयधवलामें यह सूचना करके कि यहाँ सर्वसंक्रम, नोसर्वसंक्रम, उत्कृष्टसंक्रम, अनुत्कृष्टसंक्रम, जघन्यसंक्रम और अजघन्यसंक्रम ये स्थान संभव नहीं हैं इसके बाद सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमका व्याख्यान करते हुए बतलाया है कि २५ प्रकृतिक संक्रमस्थान सादि आदि चारों प्रकार का है, शेष संक्रमस्थान सादि और अध्रुव ही हैं।

एक जीव की अपेक्षा स्वामित्व—इस पर मात्र एक चूर्णिसूत्र है। ओघ और चारों गतियों की अपेक्षा संक्रमस्थानोंके स्वामीका विशेष निर्देश जयधवला टीका द्वारा किया गया है।

एक जीव की अपेक्षा काल—इसमें चूर्णिसूत्रों द्वारा ओघसे एक जीव की अपेक्षा काल का विचार किया है। चारों गतियोंसम्बन्धी विशेष व्याख्यान जयधवला टीकामें आया है।

एक जीव की अपेक्षा अन्तर—इसमें पूर्वोक्त विधि से अन्तर का कथन किया है।

नाना जीवों की अपेक्षा भंगविचय—यहाँ भी चूर्णि में जिनके प्रकृतियों की सत्ता है उन्हीं का अधिकार है यह बतला कर भंगविचय का निरूपण हुआ है। जयधवला में ओघ से कुल भंगों का योग ३८७४२०४८९ बतलाया है।

भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शन अनुयोगद्वारों पर चूर्णिसूत्र नहीं हैं। जयधवला में उच्चारणाके अनुसार इनका व्याख्यान आया है जो नामानुसार है।

नाना जीवों की अपेक्षा काल—इसमें किस स्थान के संक्रामक का कितना काल है यह नाना जीवों की अपेक्षा चूर्णि और जयधवला टीका द्वारा बतलाया गया है।

नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तर—इसमें किस स्थानके संक्रामकोंका कितना अन्तर है यह नाना जीवों की अपेक्षा बतलाया है।

सन्निकर्ष—एक संक्रमस्थानके सद्भावमें दूसरा संक्रम स्थान संभव नहीं इसलिए सन्निकर्षका निषेध किया है।

भाव—इसमें सब संक्रमस्थानोंके संक्रामक जीवों का औदयिक भाव है, क्योंकि उदयको निमित्त कर ही संक्रम होता है यह बतलाया है।

अल्पबहुत्व—इसमें सब संक्रमस्थानोंका अल्पबहुत्व बतलाया गया है।

भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि—भुजगारका समुत्कीर्तना आदि १३, पदनिक्षेपका स्वामित्व आदि ३ और वृद्धिका समुत्कीर्तना आदि १३ अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे कथन करके इन अनुयोगद्वारोंके समाप्त होनेपर प्रकृति संक्रमस्थानकी समाप्तिके साथ प्रकृतिसंक्रम समाप्त किया गया है।

यहाँ प्रसङ्गसे इतना उल्लेख कर देना आवश्यक है कि कषायप्राभृतकी प्रकृति संक्रमस्थान सम्बन्धी २७ वीं गाथा से लेकर ३९ वीं गाथा तक १३ गाथाएँ श्वेताम्बर कर्मप्रकृतिकी इसी प्रकरण सम्बन्धी १० वीं गाथा से लेकर २२ वीं गाथा तक १३ गाथाएँ कुछ रचनाभेद और कहीं-कहीं कुछ पाठभेदके साथ परस्पर मिलती जुलती हैं।

पाठभेदके उदाहरण इस प्रकार हैं

कषायप्राभृत		कर्मप्रकृति
गाथा० स० ३०	दिट्ठीगए	१३ दिट्ठी कए
,,	३१ विरदे मिस्से अविरदे य	१५ णियमा दिट्ठीकए दुविहे
,,	३३ संकमो छप्पि सम्मत्ते	१६ सुद्धसासणमीसेसु
,,	३५ अट्ठारस चदुसु होंति बोद्धव्वा	१८ अट्ठारस पंचगे चउक्के य

यहाँ इतना और उल्लेख कर देना आवश्यक है कि कर्मप्रकृतिमें उसकी उक्त १३ गाथाओंमेंसे प्रारम्भकी २ गाथाओंको छोड़कर अन्तकी शेष ११ गाथाओंकी चूर्णि नहीं है। कषायप्राभृतमें भी यद्यपि उसकी २७ वीं गाथा पर ही चूर्णिसूत्र उपलब्ध होते हैं पर वहाँ चूर्णिसूत्रोंमें प्रकृतिसंक्रमस्थान-सम्बन्धी सभी गाथाओंकी सूत्रसमुत्कीर्तनाका स्पष्ट उल्लेख करके स्थानसमुत्कीर्तनामें एक गाथा आई है यह बतलाकर पुनः चूर्णिसूत्रोंमें २७ वीं गाथाको निबद्ध कर उसकी विशेष व्याख्या की गई है। इससे स्पष्ट विदित होता है कि आचार्य यतिवृषभके विचारसे इन सभी मूल गाथाओंकी रचना गुणधर आचार्य ने ही की है।

स्थितिसंक्रम

इस अधिकार में स्थितिसंक्रमके मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रम और उत्तरप्रकृतिस्थितिसंक्रम ऐसे दो भेद करके अर्थपदका व्याख्यान करते हुए बतलाया है कि स्थितिके अपकर्षित होने, उत्कर्षित होने या अन्य प्रकृतिमें संक्रमित होनेका नाम स्थितिसंक्रम है। उसमें भी मूलप्रकृतियोंकी स्थितिका उत्कर्षण और अपकर्षण तो होता है पर परप्रकृतिसंक्रम नहीं होता, क्योंकि एक मूल प्रकृति अन्य प्रकृतिरूप संक्रमित नहीं होती। तथा उत्तरप्रकृतियों की स्थिति का उत्कर्षण, अपकर्षण और अन्य प्रकृतिरूप संक्रमण तीनों ही सम्भव हैं। इससे भिन्न स्थिति असंक्रम है यह तो स्पष्ट ही है। अर्थात् मूल या उत्तरप्रकृतियों की जिस स्थिति का संक्रम नहीं होता है वह स्थिति असंक्रम कहलाती है।

स्थिति अपकर्षण—आगे स्थिति अपकर्षण का विचार करते हुए सर्वप्रथम उदयावलीसे उपरिम समयवर्ती स्थिति का अपकर्षण होने पर उसका निक्षेप किन स्थितियों में होता है और कौन स्थितियाँ अतिस्थापनारूप होती हैं इसका विचार करते हुए बतलाया है कि उदयावलीसे उपरिम समयवर्ती स्थितिका अपकर्षण होने पर उसका निक्षेप उदय समयसे लेकर उदयावलीके त्रिभाग तक होता है और उसके ऊपरके दो त्रिभाग अतिस्थापनारूप रहते हैं। किन्तु आवलिका प्रमाण कृतयुग्म रूप होनेसे उसका अखंडरूप त्रिभाग प्राप्त करना शक्य नहीं है, इसलिए जयधवलामें बतलाया है कि आवलिके प्रमाणमेंसे एक कम करके त्रिभाग करने पर जो लब्ध आवे उसमें एक मिला दे। यह तो निक्षेपका प्रमाण है और इसके सिवा शेष (एक कम आवलिके दो त्रिभाग मात्र) अतिस्थापनाका प्रमाण है। जिसमें अपकर्षित द्रव्यका क्षेपण होता है उसका नाम निक्षेप है और निक्षेप तथा संक्रम

स्थितिके मध्य जितनी स्थितियाँ होती हैं उनका नाम अतिस्थापना है। अपकर्षित द्रव्यका क्षेपण किस क्रमसे होता है इसका विचार करते हुए वहाँ बतलाया है कि उदय समयमें बहुत द्रव्यका क्षेपण होता है। उससे आगे निक्षेपके अन्तिम समय तक विशेषहीन विशेषहीन द्रव्यका क्षेपण होता है।

यह उदयावलिसे उपरितन स्थितिमें स्थित द्रव्यके अपकर्षणकी प्रक्रिया है। इस स्थितिसे भी उपरितन स्थितिका अपकर्षण होने पर निक्षेप तो जितना पूर्वमें बतलाया है उतना ही रहता है। मात्र अतिस्थापनामें एक समयकी वृद्धि हो जाती है। शेष सब विधि पूर्ववत् है। इस प्रकार उत्तरोत्तर उपरिम उपरिम स्थितिका अपकर्षण होने पर निक्षेपका प्रमाण वही रहता है। मात्र अतिस्थापनामें उत्तरोत्तर एक एक समयकी वृद्धि होती जाती है। इस प्रकार अतिस्थापनाके एक आवलिप्रमाण होने तक यही क्रम चालू रहता है। इसके आगे सर्वत्र अतिस्थापनाका प्रमाण एक आवलि ही रहता है, परन्तु निक्षेपमें वृद्धि होने लगती है और इस प्रकार वृद्धि होकर उत्कृष्ट निक्षेप एक समय अधिक दो आवलि कम उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण प्राप्त होता है, क्योंकि जो जीव उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध कर बन्धावलिके बाद अग्र-स्थितिका अपकर्षण करता है उसका अतिस्थापनावलिको छोड़कर शेष सब स्थितियोंमें क्षेपण होता है, इसलिए उत्कृष्ट निक्षेपका उक्त प्रमाण प्राप्त हो जाता है।

यह निर्व्याघातकी अपेक्षा अपकर्षणका विचार है। व्याघातकी अपेक्षा विचार करने पर स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिका पतन होते समय अतिस्थापना जहाँ जितना स्थितिकाण्डक हो एक समय कम तत्प्रमाण होती है। उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकका प्रमाण आगममें अन्तःकोड़ाकोड़ी कम कर्म-स्थितिप्रमाण बतलाया है, इसलिए इसमेंसे एक समय कम करनेपर शेष सब स्थिति अन्तिम फालिके पतनके समय अतिस्थापना रूप रहती है अतः उत्कृष्ट अतिस्थापना तत्प्रमाण होनेमें कोई बाधा नहीं आती। विशेष खुलासा मूलसे जान लेना चाहिए।

स्थिति उत्कर्षण—नूतन बन्धके सम्बन्धसे सत्तामें स्थित कर्मप्रदेशोंकी स्थितिका बढ़ना स्थिति उत्कर्षण कहलाता है। इसका भी व्याख्यान निर्व्याघात और व्याघातकी अपेक्षा दो प्रकारसे किया है। जहाँ पर कमसे कम एक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण निक्षेपके साथ एक आवलिप्रमाण अतिस्थापना होनेमें किसी प्रकारका व्याघात सम्भव नहीं है वह निर्व्याघातविषयक उत्कर्षण और जहाँ पर उक्त निक्षेपके साथ एक आवलिप्रमाण अतिस्थापनाके प्राप्त होनेमें बाधा आती है वह व्याघातविषयक उत्कर्षण है। खुलासा इस प्रकार है—विवक्षित सत्त्वस्थितिसे एक समय अधिक स्थितिबन्ध होने पर उस स्थितिका उत्कर्षण नहीं होता, क्योंकि वहाँ अतिस्थापना और निक्षेप दोनोंका अत्यन्त अभाव है। विवक्षित सत्त्वस्थितिसे दो समय अधिक स्थितिबन्धके होने पर भी विवक्षित स्थितिका उत्कर्षण नहीं होता। इस प्रकार विवक्षित सत्त्वस्थितिसे तीन समयसे आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण अधिक स्थितिबन्ध होने पर भी विवक्षित स्थितिका उत्कर्षण नहीं होता, क्योंकि यद्यपि यहाँ पर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण अतिस्थापना उपलब्ध होती है तो भी अभी निक्षेपका अत्यन्त अभाव होनेसे विवक्षित स्थितिका उत्कर्षण नहीं होता। इसी प्रकार आगे भी जब तक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण अधिक और स्थितिबन्ध प्राप्त न हो तब तक विवक्षित स्थितिका उत्कर्षण नहीं होता, क्योंकि अतिस्थापनाके ऊपर निक्षेपका प्रमाण कमसे कम आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण बतलाया है, किन्तु अभी वह प्राप्त नहीं हुआ है। हाँ इतना अधिक और स्थितिबन्ध प्राप्त हो जाय तो विवक्षित स्थितिका उत्कर्षण होकर आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण स्थितिको छोड़ आगेके आवलिके असंख्यातवें भाग-प्रमाण स्थितिबन्धमें उसका निक्षेप होता है। यह व्याघात विषयक उत्कर्षणका जघन्य भेद है। यहाँ अतिस्थापना और निक्षेप दोनों ही अलग-अलग आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसके आगे एक आवलि होने तक अतिस्थापना बढ़ती है, निक्षेप उतना ही रहता है। तथा एक आवलिप्रमाण

अतिस्थापनाके हो जाने पर निक्षेप बढ़ता है, अतिस्थापना उतनी ही रहती है। यहाँ इतना विशेष जान लेना चाहिए कि जब तक अतिस्थापना एक आवलिसे कम रहती है तब तक व्याघातविषयक उत्कर्षण कहलाता है और पूरी एक आवलिप्रमाण अतिस्थापनाके होने पर निर्व्याघातविषयक उत्कर्षण होता है। अव्याघातविषयक उत्कर्षणमें अतिस्थापना कमसे कम एक आवलिप्रमाण और अधिकसे अधिक उत्कृष्ट आबाधाप्रमाण होती हैं। तथा निक्षेप कमसे कम आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण और अधिकसे अधिक उत्कृष्ट आबाधा और एक समय अधिक एक आवलि न्यून उत्कृष्ट कर्मस्थितिप्रमाण होता है। व्याघातविषयक जघन्य अतिस्थापना कमसे कम आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण और अधिकसे अधिक एक समय कम एक आवलिप्रमाण होती है। तथा निक्षेप मात्र आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है।

मूलप्रकृतिस्थितिसंक्रम

यह स्थिति अपकर्षण और स्थिति उत्कर्षणका सामान्य स्पष्टीकरण है। आगे मूलप्रकृतिस्थिति-संक्रमकी मीमांसा २३ अनुयोगद्वारोंका अवलम्बन लेकर की गई है और इसके बाद भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान इन अधिकारोंका अवलम्बन लेकर भी उसका विचार किया है। २३ अनुयोगद्वारोंके नाम ये हैं—अद्धाच्छेद, सर्व, नोसर्व, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्य, सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, स्वामित्व, एक जीवकी अपेक्षा काल, अन्तर, नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व। यतः स्थिति जघन्य भी होती है और उत्कृष्ट भी होती है अतः इन अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे विचार करते समय प्रत्येक अनुयोगद्वारको जघन्य और उत्कृष्ट इन दो भागोंमें विभक्त किया गया है। तथा स्थितिके अजघन्य भेदका जघन्यप्ररूपणाके अन्तर्गत और अनुत्कृष्ट भेदका उत्कृष्ट प्ररूपणाके अन्तर्गत विचार किया है। अद्धाच्छेदका प्रारम्भ करते हुए मात्र एक चूर्णिसूत्र आया है। शेष मूलस्थितिसंक्रमसम्बन्धी समस्त निरूपण जयधवला टीका द्वारा किया गया है।

उत्तरप्रकृतिस्थितिसंक्रम

उत्तरप्रकृति स्थितिसंक्रममें २४ अनुयोगद्वार हैं। अनुयोगद्वारोंके नाम वही हैं जो मूलप्रकृति-स्थितिसंक्रमके कथनके प्रसंगसे बतला आये हैं। मात्र यहाँ एक सन्निकर्ष अनुयोगद्वार बढ़ जाता है। २४ अनुयोगद्वारोंके कथनके बाद भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान इन अधिकारोंका निरूपण होने पर उत्तरप्रकृति स्थितिसंक्रम समाप्त होता है।

प्रकृतियोंकी संक्रमसे उत्कृष्ट स्थिति दो प्रकारसे प्राप्त होती है—एक तो बन्धकी अपेक्षा और दूसरी मात्र संक्रमकी अपेक्षा। मिथ्यात्वका सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर और सोलह कषायोंका चालीस कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होता है, अतः इनका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्धाच्छेद क्रमसे दो आवलि कम सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर और दो आवलि कम चालीस कोड़ाकोड़ी सागर बन जाता है, क्योंकि उत्कृष्ट स्थितिबन्ध होनेपर बन्धावलिके बाद उदयावलिसे उपरितन निषेकोंका ही संक्रम सम्भव है, अतः यहाँ उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्धाच्छेदमें अपने-अपने उत्कृष्ट स्थितिबन्धमेंसे दो-दो आवलिप्रमाण स्थिति ही कम हुई है। किन्तु नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध चालीस कोड़ाकोड़ीसागर नहीं होता, इसलिए इनका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्धाच्छेद बन्धावलि, संक्रमावलि और उदयावलि न्यून चालीस कोड़ाकोड़ीसागर प्रमाण ही प्राप्त होता है। कारण स्पष्ट है। मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्धाच्छेद अन्तर्मुहूर्त कम सत्तर कोड़ाकोड़ीसागर प्रमाण ही होता है, क्योंकि जो मिथ्या-

दृष्टि जीव मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्थितिबन्धकर अन्तर्मुहूर्तमें वेदकसम्यग्दृष्टि हो जाता है, उसके मिथ्यात्वकी अन्तर्मुहूर्त कम उत्कृष्ट स्थितिका ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे संक्रम होता है। इस प्रकार इन दोनों प्रकृतियोंकी जब यत्स्थिति ही मिथ्यात्वके उत्कृष्ट स्थितिबन्धसे अन्तर्मुहूर्त कम है तो इनका उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्धाच्छेद तो कम होगा ही यह उत्कृष्ट स्थितिसंक्रम अद्धाच्छेदका विचार है। जघन्य स्थिति संक्रम अद्धाच्छेदमें इतना ही वक्तव्य है कि सम्यक्त्व और लोभ संज्वलनका स्वोदयसे क्षय होता है, इसलिए इनका जघन्य स्थितिसंक्रम अद्धाच्छेद एक स्थिति प्रमाण प्राप्त होता है, क्योंकि इन दोनों कर्मोंकी एक समय अधिक एक आवलिप्रमाण जघन्य स्थितिके शेष रहने पर उदयावलिसे उपरिम स्थितिका संक्रम बन जाता है। किन्तु शेष प्रकृतियोंका स्वोदयसे क्षय नहीं होता, इसलिए इनकी अन्तिम फालिका परोदयसे पतन होते समय जो आयाम होता है वही इनका जघन्य स्थिति संक्रम अद्धाच्छेद है। यह स्थितिसंक्रम अद्धाच्छेदका विचार है। स्वामित्वका विचार इसी आधारसे कर लेना चाहिए। विशेष स्पष्टीकरण मूलमें किया ही है। तथा इसी प्रकार शेष अनुयोगद्वारोंका व्याख्यान भी मूलसे जान लेना चाहिए।

अनुभागसंक्रम

कर्मोंकी अपने कार्यको उत्पन्न करनेकी शक्तिका नाम अनुभाग है और उसका अन्य स्वभावरूप बदल जाना अनुभागसंक्रम है। इसके मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रम और उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रम ऐसे दो भेद हैं। उनमेंसे मूल प्रकृतिका अपकर्षण और उत्कर्षणके द्वारा अनुभागका बदल जाना मूलप्रकृति-अनुभागसंक्रम है तथा उत्तरप्रकृतियोंके अनुभागका उत्कर्षण, अपकर्षण और अन्य प्रकृतिसंक्रमके द्वारा अन्य अनुभागरूप परिणम जाना उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रम है। इस प्रकार उक्त व्याख्यानसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ पर अनुभागसंक्रमसे उत्कर्षण, अपकर्षण और अन्य प्रकृतिसंक्रम इन तीनों प्रकारसे अनुभागका परिवर्तन इष्ट है। उसमें सर्वप्रथम अनुभागअपकर्षणका स्पष्टीकरण करते हैं।

अनुभागअपकर्षण—ऐसा नियम है कि जिस स्पर्धकका अपकर्षण होता है उससे नीचे अनन्त स्पर्धक अतिस्थापनारूप होते हैं और उनसे नीचे अनन्त स्पर्धक निक्षेपरूप होते हैं। इसलिए प्रारम्भके जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनारूप स्पर्धकोंका अपकर्षण कभी नहीं होता यह सिद्ध होता है। यहाँ जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनासे उपरिम स्पर्धककी अपेक्षा यह कथन किया है। उस स्पर्धकसे लेकर उत्कृष्ट स्पर्धक तक अन्य सब स्पर्धकोंका अपकर्षण होना सम्भव है। इतना विशेष है कि व्याघातको छोड़कर सर्वत्र अतिस्थापना तो एक समान रहती है मात्र निक्षेपमें वृद्धि होती जाती है। जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनाका प्रमाण कितना है इसका उल्लेख करते हुए लिखा है कि एक प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरका जितना प्रमाण है उससे जघन्य निक्षेपका प्रमाण अनन्तगुणा है और उससे भी जघन्य अतिस्थापनाका प्रमाण अनन्तगुणा है। यहाँ अनुभागका प्रकरण है, इसलिए यहाँ पर अनुभागकी अपेक्षा ही प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरका विचार करना चाहिए। तदनुसार जहाँ प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणासे लेकर उत्तरोत्तर अवस्थित चयकी हानि द्वारा दूनी हानि हो जाती है उस अवधि तकके अध्वानकी प्रदेशगुणहानिस्थानान्तर संज्ञा है। इस प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरमें अभव्योंसे अनन्तगुणे अनन्त स्पर्धक होते हैं। इससे जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनाका प्रमाण अनुभागकी अपेक्षा कितना है यह स्पष्ट हो जाता है।

यह तो जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनाका खुलासा है। उत्कृष्ट अतिस्थापना और उत्कृष्ट निक्षेपका विचार करते हुए वहाँ बतलाया है कि जघन्य अतिस्थापनासे उत्कृष्ट अनुभागकाण्डक अनन्तगुणा होता है और उससे एक वर्गणा कम उत्कृष्ट अतिस्थापना होती है। यह उत्कृष्ट अतिस्थापना

उत्कृष्ट अनुभागकाण्डककी अन्तिम वर्गणाके पतनके समय ही प्राप्त होती है। कारण कि जब अन्तिम वर्गणाका पतन होता है तब उसका निक्षेप अन्तिम वर्गणाके पतनके साथ ही निर्मूल होनेवाले उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकको छोड़कर ही होता है, अन्यथा उसका सर्वथा अभाव नहीं हो सकता। यही कारण है कि यहाँ पर अन्तिम वर्गणासे हीन उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकप्रमाण उत्कृष्ट अतिस्थापना बतलाई है। उत्कृष्ट निक्षेपका विचार करने पर वह उत्कृष्ट अतिस्थापनासे विशेष अधिक ही प्राप्त होता है, क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागके बन्ध करके एक आवलि बाद अन्तिम स्पर्धककी अन्तिम वर्गणाका अपकर्षण करने पर इसका निक्षेप जघन्य अतिस्थापनासे नीचे जितना भी अनुभागप्रस्तार है उस सबमें होता है। विचार करने पर निक्षेपरूप यह अनुभागप्रस्तार पूर्वोक्त उत्कृष्ट अतिस्थापनासे विशेष अधिक है। यही कारण है कि यहाँ पर उत्कृष्ट निक्षेपको उत्कृष्ट अतिस्थापनासे विशेष अधिक बतलाया है। यहाँ इतना विशेष समझना चाहिए कि उत्कृष्ट अतिस्थापना तो व्याघातमें ही प्राप्त होती है परन्तु उत्कृष्ट निक्षेप अव्याघातमें ही प्राप्त होता है।

अनुभागउत्कर्षण—जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण अन्तिम स्पर्धकोंका उत्कर्षण नहीं होता। हाँ इन दोनोंके नीचे जो स्पर्धक है उसका उत्कर्षण हो सकता है। तथा इस स्पर्धकके नीचे जघन्य स्पर्धक पर्यन्त जितने भी स्पर्धक हैं उनका भी उत्कर्षण हो सकता है। मात्र सर्वत्र अतिस्थापना तो एक समान ही रहती है, निक्षेप बढ़ता जाता है। पहले अपकर्षणका निरूपण करते समय जघन्य और उत्कृष्ट निक्षेप तथा जघन्य अतिस्थापनाका जो प्रमाण बतलाया है वही यहाँ पर भी समझना चाहिए। विशेष व्याख्यान न होनेके कारण यहाँ पर उसका स्पष्टीकरण नहीं किया है।

मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रम

यह उत्कर्षण, अपकर्षण और परप्रकृतिसंक्रमविषयक जो प्ररूपणा की है उसे ध्यानमें रखकर यहाँ सर्वप्रथम २३ अनुयोगद्वारों तथा भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धिके आश्रयसे मूलप्रकृति अनुभाग-संक्रमका विचार किया गया है। वे तेईस अनुयोगद्वार इस प्रकार हैं—संज्ञा, सर्वसंक्रम, नोसर्वसंक्रम, उत्कृष्टसंक्रम, अनुत्कृष्टसंक्रम, जघन्यसंक्रम, अजघन्यसंक्रम, सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, स्वामित्व, एक जीवकी अपेक्षा काल, अन्तर, नानाजीवोंकी अपेक्षा भंगविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, नानाजीवोंकी अपेक्षा काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व।

इन २३ अनुयोगद्वारोंका विषय सुगम होनेसे इनपर चूर्णिसूत्र नहीं हैं। जयधवलामें भी साद्यादि चार, स्वामित्व, एक जीवकी अपेक्षा काल और अन्तर मात्र इन अनुयोगद्वारोंका ही स्पष्टीकरण किया गया है और शेष अनुयोगद्वारोंका विचार अनुभागविभक्तिके समान है यह बतलाकर उनका व्याख्यान नहीं किया है। इसी प्रकार भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धिके अवान्तर अनुयोगद्वारोंका विचार करते हुए किसीका संक्षेपमें व्याख्यान कर दिया गया है और किसीका कथन अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना मात्र करके मूलप्रकृति अनुभागसंक्रमका कथन समाप्त किया गया है।

उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रम

उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रममें २४ अनुयोगद्वार हैं यह प्रतिज्ञा चूर्णिसूत्रमें ही की गई है। मूल-प्रकृतिअनुभागसंक्रमके विषय परिचयके प्रसंगसे जिन २३ अनुयोगद्वारोंका नामनिर्देश किया है उनमें सन्निकर्षके मिलाने पर उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रमसम्बन्धी २४ अनुयोगद्वार हो जाते हैं। उनमें सर्वप्रथम संज्ञा अनुयोगद्वार है। इसका व्याख्यान करते हुए उसके घातिसंज्ञा और स्थानसंज्ञा इस प्रकार दो भेद किये गये हैं। मिथ्यात्व आदि कर्मोंके उत्कृष्ट आदि अनुभागसंक्रमरूप स्पर्धकोंमें कौन सर्वघाति है और कौन देशघाति है इसकी परीक्षाका नाम घातिसंज्ञा है, क्योंकि घातिकर्मोंके अनुभागबन्धकी अपेक्षा

सर्वघाति और देशघाति ऐसे दो भेद हैं। अतएव संक्रमकी अपेक्षा भी उसके दो भेद प्राप्त होते हैं। उसमें भी उन संक्रमरूप अनुभागस्पर्धकोंकी एकस्थानिक, द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिकरूपसे मीमांसाका नाम स्थानसंज्ञा है। अन्यत्र लता, दारु, अस्थि और शैल ये संज्ञाएँ आई हैं। जहाँ मात्र लतारूप अनुभाग उपलब्ध होता है उसकी एकस्थानिक संज्ञा है, जहाँ लता और दारुरूप या मात्र दारुरूप अनुभाग उपलब्ध होता है उसकी द्विस्थानिकसंज्ञा है, जहाँ दारु और अस्थिरूप अनुभाग उपलब्ध होता है उसकी त्रिस्थानिक संज्ञा है तथा जहाँ दारु, अस्थि और शैलरूप अनुभाग उपलब्ध होता है उसकी चतुःस्थानिक संज्ञा है। यहाँ मोहनीयकी २८ प्रकृतियोंमेंसे किस प्रकृतिका अनुभाग घाति और स्थानकी अपेक्षा किस प्रकारका होता है इसका स्पष्टीकरण करते हुए बतलाया है कि मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषायोंका अनुभाग सर्वघाति तो होता ही है। उसमें भी वह द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक या चतुःस्थानिकरूप ही होता है। एकस्थानिक नहीं होता, क्योंकि एकस्थानिक अनुभाग नियमसे देशघाति होता है। उसमें भी उत्कृष्ट अनुभाग नियमसे चतुःस्थानिक होता है और जघन्य अनुभाग नियमसे द्विस्थानिक होता है। शेष अनुत्कृष्ट और अजघन्य अनुभाग द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिक तीनों प्रकारका होता है। सम्यग्मिथ्यात्व यद्यपि सर्वघाति प्रकृति है परन्तु उसका उत्कृष्ट आदि चारों प्रकारका अनुभाग द्विस्थानिक ही होता है। संज्वलन और पुरुषवेदके अनुभागका विचार अक्षपक और अनुपशामकके तो मिथ्यात्वके समान ही है। मात्र उपशामक और क्षपकके उत्कृष्ट अनुभाग संक्रम द्विस्थानिक और सर्वघाति ही होता है जो अपूर्वकरणमें चढ़ते हुए प्रथम समयमें उपलब्ध होता है। अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक या एकस्थानिक तथा सर्वघाति या देशघाति दोनों प्रकारका होता है। इसका एकस्थानिक अनुभागसंक्रम अन्तरकरणके बाद एकस्थानिक अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके शुद्ध नवकबन्धके संक्रमणके समय और कृष्टिवेदक कालके भीतर उपलब्ध होता है। तथा देशघातिपना भी वहीं पर उपलब्ध होता है। इनका जघन्य अनुभागसंक्रम देशघाति और एकस्थानिक होता है जो यथासम्भव नवकबन्धकी कृष्टियोंके संक्रमणके अन्तिम समयमें उपलब्ध होता है और अजघन्य अनुभागसंक्रम अनुत्कृष्ट एकस्थानिक या द्विस्थानिक तथा सर्वघाति या देशघाति दोनों प्रकारका होता है। अब रही सम्यक्त्व प्रकृति सो इसका अनुभागसंक्रम नियमसे देशघाति होकर एकस्थानिक या द्विस्थानिक होता है। उसमें उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम नियमसे द्विस्थानिक ही होता है। अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक या एकस्थानिक दोनों प्रकारका होता है। क्षपणाके समय इसकी स्थिति आठ वर्षकी रहने पर वहाँसे लेकर एकस्थानिक अनुभाग होता है और इससे पूर्व द्विस्थानिक अनुभाग होता है। इसका जघन्य अनुभागसंक्रम नियमसे एकस्थानिक होता है, क्योंकि एक समय अधिक आवलिप्रमाण निषेक रहने पर एकस्थानिक जघन्य अनुभागसंक्रम उपलब्ध होता है। तथा अजघन्य अनुभागसंक्रम एकस्थानिक या द्विस्थानिक दोनों प्रकारका होता है। स्पष्टीकरण सुगम है। इस प्रकार संज्ञाके विचारपूर्वक पूर्वमें कहे गये अनुयोगद्वारोंके क्रमसे विचार कर उत्तरप्रकृति-अनुभागसंक्रम प्रकरण समाप्त किया गया है।

प्रदेशसंक्रम

यह प्रदेशसंक्रम अधिकार है। इसका निर्देश करते हुए प्रारम्भ में बतलाया है कि मूल प्रकृति प्रदेशसंक्रम नहीं है। क्यों नहीं है इस प्रश्नका उत्तर देते हुए बतलाया है कि ऐसा स्वभाव है। बात यह है कि ज्ञानावरण कर्म अपने सत्त्वकालमें ज्ञानावरणरूप ही रहता है, दर्शनावरण कर्म दर्शनावरणरूप ही रहता है। यही व्यवस्था अन्य कर्मोंकी भी है। यही कारण है कि यहाँ पर मूलप्रकृति प्रदेशसंक्रमका निषेध किया है।

उत्तरप्रकृतिप्रदेशसंक्रम

उत्तर प्रकृतिप्रदेशसंक्रमका विचार करते हुए सर्वप्रथम उसके अर्थपदका उल्लेख करके बतलाया है कि जिस प्रकृतिके कर्मपरमाणु अन्य प्रकृतिमें ले जाये जाते हैं उस प्रकृतिका वह प्रदेशसंक्रम कहलाता है। जैसे मिथ्यात्वके कर्मपरमाणु सम्यक्त्वमें संक्रान्त किये जाते हैं, इसलिए वह मिथ्यात्वका प्रदेशसंक्रम कहलाता है। इसी प्रकार अन्य प्रकृतियोंका भी प्रदेशसंक्रम जानना चाहिए। प्रदेशसंक्रमके विषयमें यह अर्थपद है। इसके अनुसार प्रदेशसंक्रमके पाँच भेद हैं। उनके नाम ये हैं—उद्वेलनासंक्रम, विध्यातसंक्रम, अधःप्रवृत्तसंक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम।

उद्वेलनासंक्रम—करण परिणामोंके बिना रस्सीके उकेलनेके समान कर्मपरमाणुओंका अन्य प्रकृतिरूप परिणम जाना उद्वेलनासंक्रम है। मोहनीय कर्ममें यह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दो कर्मप्रकृतियोंका ही होता है। इसका भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। यह कहाँ होता है इसका विशेष खुलासा करते हुए बतलाया है कि सम्यग्दृष्टि जीव जब सम्यक्त्व परिणामको छोड़कर मिथ्यात्व गुणस्थानमें जाता है तो मिथ्यात्वमें जानेके समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त कालतक वह सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अधःप्रवृत्तिसंक्रम करता है। उसके बाद इन दोनों कर्मोंका उद्वेलनासंक्रम प्रारम्भ करता है। इसका काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतने काल तक इन कर्मोंका उद्वेलना-भागहारकेद्वारा प्रतिसमय विशेषहीन विशेषहीनक्रमसे प्रदेशसंक्रम करता है। उत्तरोत्तर इन कर्मोंका द्रव्य घटता जाता है इसलिए प्रत्येक समयमें अपने पूर्व समयकी अपेक्षा विशेष हीन द्रव्यका ही संक्रम होता है ऐसा यहाँ अभिप्राय जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इन दोनों कर्मोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकके पतनके समय उपान्त्य फालिके पतन होने तक गुणसंक्रम और अन्तिम फालिके पतनके समय सर्वसंक्रम होता है।

विध्यातसंक्रम—वेदकसम्यक्त्वके कालमें दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अधः-प्रवृत्तकरणके अन्तिम समय तक सर्वत्र मिथ्यात्व, और सम्यग्मिथ्यात्वका अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है। उपशमसम्यग्दृष्टि जीवके भी गुणसंक्रमके कालके बाद सर्वत्र उक्त प्रकृतियोंका विध्यातसंक्रम होता है। इसका भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है। फिर भी यह उद्वेलनासंक्रमके भागहारसे असंख्यातगुणा हीन है। इसीप्रकार अन्य जिन प्रकृतियोंका विध्यातसंक्रम होता है उसका विचार समझ कर कर लेना चाहिए।

अधःप्रवृत्तसंक्रम—बन्ध प्रकृतियोंका अपने बन्धके समय जो संक्रम होता है वह अधः-प्रवृत्तसंक्रम है। श्वेताम्बर कर्मग्रन्थोंमें 'अधाप्रवृत्त' शब्दका संस्कृतमें रूपान्तर 'यथाप्रवृत्त' किया है। इसीप्रकार 'पडिग्गह' शब्दका रूपान्तर 'पतद्ग्रह' किया है। अधःप्रवृत्तसंक्रमका भागहार पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। उदाहरणार्थ चारित्रमोहनीयकी २५ प्रकृतियोंका अपने बन्धकालमें बध्यमान प्रकृतियोंमें अधाप्रवृत्तसंक्रम होता है।

गुणसंक्रम—प्रत्येक समयमें असंख्यात श्रेणीरूपसे होनेवाले संक्रमका नाम गुणसंक्रम है। यह दर्शनमोहनीयकी क्षपणा, चारित्रमोहनीयकी क्षपणा, उपशमश्रेणि, अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना और सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके समय अपूर्वकरणके प्रथम समयसे होता है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाके अन्तिम काण्डकके पतनके समय होता है। मात्र अन्तिम काण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय गुणसंक्रम नहीं होता इतना यहाँ विशेष जानना चाहिए।

सर्वसंक्रम—सब कर्मपरमाणुओंका एकसाथ संक्रमका नाम सर्वसंक्रम है। यह उद्वेलना, विसंयोजना और क्षपणामें अन्तिम काण्डकी अन्तिम फालिके पतनके समय होता है। इसके भागहारका प्रमाण एक है।

अल्पबहुत्व—इन पाँचों संक्रमोंके अल्पबहुत्वका निर्देश करते हुए बतलाया है कि उद्वेलना-संक्रममें कर्मपरमाणु सबसे स्तोक होते हैं, उनसे विध्यातसंक्रममें असंख्यातगुणे होते हैं, उनसे अधःप्रवृत्तसंक्रममें असंख्यातगुणे होते हैं, उनसे गुणसंक्रममें असंख्यातगुणे होते हैं और उनसे सर्व-संक्रममें असंख्यातगुणे होते हैं। कारणका निर्देश करते हुए वहाँ बतलाया है कि इन पाँचों संक्रमोंका भागहार उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा हीन होता है। यही कारण है कि इन संक्रमोंमें उत्तरोत्तर असंख्यातगुणा द्रव्य प्राप्त होता है।

भागाभाग—आगे उत्तरप्रकृतिप्रदेशसंक्रमका कथन समुत्कीर्तना आदि २४ अनुयोगद्वारों तथा भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थानके आश्रयसे किया जायगा यह बतलाकर २४ अनुयोगद्वारोंके मध्य भागाभागके जीवविषयक भागाभाग और प्रदेशविषयक भागाभाग ऐसे दो भेद करके स्वस्थान भागाभागका व्याख्यान करते हुए बतलाया है कि मिथ्यात्वके द्रव्यके असंख्यात भाग करने पर उनमेंसे बहुभाग सर्वसंक्रमका द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात भाग करने पर बहुभाग गुणसंक्रमका द्रव्य है। शेष एक भाग विध्यात संक्रमका द्रव्य है। इस प्रकार मिथ्यात्व प्रकृतिके प्रदेशोंके सर्वसंक्रम, गुणसंक्रम और विध्यातसंक्रम ये तीन संक्रम ही होते हैं, अन्य दो संक्रम नहीं होते। कारण कि मिथ्यात्व उद्वेलना प्रकृति न होनेसे इसका उद्वेलना संक्रम सम्भव नहीं है और सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्व बन्धप्रकृति न होनेसे मिथ्यात्वका अधःप्रवृत्तसंक्रम भी सम्भव नहीं है।

सम्यक्त्वप्रकृतिके द्रव्यके असंख्यात भाग करने पर उनमेंसे बहुभाग अधःप्रवृत्त संक्रमका द्रव्य है, शेष एक भागके असंख्यात बहुभाग करने पर उनमेंसे बहुभाग सर्वसंक्रमका द्रव्य है, शेष एक भागके असंख्यात भाग करने पर उनमेंसे बहुभाग गुणसंक्रमका द्रव्य है तथा शेष एक भाग उद्वेलना संक्रमका द्रव्य है। इस प्रकार सम्यक्त्व प्रकृतिके प्रदेशोंके उक्त चार संक्रम ही होते हैं, विध्यातसंक्रम नहीं होता, क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीवके सम्यक्त्व प्रकृति मात्र प्रतिग्रहप्रकृति है, संक्रमप्रकृति नहीं है। और विध्यात संक्रम सम्यग्दर्शनरूप अवस्थामें ही उपलब्ध होता है, इसलिए सम्यक्त्व प्रकृतिमें विध्यातसंक्रमका विधान नहीं किया है।

सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यके असंख्यात भाग करने पर उनमेंसे बहुभाग सर्वसंक्रमका द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात भाग करने पर उनमेंसे बहुभाग गुणसंक्रमका द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात भाग करने पर उनमेंसे बहुभाग अधःप्रवृत्तसंक्रमका द्रव्य है, शेष एक भागके असंख्यात भाग करने पर उनमेंसे बहुभाग विध्यातसंक्रमका द्रव्य है तथा शेष एक भाग उद्वेलनासंक्रमका द्रव्य है। यहाँ पाँचों संक्रम बतलाये हैं। कारण यह है कि सम्यग्दृष्टि जीवके सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति मिथ्यात्वकी अपेक्षा प्रतिग्रह प्रकृति है और सम्यक्त्व प्रकृतिकी अपेक्षा संक्रमप्रकृति है, इसलिए इसका विध्यातसंक्रम बन जानेसे इसके पाँचों संक्रम होनेका निर्देश किया है। बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति और शोक इन प्रकृतियोंके संक्रमोंका कथन भी इसी प्रकार करना चाहिए। मात्र इन प्रकृतियोंका उद्वेलना संक्रम नहीं होता।

पुरुषवेद, क्रोधसंज्वलन, मानसंज्वलन और मायासंज्वलन इन प्रकृतियोंके अपने अपने द्रव्यके असंख्यात भाग करके उनमेंसे बहुभाग सर्वसंक्रमका द्रव्य है। शेष एक भाग अधःप्रवृत्तसंक्रमका द्रव्य है।

सम्यग्दृष्टि जीवके मात्र पुरुषवेदका ही बन्ध होता है और बन्धकालमें विध्यातसंक्रम सम्भव नहीं, इसलिए तो इसके विध्यातसंक्रमका विधान नहीं किया। यही बात क्रोधसंज्वलन आदि तीन प्रकृतियोंके विषयमें जान लेना चाहिए। तथा इन चारों प्रकृतियोंका अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें भी बन्ध होता है, इसलिए इनके गुणसंक्रमका विधान नहीं किया। इनका उद्वेलनासंक्रम नहीं होता यह तो स्पष्ट ही है। इस प्रकार इन प्रकृतियोंके शेष दो संक्रम होते हैं यह स्पष्ट हो जाता है।

हास्य, रति, भय और जुगुप्सा इन प्रकृतियोंके अपने-अपने द्रव्यके असंख्यात भाग करके उनमेंसे बहुभाग सर्वसंक्रमका द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात भाग करके उनमेंसे बहुभाग गुणसंक्रमका द्रव्य है और शेष एक भाग अधःप्रवृत्तसंक्रमका द्रव्य है। इन चारों प्रकृतियोंका आठवें गुणस्थानमें भी बन्ध होता है, इसलिए इनका भी विध्यातसंक्रम नहीं है, क्योंकि बन्धव्युच्छित्तिके बाद इनका गुणसंक्रम होने लगता है। इनका उद्वेलना संक्रम नहीं होता यह तो स्पष्ट ही है।

लोभसंज्वलनका मात्र अधःप्रवृत्तसंक्रम ही होता है, क्योंकि इसका एक तो नौवें गुणस्थानमें भी बन्ध होता है, दूसरे नौवें गुणस्थानमें अन्तरकरण क्रियाके बाद आनुपूर्वी संक्रम प्रारम्भ हो जाता है, तीसरे यह अपने उदयसे क्षयको प्राप्त होनेवाली प्रकृति है और चौथे यह उद्वेलना प्रकृति नहीं है, इसलिए इसके अन्य चारों संक्रमोंका निषेध कर मात्र अधःप्रवृत्तसंक्रमका विधान किया है। स्वोदयसे क्षयको तो सम्यक्त्व प्रकृति भी प्राप्त होती है पर उसमें जो गुणसंक्रम और सर्वसंक्रमका विधान किया है वह क्षपणाकी अपेक्षासे नहीं किया है। किन्तु उद्वेलनाके अन्तिम स्थितिकाण्डकका पतन होते समय उपान्त्य समय तक उद्वेलनासंक्रम न होकर गुणसंक्रम होता है और अन्तिम समयमें सर्वसंक्रम होता है, इस अपेक्षासे इस प्रकृतिके गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम होनेका विधान किया है।

यह मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंके पाँच संक्रमोंकी अपेक्षा भागाभागका विचार है। स्वामित्व आदि शेष अनुयोगद्वारों तथा भुजगार, पदनिक्षेप वृद्धि और स्थान इन अनुयोगद्वारोंका कथन विस्तारसे मूलमें किया ही है और इन अनुयोगद्वारोंके विषयमें स्वतन्त्र वक्तव्य नहीं है, इसलिए यहाँ पर अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है।

विषय-सूची

भुजगार अनुभागसंक्रम

पदनिक्षेप

वृद्धि

स्थान

प्रदेशसंक्रम

उत्तरप्रकृतिप्रदेशसंक्रम

भुजगार

सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भगवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

क सा य पा हु डं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

बंधगो णाम छट्ठो अत्थाहियारो

अणुभागभागमेत्तो वि जत्थ दोसस्स संभवो णत्थि ।
तं पणमिय जिणणाहं संकममणुभागगोयरं वोच्छं ॥ १ ॥

जिनमें अणुके जघन्य अविभागप्रतिच्छेदके बराबर भी दोष सम्भव नहीं है उन जिननाथको नमस्कार कर अनुभागसंक्रम नामक अधिकारका कथन करता हूँ ॥ १ ॥

✽ अणुभागसंकमो दुविहो—मूलपयडिअणुभागसंकमो च उत्तरपयडिअणुभागसंकमो च ।

§ १. एदस्स सुत्तस्स 'संकामेदि कदिं वा' त्ति गुणहरभडारयस्स मुहकमलविणिग्गयगाहासुत्तावयवपडिबद्धाणुभागसंकमविवरणे पयट्टेण जइवसहपुज्जपादेण पउत्तस्स पसण्णगंभीरभावेणावट्ठिदस्स विवरणं कस्सामो । तं जहा—अणुभागो णाम कम्माणं सगकज्जुप्पायणसत्ती । तस्स संकमो सहावंतरसंकंती । सो अणुभागसंकमो त्ति वुच्चइ । सो वुण दुविहो—मूलुत्तरपयडिपडिबद्धाणुभागसंकमभेदेण, तइयस्स संकमपयारस्साणुवलंभादो । तत्थ मूलपयडीए मोहणीयसण्णिदाए जो अणुभागो जीवम्मि मोहुप्पायणसत्तिलक्खणो तस्स ओकड्डुक्कड्डणावसेण भावंतरावत्ती मूलपयडिअणुभागसंकमो णाम । उत्तरपयडीणं च मिच्छत्तादीणमणुभागस्स ओकड्डुक्कड्डण-परपयडिसंकमेहि जो सत्तिविपरिणामो सो उत्तरपयडिअणुभागसंकमो त्ति भण्णदे । एवं दुवाविहत्तो अणुभागसंकमो इदाणिमवसरपत्तो त्ति विहासिज्जदि त्ति एसो एदस्स सुत्तस्स भावत्थो ।

अनुभागसंक्रम दो प्रकारका है—मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रम और उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रम ।

§ १. अब गुणधर भट्टारकके मुखकमलसे निकले हुए गाथासूत्रके 'संकामेदि कदिं वा' इस अवयवसे सम्बन्ध रखनेवाले अनुभागसंक्रमके विवरणमें प्रवृत्त हुए पूज्यचरण आचार्य यतिवृषभके द्वारा कहे गये और प्रसन्न गम्भीरभावसे अवस्थित हुए इस सूत्रका विवरण करते हैं। यथा—कर्मोंकी अपने कार्यको उत्पन्न करनेकी शक्तिका नाम अनुभाग है। उसका संक्रम अर्थात् अन्य स्वभावरूप संक्रान्त होना अनुभागसंक्रम है। वह मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रम और उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रमके भेदसे दो प्रकारका है, क्योंकि संक्रमका तीसरा भेद नहीं उपलब्ध होता। उनमेंसे मोहनीय संज्ञावाली मूल प्रकृतिका जीवमें मोहोत्पादक शक्तिरूप जो अनुभाग है उसका अपकर्षण और उत्कर्षणके कारण अन्य अनुभागरूप परिणाम जाना मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रम कहलाता है। तथा मिथ्यात्व आदि उत्तर प्रकृतियोंके अनुभागका अकर्षण, उत्कर्षण और परप्रकृतिसंक्रमके द्वारा अन्य अनुभागरूप परिणमन होना उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रम कहलाता है। इस प्रकार दो भागोंमें विभक्त हुआ अनुभागसंक्रम इस समय विशेष व्याख्याके लिए अवसरप्राप्त है यह इस सूत्रका भावार्थ है।

विशेषार्थ—अनुभागसंक्रमका अर्थ स्पष्ट है। यहाँ पर जिस बातका स्पष्टीकरण करना है वह यह है कि मूल प्रकृतियोंमें परस्पर संक्रम नहीं होता, इसलिए यहाँ पर मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रमके लक्षण कथनके प्रसंगसे वह अपकर्षण और उत्कर्षण इनके आश्रयसे होता है यह कहा है। किन्तु उत्तर प्रकृतियोंमें अपनी जातिके भीतर परस्पर संक्रम होनेमें कोई बाधा नहीं है, इसलिए उसके लक्षण कथनके प्रसङ्गसे वह अपकर्षण, उत्कर्षण और परप्रकृतिसंक्रम इन तीनोंके आश्रयसे होता है यह कहा है।

§ २. संपहि अणुभागसंकमसरूवजाणावणट्ठमट्ठपदं वुच्चदे, तेण विणा परूवणाए कीरमाणाए सिस्साणं पडिवत्तिगउरवप्पसंगादो।

❀ तत्थ अट्ठपदं।

§ ३. तत्थाणंतरणिद्दिट्ठे मूलुत्तरपयडिसंबंधभेयभिण्णे अणुभागसंकमे विहासणिज्जे पुव्वं गमणीयमट्ठपदं, अण्णहा भाववियसयणिण्णयाणुप्पत्तीदो त्ति भणिदं होइ।

❀ अणुभागो ओकड्डिदो वि संकमो, उक्कड्डिदो वि संकमो, अण्णपयडिं णीदो वि संकमो।

§ ४. एदाणि तिण्णि अट्ठपदाणि[1], एदेहि तस्स सरूवपडिवत्ती। तं जहा— ओकड्डिदो ताव अणुभागो संकमववएसं लहदे, अहियरसस्स कम्मक्खंधस्स तत्थ हीणरसत्तेण विपरिणामदंसणादो। अवत्थादो अवत्थंतरसंकंती संकमो त्ति।' एवमुक्कड्डिदो अण्णपयडिं णीदो वि संकमो, तत्थ वि पुव्वावत्थापरिचाएणुत्तरावत्थावत्तिदंसणादो। एत्थोकड्डुकड्डणा-लक्खणमट्ठपदं मूलुत्तरपयडीणमणुभागसंकमस्स साहारणभावेण णिद्दिट्ठं,उहयत्थ वि तदुभय-पवुत्तीए पडिसेहाभावादो। अण्णपयडिं णीदो वि अणुभागो संकमो त्ति एदं तइज्जमट्ठपद-

---

§ २. अब अनुभागसंक्रमके स्वरूपका ज्ञान करानेके लिए अर्थपद कहते हैं, क्योंकि उसके बिना प्ररूपणा करने पर शिष्योंको समझनेमें कठिनाई जा सकती है।

❀ उसके विषयमें अर्थपद।

§ ३. 'तत्र' अर्थात् पहले जो मूलप्रकृति और उत्तरप्रतिके भेदसे दो प्रकारका अनुभागसंक्रम कह आये हैं उसका विशेष व्याख्यान करते समय पहले अर्थपद जानने योग्य है, अन्यथा अनु-भागसंक्रमविषयक निर्णय नहीं हो सकता यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है।

❀ अपकर्षित हुआ अनुभाग भी संक्रम है, उत्कर्षित हुआ अनुभाग भी संक्रम है और अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुआ अनुभाग भी संक्रम है।

§ ४. ये तीनों अर्थपद हैं, क्योंकि इनके द्वारा उस (अनुभागसंक्रम) के स्वरूपका ज्ञान होता है। यथा—अपकर्षणको प्राप्त हुआ अनुभाग संक्रम संज्ञाको प्राप्त होता है, क्योंकि अधिक रसवाले कर्मस्कन्धका अपकर्षण होने पर हीन रसरूपसे विशेष परिणमन देखा जाता है। एक अवस्थासे दूसरी अवथारूप संक्रान्त होना संक्रम है। यह अर्थ यहाँपर घटित हो जाता है, इसलिए इसे संक्रम कहा है। इसी प्रकार उत्कर्षणको प्राप्त हुआ और अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुआ अनुभाग भी संक्रम है, क्योंकि इन दोनों अवस्थाओंमें भी पूर्व अवस्थाके त्याग द्वारा उत्तर अवस्थाकी प्राप्ति देखी जाती है। यहाँ पर अपकर्षण-उत्कर्षणलक्षण अर्थपद मूलप्रकृतिअनुभाग-संक्रम और उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रम इन दोनोंको विषय करता है, इसलिए इसका इन दोनोंके साधारण रूपसे निर्देश किया है, क्योंकि इसकी इन दोनोंमें प्रवृत्ति होनेमें कोई बाधा नहीं आती। किन्तु 'अन्य प्रकृतिको प्राप्त हुआ अनुभाग भी संक्रम है' यह तीसरा अर्थपद उत्तरप्रकृति अनुभाग-संक्रमको ही विषय करता है, क्योंकि मूलप्रकृतिमें उसकी प्राप्ति असम्भव है। इस प्रकार अपकर्षण

---

१. आ०प्रतौ तिण्णि वि अट्ठपदाणि इति पाठः।

मुत्तरपयडिविसयं चेव, मूलपयडीए तदसंभवादो। एवमोकड्डणादिवसेणाणुभागसंकमसंभवं[1] परूविय तत्थोकड्डणाविहाणपरूवणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

❀ ओकड्डणाए परूवणा।

§ ५. ओकड्डुकड्डुणा-परपयडिसंकमलक्खणेसु तिसु संकमपयारेसु ओकड्डणाए ताव पवुत्तिविसेसजाणावणट्ठमेसा परूवणा कीरइ त्ति पइण्णावयणमेदं।

❀ पढमफद्दयं ण ओकड्डिज्जदि।

§ ६. कुदो? तत्थाइच्छावणा-णिक्खेवाणमदंसणादो।

❀ बिदियफद्दयं ण ओकड्डिज्जदि।

§ ७. तत्थ वि अइच्छावणा-णिक्खेवाभावस्स समाणत्तादो। ण केवलं पढम-विदिय-फद्दयाणमेस कमो, किंतु अण्णेसिं अणंताणं फद्दयाणं जहण्णाइच्छावणामेत्ताणमेसो चेव कमो त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तं—

❀ एवमणंताणि फद्दयाणि जहण्णिया अइच्छावणा, तत्तियाणि फद्दयाणि ण ओकड्डिज्जंति।

§ ८. एवं तदिय-चउत्थ-पंचमादिकमेण गंतूणाणंताणि फद्दयाणि णोकड्डिज्जंति। केत्तियाणि च ताणि? जेत्तिया जहण्णाइच्छावणा तेत्तियाणि। एत्तो उवरिमाणं वि

आदिके वशसे अनुभागसंक्रमकी प्राप्ति सम्भव है इसका कथन करके उनमेंसे अपकर्षणका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** अपकर्षणकी प्ररूपणा।**

§ ५. अपकर्षण, उत्कर्षण और परप्रकृतिसंक्रमरूप संक्रमके तीन भेदोंमेंसे अपकर्षणकी प्रवृत्ति विशेषका ज्ञान करानेके लिए यह प्ररूपणा की जा रही है इस प्रकार यह प्रतिज्ञावचन है।

*** प्रथम स्पर्धक अपकर्षित नहीं होता।**

§ ६. क्योंकि वहाँ पर अतिस्थापना और निक्षेप नहीं देखे जाते।

*** द्वितीय स्पर्धक अपकर्षित नहीं होता।**

§ ७. क्योंकि वहाँ पर भी अतिस्थापना और निक्षेपका अभाव पहलेके समान पाया जाता है। केवल प्रथम और द्वितीय स्पर्धकोंका ही यह क्रम नहीं है, किन्तु जघन्य अतिस्थापनारूप अन्य अनन्त स्पर्धकोंका भी यही क्रम है इस प्रकार इस बातके जताने के लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इस प्रकार अनन्त स्पर्धक जो कि जघन्य अतिस्थापनारूप हैं उतने स्पर्धक अपकर्षित नहीं होते।**

§ ८. इस प्रकार तीसरा, चौथा और पाँचवाँ आदिके क्रमसे जाकर स्थित हुए अनन्त स्पर्धक अपकर्षित नहीं किये जा सकते।

शंका—वे कितने हैं?

---

१. ता० प्रतौ संकम [संकम] संभवं इति पाठः।

अणंताणं फद्दयाणमोकड्डुणा ण संभवदि त्ति पदुप्पाएदुमिदमाह—

❀ अण्णाणि अणंताणि फद्दयाणि जहण्णणिक्खेवमेत्ताणि ण ओकड्डिज्जंति ।

§ ९. आदीदो प्पहुडि जहण्णाइच्छावणामेत्तफद्दयाणमुवरिमफद्दयं ताव ण ओकड्डिज्जदि, तस्साइच्छावणसंभवे वि णिक्खेवविसयादंसणादो । तत्तो अणंतरोवरिमफद्दयं पि ण ओकड्डिज्जदि । एवमणंताणि फद्दयाणि जहण्णणिक्खेवमेत्ताणि ण ओकड्डिज्जंति । किं कारणं ? णिक्खेवविसयासंभवादो । एत्तो उवरि ओकड्डुणाए पडिसेहो णत्थि त्ति पदुप्पायणट्ठमिदमाह—

❀ जहण्णओ णिक्खेवो जहण्णिया अइच्छावणा च तेत्तियमेत्ताणि फद्दयाणि आदीदो अधिच्छिदूण तदित्थफद्दयमोकड्डिज्जइ ।

§ १०. अइच्छावणा-णिक्खेवाणमेत्थ संपुण्णत्तदंसणादो । विवक्खियफद्दयादो हेट्ठा जहण्णाइच्छावणामेत्तमुल्लंघिय हेट्ठिमेसु फद्दएसु जहण्णणिक्खेवमेत्तेसु जहण्णफद्दय-पज्जवसाणेसु तदित्थफद्दयोकड्डुणासंभवो त्ति भणिदं होइ । एत्तो उवरिमफद्दएसु ण कत्थ वि ओकड्डुणा पडिहम्मइ, जहण्णाइच्छावणं धुवं काऊण जहण्णणिक्खेवस्स फद्दयुत्तरकमेण

समाधान—जितनी जघन्य अतिस्थापना है उतने हैं।

इनसे उपरिम अनन्त स्पर्धकोंका भी अपकर्षण सम्भव नहीं है इस बातका कथन करनेके लिए इस सूत्रको कहते हैं—

* जघन्य निक्षेपप्रमाण अन्य अनन्त स्पर्धक भी अपकर्षित नहीं होते ।

§ ९. प्रारम्भसे लेकर जघन्य अतिस्थापनाप्रमाण स्पर्धकोंसे आगेका स्पर्धक अपकर्षित नहीं होता, क्योंकि उसकी अतिस्थापना सम्भव होने पर भी निक्षेपविषयक स्पर्धक नहीं देखे जाते। उससे अनन्तर उपरिम स्पर्धक भी अपकर्षित नहीं होता। इस प्रकार जघन्य निक्षेपप्रमाण अनन्त स्पर्धक अपकर्षित नहीं होते।

शंका—इसका कारण क्या है ?

समाधान—क्योंकि निक्षेपविषयक स्पर्धकोंका अभाव है।

अब इससे ऊपर अपकर्षणका निषेध नहीं है इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* प्रारम्भसे लेकर जघन्य निक्षेप और जघन्य अतिस्थापनाप्रमाण जितने स्पर्धक हैं उतने स्पर्धकोंको उल्लंघनकर वहाँ जो स्पर्धक स्थित है वह अपकर्षित होता है।

§ १०. क्योंकि यहाँ पर अतिस्थापना और निक्षेप पूरे देखे जाते हैं। विवक्षित स्पर्धकसे पूर्वके जघन्य अतिस्थापनामात्र स्पर्धकोंको उल्लंघनकर उनसे पूर्वके जघन्य स्पर्धक तकके जघन्य निक्षेपप्रमाण स्पर्धकोंमें वहाँपर स्थित स्पर्धकका अपकर्षण होना सम्भव है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इससे उपरिम स्पर्धकोंका कहीं भी अपकर्षण होना बाधित नहीं है, क्योंकि जघन्य अतिस्थापनाको ध्रुव करके जघन्य निक्षेपकी उत्तरोत्तर एक एक स्पर्धकके क्रमसे वृद्धि देखी जाती है

वड्डिदंसणादो त्ति परूवेदुमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** तेण परं सव्वाणि फद्दयाणि ओकड्डिज्जंति ।**

§ ११. तेण परं तत्तो उवरि सव्वाणि चेव फद्दयाणि उक्कस्सफद्दयपज्जंताणि ओकड्डिज्जंति,तत्थ तप्पवुत्तीए पडिसेहाभावादो ।

§ १२. संपहि जहण्णणिक्खेवादिपदाणं पमाणविसयणिण्णयजणणट्ठमप्पाबहुअं परूवेमाणो इदमाह—

*** एत्थ अप्पाबहुअं ।**

§ १३. जहण्णुक्कस्साइच्छावणा-णिक्खेवादीणमोकड्डणासंबंधीणमण्णेसिं च तदुवजोगीणं पदविसेसाणमेत्थुद्देसे थोवबहुत्तं वत्तइस्सामो त्ति पातणिकासुत्तमेदं ।

इस प्रकार इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** उससे आगे सब स्पर्धक अपकर्षित हो सकते हैं ।**

§ ११. 'तेण परं' अर्थात् उस विवक्षित स्पर्धकसे आगेके उत्कृष्ट स्पर्धक तकके सभी स्पर्धक अपकर्षित हो सकते हैं, क्योंकि उनकी अपकर्षणरूपसे प्रवृत्ति होनेमें कोई निषेध नहीं है ।

विशेषार्थ—अनुभागकी दृष्टिसे अपकर्षणका क्या क्रम है इसका विचार यहाँ पर किया गया है । इस सम्बन्धमें यहाँ पर जो निर्देश किया है उसका भाव यह है कि प्रथम जघन्य स्पर्धकसे लेकर अनन्त स्पर्धक तो जघन्य निक्षेपरूप होते हैं अतएव उनका अपकर्षण नहीं होता । उसके आगे अनन्त स्पर्धक अतिस्थापनारूप होते हैं, अतएव उनका भी अपकर्षण नहीं होता । उसके आगे उत्कृष्ट स्पर्धकपर्यन्त जितने स्पर्धक होते हैं उन सबका अपकर्षण हो सकता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि अतिस्थापनाके ऊपर प्रथम स्पर्धकका अपकर्षण होकर उसका निक्षेप अतिस्थापनाके नीचे जिन स्पर्धकोंमें होता है उनका परिमाण अल्प होता है, अतएव उनकी जघन्य निक्षेप संज्ञा है । उसके आगे निक्षेप एक-एक स्पर्धक बढ़ने लगता है । परन्तु अतिस्थापना पूर्ववत् बनी रहती है । किन्तु जिस स्पर्धकका अपकर्षण विवक्षित हो उसके पूर्व अनन्त स्पर्धक अतिस्थापनारूप होते हैं और अतिस्थापनासे नीचे सब स्पर्धक निक्षेपरूप होते हैं । उदाहरणार्थ एक कर्ममें कुल स्पर्धक १६ हैं । उनमेंसे यदि प्रारम्भके ४ स्पर्धक जघन्य निक्षेप हैं और ५ से लेकर १० तक छह स्पर्धक अतिस्थापनारूप हैं तो ११ वें स्पर्धकका अपकर्षण होकर उसका निक्षेप १ से ४ तक के चार स्पर्धकोंमें होगा । १२ वें स्पर्धकका अपकर्षण होकर उसका निक्षेप १ से ५ तकके ५ स्पर्धकोंमें होगा । १३ वें स्पर्धकका अपकर्षण होकर उसका निक्षेप १ से ६ तकके ६ स्पर्धकोंमें होगा । इस प्रकार उत्तरोत्तर एक-एक स्पर्धकके प्रति निक्षेप भी एक-एक बढ़ता हुआ १६ वें स्पर्धकका अपकर्षण होकर उसका निक्षेप १ से लेकर ९ तकके ९ स्पर्धकोंमें होगा । स्पष्ट है कि अतिस्थापना सर्वत्र परिमाणमें तदवस्थ रहती है, किन्तु निक्षेप उत्तरोत्तर वृद्धिंगत होता जाता है । यह अंकसंदृष्टि है । इसी प्रकार अर्थसंदृष्टि समझ लेनी चाहिए ।

§ १२. अब जघन्य निक्षेप आदि पदोंके प्रमाणविषयक निर्णयको उत्पन्न करनेके लिए अल्पबहुत्वका कथन करते हुए इस सूत्रको कहते हैं—

*** यहाँ पर अल्पबहुत्व ।**

§ १३. प्रकृतमें अपकर्षणसम्बन्धी जघन्य और उत्कृष्ट अतिस्थापना तथा निक्षेप आदिके तथा उसमें उपयोगी पड़नेवाले पदविशेषोंके अल्पबहुत्वको बतलाते हैं इस प्रकार यह पातनिकासूत्र है ।

❀ सव्वत्थोवाणि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दयाणि ।

§ १४. पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरं णाम किं ? जम्मि उद्देसे पढमफद्दयादिवग्गणा अवट्ठिदविसेसहाणीए गच्छमाणा दुगुणहीणा जायदे तदवहिपरिच्छिण्णमद्धाणं गुणहाणिट्ठाणंतरमिदि भण्णदे । एदम्मि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतरे अणंताणि फद्दयाणि अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणमेत्ताणि अत्थि ताणि सव्वत्थोवाणि त्ति भणिदं होइ ।

❀ जहण्णओ णिक्खेवो अणंतगुणो ।

§ १५. कुदो ? तत्थाणंताणमणुभागपदेसगुणहाणीणं संभवादो । कथमेदं परिच्छिण्णं ? एदम्हादो चेव सुत्तादो ।

❀ जहण्णिया अइच्छावणा अणंतगुणा ।

§ १६. तत्तो वि अणंतगुणाणि गुणहाणिट्ठाणंतराणि विसईकरिय पयट्टत्तादो ।

❀ उक्कस्सयमणुभागकंडयमणंतगुणं ।

§ १७. कुदो ? उक्कस्साणुभागसंतकम्मस्स अणंताणं भागाणं उक्कस्साणुभागखंडयसरूवेण गहणोवलंभादो ।

❀ उक्कस्सिया अइच्छावणा एगाए वग्गणाए ऊणिया ।

---

* प्रदेशगुणहानिस्थानान्तर सबसे स्तोक हैं ।

§ १४. शंका–प्रदेशगुणहानिस्थानान्तर किसे कहते हैं ?

समाधान–जिस स्थान पर प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणा अवस्थित विशेषहानिरूपसे जाती हुई दुगुनी हीन हो जाती है उस अवधि तकके अध्वानको गुणहानिस्थानान्तर कहते हैं । इस प्रदेशगुणहानिस्थानान्तरमें अभव्योंसे अनन्तगुणे अनन्त स्पर्धक होते हैं । वे सबसे स्तोक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* उनसे जघन्य निक्षेप अनन्तगुणा है ।

§ १५. क्योंकि जघन्य निक्षेपमें अनन्त अनुभागप्रदेशगुणहानियां सम्भव हैं ।

शंका—यह कैसे जाना ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना ।

* उससे जघन्य अतिस्थापना अनन्तगुणी है ।

§ १६. क्योंकि जघन्य निक्षेपमें जितने गुणहानिस्थानान्तर उपलब्ध होते हैं उनसे भी अनन्तगुणे गुणहानिस्थानान्तरोंको विषय कर इसकी प्रवृत्ति हुई है ।

* उससे उत्कृष्ट अनुभागकाण्डक अनन्तगुणा है ।

§ १७. क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्मके अनन्त बहुभागोंका उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकरूपसे ग्रहण किया गया है ।

* उससे उत्कृष्ट अतिस्थापना एक वर्गणाप्रमाण न्यून है ।

§ १८. चरिमवग्गणपरिहीणुक्कस्साणुभागकंडयपमाणत्तादो। तं कथं? उक्कस्साणुभागखंडए आगाइदे दुचरिमादिहेट्ठिमफालीसु अंतोमुहुत्तमेत्तीसु सव्वत्थ जहण्णाइच्छावणा चेव पुव्वुत्तपरिमाणा होइ, तक्काले वाघादाभावादो। पुणो चरिमफालिपदणसमकाल चरिमफद्दयचरिमवग्गणाए उक्कस्साइच्छावणा होइ, णिरुद्धचरिमवग्गणं मोत्तूणाणुभागकंडयस्सेव सव्वस्स तत्थाइच्छावणासरूवेण परिणामदंसणादो। एदेण कारणेण उक्कस्साइच्छावणा उक्कस्साणुभागखंडयादो एगवग्गणामेत्तेण ऊणिया होइ। तं पि तत्तो एयवग्गणामेत्तेणब्भहियमिदि सिद्धं।

※ उक्कस्सणिक्खेवो विसेसाहिओ।

§ १९. उक्कस्साणुभागं बंधियूणावलियादीदस्स चरिमफद्दयचरिमवग्गणाए ओकड्डिज्जमाणाए रूवाहियजहण्णाइच्छावणापरिहीणो सव्वो चेवाणुभागपत्थारो उक्कस्सणिक्खेवसरूवेण लब्भइ। तदो घादिदावसेसम्मि रूवाहियजहण्णाइच्छावणामेत्तं सोहिय सुद्धसेसमेत्तेण उक्कस्साणुभागकंडयादो उक्कस्सणिक्खेवो विसेसाहिओ त्ति घेत्तव्वो।

---

§ १८. क्योंकि उत्कृष्ट अतिस्थापना अन्तिम वर्गणासे न्यून उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकप्रमाण होती है।

शंका—सो कैसे?

समाधान—उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकके पतनके समय अन्तर्मुहूर्तप्रमाण द्विचरम आदि अधस्तन फालियोंमें सर्वत्र पूर्वोक्तप्रमाण जघन्य अतिस्थापना ही होती है, क्योंकि उस समय व्याघातका अभाव है। परन्तु अन्तिम फालिके पतनके समय अन्तिम स्पर्धककी अन्तिम वर्गणाकी उत्कृष्ट अतिस्थापना होती है, क्योंकि उस समय विवक्षित अन्तिम वर्गणाको छोड़कर शेष समस्त अनुभागकाण्डकका ही वहाँ पर अतिस्थापनारूपसे परिणमन देखा जाता है। इस कारणसे उत्कृष्ट अतिस्थापना उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकसे एक वर्गणामात्र हीन होती है और वह अनुभागकाण्डक भी उस उत्कृष्ट अतिस्थापनासे एक वर्गणामात्र अधिक होता है यह सिद्ध हुआ।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट अतिस्थापना उत्कृष्ट अनुभागकाण्डककी अन्तिम फालिके पतनके समय अन्तिम वर्गणाकी ही होती है। चूंकि उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकमें यह अन्तिम फालिकी अन्तिम वर्गणा भी सम्मिलित है, अतः यहाँ पर उत्कृष्ट अतिस्थापनाको उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकमें से अन्तिम वर्गणाको कम कर देने पर जो शेष रहे तत्प्रमाण बतलाया है। कारण यह है कि जब अन्तिम फालिका पतन होता है तब उसका निक्षेप उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकको छोड़ कर ही होता है, अन्यथा उसका सर्वथा अभाव नहीं हो सकता, इसलिए सूत्रमें उत्कृष्ट अनुभागकाण्डक जितना बड़ा होता है उसमेंसे विवक्षित अन्तिम वर्गणाको कम कर देने पर जो शेष रहे उतना उत्कृष्ट अतिस्थापनाका प्रमाण होता है यह कहा है।

※ उससे उत्कृष्ट निक्षेप विशेष अधिक है।

§ १९. उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करके एक आवलिके बाद अन्तिम स्पर्धककी अन्तिम वर्गणाका अपकर्षण होने पर एक अधिक जघन्य अतिस्थापनासे हीन सबका सब अनुभाग प्रस्तार उत्कृष्ट निक्षेपरूपसे उपलब्ध होता है, इसलिए जितने बड़े अनुभागकाण्डकका घात किया है उसके सिवा जो शेष है उसमेंसे रूपाधिक जघन्य अतिस्थापनामात्र अनुभागको घटा कर जो शेष रहे उतना उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकसे उत्कृष्ट निक्षेप अधिक होता है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए।

* उक्कस्सो बंधो विसेसाहिओ ।

§ २०. केत्तियमेत्तेण ? रूवाहियजहण्णाइच्छावणामेत्तेण । एवमोकड्डणासंकमस्स अत्थपरूवणा गया ।

* उक्कड्डणाए परूवणा ।

§ २१. एत्तो उक्कड्डणाए अचरिमफद्दयं अहिकीरदि त्ति भणिदं होइ ।

* चरिमफद्दयं ण उक्कड्डिज्जदि ।

§ २२. कुदो ? उवरि अइच्छावणा-णिक्खेवाणमसंभवादो ।

* दुचरिमफद्दयं पि ण उक्कड्डिज्जदि ।

§ २३. एत्थ कारणमइच्छावणा-णिक्खेवाणमसंभवो चेव वत्तव्वो ।

* एवमणंताणि फद्दयाणि ओसक्किऊण तं फद्दयमुक्कड्डिज्जदि ।

विशेषार्थ—एक ऐसा जीव है जिसने उत्कृष्ट अनुभागबन्ध किया है उसके बाद एक आवलि कालके जाने पर यदि वह अन्तिम स्पर्धककी अन्तिम वर्गणाका अपकर्षण करता है तो उस समय उस अपकर्षित अनुभागका जघन्य अतिस्थापनाको छोड़कर शेष सब अनुभागमें निक्षेप होगा। यहाँ पर एक तो अतिस्थापनामात्र अनुभागमें इसका निक्षेप नहीं हुआ। दूसरे स्वयंका अपकर्षण किया है इसलिए एक इसमें भी इसका निक्षेप नहीं हुआ। इस प्रकार रूपाधिक अतिस्थापनामात्र अनुभागको छोड़ कर शेष सब अनुभाग उत्कृष्ट निक्षेपका विषय है। अब इसकी यदि उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकसे तुलना करते हैं तो वह उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकसे विशेष अधिक ही प्राप्त होता है। कितना विशेष अधिक होता है इसका निर्देश टीकाकारने स्वयं किया है। उसका आशय यह है कि पूरे अनुभागमेंसे उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकको और रूपाधिक जघन्य अतिस्थापनामात्र अनुभागको कम कर दो। इस प्रकार कम करनेसे जो शेष रहे वह अधिकका प्रमाण है। उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकसे उत्कृष्ट निक्षेप इतना बड़ा होता है।

* उससे उत्कृष्ट बन्ध विशेष अधिक है।

§ २०. कितना अधिक है ? रूपाधिक जघन्य अतिस्थापनामात्र अधिक है।

इस प्रकार अपकर्षणसंक्रमकी अर्थप्ररूपणा समाप्त हुई।

* उत्कर्षणकी प्ररूपणा ।

§ २१. आगे उत्कर्षणकी अपेक्षा अचरम स्पर्धकका अधिकार है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* अन्तिम स्पर्धकका उत्कर्षण नहीं होता ।

§ २२. क्योंकि अन्तिम स्पर्धकके ऊपर अतिस्थापना और निक्षेपकी प्राप्ति सम्भव नहीं है।

* द्विचरम स्पर्धकका भी उत्कर्षण नहीं होता ।

§ २३. यहाँ पर भी अतिस्थापना और निक्षेपकी प्राप्ति सम्भव नहीं है यही कारण कहना चाहिए।

* इस प्रकार अनन्त स्पर्धक नीचे आकर जो स्पर्धक स्थित है उसका उत्कर्षण हो सकता है।

§ २४. एवं तिचरिम-चदुचरिमादिकमेणाणंताणि फद्दयाणि जहण्णाइच्छावणा-णिक्खेव-मेत्ताणि हेट्ठदो ओसरिदूण तदित्थफद्दयमुक्कड्डिज्जदि, तत्थाइच्छावणा-णिक्खेवाणं पडिवुण्णत्त-दंसणादो। एत्तो हेट्ठिमफद्दयाणं जहण्णफद्दयपज्जंताणमुक्कड्डणाए णत्थि पडिसेहो। एत्थ जहण्णाइच्छावणा-णिक्खेवादिपदाणं पमाणविसयणिण्णयजणणट्ठमप्पाबहुअसुत्तमाह—

❀ सव्वत्थोवो जहण्णओ णिक्खेवो।

§ २५. किंपमाणो एस जहण्णणिक्खेवो? एयपदेसगुणहाणिट्ठाणंतरफद्दएहिंतो अणंतगुणमेत्तो।

❀ जहण्णिया अइच्छावणा अणंतगुणा।

§ २६. ओकड्डणा-जहण्णाइच्छावणाए समाणपरिमाणत्तादो।

❀ उक्कस्सओ णिक्खेवो अणंतगुणो।

§ २७. मिच्छाइट्ठिणा उक्कस्साणुभागे बज्झमाणे जहण्णफद्दयादिवग्गणमुक्कड्डणाए रूवाहियजहण्णाइच्छावणापरिहीणुक्कस्साणुभागबंधमेत्तुक्कस्सणिक्खेवदंसणादो। एसो च ओकड्डुक्कड्डणासु समाणपरिमाणो।

❀ उक्कस्सओ बंधो विसेसाहिओ।

§ २८. केत्तियमेत्तेण? रूवाहियजहण्णाइच्छावणामेत्तेण।

---

§ २४. इस प्रकार त्रिचरम और चतुश्चरम आदिके क्रमसे जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेपप्रमाण अनन्त स्पर्धक नीचे सरककर वहाँ पर स्थित स्पर्धकका उत्कर्षण हो सकता है, क्योंकि वहाँ पर अतिस्थापना और निक्षेप ये दोनों पूरे देखे जाते हैं। इससे लेकर जघन्य स्पर्धक पर्यन्त नीचेके सब स्पर्धकोंका उत्कर्षण होनेमें प्रतिषेध नहीं है। अब यहाँ पर जघन्य अतिस्थापना और जघन्य निक्षेप आदि पदोंके प्रमाणविषयक निर्णयको उत्पन्न करनेके लिए अल्पबहुत्व सूत्र कहते हैं—

* जघन्य निक्षेप सबसे स्तोक है।

§ २५. शंका—इस जघन्य निक्षेपका क्या प्रमाण है?

समाधान—एकप्रदेशगुणहानिस्थानान्तरसे उसका प्रमाण अनन्तगुणा है।

* उससे जघन्य अतिस्थापना अनन्तगुणी है।

§ २६. क्योंकि यह अपकर्षण विषयक जघन्य अतिस्थापनाके बराबर है।

* उससे उत्कृष्ट निक्षेप अनन्तगुणा है।

§ २७. क्योंकि यह मिथ्यादृष्टिके द्वारा उत्कृष्ट अनुभागबन्ध करनेके बाद जघन्य स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका उत्कर्षण करने पर रूपाधिक जघन्य अतिस्थापनासे हीन उत्कृष्ट अनुभागबन्धप्रमाण उत्कृष्ट निक्षेप देखा जाता है। अपकर्षण और उत्कर्षण दोनों स्थलों पर इस निक्षेपका परिमाण बराबर है।

* उससे उत्कृष्ट बन्ध विशेष अधिक है।

§ २८. कितना अधिक है? रूपाधिक जघन्य अतिस्थापनाका जितना प्रमाण है उतना अधिक है।

✽ ओकड्डणादो उक्कड्डणादो च जहण्णिया अइच्छावणा तुल्ला। जहण्णओ णिक्खेवो तुल्लो।

§ २९. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि। एवमुकड्डणाए अत्थपदपरूवणा समत्ता। परपयडिसंकमे अइच्छावणा-णिक्खेवविसेसाभावादो तव्विसयपरूवणा कया। एवमणुभागसंकमस्स मूलुत्तरपयडिसंबंधित्तेण दुविहाविहत्तस्स परूवणाबीजमट्ठपदं काऊण जहा उद्देसो तहा णिद्देसो त्ति णायादो मूलपयडिअणुभागसंकमो चेव पढमं विहासियव्वो त्ति तप्परूवणाणिबंधणमुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

✽ एदेण अट्ठपदेण मूलपयडिअणुभागसंकमो।

§ ३० एदेणाणंतरपरूविदेणट्ठपदेण मूलपयडिअणुभागसंकमो ताव विहासणिज्जो। तत्थ च तेवीसमणिओगद्दाराणि णादव्वाणि त्ति उवरिमसुत्तमाह—

✽ तत्थ च तेवीसमणिओगद्दाराणि सण्णा जाव अप्पाबहुए त्ति २३।

§ ३१. एत्थ मूलपयडिविवक्खाए सण्णियासंसंभवाभावादो। सण्णादीणि तेवीसमणिओगद्दाराणि वुत्ताणि। किमेदाणि चेव तेवीसमणिओगद्दाराणि मूलपयडिअणुभागसंकमे पडिबद्धाणि, उदाहो अण्णो वि परूवणाभेदो तव्विसयो अत्थि त्ति आसंकाए इदमाह—

✽ भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढि त्ति भाणिदव्वा।

✽ अपकर्षण और उत्कर्षण दोनोंकी अपेक्षा जघन्य अतिस्थापना तुल्य है और जघन्य निक्षेप भी तुल्य है।

§ २९. ये दोनों सूत्र सुगम हैं। इस प्रकार उत्कर्षणकी अपेक्षा अर्थपदप्ररूपणा समाप्त हुई। परप्रकृतिसंक्रममें अतिस्थापना और निक्षेपविशेषका अभाव होनेसे उसके विषयकी प्ररूपणा की है। इस प्रकार मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतिके सम्बन्धसे दो भेदरूप अनुभागसंक्रमकी प्ररूपणाके बीजरूप अर्थपदको करके उद्देशके अनुसार निर्देश होता है इस न्यायका अनुसरण कर सर्व प्रथम मूलप्रकृति-अनुभागसंक्रमका ही विशेष व्याख्यान करना चाहिए, इसलिए उसकी प्ररूपणाके कारणरूप उत्तर सूत्रको कहते हैं—

✽ इस अर्थपदके अनुसार मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रम कहना चाहिये।

§ ३०. इस अर्थात् पहले कहे गये अर्थपदके अनुसार मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रमका सर्व प्रथम व्याख्यान करना चाहिए। उसके विषयमें तेईस अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं यह बतलानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

✽ उसके विषयमें संज्ञासे लेकर अल्पबहुत्व तक तेईस अनुयोगद्वार होते हैं।

§ ३१. क्योंकि यहाँ पर मूलप्रकृतिकी विवक्षा होनेसे सन्निकर्ष सम्भव नहीं है, इसलिए यहाँ पर चौबीस अनुयोगद्वार न होकर तेईस अनुयोगद्वार ही होते हैं। संज्ञा आदिक तेईस अनुयोगद्वार पहले कह आये हैं। क्या मात्र ये तेईस अनुयोगद्वार ही मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रमसे सम्बन्ध रखते हैं या अन्य भी तद्विषयक प्ररूपणाभेद है ऐसी आशंका होने पर यह सूत्र कहा है।

✽ तथा भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि ये तीन अनुयोगद्वार भी कहने चाहिए।

§ ३२. पुव्वसुत्तुद्दिट्ठतेवीसमणिओगद्दाराणं चूलियाभूदेहि एदेहि तीहि अणियोगभेदेहि मूलपयडिअणुभागसंकमो अवगंतव्वो, अण्णहा तव्विसयविसेसणिण्णयाणुप्पत्तीदो त्ति भणिदं होदि।

§ ३३. संपहि एदेसिं तेवीसमणिओगद्दाराणं सचूलियाणं सुगमत्तादो चुण्णिसुत्तयारेण णामुद्देसमेत्तेणेव परूविदाणमुच्चारणाइरियपरूविदविवरणमणुवत्तइस्सामो। तं जहा—मूलपयडिअणुभागसंकमे तत्थ इमाणि २३ तेवीस अणियोगद्दाराणि—सण्णा जाव अप्पाबहुए त्ति भुज० पदणिक्खेवो वड्ढी चेदि। तत्थ सण्णा दुविहा—घादिसण्णा ठाणसण्णा च। तदुभयपरूवणाए अणुभागविहत्तिभंगो। सव्वसंकमो णोसव्वसंकमो उक्कस्ससंकमो अणुक्कस्ससंकमो जहण्णसंकमो अजहण्णसंकमो इच्चेदेसिं च परूवणाए विहत्तिभंगो चेव, विसेसाभावादो।

§ ३४. सादि-अणादि-धुव-अद्धुवाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० उक्क० अणुक्क० जह० अणुभागसंकमो किं सादि० ४? सादी अद्धुवो। अज० किं सादी० ४? सादी अणादी धुवो अद्धुवो वा। सेसासु मग्गणासु उक्क० अणुक्क० जह० अजह० सादी अद्धुवो च।

§ ३२. पूर्वमें निर्दिष्ट किये गये तेईस अनुयोगद्वारोंके चूलिकारूप इन तीन अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे मूलप्रकृतिअनुभागसंकमको जानना चाहिए, अन्यथा तद्विषयक विशेष निर्णय नहीं बन सकता यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ३३. अब सुगम होनेसे चूर्णिसूत्रकारके द्वारा केवल नामोल्लेखरूपसे कहे गये चूलिकासहित इन तेईस अनुयोगद्वारोंके उच्चारणाचार्यद्वारा कहे गये विवरणको बतलाते हैं। यथा—मूलप्रकृति-अनुभागसंक्रममें संज्ञासे लेकर अल्पबहुत्वतक ये तेईस अनुयोगद्वार होते हैं। तथा भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धि ये तीन अनुयोगद्वार और होते हैं। उनमें संज्ञा दो प्रकारकी है—घातिसंज्ञा और स्थानसंज्ञा। इन दोनोंका कथन अनुभागविभक्तिके समान है। तथा सर्वसंक्रम, नोसर्वसंक्रम, उत्कृष्टसंक्रम, अनुत्कृष्टसंक्रम, जघन्यसंक्रम और अजघन्यसंक्रम इनका कथन भी अनुभागविभक्तिके समान ही है, क्योंकि वहाँसे यहाँ कोई विशेषता नहीं है।

§ ३४. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य अनुभाग संक्रम क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है या क्या अध्रुव है? सादि और अध्रुव है। अजघन्य अनुभागसंक्रम क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है या क्या अध्रुव है? सादि, ध्रुव और अध्रुव है। शेष गतिसम्बन्धी मार्गणाओंमें उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य, अनुभागसंक्रम सादि और अध्रुव है।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम और अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम कादाचित्क हैं। तथा जघन्य अनुभागसंक्रम क्षपकश्रेणिमें यथास्थान होता है अन्यत्र नहीं, इसलिए ये तीनों अनुभागसंक्रम सादि और अध्रुव कहे हैं। अब रहा अजघन्य अनुभागसंक्रम सो यह क्षायिकसम्यग्दृष्टिके उपशान्तमोह गुणस्थानमें नहीं होता। किन्तु वहाँसे गिरने पर पुनः होने लगता है, इसलिए तो सादि है और उस स्थानको प्राप्त होनेके पूर्वतक अनादि है। तथा भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव और अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव है। इस प्रकार अजघन्य अनुभागसंक्रम चारों प्रकारका है। यह ओघप्ररूपणा

§ ३५ सामित्तं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क० अणुभागसंकमो कस्स ? अण्णदरस्स उक्कस्साणुभागं बंधिदूणावलियादीदस्स अण्णदरगदीए वट्टमाणयस्स । आदेसेण णेरइय० मोह० उक्क० अणुभागसंकमो कस्स ? अण्णदरस्स उक्कस्साणुभागं बंधियूणावलियादीदस्स । एवं सव्वणेरइय०–सव्वतिरिक्ख०–सव्वमणुस०–सव्वदेवा त्ति । णवरि पंचिं०तिरि०अपज्ज०–मणुसअपज्ज०–आणदादि सव्वट्ठा त्ति विहत्तिभंगो । एवं जाव० ।

§ ३६. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह० अणुभागसंकमो कस्स ? अण्णदरस्स खवयस्स समयाहियावलियचरिमसमयसकसायस्स । एवं मणुसतिए । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

है । आदेशसे गतिसम्बन्धी सब मार्गणाओंमें उत्कृष्ट आदि चारों भंग सादि और अध्रुव होते हैं, क्योंकि सब मार्गणाएँ कदाचित्क हैं, अन्य मार्गणाओंकी अपेक्षा यदि विचार करें तो मात्र अचक्षुदर्शनमार्गणामें ओघके समान भङ्ग जानना चाहिए तथा भव्यमार्गणामें ध्रुव भङ्ग नहीं होता । कारण स्पष्ट है ।

§ ३५. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीयके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ? उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करके जिसका एक आवलि काल गया है ऐसा अन्यतर गतिमें विद्यमान जीव उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका स्वामी है । आदेशसे नारकियोंमें मोहनीयके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम-का स्वामी कौन है ? उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करके जिसका एक आवलि काल गया है ऐसा अन्यतर नारकी जीव मोहनीयके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका स्वामी है । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सब मनुष्य और सब देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अनुभाग विभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेके बाद एक आवलि काल व्यतीत होने पर ही उसका संक्रम सम्भव है, इसलिए यहाँ पर बन्धावलिके बाद ही मोहनीयके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका स्वामित्व दिया है । ओघसे तो यह बन ही जाता है । किन्तु चारों गतियोंके अवान्तर भेदोंमें जहाँ जहाँ उत्कृष्ट अनुभागबन्ध सम्भव है उन मार्गणाओंमें भी यह बन जाता है । मात्र पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और आनतादि कल्पोंके देवोंमें यह उत्कृष्ट अनुभागबन्ध सम्भव नहीं है, इसलिए इनमें उसे अनुभागविभक्तिके उत्कृष्ट स्वामित्वके समान जाननेकी सूचना की है ।

§ ३६. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मोहनीय-के जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ? जिसके सकषाय अवस्थामें एक समय अधिक आवलि काल शेष है ऐसा अन्तिम समयमें विद्यमान अन्यतर क्षपक जीव मोहनीयके जघन्य अनुभाग-संक्रमका स्वामी है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । शेष मार्गणाओंमें अनुभाग विभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—मोहनीयका जघन्य अनुभागसंक्रम क्षपक सूक्ष्मसाम्परायके कालमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने पर होता है, क्योंकि संक्रमके योग्य सबसे जघन्य अनुभाग यहीं

§ ३७. कालो दुविहो—जह०उक्क०। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो, ओघेण आदेसेण य। मोह० उक्क० अणु० अणुभागसंकमो विहत्तिभंगो।

§ ३८. जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह०जह० अणुभागसंकम० केव० ? जह० उक्क० एयसमओ। अज० तिण्णि भंगा। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो, जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। मणुसतिए जह० अणुभागसंक० जह० उक्क० एयसमओ। अज० अणुभागसंक० जह० एयसमओ, उक्क० सगट्ठिदी। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

पर पाया जाता है। यह अवस्था ओघसे तो सम्भव है ही, मनुष्यत्रिकमें भी सम्भव है, क्योंकि मनुष्यत्रिक ही क्षपकश्रेणि पर आरोहण करते हैं, इसलिए मनुष्यत्रिकमें तो ओघप्ररूपणाके समान ही स्वामित्वके जाननेकी सूचना की है। मात्र अन्य गतियोंमें यह व्यवस्था नहीं बन सकती, इसलिए उनमें अनुभागविभक्तिके जघन्य स्वामित्वके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ३७. काल दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टसंक्रमका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रमके जघन्य और उत्कृष्ट कालका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट अनुभागबन्ध होकर एक आवलिके बाद अनुभागकाण्डकघात द्वारा उसका अन्तर्मुहूर्तमें संक्रम हो सकता है, इसलिए ओघसे इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। तथा उत्कृष्टके बाद अनुत्कृष्ट होने पर यह कमसे कम अन्तर्मुहूर्त तक और अधिकसे अधिक ऐसे जीवके एकेन्द्रिय पर्यायमें चले जाने पर अनन्तकाल तक रहता है, इसलिए ओघसे मोहनीयके अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अनन्तकालप्रमाण कहा है। सामान्य तिर्यञ्चोंमें यह काल इसी प्रकार बन जाता है। मात्र इनमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है, क्योंकि जो अन्य गतिका जीव जीवनके अन्तमें उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम कर रहा है उसके उस संक्रममें एक समय काल शेष रहनेपर यदि वह मर कर तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हो जाता है तो सामान्य तिर्यञ्चोंमें उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय बन जाता है। तथा जो तिर्यञ्च जीवनके अन्तमें एक समय शेष रहने पर अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करता है उसके अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय बन जाता है। इसी प्रकार अन्य गतियोंमें भी अनुभागविभक्तिके अनुसार काल घटित हो जाता है, इसलिए यहाँ पर उक्त सब मार्गणाओंमें उत्कृष्ट कालको अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ३८. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके जघन्य अनुभागसंक्रमका कितना काल है? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य अनुभागसंक्रमके तीन भङ्ग हैं। उनमें जो सादि-सान्त भङ्ग है उसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर है। मनुष्यत्रिकमें जघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी कायस्थितिप्रमाण है। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—ओघसे मोहनीयका जघन्य अनुभागसंक्रम दसवें गुणस्थानमें क्षपकके एक समयके लिए होता है, इसलिए इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। तथा जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि प्रथम बार उपशमश्रेणिसे उतर कर अन्तर्मुहूर्तमें पुनः उपशमश्रेणि पर आरोहण कर उपशान्तमोह गुणस्थानको प्राप्त होता है उसके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि यह विधि साधिक तेतीस सागरके अन्तरसे करता है उसके अजघन्य

§ ३९. अंतरं दुविहं—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० उक्क० अणुभागसंकमंतरं जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । अणु० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु० । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

§ ४०. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मोह० जह० णत्थि अंतरं । अज० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमुहुत्तं । मणुसतिए मोह० जह० णत्थि अंतरं । अज० जह० उक्क० अंतोमुहुत्तं । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

अनुभागसंक्रमका उत्कृष्ट काल साधिक तेतीस सागर प्रमाण प्राप्त होनेसे यह दोनों प्रकारका काल उक्तप्रमाण कहा है। मनुष्यत्रिकमें अजघन्य अनुभागसंक्रमके उत्कृष्ट कालको छोड़कर शेष सब काल ओघके समान ही घटित कर लेना चाहिए। मात्र अजघन्य अनुभागसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी कायस्थितिके प्रारम्भमें और अन्तमें उपशमश्रेणिपर आरोहण करानेसे कुछ कम अपनी-अपनी कायस्थितिप्रमाण प्राप्त होता है, इसलिए यह उक्त प्रमाण कहा है। शेष गतिमार्गणाओंमें काल अनुभागविभक्तिके समान यहाँ बन जानेसे उसे उसके समान जाननेकी सूचना की है।

§ ३९. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—एक वार मोहनीयके उत्कृष्ट अनुभागबन्धके रुकनेके बाद पुनः उत्कृष्ट अनुभाग बन्ध अन्तर्मुहूर्तके पहले नहीं होता ऐसा नियम है, अतः यहाँ पर ओघसे उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। तथा जो संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त जीव उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम करके एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर अनन्त कालके बाद पुनः संज्ञी पञ्चेन्द्रिय होकर उत्कृष्ट अनुभागबन्धपूर्वक उसका संक्रम करता है उसके उसका उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल देखा जाता है, अतः ओघसे उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल कहा है। कोई क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थानमें एक समयके लिए मोहनीयके अनुत्कृष्ट अनुभागका असंक्रामक होकर दूसरे समयमें मरकर देव होकर पुनः उसका संक्रामक हो जाय यह भी सम्भव है और कोई अन्य जीव मोहनीयके उत्कृष्ट अनुभागका अन्तर्मुहूर्त काल तक संक्रम करता रहे यह भी सम्भव है, इसलिए यहाँ पर मोहनीयके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है यह स्पष्ट ही है।

§ ४०. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघ से मोहनीयके जघन्य अनुभागसंक्रमका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। मनुष्यत्रिकमें मोहनीयके जघन्य अनुभागसंक्रमका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ४१. सेसाणमणिओगद्दाराणमणुभागविहत्तिभंगो। णवरि संकमालावो कायव्वो।

एवं तेवीसमणिओगद्दाराणि समत्ताणि।

§ ४२ भुजगारे त्ति तत्थ इमाणि तेरस अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अत्थि भुज०-अप्प०-अवट्ठि०-अवत्त०संकामया। एवं मणुसतिए। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

§ ४३. सामित्ताणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघो विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त०संक० कस्स? अण्णद० जो इगिवीससंतकम्मिओवसामगो सव्वोवसामणादो परिवदमाणगो देवो वा पढमसमयसंकामगो। एवं मणुसतिए। णवरि देवो त्ति ण भाणियव्वो। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

§ ४४. कालो विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त० जह० उक्क० एयसमओ।

§ ४५. अंतराणुग० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघो विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० सादिरेयाणि। मणुसतिए

विशेषार्थ—मोहनीयका जघन्य अनुभागसंक्रम क्षपक सूक्ष्मसाम्परायिकके होता है, इसलिए ओघसे तथा मनुष्यत्रिकमें इसके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा अजघन्य अनुभागसंक्रमके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालका खुलासा अनुत्कृष्टके समान है। मनुष्योंमें भी यह इसी प्रकार बन जाता है। मात्र जघन्य अन्तर एक समय नहीं बनता, क्योंकि स्वस्थानकी अपेक्षा उपशान्तमोहका काल अन्तर्मुहूर्त है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ४१. शेष अनुयोगद्वारोंका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि सत्कर्मके स्थानमें संक्रमका आलाप करना चाहिए।

इस प्रकार तेईस अनुयोगद्वार समाप्त हुए।

§ ४२. भुजगारसंक्रमका प्रकरण है। उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्वतक तेरह अनुयोगद्वार होते हैं। समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे भुजगारसंक्रामक, अल्पतरसंक्रामक, अवस्थितसंक्रामक और अवक्तव्यसंक्रामक जीव हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ४३. स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रमका स्वामी कौन है? इक्कीस प्रकृतियोंका सत्कर्मवाला जो अन्यतर उपशामक जीव सर्वोपशमनासे गिर कर देव हो गया या प्रथम समयमें संक्रामक हो गया वह अवक्तव्यसंक्रमका स्वामी है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अवक्तव्यसंक्रमका स्वामित्व कहते समय सर्वोपशमनासे गिरते हुए मर कर देव हो गया यह भङ्ग नहीं कहना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ४४. कालका भङ्ग अनुभागविभक्तके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

§ ४५. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर है। मनुष्यत्रिकमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडी देसूणा। सेसमग्गणाओ विहत्तिभंगो।

§ ४५. णाणाजीवभंगविचयाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० भुज०-अप्प०-अवट्ठि०संकामया णियमा अत्थि। सिया एदे च अवत्तव्वओ च। सिया एदे च अवत्तव्वया च। मणुसतिए भुज०-अवट्ठि० णियमा अत्थि। सेसपदाणि भयणिज्जाणि। सेसमग्गणाणं विहत्तिभंगो।

§ ४६. भागाभागाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघो विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त०संका० अणंतिमभागो। मणुसेसु विहत्तिभंगो। णवरि अवत्तव्व० असंखे०भागो। मणुसपज्ज०—मणुसिणी० मोह० अवट्ठि० संखेज्जा भागा। सेससंका० संखे०भागो। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

§ ४७. परिमाणं विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त० संखेज्जा।

इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटिप्रमाण है। शेष मार्गणाओंका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है।

विशेषार्थ—क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव कमसे कम अन्तर्मुहूर्तके अन्तरसे और अधिकसे अधिक साधिक तेंतीस सागरके अन्तरसे उपशमश्रेणिपर आरोहण करता है, इसलिए तो ओघसे अवक्तव्य-संक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर साधिक तेतीस सागर कहा है। तथा मनुष्यत्रिकमें जघन्य अन्तर तो ओघके समान ही प्राप्त होता है। मात्र उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम एक पूर्वकोटिसे अधिक नहीं हो सकता। कारण स्पष्ट ही है। शेष कथन सुगम है।

§ ४५. नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचयानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके भुजगारसंक्रामक, अल्पतरसंक्रामक और अवस्थितसंक्रामक नाना जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये नाना जीव हैं और एक अवक्तव्यसंक्रामक जीव है। कदाचित् ये नाना जीव हैं और नाना अवक्तव्यसंक्रामक जीव हैं। मनुष्यत्रिकमें भुजगारसंक्रामक और अवस्थितसंक्रामक नाना जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। शेष मार्गणाओंका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है।

§ ४६. भागाभागानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अनुभाग-विभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रामक जीव सब जीवोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं। मनुष्योंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य-संक्रामक जीव सब मनुष्योंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अवस्थितसंक्रामक जीव उक्त दोनों प्रकारके मनुष्योंके संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। तथा शेष पदोंके संक्रामक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ४७. परिमाणका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है अवक्तव्यसंक्रामक जीव संख्यात हैं।

§ ४८. खेत्तं पोसणं विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त०संका० लोगस्स असंखे०भागो कायव्वो।

§ ४९. कालो विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त०संका० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया।

§ ५०. अंतरं विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त०संका० जह० एयस०, उक्क० वासपुधत्तं।

§ ५१. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो।

§ ५२. अप्पाबहुआणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अवत्त०-संका० थोवा। अप्पद०संका० अणंतगुणा। भुज०संका० असंखे०गुणा। अवट्ठि०संका० संखे०गुणा। मणुसेसु सव्वत्थोवा अवत्त०संका०। अप्पद०संका० असंखे०गुणा। भुज०-संका० असंखे०गुणा। अवट्ठि०संका० संखे०गुणा। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणीसु। णवरि संखेज्जगुणं कायव्वं। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

---

§ ४८. क्षेत्र और स्पर्शनका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य संक्रामक जीवोंका क्षेत्र और स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण करना चाहिए।

§ ४९. नाना जीवोंकी अपेक्षा कालका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।

विशेषार्थ—क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणिसे उतरते हुए यदि एक समयके लिए अवक्तव्यसंक्रामक होते हैं तो इसका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है और यदि नाना जीव लगातार पहले समयमें अन्य जीव और दूसरे समयमें अन्य जीव इस क्रमसे संख्यात समय तक नाना जीव अवक्तव्यपदके संक्रामक होते हैं तो इसका उत्कृष्ट काल संख्यात समय तक प्राप्त होता है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§५०. अन्तरका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रामकों-का जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है।

विशेषार्थ—उपशमश्रेणिके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरको ध्यानमें रख कर यहाँ पर अवक्तव्यसंक्रामकोंका यह अन्तर कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ५१. भाव सर्वत्र औदयिक है।

§ ५२. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं। उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं। मनुष्योंमें अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यहाँ पर असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ५३. पदणिक्खेवे त्ति तत्थ इमाणि तिण्णि अणिओगद्दाराणि—समुकित्त० सामित्त-मप्पाबहु० । समुक्कित्तणाए विहत्तिभंगो ।

§ ५४. सामित्तं दुविहं—जह० उक्क०। उक्क० पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ? अण्णदरस्स जो तप्पाओग्गजहण्णयमणुभागं संकामेंतो तदो उक्कस्ससंकिलेसं गदो। तदो उक्कस्साणुभागं पबद्धो तस्स आवलियादीदस्स उक्क० वड्ढी। तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। उक्क० हाणी कस्स ? अण्णदरेण उक्कस्साणुभागं संकामेंतेण उक्क० अणुभागखंडए हदे तस्स उक्कस्सिया हाणी। एवं चदुसु गदीसु। णवरि पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०—मणुसअपज्ज०—आणदादि जाव सव्वट्ठा त्ति विहत्तिभंगो।

§ ५५. जहण्णए पयदं। विहत्तिभंगो।

§ ५६. अप्पाबहुअं विहत्तिभंगो।

§ ५७. वड्ढिसंकमे तत्थ इमाणि तेरस अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा जाव अप्पबहुए त्ति। समुक्कित्तणाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० अत्थि छव्विहा वड्ढि हाणी अवट्ठाणमवत्तव्वं च। एवं मणुसतिए। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

§ ५८. सामित्तं विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त० भुजगारभंगो।

---

§ ५३. पदनिक्षेपका प्रकरण है। उसमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व। समुत्कीर्तनाका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है।

§ ५४. स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जिस जीवने तत्प्रायोग्य जघन्य अनुभागका संक्रमण करते हुए उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध किया, एक आवलिके बाद वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है। तथा वही जीव अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है। उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ? अन्यतर जिस जीवने उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करते हुए उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकका घात किया है वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ५५. जघन्यका प्रकरण है। उसका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है।

§ ६६. अल्पबहुत्वका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है।

§ ५७. वृद्धिसंक्रमका प्रकरण है। उसमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक ये तेरह अनुयोगद्वार होते हैं। समुत्कीर्तनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके छह वृद्धि, छह हानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके संक्रामक जीव हैं। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ५८. स्वामित्वका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य-संक्रमका भङ्ग भुजगारके समान है।

§ ५९. कालो विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त० भुजगारभंगो।

§ ६०. अंतरं णाणाजीवेहि भंगविचओ भागाभागं परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो अंतरं भावो च विहत्तिभंगो। णवरि अवत्त० भुजगारभंगो।

§ ६१. अप्पाबहुआणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० सव्वत्थोवा अवत्त०संका०। अणंतभागहाणिसंका० अणंतगुणा। सेसपदाणं विहत्तिभंगो। मणुस्सेसु सव्वत्थोवा अवत्त०। अणंतभागहा० असंखे०गुणा। उवरि ओघं। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी०। णवरि संखे०गुणं कायव्वं। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

§ ६२. ठाणाणमणुभागविहत्तिभंगाणुसारेण परूवणा कायव्वा।

एवं मूलपयडिअणुभागसंकमो समत्तो।

* तदो उत्तरपयडिअणुभागसंकमं चउवीसअणियोगद्दारेहि वत्तइस्सामो।

§ ६३. तदो मूलपयडिअणुभागसंकमविहासणादो अणंतरं पुव्वपरूविदेण अट्ठपदेण उत्तरपयडिविसयमणुभागसंकमं वत्तइस्सामो त्ति एसा पइज्जा सुत्तयारस्स। तत्थाणियोगद्दाराणमियत्तावहारणट्ठमिदं वुत्तं 'चउवीसमणियोगद्दारेहिं' त्ति। काणि ताणि चउवीसअणिओगद्दाराणि? सण्णा सव्वसंकमो णोसव्वसंकमो उक्कस्ससंकमो अणुक्कस्ससंकमो जहण्णसंकमो

§ ५९. कालका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यका भङ्ग भुजगारके समान है।

§ ६०. अन्तर, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर और भावका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यका भङ्ग भुजगारके समान है।

§ ६१. अल्पबहुत्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनन्तभागहानिके संक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं। शेष पदोंका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। मनुष्योंमें अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अनन्तभागहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। आगे ओघके समान भङ्ग है। इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ६२ स्थानोंका अनुभागविभक्तिके भङ्गके अनुसार प्ररूपणा करना चाहिए।

इस प्रकार मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रम समाप्त हुआ।

* अब चौबीस अनुयोगद्वारोंका आश्रय लेकर उत्तरप्रकृतिअनुभागसंक्रमका कथन करेंगे।

§ ६३. 'तदो' अर्थात् मूलप्रकृतिअनुभागसंक्रमका कथन करनेके बाद पूर्वमें कहे गये अर्थपदके आश्रयसे उत्तरप्रकृतिविषयक अनुभागसंक्रमको कहेंगे इस प्रकार सूत्रकारकी यह प्रतिज्ञा है। वहाँ अनुयोगद्वारोंकी इयत्ताका निश्चय करनेके लिए 'चउवीसमणियोगद्दारेहिं' यह वचन कहा है। वे चौबीस अनुयोगद्वार कौन हैं ऐसा प्रश्न होने पर उनका नामनिर्देश करते हैं। यथा—संज्ञा, सर्वसंक्रम, नोसर्वसंक्रम, उत्कृष्ट संक्रम, अनुत्कृष्ट संक्रम, जघन्य संक्रम, अजघन्य संक्रम, सादि

अजहण्णसंकमो सादियसंकमो अणादियसंकमो धुवसंकमो अद्धुवसंकमो एगजीवेण सामित्तं कालो अंतरं सण्णियासो णाणाजीवेहि भंगविचओ भागाभागो परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो अंतरं भावो अप्पाबहुअं चेदि । एदेसिं च जुगवं वोत्तुमसत्तीदो कमावलंबणेण सण्णाणिओगद्दारमेव ताव विहासिदुकामो सुत्तमुत्तरं भणइ—

* तत्थ पुव्वं गमणिज्जा घादिसण्णा च ट्ठाणसण्णा च ।

§ ६४. 'तत्थ' तेसु चउवीसमणिओगद्दारेसु 'पुव्वं' पढमदरमेव ताव 'गमणिज्जा' अणुमंतव्वा घादिसण्णा च ठाणसण्णा च । एदेण सण्णाए दुविहत्तं पदुप्पाइदं । तत्थ घादिसण्णा णाम मिच्छत्तादिकम्माणमुक्कस्सादिअणुभागसंकमफद्दएसु देस-सव्वघादित्तपरिक्खा । ट्ठाणसण्णा च तेसिमेवाणुभागसंकमफद्दयाणं जहासंभवमेगट्ठाणिय-विट्ठाणिय-तिट्ठाणिय-चउट्ठाणियभावगवेसणा । संपहि दोण्हमेदासिं सण्णाणं णिद्देसं कुणमाणो सुत्तकलावमुत्तरं भणइ—

* सम्मत्त-चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं मोत्तूण सेसाणं कम्माणमणुभागसंकमो णियमा सव्वघादी वेट्ठाणिओ वा तिट्ठाणिओ वा चउट्ठाणिओ वा ।

§ ६५. सम्मत्त-चदुसंजलण-पुरिसवेदाणमणुभागसंकमं मोत्तूण सेसकम्माणं मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसक०-अट्ठणोकसायाणमणुभागसंकमो उक्कस्सो अणु० जहण्णो अजहण्णो च सव्वघादी चेव, देसघादिसरूवेण सव्वकालमेदेसिमणुभागसंकमपवुत्तीए असंभवादो । सो पुण विट्ठाणिओ तिट्ठाणिओ चउट्ठाणिओ वा । एयट्ठाणियो णत्थि, सव्वघादित्तणेण तस्स

संक्रम, अनादि संक्रम, ध्रुवसंक्रम, अध्रुवसंक्रम, एक जीवकी अपेक्षा स्वामित्व, काल, अन्तर सन्निकर्ष, नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व । किन्तु इनका एक साथ कथन करना असम्भव है, इसलिए क्रमका अवलम्बन लेकर संज्ञा अनुयोगद्वारको ही सर्व प्रथम कहनेकी इच्छासे आगेका सूत्र कहते हैं—

* उनमें सर्व प्रथम घातिसंज्ञा और स्थानसंज्ञा जानने योग्य है ।

§ ६४. 'तत्थ' उन चौबीस अनुयोगद्वारोंमें 'पुव्वं' अर्थात् सर्व प्रथम घातिसंज्ञा और स्थानसंज्ञा 'गमणिज्जा' अर्थात् जानने योग्य है । इस प्रकार इस सूत्र द्वारा संज्ञा दो प्रकारकी कही गई है । उनमेंसे मिथ्यात्व आदि कर्मोंके उत्कृष्ट आदि अनुभागसंक्रमरूप स्पर्धकोंमेंसे कौन स्पर्धक देशघाति हैं और कौन स्पर्धक सर्वघाति हैं इस प्रकारकी परीक्षा करना घातिसंज्ञा कहलाती है । तथा उन्हीं अनुभागसंक्रमरूप स्पर्धकोंके एकस्थानिक, द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिकभावकी गवेषणा करना स्थानसंज्ञा कहलाती है । अब इन दोनों संज्ञाओंका निर्देश करते हुए आगेका सूत्र कलाप कहते हैं—

* सम्यक्त्व, चार संज्वलन और पुरुषवेदको छोड़ कर शेष कर्मोंका अनुभागसंक्रम नियमसे सर्वघाति तथा द्विस्थानक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिक होता है ।

§ ६५. सम्यक्त्व, संज्वलन चार और पुरुषवेदके अनुभागसंक्रमको छोड़ कर मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषाय इन शेष कर्मोंका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रम सर्वघाति ही होता है, क्योंकि इनके अनुभागसंक्रमकी सर्वदा देशघातिरूपसे प्रवृत्ति होना असम्भव है । परन्तु वह अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक या चतुःस्थानिक होता

पडिसिद्धत्तादो। तत्थुक्कस्साणुभागसंकमो चउट्ठाणिओ चेव, तत्थ पयारंतराणुवलंभादो। अणुक्कस्साणुभागसंकमो पुण चउट्ठाणिओ तिट्ठाणिओ विट्ठाणिओ वा, तिण्हमेदेसिं भावाणं तत्थ संभवादो। जहण्णाणुभागसंकमो विट्ठाणिओ चेव, तत्थ पयारंतरासंभवादो। अजहण्णाणुभागसंकमो विट्ठाणिओ तिट्ठाणिओ चउट्ठाणिओ वा, तिविहस्स वि भावस्स तत्थ संभवादो। एदेण सामण्णवयणेण सम्मामिच्छत्तस्स वि सव्वघादित्तेणावहारियस्स तिट्ठाणिय-चउट्ठाणियाणुभागसंकमाइप्पसंगे तण्णिवारणट्ठमुत्तमाह—

*** णवरि सम्मामिच्छत्तस्स वेट्ठाणिओ चेव।**

§ ६६. सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्साणुक्कस्स-जहण्णाजहण्णाणुभागसंकमो वेट्ठाणियत्तेणावहारेयव्वो, दारुअसमाणाणंतिमभागे चेव सव्वघादित्तेण तदणुभागस्स पज्जवसिदत्तादो। एवमेदेसिं सण्णाविसेसपरिक्खं काऊण संपहि पुरिसवेद-चदुसंजलणाणुभागसंकमस्स सण्णाविसेसपदुप्पायणट्ठमुत्तरिमसुत्तमाह—

*** अक्खवग-अणुवसामगस्स चदुसंजलण-पुरिसवेदाणमणुभागसंकमो मिच्छत्तभंगो।**

§ ६७. कुदो? सव्वघादित्तणेण वि-ति-चदुट्ठाणियत्तणेण च भेदाभावादो। संपहि खवगोवसामएसु तब्भेदसंभवपदुप्पायणट्ठमिदमाह—

है। एकस्थानिक नहीं होता, क्योंकि एकस्थानिक अनुभागसंक्रमका सर्वघाति होनेका निषेध है। उसमें भी उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम चतुःस्थानिक ही होता है, क्योंकि उसमें अन्य प्रकार नहीं उपलब्ध होता। परन्तु अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम चतुःस्थानिक, त्रिस्थानिक या द्विस्थानिक होता है क्योंकि इसमें ये तीनों प्रकार सम्भव हैं। जघन्य अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक ही होता है, क्योंकि इसमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं हैं। तथा अजघन्य अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक या चतुःस्थानिक होता है, क्योंकि इसमें उक्त तीनों प्रकारका अनुभागसंक्रम सम्भव है। इस प्रकार इस सामान्य वचनके अनुसार सर्वघातिरूपसे निश्चत किये गये सम्यग्मिथ्यात्वमें भी त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिक अनुभागसंक्रमका अतिप्रसङ्ग होने पर उसका निवारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वका अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक ही होता है।**

§ ६६. सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रमको द्विस्थानिक ही निश्चय करना चाहिए, क्योंकि दारुसमान अनुभागसंक्रमके अनन्तवें भागमें ही सर्वघातिरूपसे उसके अनुभागका पर्यवसान देखा जाता है। इस प्रकार इन कर्मोंकी संज्ञाविशेषकी परीक्षा करके अब पुरुषवेद और चार संज्वलनोंके अनुभागसंक्रमकी संज्ञाविशेषका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** अक्षपक और अनुपशामक जीवके चार संज्वलन और पुरुषवेदके अनुभागसंक्रमका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।**

§ ६७. क्योंकि सर्वघातिरूपसे तथा द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिकरूपसे मिथ्यात्वकी अपेक्षा उक्त कर्मोंके अनुभागसंक्रममें भेद नहीं है। अब क्षपक और उपशामकोंमें उसका भेद सम्भव है इस बातका कथन करनेके लिए यह सूत्र कहते हैं—

*** खवगुवसामगाणमणुभागसंकमो सव्वघादी वा देसघादी वा बेट्ठाणिओ वा एयट्ठाणिओ वा।**

§ ६८. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—खवगोवसामगेसु एदेसिमुक्कस्साणुभागसंकमो वेट्ठाणिओ सव्वघादी चेव, अपुव्वकरणपवेसपढमसमए तदुवलंभादो। अणुक्कस्साणुभागसंकमो वेट्ठाणिओ एयट्ठाणिओ वा सव्वघादी वा देसघादी वा। एगट्ठाणिओ कत्थोवलब्भदे ? खवगोवसमसेढीसु अंतरकरणं कादूणेगट्ठाणियमणुभागं बंधमाणस्स सुद्धणवगबंधसंकमणावत्थाए किट्टीवेदगकालब्भंतरे च। देसघादित्तं च तत्थेव लब्भदे। जहण्णाणुभागसंकमो एदेसिं देसघादी एयट्ठाणिओ च, जहासंभवणवगबंधस्स किट्टीणं चरिमसमयसंकामणाए तदुवलंभादो। अजहण्णाणुभागसंकमो एयट्ठाणिओ वेट्ठाणिओ वा देसघादी वा सव्वघादी वा, अणुक्कस्सस्सेव तदुवलंभादो। एवमेदेसिं सण्णाविसेसं परूविय संपहि सम्मत्ताणुभागसंकमस्स सण्णाविसेसविहासणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

*** सम्मत्तस्स अणुभागसंकमो णियमा देसघादी।**

---

* मात्र क्षपक और उपशामक जीवके उनका अनुभागसंक्रम सर्वघाति भी होता है और देशघाति भी होता है। तथा द्विस्थानिक भी होता है और एकस्थानिक भी होता है।

§ ६८. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। यथा—क्षपक और उपशामक जीवोंमें चार संज्वलन और पुरुषवेद इन पाँच कर्मोंका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक और सर्वघाति ही होता है, क्योंकि अपूर्वकरणमें प्रवेश करनेके प्रथम समयमें उसकी उपलब्धि होती है। अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक भी होता है और एकस्थानिक भी होता है। तथा सर्वघाति भी होता है और देशघाति भी होता है।

शंका—एकस्थानिक अनुभागसंक्रम कहाँ पर उपलब्ध होता है।

समाधान—क्षपकश्रेणि और उपशमश्रेणिमें अन्तरकरण करके एकस्थानिक अनुभागका बन्ध करनेवाले जीवके शुद्ध नवकबन्धकी संक्रमणरूप अवस्थामें और कृष्टिवेदककालके भीतर एकस्थानिक अनुभागसंक्रम उपलब्ध होता है तथा वहीं पर उसका देशघातिपना पाया जाता है। इन कर्मोंका जघन्य अनुभागसंक्रम देशघाति और एकस्थानिक होता है, क्योंकि यथासम्भव नवकबन्धकी कृष्टियोंके संक्रमके अन्तिम समयमें वह उपलब्ध होता है। अजघन्य अनुभागसंक्रम एकस्थानिक भी होता है और द्विस्थानिक भी होता है। तथा देशघाति भी होता है और सर्वघाति भी होता है, क्योंकि जिस प्रकार इन कर्मोंके अनुत्कृष्टमें इन भेदोंकी उपलब्धि होती है उसी प्रकार वे अजघन्यमें भी बन जाते हैं। इस प्रकार इनकी संज्ञाविशेषका कथन करके अब सम्यक्त्वके अनुभागसंक्रमकी संज्ञाविशेषका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** सम्यक्त्वका अनुभागसंक्रम नियमसे देशघाति होता है।**

§ ६९. उक्कस्साणुक्कस्स-जहण्णाजहण्णभेदाणं सव्वेसिमेव देसघादित्तदंसणादो। संपहि एदस्सेव [1]ट्ठाणसण्णाणुगमं कस्सामो। तं जहा—

* एयट्ठाणिओ वेट्ठाणिओ वा।

§ ७० तदुक्कस्साणुभागसंकमो वेट्ठाणिओ चेव, तत्थ लदा-दारुअसमाणाणुभागाणं दोण्हं पि णियमेणोवलंभादो। अणुक्कस्सो वेट्ठाणिओ एयट्ठाणिओ वा, दंसणमोहक्खवणाए अट्ठवस्स-ट्ठिदिसंतकम्मप्पहुडि एयट्ठाणाणुभागदंसणादो हेट्ठा वेट्ठाणियणियमादो। जहण्णाणुभाग-संकमो णियमेणेयट्ठाणिओ, समयाहियावलियदंसणमोहक्खवयम्मि तदुवलंभादो। अजह० एयट्ठाणिओ वेट्ठाणिओ वा, दुसमयाहियावलियदंसणमोहक्खवयप्पहुडि जावुक्कस्साणुभागो त्ति ताव अजहण्णवियप्पावट्ठाणादो।

§ ७१. एवं सुत्ताणुगमं काऊण संपहि उच्चारणामुहेण सण्णाविहाणं वत्तइस्सामो। तं जहा—तत्थ दुविहा सण्णा—घाइसण्णा ट्ठाणसण्णा च। घाइसण्णाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०—सम्मामि०—बारसक०—अट्ठणोकसायाणं उक्क०—अणुक्क०—जह०—अजह०संक० सव्वघादी। पुरिसवेद—चदुसंजल० उक्क० सव्वघादी।

---

§ ६९. क्योंकि इसके उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य इन सब भेदोंमें देशघातिपना देखा जाता है। अब इसीकी स्थानसंज्ञाका अनुगम करेंगे। यथा—

* तथा वह एकस्थानिक भी होता है और द्विस्थानिक भी होता है।

§ ७०. उसका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक ही होता है, क्योंकि उसमें लता और दारु-समान यह दोनों प्रकारका अनुभाग नियमसे पाया जाता है। अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक भी होता है और एकस्थानिक भी होता है, क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा होते समय जब सम्यक्त्वका आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्म शेष रहता है तब वहाँसे लेकर उसका एकस्थानिक अनुभाग देखा जाता है। तथा इससे पूर्व द्विस्थानिक अनुभागका नियम है। जघन्य अनुभागसंक्रम नियमसे एकस्थानिक होता है, क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवालेके उसकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने पर उसकी उपलब्धि होती है। अजघन्य अनुभागसंक्रम एकस्थानिक भी होता है और द्विस्थानिक भी होता है, क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें जब दो समय अधिक एक आवलि काल शेष बचता है तब वहाँसे लेकर प्रतिलोमक्रमसे उत्कृष्ट अनुभागके प्राप्त होने तक सब अनुभाग अजघन्य विकल्परूपसे अवस्थित है।

§ ७१. इस प्रकार सूत्रोंका अनुगम करके अब उच्चारणाकी प्रमुखतासे संज्ञाका विधान करते हैं। यथा—प्रकृतमें संज्ञा दो प्रकारकी है—घातिसंज्ञा और स्थानसंज्ञा। घातिसंज्ञानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषायोंका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रम सर्वघाति है। पुरुषवेद और चार संज्वलनकषायोंका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम सर्वघाति है। अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम सर्वघाति

---

१ ता० प्रतौ 'एदस्स वेट्ठाण' इति पाठः।

अणु० सव्वघादी देसघादी वा । जह० देसघादी । अज० सव्वघादी वा देसघादी वा । सम्म० उक्क०-अणुक्क०-जह०-अजह० देसघादी चेव । एवं मणुसतिए । णवरि मणुसिणी० पुरिसवेद० उक्क०-अणुक्क०-जह०-अजह० सव्वघादी । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

§ ७२. ट्ठाणसण्णाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०—बारसक०—अट्ठणोक० उक्क० चउट्ठा० । अणु० चउट्ठा० तिट्ठाणि० बेट्ठाणिओ वा । जह० बिट्ठाणि० । अज० बिट्ठाणि० तिट्ठाणि० चउट्ठाणिओ वा । सम्म०-सम्मामि०-चदुसंजल०-पुरिसवेद० विहत्तिभंगो । एवं मणुसतिए । णवरि मणुसिणीसु पुरिसवेद० छण्णोकसायभंगो । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

भी है और देशघाति भी है । जघन्य अनुभागसंक्रम देशघाति है । तथा अजघन्य अनुभागसंक्रम सर्वघाति भी है और देशघाति भी है । सम्यक्त्वका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रम देशघाति ही है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रम सर्वघाति ही है । शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—मनुष्यिनीके पुरुषवेदकी सत्त्वव्युच्छित्ति छह नोकषायोंके साथ ही हो लेती है, इसलिए यहाँ पर मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका चारों प्रकारका अनुभागसंक्रम सर्वघाति ही बतलाया है । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

§ ७२. स्थानसंज्ञानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषायोंका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम चतुःस्थानिक होता है । अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम चतुःस्थानिक, त्रिस्थानिक, या द्विस्थानिक होता है । जघन्य अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक होता है । तथा अजघन्य अनुभागसंक्रम द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक या चतुःस्थानिक होता है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, चार संज्वलन और पुरुषवेदका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है । शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—स्थानसंज्ञाके प्रसङ्गसे अनुभागको चार प्रकारका बतलाया है—एकस्थानिक, द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिक । केवल लताके समान अनुभागको एकस्थानिक अनुभाग कहते हैं, लता और दारुके समान मिले हुए अनुभागको द्विस्थानिक अनुभाग कहते हैं, दारु और अस्थिके समान मिले हुए अनुभागको त्रिस्थानिक अनुभाग कहते हैं तथा दारु, अस्थि और शैलके समान मिले हुए अनुभागको चतुःस्थानिक अनुभाग कहते हैं । लताके समान एकस्थानिक अनुभाग तथा लता और दारुके अनन्तवें भाग तकका द्विस्थानिकअनुभाग देशघाती होता है और शेष सब अनुभाग सर्वघाति होता है । पहले मिथ्यात्व आदि कर्मोंमें किस कर्मका अनुभाग किस प्रकारका है इसका विचार कर आये हैं सो उसे इस विवेचनको ध्यानमें रख कर घटित कर लेना चाहिए । यद्यपि सम्यग्मिथ्यात्वमें केवल दारुके अनन्तवें भागप्रमाण मध्यका सर्वघाति अनुभाग ही उपलब्ध होता है । फिर भी उसे उपचारसे द्विस्थानिक संज्ञा दी गई है । इसी प्रकार अन्यत्र सर्वघाति अनुभागोंमें द्विस्थानिक, त्रिस्थानिक और चतुःस्थानिक संज्ञाओंकी सार्थकता घटित कर लेनी चाहिए । माना कि इन सर्वघाति अनुभागोंमें देशघातिकी सीमा तकका अनुभाग उपलब्ध नहीं होता फिर भी

§ ७३. सव्वसंकमो णोसव्वसंकमो उक्कस्ससंकमो अणुक्कस्ससंकमो जहण्णसंकमो अजहण्णसंकमो त्ति विहत्तिभंगो। सादि०-अणादि०-धुव०-अद्धुवाणु० दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-अट्ठकसाय-सम्म०-सम्मामि० उक्क०-अणुक्क०-जह०-अजह० किं सादि० ४? सादी अद्धुवो। अट्ठक०-णवणोक० उक्क०-अणुक्क०-जह० सादी अद्धुवो। अज० चत्तारि भंगा। आदेसेण सव्वं सव्वत्थ सादी अद्धुवं।

जहाँ दारुका बहुभागप्रमाण अन्तका सर्वघाति अनुभाग होता है उसकी उपचारसे द्विस्थानिक संज्ञा है। जहाँ पर यह और अस्थिके समान अनुभाग उपलब्ध होता है उसकी उपचारसे त्रिस्थानिक संज्ञा है। तथा जहाँ यह पूर्वका दोनों भेदरूप और शैलके समान अनुभाग उपलब्ध होता है उसकी उपचार-से चतुःस्थानिक संज्ञा है। यहाँ पर लता, दारु अस्थि और शैल ये उपमावाची शब्द हैं। जो अपने उपमेयरूप अनुभागोंकी विशेषताको प्रकट करते हैं। स्थानसंज्ञाका निर्देश करते समय मनुष्यनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान कहा है। सो इसका आशय इतना ही है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका लताके समान एकस्थानिक अनुभाग नहीं उपलब्ध होता। कारणका निर्देश हम घाति संज्ञाके प्रसङ्गसे विशेषार्थमें कर ही आये हैं। शेष कथन सुगम है।

§ ७३. सर्वसंक्रम, नोसर्वसंक्रम, उत्कृष्टसंक्रम, अनुत्कृष्टसंक्रम, जघन्यसंक्रम और अजघन्य-संक्रमका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, आठ कषाय, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रम क्या सादि है, क्या अनादि है, क्या ध्रुव है या क्या अध्रुव है? सादि और अध्रुव है। आठ कषाय और नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट और जघन्य अनुभागसंक्रम सादि और अध्रुव है। तथा अजघन्य अनुभागसंक्रम सादि आदि चारों भेद-रूप है। आदेशसे सब अनुभागसंक्रम सर्वत्र सादि और अध्रुव है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व, अप्रत्याख्यानावरणचतुष्क, प्रत्याख्यानावरणचतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम कादाचित्क हैं, इसलिए तो ये दोनों यहाँ पर सादि और अध्रुव कहे गये हैं। तथा मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रम भी कादाचित्क हैं। साथ ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व ये दोनों प्रकृतियाँ भी कादाचित्क हैं, इसलिए यहाँ पर इनके जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रम भी सादि और अध्रुव कहे गये हैं। अब रहीं शेष प्रकृतियाँ सो इनके भी उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रम कादाचित्क होनेसे सादि और अध्रुव जान लेने चाहिए। चार संज्वलन और नौ नोषायोंका जघन्य अनुभागसंक्रम अपनी अपनी क्षपणा होते समय जघन्य अनुभागसंक्रमके कालमें होता है और इसके पूर्व अजघन्य अनुभागसंक्रम होता है इसलिए तो अजघन्य अनुभागसंक्रम अनादि है। तथा उपशम-श्रेणिमें उपशान्त दशामें यह संक्रम नहीं होता और उसके बाद गिरने पर होने लगता है, इसलिए इनका अजघन्य अनुभागसंक्रम सादि है। तथा भव्योंकी अपेक्षा वह ध्रुव और अभव्योंकी अपेक्षा अध्रुव है। इस प्रकार इन तेरह प्रकृतियोंका अजघन्य अनुभागसंक्रम सादि आदि चाररूप बन जानेसे वह चार प्रकारका कहा है और इनका जघन्य अनुभागसंक्रम क्षपणाकालमें ही होता है इसलिए वह सादि और अध्रुव कहा है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य अनुभागसंक्रम पुनः संयोजना होने पर एक आवलिके बाद द्वितीय आवलीके प्रथम समयमें होता है, इसलिए यह भी सादि और ध्रुव कहा है तथा विसंयोजना होनेके पूर्व तक इन चारोंका अजघन्य अनुभागसंक्रम अनादि होता है और पुनः संयोजना होने पर जघन्यके बाद वह सादि होता है। तथा भव्योंकी

ॐ सामित्तं ।

§ ७४. सामित्तमिदाणिं कस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं । सव्व-णोसव्वसंकमादीणं सुत्ते किमट्ठं णिद्देसो ण कदो ? ण, तेसिं सुगमाणं वक्खाणादो चेव पडिवत्ती होइ त्ति तद्करणादो । तं च सामित्तं दुविहं जहण्णुक्कस्साणुभागसंकमविसयत्तेण । तत्थुक्कस्साणुभागसंकमविसयं ताव सामित्तं परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

ॐ मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकमो कस्स ?

§ ७५ सुगमं ।

ॐ उक्कस्साणुभागं बंधिदूणावलियपडिभग्गस्स अण्णदरस्स ।

§ ७६. मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागमुक्कस्ससंकिलेसेण बंधियूण जो आवलियपडिभग्गो तस्स पयदुक्कस्ससामित्तं होइ । आवलियपडिभग्गं मोत्तूण बंधपढमसमए चेव सामित्तं किण्ण दिज्जदे ? ण, अणइच्छाविय बंधावलियस्स कम्मस्स ओकड्डणादिसंकमणाणं पाओग्गत्ताभावादो । सो पुण मिच्छत्तुक्कस्साणुभागबंधगो सण्णिपंचिंदियपज्जत्तमिच्छाइट्ठी सव्वसंकिलिट्ठो ।

अपेक्षा अध्रुव और अभव्यों की अपेक्षा वह ध्रुव होता है, इसलिए इन चारों प्रकृतियोंके अजघन्य अनुभागसंक्रमको भी सादि आदिके भेदसे चार प्रकारका कहा है । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

* स्वामित्वका प्रकरण है ।

§ ७४. इस समय स्वामित्वका कथन करते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञावचन है ।

शंका—सर्वसंक्रम और नोसर्वसंक्रम आदिका सूत्रमें निर्देश किसलिए नहीं किया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वे सुगम हैं । व्याख्यानसे ही उनका ज्ञान हो जाता है, इसलिए उनका सूत्रमें निर्देश नहीं किया ।

जघन्य अनुभागसंक्रम और उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमको विषय करनेवाला होनेसे वह स्वामित्व दो प्रकारका है । उनमेंसे उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमविषयक स्वामित्वका सर्व प्रथम कथन करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

* मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ७५. यह सूत्र सुगम है ।

* मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका बन्धकर प्रतिभग्न हुए जिसे एक आवलि काल हुआ है ऐसा अन्यतर जीव मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका स्वामी है ।

§ ७६. मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागको उत्कृष्ट संक्लेशसे बाँधकर जिसे प्रतिभग्न हुए एक आवलि हो गया है उसके प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है ।

शंका—प्रतिभग्न हुए एक आवलि कालको छोड़कर बन्ध होनेके प्रथम समयमें ही उत्कृष्ट स्वामित्व क्यों नहीं दिया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि बन्धावलिको बिताये बिना कर्ममें अपकर्षण आदि रूप संक्रमणों की योग्यता नहीं पाई जाती ।

परन्तु मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेवाला वह जीव संज्ञी पञ्चेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्या-

जइ एवं, अण्णत्थुक्कस्साणुभागसंकमो ण कयाइं लब्भदि त्ति आसंकाए णिरायरणट्ठ- मण्णदरविसेसणं कदं, तदुक्कस्सबंधेणाघादिदेण सह एइंदियादिसुप्पण्णस्स तदुवलंभे विरोहा- भावादो। णवरि असंखेज्जवस्साउअतिरिक्ख-[मणुस्सेसु] मणुसोववादियदेवेसु च ओघुक्कस्साणुभागसंकमो ण लब्भदे, तमघादेदूण तत्थुप्पत्तीए असंभवादो। एदेण सम्माइट्ठीसु वि मिच्छत्तुक्कस्साणुभागसंकमो पडिसिद्धो दट्ठव्वो, उक्कस्साणुभागं बंधिय आवलियपडि- भग्गस्स कंडयघादेण विणा सम्मत्तगुणग्गहणाणुववत्तीदो। कधमेसो विसेसो सुत्तेणाणुवइट्ठो णव्वदे ? ण, वक्खाणादो सुत्तंतरादो तंतजुत्तीए च तदुवलद्धीदो। जहा मिच्छत्तस्स तहा सेसकम्माणं पि उक्कस्ससामित्तं णेदव्वं, विसेसाभावादो त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

❀ एवं सव्वकम्माणं।

§ ७७. सव्वेसिमुक्कस्साणुभागं बंधिदूणावलियपडिभग्गण्णदरजीवम्मि सामित्तपडि- लंभस्स पडिसेहाभावादो। संपहि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमबंधपयडीणमेस कमो ण संभवइ त्ति पयारंतरेण तेसिं सामित्तणिद्देसो कीरदे—

❀ णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकमो कस्स ?

दृष्टि और सर्वसंक्लिष्ट होता है। यदि ऐसा है तो अन्यत्र उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम कभी भी नहीं प्राप्त होता है। इस प्रकार ऐसी आशंका होनेपर उसका निराकरण करनेके लिए सूत्रमें 'अन्यतर' विशेषण दिया है, क्योंकि घात किये बिना उसके उत्कृष्ट बन्धके साथ एकेन्द्रियादि जीवोंमें उत्पन्न हुए जीवके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमके प्राप्त होनेमें कोई विरोध नहीं आता है। इतनी विशेषता है कि असंख्यात वर्षकी आयुवाले तिर्यञ्चों और मनुष्योंमें तथा जहाँके जो देव मर कर नियमसे मनुष्योंमें उत्पन्न होते हैं ऐसे आनतादिक देवोंमें ओघ उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम नहीं प्राप्त होता, क्योंकि उसका घात किये बिना इन जीवोंमें उत्पन्न होना असम्भव है। इस वचनसे सम्यग्दृष्टि जीवोंमें भी मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका निषेध जान लेना चाहिए, क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करके जिसे प्रतिभग्न हुए एक आवलि काल हुआ है ऐसा जीव काण्डकघात किये बिना सम्यक्त्व गुणको ग्रहण नहीं कर सकता।

शंका—यह विशेषता सूत्रमें नहीं कही गई है, इसलिए उसे कैसे जाना जा सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि व्याख्यानसे, सूत्रसे तथा सूत्रानुकूल युक्तिसे इस विशेषताका ज्ञान हो जाता है।

जिस प्रकार मिथ्यात्वका उत्कृष्ट स्वामित्व है उसी प्रकार शेष कर्मोंका भी उत्कृष्ट स्वामित्व जानना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई अन्तर नहीं है। इस प्रकार इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

* इसी प्रकार सब कर्मोंका उत्कृष्ट स्वामित्व जानना चाहिए।

§ ७७. क्योंकि सब कर्मोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट अनुभागको बाँध कर प्रतिभग्न हुए जिसे एक आवलि काल हुआ है ऐसे अन्यतर जीवमें सब कर्मोंका उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होनेमें कोई प्रतिबंध नहीं है। किन्तु जो बन्ध प्रकृतियाँ नहीं हैं ऐसी सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व इन दोनों प्रकृतियोंमें यह क्रम सम्भव नहीं है, इसलिए प्रकारान्तरसे उनके उत्कृष्ट स्वामित्वका निर्देश करते हैं—

* किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभाग-

§ ७८. सुगमं ।

*** दंसणमोहणीयक्खवयं मोत्तूण जस्स संतकम्ममत्थि तस्स[1] उक्कस्साणुभागसंकमो ।**

§ ७९. कुदो ? दंसणमोहक्खवयादो अण्णत्थ तेसिमणुभागखंडयघादाभावादो । जइ वि एत्थ सामण्णेण जस्स संतकम्ममत्थि त्ति वुत्तं तो वि पयरणवसेण संकमपाओग्गं जस्स संतकम्ममत्थि त्ति घेत्तव्वं, अण्णहा उव्वेल्लणाए आवलियपविट्ठसंतकम्मियस्स वि गहणप्पसंगादो । दंसणमोहक्खवयस्स वि अपुव्वकरणपविट्ठस्स पढमाणुभागखंडए अणिल्लेविदे उक्कस्साणुभागसंकमो संभवइ । तदो दंसणमोहक्खवयं मोत्तूणे त्ति कधमेदं घडदे ? ण, पढमाणुभागखंडए पादिदे संते जो दंसणमोहक्खवओ तस्सेव सुत्ते दंसणमोहक्खवयत्तेण विवक्खियत्तादो । अधवा दंसणमोहक्खवयं मोत्तूणण्णस्स जस्स संतकम्ममत्थि तस्स णियमा उक्कस्साणुभागसंकमो, दंसणमोहक्खवयस्स पुण णत्थि णियमो, पढमाणुभागखंडए उक्कस्साणुभागसंकमाणुविद्धे घादिदे तत्थाणुक्कस्साणुभागसंकमुप्पत्तिदंसणादो त्ति एसो सुत्ताहिप्पाओ । एवमोघो समत्तो । आदेसेण सव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो । एवमुक्कस्ससामित्तं ।

संक्रमका स्वामी कौन है ।

§ ७८. यह सूत्र सुगम है ।

*** दर्शनमोहनीयके क्षपकको छोड़ कर जिसके उक्त कर्मोंका सत्त्व पाया जाता है वह उनके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका स्वामी है ।**

§ ७९. क्योंकि दर्शनमोहनीयके क्षपकके सिवा अन्यत्र उक्त कर्मोंका अनुभागकाण्डकघात नहीं होता । यद्यपि यहाँ पर सूत्रमें सामान्यसे 'जिसके सत्कर्म हैं' ऐसा कहा है तो भी प्रकरणवश संक्रमके योग्य जिसके सत्कर्म हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए, अन्यथा उद्वेलनाके समय आवलिके भीतर प्रविष्ट हुए सत्कर्मवालेके भी ग्रहणका प्रसङ्ग प्राप्त होता है ।

शंका—अपूर्वकरणमें प्रविष्ट हुए दर्शनमोहनीयके क्षपकके भी प्रथम अनुभागकाण्डककी अनिर्लेपित अवस्थामें उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम सम्भव है, इसलिए सूत्रमें 'दर्शनमोहनीयके क्षपकको छोड़ कर' यह वचन कैसे बन सकता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ पर प्रथम अनुभागकाण्डकका पतन करा देने पर जो दर्शन मोहनीयका क्षपक है वही सूत्रमें दर्शनमोहनीयके क्षपकरूपसे विवक्षित है । अथवा दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवालेको छोड़कर अन्य जिसके उक्त कर्म की सत्ता है उसके नियमसे उक्त कर्मोंका उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम होता है । परन्तु दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके ऐसा कोई नियम नहीं है, क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमसे अनुविद्ध प्रथम अनुभागकाण्डकका घात कर देने पर वहाँ अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रमकी उत्पत्ति देखी जाती है । इस प्रकार यह उक्त सूत्रका अभिप्राय है । इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई । आदेशसे सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है इस प्रश्नका समाधान करते हुए सूत्रमें केवल इतना ही कहा गया है कि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके सिवा उनकी सत्तावाले अन्य सब जीव उनके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमके स्वामी हैं ।

१—ता०प्रतौ मत्थि त्ति तस्स इति पाठः ।

❀ एत्तो जहण्णयं ।

§ ८०. एत्तो उवरि जहण्णयमणुभागसंकमसामित्तं वत्तइस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं ।

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ ८१. किमेइंदिओ वेइंदिओ तेइंदिओ चउरिंदिओ पंचिंदिओ सण्णी असण्णी बादरो सुहुमो पज्जत्तो अपज्जत्तो वा इच्चादिविसेसावेक्खमेदं पुच्छासुत्तं ।

❀ सुहुमस्स हदसमुप्पत्तियकम्मेण अण्णदरो ।

§ ८२. एत्थ सुहुमग्गहणेण सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स गहणं कायव्वं, अण्णत्थ मिच्छत्तजहण्णाणुभागसंकमुप्पत्तीए अदंसणादो । सुहुमणिगोदपज्जत्तो किण्ण घेप्पदे ? ण,

---

इस परसे दो प्रश्न खड़े हुए—प्रथम तो यह कि जो दर्शनमोहनीयकी क्षपणा नहीं कर रहे हैं, उनकी सत्तावाले ऐसे सब जीव यदि उनके उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमके स्वामी माने जाते हैं तो उद्वेलनाके समय जिनका सत्कर्म आवलिके भीतर प्रविष्ट होता है उनके आवलिप्रविष्ट कर्मका भी उत्कृष्ट अनुभाग-संक्रम मानना पड़ेगा । टीकामें इस प्रश्नको लक्ष्य रख कर जो कुछ कहा गया है उसका भाव यह है कि यद्यपि सूत्रमें 'दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवालेको छोड़ कर जिसके सत्कर्म है' ऐसा सामान्य वचन कहा गया है पर उससे उद्वेलनाके समय आवलिप्रविष्ट सत्कर्मवाले जीवोंको छोड़ कर अन्य सत्कर्मवाले जीवोंको ही ग्रहण करना चाहिए । यद्यपि यहाँ पर यह कहा जा सकता है कि यह अर्थ कैसे फलित किया गया है सो उसका समाधान यह है कि आवलिप्रविष्ट कर्मका संक्रम आदि नहीं होता ऐसा ध्रुव नियम है, इसलिए इस नियमके अनुसार यह अर्थ सुतरां फलित हो जाता है । दूसरा प्रश्न यह है कि अपूर्वकरणमें प्रथम स्थितिकाण्डकघातके पूर्व उक्त कर्मोंका उत्कृष्ट अनुभाग-संक्रम सम्भव है । ऐसी अवस्थामें 'दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवालेको छोड़ कर' यह वचन देना उचित नहीं है । उसका जो समाधान किया है उसका भाव यह है कि यदि इतने अपवादको छोड़ दिया जाय तो दर्शनमोहनीयका क्षपक जीव उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक नहीं होता, इसलिए सूत्रमें अन्य सब अवस्थाओंको ध्यानमें रखकर 'दर्शनमोहनीयके क्षपकको छोड़ कर' यह वचन दिया है । शेष कथन सुगम है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ ।

* आगे जघन्य स्वामित्वका कथन करते हैं ।

§ ८० इससे आगे अर्थात् उत्कृष्ट स्वामित्वके कथनके बाद जघन्य अनुभागसंक्रमके स्वामित्वको बतलाते हैं । इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है ।

* मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ।

§ ८१. एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय, संज्ञी, असंज्ञी, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त और अपर्याप्त इनमेंसे इसका स्वामी कौन है ? इत्यादि विशेषकी अपेक्षा रखनेवाला यह पृच्छासूत्र है ।

* सूक्ष्म एकेन्द्रियके हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ अवस्थित अन्यतर जीव मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है ।

§ ८२. यहाँ सूत्रमें 'सूक्ष्म' पदके ग्रहण करनेसे सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीवका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि अन्यत्र मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमकी उत्पत्ति नहीं देखी जाती ।

तस्सत्तण्जहण्णाणुभागस्स हदसमुप्पत्तियस्स एत्तो अणंतगुणत्तोवलंभादो। ण तत्थ विसोहिबहुत्तमासंकणिज्जं, मंदविसोहीए वि अपज्जत्तयस्स बहुआणुभागघादसंभवादो। कुदो एवं ? जादिविसेसस्स तारिसत्तादो। तदो तस्स हदसमुप्पत्तियकम्मेण जहण्णसामित्तविहाणमविरुद्धं। किं हदसमुप्पत्तियं णाम ? हते समुत्पत्तिर्यस्य तद्धतसमुत्पत्तिकं कर्म। यावच्छक्यं तावत्प्राप्तघातमित्यर्थः। तं पुण सुहुमणिगोदापज्जत्तयस्स सव्वुक्कस्सविसोहीए पत्तघादं जहण्णाणुभागसंतकम्मं तदुक्कस्साणुभागबंधादो अणंतगुणहीणं। तस्सेव जहण्णाणुभागबंधादो अणंतगुणब्भहियं। तप्पाओग्गाजहण्णाणुक्कस्सबंधट्ठाणेण समाणमिदि घेत्तव्वं। एवंविहेण सुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियकम्मेणोवलक्खिओ जो जीवो अण्णदरो सो पयदजहण्णसामिओ होइ। एत्थ अण्णदरग्गहणेण सव्वजीवसमासाणं गहणमविरुद्धमिदि पदुप्पायणट्ठमुत्तरो सुत्तावयवो—

❀ एइंदिओ वा बेइंदिओ वा तेइंदिओ वा चउरिंदिओ वा पंचिंदिओ वा।

शंका—सूक्ष्म निगोद पर्याप्तका ग्रहण क्यों नहीं करते ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उनमें हतसमुत्पत्तिक जघन्य अनुभाग इनसे अनन्तगुणा पाया जाता है।

सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीवोंमें बहुत विशुद्धिकी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि अपर्याप्त जीवमें मन्द विशुद्धिसे भी बहुत अनुभागका घात सम्भव है।

शंका—ऐसा कैसे होता है ?

समाधान—क्योंकि यह जातिविशेष ही उस प्रकारकी है।

इसलिए हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ उसके जघन्य स्वामित्वका विधान करना विरुद्ध नहीं है।

शंका—हतसमुत्पत्तिक कर्म किसे कहते हैं ?

समाधान—घात होने पर जिसकी उत्पत्ति होती है उसे हतसमुत्पत्तिक कर्म कहते हैं। जहाँ तक शक्य हो वहाँ तक घातको प्राप्त हुआ कर्म यह इसका तात्पर्य है।

सूक्ष्म निगोद अपर्याप्त जीवके सर्वोत्कृष्ट विशुद्धिसे घातको प्राप्त हुआ वह कर्म जघन्य अनुभागसत्कर्मरूप होता है जो उसके उत्कृष्ट अनुभागबन्धसे अनन्तगुणा हीन होता है। तथा उसीके जघन्य अनुभागबन्धसे अनन्तगुणा अधिक होता है। तत्प्रायोग्य अजघन्य अनुत्कृष्ट बन्धस्थानके समान होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकारके सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक कर्मसे युक्त जो अन्यतर जीव है वह प्रकृतमें जघन्य स्वामी होता है। यहाँ पर 'अन्यतर' पदके ग्रहण करनेसे सब जीवसमासोंका ग्रहण अविरुद्ध है ऐसा कथन करनेके लिए आगेका सूत्र वचन है—

*** एकेन्द्रिय, अथवा द्वीन्द्रिय, अथवा त्रीन्द्रिय, अथवा चतुरिन्द्रिय अथवा पञ्चेन्द्रिय जीव मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।**

§ ८३. कुदो ? तेणेवाणुभागेण सव्वत्थुप्पत्तीए पडिसेहाभावादो। दंसणमोहक्खवयस्स चरिमाणुभागखंडए मिच्छत्तजहण्णसामित्तं किण्ण दिण्णं ? तत्थतणाणुभागस्स एत्तो अणंतगुणत्तादो। कधमेदं परिच्छिण्णं ? एदम्हादो चेव सामित्तसुत्तादो।

❀ एवमट्ठण्हं कसायाणं।

§ ८४. जहा मिच्छत्तस्स सुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियकम्मेणण्णदरजीवम्मि जहण्णाणुभागसंकमसामित्तमेवमट्ठकसायाणं पि कायव्वं, विसेसाभावादो। खवयचरिमफालीए विसुद्धयरकरणपरिणामेहि घादिदावसिट्ठाणुभागस्स जहण्णभावो जुज्जइ त्ति णेहासंका कायव्वा, अंतरकरणादो हेट्ठा खवगाणुभागस्स सुहुमाणुभागं पेक्खिऊणाणंतगुणत्तणियमादो।

❀ सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ ८५. सुगमं।

❀ समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीओ।

§ ८६. कुदो एदस्स जहण्णभावो ? पत्तसव्वुक्कस्सघादत्तादो अणुसमयोवट्टणाए अइजहण्णीकयत्तादो च।

§ ८३. क्योंकि उसी अनुभागके साथ सर्वत्र उत्पत्ति होनेमें कोई निषेध नहीं है।

शंका—दर्शनमोहनीयके क्षपकके अन्तिम अनुभागकाण्डकके शेष रहने पर मिथ्यात्वका जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं दिया गया ?

समाधान—क्योंकि वहाँका अनुभाग सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक अनुभागसे अनन्तगुणा होता है।

शंका—यह कैसे जाना ?

समाधान—इसी स्वामित्व सूत्रसे जाना।

* इसीप्रकार आठ कषायोंका जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए।

§ ८४. जिस प्रकार सूक्ष्म एकेन्द्रियके हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ स्थित अन्यतर जीवमें मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामित्व दिया है उसी प्रकार आठ कषायोंका भी करना चाहिए, क्योंकि उससे इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। यदि कोई ऐसी आशंका करे कि विशुद्धतर करणरूप परिणामोंके द्वारा क्षपककी अन्तिम फालिमें घात होकर शेष बचे हुए अनुभागका जघन्यपना बन जाता है सो उसकी ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि अन्तरकरणके पूर्व क्षपकसम्बन्धी अनुभाग सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी अनुभागकी अपेक्षा अनन्तगुणा होता है ऐसा नियम है।

* सम्यक्त्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ८५. यह सूत्र सुगम है।

* जिसके दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष है वह सम्यक्त्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।

§ ८६. क्योंकि यहाँ पर अनुभागका सबसे उत्कृष्ट घात प्राप्त हो गया है। तथा प्रत्येक समयमें होनेवाली अपवर्तनासे यह अत्यन्त जघन्य कर लिया गया है, इसलिए इसका जघन्यपना बन जाता है।

ॐ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ ८७. सुगमं।

ॐ चरिमाणुभागखंडयं संछुहमाणओ।

§ ८८. दंसणमोहक्खवणाए दुचरिमादिहेट्ठिमाणुभागखंडयाणि संकामिय पुणो सम्मामिच्छत्तचरिमाणुभागखंडए वावदो जो सो पयदजहण्णसामिओ होइ, तत्तो हेट्ठा सम्मामिच्छत्तसंबंधिजहण्णाणुभागसंकमाणुवलंभादो।

ॐ अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ ८९. सुगमं।

ॐ विसंजोएदूण पुणो तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेण संजोएदूणावलियादीदो।

§ ९०. किमट्ठमेसो विसंजोयणाए[1] पुणो जोयणाए पयट्टाविदो ? चिराणाणुभागसंतकम्मं सव्वं गालिय णवकबंधाणुभागे जहण्णसामित्तविहाणट्ठं। तत्थ वि असंखेज्जलोगमेत्तपडिवादट्ठाणेसु तप्पाओग्गजहण्णसंकिलेसाणुविद्धपरिणामेण संजुत्तो त्ति जाणावणट्ठं तप्पाओग्ग-

* सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ८७. यह सूत्र सुगम है।

* अन्तिम अनुभागकाण्डकका संक्रम करनेवाला जीव सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।

§ ८८. दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय द्विचरिम आदि अधस्तन अनुभागकाण्डकोंका संक्रम करके जो सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम अनुभागकाण्डकमें व्यापृत है वह प्रकृतमें जघन्य स्वामी होता है, क्योंकि उससे पहले सम्यग्मिथ्यात्वसम्बन्धी जघन्य अनुभागसंक्रम नहीं उपलब्ध होता।

* अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ८९. यह सूत्र सुगम है।

* विसंयोजनाके बाद पुनः तत्प्रायोग्य विशुद्ध परिणामसे उनकी संयोजना करके जिसे एक आवलि काल हुआ है वह अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।

§ ९०. शंका—विसंयोजनाके बाद इसे पुनः संयोजनामें क्यों प्रवृत्त कराया है ?

समाधान—सब द्विस्थानिक अनुभागसत्कर्मको गलाकर नवकबन्धसम्बन्धी अनुभागमें जघन्य स्वामित्वका विधान करनेके लिए विसंयोजनाके बाद इसे पुनः संयोजनामें प्रवृत्त कराया है।

उसमें भी असंख्यात लोकप्रमाण प्रतिपातस्थानोंमें से यह तत्प्रायोग्य जघन्य संक्लेशसम्बन्धी परिणामसे संयुक्त है इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेण' यह वचन कहा

---

1. आ०प्रतौ विसंयोजणा ता० प्रतौ विसंजोयणा [ए] इति पाठः।

विसुद्धपरिणामेणे त्ति भणिदं, मंदसंकिलेसदाए चेव विसोहित्तेण विवक्खियत्तादो। तहा संजोएदूणावलियादीदो पयदजहण्णसामिओ होइ, संजुत्तपढमसमए णवकबंधस्स बंधावलियादीदस्स तत्थ जहण्णभावेण संकंतिदंसणादो। तत्तो उवरि सामित्तसंबंधो ण कादुं सक्किज्जदे, विदियादिसमयसंजुत्तस्स संकिलेसवुड्ढीए वड्ढिदाणुभागबंधस्स तत्थ संकमपाओग्गत्तेण जहण्णभावाणुवलद्धीदो। मिच्छत्तादीणं व सुहुमस्स हदसमुप्पत्तियकम्मेण वि जहण्णसामित्तमेत्थ किण्ण कीरदे? ण, तत्थतणचिराणाणुभागसंतकम्मस्स घादिदावसेसस्स एत्तो अणंतगुणत्तेण तहा कादुमसक्कियत्तादो। तदणंतगुणत्तावगमो कुदो? एदम्हादो चेव सुत्तादो। अण्णहा तत्थेव सामित्तविहाणत्तप्पसंगादो। एदेणाणंताणुबंधिविसंजोयणाचरिमाणुभागखंडयम्मि जहण्णसामित्तविहाणासंका पडिसिद्धा, तत्थतणाणुभागस्स सुहुमाणुभागादो वि अणंतगुणत्तदंसणादो। णेदमसिद्धं, सुहुमाणुभागमुवरिं अंतरमकदे दु घादिकम्माणमिदि वयणेण सिद्धसरूवत्तादो। अदो चेव सामित्तविसयाणुभागस्स वि तत्तो बहुत्तमिदि णासंकणिज्जं, चिराणसंताभावेण णवकबंधमेत्तस्स पयत्तजणिदस्स तत्तो थोवभावसंकमेण णाइयत्तादो अंतोमुहुत्तसंजुत्ते वि सुहुमस्स हेट्ठदो संतकम्ममिदि सुत्तवयणादो च। संजुत्तपढमसमए वि

हैं, क्योंकि मन्द संक्लेशरूप परिणाम ही यहाँ पर विशुद्धिरूपसे विवक्षित किया गया है। उक्त प्रकारसे संयुक्त होकर जिसे एक आवलि काल हुआ है वह प्रकृतमें जघन्य स्वामी है क्योंकि संयुक्त होनेके प्रथम समयमें जो नवकबन्ध होता है उसका एक आवलिके बाद वहाँ पर जघन्यरूपसे संक्रम देखा जाता है। इससे आगे जघन्य स्वामित्वका सम्बन्ध करना शक्य नहीं है, क्योंकि संयुक्त होनेके द्वितीय आदि समयोंमें संक्लेशकी वृद्धि हो जानेसे अनुभागबन्ध बढ़ जाता है, इसलिए उसमें संक्रमके योग्य जघन्यपना नहीं पाया जाता।

शंका—मिथ्यात्व आदि प्रकृतियोंके समान सूक्ष्म एकेन्द्रियके हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ भी यहाँ पर जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि घात करनेसे शेष बचा हुआ वहाँका प्राचीन अनुभागसत्कर्म इससे अनन्तगुणा होता है, इसलिए उसकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्व करना शक्य नहीं है।

शंका—वह अनन्तगुणा है यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है। यदि ऐसा न होता तो वहीं पर स्वामित्वके विधान करनेका प्रसङ्ग आता है।

इतने कथनसे अनन्तानुबन्धियोंके विसंयोजनासम्बन्धी अन्तिम अनुभागकाण्डकमें जघन्य स्वामित्वके विधानविषयक आशंकाका निराकरण हो जाता है, क्योंकि वहाँका अनुभाग सूक्ष्म एकेन्द्रियके अनुभागसे भी अनन्तगुणा देखा जाता है। और यह बात असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि 'सुहुमाणुभागमुवरि अंतरमकदे दु घादिकम्माणं' इसवचनसे वह सिद्धस्वरूप ही है। यदि कोई ऐसी आशंका करे कि इस वचनसे तो स्वामित्वविषयक अनुभागका भी उस (सूक्ष्म एकेन्द्रिय) के अनुभागसे अधिकपना बन जाता है सो ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि प्राचीन सत्कर्मका अभाव होनेसे प्रयत्नजनित जो नवकबन्ध होता है उसका उससे स्तोकरूपसे संक्रम होना उचित है तथा 'संयुक्त होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद भी सत्कर्म सूक्ष्म एकेन्द्रियके

सेसकसायाणमणुभागो चिराणसंतसरूवो अणंताणुबंधिणवकबंधस्सुवरि संकमंतओ अत्थिचेण पच्चवट्ठेयं, 'बंधे संकमो' त्ति णायादो, बंधाणुसारेणेव परिणदस्स तस्स जहण्णभावाविरोहित्तादो। तदो दिगंतरपरिहारेणेत्थेव सामित्तमिदि णिवरज्जं।

❀ कोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ ६१. सुगमं।

❀ चरिमाणुभागबंधस्स चरिमसमयअणिल्लेवगो।

§ ६२. कोहवेदयस्स जो अपच्छिमो अणुभागबंधो सो चरिमाणुभागबंधो णाम। सो पुण किट्टिसरूवो, कोहतदियकिट्टिवेदएण णिव्वत्तिदत्तादो। तस्स चरिमाणुभागबंधस्स चरिमसमयअणिल्लेवगो त्ति भणिदे माणवेदगद्धाए दुसमयूणदोआवलियाणं चरिमसमए वट्टमाणओ घेत्तव्वो। सो पयदजहण्णसामिओ होइ। एत्थ जइ वि सुत्ते सोदएण सामित्त-मिदि विसेसिऊण ण भणिदं तो वि[1] सोदएणेव सामित्तमिह गहेयव्वं, सेसकसायोदएण चढिद-खवयम्मि फद्दयसरूवेणेव णिल्लेविज्जमाणकोहसंजलणाणुभागस्स जहण्णभावाणुवलद्धीदो।

❀ एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं।

सत्कर्मसे कम होता है' इस सूत्रवचनसे भी वैसा होना उचित है। यद्यपि संयुक्त होनेके प्रथम समयमें ही शेष कषायोंका प्राचीन सत्तारूप अनुभाग अनन्तानुबन्धियोंके नवकबन्धके ऊपर संक्रम करता हुआ रहता है ऐसा निश्चित होता है, क्योंकि 'बन्धमें संक्रम होता है' ऐसा न्याय है। परन्तु वह बन्धके अनुसार ही परिणत हो जाता है, इसलिए उसके जघन्य होनेमें कोई विरोध नहीं आता, इसलिए अन्य विवक्षाके परिहारद्वारा प्रकृतमें ही जघन्य स्वामित्व बनता है यह कथन निर्दोष है।

* क्रोधसंज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ६१. यह सूत्र सुगम है।

* अन्तिम अनुभागबन्धका अन्तिम समयवर्ती अनिर्लेपक जीव क्रोधसंज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।

§ ६२. क्रोधवेदक क्षपकका जो अन्तिम अनुभागबन्ध है उसकी यहाँ 'चरमानुभागबन्ध' संज्ञा है। परन्तु वह कृष्टिस्वरूप है, क्योंकि क्रोधकी तीसरी कृष्टिके वेदक जीवके द्वारा वह निर्वृत्त हुआ है। उसको अन्तिम अनुभागबन्धका अन्तिम समयवर्ती अनिर्लेपक ऐसा कहने पर मानवेदक कालके दो समय कम दो आवलि कालके अन्तिम समयमें विद्यमान जीव लेना चाहिए। वह प्रकृतमें जघन्य स्वामी है। यहाँ पर सूत्रमें यद्यपि स्वोदयसे स्वामित्व होता है ऐसा विशेषण लगाकर नहीं कहा है तो भी यहाँ पर स्वोदयसे स्वामित्वको ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि शेष कषायोंके उदयसे चढ़े हुए क्षपकके क्रोधसंज्वलनका अनुभाग स्पर्धकरूपसे ही निर्लेपनको प्राप्त होता है, इसलिए उसमें जघन्यपना नहीं बन सकता।

* इसी प्रकार मानसंज्वलन, मायासंज्वलन और पुरुषवेदका जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए।

---

1. ता०प्रतौ 'भणिदं [ण] तो वि' इति पाठः।

§ ९३. खवगचरिमाणुभागबंधचरिमसमयणिल्लेवगम्मि जहण्णभावं पडि विसेसाभावादो। णवरि माणसंजलणस्स कोह-माणोदएहि मायासंजलणस्स वि कोह-माण-माया-संजलणाणं तिण्हमण्णदरोदएण चढिदम्मि जहण्णसामित्तं होइ।

❀ लोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ ९४. सुगमं।

❀ समयाहियावलियचरिमसमयसकसाओ खवगो।

§ ९५. कुदो एत्थ जहण्णभावो ? ण, सुहुमकिट्टीए अणुसमयमणंतगुणहाणिसरूवेण अंतोमुहुत्तमेत्तकालमोवट्टिदाए तत्थ सुट्ठु जहण्णभावेण संकमुवलंभादो।

❀ इत्थिवेदस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ ९६. सुगमं।

❀ इत्थिवेदक्खवगो तस्सेव चरिमाणुभागखंडए वट्टमाणओ।

§ ९७. एत्थित्थिवेदविसेसणमणत्थयं, परोदएण वि सामित्तविहाणे विरोहाभावादो त्ति णासंकणिज्जं, उदाहरणपदंसणट्ठमेदस्स परूवणादो।

---

§ ९३. क्योंकि क्षपकसम्बन्धी अन्तिम अनुभागबन्धका अन्तिम समयमें निर्लेपन करनेवाले जीवके जघन्य अनुभागसंक्रम होता है इस अपेक्षासे क्रोधसंज्वलनसे यहाँ कोई विशेषता नहीं है। इतनी विशेषता है कि क्रोध या मानके उदयसे चढ़े हुए जीवके मानसंज्वलनका तथा क्रोध, मान और माया इन तीनमें से किसी एकके उदयसे चढ़े हुए जीवके मायासंज्वलनका जघन्य स्वामित्व होता है।

*** लोभसंज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?**

§ ९४. यह सूत्र सुगम है।

*** एक समय अधिक आवलि कालके रहने पर अन्तिम समयवर्ती संक्रामक क्षपक जीव लोभसंज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।**

§ ९५. शंका—यहां पर जघन्यपना कैसे है।

समाधान—नहं, क्योंकि सूक्ष्म कृष्टिकी उत्तरोत्तर प्रति समय अनन्तगुणहानिस्वरूपसे अन्तर्मुहूर्त कालतक अपवर्तना होनेके कारण वहाँ पर अत्यन्त जघन्यरूपसे संक्रम प्राप्त हो जाता है।

*** स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?**

§ ९६. यह सूत्र सुगम है।

*** उसीके अन्तिम अनुभागकाण्डकमें विद्यमान स्त्रीवेदी क्षपक जीव स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।**

§ ९७ यदि कोई ऐसी आशंका करे कि यहां पर स्त्रीवेद विशेषण निरर्थक है, क्योंकि परोदयसे भी स्वामित्वका विधान करने पर कोई विरोध नहीं आता सो उसकी ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि उदाहरण दिखलानेके लिए यह कथन किया है।

❀ णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ ९८. सुगमं।

❀ णवुंसयवेदक्खवओ तस्सेव चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणओ।

§ ९९. णेह खवयस्स णवुंसयवेदविसेसणमणत्थयं, सोदएण सामित्तविहाणफलत्तादो। परोदएण सामित्तणिद्देसो किण्ण कीरदे ? ण, तत्थ पुव्वमेव विणस्संतस्स णवुंसयवेदस्स जहण्णभावाणुवलद्धीदो।

❀ छण्णोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ ?

§ १००. सुगमं।

❀ खवगो तेसिं चेव छण्णोकसायवेदणीयाणं चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणओ।

§ १०१. एत्थ चरिमाणुभागखंडए सव्वत्थ जहण्णाणुभागसंकमो अवट्ठिदसरूवेण लब्भइ त्ति तत्थ जहण्णसामित्तं दिण्णं। एसो अत्थो णवुंसय-इत्थिवेदसामित्तसुत्तेसु वि जोजेयव्वो। एवमोघेण जहण्णसामित्तं गयं।

---

* नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ९८. यह सूत्र सुगम है।

* उसी के अन्तिम अनुभागकाण्डकमें स्थित नपुंसकवेदी क्षपक जीव नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।

§ ९९. यहां पर क्षपकका नपुंसकवेद विशेषण निरर्थक नहीं है, क्योंकि स्वोदयसे स्वामित्वके विधान करनेका फल देखा जाता है।

शंका—परोदयसे स्वामित्वका निर्देश क्यों नहीं करते हैं।

समाधान—नहीं, क्योंकि परोदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़ा हुआ जीव पहले ही नपुंसकवेदका नाश कर देता है, इसलिए उसके जघन्यपना नहीं बन सकता।

* छह नोकषायोंके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ १००. यह सूत्र सुगम है।

* उन्हीं छह नोकषायवेदनीयके अन्तिम अनुभागकाण्डकमें विद्यमान क्षपक जीव उनके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है।

§ १०१. यहां अन्तिम अनुभागकाण्डकमें सर्वत्र जघन्य अनुभागसंक्रम अवस्थितरूपसे प्राप्त होता है, इसलिए उसमें जघन्य स्वामित्व दिया है। यह अर्थ नपुंसकवेद और स्त्रीवेदविषयक स्वामित्वसम्बन्धी सूत्रोंमें भी लगा लेना चाहिए।

इसप्रकार ओघसे जघन्य स्वामित्व समाप्त हुआ।

§ १०२. आदेसेण णेरइय० विहत्तिभंगो। णवरि सम्म०-अणंताणु०४ ओघं। एवं पढमाए। बिदियादि जाव सत्तमि त्ति विहत्तिभंगो। णवरि अणंताणु०४ ओघं। तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्ख२ विहत्तिभंगो। णवरि सम्म०-अणंताणु०४ ओघं। एवं जोणिणीसु। णवरि सम्म० णत्थि। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० विहत्तिभंगो। मणुस०३ ओघं। णवरि मिच्छ०-अट्ठकसाय० विहत्तिभंगो। मणुसिणीसु पुरिस० छण्णोकसायभंगो। देवाणं णारयभंगो। एवं भवण०-वाण०। णवरि सम्म० णत्थि। जोदिसि० बिदियपुढविभंगो। सोहम्मादि जाव णवगेवज्जा त्ति विहत्तिभंगो। णवरि सम्म०-अणंताणु०४ ओघं। उवरि विहत्तिभंगो। णवरि सम्म० ओघं। अणंताणु०४ जह० अणुभागसंकमो कस्स? अणंताणुबंधिं विसंजोएंतस्स चरिमाणुभागखंडए वट्टमाणयस्स। एवं जाव०।

§ १०२. आदेशसे नारकियोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि उनमें सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार पहली पृथिवीमें जानना चाहिए। दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नाकियोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि उनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चद्विकमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। इसी प्रकार योनिनी तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उनमें सम्यक्त्वका जघन्य अनुभागसंक्रम नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि उनमें मिथ्यात्व और आठ कषायोंका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। तथा मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है। देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इसीप्रकार भवनवासी और व्यन्तरदेवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उनमें सम्यक्त्वका जघन्य अनुभागसंक्रम नहीं है। ज्योतिषियोंमें दूसरी पृथिवीके समान भङ्ग है। सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि उनमें सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। आगेके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि उनमें सम्यक्त्वका भङ्ग ओघके समान है। उनमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी कौन है? जो अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाला जीव अन्तिम अनुभागकाण्डकमें विद्यमान है वह उनके जघन्य अनुभागसंक्रमका स्वामी है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—नरकगति आदि गतिसम्बन्धी सब अवान्तर मार्गणाओंमें जिन प्रकृतियोंका जघन्य स्वामित्व अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना की है उसका इतना ही तात्पर्य है कि जिस प्रकार अनुभागविभक्ति अनुयोगद्वारमें जघन्य अनुभागसत्कर्मके स्वामित्वका निर्देश किया है उसी प्रकार यहाँ जघन्य अनुभागसंक्रमकी अपेक्षा स्वामित्वका निर्देश कर लेना चाहिए। मात्र जिन प्रकृतियोंकी अपेक्षा जघन्य स्वामित्वमें अनुभागविभक्तिसे अन्तर है उनके जघन्य स्वामित्वका अलगसे निर्देश किया है। उदाहरणार्थ सामान्यसे नारकियोंमें सम्यक्त्वके अनुभागसत्कर्मका जघन्य स्वामित्व दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके अन्तिम समयमें स्थित जीवके और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अनुभागसत्कर्मका जघन्य स्वामित्व प्रथम समयमें संयुक्त हुए तत्प्रायोग्य विशुद्ध जीवके बतलाया है। किन्तु इन अवस्थाओंमें यहाँ पर सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य अनुभागसंक्रमका

❀ एयजीवेण कालो ।

§ १०३ सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं ।

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ १०४. सुगमेदं पुच्छासुत्तं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १०५. जहण्णेण ताव उक्कस्साणुभागं बंधिदूणावलियादीदसंकामेमाणएण सव्वलहु-मणुभागखंडए घादिदे अंतोमुहुत्तमेत्तो उक्कस्साणुभागसंकामयजहण्णकालो लद्धो होइ । एत्तो संखेज्जगुणो उक्कस्सकालो होइ, उक्कस्साणुभागं बंधिऊण खंडयघादेण विणा सुट्ठु बहुअं कालमच्छंतस्स[1] वि अंतोमुहुत्तादो उवरिमवट्ठाणासंभवादो ।

❀ अणुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ १०६. सुगमं ।

स्वामित्व नहीं बन सकता, क्योंकि न तो दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वके अनुभागका संक्रम सम्भव है और न ही संयुक्त होनेके प्रथम समयमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अनुभागका संक्रम सम्भव है, इसलिए यहाँ पर नारकियोंमें इन प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागसंक्रमके स्वामित्वको ओघके समान जाननेकी अलगसे सूचना की है। खुलासा जघन्य संक्रम प्रकरणके ओघको देख कर लेना चाहिए। इसी प्रकार अन्यत्र जहाँ जो विशेपता कही गई है उसका विचार कर लेना चाहिए। यहाँ पर योनिनी तिर्यञ्चों तथा भवनवासी और व्यन्तर देवोंमें सम्यक्त्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका निषेध किया है सो उसका वह तात्पर्य है कि इन मार्गणाओंमें कृतकृत्य-वेदकसम्यग्दृष्टि जीव नहीं उत्पन्न होता, इसलिए वहाँ सम्यक्त्वका और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य अनुभागसंक्रम नहीं बनता। यह विशेषता द्वितीयादि पृथिवियोंमें और ज्योतिषी देवोंमें भी जाननी चाहिए। शेष कथन स्पष्ट ही है।

* एक जीवकी अपेक्षा काल ।

§ १०३. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है।

* मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागकसंक्रामकका कितना काल है ?

§ १०४. यह पृच्छासूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १०५. उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करके एक आवलिके बाद संक्रम करता हुआ यदि अतिशीघ्र अनुभागकाण्डकका घात करता है तो भी उत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। तथा इससे संख्यातगुणा उत्कृष्ट काल होता है, क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करके काण्डकघातके बिना यदि बहुत काल तक रहता है तो भी अन्तर्मुहूर्तसे अधिक काल तक रहना सम्भव नहीं है।

* इसके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ १०६. यह सूत्र सुगम है

---

१ आ०प्रतौ -मच्छंतस्स ता०प्रतौ मच्छं (च्छ) तस्स इति पाठः ।

ॐ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १०७. उक्कस्साणुभागसंकमादो खंडयघादवसेणाणुक्कस्ससंकामयत्तमुवगमिय पुणो वि सव्वरहस्सेण कालेण उक्कस्साणुभागसंकामयत्तमुवगयम्मि तदुवलंभादो ।

ॐ उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ।

§ १०८. उक्कस्साणुभागसंकमादो खंडयघादवसेणाणुक्कस्सभावमुवगयस्स एइंदिय-वियलिंदिएसु उक्कस्साणुभागबंधविरहिएसु असंखेज्जपोग्गलपरियट्टमेत्तकालमणुक्कस्सभावाव-ट्ठाणदंसणादो ।

ॐ एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं ।

§ १०९. सुगममेदमप्पणासुत्तं ।

ॐ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ।

§ ११०. सुगमं ।

ॐ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १११. तं जहा—एक्को णिस्संतकम्मियमिच्छाइट्ठी पढमसम्मत्तं पडिवज्जिय सम्माइट्ठि-पढमसमए मिच्छत्ताणुभागं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसरूवेण परिणमाविय विदियसमयप्पहुडि

---

* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १०७. क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागके संक्रमसे काण्डकघातके द्वारा अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रमको प्राप्त हो कर जो फिर भी अतिशीघ्र कालके द्वारा उत्कृष्ट अनुभागके संक्रमको प्राप्त होता है उसके अनुत्कृष्ट अनुभागसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त पाया जाता है ।

* तथा उत्कृष्ट अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है ।

§ १०८. क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागके संक्रमसे काण्डकघातवश अनुत्कृष्ट अनुभागको प्राप्त होकर उत्कृष्ट अनुभागबन्धसे रहित एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियोंमें असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण काल तक परिभ्रमण करनेवाले जीवके उतने काल तक मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट अनुभाग संक्रममें अवस्थान देखा जाता है ।

* इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका काल जानना चाहिए ।

§ १०९. यह अर्पणासूत्र सुगम है ।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ ११०. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १११. यथा—जिसके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता नहीं है ऐसा एक मिथ्यादृष्टि जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त कर तथा सम्यग्दृष्टि होनेके प्रथम समयमें मिथ्यात्वके अनुभागको सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे परिणमा कर और दूसरे समयसे उनके उत्कृष्ट

तदुक्कस्साणुभागसंकामओ होदूण सव्वलहुं दंसणमोहक्खवणं पट्ठविय पढमाणुभागखंडयं घादिय अणुक्कस्साणुभागसंकामओ जादो, लद्धो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामयजहण्ण-कालो अंतोमुहुत्तमेत्तो ।

❀ उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ ११२. तं कथं ? एक्को णिस्संतकम्मियमिच्छाइट्ठी सम्मत्तं घेत्तूणुक्कस्साणुभागसंकामओ जादो । तदो कमेण मिच्छत्तं गंतूण पलिदोवमस्स असंखे० भागमेत्तकालं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लेमाणो संमयाविरोहेण सम्मत्तं पडिवण्णो पढमछावट्ठिं परिभमिय मिच्छत्तं गंतूण पलिदोवम० असंखे० भागमेत्तकालमुव्वेल्लणाए परिणमिय पुव्वं व सम्मत्तं घेत्तूण विदियछावट्ठिं परिभमिय तदवसाणे मिच्छत्तं पडिवण्णो सव्वुक्कस्सेणुव्वेल्लणकालेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिदूण असंकामगो जादो, लद्धो तीहि पलिदो० असंखे० भागेहि अब्भहियवेछावट्ठिसागरोवममेत्तो पयदुक्कस्सकालो ।

❀ अणुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ ११३. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

अनुभागका संक्रामक होकर तथा अतिशीघ्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रस्थापक होकर और प्रथम अनुभागकाण्डकका घात करके अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक हो गया। इस प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो गया।

* तथा उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।

§ ११२. शंका—यह काल कैसे प्राप्त होता है ?

समाधान—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तासे रहित एक मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको प्राप्त करके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक हो गया। अनन्तर क्रमसे मिथ्यात्वको प्राप्त कर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करता हुआ यथाविधि सम्यक्त्वको प्राप्त हो गया और प्रथम छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ परिभ्रमण करके पुनः मिथ्यात्वमें जाकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक उक्त दोनों कर्मोंकी उद्वेलना करने लगा। पुनः पहलेके समान सम्यक्त्वको प्राप्त करके और दूसरी बार छयासठ सागर काल तक उसके साथ भ्रमण करके उसके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हो गया। तथा वहां सबसे उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके उनका असंक्रामक हो गया। इस प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका तीन बार पल्यके असंख्यातवें भागसे अधिक दो छयासठ सागर कालप्रमाण उत्कृष्ट काल प्राप्त होता है।

* उनके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ ११३. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ११४. दंसणमोहक्खवणाए पढमाणुभागखंडयं घादिय तदणंतरसमए अणुक्कस्साणुभागसंकामयत्तमुवगयस्स विदियाणुभागखंडयप्पहुडि जाव चरिमाणुभागखंडयचरिमफालि त्ति ताव सम्मामिच्छत्तस्स अणुक्कस्साणुभागसंकामयकालो घेत्तव्वो। एवं सम्मत्तस्स वि। णवरि जाव समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीओ ताव भवदि।

एवमोघो समत्तो।

§ ११५. आदेसेण सव्वत्थ विहत्तिभंगो।

❀ एत्तो एयजीवेण कालो जहण्णओ।

§ ११६. एत्तो उक्कस्सकालणिद्देसादो उवरि एयजीवेण जहण्णाणुभागसंकामयकालो विहासियव्वो त्ति वुत्तं होइ।

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ ११७. सुगमं।

❀ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

§ ११८. जहण्णेण ताव सुहुमेइंदियस्स हदसमुप्पत्तियकम्मेण जहण्णओ[1] अवट्ठाणकालो अंतोमुहुत्तमेत्तो होइ। उक्कस्सेण हदसमुप्पत्तियं कादूण सव्वुक्कस्सेण संतस्स हेट्ठदो

§ ११४. दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें प्रथम अनुभागकाण्डकका घात करके तदनन्तर समयमें जो अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक हो गया है उसके दूसरे अनुभागकाण्डकसे लेकर अन्तिम अनुभागकाण्डककी अन्तिम फालि तक तो सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रम करानेका काल ग्रहण करना चाहिए। तथा इसी प्रकार सम्यक्त्वके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका काल भी ग्रहण करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसकी अपेक्षा दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने तक यह काल होता है।

इस प्रकार ओघ प्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ११५. आदेशकी अपेक्षा सर्वत्र अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—अनुभागविभक्तिमें नरकगति आदि मार्गणाओंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागसत्कर्मका जो जघन्य और उत्कृष्ट काल कहा है वह अविकल यहाँ बन जाता है, इसलिए यहाँ पर उसे अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना की है।

* आगे एक जीवकी अपेक्षा जघन्य काल कहते हैं।

§ ११६. 'एत्तो' अर्थात् उत्कृष्ट कालका निर्देश करनेके बाद एक जीवकी अपेक्षा जघन्य अनुभागके संक्रामकके कालका व्याख्यान करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ ११७. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ११८. सर्व प्रथम जघन्य कालका खुलासा करते हैं—सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ जघन्य अवस्थान काल अन्तर्मुहूर्त है। अब उत्कृष्ट कालका खुलासा करते हैं—

1 आ०प्रतौ जहण्णदो ता० प्रतौ जहण्णदो (ओ) इति पाठः।

अवट्ठाणकालो जहण्णकालादो संखेज्जगुणो घेत्तव्वो। तत्तो[1] उवरि णियमेण बंधवुड्ढीए अजहण्णाणुभागसमुप्पत्तीदो।

❀ अजहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ ११९. सुगमं।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ १२०. जहण्णाणुभागसंकमादो अजहण्णसंकामयभावमुवणमिय पुणो सव्वजहण्णेण कालेण हदसमुप्पत्तीए कदे तदुवलंभादो।

❀ उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा।

१२१. एयवारं हदसमुप्पत्तियपाओग्गपरिणामेण परिणदस्स पुणो सेसपरिणामेसु उकस्सावट्ठाणकालो असंखेज्जलोगमेत्तो होइ।

❀ एवमट्ठकसायाणं।

§ १२२. जहा मिच्छत्तस्स जहण्णाजहण्णाणुभागसंकामयकालो परूविदो तहा अट्ठकसायाणं पि परूवेयव्वो, सुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियकम्मेण जहण्णसामित्तं पडि भेदाभावादो।

❀ सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

कर्मको हतसमुत्पत्तिक करके सत्कर्मके नीचे सर्वोत्कृष्ट अवस्थान काल जघन्य कालकी अपेक्षा संख्यातगुणा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उसके ऊपर बन्धकी वृद्धि हो जानेके कारण नियमसे अजघन्य अनुभागकी उत्पत्ति हो जाती है।

* उसके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ ११९. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ १२०. क्योंकि जघन्य अनुभागके संक्रमसे अजघन्यके संक्रामकभावको प्राप्त होकर पुनः सबसे जघन्य कालके द्वारा हतसमुत्पत्तिक करने पर उक्त काल प्राप्त होता है।

* उत्कृष्ट काल असंख्यात लोकप्रमाण है।

§ १२१. क्योंकि एक बार हतसमुत्पत्तिकके योग्य परिणामसे परिणत हुए जीवके शेष परिणामोंमें रहनेका उत्कृष्ट काल असंख्यात लोकप्रमाण है।

* इसी प्रकार मध्यकी आठ कषायोंका काल जानना चाहिए।

§ १२२. जिस प्रकार मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य अनुभागके संक्रामकका काल कहा है उसी प्रकार आठ कषायोंके कालका भी कथन करना चाहिए, क्योंकि सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ जघन्य स्वामित्व उभयत्र समान है, इस अपेक्षासे दोनों स्थलोंमें कोई विशेषता नहीं है।

* सम्यक्त्वके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

---

१ आ०प्रतौ तदो ता० प्रतौ तदो (हा) इति पाठः।

§ १२३. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एगसमओ ।

§ १२४. कुदो ? समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीयं मोत्तूण पुव्वावरकोडीसु तदसंभवणियमादो ।

❀ अजहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ १२५. सुगमं

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १२६. णिस्संतकम्मियमिच्छाइट्ठिणा सम्मत्ते समुप्पाइदे लद्धप्पसहावस्स सम्मत्ता-जहण्णाणुभागसंकमस्स सव्वलहुं खवणाए जहण्णाणुभागसंकमेण विणासिदतब्भावस्स तेत्तिय-मेत्तकालावट्ठाणदंसणादो ।

❀ उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ १२७. उक्कस्साणुभागसंकमकालस्सेव एदस्स परूवणा कायव्वा ।

❀ एवं सम्मामिच्छत्तस्स ।

§ १२८. जहा सम्मत्तस्स जहण्णाजहण्णाणुभागसंकामयकालपरूवणा कया तहा सम्मामिच्छत्तस्स वि कायव्वा त्ति भणिदं होइ । संपहि एत्थतणविसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं—

---

§ १२३. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ १२४. क्योंकि कालकी अपेक्षा एक समय अधिक आवलिसे युक्त दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवको छोड़कर उससे पूर्वके और आगके समयोंमें सम्यक्त्वके जघन्य अनुभागका संक्रम असम्भव है ऐसा नियम है ।

* उसके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ १२५. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १२६. जो सम्यक्त्वकी सत्तासे रहित मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वके उत्पन्न होने पर उसकी सत्ता प्राप्त करके सम्यक्त्वका अजघन्य अनुभागसंक्रम करने लगता है । तथा जो अतिशीघ्र क्षपणामें जघन्य अनुभागसंक्रमके द्वारा अजघन्य अनुभागसंक्रमको नष्ट कर देता है उसके उतने काल तक अजघन्य अनुभागसंक्रमका अवस्थान देखा जाता है ।

* उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।

§ १२७. उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमके कालके समान इसकी प्ररूपणा करनी चाहिए ।

* इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका काल जानना चाहिए ।

§ १२८. जिस प्रकार सम्यक्त्वके जघन्य और अजघन्य अनुभागके संक्रामकके कालका कथन किया है उसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका भी करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब यहाँ सम्बन्धी विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* णवरि जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ १२९. सुगमं ।

* जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १३०. दंसणमोहक्खवयचरिमाणुभागखंडए तदुवलंभादो ।

* अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ १३१. सुगमं ।

* जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ १३२ विसंजोयणापुरस्सरं जहण्णभावेण संजुत्तपढमसमयाणुभागबंधसंकमे लद्ध-जहण्णभावत्तादो

* अजहण्णाणुभागसंकामयस्स तिण्णि भंगा ।

§ १३३. तं जहा—अणादिओ अपज्जवसिदो, अणादिओ सपज्जवसिदो, सादिओ सपज्जवसिदो चेदि । तत्थ मूलिल्लदोभंगा सुगमा त्ति तदियभंगगयविसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं—

* तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो सो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १३४. तं जहा—जहण्णादो अजहण्णभावमुवणमिय पुणो वि सव्वलहुं विसंजोयणाए परिणदो लद्धो पयदजहण्णकालो अंतोमुहुत्तमेत्तो ।

---

* किन्तु इतनी विशेषता है कि इसके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ १२९. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १३०. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अन्तिम अनुभागकाण्डकमें अन्तर्मुहूर्त काल पाया जाता है ।

* अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ १३१. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ १३२. क्योंकि विसंयोजनापूर्वक संयुक्त होनेके प्रथम समयमें जो जघन्य अनुभागबन्ध होता है उसके संक्रममें जघन्यपना पाया जाता है ।

* उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकके तीन भङ्ग हैं ।

§ १३३. यथा अनादि-अनन्त, अनादि-सान्त और सादि-सान्त । उनमेंसे मूलके दो भङ्ग सुगम हैं, इसलिए तृतीय भङ्गगत विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* उनमेंसे जो सादि-सान्त भङ्ग है उसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १३४. यथा—जघन्यसे अजघन्यभावको प्राप्त होकर फिर भी जो अतिशीघ्र विसंयोजनाके द्वारा परिणत हुआ है उसके प्रकृत जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हुआ ।

* उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ १३५. कुदो ? अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए पढमसम्मत्तं घेत्तूणुवसमसम्मत्तकालब्भंतरे चेय विसंजोइय पुणो वि सव्वलहुं संजुत्तो होदूण आदिं करिय अद्धपोग्गलपरियट्टं परिभमिय तदवसाणे अंतोमुहुत्तसेसे संसारे विसंजोयणापरिणदम्मि तदुवलंभादो ।

* चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ १३६ सुगमं ।

* जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ १३७. कुदो ? तिण्हं संजलणाणं पुरिसवेदस्स च चरिमाणुभागबंधचरिमफालीए लोहसंजलणस्स वि समयाहियावलियसकसायम्मि तदुवलद्धीदो ।

* अजहण्णाणुभागसंकामओ अणंताणुबंधीणं भंगो ।

§ १३८. जहा अणंताणुबंधीणमजहण्णाणुभागसंकामयस्स तिण्णि भंगा परूविदा तहा एदेसिं पि परूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो ।

* इत्थि-णवुंसयवेद-छण्णोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

---

* उत्कृष्ट काल उपार्धपुद्‌गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ १३५. क्योंकि अर्धपुद्‌गलपरिवर्तन कालके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वको ग्रहण कर और उपशमसम्यक्त्वके कालके भीतर ही विसंयोजनाकर फिर भी अतिशीघ्र संयुक्त होकर जिसने अनन्तानुबन्धियोंके अजघन्य अनुभागसंक्रमका प्रारम्भ किया है । पुनः उसके साथ कुछ कम अर्ध-पुद्‌गलपरिवर्तन काल तक परिभ्रमणकर उक्त कालके अन्तमें संसारमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहनेपर जो पुनः विसंयोजनासे परिणत हुआ है उसके उतना काल उपलब्ध होता है ।

* चार संज्वलन और पुरुषवेदके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ १३६. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ १३७. क्योंकि तीन संज्वलन और पुरुषवेदसम्बन्धी अन्तिम अनुभागबन्धकी अन्तिम फालिके समय तथा लोभसंज्वलनकी भी सकषाय अवस्थामें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहनेपर उक्त काल उपलब्ध होता है ।

* उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका अनन्तानुबन्धियोंके समान भङ्ग है ।

§ १३८. जिस प्रकार अनन्तानुबन्धियोंके अजघन्य अनुभागके संक्रामकके तीन भङ्ग कहे हैं उसी प्रकार इनकी भी प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि इसमें कोई विशेषता नहीं है ।

* स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और छह नोकषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना काल है ?

§ १३९. सुगमं ।

* जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १४०. कुदो ? खवगचरिमाणुभागखंडयम्मि अंतोमुहुत्तुक्कीरणद्धापडिबद्धम्मि लद्ध-जहण्णभावत्तादो ।

* अजहण्णाणुभागसंकामयस्स तिण्णि भंगा ।

§ १४१. सुगममेदं ।

* तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो सो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १४२. सव्वोवसामणादो परिवदिय सव्वजहण्णंतोमुहुत्तकालमजहण्णं संकामिय पुणो खवगसेढिं चढिय जहण्णभावेण परिणदम्मि तदुवलद्धीदो ।

* उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ १४३. सव्वोवसामणादो परिवदिय अद्धपोग्गलपरियट्टं परिभमिय तदवसाणे असंकामयत्तमुवगयम्मि तदुवलंभादो ।

एवमोघो समत्तो ।

§ १४४. आदेसेण सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख०-मणुसअपज्ज०-देवा जाव उवरिमगेवजा त्ति विहत्तिभंगो। मणुसतिए मिच्छत्त०-अट्ठक० जह० ज० एगसमओ, उक्क० अंतोमु०। अज० ज० एगसमओ, मिच्छत्त०अंतोमु०[1], उक्क० सगट्ठिदी । सम्म०-अट्ठक०-पुरिस० जह०

---

§ १३९. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १४०. क्योंकि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उत्कीरणकालसे युक्त क्षपकसम्बन्धी अन्तिम अनुभाग-काण्डकमें उक्त प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागसंक्रमकी प्राप्ति हुई है ।

* उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकके तीन भङ्ग हैं ।

§ १४१. यह सूत्र सुगम है ।

* उनमेंसे जो सादि-सान्त भंग है उसका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १४२. क्योंकि सर्वोपशामनासे गिरकर और सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालतक अजघन्य अनुभागका संक्रमकर जो पुनः क्षपकश्रेणि पर चढ़कर जघन्य अनुभागका संक्रामक हुआ है उसके उक्त काल उपलब्ध होता है ।

* उत्कृष्ट काल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ १४३. सर्वोपशामनासे गिरकर तथा अर्धपुद्गलपरिवर्तनकाल तक परिभ्रमण करके उसके अन्तमें जो इनका असंक्रामक हुआ है उसके उक्त काल उपलब्ध होता है ।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ १४४. आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, देव और उपरिम ग्रैवेयक-तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अजघन्य अनुभाग-संक्रमका आठ कषायोंका एक समय तथा मिथ्यात्वका अन्तर्मुहूर्त और सबका उत्कृष्ट काल अपनी

---

१ आ०प्रतौ अंतोमु० । जह० ज० मिच्छ० एयस० अंतोमु० इति पाठः।

जहण्णु० एयसमओ। अट्ठणोक०-सम्मामि० जह० जहण्णु० अंतोमु०। तेसिं चेव अज० जह० एयस०,उक्क० सगट्ठिदी। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति विहत्तिभंगो। एवं जाव०।

* एत्तो एयजीवेण अंतरं।

अपनी कायस्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्व, आठ कषाय और पुरुषवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है तथा आठ नोकषाय और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है और सम्यक्त्व आदि उन्हीं सब प्रकृतियोंके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इसी प्रकार अनाहारकमार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ पर मनुष्यत्रिकमें सब प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागसंक्रमके कालका अलगसे निर्देश किया है। खुलासा इस प्रकार है—यह सम्भव है कि कोई जीव सूक्ष्म एकेन्द्रियके हतसमुत्पत्तिक अनुभागके साथ मनुष्यत्रिकमें कमसे कम एक समय तक और अधिकसे अधिक अन्तमुहूर्त तक रहे, इसलिए तो इनमें मिथ्यात्व और मध्यकी आठ कषायोंके जघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त कहा है। तथा इनमें मिथ्यात्वके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त इनकी जघन्य आयुकी अपेक्षा आठ कषायोंका जघन्य काल एक समय उपशमश्रेणिकी अपेक्षा और सबका उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण कायस्थितिकी अपेक्षा कहा है। सम्यक्त्व तथा चार अनन्तानुबन्धी और चार संज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय इस लिए कहा है, क्योंकि इनका जघन्य अनुभागसंक्रम एक समयके लिए ही प्राप्त होता है जो स्वामित्वको देख कर जान लेना चाहिए। तथा सम्यक्त्वके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय उद्वेलनाकी अपेक्षा, अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय अपने स्वामित्वके अनुसार इनमें एक समय तक रखनेकी अपेक्षा तथा चार संज्वलनके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय उपशमश्रेणिकी अपेक्षा कहा है। इनके अजघन्य अनुभागसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी उत्कृष्ट कायस्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। सम्यग्मिथ्यात्व और आठ नोकषायोंके जघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त इसलिए कहा है, क्योंकि वह अपने-अपने अन्तिम काण्डकके पतनके समय होता है जो स्वामित्वको देख कर जान लेना चाहिए। तथा सम्यग्मिथ्यात्वके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय उद्वेलनाकी अपेक्षा और आठ नोकषायोंके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय उपशमश्रेणिकी अपेक्षा कहा है। इनके अजघन्य अनुभागसंक्रमका उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी कायस्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। यहाँ पर जहाँ उद्वेलनाकी अपेक्षा एक समय काल कहा है सो उसका यह भाव है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उद्वेलनासंक्रममें एक समय शेष रहने पर मनुष्यत्रिकमें उत्पन्न करावे और इनके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य काल एक समय ले आवे। इसी प्रकार जहाँ पर उपशमश्रेणिकी अपेक्षा एक समय काल कहा है सो इसका यह अभिप्राय है कि उपशमश्रेणिमें उतरते समय यथास्थान उस प्रकृतिका एक समय तक अजघन्य अनुभागसंक्रम करावे और दूसरे समयमें मरण कराकर देवगतिमें ले आवे। शेष कथन अनुभागविभक्तिको देख कर घटित कर लेना चाहिए।

* आगे एक जीवकी अपेक्षा अन्तरका कथन करते हैं।

§ १४५. अहियारसंभालणसुत्तमेदं सुगमं ।

* मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १४६. सुगमं ।

* जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १४७ तं जहा—उक्कस्साणुभागसंकामओ अणुक्कस्सभावं गंतूण जहण्णमंतोमुहुत्तमंतरिय पुणो वि उक्कस्साणुभागस्स पुव्वं व संकामओ[1] जादो, लद्धमुक्कस्साणुभागसंकामय-जहण्णंतरमंतोमुहुत्तमेत्तं ।

* उक्कस्सेण असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ।

§ १४८. तं कधं ? सण्णी पंचिंदिओ उक्कस्साणुभागं बंधिय संकामेमाणो कंडय घादेण अणुक्कस्से णिवदिय एइंदिएसु अणंतकालमच्छिदूण पुणो सण्णिपंचिंदियपज्जत्तए-सुप्पज्जिय उक्कस्साणुभागं बंधिदूण संकामओ जादो तस्स लद्धमंतरं होइ ।

* अणुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १४९. सुगमं ।

* जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १४५. अधिकारकी संम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है ।

* मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर काल है ?

§ १४६. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १४७. यथा—कोई उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक जीव अनुत्कृष्ट अनुभागको प्राप्त होकर और जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक उत्कृष्टका अन्तर करके फिर भी पहलेके समान उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक हो गया । इस प्रकार उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो गया ।

* उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ १४८ शंका—वह कैसे ?

समाधान—कोई संज्ञी पञ्चेन्द्रिय जीव उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करके उसका संक्रम करता हुआ तथा काण्डकघातके द्वारा अनुत्कृष्टको प्राप्त होकर और उसके साथ एकेन्द्रियोंमें अनन्त काल तक रह कर पुनः संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर तथा उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध कर उसका संक्रामक हो गया । इस प्रकार उसका अन्तरकाल प्राप्त होता है ।

* उसके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?

§ १४९. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

---

[1] ता०प्रतौ पुवं [व] संकामओ आ०प्रतौ पुव्वं संकामओ इति पाठः ।

§ १५० तं जहा—अणुक्कस्ससंकामओ उक्कस्सं काऊणंतोमुहुत्तकालं उक्कस्समेव संकामिय पुणो कंडयघादेणाणुक्कस्ससंकामओ जादो, लद्धमंतरं होइ। णवरि जहण्णंतरे इच्छिज्जमाणे सव्वलहुमेव कंडयघादो करावेयव्वो। उक्कस्संतरे विवक्खिए सव्वचिरेणंतोमुहुत्तेण कंडयघादो करावेयव्वो।

❀ एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं।

§ १५१. जहा मिच्छत्तुक्कस्साणुभागसंकामयाणं जहण्णुक्कस्संतरपरूवणा कया तहा एदेसिं पि कम्माणं कायव्वा त्ति भणिदं होइ। संपहि अणुक्कस्साणुभागसंकामयगयविसेस-परूवणट्ठमुत्तरसुत्तं—

❀ णवरि बारसकसाय-णवणोकसायाणमणुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ।

§ १५२. अप्पप्पणो सव्वोवसामणाए एयसमयमंतरिय विदियसमए कालं काऊण देवेसुप्पण्णपढमसमए पुणो वि संकामयत्तमुवगयम्मि तदुवलंभादो।

❀ अणंताणुबंधीणमणुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

---

§ १५०. यथा—मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करनेवाला जीव उसका उत्कृष्ट अनुभाग करके और अन्तर्मुहूर्त काल तक उत्कृष्ट अनुभागका ही संक्रम करके पुनः काण्डकघातके द्वारा अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक हो गया। इस प्रकार मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाता है। मात्र इतनी विशेषता है कि जघन्य अन्तरकी विवक्षा होने पर अति शीघ्र काण्डकघात कराना चाहिए। तथा उत्कृष्ट अन्तरकी विवक्षा होने पर बहुत बड़े अन्तर्मुहूर्तके द्वारा काण्डकघात कराना चाहिए।

* इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका अन्तरकाल जानना चाहिए।

§ १५१. जिस प्रकार मिथ्यात्वके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरका कथन किया है उसी प्रकार इन कर्मों का भी कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इन कर्मोंके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकसम्बन्धी विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* किन्तु इतनी विशेषता है कि बारह कषायों और नौ नोकषायोंके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है।

§ १५२. क्योंकि अपनी-अपनी सर्वोपशामनाके द्वारा एक समयका अन्तर करके और दूसरे समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें पुनः इनका संक्रम प्राप्त होने पर उक्त कर्मोंके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय उपलब्ध होता है।

* अनन्तानुबन्धियोंके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ १५३. तं कथं ? अणुक्कस्साणुभागं संकामेंतो विसंजोइय पुणो अंतोमुहुत्तेण संजुत्तो होदूण संकामगो जादो, लद्धमंतरं ।

❀ उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ १५४. तं कधं ? उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे अणंताणुबंधिं विसंजोएदूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूणावलियादीदं संकामेमाणस्स लद्धमंतरं । एत्थ सादिरेयपमाणमंतोमुहुत्तं ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १५५. सुगमं ।

❀ जहण्णेणेयसमओ ।

§ १५६. तं जहा—सम्मत्तमुव्वेल्लमाणो उवसमसम्मत्ताहिमुहो होऊणंतरकरणं परिसमाणिय मिच्छत्तपढमट्ठिदिचरिमसमयम्मि सम्मत्तचरिमफालिं संकामिय उवसमसम्मत्तगहणपढमसमए असंकामओ होऊणंतरिय पुणो विदियसमए उक्कस्साणुभागसंकामओ जादो, लद्धमंतरं होइ । एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि जहण्णमंतरपरूवणा कायव्वा ।

---

§ १५३. शंका—यह कैसे ?

समाधान—अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करनेवाला जीव अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना करके और पुनः अन्तर्मुहूर्तमें उनसे संयुक्त होकर उनका संक्रामक हो गया। इस प्रकार इनके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो जाता है।

* उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।

§ १५४. शंका—यह कैसे ?

समाधान—क्योंकि उपशमसम्यक्त्वके कालके भीतर अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना करके तथा दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करनेके बाद मिथ्यात्वको प्राप्त होकर एक आवलिकालके बाद इनका संक्रम करनेवाले जीवके उक्त अन्तर काल प्राप्त हो जाता है। यहाँ पर साधिकका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ १५५. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तर एक समय है ।

§ १५६. यथा—सम्यक्त्वकी उद्वेलना करनेवाला कोई एक जीव उपशम सम्यक्त्वके अभिमुख होकर तथा अन्तरकरणको समाप्त कर मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वकी अन्तिम फालिका संक्रम करके उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करनेके प्रथम समयमें असंक्रामक हो गया और इस प्रकार उसका अन्तर करके पुनः दूसरे समयमें उसके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक हो गया। इस प्रकार सम्यक्त्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अन्तरका भी कथन करना चाहिए।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ १५७. तं कथं ? अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए पढमसम्मत्तं पडिवज्जिय सव्वलहुं मिच्छत्तं गंतूण सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणि उव्वेल्लिय अंतरस्सादिं कादूण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं परिभमिय पुणो थोवावसेसे संसारे उवसमसम्मत्तं पडिवण्णो विदियसमयम्मि संकामओ जादो, लद्धमुक्कस्संतरमुवड्ढपोग्गलपरियट्टमेत्तं ।

❀ अणुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १५८. सुगमं ।

❀ णत्थि अंतरं ।

§ १५९. कुदो ? दंसणमोहक्खवणाए लद्धाणुक्कस्सभावत्तादो ।

एवमोघो समत्तो ।

§ १६०. आदेसेण सव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

❀ एत्तो जहण्णयंतरं ।

§ १६१. उक्कस्साणुभागसंकामयंतरविहासणाणंतरमेत्तो जहण्णाणुभागसंकामयंतरं कायव्वमिदि वुत्तं होइ ।

---

* उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ १५७. शंका—यह कैसे ?

समाधान—अर्धपुद्गलपरिवर्तनके प्रथम समयमें प्रथमोपशम सम्यक्त्वको प्राप्त होकर तथा अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर और सम्यक्त्व तथा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके अन्तरका प्रारम्भ किया । पुनः उपार्धपुद्गलपरिवर्तन काल तक परिभ्रमण करके संसारके स्तोक रह जाने पर पुनः उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त होकर दूसरे समयमें उनका संक्रामक हो गया । इस प्रकार इनके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण प्राप्त हो जाता है ।

* इनके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ।

§ १५८. यह सूत्र सुगम है ।

* अन्तरकाल नहीं है ।

§ १५९. क्योंकि इनका अनुत्कृष्ट अनुभाग दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें प्राप्त होता है ।

इस प्रकार ओघ प्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ १६०. आदेशसे सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार अनुभागविभक्तिमें नरकगति आदि मार्गणाओंमें एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकालका कथन किया है उसी प्रकार यहाँ भी उसे अविकल जान लेना चाहिए । अन्तरकालकी अपेक्षा उससे यहाँ पर कोई विशेषता नहीं है ।

* आगे जघन्य अन्तरका कथन करते हैं ।

§ १६१. उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकके अन्तरका कथन करनेके बाद आगे जघन्य अनुभागके संक्रामकके अन्तरका कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १६२. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १६३. तं जहा—सुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियजहण्णाणुभागसंकमादो अजहण्णभावं गंतूग पुणो वि अंतोमुहुत्तेण घादिय सव्वजहण्णाणुभागसंकामओ जाओ, लद्धमंतरं होइ ।

❀ उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ।

§ १६४. तं कथं ? जहण्णाणुभागसंकामओ अजहण्णभावं गंतूण तप्पाओग्गपरिणामट्ठाणेसु असंखेज्जलोगमेत्तं कालं गमिय पुणो हदसमुप्पत्तियपाओग्गपरिणामेण जहण्णभावमुवगओ तस्स लद्धमंतरं होइ ।

❀ अजहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १६५. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १६६. तं जहा—अजहण्णाणुभागसंकामओ जहण्णभावमुवगंतूण तत्थ जहण्णुक्कस्सेणंतोमुहुत्तमच्छिय पुणो अजहण्णभावेण परिणदो, तत्थ लद्धमंतरं होइ ।

---

* मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?

§ १६२. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १६३. यथा— सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिकरूप जघन्य अनुभागके संक्रमसे अजघन्य अनुभागको प्राप्त होकर फिर भी अन्तर्मुहूर्तके द्वारा घात कर कोई जीव सबसे जघन्य अनुभागका संक्रामक हो गया । इस प्रकार मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो जाता है ।

* उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है ।

§ १६४. शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि जघन्य अनुभागका संक्रामक जो जीव अजघन्य अनुभागको प्राप्त होकर और तत्प्रायोग्य परिणामस्थानोंमें असंख्यात लोकप्रमाण कालको गमा कर पुनः हतसमुत्पत्तिक अनुभागके परिणामके योग्य जघन्य अनुभागको प्राप्त हुआ है उसके उक्त उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है ।

* उसके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?

§ १६५. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १६६. यथा—अजघन्य अनुभागका संक्रामक कोई एक जीव जघन्य अनुभागको प्राप्त होकर और वहाँ जघन्य और उत्कृष्टरूपसे अन्तर्मुहूर्त काल तक रह कर पुनः अजघन्य अनुभागवाला हो गया । इस प्रकार उक्त अन्तर प्राप्त हो जाता है ।

❀ एवमट्ठकसायाणं ।

§ १६७. कुदो ? सामित्तभेदाभावादो । एत्थुवलब्भमाणथोवयरविसेसपदुप्पायणट्ठमिदमाह—

❀ णवरि अजहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १६८. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ १६९. सव्वोवसामणाए अंतरिदस्स तदुवलंभादो ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ।

§ १७०. सुगमं ।

❀ णत्थि अंतरं ।

§ १७१. कुदो ? खवणाए जादजहण्णाणुभागसंकामयस्स पुणरुब्भवाभावादो ।

❀ अजहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १७२. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

इसी प्रकार आठ कषायोंका अन्तरकाल जानना चाहिए ।

§ १६७. क्योंकि मिथ्यात्वके स्वामीसे इनके स्वामीमें कोई भेद नहीं है । अब यहाँ पर प्राप्त होनेवाली थोड़ीसी विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* किंतु इतनी विशेषता है कि इनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?

§ १६८. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर एक समय है ।

§ १६९ क्योंकि सर्वोपशामनाके द्वारा अन्तरको प्राप्त हुए जीवके उक्त अन्तरकाल उपलब्ध होता है ।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?

§ १७०. यह सूत्र सुगम है ।

* अन्तरकाल नहीं है ।

§ १७१. क्योंकि क्षपणामें उत्पन्न हुए जघन्य अनुभागसंक्रमकी पुनः उत्पत्ति नहीं होती ।

* उनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?

§ १७२. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ १७३ एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि।

❀ अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १७४. सुगमं।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ १७५ तं जहा—अणंताणुबंधीणं संजुत्तपढमसमयणवकबंधमावलियादीदं जहण्णभावेण संकामिय तत्तो विदियादिसमएसु अजहण्णभावेणंतरिय पुणो वि सव्वलहुएण कालेण विसंजोयणापुव्वं तप्पाओग्गजहण्णपरिणामेण संजुत्तो होऊणावलियादिक्कंतो जहण्णाणुभाग-संकामओ जादो, लद्धमंतरं होइ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ १७६. तं जहा—पुव्वुत्तेणेव विहिणा आदिं कादूणंतरिय उवड्ढपोग्गलपरियट्टं परिभमिय थोवावसेसे सिज्झिदव्वए त्ति सम्मत्तं पडिवज्जिय अणंताणुबंधिविसंजोयणापुरस्सरं परिणामपच्चएण संजुत्तो होऊण आवलियादिक्कंतो जहण्णाणुभागसंकामओ जादो, लद्धमुक्कस्संतरं होइ।

❀ अजहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १७७. सुगमं।

---

§ १७३. ये दोनों सूत्र सुगम हैं।

*** अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?**

§ १७४. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।**

§ १७५. यथा—अनन्तानुबन्धियोंके संयुक्त होनेके प्रथम समयमें हुए नवकबन्ध एक आवलिके बाद जघन्यरूपसे संक्रम करके तथा उसके बाद द्वितीयादि समयोंमें अजघन्य अनुभाग-संक्रमके द्वारा उसका अन्तर करके फिर अतिशीघ्र कालके द्वारा विसंयोजनापूर्वक तत्प्रायोग्य जघन्य परिणामसे संयुक्त होकर एक आवलिके बाद जो पुनः जघन्य अनुभागका संक्रामक हो गया उसके उक्त जघन्य अन्तर प्राप्त होता है।

*** उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है।**

§ १७६. यथा—पूर्वोक्त विधिसे ही जघन्य अनुभागसंक्रमका प्रारम्भ करके और अन्तर करके उपार्धपुद्गलपरिवर्तन कालतक परिभ्रमण करके सिद्ध होनेके लिए स्तोक काल शेष रह जाने पर सम्यक्त्वको प्राप्त होकर तथा अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजनापूर्वक परिणामवश उससे संयुक्त होकर एक आवलिके बाद जघन्य अनुभागका संक्रामक हो गया। इस प्रकार उक्त उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाता है।

*** इनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?**

§ १७७. यह सूत्र सुगम है।

® जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १७८. तं जहा—अजहण्णाणुभागसंकामओ अणंताणुबंधीणं विसंजोयणाणमंतरिय पुणो वि सव्वलहुं संजुत्तो होऊण जहण्णाणुभागसंकामओ जादो, लद्धमंतरं ।

® उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ १७९. तं जहा—उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे, चेय अणंताणु०चउक्कं विसंजोइय वेदयसम्मत्तं घेत्तूण बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय तदवसाणे मिच्छत्तं गंतूणावलियादीदं संकामेमाणस्स लद्धमुक्कस्समंतरं होइ । एत्थ सादिरेयपमाणमंतोमुहुत्तं ।

® सेसाणं कम्माणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि?

§ १८०. सुगमं ।

® णत्थि अंतरं ।

§ १८१. कुदो ? खवणाए जादजहण्णाणुभागत्तादो ।

® अजहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ १८२. सुगमं ।

* जहण्णेण एयसमओ ।

§ १८३. सव्वोवसामणाए एयसमयमंतरिय विदियसमए कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमए संकामयत्तमुवगयम्मि तदुवलंभादो ।

---

* जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १७८. यथा—अजघन्य अनुभागका संक्रामक जीव अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना द्वारा अन्तर करके फिर भी अतिशीघ्र संयुक्त होकर अजघन्य अनुभागका संक्रामक हो गया । इस प्रकार उक्त अन्तर प्राप्त हो जाता है ।

* तथा उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।

§ १७९. यथा—उपशमसम्यक्त्वके कालके भीतर ही अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके तथा वेदकसम्यक्त्वको ग्रहण कर दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर उसके अन्तमें मिथ्यात्वमें जाकर एक आवलिके बाद संक्रम करनेवाले जीवके उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है । यहाँ साधिकका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त है ।

* शेष कर्मोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ।

§ १८०. यह सूत्र सुगम है ।

* अन्तरकाल नहीं है ।

§ १८१. क्योंकि इनका जघन्य अनुभाग क्षपणामें होता है ।

* इनके अजघन्य अनुभागके संक्रामकका कितना अन्तर है ?

§ १८२. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर एक समय है ।

§ १८३. क्योंकि सर्वोपशमना द्वारा एक समयका अन्तर करके दूसरे समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें संक्रम करनेवाले जीवके उक्त अन्तर प्राप्त होता है।

* उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १८४. सव्वोवसामणाए सव्वचिरकालमंतरिय पडिवादवसेण पुणो संकामयचमुवगयस्स पयदंतरसमाणुवलंभादो ।

एवमोघो समत्तो ।

§ १८५. आदेसेण सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज०-सव्वदेवा त्ति विहत्तिभंगो । मणुसतिए दंसणतिय-अणंताणु०४ विहत्तिभंगो । बारसक-णवणोक० जह० णत्थि अंतरं । अजह० जहण्णु० अंतोमु० । एवं जाव० ।

* सण्णियासो

§ १८६. अहियारपरामरससुत्तमेदं सुगमं ।

* मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागं संकामेंतो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जइ संकामओ णियमा उक्कस्सयं संकामेदि ।

§ १८७. मिच्छत्तुक्कस्साणुभागसंकामओ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सिया संतकम्मिओ सिया असंतकम्मिओ । संतकम्मिओ वि सिया संकामओ, आवलियपविट्ठसंतकम्मियस्स वि

---

* उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १८४. क्योंकि सर्वोपशामनाके द्वारा अधिक काल तक अन्तर करके गिरनेके कारण पुनः संक्रम करनेवाले जीवके प्रकृत अन्तरकाल पाया जाता है ।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ १८५. आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है । मनुष्यत्रिकमें दर्शनमोहनीयत्रिक और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है । बारह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य अनुभागसंक्रमका अन्तरकाल नहीं है । अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—जो सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ मनुष्यत्रिकमें उत्पन्न होता है उसके मध्यकी आठ कषायोंका जघन्य अनुभागसंक्रम पाया जाता है । तथा चार संज्वलन और नौ नोकषायोंका जघन्य अनुभागसंक्रम क्षपकश्रेणिमें उपलब्ध होता है, इसलिए मनुष्यत्रिकमें उक्त प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागसंक्रमके अन्तरका निषेध किया है । तथा यहाँ पर उक्त प्रकृतियोंके अजघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर उपशमश्रेणिमें अन्तर्मुहूर्तप्रमाण प्राप्त होता है, इसलिए यह उक्त कालप्रमाण कहा है । शेष अन्तर अनुभागविभक्तिके समान होनेसे उसके अनुसार जाननेकी सूचना की है ।

* अब सन्निकर्षका कथन करते हैं ।

§ १८६. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है ।

* मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करनेवाला जीव यदि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रम करता है तो वह नियमसे उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करता है ।

§ १८७. मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करनेवाला जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कदाचित् सत्कर्मवाला होता है और कदाचित् उनके सत्कर्मसे रहित होता है । सत्कर्मवाला भी कदाचित् संक्रामक होता है, क्योंकि जिस जीवके उक्त कर्मोंका सत्कर्म आवलिके भीतर

संभवोवलंभादो। अह संकामओ णियमा सो उकस्सं संकामेइ, दंसणमोहक्खवणादो अण्णत्थ तदणुक्कस्साणुभागसंभवाणुववत्तीदो।

*** सेसाणं कम्माणं उक्कस्सं वा अणुक्कस्सं वा संकामेदि।**

§ १८८. कुदो ? मिच्छत्तुक्कस्साणुभागसंकामयम्मि सोलसक०-णवणोकसायाण-मुक्कस्साणुभागस्स तत्तो छट्ठाणहीणाणुभागस्स वि विसेसपच्चयवसेण संभवं पडि विरोहाभावादो।

*** उक्कस्सादो अणुक्कस्सं छट्ठाणपदिदं।**

§ १८९. उक्कस्साणुभागसंकमं पेक्खिऊण छट्ठाणपदिदमणुक्कस्साणुभागं संकामेइ त्ति वुत्तं होइ। किं कारणं ? णिरुद्धमिच्छत्तुक्कस्साणुभागं संकामयम्मि विवक्खियपयडीणमणुभागस्स छट्ठाणहाणिबंधसंभवं पडि विप्पडिसेहाभावादो। एवं मिच्छत्तेण सह सेसकम्माणं सण्णियास-विहाणं काऊण तेसिं पि पादेक्कणिरुंभणेण सण्णियासविहाणमेवं चेव कायव्वमिदि परूवेदुमुत्तरसुत्तमाह—

*** एवं सेसाणं कम्माणं णादूण णेदव्वं।**

§ १९०. एदं संगहणयावलंबिसुत्तं। एदस्स विहासणट्ठमुच्चारणाणुगममेत्थ कस्सामो।

प्रविष्ट हो गया है ऐसे जीवका भी सद्भाव पाया जाता है। यदि संक्रामक होता है तो वह नियमसे उनके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करता है, क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाको छोड़ कर अन्यत्र उनका अनुत्कृष्ट अनुभाग नहीं बनता।

*** वह शेष कर्मोंके उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रम करता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रम करता है।**

§ १८८. क्योंकि जो मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम कर रहा है उसके सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके विशेष प्रत्ययवश उत्कृष्ट अनुभागके और उससे छह स्थान हीन अनुभागके पाये जानेमें कोई विरोध नहीं आता।

*** किन्तु उत्कृष्टसे अनुत्कृष्ट अनुभाग छह स्थानपतित होता है।**

§ १८९. उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमको देखते हुए छह स्थानपतित अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि जो विवक्षित मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम कर रहा है उसके विवक्षित प्रकृतियोंके छह स्थानपतित अनुभागबन्धके होनेका कोई निषेध नहीं है। इस प्रकार मिथ्यात्वके साथ शेष कर्मोंके सन्निकर्षका विधान करके अब उन कर्मोंमेंसे भी प्रत्येकको विवक्षित कर सन्निकर्षका विधान इसी प्रकार करना चाहिए ऐसा कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इसी प्रकार शेष कर्मोंकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानकर कथन करना चाहिए।**

§ १९०. यह संग्रहनयका अवलम्बन करनेवाला सूत्र है। इसका व्याख्यान करनेके लिए यहाँ पर उच्चारणाका अनुगम करते हैं। यथा—सन्निकर्ष दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट।

तं जहा—सण्णियासो दुविहो, जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छत्तस्स उक्क० अणुभागसंका० सम्म०-सम्मामि० सिया अत्थि सिया णत्थि । जदि अत्थि सिया संका० । जइ संका० णियमा उक्कस्सं । सोलसक०-णवणोक० णियमा संका० तं तु छट्ठाणपदिदं । एवं सोलसक०-णवणोक० । सम्म० उक्कस्साणुभाग० संका० मिच्छ० णियमा० तं तु छट्ठाणपदिदं । बारसक०-णवणोक० सिया तं तु छट्ठाणपदिदं । अणंताणु०४ सिया अत्थि० । जइ अत्थि सिया संका० तं तु छट्ठाणपदिदं । सम्मामि० णियमा उक्कस्सं । एवं सम्मामि० । णवरि सम्म० सिया अत्थि । जदि अत्थि सिया संका० । जइ संका० णियमा उक्क० । एवं णेरइय० । णवरि सम्मामि० णत्थि । सम्मा० ओघं । णवरि बारसक०-णवणोक० णियमा तं तु छट्ठाणपदिदा । एवं पढमा०-

---

उत्कृष्टका प्रकरण है । उसकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम करनेवाले जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं । यदि हैं तो उनका कदाचित् संक्रामक होता है । यदि संक्रामक होता है तो नियमसे उनके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका नियमसे संक्रामक होता है । किन्तु वह उनके उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो उनके छह स्थानपतित अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है । इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । सम्यक्त्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक जीव मिथ्यात्वका नियमसे संक्रामक होता है । किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो वह नियमसे छह स्थानपतित अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है । बारह कषाय और नौ नोकषायोंका कदाचित् संक्रामक होता है । यदि संक्रामक होता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो वह नियमसे छह स्थानपतित अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है । अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं । यदि हैं तो उनका कदाचित् संक्रामक होता है । यदि संक्रामक होता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो नियमसे छह स्थानपतित अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है । सम्यग्मिथ्यात्वका नियमसे उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसके सम्यक्त्वप्रकृति कदाचित् है और कदाचित् नहीं है । यदि है तो उसका कदाचित् संक्रामक होता है और कदाचित् संक्रामक नहीं होता । यदि संक्रामक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है । इसी प्रकार नारकियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृति नहीं है । सम्यक्त्वकी मुख्यतासे भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि वह बारह कषाय और नौ नोकषायोंका नियमसे संक्रामक होता है । यदि संक्रामक होता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो वह नियमसे छह स्थानपतित अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है । इसी प्रकार पहिली पृथिवी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे

तिरिक्ख-पंचिंदियतिरि०दुग-देवा सोहम्मादि जाव सहस्सार त्ति। एवं विदियादि जाव सत्तमा त्ति। णवरि सम्म० णत्थि। एवं जोणिणी-पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-भवण०-वाण०-जोदिसि० त्ति।

§ १६१. मणुसतिए ओघं। आणदादि जाव णवगेवज्जा० त्ति मिच्छ० उक्क० अणुभा० संका० सम्म० सिया अत्थि सिया णत्थि। जइ अत्थि सिया संका०। जइ संका० णियमा उक्क०। सोलसक०-णवणोक० णियमा उक्क०। एवं सोलसक०-णवणो०। सम्म० उक्क० अणुभा० संका० मिच्छ०-बारसक०-णवणोक० णियमा तं तु उक्कस्सादो अणुक्कस्समणंतगुणहीणं। अणंताणु०४ सिया अत्थि। जदि अत्थि सिया संका०। जदि संका० तं तु उक्कस्सादो अणुक्कस्समणंतगुणहीणं।

§ १६२. अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ० उक्कस्साणु० संका० सम्म०-सोलसक०-णवणोक० णियमा उक्कस्सं। एवं सोलसक०-णवणोक०। सम्म० उक्क० अणुभागसंका० बारसक०-णवणोक० णियमा तं तु उक्कस्सादो अणुक्कस्समणंतगुणहीणं। अणंताणु०४ सिया

लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियों जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वप्रकृति नहीं है। इसी प्रकार योनिनी तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त, भवनवासी देव, व्यन्तर देव और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए।

§ १६१. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकके सम्यक्त्व कदाचित् है और कदाचित् नहीं है। यदि है तो कदाचित् संक्रामक होता है। यदि संक्रामक होता है तो नियमसे उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है। इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। सम्यक्त्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका नियमसे संक्रामक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो वह अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं। यदि हैं तो कदाचित् संक्रामक होता है और कदाचित् संक्रामक नहीं होता। यदि संक्रामक होता है तो कदाचित् उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और कदाचित् अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो वह अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है।

§ १६२. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक जीव सम्यक्त्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है। इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। सम्यक्त्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक जीव बारह कषाय और नौ नोकषायोंका नियमसे संक्रामक होता है। किन्तु वह उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन

अत्थि सिया णत्थि। जदि अत्थि सिया संका०। जदि संका० तं तु उक्कस्सादो अणुक्कस्स-मणंतगुणहीणं। एवं जाव०।

❀ जहण्णओ सण्णियासो।

§ १९३. एत्तो जहण्णसण्णियासो कायव्वो त्ति भणिदं होइ। संपहि पयडि-परिवाडीए तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागं संकामेंतो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जइ संकामओ णियमा अजहण्णाणुभागं संकामेदि।

§ १९४. कुदो ? मिच्छत्तजहण्णाणुभागसंकामयसुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियसंत-कम्मियम्मि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकमस्सेव संभवदंसणादो।

❀ जहण्णादो अजहण्णमणंतगुणब्भहियं।

§ १९५. जहण्णादो अणंतगुणब्भहियमेवाजहण्णाणुभागं संकामेदि, सम्म-सम्मा-मिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागस्स तत्थ वि विणट्ठसरूवेण संकंतिदंसणादो।

❀ अट्ठण्णं कम्माणं जहण्णं वा अजहण्णं वा संकामेदि।

अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं। यदि हैं तो उनका कदाचित् संक्रामक होता है और कदाचित् संक्रामक नहीं होता। यदि संक्रामक होता है तो उत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट अनुभागका भी संक्रामक होता है। यदि अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है तो अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा अनन्तगुणे हीन अनुत्कृष्ट अनुभागका संक्रामक होता है। इसी प्रकार अनाहारकमार्गणा तक जानना चाहिए।

* अब जघन्य अनुभागसंक्रमके सन्निकर्षका कथन करते हैं।

§ १९३. आगे जघन्य अनुभागसंक्रम करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब प्रकृतियोंकी परिपाटीके अनुसार उसका निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध है—

* मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका यदि संक्रामक होता है तो नियमसे अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है।

§ १९४. क्योंकि मिथ्यात्वके सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक सत्कर्मरूप जघन्य अनुभागके संक्रामक जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रम ही सम्भव देखा जाता है।

* जो जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणे अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है।

§ १९५. जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका ही संक्रम करता है, क्योंकि वहाँ पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका अविनष्टरूपसे संक्रम देखा जाता है।

* आठ कर्मोंके जघन्य अनुभागका भी संक्रामक होता है और अजघन्य अनु-भागका भी संक्रामक होता है।

§ १९६. कुदो ! मिच्छत्तेण समाणसामियत्ते वि विसेसपच्चयवसेणेदेसिमणुभागस्स तत्थ जहण्णाजहण्णभावसिद्धीए विरोहाभावादो ।

❀ जहण्णादो अजहण्णं छट्ठाणपदिदं ।

§ १९७. एत्थ छट्ठाणपदिदमिदि वुत्ते कत्थ वि जहण्णादो अणंतभागब्भहियं, कत्थ वि असंखेज्जभागब्भहियं, कत्थ वि संखेज्जभागब्भहियं, कत्थ वि संखेज्जगुणब्भहियं, कत्थ वि असंखेज्जगुणब्भहियं, कत्थ वि अणंतगुणब्भहियं च अजहण्णाणुभागं[1] संकामेदि त्ति घेत्तव्वं, अंतरंगपच्चयवसेण जहण्णभावपाओग्गविसए वि पयदवियप्पाणमुप्पत्तीए पडिबंधाभावादो ।

❀ सेसाणं कम्माणं णियमा अजहण्णं । जहण्णादो अजहण्णमणंतगुणब्भहियं ।

§ १९८. वुत्तसेसकसाय-णोकसायाणमिह ग्गहणट्ठं सेसकम्मणिद्देसो। तेसिमेत्थ जहण्णभावसंभवासंकणिरायरणट्ठं णियमा अजहण्णवयणं । तत्थ वि अणंतभागब्भहियादिवियप्पसंभवणिरायरणट्ठमणंतगुणब्भहियणिद्देसो कदो । कुदो पुण तदणंतगुणब्भहियत्तमिदि णासंकणिज्जं, विसंजोयणापुव्वसंजोगे खवणाए च लद्धजहण्णभावाणमणंताणुबंधियादीणमेत्थाणंतगुणत्तसिद्धीए पडिसेहाभावादो ।

---

§ १९६. क्योंकि इनके जघन्य अनुभागके संक्रमका स्वामी मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रमके स्वामीके समान है तो भी विशेष प्रत्ययवश वहाँ पर इनका अनुभाग जघन्य भी सिद्ध होता है और अजघन्य भी सिद्ध होता है, इसमें कोई विरोध नहीं आता ।

*** यदि अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है तो जघन्यकी अपेक्षा छह स्थान पतित अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है ।**

§ १९७. यहाँ पर छह स्थानपतित ऐसा कहने पर जघन्यसे कहीं पर अनन्तवें भाग अधिक, कहीं पर असंख्यातवें भाग अधिक, कहीं पर संख्यातवें भाग अधिक, कहीं पर संख्यातगुणे अधिक, कहीं पर असंख्यातगुणे अधिक और कहीं पर अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि अन्तरङ्ग कारण वश जघन्य अनुभागके योग्य स्थानमें भी प्रकृत विकल्पोंकी उत्पत्ति होनेमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है ।

*** शेष कर्मोंके नियमसे अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है जो जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है ।**

§ १९८. पूर्वमें कहे गये कर्मोंसे शेष कषायों और नोकषायोंका यहाँ पर ग्रहण करनेके लिए सूत्रमें 'शेष' पदका निर्देश किया है । उनका यहाँ पर जघन्य अनुभाग सम्भव है ऐसी आशंकाके निराकरण करनेके लिए 'नियमसे अजघन्य' यह वचन दिया है । उसमें भी अनन्तवें भाग आदि विकल्प सम्भव हैं, इसलिए उनका निराकरण करनेके लिए 'अनन्तगुणे अधिक' पदका निर्देश किया है । उनका अनुभाग अनन्तगुणा कैसे है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि विसंयोजनाके बाद पुनः संयोगके समय तथा क्षपणाके समय जघन्य अनुभागको प्राप्त होनेवाले अनन्तानुबन्धी आदिके अनुभागसे यहाँ पर अनन्तगुणे सिद्ध होनेमें किसी प्रकारका प्रतिषेध नहीं है ।

---

१ ता०-आ०प्रत्योः च जहण्णाणुभागं इति पाठः ।

❀ एवमट्ठकसायाणं ।

§ १९९. जहा मिच्छत्तस्स जहण्णसण्णियासो कओ एवमट्ठकसायाणं पि पादेक्कं णिरुंभणाए कायव्वो, विसेसाभावादो त्ति भणिदं होदि ।

❀ सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागं संकामेंतो मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-अणंताणुबंधीणमकम्मंसिओ ।

§ २००. कुदो ? एदेसिमविणासे सम्मत्तजहण्णाणुभागसंकमुप्पत्तीए विप्पडिसिद्धत्तादो ।

❀ सेसाणं कम्माणं णियमा अजहण्णं संकामेदि ।

§ २०१. कुदो ? सुहुमहदसमुप्पत्तियकम्मेण चरित्तमोहक्खवणाए च लद्धजहण्णभावाणं तेसिमेत्थ जहण्णभावाणुवलंभादो ।

❀ जहण्णादो अजहण्णमणंतगुणब्भहियं ।

§ २०२. कुदो ? अट्ठकसायाणं हदसमुप्पत्तियजहण्णाणुभागादो सेसकसाय-णोकसायाणं पि खवणाए जणिदजहण्णाणुभागसंकमादो एत्थतणतदणुभागसंकमस्स तहाभावसिद्धीए विप्पडिसेहाभावादो ।

---

* इसी प्रकार मध्यकी आठ कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १९९. जिस प्रकार मिथ्यात्वकी मुख्यतासे जघन्य सन्निकर्षका विधान किया है उसी प्रकार आठ कषायोंकी अपेक्षा भी प्रत्येककी मुख्यतासे जघन्य सन्निकर्षका कथन करना चाहिए, क्योंकि मिथ्यात्वके कथनसे इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* सम्यक्त्वके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके सत्कर्मसे रहित होता है ।

§ २००. क्योंकि इन मिथ्यात्व आदिका विनाश हुए बिना सम्यक्त्वके जघन्य अनुभाग संक्रमकी उत्पत्ति निषिद्ध है ।

* शेष कर्मोंके नियमसे अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है ।

§ २०१. क्योंकि जिनमें सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बधी हतसमुत्पत्तिक कर्मके द्वारा और चारित्रमोहनीयकी क्षपणाके द्वारा जघन्यता प्राप्त हुई है उनका यहाँ अर्थात् सम्यक्त्वके जघन्य अनुभागसंक्रमके साथ जघन्यपना नहीं बन सकता ।

* जो अपने जघन्यकी अपेक्षा अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है ।

§ २०२. क्योंकि आठ कषायोंके हतसमुत्पत्तिक रूपसे उत्पन्न हुए जघन्य अनुभागसे तथा शेष कषाय और नोकषायोंके भी क्षपणामें उत्पन्न हुए जघन्य अनुभागसंक्रमसे यहाँ पर उत्पन्न हुए उनके जघन्य अनुभागसंक्रमका जघन्यपना निषिद्ध है ।

❀ एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि। णवरि सम्मत्तं विज्जमाणेहि भणियव्वं।

§ २०३. सम्मत्तसण्णियासे सम्मामिच्छत्तमविज्जमाणेहि मिच्छत्तादीहि सह भणिदं। एत्थ पुण सम्मत्तं विज्जमाणेहि सहाणंतगुणब्भहियाजहण्णाणुभागसंजुत्तं वत्तव्वमिदि भणिदं होइ।

❀ पुरिसवेदस्स जहण्णाणुभागं संकामेंतो चदुण्हं कसायाणं णियमा अजहण्णमणंतगुणब्भहियं।

§ २०४. एत्थ चदुण्हं कसायाणमिदि वुत्ते संजलणचउक्कस्स गहणं कायव्वं, पुरिसवेदजहण्णाणुभागसंकमे णिरुद्धे सेसक०-णोकसायाणमसंभवादो। तेसिं पुण अजहण्णाणुभागमणंतगुणब्भहियं चेव संकामेदि, उवरि किट्टिपज्जाएण लद्धजहण्णभावाणमेत्थ तदविरोहादो।

❀ कोधादितिए उवरिल्लाणं संकामओ णियमा अजहण्णमणंतगुणब्भहियं।

§ २०५. कोधादितिगे संजलणसण्णिदे णिरुद्धे हेट्ठिल्लाणं णत्थि सण्णियासो, असंतकम्मिए तव्विरोहादो। उवरिल्लाणमत्थि, कोहसंजलणे णिरुद्धे माण-माया-लोह-

---

* इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागसंक्रमकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ पर जो सम्यक्त्व सत्कर्मवाले हैं उनके साथ यह सन्निकर्ष कहना चाहिए।

§ २०३. सम्यक्त्वकी मुख्यतासे जो सन्निकर्ष होता है उसमें सम्यग्मिथ्यात्वसे रहित जीवोंके मिथ्यात्व आदिके साथ यह सन्निकर्ष कहा है। किन्तु यहाँ पर सम्यक्त्वसत्कर्म सहित जीवोंके साथ अनन्तगुणे अधिक जघन्य अनुभागसंक्रम संयुक्त सन्निकर्ष कहना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** पुरुषवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव नियमसे चार कषायोंके अनन्तगुणे अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है।**

§ २०४. यहाँ पर 'चार कषायोंके' ऐसा कहने पर चार संज्वलनोंका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि पुरुषवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमके समय शेष कषायों और नोकषायोंका सद्भाव नहीं पाया जाता। मात्र तब चार संज्वलनोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका ही संक्रामक होता है, क्योंकि इनका कृष्टिरूपसे जघन्य अनुभागसंक्रम आगे पाया जाता है, इसलिए यहाँ पर उनके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागसंक्रमके होनेमें विरोध नहीं आता।

*** क्रोधादि तीन संज्वलनोंके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव उपरिम संज्वलनोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है।**

§ २०५. संज्वलन संज्ञावाले क्रोधादित्रिकके जघन्य अनुभागसंक्रमके समय पूर्ववर्ती सब प्रकृतियोंका सन्निकर्ष नहीं है, क्योंकि उनके सत्त्वसे रहित उक्त जीवके उनका सन्निकर्ष माननेमें विरोध आता है। हाँ उपरिम प्रकृतियोंका सन्निकर्ष है, क्योंकि क्रोधसंज्वलनके जघन्य अनुभाग-

संजलणाणं, माणसंजलणे णिरुद्धे माया-लोहसंजलणाणं, मायासंजलणे णिरुद्धे लोहसंजलणस्स संकमसंभवोवलंभादो। तत्थाजहण्णभावणियमो अणंतगुणब्भहियत्तं च सुगमं।

* लोहसंजलणे णिरुद्धे णत्थि सण्णियासो।

§ २०६. तत्थण्णेसिमसंभवादो। सेसकसाय-णोकसायाणं जहण्णसण्णियासो एदेणेव सुत्तेण देसामासयभावेण सूचिदो।

§ २०७. संपहि एदेण सूचिदत्थस्स फुडीकरणट्ठमुच्चारणाणुगममिह कस्सामो। तं जहा—जहण्णए पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० जह० अणुभागसंका० सम्म०-सम्मामि० सिया अत्थि, सिया णत्थि। जदि अत्थि, सिया संका०। जइ संका० णिय० अज० अणंतगुणब्भहियं। अट्ठकसा० जह० अजहण्णं वा, जहण्णादो अज० छट्ठाणपदिदा। अट्ठक०-णवणोक० णिय० अज० अणंतगुणब्भ०। एवमट्ठक०।

§ २०८. सम्म० जह० अणुभागसंका० बारसक०-णवणोक० णिय० अज० अणंतगुणब्भ०। सेसं णत्थि। सम्मामि० जह० अणुभा०संका० सम्म०-बारसक०-णवणोक० णियमा अज० अणंतगुणब्भ०। सेसा णत्थि। अणंताणुकोध० जह० अणु०संका० दंसणतिय-

संक्रमके समय मान, माया और लोभसंज्वलनोंके, मानसंज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमके समय माया और लोभ संज्वलनोंके तथा मायासंज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमके समय लोभसंज्वलनके संक्रमका सद्भाव पाया जाता है। वहाँ पर विवक्षित प्रकृतिके जघन्य अनुभागसंक्रमके समय उक्त अन्य प्रकृतियोंके अजघन्य अनुभागके संक्रमका नियम है और वह अनन्तगुणा अधिक होता है ये दोनों बातें सुगम हैं।

* लोभसंज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमके समय अन्य प्रकृतियोंका सन्निकर्ष नहीं होता।

§ २०६. क्योंकि वहाँ पर अन्य प्रकृतियाँ नहीं पाई जातीं। यह सूत्र देशामर्षक है। शेष कषायों और नोकषायोंकी मुख्यतासे जघन्य सन्निकर्षका इसी सूत्रसे सूचन हो जाता है।

§ २०७. अब इससे सूचित हुए अर्थको प्रकट करनेके लिए यहाँ पर उच्चारणाका कथन करते हैं। यथा—जघन्य सन्निकर्षका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वसत्कर्म कदाचित् हैं और कदाचित् नहीं हैं। यदि हैं तो वह इनका कदाचित् संक्रामक होता है। यदि संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। वह मध्यकी आठ कषायोंके जघन्य अनुभागका भी संक्रामक होता है और अजघन्य अनुभागका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है तो जघन्यकी अपेक्षा छह स्थानपतित अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। शेष आठ कषाय और नौ नोकषायोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है। इसी प्रकार आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकको विवक्षित करके सन्निकर्ष कहना चाहिए।

§ २०८. सम्यक्त्वके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव बारह कषायों और नौ नोकषायोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। वह शेषका सत्कर्मवाला नहीं है। सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव सम्यक्त्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है। वह शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे

बारसक०—णवणोक० णियमा अज० अणंतगुणब्भ० । तिण्हं कसायाणं जह० अज० वा, जहण्णादो अज० छट्ठाणपदिदा । एवं तिण्हं कसायाणं ।

§ २०९. कोहसंज० जह० अणु०संका० तिण्हं संज० णिय० अज० अणंतगुणब्भ० । सेसं णत्थि । माणसंज० जह० अणु०संका० दोण्हं संज० णिय० अज० अणंतगुणब्भ० । सेसं णत्थि । मायासंज० जह० अणु०संका० लोभसंज० णियमा अज० अणंतगुणब्भ० । सेसं णत्थि । लोहसंज० जह० अणुभागसंका० सेसाणमकम्मंसिगो ।

§ २१० णवुंस०जह० अणुभा० संका० सत्तणोक०—चदुसंज० णिय० अज० अणंतगुण० । इत्थिवेद० णिय० जह० । सेसं णत्थि । इत्थिवे० जह० अणु० संका० सत्तणोक०—चदुसंज० णिय० अज० अणंतगुणब्भ० । णवुंस० सिया अत्थि । जदि अत्थि णिय० जहण्णं । सेसं णत्थि । हस्स०जह० अणु०संका० पंचणोक० णिय० जह० । पुरिसवेद-चदुसंज० णिय० अज० अणंतगुणब्भहियं । सेसं णत्थि । एवं पंचणोक० । पुरिसवे० जह० अणुभागसंका० चदुसंज० णिय० अज० अणंतगुणब्भ० ।

रहित है । अनन्तानुबन्धीक्रोधके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव तीन दर्शनमोहनीय, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है । अनन्तानुबन्धी मान आदि तीनके जघन्य अनुभागका भी संक्रामक होता है और अजघन्य अनुभागका भी संक्रामक होता है । यदि अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है तो जघन्यकी अपेक्षा छह स्थानपतित अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है । इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कषायोंके जघन्य अनुभागको मुख्य कर सन्निकर्ष कहना चाहिए ।

§ २०९. क्रोधसंज्वलनके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव शेष तीन संज्वलनोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है । वह शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित है । मानसंज्वलनके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव माया आदि दो संज्वलनोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है । वह शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित है । मायासंज्वलनके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव लोभसंज्वलनके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है । वह शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित है । लोभसंज्वलनके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित है ।

§ २१०. नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव सात नोकषायों और चार संज्वलनोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है । स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है। वह शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित है ।स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव सात नोकषायों और चार संज्वलनोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका निममसे संक्रामक होता है । नपुंसकवेद कदाचित् है । यदि है तो नियमसे उसके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है । वह शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित है । हास्य प्रकृतिके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव नियमसे पाँच नोकषायोंके जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है । पुरुषवेद और चार संज्वलनोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका नियमसे संक्रामक होता है । वह शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित है । इसी प्रकार शेष पाँच नोकषायोंके जघन्य अनुभागसंक्रमको मुख्य कर सन्निकर्ष कहना चाहिए । पुरुषवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव नियमसे चार संज्वलनोंके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है । वह शेष प्रकृतियोंके सत्कर्मसे रहित है । इसी

सेसं णत्थि। एवं मणुस०३। णवरि मणुसिणी० णवुंस० जह० अणुभागसंका० इत्थिवे० णिय० अज० अणंतगुणब्भ०। इत्थिवेद० जह० अणुभा०संका० णवुंस० णत्थि। पुरिसवेद० छण्णोकसायभंगो।

§ २११. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० जह० अणुभागसंका० विहत्तिभंगो। णवरि सम्म० सिया अत्थि। जदि अत्थि सिया संका०। जइ संका० णिय० अज० अणंतगुणब्भ०। एवं बारसक०-णवणोक०। सम्म०-अणंताणु०४ विहत्तिभंगो। एवं पढमाए तिरिक्ख०-पंचि०तिरिक्ख०२-देवगदिदेवा। एवं चेव जोणिणी-भवण०-वाणवेंतर०। णवरि सम्म० णत्थि।

§ २१२. विदियादि सत्तमा त्ति मिच्छ० जह० अणु०संका० अणंताणु०४ सिया अत्थि। जदि अत्थि सिया संका०। जइ संका० जह० अजहण्णं वा, जहण्णादो अजहण्णं छट्ठाणपदिदं। बारसक०-णवणोक० णिय० जह०। एवं बारसक०-णवणोक०। अणंताणु०४ विहत्तिभंगो। एवं जोदिसि०। पंचि०तिरिक्खअपज०-मणुसअपज० विहत्तिभंगो। सोहम्मादि जाव सव्वट्ठा त्ति विहत्तिभंगो। णवरि अपच्चक्खाणकोह० जह० अणु०संका०

प्रकार ओघ सन्निकर्षके समान मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव नियमसे स्त्रीवेदके अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। स्त्रीवेदके जघन्य अनुभागका संक्रामक जीव नपुंसकवेदके सत्कर्मसे रहित है। पुरुषवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है।

§ २११. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीवका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वप्रकृति कदाचित् है। यदि है तो उसका कदाचित् संक्रामक होता है। यदि संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तगुणे अधिक अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। इसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य अनुभागसंक्रमको मुख्य कर सन्निकर्ष जानना चाहिए। सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य अनुभागके संक्रामककी मुख्यतासे भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इसी प्रकार पहली पृथिवी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चद्विक और देवगतिमें सामान्य देवोंमें जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार योनिनीतिर्यञ्च, भवनवासी और व्यन्तरदेवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका भंग नहीं है।

§ २१२. दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीवके अनन्तानुबन्धीचतुष्क कदाचित् हैं। यदि हैं तो कदाचित् संक्रामक होता है। यदि संक्रामक होता है तो जघन्य अनुभागका भी संक्रामक होता है और अजघन्य अनुभागका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है तो जघन्यकी अपेक्षा छह स्थानपतित अजघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे जघन्य अनुभागका संक्रामक होता है। इसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य अनुभागसंक्रमको मुख्य कर सन्निकर्ष कहना चाहिए। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य अनुभागसंक्रमको मुख्यकर भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इसी प्रकार ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। सौधर्म कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता

§ २१९. सुगममेदमप्पणासुत्तं । एदेण सामण्णणिद्देसेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पि मिच्छत्तभंगाइप्पसंगे तत्थतणविसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं—

*** णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं संकामगा पुव्वं ति भाणिदव्वं ।**

§ २२०. तं जहा—सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागस्स सिया सव्वे जीवो संकामया १, सिया एदे च असंकामओ च २, सिया एदे च असंकामया च ३ । एवमणुक्कस्साणुभागसंकामयाणं पि विवज्जासेण तिण्हं भंगाणमालावो कायव्वो त्ति एस विसेसो सुत्तेणेदेण जाणाविदो ।

एवमोघेणुक्कस्सभंगविचओ समत्तो ।

§ २२१. आदेसेण सव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

*** जहण्णाणुभागसंकमभंगविचओ ।**

§ २२२. सुगमं ।

*** मिच्छत्त-अट्ठकसायाणं जहण्णाणुभागस्स संकामया च असंकामया च ।**

§ २१९. यह अर्पणासूत्र सुगम है । इस सामान्य निर्देशसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें भी मिथ्यात्वके भङ्गोंका अतिप्रसङ्ग प्राप्त होने पर उनमें विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामक जीव पहले कहने चाहिए ।**

§ २२०. यथा—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके कदाचित् सब जीव संक्रामक हैं १ । कदाचित् नाना जीव संक्रामक हैं और एक जीव असंक्रामक है २ । तथा कदाचित् नाना जीव संक्रामक हैं और नाना जीव असंक्रामक हैं ३ । इसी प्रकार अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंके भी विपर्यय क्रमसे तीन भङ्गोंका आलाप करना चाहिए । इस प्रकार यह विशेष इस सूत्रके द्वारा जतलाया गया है ।

इस प्रकार ओघसे उत्कृष्ट भङ्गविचय समाप्त हुआ ।

§ २२१. आदेशसे सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—आशय यह है कि जिस प्रकार अनुभागसत्कर्मकी अपेक्षा अनुभागविभक्तिके आश्रयसे मार्गणाओंमें भङ्गविचयका विचार कर आये हैं उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिए । उससे यहाँ अन्य कोई विशेषता नहीं है ।

*** अब जघन्य अनुभागसंक्रमभङ्गविचयका कथन करते हैं ।**

§ २२२. यह सूत्र सुगम है ।

*** मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके नाना जीव संक्रामक होते हैं और नाना जीव असंक्रामक होते हैं ।**

§ २२३. एदेसिं कम्माणं जहण्णाणुभागस्स संकामया असंकामया च णियमा अत्थि त्ति वुत्तं होइ। कुदो एवं? सुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियकम्मेण लद्धजहण्णभावाणमेदेसिं तदविरोहादो।

❀ सेसाणं कम्माणं जहण्णाणुभागस्स सव्वे जीवा सिया असंकामया।

§ २२४. कुदो? दंसण-चरित्तमोहक्खवयाणमणंताणुबंधिसंजोजयाणं च सव्वद्ध-मणुवलंभादो।

❀ सिया असंकामया च संकामओ च।

§ २२५. कुदो? असंकामयाणं धुवभावेण कदाइमेयजीवस्स जहण्णभावपरिणदस्स परिप्फुडमुवलंभादो?

❀ सिया असंकामया च संकामया च।

§ २२६. कुदो? असंकामयाणं धुवभावेण केत्तियाणं पि जीवाणं जहण्णाणुभाग-संकामयभावपरिणदाणमुवलंभादो। एवमोघो समत्तो। आदेसेण सव्वं विहत्तिभंगो।

एवं भंगविचओ समत्तो।

§ २२७. एत्थेदेण सूचिदभागाभाग-परिमाण-खेत्त-फोसणाणं पि विहत्तिभंगो।

---

§ २२३. इन कर्मोंके जघन्य अनुभागके संक्रामक और असंक्रामक नाना जीव नियमसे हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—ऐसा क्यों है?

समाधान—क्योंकि एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक कर्मके साथ जघन्यपनेको प्राप्त हुए इन जीवोंमें जघन्य अनुभागके संक्रामक और असंक्रामक नाना जीवोंके सद्भाव माननेमें कोई विरोध नहीं आता।

*** शेष कर्मोंके जघन्य अनुभागके कदाचित् सब जीव असंक्रामक होते हैं।**

§ २२४. क्योंकि दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले और अनन्तानु-बन्धीकी विसंयोजना करनेवाले जीव सर्वदा नहीं पाये जाते।

*** कदाचित् नाना जीव असंक्रामक होते हैं और एक जीव संक्रामक होता है।**

§ २२५. क्योंकि जघन्य अनुभागके असंक्रामक ये नाना जीव ध्रुवरूपसे और कदाचित् जघन्य अनुभागके संक्रामकरूपसे परिणत हुआ एक जीव स्पष्टरूपसे पाया जाता है।

*** कदाचित् नाना जीव असंक्रामक होते हैं और नाना जीव संक्रामक होते हैं।**

§ २२६. क्योंकि जघन्य अनुभागके असंक्रामक ये नाना जीव ध्रुवरूपसे और जघन्य अनुभागके संक्रामकभावसे परिणत हुए कितने ही जीव पाये जाते हैं। इस प्रकार ओघ कथन समाप्त हुआ। आदेशकी अपेक्षा सब कथन अनुभागविभक्तिके समान है।

इस प्रकार भङ्गविचय समाप्त हुआ।

§ २२७. यहाँ पर इस पूर्वोक्त कथनके द्वारा सूचित हुए भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शनको अनुभागविभक्तिके समान जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ पर भागाभाग आदि चार प्ररूपणाओंको अनुभागविभक्तिके समान जानने की सूचना की है, अतः यहाँ पर क्रमसे उनका विचार करते हैं। यथा—भागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। उसका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीव सब जीवोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं तथा अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीव सब जीवोंके अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीव सब जीवोंके असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं तथा अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। यह ओघ प्ररूपणा है। आदेशसे इसी विधिको ध्यानमें रखकर घटित कर लेना चाहिए। जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीव सब जीवोंके असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। शेष प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीव सब जीवोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं तथा अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीव सब जीवोंके अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। यह ओघप्ररूपणा है। इसी प्रकार विचारकर आदेशसे जान लेना चाहिए।

परिमाण दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीव असंख्यात हैं तथा अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीव अनन्त हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीव असंख्यात हैं तथा अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीव संख्यात हैं। यह ओघप्ररूपणा है। इसी प्रकार आदेशसे विचारकर जान लेना चाहिए। जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और मध्यकी आठ कषायोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीव अनन्त हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीव संख्यात हैं तथा अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीव असंख्यात हैं। अनन्तानुबन्धी-चतुष्कके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीव असंख्यात हैं तथा अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीव अनन्त हैं। चार संज्वलन और नौ नोकषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीव संख्यात हैं तथा अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीव अनन्त हैं। यह ओघप्ररूपणा है। इसी प्रकार आदेशसे विचार कर जान लेना चाहिए।

क्षेत्र दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र सर्वलोक है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण है यह ओघप्ररूपणा है इसी प्रकार विचार कर आदेशसे जान लेना चाहिए। जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-के जघन्य और अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भाग है। शेष प्रकृतियोंके अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र सब लोक है। यह ओघप्ररूपणा है। इसी प्रकार विचार कर आदेशसे जान लेना चाहिए।

स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे छब्बीस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंने लोकके

❀ णाणाजीवेहि कालो ।

§ २२८. सुगमं ।

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति ?

§ २२९. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ २३०. तं कथं ? सत्तट्ठ जणा बहुगा वा बद्धुक्कस्साणुभागा सव्वजहण्णमंतोमुहुत्तमेत्त-कालं संकामया होदूण पुणो कंडयघादवसेणाणुक्कस्सभावमुवगया, लद्धो सुत्तुद्दिट्ठजहण्णकालो ।

❀ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

असंख्यातवें भाग, त्रस नालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंने सब लोकका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोकका स्पर्शन किया है तथा अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है। यह ओघप्ररूपणा है। इसी प्रकार विचार कर आदेशसे जान लेना चाहिए। जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और मध्यकी आठ कषायोंके जघन्य और अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंने सब लोकका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग क्षेत्रका स्पर्शन किया है तथा अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग, त्रसनालीके चौदह भागोंमेंसे कुछ कम आठ भाग और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग तथा अजघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंने सब लोकका स्पर्शन किया है। यह ओघप्ररूपणा है। इसी प्रकार विचार कर आदेशसे जान लेना चाहिए।

* अब नाना जीवोंकी अपेक्षा कालका कथन करते हैं।

§ २२८. यह सूत्र सुगम है।

* मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंका कितना काल है ?

§ २२९. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ २३० शंका—वह कैसे ?

समाधान—सात आठ या बहुत जीव उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करनेके बाद सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक उसके संक्रामक हुए। बादमें काण्डकघातवश अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक हो गये। इस प्रकार सूत्रमें निर्दिष्ट जघन्य काल प्राप्त होता है।

* उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यावें भागप्रमाण है।

§ २३१. तं जहा—एयजीवस्सुक्कस्साणुभागसंकमकालमंतोमुहुत्तपमाणं ठविय तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तदणुसंधाणवारसलागाहि गुणेयव्वं । तदो पयदुक्कस्सकालपमाणमुप्पज्जदि ।

❀ अणुक्कस्साणुभागसंकामया सव्वद्धा ।

§ २३२. कुदो ? सव्वकालमविच्छिण्णपवाहसरूवेणेदेसिमवट्ठाणदंसणादो ।

❀ एवं सेसाणं कम्माणं ।

§ २३३. जहा मिच्छत्तस्स पयदकालणिद्देसो कदो तहा सेसकम्माणं पि कायव्वो; विसेसाभावादो । सामण्णणिद्देसेणेदेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं पि पयदकालणिद्देसाइप्पसंगे तत्थ विसेससंभवपदुप्पायणट्ठमिदमाह—

❀ णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामया सव्वद्धा ।

§ २३४. कुदो ? सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामयवेदगसम्माइट्ठीणमुव्वेल्लमाणमिच्छाइट्ठीणं च पवाहवोच्छेदाणुवलंभादो ।

❀ अणुक्कस्साणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति ?

§ २३५. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

---

§ २३१. यथा—एक जीवके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकसम्बन्धी अन्तर्मुहूर्त कालको स्थापित कर उसे नाना जीवोंसम्बन्धी उत्कृष्ट कालको प्राप्त करनेके लिए पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण शलाकाओंसे गुणित करना चाहिए। इस प्रकार करनेसे प्रकृत उत्कृष्ट काल उत्पन्न होता है।

* उसके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है।

§ २३२ क्योंकि सर्वदा अविच्छिन्न प्रवाहरूपसे मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंका अवस्थान देखा जाता है।

* इसी प्रकार शेष कर्मोंका काल जानना चाहिए।

§ २३३. जिस प्रकार मिथ्यात्वके प्रकृत कालका निर्देश किया है उसी प्रकार शेष कर्मोंका भी करना चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है। यह सामान्य निर्देश है। इससे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके प्रकृत कालके निर्देशमें अतिप्रसङ्ग प्राप्त होने पर यहाँ कालकी विशेषताका कथन करनेके लिए यह सूत्र कहते हैं—

इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है।

§ २३४. क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागका संक्रमण करनेवाले वेदकसम्यग्दृष्टियोंके और उद्वलना करनेवाले मिथ्यादृष्टियोंके प्रवाहकी व्युच्छित्ति नहीं पाई जाती।

* उनके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक जीवोंका कितना काल है ?

§ २३५. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ २३६. दंसणमोहक्खवणादो अण्णत्थ तदणुवलंभादो। एवमोघो समत्तो। आदेसेण सव्वत्थ विहत्तिभंगो।

❀ एत्तो जहण्णकालो।

§ २३७. सुगमं।

❀ मिच्छत्त-अट्ठकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति?

§ २३८. सुगमं।

❀ सव्वद्धा।

§ २३९. कुदो? सुहुमेइंदियजीवाणं हदसमुप्पत्तियजहण्णसंतकम्मपरिणदाणं तिसु वि कालेसु वोच्छेदाणुवलंभादो।

❀ सम्मत्त-चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति?

§ २४०. सुगमं।

❀ जहण्णेणेयसमओ।

§ २४१. कुदो? सम्मत्तस्स समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीयम्मि खोभ-

---

§ २३६. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके सिवा अन्यत्र यह काल नहीं पाया जाता। इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई। आदेशसे सर्वत्र अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

* अब जघन्य कालको कहते हैं।

§ २३७. यह सूत्र सुगम है।

* मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंका कितना काल है?

§ २३८. यह सूत्र सुगम है।

* सब काल है।

§ २३९. क्योंकि हतसमुत्पत्तिकरूप जघन्य सत्कर्मसे परिणत हुए सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीवोंका तीनों ही कालोंमें विच्छेद नहीं पाया जाता।

* सम्यक्त्व, चार संज्वलन और पुरुषवेदके जघन्य अनुभागके संक्रामक जीवोंका कितना काल है?

§ २४०. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

§ २४१. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि काल रहने पर एक समयके लिए सम्यक्त्वका, सकषाय अवस्थामें एक समय अधिक एक आवलिकाल शेष रहने पर

संजलणस्स समयाहियावलियसकसायम्मि सेसाणं अप्पप्पणो णवकबंधचरिमफालिसंकमणावत्थाए लद्धजहण्णभावाणमेयसमयोवलद्धीए बाहाणुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण संखेज्जा समया ।

§ २४२. कुदो ? संखेज्जवारमणुसंधाणवसेण तदुवलंभादो ।

❀ सम्मामिच्छत्त-अट्ठणोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति ?

§ २४३. सुगमं एदं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ २४४. जहण्णेण ताव तेसिमप्पप्पणो चरिमाणुभागखंडयकालो घेत्तव्वो । उक्कस्सेण सो चेव छायादिट्ठंतेण लद्धाणुसंधाणो घेत्तव्वो ।

❀ अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति ?

§ २४५. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ २४६. कुदो ? विसंजोयणापुव्वसंजोगपढमसमए जहण्णपरिणामेण बद्धजहण्णाणुभागमावलियादीदमेयसमयं संकामिय विदियसमए अजहण्णभावपरिणदणाणाजीवेसु तदुवलंभादो ।

एक समयके लिए संज्वलनलोभका तथा अपने-अपने नवकबन्धकी अन्तिम फालिकी संक्रमण अवस्थामें शेष प्रकृतियोंका जघन्य अनुभागसंक्रम पाया जाता है, इसलिए जघन्य काल एक समय प्राप्त होनेमें बाधा नहीं आती।

* उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।

§ २४२. क्योंकि संख्यातबार किये गये अनुसन्धानवश उक्त काल प्राप्त हो जाता है।

* सम्यग्मिथ्यात्व और आठ नोकषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका कितना काल है ?

§ २४३. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ २४४. जघन्यसे तो उनका अपने अपने अन्तिम अनुभागकाण्डकका काल लेना चाहिए। तथा उत्कृष्टसे वही काल छायाके दृष्टान्त द्वारा अनुसन्धान करते हुए ग्रहण करना चाहिए।

* अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका कितना काल है ?

§ २४५. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

§ २४६. क्योंकि विसंयोजनापूर्वक संयोजना होनेके प्रथम समयमें जघन्य परिणामसे बन्धको प्राप्त हुए जघन्य अनुभागको एक आवलिके बाद एक समय तक संक्रमा कर दूसरे समयमें जो जीव अजघन्य अनुभागके संक्रमरूपसे परिणत हो जाते हैं उनके जघन्य काल एक समय उपलब्ध होता है।

*** उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो।**

§ २४७. कुदो ? आवलि० असंखे०भागमेत्ताणं चेव णिरंतरोवक्कमणवाराणमेत्थ संभवदंसणादो।

*** एदेसिं कम्माणमजहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति ?**

§ २४८. सुगमं।

*** सव्वद्धा।**

§ २४९. एदं पि सुगमं। एवमोघो समत्तो। आदेसेण सव्वणेरइय०-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवा जाव णवगेवज्जा त्ति विहत्तिभंगो। मणुसेसु विहत्तिभंगो। णवरि इत्थि०-णवुंस० जह० जहण्णु० अंतोमु०। अज० सव्वद्धा। मणुसपज्ज०-मणुसिणी० मिच्छ०-अट्ठक० जह० जह० एयस०, उक्क० अंतोमुहुत्तं। अज० सव्वद्धा। सेसं मणुसभंगो। णवरि मणुसिणी० पुरिस० छण्णोक०भंगो। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति विहत्तिभंगो। एवं जाव०।

---

* उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ २४७. क्योंकि आवलिके असंख्यातवे भागप्रमाण ही निरन्तर उपक्रमणवार यहाँ पर सम्भव देखे जाते हैं।

* इन कर्मोंके अजघन्य अनुभागके संक्रामकोंका कितना काल है ?

§ २४८. यह सूत्र सुगम है।

* सर्वदा है।

§ २४९. यह सूत्र भी सुगम है। इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई। आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और नौग्रैवेयक तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। मनुष्योंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य अनुभागके संक्रामकोंका काल सर्वदा है। मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अजघन्य अनुभागके संक्रामकोंका काल सर्वदा है। शेष भङ्ग मनुष्योंके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मनुष्योंमें जिसप्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागसत्कर्मका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय बन जाता है उस प्रकार यह काल यहां नहीं बनता, क्योंकि यहाँ पर अन्तिम अनुभागकाण्डकके पतनका काल विवक्षित है, इसलिए वह जघन्य भी अन्तर्मुहूर्त कहा है और उत्कृष्ट भी अन्तर्मुहूर्त कहा है। यहां इतना और विशेष जानना चाहिए कि मनुष्यिनियोंमें नपुंसकवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम नहीं होता, इसलिए 'मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है' ऐसा कहते समय पुरुषवेदके साथ नपुंसकवेदका उल्लेख नहीं किया है। शेष कथन सुगम है।

※ णाणाजीवेहि अंतरं ।

§ २५०. सुगममेदमहियारपरामरससुत्तं ।

※ मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ २५१. पुच्छासुत्तमेदं सुगमं ।

※ जहण्णेणेयसमओ ।

§ २५२. तं जहा—मिच्छत्तुकस्साणुभागसंकामयणाणाजीवाणं पवाहविच्छेदवसेणेय-समयमंतरिदाणं विदियसमए पुणरुब्भवो दिट्ठो, लद्धमंतरं जहण्णेणेयसमयमेत्तं ।

※ उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ।

§ २५३. कुदो ? उक्कस्साणुभागबंधेण विणा सव्वजीवाणमेत्तियमेत्तकालमवट्ठाण-संभवादो ।

※ अणुक्कस्साणुभागसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ २५४. सुगमं ।

※ णत्थि अंतरं ।

§ २५५. कुदो ? णाणाजीवविवक्खाए अणुक्कस्साणुभागसंकमस्स विच्छे-दाणुवलद्धीदो ।

※ एवं सेसाणं कम्माणं ।

※ अब नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका कथन करते हैं ।

§ २५०. अधिकारका परामर्श करनेवाला यह सूत्र सुगम है ।

※ मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ २५१. यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

※ जघन्य अन्तर एक समय है

§ २५२. यथा—मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामक नाना जीवोंका प्रवाहके विच्छेदवश एक समयके लिए अन्तर हो कर दूसरे समयमें उनकी पुनः उत्पत्ति देखी जाती है । इस प्रकार जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त होता है ।

※उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है ।

§ २५३. क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध हुए बिना सब जीवोंका इतने काल तक अवस्थान देखा जाता है

※ उसके अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ २५४. यह सूत्र सुगम है ।

※ अन्तरकाल नहीं है ।

§ २५५. क्योंकि नाना जीवोंकी मुख्यतासे अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रमका कभी भी विच्छेद नहीं उपलब्ध होता ।

※ इसी प्रकार शेष कर्मोंका अन्तरकाल जानना चाहिए ।

§ २५६. सुगममेदमप्पणासुत्तं। संपहि एत्थतणविसेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं।

❀ णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ २५७. सुगमं।

❀ णत्थि अंतरं।

§ २५८. एदं पि सुगमं।

❀ अणुक्कस्साणुभागसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ २५९. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ २६०. दंसणमोहक्खवयाणं जहण्णंतरस्स तप्पमाणत्तोवलंभादो।

❀ उक्कस्सेण छम्मासा।

§ २६१. तदुक्कस्सविरहकालस्स णाणाजीवविसयस्स तप्पमाणत्तादो। एवमोघो समत्तो।

§ २६२. आदेसेण सव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो।

❀ एत्तो जहण्णयंतरं।

---

§ २५६. यह अर्पणासूत्र सुगम है। अब यहाँ सम्बन्धी विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?**

§ २५७. यह सूत्र सुगम है।

*** अन्तरकाल नहीं है।**

§ २५८. यह सूत्र भी सुगम है।

*** अनुत्कृष्ट अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?**

§ २५९. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य अन्तरकाल एक समय है।**

§ २६०. क्योंकि दर्शनमोहनीयके क्षपकोंका जघन्य अन्तर तत्प्रमाण उपलब्ध होता है।

*** उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है।**

§ २६१. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका नाना जीवविषयक उत्कृष्ट विरहकाल तत्प्रमाण है। इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई।

§ २६२. आदेशसे सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

*** आगे जघन्य अन्तरका कथन करते हैं।**

§ २६३. सुगमं ।

❀ मिच्छत्तस्स अट्ठकसायस्स जहण्णाणुभागसंकामयाणं केवचिरं अंतरं ?

§ २६४. सुगमं ।

❀ णत्थि अंतरं ।

§ २६५. कुदो ? पयद्‌जहण्णाणुभागसंकामयाणं सुहुमाणं णिरंतरसरूवेण सव्व-कालमवट्ठिदत्तादो ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-चदुसंजलण-णवणोकसायाणं जहण्णाणु-भागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ २६६. सुगमं ।

❀ जहण्णेणेयसमओ ।

❀ उक्कस्सेण छम्मासा ।

§ २६७. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि । संपहि एत्थतणविसेसपदुप्पायणट्ठमुत्तर-सुत्तमाह—

*** णवरि तिण्णिसंजलण-पुरिसवेदाणमुक्कस्सेण वासं सादिरेयं ।**

§ २६८. तं जहा—कोहसंजलणस्स उक्कस्संतरे विवक्खिए सोदएणादिं कादूण

---

§ २६३. यह सूत्र सुगम है ।

* मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ २६४. यह सूत्र सुगम है ।

* अन्तरकाल नहीं है ।

§ २६५. क्योंकि प्रकृत जघन्य अनुभागके संक्रामक सूक्ष्म जीव अन्तरके बिना सदा काल अवस्थित रहते हैं ।

* सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, चार संज्वलन और नौ नोकषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ २६६. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है ।

§ २६७. ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं । अब यहां सम्बन्धी विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इतनी विशेषता है कि तीन संज्वलन और पुरुषवेदका उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक वर्ष है ।

§ २६८. यथा—क्रोधसंजलनका उत्कृष्ट अन्तर विवक्षित होने पर स्वोदयसे अन्तरका प्रारम्भ

छम्मासमंतराविय पुणो माण-माया-लोभोदएहिं चढाविय पच्छा सोदयपडिलंभेण सादिरेय-वासमेत्तमंतरमुप्पाएयव्वं । एवं माण-मायासंजलणाणं पि पयदुक्कस्संतरं वत्तव्वं । णवरि माणसंजलणस्स माया-लोभोदएहि मायासंजलणस्स च लोभोदएण चढाविय अंतरावेयव्वं । कोहसंजलणस्स संपुण्णदोवासमेत्तमंतरं किण्ण जायदे ? ण, सव्वत्थ छम्मासाणं पडिवुण्णा-णमुसंधाणसरूवेणासंभवादो । एवं चेव पुरिसवेदस्स वि सोदएणादिं कादूण परोदएणंतरिदस्स सादिरेयवासमेत्तुक्कस्संतरसंभवो दट्ठव्वो ।

❀ णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकामयंतरमुक्कस्सेण संखेज्जाणि वासाणि ।

§ २६९. णवुंसयवेदोदएणादिं कादूण अणप्पिदवेदोदएण वासपुधत्तमेत्तमंतरिदस्स तदुवलंभादो ।

❀ अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ २७०. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ २७१. पयदजहण्णाणुभागसंकामयाणमेयसमयमंतरिदाणं पुणो वि तदणंतरसमए पादुब्भावविरोहाभावादो ।

❀ उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ।

करके तथा छह माहका अन्तर करा कर पुनः मान, माया और लोभके उदयसे चढ़ा कर पश्चात् स्वोदयका आश्रय करनेसे साधिक एक वर्षप्रमाण अन्तर उत्पन्न करना चाहिए। इसी प्रकार मान और मायासंज्वलनोंका भी प्रकृत उत्कृष्ट अन्तर कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मान-संज्वलनका माया और लोभके उदयसे तथा मायासंज्वलनका लोभके उदयसे चढ़ा कर अन्तर ले आना चाहिए।

शंका—क्रोधसंज्वलनका पूरा दो वर्षप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर क्यों नहीं उत्पन्न होता ?

समाधान—नहीं क्योंकि सर्वत्र अनुसन्धानरूपसे पूरे छह माह असम्भव हैं।

इसी प्रकार स्वोदयसे अन्तरका प्रारम्भ करके परोदयसे अन्तरको प्राप्त हुए पुरुषवेदका भी साधिक एक वर्षप्रमाण उत्कृष्ट अन्तर सम्भव जानना चाहिए।

*** नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका उत्कृष्ट अन्तर संख्यात वर्षप्रमाण है।**

§ २६९. क्योंकि नपुंसकवेदके उदयसे अन्तरका प्रारम्भ करके अविवक्षित वेदके उदयसे वर्षपृथक्त्वप्रमाण अन्तरको प्राप्त हुए उसका उक्त प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर उपलब्ध होता है।

*** अनन्तानुबन्धियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?**

§ २७०. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य अन्तर एक समय है।**

§ २७१. एक समयके लिए अन्तरको प्राप्त हुए प्रकृत जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका फिर भी उसके अनन्तर समयमें प्रादुर्भाव होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

*** उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है।**

§ २७२. जहण्णपरिणामेणादिं कादूणासंखेज्जलोगमेत्तेहिं अजहण्णपाओग्गपरिणामेहिं चेव संजोजयंताणं णाणाजीवाणमेदमुक्कस्संतरं लब्भदि त्ति वुत्तं होइ। संपहि सव्वेसि-मजहण्णाणुभागसंकामयाणमंतरविहाणट्ठमुत्तरसुत्तारंभो—

® एदेसिं सव्वेसिमजहण्णाणुभागस्स केवचिरमंतरं ?

§ २७३. सुगमं।

® णत्थि अंतरं।

§ २७४. सव्वेसिमजहण्णाणुभागसंकामयाणमंतरेण विणा सव्वद्धमवट्ठाणदंसणादो।

एवमोघो समत्तो।

§ २७५. आदेसेण सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-सव्वदेवा त्ति विहत्तिभंगो। मणुसतिए ओघं। णवरि मिच्छ०-अट्ठक० जह० जह० एयसमओ, उक्क० असंखेज्जा लोगा। मणुसिणीसु खवगपयडीणं वासपुधत्तं। एवं जाव०।

---

§ २७२. जघन्य परिणामसे प्रारम्भ करके असंख्यात लोकमात्र अजघन्य अनुभागसंक्रमके योग्य परिणामोंसे ही संयोजना करनेवाले नाना जीवोंके यह उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब उक्त सब प्रकृतियोंके अजघन्य अनुभागके संक्रामकोंके अन्तरका विधान करनेके लिए आगेके सूत्रका आरम्भ करते हैं—

*** इन सब प्रकृतियोंके अजघन्य अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?**

§ २७३. यह सूत्र सुगम है।

*** अन्तरकाल नहीं है।**

§ २७४. क्योंकि उक्त सब प्रकृतियोंके अजघन्य अनुभागके संक्रामकोंका अन्तर कालके बिना सदाकाल अवस्थान देखा जाता है।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई।

§ २७५. आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें अनुभाग-विभक्तिके समान भङ्ग है। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है। मनुष्यिनियोंमें क्षपक प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें अन्य सब अन्तरकाल ओघके समान बन जाता है। मात्र मिथ्यात्व और आठ कषायोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंके अन्तरकालमें कुछ विशेषता है। बात यह है कि ओघसे इन प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका अन्तरकाल नहीं प्राप्त होता, क्योंकि सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें इन प्रकृतियोंका जघन्य अनुभागसंक्रम करनेवाले जीव सर्वदा बने रहते हैं। परन्तु मनुष्यत्रिककी स्थिति नारकी आदिके समान है, इसलिए इस विशेषताका निर्देश करनेके लिए यहाँ पर उसका अलगसे उल्लेख किया है। तथा मनुष्यिनी अधिकसे अधिक वर्षपृथक्त्वप्रमाण काल तक क्षपकश्रेणि पर आरोहण न करें यह सम्भव है, इसलिए इनमें क्षपक प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागके संक्रामकोंका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ २७६. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

❀ अप्पाबहुअं ।

§ २७७. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं । तं च दुविहमप्पाबहुअं जहण्णुक्कस्साणुभागसंकमविसयभेदेण । तत्थुक्कस्साणुभागसंकमप्पाबहुअमुक्कस्साणुभागविहत्तिभंगादो ण भिज्जदि त्ति तेण तदप्पणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ जहा उक्कस्साणुभागविहत्ती तहा उक्कस्साणुभागसंकमो ।

§ २७८. जहा उक्कस्साणुभागविहत्ती अप्पाबहुअविसिट्ठा परूविदा तहा उक्कस्साणुभागसंकमो वि परूवेयव्वो, विसेसाभावादो त्ति भणिदं होदि ।

❀ एत्तो जहण्णयं ।

§ २७९. एत्तो उक्कस्साणुभागसंकमप्पाबहुअविहासणादो उवरि जहण्णयमप्पाबहुअं वत्तइस्सामो त्ति पइज्जावक्कमेदं । तस्स दुविहो णिद्देसो ओघादेसभेएण । तत्थोघणिद्देसो ताव कीरदे । तं जहा—

❀ सव्वत्थोवो लोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो ।

§ २८०. कुदो ? सुहुमकिट्टिसरूवत्तादो ।

❀ मायासंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

---

§ २७६. भाव सर्वत्र औदयिक भाव है ।

* अब अल्पबहुत्वको कहते हैं ।

§ २७७. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है । जघन्य और उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमरूप विषयके भेदसे वह अल्पबहुत्व दो प्रकारका है । उसमें उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमविषयक अल्पबहुत्व उत्कृष्ट अनुभागविभक्तिविषयक अल्पबहुत्वसे भिन्न प्रकारका नहीं है, इसलिए उसके साथ इसकी मुख्यता करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

* जिस प्रकार उत्कृष्ट अनुभागविभक्तिविषयक अल्पबहुत्व है उसी प्रकार उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमविषयक अल्पबहुत्व जानना चाहिए ।

§ २७८. जिस प्रकार अल्पबहुत्वविशिष्ट उत्कृष्ट अनुभागविभक्तिका कथन किया है उसी प्रकार उत्कृष्ट अनुभागसंक्रम अल्पबहुत्वका भी कथन करना चाहिए, क्योंकि दोनोंमें कोई अलग अलग विशेषता नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* आगे जघन्य अल्पबहुत्वको कहते हैं ।

§ २७९. 'एत्तो' अर्थात् उत्कृष्ट अनुभागसंक्रमविषयक अल्पबहुत्वका व्याख्यान करनेके बाद जघन्य अल्पबहुत्वको बतलाते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है । उसका निर्देश दो प्रकारका है— ओघ और आदेश । उनमेंसे सर्वप्रथम ओघका निर्देश करते हैं—

* लोभसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम सबसे स्तोक है ।

§ २८०. क्योंकि वह सूक्ष्म कृष्टिरूप है ।

* उससे मायासंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ २८१. कुदो ? बादरकिट्टिसरूवेण पुव्वमेवाणियट्टिपरिणामेहि लद्धजहण्णभावत्तादो।

❀ माणसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ २८२. कुदो ? जहण्णसामित्तविसयीकयमायासंजलणचरिमणवकबंधादो जहाकम-मणंतगुणसरूवेणावट्ठिदमायातदिय-विदिय-पढमसंगहकिट्टीहिंतो वि माणसंजलणणवकबंधसरूव-स्सेदस्साणंतगुणत्तदंसणादो ।

❀ कोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ २८३. कुदो ? पुव्विल्लसामित्तविसयादो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोयरिय कोहवेदयचरिम-समयणवकबंधचरिमसमयसंकामयम्मि जहण्णभावमुवगयत्तादो ।

❀ सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

२८४. कुदो ? किट्टिसरूवकोहसंजलणजहण्णाणुभागसंकमादो फद्दयगयसम्मत्त-जहण्णाणुभागसंकमस्साणंतगुणब्भहियत्ते विसंवादाणुवलंभादो ।

❀ पुरिसवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ २८५. किं कारणं ? सम्मत्तस्स अणुसमयोवट्टणकालादो पुरिसवेदणवकबंधाणु-समयोवट्टणाकालस्स थोवत्तदंसणादो ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ २८१. क्योंकि बादर कृष्टिरूप होनेसे इसने पहले ही अनिवृत्तिरूप परिणामोंके द्वारा जघन्य-पना प्राप्त कर लिया है।

* उससे मानसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २८२. क्योंकि जघन्य स्वामित्वको विषय करनेवाले मायासंज्वलन सम्बन्धी अन्तिम नवकबन्धसे तथा यथाक्रम अनन्तगुणरूपसे स्थित हुई मायाकी तीसरी, दूसरी और पहिली संग्रह-कृष्टियोंसे भी मानसंज्वलनके नवकबन्धरूप यह जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा देखा जाता है।

* उससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २८३. क्योंकि मानसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम जहाँ प्राप्त होता है उस स्थानसे पीछे अन्तर्मुहूर्त जा कर क्रोधवेदकके अन्तिम समयमें हुए नवकबन्धका अन्तिम समयमें संक्रमण करनेवाले जीवके क्रोधसंज्वलनके अनुभागसंक्रमका जघन्यपना प्राप्त होता है।

* उससे सम्यक्त्वका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २८४. क्योंकि कृष्टिरूप क्रोधसंज्वलनके जघन्य अनुभागसंक्रमसे स्पर्धकरूप सम्यक्त्वका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा अधिक होता है इसमें कोई विसंवाद नहीं उपलब्ध होता।

* उससे पुरुषवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २८५. क्योंकि सम्यक्त्वके प्रतिसमय होनेवाले अपवर्तनासम्बन्धी कालसे पुरुषवेदके नवकबन्धका प्रतिसमय होनेवाला अपवर्तनासम्बन्धी काल स्तोक देखा जाता है।

* उससे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २८६. कुदो ? देसघादिएयट्ठाणियसरूवादो पुरिसवेदादो सव्वघादिविट्ठाणियसरूवस्सेदस्स तहाभावसिद्धीए णाइयत्तादो ।

❀ अणंताणुबंधिमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ २८७. किं कारणं ? सम्मामिच्छत्ताणुभागविण्णासो मिच्छत्तजहण्णफद्दयादो अणंतगुणहीणो होऊण लद्धावट्ठाणो पुणो दंसणमोहक्खवणाए संखेज्जसहस्समेत्ताणुभागखंडयघादसमुवलद्धजहण्णभावो एसो पुण णवकबंधसरूवो वि सम्मामिच्छत्तेण समाणपारंभो होदूण पुणो मिच्छत्तजहण्णफद्दयप्पहुडि उवरि वि अणंतफद्दएसु लद्धविण्णासो अपत्तघादो च तदो अणंतगुणत्तमेदस्स सिद्धं ।

❀ कोधस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

§ २८८. कुदो ? पयडिविसेसादो । केत्तियमेत्तेण ? तप्पाओग्गाणंतफद्दयमेत्तेण ।

❀ मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

§ २८९. केत्तियमेत्तेण ? अणंतफद्दयमेत्तेण । कुदो ? साभावियादो ।

❀ लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

§ २९०. एत्थ वि विसेसपमाणमणंतरणिद्दिट्ठमेव

❀ हस्सस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

---

§ २८६. क्योंकि देशघाति एक स्थानिकरूप पुरुषवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमसे सर्वघाति द्विस्थानिकरूप इसका अनन्तगुणत्व न्यायप्राप्त है ।

*** उससे अनन्तानुबन्धी मानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।**

§ २८७. क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वका अनुभागविन्यास मिथ्यात्वके जघन्य स्पर्धकसे अनन्तगुणा हीन होकर अवस्थित है तथा दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें संख्यात हजारप्रमाण अनुभागकाण्डकोंके घातसे जघन्यपनेको प्राप्त हुआ है । परन्तु अनन्तानुबन्धी मानका जघन्य अनुभागविन्यास यद्यपि नवकबन्धरूप है और जहाँसे सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभागका प्रारम्भ होता है वहींसे इसका प्रारम्भ हुआ है तो भी मिथ्यात्वके जघन्य स्पर्धकसे लेकर उसके ऊपर भी अनन्त स्पर्धकों तक यह पाया जाता है तथा इसका घात भी नहीं हुआ है, इसलिए यह अनन्तगुणा है यह सिद्ध होता है ।

*** उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।**

§ २८८. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है । कितना अधिक है ? तत्प्रायोग्य अनन्त स्पर्धकप्रमाण अधिक है ।

*** उससे अनन्तानुबन्धी मायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।**

§ २८९. कितना अधिक है ? अनन्त स्पर्धकमात्र अधिक है, क्योंकि ऐसा स्वभाव है ।

*** उससे अनन्तानुबन्धी लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।**

§ २९०. यहाँ पर भी जो विशेषका प्रमाण है उसका निर्देश अनन्तर पूर्व किया ही है ।

*** उससे हास्यका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।**

§ २९१. कुदो ? णवकबंधसरूवादो पुव्विल्लादो चिराणसंतसरूवस्सेदस्स तहाभाव-सिद्धीए विरोहाभावादो।

❀ रदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।

§ २९२. कुदो ? सव्वत्थ रदिपुरस्सरत्तेणेव हस्सपवुत्तीए दंसणादो।

❀ दुगुंछाए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।

§ २९३. अप्पसत्थयरत्तादो।

❀ भयस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।

§ २९४. दुगुंछिदो देसच्चागमेत्तं कुणदि। भयोदएण पुण पाणच्चागमवि कुणदि त्ति तिव्वाणुभागत्तमेदस्स दट्ठव्वं।

❀ सोगस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।

§ २९५. कुदो ? छम्मासपज्जंततिव्वदुक्खकारणत्तादो।

❀ अरदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।

§ २९६. कुदो ? पुरंगमकारणत्तादो।

❀ इत्थिवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।

§ २९७. कुदो ? अंतोमुहुत्तं हेट्ठा ओयरिदूण पुव्वमेव खविदत्तादो।

❀ णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।

---

§ २९१. क्योंकि अनन्तानुबन्धी लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम नवकबन्धरूप है और इसका प्राचीन सत्तारूप है, इसलिए इसके अनन्तगुणे सिद्ध होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

* उससे रतिका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २९२. क्योंकि सर्वत्र रतिपूर्वक ही हास्यकी प्रवृत्ति देखी जाती है।

* उससे जुगुप्साका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २९३. क्योंकि यह अत्यन्त अप्रशस्त है।

* उससे भयका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २९४. क्योंकि जिसे जुगुप्सा हुई है वह मात्र जुगुप्साके स्थानका त्याग करता है। किन्तु भयवश यह प्राणी प्राणोंतकका त्याग कर देता है, अतएव जुगुप्सासे इसका तीव्र अनुभाग जानना चाहिए।

* उससे शोकका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २९५. क्योंकि यह छह माह तक तीव्र दुःखका कारण है।

* उससे अरतिका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २९६. क्योंकि यह शोकसे भी आगेका कारण है।

* उससे स्त्रीवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २९७. क्योंकि अन्तर्मुहूर्त पूर्व ही इसका क्षय हो जाता है।

* उससे नपुंसकवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २९८. किं कारणं ? कारिसग्गिसमाणो इत्थिवेदाणुभागो । णवुंसयवेदाणुभागो पुण इट्ठावागग्गिसमाणो तेणाणंतगुणो जादो ।

❀ अपच्चक्खाणमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ २९९. कुदो ? सुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियकम्मेण लद्धजहण्णाणुभागस्सेदस्स अंतरकरणे कदे खवगपरिणामेहि घादिदावसेसणवुंसयवेदजहण्णाणुभागसंकमादो अणंतगुणत्तसिद्धीए णाइयत्तादो ।

❀ कोहस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ३००. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

❀ पच्चक्खाणमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३०१. कुदो ? सयलसंजमघादित्तण्णहाणुववत्तीदो । देससंजमघादिअपच्चक्खाणलोभजहण्णाणुभागादो अणंतगुणत्ताभावे तत्तो अणंतगुणसयलसंजमघादित्तमेदस्स जुज्जदे, विप्पडिसेहादो ।

❀ कोहस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

---

§ २९८. क्योंकि स्त्रीवेदका अनुभाग कारीषकी अग्निके समान है। परन्तु नपुंसकवेदका अनुभाग अवाकी अग्निके समान है, इसलिए यह अनन्तगुणा है।

*** उससे अप्रत्याख्यान मानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।**

§ २९९. क्योंकि इसका जघन्य अनुभाग सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक कर्मरूपसे प्राप्त होता है और नपुंसकवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अन्तरकरण करनेके बाद घात करनेसे जो शेष बचता है तत्प्रमाण होता है, इसलिए नपुंसकवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमसे अप्रत्याख्यानमानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा सिद्ध होता है यह न्याय प्राप्त है।

*** उससे अप्रत्याख्यान क्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।**

*** उससे अप्रत्याख्यान मायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।**

*** उससे अप्रत्याख्यान लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।**

§ ३००. ये तीनों सूत्र सुगम हैं।

*** उससे प्रत्याख्यानमानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।**

३०१. क्योंकि अन्यथा यह सकलसंयमका घातक नहीं हो सकता। और देशसंयम का घात करनेवाले अप्रत्याख्यान लोभके जघन्य अनुभागसे इसे अनन्तगुणा नहीं माना जाता है तो देश संयमसे अनन्तगुणे सकलसंयमका घात इसके द्वारा नहीं बन सकता, क्योंकि ऐसा मानना निषिद्ध है।

*** उससे प्रत्याख्यान क्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।**

❀ मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ३०२. एदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३०३. सयलपदत्थविसयसद्दहणपरिणामपडिबंधित्तेण लद्धमाहप्पस्सेदस्स तहाभावविरोहाभावादो ।

§ ३०४. एवमोघेण जहण्णप्पाबहुअं परूविय एत्तो आदेसपरूवणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

❀ णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो ।

§ ३०५. कुदो ? देसघादिएयट्ठाणियसरूवत्तादो ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३०६. कुदो ? सव्वघादिविट्ठाणियसरूवत्तादो ।

❀ अणंताणुबंधिमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३०७. कुदो ? सम्मामिच्छत्तुक्कस्साणुभागादो अणंतगुणभावेणावट्ठिदमिच्छत्तजहण्णफद्दयप्पहुडि उवरि वि लद्धाणुभागविण्णासस्सेदस्स तत्तो अणंतगुणत्तसिद्धीए पडिबंधाभावादो ।

❀ कोहस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

---

* उससे प्रत्याख्यान मायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यान लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ३०२ ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं ।

* उससे मिथ्यात्वका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३०३. क्योंकि सकल पदार्थविषयक श्रद्धानरूप परिणामोंका रोकनेवाला होनेसे महत्त्वको प्राप्त हुए इसके अनन्तगुणे होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

§ ३०४. इस प्रकार ओघसे जघन्य अल्पबहुत्वका कथन करके आगे आदेशका कथन करनेके लिए आगेकी सूत्रपरिपाटीका कथन करते हैं—

* नरकगतिमें सम्यक्त्वका जघन्य अनुभागसंक्रम सबसे स्तोक है ।

§ ३०५. क्योंकि यह देशघाति एकस्थानिकस्वरूप है ।

* उससे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३०६. क्योंकि यह सर्वघाति द्विस्थानिकस्वरूप है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३०७. क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट अनुभागसे अनन्तगुणरूपसे अवस्थित मिथ्यात्वके जघन्य स्पर्धकसे लेकर उससे भी ऊपर अवस्थित हुए इस अनुभागके सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य अनुभाग संक्रमसे अनन्तगुणे सिद्ध होनेमें कोई रुकावट नहीं है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।

❀ मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

§ ३०८. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

❀ हस्सस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३०९. सुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियकम्मादो अणंतगुणहीणो पुव्विल्लो णवकबंधाणुभागसंकमो । एसो पुण सुहुमाणुभागादो अणंतगुणो, असण्णिपंचिंदियहदसमुप्पत्तियकम्मेण णेरइएसु लद्धजहण्णभावत्तादो । तदो सिद्धमेदस्स तत्तो अणंतगुणत्तं ।

❀ रदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३१०. एत्थ सामित्तभेदाभावे वि पुरंगमकारणत्तेणाणंतगुणत्तमविरुद्धं ।

❀ पुरिसवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३११. एत्थ कारणं रदी रमणमेत्तुप्पाइया पलालग्गिसरिसहसत्तिविसेसो पुण पुंवेदो तदो सामित्तविसयभेदाभावे वि सिद्धमेदस्साणंतगुणब्भहियत्तं ।

❀ इत्थिवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३१२. किं कारणं ? कारिसग्गिसरिसतिव्वपरिणामणिबंधणत्तादो ।

---

* उससे अनन्तानुबन्धी मायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ३०८. ये सूत्र सुगम हैं ।

* उससे हास्यका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३०९. अनन्तानुबन्धी लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिककर्मसे अनन्तगुणे हीन नवकबन्ध अनुभागसंक्रमरूप है और यह सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी अनुभागसे अनन्तगुणा है, क्योंकि यह असंज्ञी पञ्चेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिकर्मके साथ नारकियोंमें जघन्यपनेको प्राप्त हुआ है, इसलिए यह अनन्तानुबन्धी लोभके जघन्य अनुभागसंक्रमसे अनन्तगुणा है यह सिद्ध होता है ।

* उससे रतिका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३१०. यद्यपि हास्यके जघन्य अनुभागसंक्रम और रतिके जघन्य अनुभागसंक्रमके स्वामीमें भेद है फिर भी उससे आगेका कारण होनेसे इसके अनन्तगुणे होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

* उससे पुरुषवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३११. यहाँ पर कारण यह है कि रति रमणमात्रको उत्पन्न करनेवाली है । परन्तु पुरुषवेद पलालकी अग्निके समान शक्ति विशेषरूप है, इसलिए इनके स्वामीमें भेद न होने पर भी उससे इसका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है यह सिद्ध होता है ।

* उससे स्त्रीवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३१२. क्योंकि यह कारीषकी अग्निके समान तीव्र परिणामोंसे उत्पन्न होता है ।

❀ दुगुंछाए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३१३. कुदो ? पयडिविसेसेणेव तस्स तहाभावेणावट्ठाणादो ।

❀ भयस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३१४. सुगममेदं, ओघादो अविसिट्ठकारणत्तादो ।

❀ सोगस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३१५. एदं पि सुगमं ओघसिद्धकारणत्तादो ।

❀ अरदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३१६. एदं च सुबोहं, ओघम्मि परूविदकारणत्तादो ।

❀ णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३१७. किं कारणं ? इट्टगावागग्गिसरिसपरिणामकारणत्तादो ।

❀ अपच्चक्खाणमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३१८. कुदो ! णोकसायाणुभागादो कसायाणुभागस्स महल्लत्तसिद्धीए णाइयत्तादो ।

❀ कोधस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ ।

---

* उससे जुगुप्साका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३१३. क्योंकि प्रकृतिविशेष होनेसे ही वह इस प्रकारसे अवस्थित है ।

* उससे भयका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३१४. यह सुगम है, क्योंकि ओघप्ररूपणामें जो इसका कारण बतलाया है उसी प्रकारका कारण यहाँ भी प्राप्त होता है ।

* उससे शोकका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३१५. यह भी सुगम है, क्योंकि ओघप्ररूपणामें इसके कारणकी सिद्धि कर आये हैं ।

* उससे अरतिका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३१६. यह भी सुबोध है, क्योंकि ओघप्ररूपणामें इसका कारण कह आये हैं ।

* उससे नपुंसकवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३१७. क्योंकि अवाकी अग्निके समान परिणाम इसका कारण है ।

* उससे अप्रत्याख्यानमानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३१८. क्योंकि नोकषायोंके अनुभागसे कषायोंका अनुभाग अधिक है यह न्यायसिद्ध बात है ।

* उससे अप्रत्याख्यानक्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यान मायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यानलोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ३१९. एदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि सुगमाणि।

❀ **पच्चक्खाणमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।**

§ ३२०. कुदो ? सयलसंजमघादित्तण्णहाणुववत्तीए तस्स तब्भावसिद्धीदो।

❀ **कोहस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ।**

❀ **मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ।**

❀ **लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ।**

§ ३२१. एदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि पयडिविसेसमेत्तकारणावेक्खाणि सुगमाणि।

❀ **माणसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।**

§ ३२२. कुदो ? जहाक्खादसंजमघादणसत्तिसमण्णिदत्तादो।

❀ **कोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ।**

❀ **मायासंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ।**

❀ **लोभसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ।**

§ ३२३. एत्थ सव्वत्थ पयडिविसेसो चेय विसेसाहियत्तस्स कारणं दट्ठव्वं। विसेसपमाणं च अणंताणि फद्दयाणि त्ति घेत्तव्वं।

❀ **मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।**

§ ३१९. ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं।

* उससे प्रत्याख्यानमानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ ३२०. क्योंकि अन्यथा यह मान सकलसंयमका घाती नहीं हो सकता, इसलिए वह पूर्वोक्तसे अनन्तगुणा सिद्ध होता है।

* उससे प्रत्याख्यानक्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे प्रत्याख्यानमायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे प्रत्याख्यान लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है।

§ ३२१. प्रकृति विशेषमात्र कारणोंकी अपेक्षा रखनेवाले ये तीनों ही सूत्र सुगम हैं।

* उससे मानसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ ३२२. क्योंकि यह यथाख्यातसंयमका घात करनेवाली शक्तिसे युक्त है।

* उससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे मायासंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे लोभसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है।

§ ३२३. यहाँ पर सर्वत्र प्रकृतिविशेष ही विशेष अधिक होनेका कारण जानना चाहिए और विशेषका प्रमाण अनन्त स्पर्धक हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

* उससे मिथ्यात्वका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है।

३२४. कुदो ? सयलपदत्थविसयसद्दहणलक्खणसम्मत्तसण्णिदजीवगुणघादण्णहाणुववत्तीदो । एवं णिरयोघो सुत्तयारेण परूविदो । एसो चेव पढमपुढवीए वि कायव्वो, विसेसाभावादो । विदियादि जाव सत्तमि त्ति एवं चेव वत्तव्वं । सेसगईसु वि णिरयोघालावो चेव किं चि विसेसाणुविद्धो कायव्वो त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरमाह—

❀ जहा णिरयगईए तहा सेसासु गदीसु ।

§ ३२५. अप्पाबहुअं णेदव्वमिदि वक्कज्झाहारमेत्थ कादूण सुत्तत्थस्स समप्पणा कायव्वा । तदो एदम्मि देसामासियसुत्ते णिलीणत्थविवरणं कस्सामो । तं जहा—मणुसतिए ओघभंगो । णवरि मणुसिणीसु पुरिसवेदजहण्णाणुभागसंकमो रदीए उवरि अणंतगुणो कायव्वो, छण्णोकसाएहिं सह चिराणसंतसरूवेण तत्थ जहण्णभावोवलंभादो । तिरिक्खपंचिंदियतिरिक्खतिय-देवा भवणादि जाव सव्वट्ठा त्ति णिरयोघभंगो । पंचि०तिरि०-अपज्ज०—मणुसअपज्ज० उक्कस्सभंगो । संपहि सेसमग्गणाणं देसामासयभावेण एइंदिएसु थोवबहुत्तपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ एइंदिएसु सव्वत्थोवो सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो ।

§ ३२६. सुगमं ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

---

§ ३२४. क्योंकि सकल पदार्थविषयक श्रद्धानलक्षण सम्यक्त्व संज्ञावाले जीवगुणका घात अन्यथा बन नहीं सकता ' इस प्रकार सूत्रकारने सामान्यसे नारकियोंमें अल्पबहुत्वका कथन किया । इसे ही पहली पृथिवीमें करना चाहिए, क्योंकि ओघप्ररूपणासे इसमें कोई विशेषता नहीं है । दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें इसी प्रकार कथन करना चाहिए । अब शेष गतियोंमें भी कुछ विशेषताको लिए हुए सामान्य नारकियोंके समान आलाप करना चाहिए इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** जिस प्रकार नरकगतिमें अल्पबहुत्व कहा है उसी प्रकार शेष गतियोंमें उसका कथन करना चाहिए ।**

§ ३२५. 'अल्पबहुत्व ले जाना चाहिए' इस वाक्यका अध्याहार यहाँ पर करके सूत्रके अर्थकी समाप्ति करनी चाहिए । इसलिए इस देशामर्षक सूत्रमें गर्भित हुए अर्थका विवरण करते हैं । यथा—मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदके जघन्य अनुभागसंक्रमको रतिके ऊपर अनन्तगुणा करना चाहिए, क्योंकि वहाँ पर उसका छह नोकषायोंके साथ प्राचीन सत्कर्मरूपसे जघन्यपना पाया जाता है । सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है । अब शेष मार्गणाओंके देशामर्षक रूपसे एकेन्द्रियोंमें अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** एकेन्द्रियोंमें सम्यक्त्वका जघन्य अनुभागसंक्रम सबसे स्तोक है ।**

§ ३२६. यह सूत्र सुगम है ।

*** उससे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।**

§ ३२७. सुगमं ।

❀ हस्सस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो ।

§ ३२८. कुदो ? सव्वघादिविट्ठाणियत्ते समाणे वि संते सम्मामिच्छत्तस्स विसयीकयदारुअसमाणाणंतिमभागमुल्लंघिय परदो एदस्सावट्ठाणदंसणादो ।

❀ सेसाणं जहा सम्माइट्ठिबंधे तहा कायव्वो ।

§ ३२९. एत्थ सम्माइट्ठिबंधे त्ति णिद्देसेण सम्मत्ताहिमुहसव्वविसुद्धमिच्छाइट्ठिजहण्णबंधस्स गहणं कायव्वं, अण्णहा अणंताणुबंधियादीणं सम्माइट्ठिबंधबहिब्भूदाणमप्पाबहुअविहाणाणुववत्तीदो । विसोहिपरिणामोवलक्खणमेत्तं चेदं तेण विसुद्धमिच्छाइट्ठिबंधे जारिसमप्पाबहुअं परूविदं तारिसमेवेत्थ सेसपयडीणं कायव्वं, विसोहिणिबंधणसुहुमेइंदियहदसमुप्पत्तियकम्मेण लद्धजहण्णभावाणं तब्भावविरोहाभावादो त्ति एसो सुत्तत्थसब्भावो ।

§ ३३० संपहि तदुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—हस्सजहण्णाणुभागसंकमादो उवरि रदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । पुरिसवेदस्स जहण्णाणु० अणंतगुणो । इत्थिवेद० जहण्णाणु० अणंतगुणो । दुगुंछा० जहण्णा० अणंतगुणो । भय० जहण्णाणु० अणंतगुणो । सोग० जह० अणंतगुणो । अरदीए जह० अणंतगुणो । णवुंस० जह० अणंतगुणो ।

---

§ ३२७. यह सूत्र सुगम है ।

* उससे हास्यका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ ३२८. क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्व और हास्य इन दोनोंका जघन्य अनुभागसंक्रम सर्वघाति द्विस्थानिकरूपसे समान है तो भी सम्यग्मिथ्यात्वके विषयरूप दारुसमान अनन्तवें भागको उल्लंघन कर आगे इसका अवस्थान देखा जाता है ।

* शेष प्रकृतियोंके जघन्य अनुभागसंक्रमका अल्पबहुत्व जिस प्रकार सम्यग्दृष्टि बन्धमें किया है उस प्रकार करना चाहिए ।

§ ३२९. यहाँ पर सूत्रमें 'सम्माइट्ठिबंधे' ऐसा निर्देश करनेसे सम्यक्त्वके अभिमुख हुए सर्वविशुद्ध मिथ्यादृष्टिके जघन्य बन्धका ग्रहण करना चाहिए, अन्यथा सम्यग्दृष्टिके बन्धसे बाहर हुए अनन्तानुबन्धी आदिके अल्पबहुत्वका विधान नहीं बन सकता है । यह कथन मात्र विशुद्ध परिणामोंका उपलक्षणरूप है । इसलिए विशुद्ध मिथ्यादृष्टिके बन्धमें जिस प्रकारका अल्पबहुत्व कहा है उसी प्रकारका ही यहाँ पर शेष प्रकृतियोंका करना चाहिए, क्योंकि विशुद्धिनिमित्तक सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक कर्मरूपसे जघन्यपनेको प्राप्त हुए उक्त प्रकृतियोंके अनुभागोंका विशुद्ध मिथ्यादृष्टिके बन्धके समान होनेमें कोई विरोध नहीं आता इस प्रकार यह इस सूत्रका अर्थ है ।

§ ३३०. अब उसकी उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—हास्यके जघन्य अनुभाग संक्रमसे रतिका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है । उससे पुरुषवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है । उससे स्त्रीवेदका जघन्य अनुभाग संक्रम अनन्तगुणा है । उससे जुगुप्साका जघन्य अनुभाग संक्रम अनन्तगुणा है । उससे भयका जघन्य अनुभाग संक्रम अनन्तगुणा है । उससे शोकका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है । उससे अरतिका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है । उससे नपुंसकवेदका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है । उससे अप्रत्याख्यानमानका जघन्य

अपच्चक्खाणमाण० जह० अणंतगुणो। कोधस्स जह० विसे०। मायाए जह० विसे०। लोभ० जह० विसे०। पच्चक्खाणमाण० जह० अणंतगुणो। कोध० जह० विसे०। मायाए जह० विसे०। लोभ० जह० विसे०। माणसंज० अणंतगुणो। कोध० विसे०। माया० विसे०। लोभ० विसे०। अणंताणु०माण० जहण्णाणु०सं० अणंतगुणो। कोह० विसे०। मायाए० विसेसा०। लोह० विसे०। मिच्छत्तस्स जह० अणंतगुणो त्ति एदेणेदीए दिसाए सेसमग्गणासु वि अप्पाबहुअं जाणिय कायव्वं।

एवमप्पाबहुए समत्ते चउवीसमणिओगद्दाराणि समत्ताणि।

❀ भुजगारे त्ति तेरस अणिओगद्दाराणि।

§ ३३१. चउवीसमणियोगद्दारेसु परूविय समत्तेसु किमट्ठमेसो भुजगारसण्णिदो अहियारो समागओ? वुच्चदे—जहण्णुक्कस्सभेयभिण्णाणुभागसंकमस्स सगंतोभाविदाजहण्णाणुक्कस्सवियप्पस्स अवत्थाभेयपदुप्पायणट्ठमागओ, तदवत्थाभूदभुजगारादिपदाणमेत्थ समुक्कित्तणादितेरसाणियोगद्दारेहि विसेसिऊण परूवणोवलंभादो।

❀ तत्थ अट्ठपदं।

अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है। उससे अप्रत्याख्यानक्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे अप्रत्याख्यानमायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे अप्रत्यानलोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे प्रत्याख्यानमानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है। उससे प्रत्याख्यानक्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे प्रत्याख्यानमायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे प्रत्याख्यान लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे मानसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है। उससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे मायासंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे लोभसंज्वलनका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे अनन्तानुबन्धीमानका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है। उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे अनन्तानुबन्धी मायाका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे अनन्तानुबन्धी लोभका जघन्य अनुभागसंक्रम विशेष अधिक है। उससे मिथ्यात्वका जघन्य अनुभागसंक्रम अनन्तगुणा है। इस प्रकार इस दिशासे शेष मार्गणाओंमें भी अल्पबहुत्व जानकर करना चाहिए।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होने पर चौदह अनुयोगद्वार समाप्त हुए।

* भुजगार अधिकारका प्रकरण है। उसमें तेरह अनुयोगद्वार होते हैं।

§ ३३१. चौबीस अनुयोगद्वारोंका कथन समाप्त होने पर यह भुजगार संज्ञावाला अधिकार किसलिए आया है? कहते हैं—जिसके भीतर अजघन्य और अनुत्कृष्ट भेद गर्भित हैं ऐसे जघन्य और उत्कृष्टके भेदसे दो प्रकारके अनुभाग संक्रमके अवस्थाभेदोंका कथन करनेके लिए यह अधिकार आया है, क्योंकि उसके अवस्थारूप भुजगार आदि पदोंका यहाँ पर समुत्कीर्तना आदि तेरह अनुयोगद्वारोंके आश्रयसे पृथक् पृथक् कथन उपलब्ध होता है।

* उस विषयमें यह अर्थपद है।

§ ३३२. तम्मि भुजगारसंकमे भुजगारादिपदाणं सरूवविसयणिण्णयजणणट्ठमट्ठपदं वण्णइस्सामो त्ति वुत्तं होइ। किं तमट्ठपदमिदि पुच्छासुत्तमाह—

❀ तं जहा।

§ ३३३. सुगमं।

❀ जाणि एण्हिं फद्दयाणि संकामेदि अणंतरोसक्काविदे अप्पदर-संकमादो बहुगाणि त्ति एस भुजगारो।

§ ३३४. एदस्स भुजगारसंकमसरूवणिरूवयसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे—जाणि अणुभाग-फद्दयाणि एण्हिं वट्टमाणसमए संकामेदि ताणि बहुआणि। कत्तो? अणंतरोसक्काविदे अप्पदरसंकमादो अणंतरविदिक्कंतसमए थोवयरादो संकमपरिणदफद्दयकलावादो त्ति भणिदं होदि। एस भुजगारो एवंलक्खणो भुजगारसंकमो त्ति दट्ठव्वो। थोवयरफद्दयाणि संकामे-माणो जाधे तत्तो बहुवयराणि फद्दयाणि संकामेदि सो तस्स ताधे भुजगारसंकमो त्ति भावत्थो।

❀ ओसक्काविदे बहुदरादो एण्हिमप्पदराणि संकामेदि त्ति एस अप्पदरो।

§ ३३५. एत्थ ओसक्काविदसद्दो अणंतरवदिक्कंतसमयवाचओ त्ति घेत्तव्वो। अथवा

---

§ ३३२. उस भुजगारसंक्रमके विषयमें भुजगार आदि पदोंका स्वरूपविषयक निर्णयको उत्पन्न करनेके लिए अर्थपदका कथन करते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। वह अर्थपद क्या है ऐसी जिज्ञासाके अभिप्रायसे पृच्छासूत्रको कहते हैं—

* यथा

§ ३३३. यह सूत्र सुगम है।

* जिन स्पर्धकोंको वर्तमान समयमें संक्रमित करता है वे अनन्तरपूर्व समयमें संक्रमको प्राप्त हुए अल्पतर संक्रमसे बहुत हैं यह भुजगारसंक्रम है।

§ ३३४. अब भुजगारसंक्रमके स्वरूपका कथन करनेवाले इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—जिन अनुभागस्पर्धकोंका 'एण्हिं' अर्थात् वर्तमान समयमें संक्रमण करता है वे बहुत हैं। किससे बहुत हैं? 'अणंतरोसक्काविदे अप्पदरसंकमादो' अर्थात् अनन्तर व्यतीत हुए पूर्व समयमें संक्रमरूपसे परिणत हुए स्तोकतर स्पर्धककलापसे बहुत हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'एस भुजगारो' अर्थात् इस प्रकारके लक्षणवाला भुजगारसंक्रम है ऐसा जानना चाहिए। स्तोकतर स्पर्धकोंका संक्रम करनेवाला जीव जब उनसे बहुतर स्पर्धकोंका संक्रम करता है तब उसका उस समय भुजगार संक्रम होता है यह इसका भावार्थ है।

* अनन्तर पूर्व समयमें संक्रमको प्राप्त हुए बहुतर स्पर्धकोंसे वर्तमान समयमें अल्पतर स्पर्धकोंको संक्रमित करता है यह अल्पतरसंक्रम है।

§ ३३५. इस सूत्रमें 'ओसक्काविद' शब्द अनन्तर व्यतीत हुए समयका वाची है ऐसा यहाँ

बहुदरादो पुव्विल्लसमयसंकमादो एण्हिमोसक्काविदे इदानीमपकर्षिते न्यूनीकृतेऽल्पतराणि स्पर्धकानि संक्रमयतीत्यल्पतरसंक्रम इति सूत्रार्थसंबंधः। सुगममन्यत्।

❀ ओसक्काविदे एण्हिं च तत्तियाणि संकामेदि त्ति एस अवट्ठिदसंकमो।

§ ३३६. अनंतरव्यतिक्रान्तसमये वर्तमानसमये च तावतामेव स्पर्धकानां संक्रमोऽवस्थितसंक्रम इति यावत्।

❀ ओसक्काविदे असंकमादो एण्हिं संकामेदि त्ति एस अवत्तव्वसंकमो।

§ ३३७. ओसक्काविदे अणंतरहेट्ठिमसमये असंकमादो संकमविरहलक्खणादो अवत्था-विसेसादो एण्हिमिदाणिं वट्टमाणसमये संकामेदि त्ति संकमपज्जाएण परिणामेदि त्ति एस एवंलक्खणो अवत्तव्वसंकमो। असंकमादो जो संकमो सो अवत्तव्वसंकमो त्ति भावत्थो।

❀ एदेण अट्ठपदेण सामित्तं।

§ ३३८. एदेणाणंतरपरूविदेण अट्ठपदेण णिच्छिदसरूवाणं भुजगारादिपदाणं सामित्तमिदाणिं कस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं। किमट्ठमेत्थ सामित्तादीणं जोणीभूदा समुक्कित्तणा सुत्तयारेण ण परूविदा? ण, सुगमत्ताहिप्पाएण तदपरूवणादो।

ग्रहण करना चाहिए। अथवा पहलेके समयमें किये गये बहुतर संक्रमसे 'एण्हिमोसक्काविदे' अर्थात् वर्तमान समयमें अपकर्षित करने पर अर्थात् कम करने पर अल्पतर स्पर्धकोंको संक्रमित करता है यह अल्पतरसंक्रम है इस प्रकार सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। शेष कथन सुगम है।

* अनन्तर व्यतीत हुए समयमें और वर्तमान समयमें उतने ही स्पर्धकोंका संक्रम करता है यह अवस्थितसंक्रम है।

§ ३३६. अनन्तर व्यतीत हुए समयमें और वर्तमान समयमें उतने ही स्पर्धकोंका संक्रम अवस्थितसंक्रम है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* अनन्तर व्यतीत हुए समयमें संक्रम न करके वर्तमान समयमें संक्रम करता है यह अवक्तव्यसंक्रम है।

§ ३३७. 'ओसक्काविदे' अर्थात् अनन्तर व्यतीत हुए समयमें असंक्रमसे अर्थात् संक्रम-विरहलक्षण अवस्थाविशेषसे आकर 'एण्हिं' अर्थात् वर्तमान समयमें 'संकामेदि' अर्थात् संक्रम पर्यायसे परिणत कराता है 'एस' अर्थात् इस प्रकारके लक्षणवाला अवक्तव्यसंक्रम है। असंक्रमरूप अवस्थाके बाद जो संक्रम होता है वह अवक्तव्यसंक्रम है यह इस कथनका भावार्थ है।

* अब इस अर्थपदके अनुसार स्वामित्वका कथन करते हैं।

§ ३३८. इस अनन्तर पूर्व कहे गये अर्थपदके अनुसार जिनके स्वरूपका निर्णय कर लिया है ऐसे भुजगार आदि पदोंके स्वामित्वको इस समय बतलाते हैं, इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है।

शंका—यहाँ पर स्वामित्व आदिकी योनिरूप समुत्कीर्तनाका सूत्रकारने कथन क्यों नहीं किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि समुत्कीर्तनाका कथन सुगम है इस अभिप्रायसे सूत्रकारने उसका कथन नहीं किया।

§ ३३९. एत्थ वक्खाणाइरिएहिं समुक्कित्तणा कायव्वा । तं जहा—समुक्कित्तणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेणादेसेण य । ओघो विहत्तिभंगो । णवरि बारसक०—णवणोक० अत्थि अवत्तव्वसंकमो वि । एवं मणुसतिए । आदेसेण सव्वणेरइय०—सव्वतिरिक्ख—मणुअपज्ज०—सव्वदेवा त्ति विहत्तिभंगो । एवं समुक्कित्तणा गया ।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो को होइ ?

§ ३४०. किं मिच्छाइट्ठी सम्माइट्ठी देवो णेरइओ वा इच्चादिविसेसावेक्खमेदं पुच्छासुत्तं ।

❀ मिच्छाइट्ठी अण्णदरो ।

§ ३४१. एत्थ मिच्छाइट्ठिणिद्देसेण सम्माइट्ठिपडिसेहो कओ । अण्णदरणिद्देसो चउगइ-गयमिच्छाइट्ठिगहणट्ठो ओगाहणादिविसेसपडिसेहट्ठो च । तदो मिच्छाइट्ठी चेव मिच्छत्ताणु-भागस्स भुजगारसंकामओ त्ति सिद्धं ।

❀ अप्पदर-अवट्ठिदसंकामओ को होइ ?

---

§ ३३९. अत्र यहाँ पर व्याख्यानाचार्योंको समुत्कीर्तना करनी चाहिए। यथा— समुत्कीर्तना-नुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघ प्ररूपणाका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवक्तव्यसंक्रम भी है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेशसे सब नारकी, सब तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त और सब देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—अनुभागविभक्तिमें सत्कर्मकी अपेक्षा जिस प्रकार ओघ और आदेशसे समुत्कीर्तनाका कथन किया है उसी प्रकार वह सब कथन यहाँ भी बन जाता है। मात्र उपशमश्रेणिमें बारह कषायों और नौ नोकषायोंका उपशम हो जानेके बाद जब तक ऐसा जीव उतरकर पुनः नीचे नहीं आता या मरकर देव नहीं होता तब तक संक्रम नहीं होता। उसके बाद संक्रम होने लगता है, इसलिए यहाँ पर ओघसे इन प्रकृतियोंके अवक्तव्यसंक्रमका निर्देश अलगसे किया है। साथ ही यह संक्रम मनुष्यत्रिकमें बन जानेसे यहाँ पर इसे भी अलगसे बतलाया है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

*** मिथ्यात्वका भुजगार संक्रामक कौन होता है ?**

§ ३४०. मिथ्यादृष्टि, सम्यग्दृष्टि, देव या नारकी इनमेंसे कौन होता है इत्यादि विशेषकी अपेक्षा रखनेवाला यह सूत्र है।

*** अन्यतर मिथ्यादृष्टि होता है।**

§ ३४१. यहाँ पर 'मिथ्यादृष्टि' पदके निर्देश द्वारा सम्यग्दृष्टिका निषेध किया है। चारों गतियोंके मिथ्यादृष्टिके ग्रहण करनेके लिए तथा अवगाहना आदि विशेषका निषेध करनेके लिए 'अन्यतर' पदका निर्देश किया है। इसलिए मिथ्यादृष्टि ही मिथ्यात्वके अनुभागका भुजगारसंक्रामक होता है यह सिद्ध हुआ।

*** अल्पतर और अवस्थितसंक्रामक कौन होता है ?**

§ ३४२. सुगमं ।

❀ अण्णदरो ।

§ ३४३. एसो अण्णदरणिद्देसो मिच्छाइट्ठि-सम्माइट्ठीणमण्णदरग्गहणट्ठो, तत्थोभयत्थ वि पयदसामित्तस्स विप्पडिसेहाभावादो । तदो मिच्छाइट्ठी सम्माइट्ठी वा मिच्छत्तअप्पदरावट्ठिदाणं सामी होइ त्ति सिद्धं ।

❀ अवत्तव्वसंकामओ णत्थि ।

३४४. कुदो ? मिच्छत्तस्स सव्वकालमसंकमादो संकमसमुप्पत्तीए अणुवलंभादो ।

❀ एवं सेसाणं कम्माणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं ।

§ ३४५. जहा मिच्छत्तस्स भुजगारादिपदाणं सामित्तविहाणं कदमेवं सेसकम्माणं पि कायव्वं, विसेसाभावादो । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमिह पडिसेहो तत्थ विसेसंतरसंभवपदुप्पायणफलो । सो च विसेसो भणिस्समाणो । एत्थ वि थोवयरो विसेसो अत्थि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ णवरि अवत्तव्वगो च अत्थि ।

§ ३४६. बारसक०–णवणोकसायाणमुवसमसेढीए अणंताणुबंधीणं च विसंजोयणा-

---

§ ३४२. यह सूत्र सुगम है ।

* अन्यतर जीव होता है ।

§ ३४३. सूत्रमें यह 'अन्यतर' पदका निर्देश मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि इनमेंसे अन्यतर जीवके ग्रहणके लिए आया है, क्योंकि उन दोनोंमें ही प्रकृत स्वामित्वका निषेध नहीं है । इसलिए मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि कोई भी मिथ्यात्वके अल्पतर और अवस्थितसंक्रमोंका स्वामी है यह सिद्ध हुआ ।

* मिथ्यात्वका अवक्तव्यसंक्रामक नहीं है ।

§ ३४४. क्योंकि मिथ्यात्वकी सदाकाल असंक्रमरूप अवस्थासे संक्रमकी उत्पत्ति नहीं उपलब्ध होती ।

* इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको छोड़कर शेष कर्मोंका स्वामित्व जानना चाहिए ।

§ ३४५. जिस प्रकार मिथ्यात्वके भुजगार आदि पदोंके स्वामित्वका कथन किया है उसी प्रकार शेष कर्मोंका भी करना चाहिए, क्योंकि मिथ्यात्वके स्वामित्व कथनसे इन कर्मोंके स्वामित्व कथनमें कोई विशेषता नहीं है । यहाँ पर जो सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका निषेध किया है सो इन दोनों प्रकृतियोंमें विशेष फरक सम्भव है इतना कथन करना इसका फल है । और वह जो फरक है उसे आगे कहेंगे । यहाँ पर स्तोकतर विशेष है इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इतनी विशेषता है कि इनका अवक्तव्यसंक्रामक भी होता है ।

§ ३४६. क्योंकि बारह कषाय और नौ नोकषायोंका उपशमश्रेणिमें तथा अनन्तानुबन्धियोंका

थुव्वसंजोगे अवत्तव्वसंकमदंसणादो । तदो बारसक०-णवणोक० अवत्त०संका० को होइ ? सव्वोवसामणादो परिवदमाणओ देवो वा पढमसमयसंकामओ । अणंताणु० अवत्तव्व-संकामओ को होइ ? विसंजोयणादो संजुत्तो होदूणावलियादिक्कंतो त्ति सामित्तं कायव्वमिदि भावत्थो । एवमेदं परूविय संपहि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तगयसामित्तभेदपदुप्पायणट्ठमुत्तर-सुत्तपबंधो—

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगारसंकामओ णत्थि ।

§ ३४७. कुदो ? तदणुभागस्स वड्ढिविरहेणावट्ठिदत्तादो ।

❀ अप्पदर-अवत्तव्वसंकामगो को होइ ?

§ ३४८. सुगमं ।

❀ सम्माइट्ठी अण्णदरो ।

§ ३४९. एत्थ सम्माइट्ठिणिद्देसो मिच्छाइट्ठिपडिसेहफलो, तत्थ पयदसामित्तसंभव-विरोहादो । अण्णदरणिद्देसो ओगाहणादिविसेसणिरायरणफलो । तदो अणादियमिच्छाइट्ठी सादिछव्वीससंतकम्मिओ वा सम्मत्तमुप्पाइय विदियसमए अवत्तव्वसंकामओ होइ । अप्पदर-संकामओ दंसणमोहक्खवओ, अण्णत्थ तदणुवलंभादो ।

❀ अवट्ठिदसंकामओ को होइ ?

विसंयोजनापूर्वक संयोग होने पर अवक्तव्यसंक्रम देखा जाता है । इसलिए बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवक्तव्यसंक्रामक कौन होता है ? जो सर्वोपशामनासे गिरनेवाला अथवा मरकर देव होता है वह प्रथम समयमें संक्रमण करनेवाला जीव इनका अवक्तव्यसंक्रामक होता है । अनन्तानु-बन्धीचतुष्कका अवक्तव्यसंक्रामक कौन होता है ? विसंयोजनाके बाद संयुक्त होकर जिसका एक आवलि काल गया है वह इनका अवक्तव्यसंक्रामक होता है । इस प्रकार यहाँ पर स्वामित्व करना चाहिए यह इसका भावार्थ है । इस प्रकार इसका कथन करके अब सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व-गत स्वामित्वकी भिन्नता दिखलानेके लिए आगेकी सूत्रपरिपाटी आई है—

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगारसंक्रामक कोई नहीं होता ।**

§ ३४७. क्योंकि उनका अनुभाग वृद्धिसे रहित होनेके कारण अवस्थित है ।

*** अल्पतर और अवक्तव्यसंक्रामक कौन होता है ?**

§ ३४८. यह सूत्र सुगम है ।

*** अन्यतर सम्यग्दृष्टि होता है ।**

§ ३४९. यहाँ पर सम्यग्दृष्टिपदके निर्देशका फल मिथ्यादृष्टिका निषेध करना है, क्योंकि मिथ्यादृष्टिको प्रकृत विषयका स्वामी होनेमें विरोध आता है । अन्यतर पदके निर्देशका फल अव-गाहना आदि विशेषोंका निराकरण करना है । इसलिए अनादि मिथ्यादृष्टि या छब्बीस प्रकृतियोंकी सत्तावाला सादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको उत्पन्न करके दूसरे समयमें अवक्तव्यसंक्रमका स्वामी होता है । तथा अल्पतरसंक्रामक दर्शनमोहनीयका क्षपक होता है, क्योंकि अन्यत्र अल्पतरपद नहीं पाया जाता ।

*** अवस्थितपदका संक्रामक कौन होता है ?**

§ ३५०. सुगमं।

❀ अण्णदरो।

§ ३५१. मिच्छाइट्ठी सम्माइट्ठी वा सामिओ त्ति भणिदं होइ। एवमोघेण सामित्तं गदं। मणुसतिए एवं चेव। णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त०संकमो कस्स ? अण्णदरस्स सव्वोवसामणादो परिवदमाणयस्स। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

एवं सामित्तं समत्तं

❀ एत्तो एयजीवेण कालो।

§ ३५२. एत्तो सामित्तविहासणादो उवरिमेयजीवेण कालो विहासियव्वो, तदणंतर-परूवणाजोगत्तादो त्ति वुत्तं होइ।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३५३. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

---

§ ३५०. यह सूत्र सुगम है।

* अन्यतर जीव होता है।

§ ३५१. मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि कोई भी जीव स्वामी है यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है। इस प्रकार ओघसे स्वामित्व समाप्त हुआ।

मनुष्यत्रिकमें इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्य संक्रमका स्वामी कौन है ? सर्वोपशामनासे गिरनेवाला अन्यतर जीव स्वामी है। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—ओघप्ररूपणामें बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यपदका संक्रामक जो सर्वोपशामनासे गिरते समय विवक्षित प्रकृतियोंके संक्रमस्थलके आनेके पूर्व मरकर देव हो जाता है वह भी होता है। किन्तु मनुष्यत्रिकमें यह इस प्रकारसे प्राप्त हुआ स्वामित्व सम्भव नहीं है। इतनी ही यहाँ पर ओघ प्ररूपणासे विशेषता जाननी चाहिए, इनमें शेष सब कथन ओघप्ररूपणाके समान है यह स्पष्ट ही है। मनुष्यत्रिकको छोड़कर नरकगति, तिर्यञ्चगति और देवगति तथा उनके अवान्तर भेदोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग बन जानेसे उसे अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना की है। तथा इसी प्रकार अन्य मार्गणाओंमें भी अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना की है।

इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ।

* अब आगे एक जीवकी अपेक्षा कालको कहते हैं।

§ ३५२. 'एत्तो' अर्थात् स्वामित्वका कथन करनेके बाद आगे एक जीवकी अपेक्षा कालका व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि यह उसके अनन्तर कथन करने योग्य है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ३५३. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

§ ३५४. कुदो ? हेट्ठिमाणुभागसंकमादो बंधवुड्ढिवसेणेयसमयं भुजगारसंकामओ होदूण विदियसमए अवट्ठिदसंकमेण परिणदम्मि तदुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३५५. एदमणुभागट्ठाणं बंधमाणो तत्तो अणंतगुणवड्ढीए वड्ढिदो पुणो विदियसमए वि तत्तो अणंतगुणवड्ढीए परिणदो । एवमणंतगुणवड्ढीए ताव बंधपरिणामं गदो जाव अंतोमुहुत्तचरिमसमयो त्ति । एवमंतोमुहुत्तभुजगारबंधसंभवादो भुजगारसंकमुक्कस्सकालो वि अंतोमुहुत्तपमाणो त्ति णत्थि संदेहो, बंधावलियादीदक्कमेणेव संकमपज्जायपरिणामदंसणादो ।

❀ अप्पयरसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३५६. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ३५७. तं जहा—अणुभागखंडयघादवसेणेयसमयमप्पयरसंकामओ जादो विदियसमयअवट्ठिदपरिणाममुवगओ, लद्धो जहण्णुक्कस्सेणेयसमयमेत्तो अप्पयरकालो ।

❀ अवट्ठिदसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३५८. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

---

§ ३५४. क्योंकि जो जीव अधस्तन अनुभागसंकमसे बन्धकी अनुभागवृद्धि वश एक समय तक भुजगारपदका संक्रामक होकर दूसरे समयमें अवस्थितसंक्रमरूप परिणत हो जाता है उसके मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रमका जघन्य काल एक समय उपलब्ध होता है ।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३५५. विवक्षित अनुभागस्थानका बन्ध करनेवाला जीव उससे अनन्तगुणी वृद्धिरूपसे वृद्धिको प्राप्त होकर पुनः दूसरे समयमें भी अनन्तगुणी वृद्धिरूपसे परिणत हुआ। इस प्रकार अनन्तगुणी वृद्धिरूपसे तब तक बन्धपरिणामको प्राप्त हुआ जब जाकर अन्तर्मुहूर्तका अन्तिम समय प्राप्त होता है। इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त काल तक भुजगारबन्ध सम्भव होनेसे भुजगारसंक्रमका भी उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है इसमें सन्देह नहीं, क्योंकि बन्धावलिके व्यतीत होनेके बाद ही क्रमसे संक्रमपर्यायरूप परिणाम देखा जाता है ।

* अल्पतर संक्रामकका कितना काल है ?

§ ३५६. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ३५७. यथा—कोई जीव अनुभागकाण्डकघात वश एक समयके लिए अल्पतर पदका संक्रामक हुआ और दूसरे समयमें अवस्थित परिणामको प्राप्त हुआ। इस प्रकार मिथ्यात्वके अल्पतरपदका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय प्राप्त हुआ ।

* अवस्थितसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ३५८. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल एक समय है ।

§ ३५६. तं जहा—एयसमयं भुजगारबंधेण परिणमिय तदणंतरसमए तत्तियं चेव बंधिय तदियसमए पुणो वि बंधवुड्ढीए परिणदो होदूण बंधावलियवदिक्कमे ताए चेव परिवाडीए संकामओ जादो लद्धो पयदजहण्णकालो।

❀ उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं

§ ३६०. तं जहा—एगो मिच्छाइट्ठी उवसमसम्मत्तं घेत्तूण परिणामपच्चएण मिच्छत्तं गदो। तत्थ मिच्छत्तस्स तप्पाओग्गमणुक्कस्साणुभागं बंधिय अंतोमुहुत्तकालं तिरिक्ख-मणुस्सेसु अवट्ठिदसंकामओ होदूण पुणो पलिदोवमासंखेज्जभागाउएसु भोगभूमिएसु उववण्णो तत्थावट्ठिदसंकमं कुणमाणो अंतोमुहुत्तावसेसे सगाउए वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय देवेसुववण्णो तत्तो पढमच्छावट्ठिमणुपालिय अंतोमुहुत्तावसेसे सम्मामिच्छत्तमवट्ठिदसंकमाविरोहेण मिच्छत्तं वा पडिवण्णो। पुणो वि अंतोमुहुत्तेण वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय विदियच्छावट्ठिमवट्ठिद-संकममणुपालेदूण तदवसाणे पयदाविरोहेण मिच्छत्तं गंतूणेक्कत्तीससागरोवमिएसु उववण्णो तदो णिप्पिडिदो संतो मणुसेसुववण्णो जाव संकिलेसं ण पूरेदि ताव अवट्ठिदसंकमेणेवाव-ट्ठिदो। तदो संकिलेसवसेण भुजगारबंधं काऊण बंधावलियवदिक्कमे तस्स संकामओ जादो लद्धो पयदुक्कस्सकालो दोअंतोमुहुत्तेहि पलिदोवमासंखेज्जभागेण च अब्भहियतेवट्ठि-सागरोवमसदमेत्तो।

❀ सम्मत्तस्स अप्पयरसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३५६. यथा—एक समय तक भुजगारबन्धरूप परिणमन करके दूसरे समयमें उतना ही बन्ध करके तीसरे समयमें फिर भी बन्धकी वृद्धिरूपसे परिणत होकर बन्धावलिके बाद उसी परिपाटी-से संक्रामक हो गया। इस प्रकार प्रकृत जघन्य काल प्राप्त हुआ।

* उत्कृष्ट काल साधिक एकसौ त्रेसठ सागर है।

§ ३६०. यथा—एक मिथ्यादृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त कर परिणामवश मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ और वहाँ मिथ्यात्वके तत्प्रायोग्य अनुत्कृष्ट अनुभागका बन्धकर अन्तर्मुहूर्तकाल तक तिर्यञ्चों और मनुष्योंमें अवस्थितपदका संक्रामक होकर फिर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण आयुवाले भोगभूमिजोंमें उत्पन्न हुआ। तथा वहाँ अवस्थितपदका संक्रम करता हुआ अपनी आयुमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहनेपर तथा वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होकर देवोंमें उत्पन्न हुआ। अनन्तर प्रथम छ्यासठ सागर कालतक उसका पालन करके अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर सम्यग्मिथ्यात्वको या अवस्थित संक्रममें विरोध न आवे इस प्रकार मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ। इसके बाद फिर भी अन्तर्मुहूर्तकालमें वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करके दूसरे छयाछठ सागर काल तक अवस्थितसंक्रमका पालनकर उसके अन्तमें प्रकृत स्वामित्वके अविरोधरूपसे मिथ्यात्वको प्राप्तकर इकतीस सागरकी आयुवाले जीवोंमें उत्पन्न हुआ। अनन्तर वहाँसे निकलकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ तथा जब तक संक्लेशको नहीं प्राप्त हुआ तब तक अवस्थित संक्रमरूपसे अवस्थित रहा। अनन्तर संक्लेशवश भुजगारबन्ध करके बन्धावलिके व्यतीत होनेपर उसका संक्रामक हो गया। इस प्रकार दो अन्तर्मुहूर्त और पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक एकसौ त्रेसठ सागरप्रमाण प्रकृत उत्कृष्ट काल प्राप्त हुआ।

* सम्यक्त्वके अल्पतरसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ३६१. सुगमं।

* जहण्णेण एयसमओ।

§ ३६२. दंसणमोहक्खवणाए एयमणुभागखंडयं पादिय सेसाणुभागं संकामेमाणस्स पढमसमयम्मि तदुवलंभादो।

* उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

§ ३६३. कुदो ? सम्मत्तस्स अट्ठवस्सट्ठिदिसंतप्पहुडि जाव समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीयो त्ति ताव अणुसमयोवट्टणं कुणमाणो अंतोमुहुत्तमेत्तकालमप्पयरसंकामओ होइ, तत्थ पडिसमयमणंतगुणहाणीए तदणुभागस्स हीयमाणक्कमेण संकंतिदंसणादो।

* अवट्ठिदसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३६४. सुगमं।

* जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ ३६५. दुचरिमाणुभागखंडयं घादिय तदणंतरसमए अप्पयरभावेण परिणदस्स पुणो चरिमाणुभागखंडयुक्कीरणकालो सव्वो चेवावट्ठिदसंकामयस्स जहण्णकालत्तेण गहियव्वो।

* उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।

§ ३६६. तं जहा—एक्को अणादियमिच्छाइट्ठी पढमसम्मत्तमुप्पाइय विदियसमए

---

§ ३६१. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

§ ३६२. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाद्वारा एक अनुभागकाण्डकका पतन करके शेष अनुभागका संक्रमण करनेवाले जीवके प्रथम समयमें जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३६३. क्योंकि सम्यक्त्वके आठ वर्षप्रमाण स्थितिसत्कर्मसे लेकर जब तक दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है तब तक प्रत्येक समयमें अनुभागकी अपवर्तना करनेवाला जीव अन्तर्मुहूर्त काल तक अल्पतरपदका संक्रामक होता है, क्योंकि वहाँ पर प्रत्येक समयमें अनन्तगुणहानिरूपसे सम्यक्त्वके अनुभागका हीयमानक्रमसे संक्रमण देखा जाता है।

* अवस्थितसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ३६४. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३६५. क्योंकि द्विचरम अनुभागकाण्डकका घात करके तदनन्तर समयमें अल्पतरपदसे परिणत होकर पुनः अन्तिम अनुभागकाण्डकका जितना उत्कीरण करनेका काल है यह सभी अवस्थितसंक्रामकका जघन्य काल है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए।

* उत्कृष्ट काल साधिक दो छ्यासठ सागरप्रमाण है।

§ ३६६. यथा—कोई एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीव प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न कर दूसरे

अवत्तव्वसंकामओ होदूण तदियादिसमएसु अवट्ठिदसंकमं कुणमाणो उवसमसम्मत्तद्धाक्खएण मिच्छत्तं गदो । पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तकालमुव्वेल्लणपरिणामेणच्छिदो चरिमुव्वेल्लणफालीए सह उवसमसम्मत्तं पडिवण्णो पुणो वेदयभावेण पढमछावट्ठिमणुपालिय तदवसाणे मिच्छत्तेण पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तकालमवट्ठिदसंकमेणच्छिदो पुव्वं व सम्मत्तपडिलंभेण विदियछावट्ठिमणुपालेयूण तदवसाणे पुणो वि मिच्छत्तं गंतूणुव्वेल्लणाचरिमफालीए अवट्ठिदसंकमस्स पज्जवसाणं करेदि, तेण लद्धो पयदुक्कस्सकालो तीहि पलिदो० असंखे०भागेहि सादिरेयवेछावट्ठिसागरोवममेत्तो ।

❀ अवत्तव्वसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३६७. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ३६८. असंकमादो संकामयभावमुवगयपढमसमए चेव तदुवलंभणियमादो ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स अप्पयर-अवत्तव्वसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमयं ।

§ ३६९. अवत्तव्वसंकामयस्स एयसमओ सम्मत्तस्सेव परूवेयव्वो । अप्पयरसंकामयस्स वि दंसणमोहक्खवणाए अणुभागखंडयघादाणंतरमेयसमयसंभवो दट्ठव्वो ।

समयमें अवक्तव्यपदका संक्रामक हुआ । पुनः तृतीय आदि समयोंमें अवस्थितसंक्रमको करता हुआ उपशमसम्यक्त्वके कालका क्षय होनेसे मिथ्यात्वमें गया और पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक उद्वेलनारूप परिणामसे परिणत हुआ । फिर अन्तिम उद्वेलना फालिके साथ उपशम सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुनः वेदकसम्यक्त्वके साथ प्रथम छयासठ सागरप्रमाण कालको विताकर उसके अन्तमें मिथ्यात्वमें जाकर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक अवस्थित संक्रमके साथ रहा । तथा पहलेके समान सम्यक्त्वको प्राप्त करके दूसरे छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन करके उसके अन्तमें मिथ्यात्वमें जाकर उद्वेलनाकी अन्तिम फालिके पतनतक अवस्थित संक्रमके अन्तको प्राप्त हुआ । इस प्रकार इस विधिसे प्रकृत उत्कृष्ट काल तीन बार पल्यके असंख्यातवें भागोंसे अधिक दो छयासठ सागर कालप्रमाण प्राप्त हुआ ।

*** अवक्तव्यसंक्रामकका कितना काल है ?**

§ ३६७. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।**

§ ३६८. क्योंकि संक्रम रहित अवस्थासे संकामकभावको प्राप्त हुए जीवके प्रथम समयमें ही अवक्तव्यसंक्रमकी प्राप्तिका नियम है ।

*** सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर और अवक्तव्यसंक्रामकका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।**

§ ३६९. इसके अवक्तव्यसंक्रामकके एक समय कालका कथन सम्यक्त्वके समान ही करना चाहिए । तथा अल्पतर संक्रामकका भी एक समय काल दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें अनुभागकाण्डक घातके अनन्तर एक समय तक सम्भव है ऐसा जान लेना चाहिए ।

❀ अवट्ठिदसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३७०. सुगमं।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ ३७१. चरिमाणुभागखंडयुकीरणद्धाए तदुवलंभादो।

❀ उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।

§ ३७२. एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणा सुगमा, सम्मत्तस्सेव सादिरेयवेछावट्ठि-सागरोवममेत्तावट्ठिदुक्कस्सकालसिद्धीए पडिबंधाभावादो।

❀ सेसाणं कम्माणं भुजगारं जहण्णेण एयसमओ।

§ ३७३. सुगमं।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

§ ३७४. अणंतगुणवड्ढिकालस्स तप्पमाणत्तोवएसादो।

❀ अप्पयरसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३७५. सुगमं।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ।

§ ३७६. एदं पि सुगमं। एदेण सामण्णणिद्देसेण पुरिसवेद-चदुसंजलणाणं पि अप्पयर-

---

* अवस्थितसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ३७०. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल अन्तमुहूर्त है।

§ ३७१. क्योंकि अन्तिम अनुभागकाण्डकके उत्कीरण कालके भीतर यह काल उपलब्ध होता है।

* उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है।

§ ३७२. इस सूत्रकी अर्थप्ररूपणा सुगम है, क्योंकि सम्यक्त्वके समान इसके अवस्थित-पदके साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण कालकी सिद्धि होनेमे कोई रुकावट नहीं आती।

* शेष कर्मोंके भुजगारसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है।

§ ३७३. यह सूत्र सुगम है।

* उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है।

§ ३७४. क्योंकि अनन्तगुणवृद्धिका उत्कृष्ट काल तत्प्रमाण है ऐसा आगमका उपदेश है।

* अल्पतरसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ३७५. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

§ ३७६. यह सूत्र भी सुगम है। यह सामान्य निर्देश है। इससे पुरुषवेद और चार

संकामयुकस्सकालस्स एयसमयत्ताइप्पसंगे तण्णिवारणदुवारेण तत्थ विसेसपरूवणट्ठमुवरिम-सुत्तद्दयमाह—

❀ णवरि पुरिसवेदस्स उक्कस्सेण दोआवलियाओ समऊणाओ ।

§ ३७७. कुदो ? पुरिसवेदोदयखवयस्स चरिमसमयसवेदप्पहुडि समयूणदोआवलिय-मेत्तकालं पुरिसवेदाणुभागस्स पडिसमयमणंतगुणहीणकमेण संकमदंसणादो ।

❀ चदुण्हं संजलणाणमुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३७८. कुदो ? खवयसेढीए किट्टिवेदयपढमसमयप्पहुडि चदुसंजलणाणुभागस्स अणुसमयोवट्टणाघाददंसणादो ।

❀ अवट्ठिदं जहण्णेण एयसमओ ।

❀ उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं ।

§ ३७९. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि ।

❀ अवत्तव्वं जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ३८०. सुगमं । एवमोघो समत्तो । आदेसेण मणुसतिए विहत्तिभंगो । णवरि बारसक०—णवणोक० अवत्तव्वमोघं । सेसमग्गणासु[1] विहत्तिभंगो ।

संज्वलनोंके भी अल्पतरसंक्रामकका उत्कृष्ट काल एक समय प्राप्त होने पर उसके निवारण द्वारा उस विषयमें विशेष कथन करने के लिए आगेके दो सूत्र कहते हैं—

*** इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदका उत्कृष्ट काल एक समय कम दो आवलि है ।**

§३७७ क्योंकि पुरुषवेदके उदयसे क्षपकश्रेणिपर चढ़े हुए जीवके सवेदभागके अन्तिम समयसे लेकर एक समय कम दो आवलिप्रमाण काल तक पुरुषवेदके अनुभागका प्रत्येक समयमें अनन्तगुणी हानिरूपसे संक्रम देखा जाता है ।

*** चार संज्वलनोंका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।**

§ ३७८. क्योंकि क्षपकश्रेणिमें कृष्टिवेदकके प्रथम समयसे लेकर चार संज्वलनोंके अनुभागका प्रत्येक समयमें अपवर्तनाघात देखा जाता है ।

*** अवस्थितसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है ।**

*** उत्कृष्ट काल साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है ।**

§ ३७९ ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं ।

*** अवक्तव्यसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।**

§ ३८०. यह सूत्र सुगम है । इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई । आदेशसे मनुष्यत्रिकमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामकका भङ्ग ओघके समान है । शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—अनुभागविभक्तिमें न तो ओघसे बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवक्तव्य पदकी अपेक्षा कालका निर्देश किया है और न मनुष्यत्रिकमें ही इनके अवक्तव्यपदके

---

१. आ०प्रती सेससव्वमग्गणासु इति पाठः ।

*** एत्तो एयजीवेण अंतरं।**

§ ३८१. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं।

*** मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?**

§ ३८२. सुगमं।

*** जहण्णेण एयसमओ।**

§ ३८३. तं जहा—भुजगारसंकामओ एयसमयमवट्ठिदसंकमेणंतरिय पुणो वि विदियसमए भुजगारसंकामओ जादो।

*** उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं।**

§ ३८४. तं जहा—भुजगारसंकामओ अवट्ठिदभावमुवणमिय तिरिक्ख-मणुस्सेसु अंतोमुहुत्तमेत्तकालं गमिऊण तिपलिदोवमिएसुववण्णो समट्ठिदिमणुवालिय थोवावसेसे जीविदव्वए त्ति उवसमसम्मत्तं घेत्तूण तदो वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय पढम-विदियछावट्ठीओ परिभमिय तदवसाणे समयाविरोहेण मिच्छत्तमुवणमिय एक्कतीसं सागरोवमिएसु देवेसुववण्णो तत्तो चुदो मणुस्सेसुप्पज्जिय अंतोमुहुत्तेण संकिलेसं पूरिय भुजगारसंकामओ जादो। तत्थ

कालका निर्देश किया है, क्योंकि इनका अभाव होनेके बाद पुनः इनका सत्त्व सम्भव नहीं है, इसलिए वहाँ इनका अवक्तव्यपद नहीं बन सकता। परन्तु अनुभागसंक्रमकी दृष्टिसे इनका ओघसे अवक्तव्यपद बन जाता है। तदनुसार मनुष्यत्रिकमें तो वह सम्भव है ही। यही कारण है कि यहाँ पर मनुष्यत्रिकमें इनके अवक्तव्यपदका काल अलगसे कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

*** आगे एक जीवकी अपेक्षा अन्तरको कहते हैं।**

§ ३८१. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है।

*** मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ३८२. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य अन्तर एक समय है।**

§ ३८३. यथा—भुजगारपदका संक्रम करनेवाला जीव अवस्थितपद द्वारा उसका एक समयके लिए अन्तर करके फिर भी दूसरे समयमें भुजगारपदका संक्रामक हो गया। इस प्रकार मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय उपलब्ध होता है।

*** उत्कृष्ट अन्तर साधिक एक सौ त्रेसठ सागर है।**

§ ३८४. यथा—भुजगारपदका संक्रमण करनेवाला जीव अवस्थितपदको प्राप्त कर तथा तिर्यञ्चों और मनुष्योंमें अन्तर्मुहूर्तकाल गमाकर तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ और अपनी स्थितिका पालनकर जीवनमें थोड़ा काल शेष रहनेपर उपशमसम्यक्त्वको ग्रहणकर अनन्तर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्तकर तथा पहले और दूसरे छ्यासठ सागर कालतक परिभ्रमण कर उसके अन्तमें आगममें जैसी विधि बतलाई है उसके अनुसार मिथ्यात्वको प्राप्तकर इकतीस सागरकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ। अनन्तर वहाँसे च्युत होकर और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तके द्वारा संक्लेशको पूरे तौरसे प्राप्त करके भुजगारपदका संक्रामक हो गया। इस प्रकार वहाँ पर यह उत्कृष्ट

लद्धमेदमुक्कस्संतरं वेअंतोमुहुत्ताहियतिपलिदोवमेहि सादिरेयतेवट्ठिसागरोवमसदमेत्तं ।

❀ अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३८५. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३८६. तं कथं ? दंसणमोहक्खवणाए मिच्छत्तस्स तिचरिमाणुभागखंडयचरिमफालिं पादिय तदणंतरमप्पयरसंकमं कादूणंतरिय पुणो दुचरिमाणुभागखंडयं घादिय अप्पयरभावमुवगयम्मि लद्धमंतरं होइ ।

❀ उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं ।

§ ३८७. कुदो ? अवट्ठिदसंकमकालस्स पहाणभावेणेत्थ विवक्खियत्तादो ।

❀ अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३८८. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ३८९. भुजगारेणप्पयरेण वा एयसमयमंतरिदस्स तदुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

अन्तर दो अन्तर्मुहूर्त और तीन पल्य अधिक एकसौ त्रेसठ सागर प्राप्त होता है ।

* अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ३८५. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३८६. शंका—यह कैसे ?

समाधान—क्योंकि जो दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें मिथ्यात्वके त्रिचरम अनुभागकाण्डककी अन्तिम फालिका पतनकर तथा उसके बाद अल्पतरसंक्रमको करनेके बाद उसका अन्तर करके पुनः द्विचरमानुभागकाण्डकका घात करके अल्पतरपदको प्राप्त हुआ है उसके मिथ्यात्वके अल्पतरपदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तर साधिक एकसौ त्रेसठ सागर है ।

§ ३८७. क्योंकि इसके अन्तररूपसे यहाँ पर अवस्थितसंक्रमका काल प्रधानरूपसे विवक्षित है ।

* अवस्थितसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ३८८. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर एक समय है ।

§ ३८९. क्योंकि भुजगार या अल्पतरपदके द्वारा एक समयके लिए अन्तरको प्राप्त हुए अवस्थितपदका उक्त अन्तरकाल उपलब्ध होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

३९०. कुदो ? भुजगारुक्कस्सकालेणंतरिदस्स तदुवलद्धीदो।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ?

§ ३९१. सुगमं।

❀ जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

§ ३९२. एत्थ जहण्णंतरे विवक्खिए सम्मत्तस्स चरिमाणुभागखंडयकालो घेत्तव्वो। सम्मामिच्छत्तस्स तिचरिमाणुभागखंडयपदणाणंतरमप्पदरं कादूणंतरिय दुचरिमाणुभागखंडए पादिदे लद्धमंतरं कायव्वं। दोण्हमुक्कस्संतरे इच्छिज्जमाणे पढमाणुभागखंडयघादाणंतरमप्पयरं कादूणंतरिय विदियाणुभागखंडए णिट्ठिदे लद्धमंतरं कायव्वं।

❀ अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३९३. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ३९४. अप्पयरसंकमेणेयसमयमंतरिदस्स तदुवलद्धीदो।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ३९५. पढमसम्मत्तमुप्पाइय मिच्छत्तं गंतूण सव्वलहुं उव्वेल्लणचरिमफालिं पादिय

---

§ ३९०. क्योंकि भुजगारपदके उत्कृष्ट कालके द्वारा अन्तरको प्राप्त हुए अवस्थितपदका उक्त अन्तरकाल उपलब्ध होता है।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ३९१. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ३९२. यहाँ पर जघन्य अन्तरकालके विवक्षित होनेपर सम्यक्त्वके अन्तिम अनुभागकाण्डकका काल लेना चाहिए। सम्यग्मिथ्यात्वके त्रिचरम अनुभागकाण्डकके पतनके बाद अल्पतर करके तथा उसका अन्तर करके द्विचरम अनुभागकाण्डकके पतन होने पर अन्तर प्राप्त करना चाहिए। तथा दोनों प्रकृतियोंके अल्पतरपदके उत्कृष्ट अन्तरको लानेकी इच्छा होनेपर प्रथम अनुभागकाण्डकका घात करनेके बाद अल्पतरपद तथा उसका अन्तर करके द्वितीय अनुभागकाण्डकके समाप्त होनेपर अन्तर प्राप्त करना चाहिए।

* अवस्थित संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ३९३. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तर एक समय है।

§ ३९४. क्योंकि अल्पतरपदके संक्रमद्वारा एक समयके लिए अन्तरको प्राप्त हुए अवस्थितपदका उक्त अन्तरकाल उपलब्ध होता है।

* उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

§ ३९५. क्योंकि प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके और पुनः मिथ्यात्वमें जाकर अति शीघ्र

अंतरिदस्स पुणो उवड्ढपोग्गलपरियट्टावसाणे सम्मत्तुप्पायणतदियसमयम्मि पयदंतरसमाणणोवलद्धीदो।

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?

§ ३९६. सुगमं।

❀ जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।

§ ३९७. तं कथं ? पढमसम्मत्तुप्पत्तिविदियसमए अवत्तव्वसंकमं कादूणावट्ठिदसंकमेणंतरिदस्स सव्वलहुमुव्वेल्लणाए णिस्संतीकरणाणंतरं पडिवण्णसम्मत्तस्स विदियसमए लद्धमंतरं होइ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ३९८. तं जहा—पढमसम्मत्तुप्पायणविदियसमए अवत्तव्वं कादूणंतरिय उवड्ढपोग्गलपरियट्टावसाणे गहिदसम्मत्तस्स विदियसमए लद्धमंतरं होइ।

❀ सेसाणं कम्माणं मिच्छत्तभंगो।

§ ३९९. एत्थ सेसग्गहणेण चारित्तमोहपयडीणं सव्वासिं संगहो कायव्वो। तेसिं मिच्छत्तभंगेण भुजगार-अप्पयरावट्ठिदसंकामयाणं जहण्णुक्कस्संतरपरूवणा कायव्वा, विसेसा-

---

उद्वेलनाकी अन्तिम फालिका पतन करके अन्तरको प्राप्त हुए अवस्थितपदके पुनः उपार्धपुद्गल परिवर्तनके अन्तमें सम्यक्त्वको उत्पन्न कर उसके तीसरे समयमें प्रकृत अन्तरकालकी समाप्ति देखी जाती है।

* अवक्तव्यसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

३९६. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ३९७. शंका—यह कैसे ?

समाधान—प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके दूसरे समयमें अवक्तव्यसंक्रमको करके तथा अवस्थि संक्रमके द्वारा जो अन्तरको प्राप्त हुआ है और अतिशीघ्र उद्वेलनाके द्वारा सम्यक्त्वप्रकृतिका अभाव करनेके बाद सम्यक्त्वको प्राप्त हुए उस जीवके दूसरे समयमें पुनः अवक्तव्यसंक्रम करने पर उसका उक्त अन्तरकाल प्राप्त होता है।

* उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

§ ३९८. यथा—प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेके दूसरे समयमें अवक्तव्यसंक्रमको करनेके बाद उसका अन्तर करके उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण कालके अन्तमें सम्यक्त्वको ग्रहण करनेके दूसरे समयमें पुनः अवक्तव्यसंक्रम करने पर उक्तप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त होता है।।

* शेष कर्मोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।

§ ३९९. यहाँ पर सूत्रमें शेष पदके ग्रहण करनेसे चारित्रमोहनीयसम्बन्धी सब प्रकृतियोंका संग्रह करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि उनके मिथ्यात्वके भङ्गके समान भुजगार, अल्पतर और

भावादो। णवरि सव्वेसिमवत्तव्वसंकामयंतरसंभवओ विसेसो अत्थि त्ति तदंतरपमाण-विणिण्णयट्ठमुत्तरसुत्तकलावमाह—

❀ णवरि अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?

§ ४०० सुगमं।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ ४०१. बारसक०—णवणोक० सव्वोवसामणादो परिवदिय अवत्तव्वसंकमं कादूणंतरिय पुणो वि सव्वलहुमुवसमसेढिमारुहिय सव्वोवसामणं काऊण परिवदमाणयस्स पढमसमयम्मि लद्धमंतरं होइ। अणंताणुबंधीणं विसंजोयणापुव्वसंजोगेणादिं कादूण पुणो वि अंतोमुहुत्तेण विसंजोजिय संजुत्तस्स लद्धमंतरं वत्तव्वं।

* उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ४०२. पुव्वविहाणेणादिं कादूणद्धपोग्गलपरियट्टं परिभमिय पुणो पडिवण्ण-तब्भावम्मि तदुवलद्धीदो। एवमवत्तव्वसंकामयंतरं गयं। विसेसमेदेसिं परूविय अणंताणुबंधि-गयमण्णं च विसेसजादं परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

अवस्थितपदका संक्रम करनेवाले जीवोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालकी प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि इस कथनमें परस्पर कोई विशेषता नहीं है। मात्र इन सब प्रकृतियोंके अवक्तव्यपदके संक्रामकोंके अन्तरकालमें कुछ विशेषता है, इसलिये उस अन्तरके प्रमाणका निर्णय करनेके लिए आगेका सूत्रकलाप कहते हैं—

* मात्र इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्यपदके संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४००. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४०१. क्योंकि जो जीव बारह कषाय और नौ नोकषायोंका सर्वोपशमनासे गिरते हुए अवक्तव्यसंक्रम करके तथा उसका अन्तर करके फिर भी अतिशीघ्र उपशमश्रेणि पर आरोहण करके और सर्वोपशामना करके गिरते हुए अपने अपने संक्रमके प्रथम समयमें अवक्तव्यपद करता है उसके इसके अवक्तव्यपदका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होता है। तथा अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना पूर्वक होनेवाले संयोगद्वारा अवक्तव्यपदके अन्तरका प्रारम्भ कराके फिर भी अन्तर्मुहूर्तमें विसंयोजनापूर्वक संयोजना करनेवालेके प्राप्त हुए अन्तरका कथन करना चाहिए।

* उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है।

§ ४०२. क्योंकि पूर्व विधिसे इनके अवक्तव्यपद पूर्वक अन्तरका प्रारम्भ करके और उपार्ध पुद्गल परिवर्तनकाल तक परिभ्रमण करके पुनः अवक्तव्यपदके प्राप्त होने पर उत्कृष्ट अन्तर उक्त प्रमाण प्राप्त होता है। इस प्रकार अवक्तव्यपदके संक्रामकोंके अन्तरका कथन किया। इस प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायसम्बन्धी विशेषताका कथन करके अब अनन्तानु-बन्धीसम्बन्धी अन्य विशेषताका कथन करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

❀ अणंताणुबंधीणमवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?

§ ४०३. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ४०४. एदं पि सुगमं ।

❀ उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ ४०५. सुगमं । एवमोघो समत्तो । आदेसेण सव्वगइमग्गणावयवेसु विहत्तिभंगो । णवरि मणुसतिए बारसक०—णवणोक० अवत्त० जह० अंतोमु०, उक० पुव्वकोडिपुधत्तं ।

❀ णाणाजीवेहि भंगविचओ ।

§ ४०६. सुगमं ।

* मिच्छत्तस्स सव्वे जीवा भुजगारसंकामया च अप्पयरसंकामया च अवट्ठिदसंकामया च ।

§ ४०७. मिच्छत्तभुजगारादिपदाणं तिण्हमेदेसिं संकामया णाणाजीवा णियमा अत्थि त्ति सुत्तत्थसंबंधो । कुदो वुण सव्वद्धमेदेसिमत्थित्तणियमो ? अणंतजीवरासिविसयत्तेण पडिवोच्छेदाभावादो ।

* अनन्तानुबन्धियोंके अवस्थितसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४०३. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर एक समय है ।

§ ४०४. यह सूत्र भी सुगम है ।

* उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।

§ ४०५. यह सूत्र सुगम है । इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई । आदेशसे सब गति सबन्धी अवान्तर भेदोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है ।

विशेषार्थ—कर्मभूमिके मनुष्यत्रिककी उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्वप्रमाण है । इसलिए इस कालके प्रारम्भमें और अन्तमें दो बार उपशमश्रेणि पर चढ़ाने और उतारनेसे बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यपदका मनुष्यत्रिकमें उत्कृष्ट अन्तर प्राप्त हो जाता है । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

* अब नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचयको कहते हैं ।

§ ४०६. यह सूत्र सुगम है ।

* मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रामक, अल्पतरसंक्रामक और अवस्थितसंक्रामक नाना जीव नियमसे हैं ।

§ ४०७. मिथ्यात्वके भुजगार आदि इन तीनों पदोंके संक्रामक नाना जीव नियमसे हैं ऐसा यहाँ पर सूत्रार्थका सम्बन्ध करना चाहिए ।

*** सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णव भंगा ।**

§ ४०८. कुदो ? तदवट्ठिदसंकामयाणं धुवत्तेण अप्पयरावत्तव्वयाणं भयणिज्जंतदंसणादो।

*** सेसाणं कम्माणं सव्वजीवा भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामया ।**

§ ४०९. कुदो ? तिण्हमेदेसिं पदाणं धुवभावित्तदंसणादो ।

*** सिया एदे च अवत्तव्वसंकामओ च, सिया एदे च अवत्तव्व-संकामया च ।**

§ ४१०. कुदो ? पुव्विल्लधुवपदेहिं सह कदाइमवत्तव्वसंकामयजीवाणमेगाणेगसंखा-विसेसिदाणमद्धुवभावेण संभवोवलंभादो । एवमोघेण भंगविचयो परूविदो । आदेसेण सव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

शंका—मिथ्यात्वके इन तीन पदवालोंके सर्वदा सद्भावका नियम कैसे है ?

समाधान—क्योंकि मिथ्यात्वके इन पदोंको करनेवाली अनन्त जीवराशि है, इसलिए उसका विच्छेद नहीं होता ।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके नौ भङ्ग हैं ।**

§ ४०८. क्योंकि इनके अवस्थितसंक्रामक ध्रुव होनेके साथ अल्पतर और अवक्तव्यपद भजनीय देखे जाते हैं ।

विशेषार्थ—यहाँ पर अवस्थितपदकी अपेक्षा प्रत्येक संयोगी एक भङ्ग, अवस्थितपदके साथ दो पदोंमेंसे अन्यतरके संयोगसे द्विसंयोगी चार भङ्ग और त्रिसंयोगी चार भङ्ग ऐसे कुल नौ भङ्ग ले आना चाहिए। मात्र सर्वत्र अवस्थित पदसे युक्त नाना जीव ध्रुव रखने चाहिए । तथा शेष पदोंके एक जीव और नाना जीवोंकी अपेक्षा प्रत्येकके दो दो भङ्ग मिलाना चाहिए ।

*** शेष कर्मोंके भुजगारसंक्रामक, अल्पतरसंक्रामक और अवस्थितसंक्रामक नाना जीव नियमसे हैं ।**

§ ४०९. क्योंकि ये तीनों पद ध्रुव देखे जाते हैं ।

*** कदाचित् इन तीनों पदोंके संक्रामक नाना जीव हैं और अवक्तव्यपदका संक्रामक एक जीव है । कदाचित् इन तीनों पदोंके संक्रामक नाना जीव हैं और अवक्तव्यपदके संक्रामक नाना जीव हैं ।**

§ ४१०. क्योंकि पहलेके ध्रुवपदोंके साथ कदाचित् एक और अनेक संख्याविशिष्ट अवक्तव्य संक्रामकोंका अध्रुवरूपसे सद्भाव उपलब्ध होता है । इस प्रकार ओघसे भंगविचयका कथन किया । आदेशसे सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है ।

विशेषार्थ—यहाँ पर आदेशसे यद्यपि सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना की है । फिर भी मनुष्यत्रिकमें ओघके समान ही जानना चाहिए । शेष कथन स्पष्ट है ।

§ ४११. भागाभाग-परिमाण-खेत्त-फोसणाणं च विहत्तिभंगो णायव्वो। णवरि सव्वत्थ बारसक०-णवणोक० अवत्त० पयडिभुजगारसंकमअवत्त०भंगो।

❀ णाणाजीवेहि कालो।

§ ४१२. अहियारसंभालणवयणमेदं सुगमं।

❀ मिच्छत्तस्स सव्वे संकामया सव्वद्धा।

§ ४१३. कुदो ? मिच्छत्तभुजगारादिपदसंकामयाणं तिसु वि कालेसु वोच्छेदाणुवलंभादो।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पयरसंकामया केवचिरं कालादो होंति ?

§ ४१४. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ४१५. कुदो ? दंसणमोहक्खवयणाणाजीवाणमेयसमयमणुभागखंडयघादणवसेणप्पयरभावेण परिणदाणं पयदजहण्णकालोवलंभादो।

❀ उक्कस्सेण संखेज्जा समया।

---

§ ४११. भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शनका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यपदका भङ्ग प्रकृतिभुजगार संक्रमके अवक्तव्यपदके समान जानना चाहिए।

विशेषार्थ—अनुभागविभक्ति अनुयोगद्वारमें इन अधिकारोंका जिसप्रकार कथन किया है, न्यूनाधिकतासे रहित उसी प्रकार यहाँ पर कथन करनेसे इनका अनुगम हो जाता है। मात्र वहाँ पर सत्कर्मकी अपेक्षा विवेचन किया है और यहाँ पर संक्रम पदपूर्वक वह विवेचन करना चाहिए। शेष कथन स्पष्ट ही है।

*** अब नाना जीवोंकी अपेक्षा कालको कहते हैं।**

§ ४१२. यह वचन अधिकारकी सम्हाल करनेके लिए आया है, जो सुगम है।

*** मिथ्यात्वके सब पदोंके संक्रामकोंका काल सर्वदा है।**

§ ४१३. क्योंकि मिथ्यात्वके भुजगार आदि पदोंके संक्रामकोंका तीनों ही कालोंमें विच्छेद नहीं पाया जाता।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रामकोंका कितना काल है ?**

§ ४१४. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य काल एक समय है।**

§ ४१५. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय अनुभागकाण्डकघातवश एक समयके लिए अल्पतरपदसे परिणत हुए नाना जीवोंके प्रकृत जघन्य काल उपलब्ध होता है।

*** उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।**

§ ४१६. तेसिं चेव संखेज्जवारमणुसंधिदपवाहाणमप्पयरकालस्स तप्पमाणत्तोवलंभादो।

❀ णवरि सम्मत्तस्स उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४१७. कुदो ? अणुसमयोवट्टणाकालस्स संखेज्जवारमणुसंधिदस्स गहणादो ।

❀ अवट्ठिदसंकामया सव्वद्धा ।

§ ४१८. सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमवट्ठिदसंकामयपवाहस्स सव्वकालमवोच्छिण्ण-सरूवेणावट्ठाणादो ।

❀ अवत्तव्वसंकामया केवचिरं कालादो होंति ?

§ ४१९. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ४२० संखेज्जाणमसंखेज्जाणं वा णिस्संतकम्मियजीवाणं सम्मत्तुप्पयणाए परिणदाणं विदियसमयम्मि पुव्वावरकोडिववच्छेदेण तदुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।

§ ४२१. तदुवक्कमणवाराणमेत्तियमेत्ताणं णिरंतरसरूवेणोवलंभादो ।

❀ अणंताणुबंधीणं भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामया सव्वद्धा ।

---

§ ४१६. क्योंकि संख्यातबार प्रवाहक्रमसे अनुसन्धानको प्राप्त हुए उन्हीं जीवोंके अल्पतर पदका काल तत्प्रमाण उपलब्ध होता है ।

* इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४१७. क्योंकि संख्यात बार अनुसन्धानको प्राप्त हुए प्रति समयसम्बन्धी अपवर्तनाकालका यहाँ पर ग्रहण किया है ।

* अवस्थितसंक्रामकोंका काल सर्वदा है ।

§ ४१८. क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवस्थितसंक्रामकोंका प्रवाह सर्वदा विच्छिन्न हुए विना अवस्थित रहता है ।

* अवक्तव्यसंक्रामकोंका कितना काल है ?

§ ४१९. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल एक समय है ।

§ ४२०. क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तासे रहित जो संख्यात या असंख्यात जीव सम्यक्त्वके उत्पन्न करनेमें परिणत हुए हैं उनके दूसरे समयमें अवक्तव्य संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय उस अवस्थामें पाया जाता है जब इससे एक समय पूर्व या एक समय बाद अन्य जीव सम्यक्त्वको उत्पन्न कर अवक्तव्यपदवाले न हों ।

* उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ४२१. क्योंकि सम्यक्त्वके अन्तर रहित उपक्रमवार इतने ही पाये जाते हैं ।

* अनन्तानुबन्धियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदोंके संक्रामकोंका काल सर्वदा है ।

§ ४२२. कुदो ? तिसु वि कालेसु वोच्छेदेण विणा एदेसिमवट्ठाणादो ।

❀ अवत्तव्वसंकामया केवचिरं कालादो होंति ?

§ ४२३. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ४२४. विसंजोयणापुव्वसंजोजयाणं केत्तियाणं पि जीवाणमेयसमयमवत्तव्वसंकमं कादूण विदियसमए अवत्थंतरगयाणमेयसमयमेत्तकालोवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो ।

§ ४२५. तदुवक्कमणवाराणमुक्कस्सेणेत्तियमेत्ताणमुवलंभादो ।

❀ एवं सेसाणं कम्माणं । णवरि अवत्तव्वसंकामयाणमुक्कस्सेण संखेज्जा समया ।

§ ४२६. सुगमं । एवमोघो समत्तो । आदेसेण सव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो । णवरि मणुसतिए बारसक०—णवणोक० अवत्त० ओघं ।

❀ एत्तो अंतरं ।

---

§ ४२२. क्योंकि तीनों ही कालोंमें विच्छेदके बिना इन पदोंके संक्रामकोंका अवस्थान पाया जाता है ।

*** अवक्तव्यसंक्रामकोंका कितना काल है ?**

§ ४२३. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य काल एक समय है ।**

§ ४२४. क्योंकि जो नाना जीव विसंयोजनापूर्वक संयोजना करके एक समयके लिए अवक्तव्यपदके संक्रामक होकर दूसरे समयमें दूसरी अवस्थाको प्राप्त हो जाते हैं उनके उक्त पदके संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय पाया जाता है ।

*** उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।**

§ ४२५. क्योंकि इनके उपक्रमणवार उत्कृष्टरूपसे इतने ही पाये जाते हैं ।

*** इसी प्रकार शेष कर्मोंका काल जानना चाहिए । मात्र इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्यसंक्रामकोंका उत्कृष्ट काल संख्यात समय है ।**

§ ४२६. यह सूत्र सुगम है । इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई । आदेशसे सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यत्रिकमें बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामकोंका काल ओघके समान है ।

विशेषार्थ—ओघसे बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामकोंका जो काल कहा है वह गतिमार्गणामें मनुष्यत्रिकमें ही घटित होता है, इसलिए यहाँ पर मनुष्यत्रिकमें यह भङ्ग ओघके समान जाननेकी सूचना की है । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

*** आगे नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरको कहते हैं ।**

§ ४२७. एत्तो उवरि णाणाजीवविसेसिदमंतरं परूवेमो त्ति पइण्णासुत्तमेदं ।

*** मिच्छत्तस्स णाणाजीवेहि भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामयाणं णत्थि अंतरं ।**

§ ४२८. कुदो ? सव्वद्धा त्ति कालणिद्देसेण णिरुद्धंतरपसरत्तादो ।

*** सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ?**

§ ४२९. सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

***जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण छम्मासा ।**

§ ४३०. कुदो ? दंसणमोहक्खवयाणं जहण्णुक्कस्सविरहकालस्स तप्पमाणत्तोवएसादो ।

*** अवट्ठिदसंकामयाणं णत्थि अंतरं ।**

§ ४३१. कुदो ? सव्वकालमेदेसिं वोच्छेदाभावादो ।

*** अवत्तव्वसंकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण चउवीस-महोरत्ते सादिरेगे ।**

§ ४३२. कुदो ? णिस्संतकम्मियमिच्छाइट्ठीणं मुवसमसम्मत्तग्गहणविरहकालस्स जहण्णुक्कस्सेण तप्पमाणत्तोवएसादो ।

---

§ ४२७. इससे आगे नाना जीवोंसे विशेषित करके अन्तरका कथन करते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है ।

*** नाना जीवोंकी अपेक्षा मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितपदके संक्रामकोंका अन्तरकाल नहीं है ।**

§ ४२८. क्योंकि मिथ्यात्वके इन पदोंके संक्रामक जीव सर्वदा पाये जाते हैं । इस प्रकार कालका निर्देश करनेसे इनके अन्तरका निषेध हो जाता है ।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ४२९. यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

*** जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर छह महीना है ।**

§ ४३०. क्योंकि दर्शनमोहनीयके क्षपकोंका जघन्य और उत्कृष्ट विरहकाल तत्प्रमाण उपलब्ध होता है ।

*** अवस्थितसंक्रामकोंका अन्तरकाल नहीं है ।**

§ ४३१. क्योंकि इनका सर्वदा विच्छेद नहीं होता ।

*** अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है ।**

§ ४३२. क्योंकि इनकी सत्तासे रहित मिथ्यादृष्टियोंके उपशमसम्यक्त्वका विरहकाल जघन्य और उत्कृष्टरूपसे उक्त कालप्रमाण पाया जाता है ।

❀ अणंताणुबंधीणं भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामयाणं णत्थि अंतरं ।

§ ४३३. कुदो ? तव्विसेसियजीवाणमाणंतियदंसणादो ।

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ ।

❀ उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेये ।

§ ४३४. सुगममेदं सुत्तद्दयं । अणंताणुबंधिविसंजोयणाणं च संजुत्ताणं पि पयदंतर-संसिद्धीए बाहाणुवलंभादो ।

❀ एवं सेसाणं कम्माणं ।

§ ४३५. अणंताणुबंधीणं व बारसकसाय-णवणोकसायाणं पि भुजगारादिपदाणमंतर-परिक्खा कायव्वा त्ति सुगममेदमप्पणासुत्तं । अवत्तव्वसंकामयंतरं गओ दु थोवयरो विसेसो अत्थि त्ति तण्णिण्णयकरणट्ठमिदमाह—

❀ णवरि अवत्तव्वसंकामयाणमंतरमुक्कस्सेण संखेज्जाणि वस्साणि ।

§ ४३६. कुदो ? वासपुधत्तमेत्तुक्कस्संतरेण विणा उवसमसेढिविसयाणमवत्तव्व-संकामयाणमेदेसिं संभवाणुवलंभादो । एवमोघो समत्तो । आदेसेण सव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो । णवरि मणुसतिए बारसक०—णवणोक० अवत्त०संकामयंतरमोघो त्ति वत्तव्वं ।

अनन्तानुबन्धियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित पदोंके संक्रामकोंका अन्तर-काल नहीं है ।

§ ४३३. क्योंकि अनन्तानुबन्धियोंके इन पदोंसे युक्त अनन्त जीव देखे जाते हैं ।

* अवक्तव्यपदके संक्रामकोंका जघन्य अन्तर एक समय है ।

* उत्कृष्ट अन्तर साधिक चौबीस दिन-रात है ।

§ ४३४. ये दोनों सूत्र सुगम हैं । तथा अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना करके संयुक्त होने-वाले जीवोंके प्रकृत अन्तरकी सिद्धिमें कोई बाधा नहीं आती ।

* इसी प्रकार शेष कर्मोंका अन्तरकाल जानना चाहिए ।

§ ४३५. अनन्तानुबन्धियोंके समान बारह कषाय और नौ नोकषायोंके भी भुजगार आदि पदोंके अन्तरकालकी परीक्षा करनी चाहिए इस प्रकार यह अर्पणासूत्र सुगम है । मात्र अवक्तव्य-संक्रामकोंके अन्तरमें थोड़ी सी विशेषता है, इसलिए उसके निर्णय करनेके लिए यह सूत्र कहते हैं—

* मात्र इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्यपदके संक्रामकोंका उत्कृष्ट अन्तर संख्यात वर्षप्रमाण है ।

§ ४३६. क्योंकि उपशमश्रेणिका उत्कृष्ट अन्तर वर्षपृथक्त्वप्रमाण है और उपशमश्रेणि हुए बिना इन कर्मोंके अवक्तव्यपदके संक्रामकोंका सद्भाव नहीं पाया जाता । इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई । आदेशसे सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्य-त्रिकमें बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यपदके संक्रामकोंका अन्तरकाल ओघके समान है ऐसा कहना चाहिए ।

§ ४३७. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

* अप्पाबहुअं ।

§ ४३८. भुजगारादिपदसंकामयाणं पमाणविसयणिण्णयसमुप्पायणट्ठमप्पाबहुअमिदाणिं कस्सामो त्ति अहियारसंभालणापरमिदं सुत्तं ।

* सव्वथोवा मिच्छत्तस्स अप्पयरसंकामया ।

§ ४३९ कुदो ? एयसमयसंचिदत्तादो ।

* भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ४४०. कुदो ? अंतोमुहुत्तमेत्तभुजगारकालब्भंतरसंभवग्गहणादो ।

* अवट्ठिदसंकामया संखेज्जगुणा ।

§ ४४१. कुदो ? भुजगारकालादो अवट्ठिदकालस्स संखेज्जगुणत्तादो ।

* सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अप्पयरसंकामया ।

§ ४४२. कुदो ? दंसणमोहक्खवयजीवाणमेव तदप्पयरभावेण परिणदाणमुवलंभादो ।

* अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ४४३. कुदो ? पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तणिस्संतकम्मियजीवाणमेयसमयम्मि सम्मत्तग्गहणसंभवादो ।

---

§ ४३७. भाव सर्वत्र औदयिक भाव है ।

* अब अल्पबहुत्वको कहते हैं ।

§ ४३८. भुजगार आदि पदोंके संक्रामकोंके प्रमाणविषयक निर्णयके उत्पन्न करनेके लिए इस समय अल्पबहुत्वको करते हैं इस प्रकार यह सूत्र अधिकारकी सम्हाल करता है ।

* मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं ।

§ ४३९. क्योंकि इनका संचयकाल एक समय है ।

* उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ४४०. क्योंकि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण भुजगारके भीतर भुजगारसंक्रामक जितने जीव संभव हैं उनका ग्रहण किया है ।

* उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ४४१. क्योंकि भुजगारपदके कालसे अवस्थितपदका काल संख्यातगुणा है ।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं ।

§ ४४२. क्योंकि जो दर्शनमोहकी क्षपणा करते हैं वे ही अल्पतरभावसे परिणत होते हुए उपलब्ध होते हैं ।

* उनसे अवक्तव्यसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ४४३. क्योंकि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तासे रहित पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंके एक समयमें सम्यक्त्वकी प्राप्ति सम्भव है ।

*** अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा ।**

§ ४४४. कुदो ? संकमपाओग्गतदुभयसंतकम्मियमिच्छाइट्ठि-सम्माइट्ठीणं सव्वेसिमेव ग्गहणादो ।

*** सेसाणं कम्माणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया ।**

§ ४४५. कुदो ? बारसकसाय-णवणोकसायाणमवत्तव्वसंकामयभावेण संखेज्जाणमुवसामय-जीवाणं परिणमणदंसणादो । अणंताणुबंधीणं पि पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तजीवाणं तब्भावेण परिणदाणमुवलंभादो ।

*** अप्पयरसंकामया अणंतगुणा ।**

§ ४४६. कुदो ? सव्वजीवाणमसंखेज्जभागपमाणत्तादो ।

*** भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा ।**

§ ४४७. गुणगारपमाणमेत्थ अंतोमुहुत्तमेत्तं संचयकालाणुसारेण साहेयव्वं ।

*** अवट्ठिदसंकामया संखेज्जगुणा ।**

§ ४४८. कुदो ? भुजगारकालादो अवट्ठिदकालस्स तावदिगुणत्तोवलंभादो ।

एवमोघो समत्तो ।

§ ४४९. आदेसेण मणुसेसु मिच्छ० सव्वत्थोवा अप्पयरसंकामया । भुजगारसंका०

*** उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।**

§ ४४४. क्योंकि जिनके संक्रमके योग्य उक्त दोनों कर्मोंकी सत्ता है ऐसे मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि सभीका यहाँ पर ग्रहण किया है ।

*** शेष कर्मोंके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं ।**

§ ४४५. क्योंकि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यपदके संक्रमभावसे परिणत हुए संख्यात उपशामक जीव देखे जाते हैं । तथा अनन्तानुबन्धियोंके भी अवक्तव्यसंक्रमसे परिणत हुए पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीव उपलब्ध होते हैं ।

*** उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं ।**

§ ४४६. क्योंकि ये सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं ।

*** उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।**

§ ४४७. यहाँ पर गुणाकारका प्रमाण अन्तर्मुहूर्त सञ्चयकालके अनुसार साध लेना चाहिए ।

*** उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।**

§ ४४८. क्योंकि भुजगारपदके कालसे अवस्थितपदका काल संख्यातगुणा पाया जाता है ।

इसप्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ४४९. आदेशसे मनुष्योंमें मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे

असंखेज्जगुणा । सोलसक०—णवणोक० सव्वत्थोवा अवत्त०संका० । अप्प०संका० असंखे०-गुणा । भुज०संका० असंखे०गुणा । अवट्ठि०संका० संखे०गुणा । सम्म०—सम्मामि० विहत्तिभंगो । एवं मणुसपज्ज०—मणुसिणीसु । णवरि संखेज्जगुणं कायव्वं । सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो ।

एवमप्पाबहुए समत्ते भुजगारसंकमो त्ति समत्तमणिओगद्दारं ।

❀ पदणिक्खेवे त्ति तिण्णि अणियोगद्दाराणि ।

§ ४५०. पदणिक्खेवो त्ति जो अहियारो जहण्णुक्कस्सवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणपदाणं परूवओ त्ति लद्धपदणिक्खेववएसो तस्सेदाणिमत्थपरूवणं कस्सामो। तत्थ य तिण्णि अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति । काणि ताणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि त्ति पुच्छावक्कमुत्तरं—

❀ तं जहा—

§ ४५१. सुगमं ।

❀ परूवणा सामित्तमप्पाबहुअं च ।

§ ४५२. एवमेदाणि तिण्णि चेवाणिओगद्दाराणि पदणिक्खेवविसयाणि; अण्णेसिं तत्थासंभवादो । एदेसु ताव परूवणाणुगमं वत्तइस्सामो त्ति सुत्तमाह—

भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव सख्यातगुणे हैं। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें अल्पबहुत्व है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातगुणेके स्थानमें संख्यातगुणा करना चाहिए। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर भुजगारसंक्रम अनुयोगद्वार समाप्त हुआ।

* पदनिक्षेपमें तीन अनुयोगद्वार होते हैं ।

§ ४५०. जघन्य और उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानपदोंका कथन करनेवाला होनेसे पदनिक्षेप इस संज्ञाको धारण करनेवाला पदनिक्षेप नामक जो अधिकार है उसकी इस समय अर्थ-प्ररूपणा करते हैं। उसमें तीन अनुयोगद्वार होते हैं। वे तीन अनुयोगद्वार कौन हैं इस प्रकारकी सूचना करनेवाले आगेके पृच्छावाक्यको कहते हैं—

* यथा ।

§ ४५१. यह सूत्र सुगम है ।

* प्ररूपणा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व ।

§ ४५२. इस प्रकार पदनिक्षेपको विषय करनेवाले ये तीन ही अनुयोगद्वार हैं, क्योंकि अन्य अनुयोगद्वार वहाँ पर असम्भव हैं। इनमेंसे सर्व प्रथम प्ररूपणानुगमको बतलाते हैं इस अभिप्रायसे सूत्र कहते हैं—

❀ परूवणाए सव्वेसिं कम्माणमत्थि उक्कस्सिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं।

❀ जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं।

§ ४५३. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि, एवं सव्वकम्मविसयत्तेण परूविद-जहण्णुक्कस्सवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणमविसेसेण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेसु वि अइप्पसंगे तत्थ वड्ढि-संकमाभावपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं वड्ढी णत्थि।

§ ४५४. कुदो ? तदुभयाणुभागस्स वड्ढिविरुद्धसहावत्तादो। तम्हा जहण्णुक्कस्सहाणि-अवट्ठाणाणि चेव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमत्थि त्ति सिद्धं। एवमोघेण परूवणा समत्ता। आदेसेण सव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो। संपहि सामित्तपरूवणट्ठमुवरिमो सुत्तपबंधो—

❀ सामित्तं।

§ ४५५. सुगममेदमहियारसंभालणवयणं। तं च सामित्तं दुविहं जहण्णुक्कस्सपदविसयभेएण। तस्सुक्कस्सपदविसयमेव ताव सामित्तणिद्देसं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ?

§ ४५६. सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

*** प्ररूपणाकी अपेक्षा सब कर्मोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान है।**

*** तथा सब कर्मोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान है।**

§ ४५३. ये दोनों सूत्र सुगम हैं। इस प्रकार सब कर्मोंके विषयरूपसे कहे गये जघन्य और उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानका सामान्यसे सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें भी अतिप्रसङ्ग होने पर वहाँ वृद्धिसंक्रमके अभावका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** मात्र इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी वृद्धि नहीं होती।**

§ ४५४. क्योंकि उन दोनोंका अनुभाग वृद्धिके विरुद्ध स्वभाववाला है। इसलिए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान तथा उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान ही होते हैं यह सिद्ध हुआ। इस प्रकार ओघसे प्ररूपणा समाप्त हुई। आदेशासे सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। अब स्वामित्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** अब स्वामित्वको कहते हैं।**

§ ४५५. अधिकारकी सम्भाल करनेवाला यह वचन सुगम है। जघन्य और उत्कृष्टपदोंको विषय करनेरूप भेदसे वह स्वामित्व दो प्रकारका है। उनमें से उत्कृष्ट पदविषयक स्वामित्वका ही सर्व प्रथम निर्देश करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी कौन है ?**

§ ४५६. यह पृच्छासूत्र सुगम है।

*** सण्णिपाओग्गजहण्णएण अणुभागसंकमेण अच्छिदो उक्कस्ससंकिलेसं गदो तदो उक्कस्सयमणुभागं पबद्धो तस्स आवलियादीदस्स उक्कस्सिया वड्ढी ।**

§ ४५७. एत्थ सण्णिपाओग्गजहण्णाणुभागसंकमविसेसणमेइंदियादिपाओग्गजहण्णाणुभागसंकमपडिसेहट्ठं । किमट्ठं तप्पडिसेहो कीरदे ? ण, तदवत्थापरिणामस्स उक्कस्साणुभागबंधविरोहित्तादो । उक्कस्ससंकिलेसं गदो त्ति णिद्देसेणाणुक्कस्ससंकिलेसपरिणामपडिसेहो कओ । किंफलो तप्पडिसेहो ? ण, उक्कस्ससंकिलेसेण विणा उक्कस्साणुभागबंधो ण होदि त्ति जाणावणफलत्तादो । एदस्सेव फुडीकरणट्ठमिदं वुच्चदे—तदो उक्कस्सयमणुभागं पबद्धो त्ति । तदो उक्कस्ससंकिलेसपरिणामादो उक्कस्साणुभागं पज्जवसाणाणुभागबंधट्ठाणं बंधिदुमाढत्तो त्ति वुत्तं होदि । उक्कस्साणुभागबंधपढमसमए चेव संकमपाओग्गभावो णत्थि, किं तु बंधावलियादीदस्स चेव होइ त्ति पदुप्पायणट्ठमिदमाह—तस्स आवलियादीदस्स उक्कस्सिया वड्ढि त्ति । एत्थ वड्ढिपमाणमसंखेज्जलोगमेत्ताणि छट्ठाणाणि अणंतरहेट्ठिमसमयतप्पाओग्गजहण्णचउट्ठाणाणुभागसंकमे उक्कस्साणुभागबंधम्मि सोहिदे सुद्धसेसम्मि तप्पमाणदंसणादो । एवमुक्कस्स-

---

* संज्ञियोंके योग्य जघन्य अनुभागसंक्रमके साथ स्थित हुआ जो जीव उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त होकर उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध करता है, बन्धसे एक आवलिके बाद वह उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है ।

§ ४५७. यहाँ पर सूत्रमें जो संज्ञियोंके योग्य जघन्य अनुभागसंक्रमरूप विशेषण दिया है वह एकेन्द्रियादि जीवोंके योग्य जघन्य अनुभागसंक्रमका निषेध करनेके लिए दिया है ।

शंका—उसका निषेध किसलिए करते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उस प्रकारकी अवस्थासे युक्त परिणाम उत्कृष्ट अनुभागबन्धका विरोधी है ।

सूत्रमें 'उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त हुआ' इस प्रकारके निर्देशद्वारा अनुत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामका निषेध किया ।

शंका—उसके निषेधका क्या फल है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उत्कृष्ट संक्लेशके विना उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध नहीं होता है इस बातका ज्ञान कराना उसका फल है ।

पुनः इसी बातके स्पष्ट करनेके लिए 'उससे उत्कृष्ट अनुभागका बन्ध किया' यह वचन कहा है । 'तदो' अर्थात् उत्कृष्ट संक्लेशरूप परिणामसे उत्कृष्ट अनुभागको अर्थात् अन्तिम अनुभागबन्धस्थानको बाँधनेके लिए प्रारम्भ किया यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उत्कृष्ट अनुभागबन्धके प्रथम समयमें ही संक्रमके योग्य कर्म नहीं होता । किन्तु बन्धावलिके व्यतीत होने पर ही वह संक्रमके योग्य होता है इस बातका कथन करनेके लिए 'एक आवलि व्यतीत होने के बाद उसकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है' यह वचन कहा है । यहाँ पर वृद्धिका प्रमाण असंख्यात लोकप्रमाण छह स्थान हैं, क्योंकि अनन्तर अधस्तन समयके तत्प्रायोग्य जघन्य चतुःस्थान अनुभागसंक्रमको उत्कृष्ट अनुभागबन्धमेंसे घटा देने पर शेष बचे हुए अनुभागमें असंख्यात लोकप्रमाण छह स्थान देखे जाते हैं । इस प्रकार

वड्ढीए सामित्तविणिण्णयं कादूण संपहि एत्थ उक्कस्सावट्ठाणस्स वि सामित्तविहाणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

॥ तस्स चेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं।

§ ५५८. जो उक्कस्सवड्ढीए सामित्तेण परिणदो तस्सेव तदणंतरसमए उक्कस्सयमवट्ठाणं दट्ठव्वं। कुदो ? तत्थुक्कस्सवड्ढिपमाणेण संकमट्ठाणावट्ठाणदंसणादो। संपहि उक्कस्सहाणिविसयसामित्तगवेसणट्ठमुत्तरसुत्तं—

॥ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

§ ४५६. सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

॥ जस्स उक्कस्सयमणुभागसंतकम्मं तेण उक्कस्सयमणुभागखंडयमागाइदं तम्मि खंडये घादिदे तस्स उक्कस्सिया हाणी।

§ ४६०. जस्स उक्कस्सयमणुभागसंतकम्मं जादं तेण विसोहिपरिणदेण सव्वुक्कस्सयमणुभागखंडयमागाइदं तदो तम्मि खंडये घादिज्जमाणे घादिदे तत्थुक्कस्सिया हाणी होइ, तत्थाणुभागसंतकम्मस्साणंताणं भागाणमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणावच्छिण्णाणमेक्कवारेण हाणिदंसणादो। संपहि किमेसा उक्कस्सिया हाणी उक्कस्सवड्ढिपमाणा, आहो ऊणा अहिया वा त्ति एवंविहसंदेहणिरायरणमुहेण अप्पाबहुअसाहणट्ठमेत्थ किंचि अत्थपरूवणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

उत्कृष्ट वृद्धिके स्वामित्वका निर्णय करके अब यहाँ पर उत्कृष्ट अवस्थानके भी स्वामित्वका विधान करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार हुआ है—

* तथा वही अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है।

§ ४५८. जो उत्कृष्ट वृद्धिका स्वामी है वही अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी जानना चाहिए, क्योंकि वहाँ पर उत्कृष्ट वृद्धिके प्रमाणसे संक्रमका अवस्थान देखा जाता है। अब उत्कृष्ट हानिविषयक स्वामित्वका विचार करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ?

§ ४५९. यह पृच्छासूत्र सुगम है।

* जिसके उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म है वह जब उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकको ग्रहण कर उस काण्डकका घात करता है तब वह उत्कृष्ट हानिका स्वामी है।

§ ४६०. जिसके उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म विद्यमान है, विशुद्धिसे परिणत हुए उसने सबसे उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकको ग्रहण किया। अनन्तर जब वह उस काण्डकका घात करते हुए पूरी तरहसे घात कर देता है तब उसके उत्कृष्ट हानि होती है, क्योंकि वहाँ पर अनुभागसत्कर्मके असंख्यातलोकप्रमाण छह स्थानोंसे युक्त अनन्त भागोंकी हानि देखी जाती है। अब यह उत्कृष्ट हानि क्या उत्कृष्ट वृद्धिके बराबर है अथवा उससे न्यून या अधिक है इस प्रकार इस तरहके सन्देहको दूर करनेके अभिप्रायसे अल्पबहुत्वकी सिद्धि करनेके लिए कुछ अर्थप्ररूपणाको करते हुए आगेकी सूत्रपरिपाटीका कथन करते हैं—

*** तप्पाओग्गजहण्णाणुभागसंकमादो उक्कस्ससंकिलेसं गंतूण जं बंधदि सो बंधो बहुगो।**

§ ४६१. कत्तो एदस्स बहुत्तं विवक्खियं ? उवरि भणिस्समाणाणुभागखंडयायामादो।

*** जमणुभागखंडयं गेण्हइ तं विसेसहीणं।**

§ ४६२. केत्तियमेत्तेण ? तदणंतिमभागमेत्तेण। कुदो ? वड्ढिदाणुभागस्स णिरवसेसघादणसत्तीए असंभवादो।

*** एदमप्पाबहुअस्स साहणं।**

§ ४६३. एदमणंतरपरूविदमुक्कस्सबंधवुड्ढीदो उक्कस्साणुभागखंडयविसेसहीणत्तमुवरि भणिस्समाणमप्पाबहुअस्स साहणं, अण्णहा तण्णिण्णयोवायाभावादो त्ति भणिदं होइ।

*** एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं।**

§ ४६४. जहा मिच्छत्तस्स तिण्हमुक्कस्सपदाणं सामित्तविणिण्णयो कओ एवमेदेसिं पि कम्माणं कायव्वो, विसेसाभावादो।

*** सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिया हाणी कस्स ?**

§ ४६५. सुगमं।

---

* तत्प्रायोग्य जघन्य अनुभागसंक्रमसे उत्कृष्ट संक्लेशको प्राप्त करके जिसका बन्ध करता है वह बन्ध बहुत है।

§ ४६१. शंका—किससे इसका बहुत्व विवक्षित है ?

समाधान—आगे कहे जानेवाले अनुभागकाण्डकके आयामसे इसका बहुत्व विवक्षित है।

* उससे जिस अनुभागकाण्डकको ग्रहण करता है वह विशेष हीन है।

§ ४६२. कितना हीन है ? उसका अनन्तवाँ भाग हीन है, क्योंकि वृद्धिको प्राप्त अनुभागका पूरी तरहसे घात करनेरूप शक्तिका होना असम्भव है।

* यह वक्ष्यमाण अल्पबहुत्वका साधक है।

§ ४६३ यह जो पहले उत्कृष्ट बन्धवृद्धिसे उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकविशेषकी हीनता कही है सो वह आगे कहे जानेवाले अल्पबहुत्वका साधक है, अन्यथा उनका निर्णय नहीं हो सकता यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी जानना चाहिए।

§ ४६४. जिस प्रकार मिथ्यात्वके तीन उत्कृष्ट पदोंके स्वामीका निर्णय किया उसी प्रकार इन कर्मोंके भी उक्त पदोंके स्वामीका निर्णय करना चाहिए, क्योंकि इनके स्वामित्वके निर्णय करनेमें अन्य कोई विशेषता नहीं है।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानिका स्वामी कौन है ?

§ ४६५. यह सूत्र सुगम है।

® दंसणमोहणीयक्खवयस्स विदियअणुभागखंडयपढमसमयसंकामयस्स तस्स उक्कस्सिया हाणी ।

§ ४६६. दंसणमोहक्खवणाए अपुव्वकरणपढमाणुभागखंडयं घादिय विदियाणुभागखंडए वट्टमाणस्स पढमसमए पयदकम्माणमुक्कस्सहाणी होइ, तत्थ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमणुभागसंतकम्मस्साणंताणं भागाणमेक्कवारेण हाणी होदूणाणंतिमभागे[1] समवट्ठाणदंसणादो ।

® तस्स चेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं ।

§ ४६७. तस्स चेव उक्कस्सहाणिसामियस्स तदणंतरसमए उक्कस्सयमवट्ठाणं होइ, वड्ढि-हाणीहि विणा तत्तियमेत्ते चेव तदवट्ठाणदंसणादो । एवमोघो समत्तो ।

§ ४६८. आदेसेण मणुसतिए ओघं । एवं णेरइयस्स । णवरि सम्मामि० उक्क० हाणी णत्थि । सम्मत्त० विहत्तिभंगो । एवं पढमपुढवि–तिरिक्ख–पंचिंदियतिरिक्खदुग–देवा सोहम्मादि जाव सहस्सार त्ति । विदियादि जाव सत्तमा त्ति एवं चेव । णवरि सम्मत्त० उक्क० हाणी णत्थि । एवं जोणिणि०–भवण०–वाण०–जोदिसिए त्ति । पंचिं०तिरिक्ख–

---

* जो दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाला जीव द्वितीय अनुभागकाण्डकका प्रथम समयमें संक्रमण कर रहा है वह उनकी उत्कृष्ट हानिका स्वामी है ।

§ ४६६. दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें अपूर्वकरण परिणामोंके द्वारा प्रथम अनुभागकाण्डकका घातकर जो दूसरे अनुभागकाण्डकमें विद्यमान है अर्थात् जिसने दूसरे अनुभागकाण्डकके घातका प्रारम्भ किया है वह उसके प्रथम समयमें प्रकृत कर्मोंकी उत्कृष्ट हानिका स्वामी है, क्योंकि वहाँ पर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनुभागसत्कर्मके अनन्त बहुभागोंकी एकवारमें हानि होकर अनन्तवें भागप्रमाण अनुभागमें अवस्थान देखा जाता है ।

* तथा वही जीव अनन्तर समयमें उनके उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी है ।

§ ४६७. जो उत्कृष्ट हानिका स्वामी है उसीके अनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है, क्योंकि वृद्धि और हानिके बिना उतनेमें ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके संक्रामकोंका अवस्थान देखा जाता है ।

इस प्रकार ओघ प्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ४६८. आदेशसे मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग हैं । इसी प्रकार नारकियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि नहीं है । तथा सम्यक्त्वका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है । इसी प्रकार पहिली पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चद्विक, सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि नहीं है । इसी प्रकार योनिनी तिर्यञ्च, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिये । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनतादि

---

१ ता०प्रतौ '–वारेण हो (हा) दूणाणंतिमभागे' आ०प्रतौ '–वारेण होइदूणाणंतिमभागे' इति पाठः ।

अपज्ज०–मणुसअपज्ज०–आणदादि सव्वट्ठा त्ति विहत्तिभंगो। एवं जाव०।

एवमुक्कस्ससामित्तं समत्तं।

§ ४६९. संपहि जहण्णसामित्तविहासणट्ठमुवरिमो सुत्तसंदब्भो—

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी कस्स ?

§ ४७० सुगमं।

❀ सुहुमेइंदियकम्मेण जहण्णएण जो अणंतभागेण वड्डिदो तस्स जहण्णिया वड्ढी।

§ ४७१. जो जीवो सुहुमेइंदियकम्मेण जहण्णएण अच्छिदो संतो परिणामपच्चएणाणंतभागेण वड्डिदो तस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति सुत्तत्थसब्भावो।

कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकको छोड़कर अन्यत्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ नहीं होता, इसलिए सामान्य नारकी, प्रथम पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यञ्चद्विक, सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानिका निषेध किया है। किन्तु इन मार्गणाओंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि उत्पन्न होता है और उसके सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट हानि भी देखी जाती है। फिर भी वह ओघके समान सम्भव न होनेसे उसे अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना की है। दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकी, योनिनी तिर्यञ्च, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि नहीं उत्पन्न होता, इसलिए इनमें सम्यग्मिथ्यात्वके समान सम्यक्त्वके जाननेकी सूचना की है। वहां सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सिवा अन्य सब प्रकृतियोंका भङ्ग ओघके समान है यह स्पष्ट ही है। अब रहीं पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और आनत कल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देव ये मार्गणाएँ सो इनमें अनुभागविभक्तिमें जिस प्रकार स्वामित्वका निर्देश किया है उसी प्रकार यहाँ स्वामित्वके प्राप्त होनेमें कोई बाधा नहीं आती, इसलिए इनमें अनुभागविभक्तिके समान स्वामित्वके जाननेकी सूचना की है। शेष कथन सुगम है।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ।

§ ४६९. अब जघन्य स्वामित्वका व्याख्यान करनेके लिए आगेके सूत्रसंदर्भको प्रकाशमें लाते हैं—

*** मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ?**

§ ४७०. यह सूत्र सुगम है।

*** जो जीव सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य कर्मके साथ उसमें अनन्तभागवृद्धि करता है वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है।**

§ ४७१. जो जीव सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ स्थित होता हुआ परिणामवश अनन्तभागवृद्धिको प्राप्त हुआ उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है इस प्रकार सूत्रार्थका सद्भाव है।

❀ जहण्णिया हाणी कस्स ?

§ ४७२. सुगमं।

❀ जो वड्ढाविदो तम्मि घादिदे तस्स जहण्णिया हाणी।

§ ४७३. सुहुमणिगोदजहण्णाणुभागसंकमादो जो वड्ढाविदो अणुभागो सव्वजीवरासिपडिभागिओ तम्मि चेव विसोहिपरिणामवसेण घादिदे तस्स जहण्णिया हाणी होइ, जहण्णवड्ढिविसईकयाणुभागस्सेव तत्थ हाणिसरूवेण परिणामदंसणादो। ण चाणंतिमभागस्स खंडयघादो णत्थि त्ति पच्चवट्ठेयं, संसारावत्थाए छव्विहाए हाणीए खंडयघादस्स पवुत्तिअब्भुवगमादो। तस्स च णिबंधणमेदं चेव सुत्तमिदि ण किंचि विप्पडिसिद्धं।

❀ एगदरत्थमवट्ठाणं।

§ ४७४. कुदो ? जहण्णवड्ढि-हाणीणमण्णदरस्स से काले अवट्ठाणसिद्धीए पवाहाणुवलंभादो ?

❀ एवमट्ठकसायाणं।

§ ४७५. सुगममेदमप्पणासुत्तं, मिच्छत्तादो सामित्तभेदाभावमेदेसिमवलंबिय पयट्टत्तादो।

---

* जघन्य हानिका स्वामी कौन है ?

§ ४७२. यह सूत्र सुगम है।

* अनन्तवृद्धिरूप जो अनुभाग बढ़ाया गया उसका घात करने पर वह जघन्य हानिका स्वामी है।

§ ४७३. सूक्ष्म निगोदके जघन्य अनुभागसंक्रमसे सब जीव राशिका भाग देकर जो अनुभाग बढ़ाया गया उसका ही विशुद्ध परिणामवश घात करने पर उसके जघन्य हानि होती है, क्योंकि जघन्य वृद्धिके विषयभावको प्राप्त हुए अनुभागका ही वहाँ पर हानिरूपसे परिणमन देखा जाता है। अनन्तवें भागका काण्डकघात नहीं होता ऐसा निश्चय करना ठीक नहीं, क्योंकि संसार अवस्थामें छह प्रकारकी हानिरूपसे काण्डकघातकी प्रवृत्ति स्वीकार की गई है। और इस बातके ज्ञानका कारण यही सूत्र है, इसलिए कुछ भी विप्रतिपत्ति नहीं है।

* तथा इनमेंसे किसी एक स्थान पर अनन्तर समयमें वह जघन्य अवस्थानका स्वामी है।

§ ४७४. क्योंकि जघन्य वृद्धि और जघन्य हानि इनमेंसे किसीका अनन्तर समयमें अवस्थानरूप प्रवाह उपलब्ध होता है।

* इसी प्रकार आठ कषायोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानका स्वामी जानना चाहिए।

§ ४७५. यह अर्पणासूत्र सुगम है, क्योंकि मिथ्यात्वसे इनके स्वामियोंमें भेद नहीं है इस तथ्यका अवलम्बन कर इस सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है।

* सम्मत्तस्स जहण्णिया हाणी कस्स ?

§ ४७६. सुगममेदं पुच्छासुत्तं ।

* दंसणमोहणीयक्खवयस्स समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीयस्स तस्स जहण्णिया हाणी ।

§ ४७७. कुदो ? तत्थाणुसमयोवट्टणावसेण सुट्ठु थोवीभूदाणुभागसंतकम्मादो तक्काले थोवयराणुभागसंकमहाणिदंसणादो ।

* जहण्णयमवट्ठाणं कस्स ?

§ ४७८. सुगमं ।

* तस्स चेव दुचरिमे अणुभागखंडए हदे चरिमअणुभागखंडए वट्टमाणक्खवयस्स ।

§ ४७९. तस्स चेव दंसणमोहक्खवयस्स दुचरिमाणुभागखंडयं घादिय तदणंतरसमयतप्पाओग्गजहण्णहाणीए परिणदस्स चरिमाणुभागखंडयविदियसमयप्पहुडि जावंतोमुहुत्तं जहण्णावट्ठाणसंकमो होइ, तत्थ पयारंतरासंभवादो ।

* सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णिया हाणी कस्स ?

§ ४८०. सुगमं ।

---

* सम्यक्त्वकी जघन्य हानिका स्वामी कौन है ।

§ ४७६. यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

* दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके जब उसकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहता है तब वह सम्यक्त्वकी जघन्य हानिका स्वामी है ।

§ ४७७. क्योंकि वहाँ पर प्रत्येक समयमें होनेवाली अपवर्तनाके कारण अत्यन्त थोड़े अनुभाग सत्कर्ममें उस समय स्तोकतर अनुभागकी संक्रम हानि देखी जाती है ।

* इसके जघन्य अवस्थानका स्वामी कौन है ?

§ ४७८. यह सूत्र सुगम है ।

* जब वही क्षपक द्विचरम अनुभागकाण्डकका घात होनेके बाद चरम अनुभागकाण्डकमें अवस्थित रहता है तब वही दर्शनमोहनीयका क्षपक जीव उसके जघन्य अवस्थानका स्वामी है ।

§ ४७९. द्विचरम अनुभागकाण्डकका घातकर अनन्तर समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य हानिरूपसे परिणत हुए उसी दर्शनमोहनीयके क्षपक जीवके अन्तिम अनुभागकाण्डकके दूसरे समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक जघन्य अवस्थानसंक्रम होता है, क्योंकि वहाँ पर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है ।

* सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानिका स्वामी कौन है ?

§ ४८०. यह सूत्र सुगम है ।

❀ दंसणमोहणीयक्खवयस्स दुचरिमे अणुभागखंडए हदे तस्स जहण्णिया हाणी।

§ ४८१. कुदो ? दुचरिमाणुभागखंडयसंकमादो अणंतगुणहाणीए हाइदूण चरिमाणुभागखंडयसरूवेण परिणदस्स पढमसमए जहण्णभावसिद्धीए बाहाणुवलंभादो।

❀ तस्स चेव से काले जहण्णयमवट्ठाणं।

§ ४८२. तस्स चेव जहण्णहाणिसंकमसामियस्स से काले जहण्णयमवट्ठाणं होइ, तत्थ जहण्णहाणिपमाणेणेव संकमावट्ठाणदंसणादो।

❀ अणंताणुबंधीणं जहण्णिया वड्ढी कस्स ?

§ ४८३. सुगमं।

❀ विसंजोएदूण पुणो मिच्छत्तं गंतूण तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेण विदियसमए तप्पाओग्गजहण्णाणुभागं बंधिऊण आवलियादीदस्स तस्स जहण्णिया वड्ढी।

§ ४८४. एदस्स सुत्तस्स अत्थो। तं जहा—अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोएदूण पुणो तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेण मिच्छत्तं गंतूण विदियसमए वि तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेण परिणदो संतो जो तप्पाओग्गजहण्णाणुभागं बंधिऊणावलियादीदो तस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति

*** जो दर्शनमोहनीयका क्षपक जीव सम्यग्मिथ्यात्वके द्विचरम अनुभागकाण्डकका घात कर चुकता है वह उसकी जघन्य हानिका स्वामी है।**

§ ४८१. क्योंकि द्विचरम अनुभागकाण्डकसंक्रमसे अनन्तगुणहानिद्वारा अन्तिम अनुभागकाण्डकरूपसे परिणत हुए जीवके प्रथम समयमें जघन्यभावकी सिद्धि होनेमें कोई बाधा नहीं उपलब्ध होती।

*** तथा वही अनन्तर समयमें जघन्य अवस्थानका स्वामी है।**

§ ४८२. जो जघन्य हानिसंक्रमका स्वामी है उसीके अनन्तर समयमें जघन्य अवस्थान होता है, क्योंकि वहाँ पर जघन्य हानिके प्रमाणरूपसे ही संक्रमका अवस्थान देखा जाता है।

*** अनन्तानुबन्धियोंकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ?**

§ ४८३. यह सूत्र सुगम है।

*** जो विसंयोजना करके पुनः मिथ्यात्वमें जाकर तत्प्रायोग्य विशुद्ध परिणामसे दूसरे समयमें तत्प्रायोग्य जघन्य अनुभागका बन्ध कर एक आवलि काल व्यतीत करता है वह उनकी जघन्य वृद्धिका स्वामी है।**

§ ४८४. इस सूत्रका अर्थ, यथा—अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके पुनः तत्प्रायोग्य विशुद्ध परिणामके साथ मिथ्यात्वमें जाकर दूसरे समयमें भी तत्प्रायोग्य विशुद्ध परिणामसे परिणत होकर जिसने तत्प्रायोग्य जघन्य अनुभागका बन्ध कर एक आवलि काल व्यतीत किया है उसके प्रकृत

सुत्तत्थसंबंधो । एत्थ तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेणे त्ति णिद्देसो पढमसमयजहण्णाणुभागबंधादो विदियसमए जहण्णवुड्ढिसंगहणट्ठो । एत्थ पढमसमयजहण्णबंधादो विदियसमयतप्पाओग्गजहण्णाणुभागबंधो कदमाए वड्ढीए वड्ढिदो ? अणंतगुणवड्ढीए । कुदो एवं चेव ? संजुत्तपढमसमयप्पहुडि जाव अंतोमुहुत्तं ताव अणंतगुणवड्ढीए संकिलेसवड्ढि त्ति परमाइरिओवएसादो । एवं वुत्तविहाणेण विदियसमए वड्ढिदूण तत्तो आवलियादीदस्स तस्स जहण्णिया वड्ढी, अइच्छाविदबंधावलियस्स णवकबंधस्स संकमपाओग्गभावाणुववत्तीदो । एत्थ मिच्छत्तस्सेव सुहुमहदसमुप्पत्तियकम्मादो अणंतभागवड्ढीए वड्ढिदस्स जहण्णसामित्तं कायव्वमिदि णासंका कायव्वा, णवकबंधसरूवादो एदम्हादो तस्साणंतगुणत्तेण तहा कादुमसक्कियत्तादो । णाणंतगुणत्तमसिद्धं, उवरिमसुत्तबलेण सिद्धसरूवत्तादो ।

*** जहण्णिया हाणी कस्स ?**

§ ४८५. सुगमं ।

*** विसंजोएऊण पुणो मिच्छत्तं गंतूण अंतोमुहुत्तसंजुत्ते वि तस्स सुहुमस्स हेट्ठदो संतकम्मं ।**

जघन्य स्वामित्व होता है। इस प्रकार यह सूत्रार्थका सम्बन्ध है। यहाँ पर सूत्रमें 'तप्पाओग्गविसुद्धिपरिणामेण' यह निर्देश प्रथम समयमें होनेवाले जघन्य अनुभागबन्धसे दूसरे समयमें होनेवाली जघन्य वृद्धिके संग्रहके लिए दिया है।

शंका—यहाँ पर प्रथम समयके जघन्य बन्धसे दूसरे समयका तत्प्रायोग्य जघन्य अनुभागबन्ध कौनसी वृद्धिके द्वारा वृद्धिको प्राप्त हुआ है ?

समाधान—अनन्तगुणवृद्धिके द्वारा वृद्धिको प्राप्त हुआ है।

शंका—ऐसा किस कारणसे है ?

समाधान—क्योंकि संयुक्त होनेके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त कालतक अनन्तगुणवृद्धिरूपसे संक्लेशकी वृद्धि होती है ऐसा परम आचार्योंका उपदेश है।

इस प्रकार उक्त विधिसे दूसरे समयमें वृद्धि करके वहाँसे एक आवलिके बाद स्थित हुए जीवके जघन्य वृद्धि होती है, क्योंकि अतिस्थापनारूपसे स्थापित बन्धावलि कालके भीतर नवकबन्ध संक्रमके योग्य नहीं होता। यहाँ पर मिथ्यात्व कर्मके समान सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिककर्मसे जिसका अनन्तानुबन्धीचतुष्क अनन्तभागवृद्धिके द्वारा वृद्धिगत हुआ है उसके जघन्य स्वामित्व करना चाहिए ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि नवकबन्धरूप इससे वह अनन्तगुणा है, इसलिए वैसा करना अशक्य है। वह अनन्तगुणा है यह बात असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि उपरिम सूत्रके बलसे सिद्ध ही है।

*** उनकी जघन्य हानिका स्वामी कौन है ?**

§ ४८५. यह सूत्र सुगम है।

*** विसंयोजना करके तथा पुनः मिथ्यात्वमें जाकर संयुक्त होनेके बाद अन्तर्मुहूर्त काल होने पर भी जिसके उक्त प्रकृतियोंका सत्कर्म सूक्ष्म एकेन्द्रियके सत्कर्मसे कम है।**

§ ४८६. पयदजहण्णसामित्तसाहणट्ठमिदं ताव पुव्वमेव णिद्दिट्ठमट्ठपदं विसंजोयणा-पुव्वसंजोगविसयणवकबंधाणुभागस्स अंतोमुहुत्तकालभावियस्स सुहुमाणुभागादो अणंतगुण-हीणत्तपदुप्पायणपरत्तादो । ण च तत्तो एदस्साणंतगुणहीणत्ताभावे तप्परिहारेणेत्थ सामित्त-विहाणं जुत्तं, तहा संते तत्थेव सामित्तविहाणे लाहदंसणादो । एदेण पुव्विल्लं पि जहण्ण-वड्ढिसामित्तं समत्थियं दट्ठव्वं, एयंताणुवड्ढिचरिमाणुभागादो अणंतगुणहीणस्स तस्स सुहुमाणुभागदो हेट्ठदो समवट्ठाणे विसंवादाणुवलंभादो । एवमेदं सामित्तसाहणमट्ठपदं परूविय संपहि एत्थ जहण्णहाणिसंभवक्कमपदंसणट्ठमिदमाह—

*** तदो जो अंतोमुहुत्तसंजुत्तो जाव सुहुमकम्मं जहण्णयं ण पावदि ताव घादं करेज्ज ।**

§ ४८७. जदो एवं तदो जो अंतोमुहुत्तसंजुत्तो जीवो सो जाव सुहुमकम्मं जहण्णं ण पावइ ताव संकिलेसादो विसोहिं गंतूणाणुभागखंडयघादं सिया करेज्ज, संते संभवे सकारणसामग्गीवसेण तप्पवुत्तीए [1]पडिबंधाभावादो। एदेण सुहुमाणुभागसंतकम्ममवोलीणस्स खंडयघादासंभवासंका पडिसिद्धा दट्ठव्वा । तत्तो हेट्ठा चेव एयंताणुवड्ढिकालस्स परिच्छेद-

§ ४८६. प्रकृत जघन्य स्वामित्वकी सिद्धिके लिए पहले ही इस अर्थपदका निर्देश किया है, क्योंकि यह वचन विसंयोजनापूर्वक पुनः संयुक्त होनेपर अन्तर्मुहूर्तकाल तक होनेवाले नवकबन्धसम्बन्धी अनुभागके सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी अनुभागसे अनन्तगुणी हीनताके कथन करनेमें तत्पर है । यदि कहा जाय कि उससे यह अनन्तगुणा हीन नहीं है, इसलिए उसके परिहार द्वारा यहीं पर स्वामित्वका विधान करना युक्त है सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि वैसी अवस्थामें वहीं पर स्वामित्व का विधान करनेमें लाभ देखा जाता है । इस वचन द्वारा पूर्वोक्त जघन्य वृद्धिके स्वामित्वको भी समर्थित जान लेना चाहिए, क्योंकि वह एकान्तानुवृद्धिके अन्तिम अनुभागसे अनन्तगुणा हीन है, इसलिए उसके सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी अनुभागसे कम होकर अवस्थित रहनेमें कोई विसंवाद नहीं पाया जाता । इस प्रकार स्वामित्वका साधन करनेवाले इस अर्थपदका कथन करके अब यहाँ पर जघन्य हानिके सम्भव क्रमको दिखलानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** तदनन्तर अन्तर्मुहूर्त कालतक संयुक्त हुआ जो जीव जबतक जघन्य सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी कर्मको नहीं प्राप्त करता है तब तक घात करता है ।**

§ ४८७. यतः ऐसा है अतः अन्तर्मुहूर्त कालतक संयुक्त हुआ जो जीव है वह जबतक जघन्य सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बधी कर्मको नहीं प्राप्त करता है तब तक संक्लेशसे विशुद्धिको प्राप्त करके कदाचित् अनुभागकाण्डकघात करता है, क्योंकि सम्भव होने पर अपनी कारणसामग्रीके कारण उसकी उत्पत्ति होनेमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है । इससे जिसका सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी अनुभाग-सत्कर्म अभी गत नहीं हुआ है ऐसे उस जीवके काण्डकघात असम्भव है ऐसी आशंकाका निषेध जान लेना चाहिए, क्योंकि उससे नीचे ही एकान्तानुवृद्धिके कालका सद्भाव स्वीकार किया गया

१. ता०प्रतौ प [य] डि, आ०प्रतौ पयडि इति पाठः ।

ब्भुवगमादो। एवं च संभवो होइ त्ति कयणिच्छयो पयदजहण्णसामित्तविहाणमेत्थेव जुत्तं पेच्छमाणो तण्णिद्धारणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ तदो सव्वत्थोवाणुभागे घादिज्जमाणे घादिदे तस्स जहण्णिया हाणी।

§ ४८८. जदो एस संभवो तदो तस्स अंतोमुहुत्तसंजुत्तमिच्छाइट्ठिस्स सत्थाणविसोहि-णिबंधणखंडयघादपरिणदस्स जहण्णिया हाणी दट्ठव्वा त्ति सुत्तत्थसंबंधो। एत्थ सव्वत्थोवाणुभागे घादिज्जमाणे घादिदे त्ति वुत्ते छव्विहाए हाणीए वि खंडयघादसंभवे जहण्णसामित्ताविरोहेणाणंतभागहाणीए खंडयघादेण परिणदो त्ति घेत्तव्वं।

❀ तस्सेव से काले जहण्णयमवट्ठाणं।

§ ४८९. तस्यैवानंतरनिर्दिष्टहानिसंक्रमस्वामिनः तदनंतरसमये जघन्यकमवस्थान-मिति यावत्।

❀ कोहसंजलणस्स जहण्णिया वड्ढी मिच्छत्तभंगो।

§ ४९०. ण एत्थ किंचि वोत्तव्वमत्थि, मिच्छत्तजहण्णवड्ढिसामित्तसुत्तेणेव गयत्थादो।

❀ जहण्णिया हाणी कस्स ?

§ ४९१. सुगमं।

है। ऐसा सम्भव है ऐसा निश्चय करनेके बाद प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान यहीं पर युक्त है ऐसा समझते हुए उसका निर्धारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** अनन्तर सबसे स्तोक घाते जानेवाले अनुभागके घातित होने पर वह जघन्य हानिका स्वामी है।**

§ ४८८. यतः ऐसा सम्भव है अतः अन्तर्मुहूर्त काल तक संयुक्त हुए तथा स्वस्थान विशुद्धि निमित्तक काण्डकघातरूपसे परिणत हुए उस मिथ्यादृष्टि जीवके जघन्य हानि जाननी चाहिए इस प्रकार सूत्रार्थका सम्बन्ध है। यहाँ पर सूत्रमें 'सव्वत्थोवाणुभागे घादिज्जमाणे घादिदे' ऐसा कहने पर यद्यपि छह प्रकारकी हानि द्वारा काण्डकघात सम्भव है तो भी जघन्य स्वामित्वकी अविरोधिनी अनन्तभागहानिके द्वारा होनेवाले काण्डकघातरूपसे परिणत हुआ ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

*** तथा वही अनन्तर समयमें जघन्य अवस्थानका स्वामी है।**

§ ४८९. जो अनन्तर हानिसंक्रमका स्वामी कह आये हैं उसीके तदनन्तर समयमें जघन्य अवस्थान होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** क्रोधसंज्वलनकी जघन्य वृद्धिके स्वामीका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।**

§ ४९०. यहाँ पर कुछ वक्तव्य नहीं है, क्योंकि मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धिके स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रसे ही यह सूत्र गतार्थ हो जाता है।

*** उसकी जघन्य हानिका स्वामी कौन है ?**

§ ४९१. यह सूत्र सुगम है।

*** खवयस्स चरिमसमयबंधचरिमसमयसंकामयस्स ।**

§ ४६२. एत्थ चरिमसमयबंधो त्ति वुत्ते कोहतदियसंगहकिट्टिवेदयचरिमसमयबद्ध-णवकबंधाणुभागो घेत्तव्वो । तस्स चरिमसमयसंकामओ णाम माणवेदगद्धाए दुसमऊण-दोआवलियचरिमसमए वट्टमाणो त्ति गहेयव्वं । तस्स कोधसंजलणाणुभागसंकमणिबंधणा जहण्णिया हाणी होइ ।

*** जहण्णयमवट्ठाणं कस्स ?**

§ ४६३. सुगमं ।

*** तस्सेव चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणयस्स ।**

§ ४६४. तस्सेव खवयस्स जहण्णयमवट्ठाणं होइ त्ति सामित्तसंबंधो कायव्वो । कदमाए अवत्थाए वट्टमाणस्स तस्स सामित्ताहिसंबंधो ? चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणयस्स । चरिमाणुभागखंडयं णाम किट्टिकारयचरिमावत्थाए घेत्तव्वं, उवरिमणुसमयोवट्टणाविसए खंडयघादासंभवादो । तदो दुचरिमाणुभागखंडयं घादिय चरिमाणुभागखंडयपढमसमए तप्पाओग्गहाणीए परिणदस्स विदियसमए पयदजहण्णसामित्तं दट्ठव्वं ।

---

* अन्तिम समयमें हुए बन्धका अन्तिम समयमें संक्रम करनेवाला क्षपक जीव उसकी जघन्य हानिका स्वामी है ।

§ ४६२. यहाँ पर सूत्रमें 'अन्तिम समयमें हुआ बन्ध' ऐसा कहने पर उससे क्रोधकी तीसरी संग्रहकृष्टिका वेदन करनेवालेके अन्तिम समयमें बँधे हुए नवकबन्धका अनुभाग लेना चाहिए। उसका अन्तिम समयमें संक्रमण करनेवाला ऐसा कहनेसे मानवेदक कालके दो समय कम दो आवलिके अन्तिम समयमें विद्यमान जीव लेना चाहिए। उसके क्रोधसंज्वलनके अनुभागसंक्रम-सम्बन्धी जघन्य हानि होती है ।

* जघन्य अवस्थानका स्वामी कौन है ?

§ ४६३. यह सूत्र सुगम है ।

* अन्तिम अनुभागकाण्डकमें विद्यमान वही जीव जघन्य अवस्थानका स्वामी है ।

§ ४६४. वही क्षपक जघन्य अवस्थानका स्वामी है इस प्रकार स्वामित्वका सम्बन्ध करना चाहिए ।

शंका—किस अवस्थामें विद्यमान हुए उसके स्वामित्वका सम्बन्ध होता है ?

समाधान—अन्तिम अनुभागकाण्डकमें विद्यमान जीवके होता है । अन्तिम अनुभागकाण्डक कृष्टिकारककी अन्तिम अवस्थामें होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि आगे प्रत्येक समयमें होनेवाली अपवर्तनाके स्थलपर काण्डकघातका होना असम्भव है । इसलिए द्विचरम अनुभागकाण्डक-का घात करके अन्तिम अनुभागकाण्डकके प्रथम समयमें तत्प्रायोग्य हानिरूपसे परिणत हुए जीवके द्वितीय समयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए ।

❀ एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं ।

§ ४६५. कुदो ? वड्ढीए मिच्छत्तभंगेण हाणि-अवट्ठाणाणं पि खवयस्स चरिमसमय-णवकबंधचरिमफालिविसयत्तेण चरिमाणुभागखंडयविसयत्तेण च सामित्तपरूवणं पडि विसेसाभावादो ।

❀ लोहसंजलणस्स जहण्णिया वड्ढी मिच्छत्तभंगो ।

§ ४६६. सुगमं ।

❀ जहण्णिया हाणी कस्स ?

§ ४६७. सुगमं ।

❀ खवयस्स समयाहियावलियसकसायस्स ।

§ ४६८. समयाहियावलियसकसायो णाम सुहुमसांपराइओ सगद्धाए समयाहियावलियसेसाए वट्टमाणो घेत्तव्वो । तस्स पयदजहण्णसामित्तं दट्ठव्वं, एत्तो सुहुमदरहाणीए लोहसंजलणाणुभागसंकमणिबंधणाए अण्णत्थाणुवलद्धीदो ।

❀ जहण्णयमवट्ठाणं कस्स ?

§ ४६९. सुगमं ।

*** इसी प्रकार मानसंज्वलन, मायासंज्वलन और पुरुषवेदका जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए ।**

§ ४६५. क्योंकि वृद्धिकी अपेक्षा मिथ्यात्वके भङ्ग तथा हानि और अवस्थानकी अपेक्षा भी क्षपकके अन्तिम समयमें होनेवाले नवकबन्धके अन्तिम फालिके विषयरूपसे और अन्तिम अनुभाग-काण्डकके विषयरूपसे स्वामित्वके कथन करनेके प्रति कोई विशेषता नहीं है ।

*** लोभसंज्वलनकी जघन्य वृद्धिके स्वामीका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है ।**

§ ४६६. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य हानिका स्वामी कौन है ?**

§ ४६७. यह सूत्र सुगम है ।

*** जिस क्षपकके संज्वलनलोभकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष है वह उसका जघन्य हानिका स्वामी है ।**

§ ४६८. यहाँ पर 'समयाधिकआवलिसकषाय' पदसे अपने कालमें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष रहने पर विद्यमान सूक्ष्मसाम्परायिक जीव लेना चाहिये । उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए, क्योंकि इससे लोभ संज्वलनके अनुभागके संक्रमसे होनेवाली सूक्ष्म हानि अन्यत्र नहीं उपलब्ध होती ।

*** जघन्य अवस्थानका स्वामी कौन है ।**

§ ४६९. यह सूत्र सुगम है ।

❀ दुचरिमे अणुभागखंडए हदे चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणयस्स ।

§ ५००. कोहसंजलणजहण्णावट्ठाणसंकमसामित्तसुत्तस्सेव णिरवयवमेदस्स सुत्तस्सत्थ-परूवणा कायव्वा ।

❀ इत्थिवेदस्स जहण्णिया वड्डी मिच्छत्तभंगो।

§ ५०१. कुदो ? सुहुमहदसमुप्पत्तियकम्मेण जहण्णएणाणंतभागवड्डीए वड्ढिदम्मि सामित्तपडिलंभं पडि तत्तो एदस्स भेदाभावादो ।

❀ जहण्णिया हाणी कस्स ?

§ ५०२. सुगमं ।

❀ चरिमे अणुभागखंडए पढमसमयसंकामिदे तस्स जहण्णिया हाणी ।

§ ५०३. इत्थिवेदस्स दुचरिमाणुभागखंडयचरिमफालिं संकामिय चरिमाणुभाग-खंडयपढमसमए वट्टमाणस्स जहण्णिया हाणी होइ, तत्थ खवगपरिणामेहि घादिदावसेसस्स तदणुभागस्स सुट्ठु जहण्णहाणीए हाइदूण संकंतिदंसणादो ।

❀ तस्सेव विदियसमए जहण्णयमवट्ठाणं।

§ ५०४. तस्सेव चरिमाणुभागखंडयसंकमे वट्टमाणखवयस्स विदियसमये जहण्णय-

---

*** द्विचरम अनुभागकाण्डकका घात कर अन्तिम अनुभागकाण्डकमें विद्यमान जीव उसके जघन्य अवस्थानका स्वामी है ।**

§ ५००. क्रोधसंज्वलनके जघन्य अवस्थानरूप संक्रमके स्वामित्वका कथन करनेवाले सूत्रके समान ही पूरी तरहसे इस सूत्रके अर्थका कथन करना चाहिए ।

*** स्त्रीवेदकी जघन्य वृद्धिके स्वामित्वका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है ।**

§ ५०१. क्योंकि सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य हतसमुत्पत्तिक कर्मसे अनन्तभागवृद्धिमें विद्यमान जीव जघन्य स्वामी है इस दृष्टिसे मिथ्यात्वकी अपेक्षा इसमें कोई भेद नहीं है ।

*** जघन्य हानिका स्वामी कौन है ?**

§ ५०२. यह सूत्र सुगम है ।

*** अन्तिम अनुभागकाण्डकका प्रथम समयमें संक्रम करके स्थित हुआ जीव जघन्य हानिका स्वामी है ।**

§ ५०३. स्त्रीवेदके द्विचरम अनुभागकाण्डककी अन्तिम फालिका संक्रम करके अन्तिम अनुभागकाण्डकके प्रथम समयमें विद्यमान जीवके जघन्य हानि होती है, क्योंकि वहाँ पर क्षपक परिणामोंके द्वारा घात करनेसे शेष बचे हुए उसके अनुभागका अत्यन्त जघन्य हानिके द्वारा घात करके संक्रमण देखा जाता है ।

*** तथा वही दूसरे समयमें जघन्य अवस्थानका स्वामी है ।**

§ ५०४. अन्तिम अनुभागकाण्डकके संक्रममें विद्यमान उसी क्षपक जीवके दूसरे समयमें

मवट्ठाणं होइ। कुदो ? पढमसमए जहण्णहाणिविसयीकयाणुभागस्स बिदियसमए तत्तियमेत्तपमाणेणावट्ठाणदंसणादो।

❀ एवं णवुंसयवेद-छण्णोकसायाणं।

§ ५०५. सुगममेदमप्पणासुत्तं। एवमोघो समत्तो।

§ ५०६. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-बारसक०-णवणोक० जह० वड्ढी कस्स ? अण्णदरस्स अणंतभागेण वड्ढिदूण वड्ढी, हाइदूण हाणी, एयदरत्थावट्ठाणं। अणंताणु०४ ओघं। सम्म० जह० कस्स ? अण्णदर० समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीयस्स। एवं पढमपुढवि-तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खदो-देवा सोहम्मादि जाव सहस्सार त्ति। एवं छसु हेट्ठिमासु पुढवीसु। णवरि सम्म० णत्थि। एवं जोणिणी०-भवण०-वाण०-जोदिसि०। पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० विहत्तिभंगो। मणुसतिय मिच्छ०-अट्ठक० जह० वड्ढी कस्स ? अण्णद० सुहुमेइंदियपच्छायदस्स अणंतभागेण वड्ढिदूण वड्ढी, हाइदूण हाणी, एगदरत्थावट्ठाणं। सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ ओघं। चदुसंजल०-णवणोक० ओघं।

जघन्य अवस्थान होता है, क्योंकि प्रथम समयमें जघन्य हानिके विषयभूत अनुभागका दूसरे समयमें उतने ही प्रमाणरूपसे अवस्थान देखा जाता है।

*** इसी प्रकार नपुंसकवेद और छह नोकषायोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानका स्वामी जानना चाहिए।**

§ ५०५. यह अर्पणासूत्र सुगम है।

इसी प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ५०६. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? जो अनन्तभागवृद्धिरूपसे वृद्धि करता है ऐसा अन्यतर जीव जघन्य वृद्धिका स्वामी है, तथा जो अनन्तभागहानिरूपसे हानि करता है ऐसा अन्यतर जीव जघन्य हानिका स्वामी है। तथा इनमेंसे किसी एक स्थानमें जघन्य अवस्थानका स्वामी है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। सम्यक्त्वकी जघन्य हानिका स्वामी कौन है ? जिसके दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि काल शेष है वह उसकी जघन्य हानिका स्वामी है। इसी प्रकार पहली पृथिवीके नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चद्विक, सामान्य देव और सौधर्म कल्पसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए। इसी प्रकार नीचेकी छह पृथिवियोंमें जानना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि उनमें सम्यक्त्वका हानिसंक्रम नहीं होता। इसी प्रकार योनिनी तिर्यंच, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व और आठ कषायोंकी जघन्य वृद्धिका स्वामी कौन है ? जिसने सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्यायसे आकर अनन्तभागवृद्धिरूप वृद्धि की है ऐसा अन्यतर तीन प्रकारका मनुष्य जघन्य वृद्धिका स्वामी है, अनन्तभागहानि करने पर यही अन्यतर मनुष्य जघन्य हानिका स्वामी है और इनमेंसे किसी एक स्थल पर जघन्य अवस्थानका स्वामी है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भंग ओघके समान है। चार संज्वलन और नौ नोकषायोंका भङ्ग भी ओघके समान है। किन्तु इतनी

णवरि सुहुमेइंदियपच्छायदस्स अणंतभागेण वड्ढिदस्स तस्स जह० वड्ढी। मणुसिणी० पुरिस० छण्णोक०भंगो। आणदादि णवगेवज्जा त्ति विहत्तिभंगो। णवरि सम्म०—अणंताणु० देवोघं। अणुदिसादि सव्वट्ठे त्ति विहत्तिभंगो। णवरि सम्म० देवोघं। अणंताणु० जह० हाणिसंकमो कस्स? अण्णद० अणंताणु०चउक्कं विसंजोएंतस्स दुचरिमे अणुभागखंडए हदे तस्स जह० हाणी। तस्सेव से काले जहण्णयमवट्ठाणं। एवं[1] जाव०।

*** अप्पाबहुअं।**

§ ५०७. सुगममेदमहियारसंभालणसुत्तं।

सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स उक्कस्सिया हाणी।

§ ५०८. एत्थ सव्वग्गहणेण मिच्छत्ताणुभागसंकमविसयाणमुक्कस्सवड्ढि—हाणि—अवट्ठाणपदाणं गहणं कायव्वं, तेसु सव्वेसु सव्वेहिंतो वा थोवा उक्क० हाणी। सा च उक्क० हाणी उक्कसाणु०खंडयपमाणा।

विशेषता है कि जिसने सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्यायसे आकर अनन्तभागवृद्धि की है वह जघन्य वृद्धिका स्वामी है। मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है। आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य हानिसंक्रमका स्वामी कौन है? अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करनेवाला जो अन्यतर जीव द्विचरम अनुभागकाण्डकका घात कर देता है वह जघन्य हानिका स्वामी है। तथा वही अनन्तर समयमें जघन्य अवस्थानका स्वामी है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ पर आदेशसे स्वामित्वको समझनेके लिए इन बातों पर विशेषरूपसे ध्यान रखना चाहिए कि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रारम्भ मनुष्यत्रिकमें ही होता है, इसलिए सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि और अवस्थान इन्हीं मार्गणाओंमें घटित होते हैं, गतिसम्बन्धी अन्य मार्गणाओंमें नहीं। यद्यपि मनुष्यत्रिकमें तो सम्यक्त्वकी हानि और अवस्थान दोनों बन जाते हैं। परन्तु गतिसम्बन्धी अन्य जिन मार्गणाओंमें कृतकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टि जीव मरकर उत्पन्न होता है उनमें इसकी केवल हानि ही बनती है और जिन मार्गणाओंमें कृतकृत्यवदकसम्यग्दृष्टि जीव मरकर नहीं उत्पन्न होता उनमें इसकी हानि भी नहीं बनती। शेष कथन स्पष्ट ही है।

*** अब अल्पबहुत्वको कहते हैं।**

§ ५०७. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है।

*** मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है।**

§ ५०८. यहाँ पर सूत्रमें 'सर्व' पदके ग्रहण करनेसे मिथ्यात्वके अनुभागसंक्रमविषयक उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थान इन तीनों पदोंका ग्रहण करना चाहिए। उन सबमें या उन सबसे उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है और वह उत्कृष्ट हानि उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकप्रमाण है।

---

१. ता०प्रतौ '—मवट्ठाणं ।..........एवं' इति पाठः।

❀ वड्ढी अवट्ठाणं च विसेसाहियं।

§ ५०९. उक्कस्सवड्ढि-अवट्ठाणाणि समाणविसयसामित्तेण तुल्लाणि होदूण तत्तो विसेसाहियाणि त्ति वुत्तं होइ। कुदो वुण तत्तो एदेसिं विसेसाहियणिच्छयो ? ण, वड्ढिदाणुभागस्स णिरवसेसघादणसत्तीए असंभवेण तण्णिणिच्छयादो णेदमसिद्धं, पुव्वमप्पाबहुअसाहणट्ठं सामित्तसुत्ते परूविदट्ठपदावट्ठंभबलेण तण्णिण्णयसिद्धीदो।

❀ एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं।

§ ५१०. सुगममेदमप्पणासुत्तं, विसेसाभावमस्सिऊण पयट्टत्तादो।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिया हाणी अवट्ठाणं च सरिसं।

§ ५११. कुदो ? उक्कस्सहाणीए चेव उक्कस्सावट्ठाणसामित्तदंसणादो।

एवमोघो समत्तो।

५१२. आदेसेण विहत्तिभंगो।

एवमुक्कस्सप्पाबहुअं समत्तं।

* उससे उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान विशेष अधिक हैं।

§ ५०९. उत्कृष्ट वृद्धि और अवस्थान स्वामीके समान होनेसे तुल्य होकर भी उत्कृष्ट हानिसे विशेष अधिक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—उससे ये विशेष अधिक हैं इसका निश्चय कैसे होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि बढ़े हुए अनुभागका पूरी तरहसे घात करनेकी शक्ति न होनेसे उत्कृष्ट हानिमें ये दोनों विशेष अधिक हैं इसका निश्चय होता है और यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि पहले अल्पबहुत्वकी सिद्धि करनेके लिए स्वामित्व सूत्रमें कहे गये अर्थपदके अवलम्बन करनेसे उक्त विषयके निश्चयकी सिद्धि होती है।

* इसी प्रकार सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामी जानना चाहिए।

§ ५१०. यह अर्पणासूत्र सुगम है, क्योंकि विशेषके अभावके आश्रयसे यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि और अवस्थान सदृश हैं।

§ ५११. क्योंकि उत्कृष्ट हानिके होने पर ही उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामित्व देखा जाता है।

इस प्रकार ओघ प्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ५१२. आदेशसे अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—अनुभागविभक्तिमें आदेशसे सब प्रकृतियोंकी अपेक्षा उत्कृष्ट वृद्धि, उत्कृष्ट हानि और उत्कृष्ट अवस्थानका जिस प्रकार अल्पबहुत्व कहा है उसी प्रकार यहाँ पर भी उसका कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

❀ जहण्णयं ।

§ ५१३. उक्कस्सप्पाबहुअसमत्तिसमणंतरमिदाणिं जहण्णयमप्पाबहुअं वण्णइस्सामो त्ति पइण्णासुत्तमेदं ।

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणसंकमो च तुल्लो ।

§ ५१४. कुदो ? तिण्हमेदेसिं सुहुमहदसमुप्पत्तियजहण्णाणुभागस्स अणंतिमभागे पडिबद्धत्तादो ।

❀ एवमट्ठकसायाणं ।

§ ५१५. जहा मिच्छत्तस्स जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणमभिण्णविसयाणं सरिसत्तमेवमेदेसिं पि कम्माणं दट्ठव्वं ।

❀ सम्मत्तस्स सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी ।

§ ५१६. कुदो ? अणुसमयोवट्टणाए पत्तघादसम्मत्ताणुभागस्स समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीयम्मि जहण्णहाणिभावमुवगयस्स सव्वत्थोवत्ते विरोहाणुवलंभादो ।

❀ जहण्णयमवट्ठाणमणंतगुणं ।

§ ५१७ कुदो ? अणुसमयोवट्टणापारंभादो पुव्वमेव चरिमाणुभागखंडयविसए जहण्णभावमुवगयत्तादो ।

---

* अब जघन्य अल्पबहुत्वको कहते हैं ।

§ ५१३. उत्कृष्ट अल्पबहुत्वकी समाप्तिके बाद अब जघन्य अल्पबहुत्वको बतलाते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है ।

* मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानसंक्रम तुल्य है ।

§ ५१४. क्योंकि ये तीनों सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक जघन्य अनुभागके अनन्तवें भागमें प्रतिबद्ध हैं ।

* इसी प्रकार आठ कषायोंके जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान संक्रमका अल्पबहुत्व जानना चाहिए ।

§ ५१५. जिस प्रकार मिथ्यात्वके अभिन्न विषयवाले जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान समान हैं उसी प्रकार इन कर्मोंके भी जानने चाहिए ।

* सम्यक्त्वकी जघन्य हानि सबसे स्तोक है ।

§ ५१६. क्योंकि प्रतिसमय होनेवाली अपवर्तनाके द्वारा घातको प्राप्त हुआ सम्यक्त्वका अनुभाग दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें एक समय अधिक एक आवलि कालके शेष रहने पर जघन्यपनेको प्राप्त हो जाता है, इसलिए उसके सबसे स्तोक होनेमें विरोध नहीं पाया जाता ।

* उससे जघन्य अवस्थान अनन्तगुणा है ।

§ ५१७. क्योंकि प्रति समय होनेवाली अपवर्तनाके प्रारम्भ होनेके पूर्व ही अन्तिम अनुभागकाण्डकमें इसका जघन्यपना उपलब्ध होता है ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णिया हाणी अवट्ठाणसंकमो च तुल्लो ।

§ ५१८. कुदो ? दोण्हमेदेसिं दंसणमोहक्खवयदुचरिमाणुभागखंडयपमाणेण हाइदूण लद्धजहण्णभावाणमण्णोण्णेण समाणत्तसिद्धीए विप्पडिसेहाभावादो ।

❀ अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा जहण्णिया वड्ढी ।

§ ५१९. कुदो ? तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेण संजुत्तविदियसमयणवकबंधस्स जहण्णवड्ढिभावेणेह विवक्खियत्तादो ।

❀ जहण्णिया हाणी अवट्ठाणसंकमो च अणंतगुणो ।

§ ५२०. कुदो ? अंतोमुहुत्तसंजुत्तस्स एयंताणुवड्ढीए वड्ढिदाणुभागविसए सव्वत्थोवाणुभागखंडयघादे कदे जहण्णहाणि-अवट्ठाणाणं सामित्तदंसणादो ।

❀ चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी ।

§ ५२१. कुदो ? तिण्णिसंजलण-पुरिसवेदाणं सगसगचरिमसमयणवकबंधचरिमसमयसंकामयखवयम्मि लोभसंजलणस्स समयाहियावलियसकसायम्मि पयदजहण्णसामित्तावलंबणादो ।

❀ जहण्णयमवट्ठाणं अणंतगुणं ।

* सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानसंक्रम तुल्य है ।

§ ५१८. क्योंकि दर्शनमोहके क्षपक जीवके द्विचरम अनुभागकाण्डकप्रमाण हानि होकर जघन्यपनेको प्राप्त हुए इन दोनोंमें परस्पर समानताकी सिद्धि होनेमें किसी प्रकारकी विप्रतिपत्ति नहीं है।

* अनन्तानुबन्धियोंकी जघन्य वृद्धि सबसे स्तोक है ।

§ ५१९. क्योंकि तत्प्रायोग्य विशुद्ध परिणामसे संयुक्त होनेके दूसरे समयमें हुआ नवकबन्ध वृद्धिरूपसे यहाँ पर विवक्षित है ।

* उससे जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानसंक्रम अनन्तगुणे हैं ।

§ ५२०. क्योंकि संयुक्त होनेके बाद अन्तर्मुहूर्त काल तक एकान्तानुवृद्धिरूपसे जो अनुभागकी वृद्धि होती है उसमें सबसे स्तोक अनुभागकाण्डकघातके होने पर जघन्य हानि और अवस्थानका स्वामित्व देखा जाता है ।

* चार संज्वलन और पुरुषवेदकी जघन्य हानि सबसे स्तोक है ।

§ ५२१. क्योंकि तीन संज्वलन और पुरुषवेदका जघन्य स्वामित्व अपने अपने बन्धके अन्तिम समयमें हुए नवकबन्धका अपने अपने संक्रमके अन्तिम समयमें संक्रमण करनेवाले क्षपक जीवके होता है और लोभसंज्वलनका जघन्य स्वामित्व क्षपक जीवके सकषाय अवस्थामें एक समय अधिक एक आवलि काल रहने पर होता है, अतएव प्रकृतमें इस जघन्य स्वामित्वका अवलम्बन लिया गया है।

* उससे जघन्य अवस्थान अनन्तगुणा है ।

§ ५२२. केण कारणेण ? चिराणसंतकम्मचरिमाणुभागखंडयम्मि पयदजहण्णावट्ठाण-सामित्तावलंबणादो ।

❀ जहण्णिया वड्ढी अणंतगुणा ।

§ ५२३. कुदो ? एत्तो अणंतगुणसुहुमाणुभागविसए लद्धजहण्णभावत्तादो ।

❀ अट्ठणोकसायाणं जहण्णिया हाणी अवट्ठाणसंकमो च तुल्लो थोवो ।

§ ५२४. कुदो ! दोण्हमेदेसिं पदाणमप्पप्पणो चरिमाणुभागखंडयविसए जहण्ण-सामित्तदंसणादो ।

❀ जहण्णिया वड्ढी अणंतगुणा ।

§ ५२५. कुदो सुहुमाणुभागविसए पयदजहण्णसामित्तसमुवलद्धीदो ।

एवमोघो गदो ।

§ ५२६. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०–बारसक०–णवणोक० जह० वड्ढी हाणी अवट्ठाणसंकमो च सरिसो । अणंताणु०४ ओघं । एवं सव्वणेरइय०–तिरिक्ख-पंचिंदिय-तिरिक्खतिय३–देवा जाव सहस्सार त्ति । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०–मणुसअपज्ज० जह० विहत्तिभंगो । मणुसतिए ३ ओघं । णवरि मणुसिणीसु पुरिसवेद० छण्णोकसायभंगो ।

---

§ ५२२. क्योंकि प्राचीन सत्कर्मसम्बन्धी अन्तिम अनुभागकाण्डकके समय प्राप्त होनेवाले प्रकृत जघन्य अवस्थानविषयक स्वामित्वका यहाँ पर अवलम्बन लिया गया है ।

* उससे जघन्य वृद्धि अनन्तगुणी है ।

§ ५२३. क्योंकि जघन्य अवस्थानसंक्रमसे अनन्तगुणे सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी अनुभागके आश्रयसे इसका जघन्यपना प्राप्त होता है ।

* आठ नोकषायोंके जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानसंक्रम परस्पर तुल्य होकर सबसे स्तोक हैं ।

§ ५२ . क्योंकि इन दोनों पदोंका अपने अपने अन्तिम अनुभागकाण्डकके समय जघन्य स्वामित्व देखा जाता है ।

* उनसे जघन्य वृद्धि अनन्तगुणी है ।

§ ५२५. क्योंकि सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी अनुभागमें अनन्तभागवृद्धि होने पर प्रकृत जघन्य स्वामित्व उपलब्ध होता है ।

इस प्रकार ओघ प्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ५२६. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थानसंक्रम तुल्य हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है । इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्य देव और सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अनुभाग-

आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति विहत्तिभंगो। णवरि अणंताणु०४ ओघं। अणुदिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छत्त०–सोलसक०-णवणोक० जह० हाणी अवट्ठाणं च सरिसं। एवं जाव०।

एवमप्पाबहुए समत्ते पदणिक्खेवो समत्तो।

❀ वड्ढीए तिण्णि अणिओगद्दाराणि समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं च।

§ ५२७. पदणिक्खेवविसेसो वड्ढी णाम। तत्थेदाणि तिण्णि चेवाणिओगद्दाराणि भवंति, सेसाणमेत्थेवंतब्भावदंसणादो। एवमुद्दिट्ठसमुक्कित्तणादिअणियोगद्दारेसु समुक्कित्तणा ताव कीरदि त्ति जाणावणट्ठमिदमाह—

❀ समुक्कित्तणा।

§ ५२८. सुगमं।

❀ मिच्छत्तस्स अत्थि छव्विहा वड्ढी, छव्विहा हाणी अवट्ठाणं च।

§ ५२९. काओ ताव छव्वड्ढीओ[1]? अणंतभागवड्ढि-असंखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जभागवड्ढि-संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्जगुणवड्ढि-अणंतगुणवड्ढिसण्णिदाओ। एवं हाणीओ वि वत्तव्वाओ। तत्थ छवड्ढीणं परूवणा जहा अणुभागविहत्तीए तहा णिरवसेस-

विभक्तिके समान भङ्ग है। मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग छह नोकषायोंके समान है। आनतकल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें अनुभाग-विभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंकी जघन्य हानि और अवस्थान ये दोनों पद समान हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होनेपर पदनिक्षेप समाप्त हुआ।

* वृद्धिमें तीन अनुयोगद्वार होते हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व।

§ ५२७. पदनिक्षेप विशेषको वृद्धि कहते हैं। उसमें ये तीन ही अनुयोगद्वार होते हैं, क्योंकि शेष अनुयोगद्वारोंका इन्हींमें अन्तर्भाव देखा जाता है। इस प्रकार सूचित किये गये समुत्कीर्तना आदि अनुयोगद्वारोंमेंसे सर्व प्रथम समुत्कीर्तनाका कथन करते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए यह सूत्र कहते हैं—

* अब समुत्कीर्तनाको कहते हैं।

§ ५२८. यह सूत्र सुगम है।

* मिथ्यात्वकी छह प्रकारकी वृद्धि, छह प्रकारकी हानि और अवस्थान है।

शंका—छह वृद्धियाँ कौन हैं?

समाधान—अनन्तभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणवृद्धि और अनन्तगुणवृद्धि इन नामोंवाली छह वृद्धियाँ हैं।

§ ५२९. इसी प्रकार छह हानियोंका भी कथन करना चाहिए। उनमेंसे छह वृद्धियोंकी प्ररूपणा जिस प्रकार अनुभागविभक्तिमें की है उसी प्रकार सबकी सब यहाँ पर करनी चाहिए,

---

१. आ०प्रतौ छवड्ढीणं परूवणाओ इति पाठः।

मेत्थ वि कायव्वा, विसेसाभावादो। संपहि हाणीणं परूवणे कीरमाणे सव्वुक्कस्साणुभागसंत-कम्मिएण चरिमुव्वंके घादिदे पढमो अणंतभागहाणिवियप्पो होइ, तेणेव चरिम-दुचरिमु-व्वंकेसु घादिदेसु विदिओ अणंतभागहाणिवियप्पो होइ। एवमणेण विहाणेण हेट्ठा ओयारेयव्वं जाव कंडयमेत्तमोइण्णस्स पच्छाणुपुव्वीए पढमसंखेज्जभागवड्ढिट्ठाणं ति। पुणो तेण सह उवरिमाणुभागे घादिदे असंखेज्जभागहाणिपारंभो होइ। एत्तो पहुडि असंखेज्जभाग-हाणिविसओ जाव पच्छाणुपुव्वीए पढमं संखेज्जभागवड्ढिट्ठाणमुप्पण्णं ति। एत्तो हेट्ठा घादेमाणस्स संखेज्जभागहाणिविसओ होदूण ताव गच्छइ जाव पच्छाणुपुव्वीए उक्कस्ससंखेज्जस्स सादिरेयद्धमेत्ता संखेज्जभागवड्ढिवियप्पा परिहीणा त्ति। तत्थ पढमदुगुणहीणट्ठाणमुप्पज्जइ। एत्तो प्पहुडि संखेज्जगुणहाणीए विसओ होदूण ताव गच्छइ जाव जहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणय-मेत्तदुगुणहाणीओ हेट्ठा ओदिण्णाओ त्ति। तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणिविसओ होदूण ताव गच्छइ जाव पच्छाणुपुव्वीए संखेज्जभागवड्ढिवियप्पाणमसंखेज्जे भागे संखेज्जगुणवड्ढि-असंखेज्ज-गुणवड्ढिसयलद्धाणं तत्तो हेट्ठिमचदुवड्ढिअद्धाणं च विसईकरिय चरिमट्ठंकट्ठाणं पत्तो त्ति। एत्थ चरिमट्ठंकट्ठाणं मोत्तूण सेसरूवूणछट्ठाणमेत्तं कंडयघादं करेमाणस्स असंखेज्जगुणहाणीए चरिमवियप्पो होइ त्ति भावत्थो। पुणो चरिमट्ठंकट्ठाणेण सह कंडयघादं कुणमाणस्साणंतगुण-हाणी पारभदि। एत्तो प्पहुडि जाव सव्वुक्कस्साणुभागकंडयं ति ताव घादेमाणस्स अणंतगुण-हाणिविसओ होइ। तत्तो हेट्ठिमाणुभागस्स पज्जवसाणट्ठाणेण सह घादाणुवलंभादो।

क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। अब हानियोंका कथन करने पर सबसे उत्कृष्ट अनुभाग-सत्कर्मवाले जीवके द्वारा अन्तिम ऊर्वंकका घात करनेपर प्रथम अनन्तभागहानिरूप भेद होता है। उसीके द्वारा अन्तिम और द्विचरम ऊर्वंकोंका घात करने पर दूसरा अनन्तभागहानिरूप भेद होता है। इस प्रकार इस विधिसे नीचे काण्डकप्रमाण उतरे हुए जीवके पश्चादानुपूर्वीसे प्रथम संख्यात भागवृद्धिरूप स्थानके प्राप्त होने तक उतारना चाहिए। पुनः उसके साथ उपरिम अनुभागका घात करनेपर असंख्यातभागहानिका प्रारम्भ होता है। यहाँसे लेकर पश्चादानुपूर्वीसे प्रथम संख्यातभागवृद्धि-के उत्पन्न होने तक असंख्यातभागहानिके विषयरूप स्थान होते हैं। इससे नीचे घात किये जानेवाले अनुभागके पश्चादानुपूर्वीसे उत्कृष्ट संख्यातके साधिक अर्धभागप्रमाण संख्यातभागवृद्धिके विकल्प परिहीन होने तक संख्यातभागहानिका विषय होकर जाता है। वहाँ पर प्रथम द्विगुण हीन स्थान उत्पन्न होता है। यहाँसे लेकर जघन्य परीतासंख्यातके अर्द्धच्छेदप्रमाण द्विगुणहानियाँ नीचे उतरने तक संख्यातगुणहानिका विषय होकर जाता है। वहाँसे लेकर पश्चादानुपूर्वीसे संख्यात भागवृद्धिके भेदोंके असंख्यात बहुभागोंको, संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धिके सब अध्वानको तथा उससे नीचे चार वृद्धियोंके अध्वानको विषय करके अन्तिम अष्टाङ्कस्थानके प्राप्त होने तक असंख्यात-गुणहानिका विषय होकर जाता है। यहाँ पर अन्तिम अष्टांक स्थानको छोड़कर शेष एक कम षट्-स्थानप्रमाण काण्डकघात करनेवाले जीवके असंख्यातगुणहानिका अन्तिम विकल्प होता है यह उक्त कथनका भावार्थ है। पुनः अन्तिम अष्टाङ्कस्थानके साथ काण्डकघात करनेवालेके अनन्तगुणहानि-का प्रारम्भ होता है। यहाँ से लेकर सबसे उत्कृष्ट अनुभागकाण्डकके प्राप्त होने तक उसका घात करनेवालेके अनन्तगुणहानिका विषय होता है, क्योंकि उससे नीचेके अनुभागका अन्तिम स्थानके साथ घात नहीं उपलब्ध होता। इसी प्रकार अवस्थानसंक्रमकी सम्भावना का भी कथन करना

एअवट्ठाणसंकमस्स वि संभवो वत्तव्वो, वड्ढि-हाणिविसयं सव्वत्थोवावट्ठाणपसरस्स पडिसेहाभावादो। अवत्तव्वपदमेत्थ ण संभइ, मिच्छत्ताणुभागविसए तदणुवलंभादो।

***सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमत्थि अणंतगुणहाणी अवट्ठाणमवत्तव्वयं च।**

चाहिए, क्योंकि वृद्धि और हानिरूप दोनों स्थानोंपर सर्वत्र ही अवस्थानके होनेका निषेध नहीं है। अवक्तव्यपद यहाँ पर सम्भव नहीं है, क्योंकि मिथ्यात्वके अनुभागका आलम्बन लेकर उसकी उपलब्धि नहीं होती।

विशेषार्थ—यहाँ पर मिथ्यात्वके अनुभागसंकममें छह वृद्धियाँ, छह हानियाँ और अवस्थान संक्रम कैसे सम्भव हैं इसका ऊहापोह किया है। उनमेंसे छह वृद्धियोंका व्याख्यान अनुभागविभक्तिके समय कर आये हैं, इसलिए यहाँ पर छह हानियोंका ही मुख्य रूपसे विशेष विचार किया है। यहाँ पर जो कुछ कहा गया है उसका सार यह है कि जो उत्कृष्ट अनुभागसत्कर्म है उसको यदि घात किया जाय तो ऊपरसे घात करते हुए नीचेकी ओर आया जायगा। उसमें भी सबसे जघन्य अनुभागकाण्डक अन्तिम ऊर्वंक प्रमाण होगा। उससे बड़ा अनुभागकाण्डक चरम और द्विचरम ऊर्वंकप्रमाण होगा। इस प्रकार उत्तरोत्तर एक एक ऊर्वंकस्थानके द्वारा अनुभागकाण्डकका प्रमाण बढ़ाते हुए जब तक काण्डकप्रमाण अर्थात् आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण उर्वंकस्थान नीचे उतरकर असंख्यातभागवृद्धिस्थान नहीं मिलता तब तक अनन्तभागहानि ही होती रहती है। यहाँ हानिका प्रकरण है, इसलिए ऊपरसे नीचेकी ओर गये हैं और यही पश्चादानुपूर्वी है। यहाँ इतना विशेष समझना चाहिए कि यहाँ पर अनन्तभागहानिमें जो अनुभागकाण्डकका प्रमाण कहा है सो वह अन्तिम ऊर्वंकप्रमाण भी हो सकता है, चरम और द्विचरम ऊर्वंकप्रमाण भी हो सकता है, चरम द्विचरम और त्रिचरम ऊर्वंकप्रमाण भी हो सकता है और इस प्रकार उत्तरोत्तर अनुभागकाण्डकके प्रमाणमें वृद्धि करते हुए वह आवलिके असंख्यातवें भागके बराबर चरमादि ऊर्वंकप्रमाण भी हो सकता है। इतने ऊर्वंकप्रमाण अन्तिम अनुभागका घात होने तक अनन्तभागहानि ही होती है। हाँ इसमे अधिक अनुभागका घात करने पर असंख्यातभागहानिका प्रारम्भ होता है जो जब तक संख्यातभागहानि स्थाननहीं प्राप्त होता है तब तक जाती है। उसके बाद संख्यातभागहानिका प्रारम्भ होता है जो जब तक संख्यातगुणहानिस्थान नहीं प्राप्त होता तब तक जाती है। यह संख्यातगुणहानिस्थान कितने स्थान नीचे जाने पर उत्पन्न होता है इसकी मीमांसा करते हुए बतलाया है कि जहाँके संख्यातभागहानिका प्रारम्भ हुआ है वहाँसे उत्कृष्ट संख्यातके साधिक अर्धभागप्रमाण संख्यातभागवृद्धिके विकल्प कम करने पर यह संख्यातगुणहानिस्थान उत्पन्न होता है। इससे आगे जब तक आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण संख्यातगुणहानियाँ होकर असंख्यातगुणहानि नहीं उत्पन्न होती है तब तक अनुभागकाण्डकघात संख्यातगुणहानिका ही विषय रहता है। उसके आगे अन्तिम अष्टाङ्कस्थानके पूर्व तक जितना भी अनुभागकाण्डकघात है वह सब असंख्यातगुणहानिका विषय रहता है। उसके आगे यदि अन्तिम अष्टाङ्कके साथ काण्डकघात करता है तो अनन्तगुणहानिका प्रारम्भ होता है। यहाँसे आगे जितना भी घात है वह सब अनन्तगुणहानिका ही विषय है। परन्तु यहाँ पर इतना विशेष समझना चाहिए कि काण्डकघातके द्वारा पूरे अनुभागका घात नहीं होता। यहाँ पर वृद्धियों और हानियोंके जितने स्थान उत्पन्न होते हैं उतने ही अवस्थानविकल्प भी बन जाते हैं। मात्र मिथ्यात्वके अनुभागका अवक्तव्यसंकम कभी नहीं होता, क्योंकि इसके संक्रमका अभाव होकर पुनः संक्रमकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है।

***सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनन्तगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्यपद होते हैं।**

§ ५३०. दंसणमोहक्खवणाए अणंतगुणहाणिसंभवो हाणीदो अण्णत्थ सव्वत्थोवाव-ट्ठाणसंकमसंभवो असंकमादो संकामयत्तमुवगयम्मि अवत्तव्वसंकमो तिण्हमेदेसिमेत्थ संभवो ण विरुज्झदे। सेसपदाणमेत्थ णत्थि संभवो।

*** अणंताणुबन्धीणमत्थि छव्विहा वड्ढी छव्विहा हाणी अवट्ठाण-मवत्तव्वयं च।**

§ ५३१. मिच्छत्तभंगेणेव छब्भेयभिण्णवड्ढि हाणीणमवट्ठाणस्स य संभवविसयो णिरवसेसमेत्थाणुगंतव्वो। अवत्तव्वसंकमो पुण विसंजोयणापुव्वसंजोगे दट्ठव्वो।

*** एवं सेसाणं कम्माणं।**

§ ५३२. एत्थ सेसग्गहणेण बारसक०–णवणोक०गहणं कायव्वं। तेसिमणंताणु-बंधीणं व छवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणावत्तव्वयाणं समुक्कित्तणा कायव्वा, विसेसाभावादो। णवरि सव्वोवसामणापडिवादे अवत्तव्वसंभवो वत्तव्वो। एवमोघो समत्तो।

§ ५३३. आदेसेण मणुसतिए ओघभंगो। सेससव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो।

---

§ ५३०. दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें अनन्तगुणहानि सम्भव है, हानिके सिवा अन्यत्र सर्वत्र ही अवस्थानसंक्रम सम्भव है और असंक्रमसे संक्रमरूप अवस्थाको प्राप्त होने पर अवक्तव्यसंक्रम होता है। इस प्रकार इन तीनोंका सद्भाव यहाँ पर विरोधको नहीं प्राप्त होता। मात्र शेष पद यहां पर सम्भव नहीं हैं।

* अनन्तानुबन्धियोंके छह प्रकारकी वृद्धियाँ, छह प्रकारकी हानियाँ, अवस्थान और अवक्तव्यपद होते हैं।

§ ५३१. जिस प्रकार मिथ्यात्वके प्रसङ्गसे कथन कर आये हैं उसी प्रकार छह प्रकारकी वृद्धियों छह प्रकारकी हानियों और अवस्थानकी सम्भावना पूरी तरहसे यहाँ पर जान लेना चाहिए। परन्तु अवक्तव्यसंक्रम विसंयोजनापूर्वक संयोगके होने पर जानना चाहिए।

* इसी प्रकार शेष कर्मोंके विषयमें जानना चाहिए।

§ ५३२. यहाँ पर शेष पदके ग्रहण करनेसे बारह कषाय और नौ नोकषायोंका ग्रहण करना चाहिए। अर्थात् उनके अनन्तानुबन्धियोंके समान छह वृद्धि, छह हानि, अवस्थान और अवक्तव्य-पदोंकी समुत्कीर्तना करनी चाहिए, क्योंकि उनके कथनसे इनके कथनमें कोई विशेषता नहीं है। इतनी विशेषता है कि सर्वोपशामनासे गिरने पर अवक्तव्यपद सम्भव है ऐसा कहना चाहिए।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ५३३. आदेशसे मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। शेष सब मार्गणाओंमें अनुभाग-विभक्तिके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें ओघप्ररूपणाकी सब विशेषताएँ सम्भव होनेसे उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है। परन्तु गतिसम्बन्धी अन्य सब मार्गणाओंमें ओघसम्बन्धी सब प्ररूपणा घटित न होकर अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग बन जानेसे उनमें अनुभागविभक्तिके समान जाननेकी सूचना की है।

इस प्रकार समुत्कीर्तना समाप्त हुई।

❀ सामित्तं ।

§ ५३४. समुक्कित्तणाणंतरं सामित्तमहिकयं ति अहियारसंभालणसुत्तमेदं ।

❀ मिच्छत्तस्स छव्विहा वड्ढी पंचविहा हाणी कस्स ?

§ ५३५. किमिच्छाइट्ठिस्स आहो सम्माइट्ठिस्स, किं वा दोण्हं पि पयदसामित्तमिदि पुच्छा कया होइ । एत्थ पंचविहा हाणि त्ति वुत्ते अणंतगुणहाणिं मोत्तूण सेसपंचहाणीणं संगहो कायव्वो ।

❀ मिच्छाइट्ठिस्स अण्णयरस्स ।

§ ५३६. ण ताव सम्माइट्ठिम्मि मिच्छत्ताणुभागविसयछवड्ढीणमत्थि संभवो, तत्थ तब्बंधाभावादो । ण च बंधेण विणा अणुभागसंकमस्स वड्ढी लब्भदे, तहाणुवलद्धीदो । तहा पंचविहा हाणी वि तत्थ णत्थि, सुट्ठु वि मंदविसोहीए कंडयघादं करेमाणसम्माइट्ठिम्मि अणंतगुणहाणिं मोत्तूण सेसपंचहाणीणमसंभवादो । तदो मिच्छाइट्ठिस्सेव णिरुद्धछवड्ढि-पंचहाणीणं सामित्तमिदि सुणिण्णीदत्थमेदं सुत्तं । अण्णदरग्गहणमेत्थोगाहणादिविसेसपडि-सेहट्ठं दट्ठव्वं ।

❀ अणंतगुणहाणी अवट्ठिदसंकमो कस्स ?

§ ५३७. सुगममेदं सुत्तं, पण्हमेत्तवावारादो ।

* अब स्वामित्वको कहते हैं ।

§ ५३४. समुत्कीर्तनाके बाद स्वामित्व अधिकृत है, इसलिए अधिकारकी सम्हाल करनेके लिए यह सूत्र आया है ।

* मिथ्यात्वकी छह प्रकारकी वृद्धियां और पाँच प्रकारकी हानियोंका स्वामी कौन है ?

§ ५३५. क्या मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि या दोनों ही प्रकृतमें स्वामी हैं इस प्रकार पृच्छा की गई है । यहाँ पर पाँच प्रकारकी हानि ऐसा कहने पर अनन्तगुणहानिको छोड़कर शेष पाँच हानियोंका संग्रह करना चाहिए ।

* अन्यतर मिथ्यादृष्टि जीव उनका स्वामी है ।

§ ५३६. सम्यग्दृष्टिके तो मिथ्यात्वकी अनुभागविषयक छह वृद्धियोंकी सम्भावना है नहीं, क्योंकि वहाँ पर मिथ्यात्वका बन्ध नहीं होता । और बन्धके बिना अनुभागसंक्रमकी वृद्धि नहीं उपलब्ध होती, क्योंकि ऐसा पाया नहीं जाता । उसी प्रकार पाँच हानियाँ भी वहाँ पर नहीं हैं, क्योंकि अत्यन्त मन्द विशुद्धिसे भी काण्डकघात करनेवाले सम्यग्दृष्टि जीवके अनन्तगुणहानिको छोड़कर शेष पाँच हानियाँ असम्भव हैं । इसलिए मिथ्यादृष्टिके ही विवक्षित छह वृद्धियों और पाँच हानियोंका स्वामित्व है इस प्रकार इस सूत्रका अर्थ सुनिर्णीत है । यहाँ पर सूत्रमें जो 'अन्यतर' पदका ग्रहण किया है सो वह अवगाहना आदि विशेषके निषेधके लिए जानना चाहिए ।

* अनन्तगुणहानि और अवस्थितसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ५३७. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि प्रश्नमात्रमें इसका व्यापार हुआ है ।

❀ अण्णयरस्स ।

§ ५३८. मिच्छाइट्ठि-सम्माइट्ठीणमण्णदरस्स तदुभयविसयसामित्तसंबंधो त्ति भणिदं होइ ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमणंतगुणहाणिसंकमो कस्स ?

५३९. सुगममेदं सामित्तसंबंधविसेसावेक्खं पुच्छासुत्तं ।

❀ दंसणमोहणीयं खवेंतस्स ।

५४०. कुदो ? दंसणमोहक्खवणादो अण्णत्थेदेसिमणुभागघादासंभवादो तदो अण्णविसयपरिहारेणेत्थेव सामित्तमिदि सम्ममवहारिदं ।

❀ अवट्ठाणसंकमो कस्स ?

§ ५४१. सुगमं ।

❀ अण्णदरस्स ।

§ ५४२. कुदो ? मिच्छाइट्ठि-सम्माइट्ठीणं तदुवलद्धीए विरोहाभावादो ।

❀ अवत्तव्वसंकमो कस्स ?

§ ५४३. सुगमं ।

❀ विदियसमयउवसमसम्माइट्ठिस्स ।

---

* अन्यतर जीव उनका स्वामी है ।

§ ५३८. मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि इनमेंसे अन्यतरके उन दोनोंके स्वामित्वका सम्बन्ध है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनन्तगुणहानिसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ५३९. स्वामित्वके सम्बन्धविशेषकी अपेक्षा करनेवाला यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

* दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाला जीव उसका स्वामी है ।

§ ५४०. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके सिवा अन्यत्र इन प्रकृतियोंका अनुभागघात होना असम्भव है, इसलिए अन्य विषयके परिहार द्वारा यहीं पर स्वामित्व है इस प्रकार सम्यक् प्रकारसे अवधारण किया ।

* उनके अवस्थानसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ५४१. यह सूत्र सुगम है ।

* अन्यतर जीव उसका स्वामी है ।

§ ५४२. क्योंकि मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टिके उसकी उपलब्धि होनेमें विरोध नहीं आता ।

* उनके अवक्तव्यसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ५४३. यह सूत्र सुगम है ।

* द्वितीय समयवर्ती उपशमसम्यग्दृष्टि जीव उसका स्वामी है ।

§ ५४४. कुदो ? तत्थासंकमादो संकमप्पवुत्तीए परिप्फुडमुवलंभादो ।

❀ सेसाणं कम्माणं मिच्छत्तभंगो ।

§ ५४५. कसाय-णोकसायाणमिह सेसभावेण णिद्देसो । तेसिं पयदसामित्तविहाणे मिच्छत्तभंगो कायव्वो, तत्तो एदेसिं सामित्तगयविसेसाभावादो त्ति सुत्तत्थो । णवरि अवत्तव्व-संकमसामित्तसंभवगओ तेसिं विसेसलेसो अत्थि त्ति तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरं सुत्तजुगलमाह—

❀ णवरि अणंताणुबंधीणमवत्तव्वं विसंजोएदूण पुणो मिच्छत्तं गंतूण आवलियादीदस्स ।

❀ सेसाणं कम्माणमवत्तव्वमुवसामेदूण परिवदमाणस्स ।

§ ५४६. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुबोहाणि । एवमोघेण सामित्ताणुगमो कओ ।

§ ५४७. संपहि सुत्तपरूविदत्थविसयणिण्णयकरणट्ठमेत्थुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—सामित्ताणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण विहत्तिभंगो । णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० भुज०संकमावत्तव्वभंगो । एवं मणुसतिए । सेससव्व-मग्गणासु विहत्तिभंगो ।

§ ५४८. संपहि सामित्तसुत्तेण सूचिदकालादिअणिओगद्दाराणं विहासणट्ठ-

---

§ ५४४. क्योंकि वहाँ असंक्रमसे संक्रमरूप प्रवृत्ति स्पष्टरूपसे पाई जाती है ।

*** शेष कर्मोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है ।**

§ ५४५. यहाँ पर 'शेष' पद द्वारा कषायों और नोकषायोंका निर्देश किया है । उनके प्रकृत स्वामित्वका विधान करते समय मिथ्यात्वके समान भङ्ग करना चाहिए, क्योंकि उससे इनकी स्वामित्वगत कोई विशेषता नहीं है यह इस सूत्रका अर्थ है । मात्र अवक्तव्यसंक्रमके सम्बन्धसे स्वामित्वसम्बन्धी उनमें थोड़ीसी विशेषता है, इसलिए उसका निर्देश करनेके लिए आगेके दो सूत्र कहते हैं—

*** किन्तु इतनी विशेषता है कि जिसे विसंयोजनाके बाद पुनः मिथ्यात्वमें जाकर एक आवलि काल हुआ है वह अनन्तानुबन्धियोंके अवक्तव्यसंक्रमका स्वामी है ।**

*** तथा उपशामनाके बाद गिरनेवाला जीव शेष कर्मोंके अवक्तव्यसंक्रमका स्वामी है ।**

§ ५४६. ये दोनों ही सूत्र सुबोध हैं ।

इस प्रकार ओघसे स्वामित्वका अनुगम किया ।

§ ५४७. अब चूर्णिसूत्रद्वारा कहे गये अर्थका निर्णय करनेके लिए यहाँ पर उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—स्वामित्वानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रमका भङ्ग भुजगारसंक्रमके अवक्तव्यके भङ्गके समान है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । शेष सब मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है ।

§ ५४८. अब स्वामित्वसम्बन्धी सूत्रके द्वारा सूचित हुए कालादि अनुयोगद्वारोंका विशेष

मेत्थुच्चारणाणुगमं वत्तइस्सामो—कालाणुगमेण दुविहो णिद्देसो। ओघेण विहत्तिभंगो। णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० जहण्णुक० एयसमओ। मणुसतिए विहत्तिभंगो। णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० ओघं। सेसमग्गणासु विहत्तिभंगो।

§ ५४९. अंतराणु० दुविहो णि०। ओघेण विहत्तिभंगो। णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० भुज०संकमअवत्तव्वभंगो। मणुसतिए भुज०संकामगभंगो। सेससव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो।

§ ५५०. णाणाजीवेहि भंगविचओ भागाभागो परिमाणं खेत्तं पोसणं कालो अंतरं भावो त्ति एदेसिमणिओगद्दाराणं विहत्तिभंगो। णवरि सव्वत्थ बारसक०-णवणोक० अवत्त० भुज०संकामगभंगो। एवमेदेसिं सुगमाणमुल्लंघणं काद्णप्पाबहुअपरूवणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

❀ अप्पाबहुअं।

§ ५५१. अहियारसंभालणसुत्तमेदं सुगमं।

❀ सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स अणंतभागहाणिसंकामया।

व्याख्यान करनेके लिए यहाँ पर उच्चारणाका अनुगम करते हैं। कालानुगमसे निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। मनुष्यत्रिकमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रमका भङ्ग ओघके समान है। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—अनुभागविभक्तिमें बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवक्तव्यपद सम्भव नहीं है जो यहाँ ओघसे बन जाता है। इसलिए यहाँ ओघप्ररूपणामें और मनुष्यत्रिकमें इस पदका काल अलगसे कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ५४९. अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि ओघसे बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रमका भङ्ग भुजगारसंक्रमके अवक्तव्यपदके समान है। मनुष्यत्रिकमें भुजगार संक्रामकके समान भङ्ग है। शेष मार्गणाओंमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है।

§ ५५०. नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय, भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर और भाव इन अनुयोगद्वारोंका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि सर्वत्र बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रमका भङ्ग भुजगारसंक्रामकके अवक्तव्यपदके समान है। इस प्रकार अत्यन्त सुगम इन अनुयोगद्वारोंका उल्लंघन करके अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

❀ अब अल्पबहुत्वको कहते हैं।

§ ५५१. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है।

❀ मिथ्यात्वकी अनन्तभागहानिके संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं।

§ ५५२. कुदो ? एगकंडयविसयत्तादो ।

⁂ असंखेज्जभागहाणिसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५५३. चरिमुव्वंकद्धाणादो प्पहुडि अणंतभागहाणिअद्धाणमेगकंडयमेत्तं चेव होदि । एदेसिं पुण तारिसाणि अद्धाणाणि रूवाहियकंडयमेत्ताणि हवंति, तदो तव्विसयादो पयदविसयो असंखेज्जगुणो त्ति सिद्धमेदेसिं तत्तो असंखेज्जगुणत्तं ।

⁂ संखेज्जभागहाणिसंकामया संखेज्जगुणा ।

§ ५५४. तं जहा—रूवाहियअणंतभागहाणि–असंखेज्जभागहाणिअद्धाणपमाणेण एगं संखेज्जभागहाणिअद्धाणं कादूणेवंविहाणि दोण्णि तिण्णि चत्तारि त्ति गणिज्जमाणे उक्कस्ससंखेज्जयस्स सादिरेयद्धमेत्ताणि अद्धाणाणि घेत्तूण संखेज्जभागहाणीए विसओ होइ, तेत्तियमेत्तमद्धाणं गंतूण तत्थ दुगुणहाणीए समुप्पत्तिदंसणादो । तदो विसयाणुसारेणुक्कस्ससंखेज्जयस्स सादिरेयद्धमेत्तो गुणगारो तप्पाओग्गसंखेज्जरूवमेत्तो वा ।

⁂ संखेज्जगुणहाणिसंकामया संखेज्जगुणा ।

§ ५५५. तं कधं ? संखेज्जभागहाणिसंकामएहिं लद्धद्धाणपमाणेणेयमद्धाणं कादूण तारिसाणि जहण्णपरित्तासंखेज्जयस्स रूवूणद्धच्छेदणयमेत्ताणि जाव गच्छंति ताव संखेज्जगुणहाणिविसओ चेव, तत्तो प्पहुडि असंखेज्जगुणहाणिसमुप्पत्तीदो । तदो एत्थ वि विसयाणुसारेण रूवूणजहण्णपरित्तासंखेज्जछेदणयमेत्तो तप्पाओग्गसंखेज्जरूवमेत्तो वा गुणगारो ।

---

§ ५५२. क्योंकि ये एक काण्डकको विषय करते हैं ।

✻ उनसे असंख्यातभागहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५५३. क्योंकि अन्तिम उर्वकस्थानसे लेकर अनन्तभागहानिका अध्वान एक काण्डकप्रमाण ही होता है । परन्तु इनके वैसे अध्वान एक अधिक काण्डकप्रमाण होते हैं, इसलिए उसके विषयसे प्रकृत विषय असंख्यातगुणा है । इस कारण इनका उनसे असंख्यातगुणत्व सिद्ध है ।

✻ उनसे संख्यातभागहानिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ५५४. यथा—एक अधिक अनन्तभागहानि और असंख्यातभागहानिके अध्वानप्रमाणसे एक संख्यातभागहानिअध्वानको करके इस प्रकारके दो, तीन, चार इत्यादि क्रमसे गिनने पर उत्कृष्ट संख्यातके साधिक अर्धमात्र अध्वानोंको ग्रहण कर संख्यातभागहानिका विषय होता है, क्योंकि तत्प्रमाण अध्वान जाकर वहाँ पर द्विगुणहानिकी उत्पत्ति देखी जाती है, इसलिए विषयके अनुसार उत्कृष्ट संख्यातका साधिक अर्धभागप्रमाण अथवा तत्प्रायोग्य संख्यात अंकप्रमाण गुणकार होता है ।

✻ उनसे संख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ५५५. क्योंकि संख्यातभागहानिके संक्रामकोंके द्वारा प्राप्त हुए अध्वानके प्रमाणसे एक अध्वानको करके वैसे अध्वान जब तक जघन्य परीतासंख्यातके एक कम अर्धच्छेदप्रमाण हो जाते हैं तब तक संख्यातगुणहानिका ही विषय रहता है, क्योंकि वहाँसे लेकर असंख्यातगुणहानिकी उत्पत्ति होती है । इसलिए यहाँ पर भी विषयके अनुसार एक कम जघन्य परीतासंख्यातके अर्धच्छेद प्रमाण अथवा तत्प्रायोग्य संख्यात अङ्कप्रमाण गुणकार होता है ।

❀ असंखेज्जगुणहाणिसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५५६. पुव्वाणुपुव्वीए चरिमसंखेज्जभागवड्ढिकंडयस्सासंखेज्जदिभागे चेव संखेज्ज-भागहाणि-संखेज्जगुणहाणीओ समप्पंति । तेण कारणेण चरिमसंखेज्जभागवड्ढिकंडयस्स सेसा असंखेज्जा भागा संखेज्जा संखेज्जगुणवड्ढिसयलद्धाणं च असंखेज्जगुणहाणिसंकामयाणं विसयो होइ । तदो तत्थ विसयाणुसारेण अंगुलस्सासंखेज्जभागमेत्तो गुणगारो तप्पाओग्गासंखेज्ज-रूवमेत्तो वा ।

❀ अणंतभागवड्ढिसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५५७. तं कथं ? पुव्वुत्तासेसहाणिसंकामयरासी एयसमयसंचिदो, खंडयघादाणं तस्समयं मोत्तूणण्णत्थ हाणिसंकमसंभवादो । एसो पुण रासी आवलियाए असंखेज्जभाग-मेत्तकालसंचिदो, पंचण्हं वड्ढीणमावलियाए असंखेज्जदिभागमेत्तकालोवएसादो । तदो कंडय-मेत्तविसयत्ते वि संचयकालपाहम्मेणासंखेज्जभागमेत्तमेदेसिं सिद्धं । गुणगारपमाणमेत्थासंखेज्जा लोगा त्ति वत्तव्वं । कुदो एवं चे ? हाणिपरिणामाणं सुट्ठु दुल्लहत्तादो, वड्ढिपरिणामाणमेव पायेण संभवादो ।

❀ असंखेज्जभागवड्ढिसंकामया असंखेज्जगुणा ।

---

* उनसे असंख्यातगुणहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५५६. पूर्वानुपूर्वीके अनुसार अन्तिम संख्यातभागवृद्धि काण्डकके असंख्यातवें भागमें ही संख्यातभागहानि और संख्यातगुणहानि समाप्त होती हैं । इस कारणसे अन्तिम संख्यातभाग-वृद्धिकाण्डक शेष असंख्यात बहुभाग और संख्यातगुणवृद्धिका सकल अध्वान असंख्यातगुणहानिके संक्रामकोंका विषय है । इसलिए यहाँ पर विषयके अनुसार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण अथवा तत्प्रायोग्य असंख्यात अङ्कप्रमाण गुणकार है ।

* उनसे अनन्तभागवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५५७. क्योंकि पूर्वोक्त समस्त हानियोंकी संक्रामकराशि एक समयमें सञ्चित है, क्योंकि काण्डकघातोंके उस समयको छोड़कर अन्यत्र हानिसंक्रम सम्भव नहीं है । परन्तु यह राशि आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा सञ्चित हुई है, क्योंकि पाँच वृद्धियोंके आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कालका उपदेश पाया जाता है । इसलिए इसका विषय काण्डकमात्र रहते हुए भी सञ्चय-कालकी प्रमुखतासे पूर्वोक्त हानियोंके संक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं यह सिद्ध होता है । यहाँ पर गुणकारका प्रमाण असंख्यात लोक है ऐसा कहना चाहिए ।

शंका—ऐसा क्यों है ?

समाधान—क्योंकि हानिके कारणभूत परिणाम अत्यन्त दुर्लभ हैं । प्रायः करके वृद्धिके कारणभूत परिणाम ही सम्भव है ।

* उनसे असंख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

५५८. दोण्हमावलियासंखेजभागमेत्तकालपडिबद्धत्ते समाणे संते वि पुव्विल्लकालादो एदस्स कालो असंखेज्जगुणो, पुव्विल्लकालस्स चेव असंखेज्जगुणत्तं। कधमेसो कालगओ विसेसो परिच्छिण्णो ? महाबंधपरूविदकालप्पाबहुआदो। अहवा विसयं पेक्खिऊणेदस्सासंखेज्जगुणत्तं समत्थेयव्वं।

⊛ संखेज्जभागवड्ढिसंकामया संखेज्जगुणा।

§ ५५९. को गुणगारो ? उक्कस्ससंखेज्जयस्स अद्धं सादिरेयं, विसयाणुसारेण तदुवलंभादो, तप्पाओग्गसंखेज्जरूवमेत्तोवक्कमणसंकमगुणगारेण तदुवलंभादो ?

⊛ संखेज्जगुणवड्ढिसंकामया संखेज्जगुणा।

§ ५६०. एत्थ वि विसयं कालं च पहाणीकादूण पुव्वं व गुणगारसमत्थणा कायव्वा।

⊛ असंखेज्जगुणवड्ढिसंकामया असंखेज्जगुणा।

§ ५६१. को गुणगारो ? अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो। तप्पाओग्गसंखेज्जरूवमेत्तो वा विसय-कालाणमणुसरणे जहाकमं तदुवलद्धीदो।

⊛ अणंतगुणहाणिसंकामया असंखेज्जगुणा।

---

§ ५५८. यद्यपि दोनों वृद्धियोंका काल आवलिके असंख्यातवें भागरूपसे समान है तो भी पूर्वोक्त वृद्धिके कालसे इसका काल असंख्यातगुणा है, इसलिए पूर्वोक्त वृद्धिके संक्रामकोंसे इसके संक्रामक असंख्यातगुणे सिद्ध होते हैं।

शंका—यह कालगत विशेषता किस प्रमाणसे जानी जाती है ?

समाधान—महाबन्धमें कहे गये कालविषयक अल्पबहुत्वसे जानी जाती है। अथवा विषयकी अपेक्षा इसके असंख्यातगुणे होनेका समर्थन करना चाहिए।

*** उनसे संख्यातभागवृद्धिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं।**

§ ५५९. गुणकार क्या है ? उत्कृष्ट संख्यातका साधिक अर्धभागप्रमाण गुणकार है, क्योंकि विषयके अनुसार उसकी उपलब्धि होती है तथा तत्प्रायोग्य संख्यात अङ्कप्रमाण उपक्रमण संक्रम-गुणकारके द्वारा उसकी उपलब्धि होती है।

*** उनसे संख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं।**

§ ५६०. यहाँ पर भी विषय और कालको प्रधान करके पहलेके समान गुणकारका समर्थन करना चाहिए।

*** उनसे असंख्यातगुणवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ५६१. गुणकार क्या है ? अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण या तत्प्रायोग्य संख्यात अङ्क-प्रमाण गुणकार है, क्योंकि विषय और कालके अनुसार यथाक्रमसे उसकी उपलब्धि होती है।

*** उनसे अनन्तगुणहानिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं।**

§ ५६२. किं कारणं ? असंखेज्जगुणवड्ढिसंकामयरासी आवलि० असंखे०भागमेत्त-कालसंचिदो होइ। किंतु थोवविसयो, एयछट्ठाणब्भंतरे चेय तव्विसयणिबंधदंसणादो। अणंत-गुणहाणिसंकामयरासी पुण जइ वि एयसमयसंचिदो तो वि असंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणपडिबद्धो। तदो सिद्धमेदेसिं तत्तो असंखेज्जगुणत्तं।

❀ अणंतगुणवड्ढिसंकामया असंखेज्जगुणा।

§ ५६३. को गुणगारो ? अंतोमुहुत्तं। कुदो ? दोण्हमेदेसिमभिण्णविसयत्ते वि अणंतगुणवड्ढिसंकामयकालस्स अंतोमुहुत्तपमाणोवएसे सुत्तबलेण तव्विणिण्णयादो।

❀ अवट्ठिदसंकामया संखेज्जगुणा।

§ ५६४. कुदो ? अणंतगुणवड्ढिकालादो अवट्ठिदसंकमकालस्स संखेज्जगुणत्तावलंबणादो।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अणंतगुणहाणिसंकामया।

§ ५६५. कुदो ? दंसणमोहक्खवयजीवाणं चेव तब्भावेण परिणामोवलंभादो।

❀ अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा।

§ ५६६. कुदो ? पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तजीवाणं तब्भावेण परिणदाणमुवलंभादो।

❀ अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा।

---

§ ५६२. क्योंकि असंख्यातगुणवृद्धिका संक्रमण करनेवाली राशि आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा संचित होकर भी स्तोक विषयवाली होती है, क्योंकि एक षट्स्थानके भीतर ही उसके विषयका सम्बन्ध देखा जाता है। परन्तु अनन्तगुणहानिका संक्रमण करनेवाली राशि यद्यपि एक समयमें संचित हुई है तो भी असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानप्रतिबद्ध है, इसलिए उनसे ये असंख्यातगुणे हैं यह सिद्ध हुआ।

* उनसे अनन्तगुणवृद्धिके संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ५६३. गुणकार क्या है ? अन्तर्मुहूर्त है, क्योंकि यद्यपि इन दोनोंका विषय एक है तो भी अनन्तगुणवृद्धिके संक्रामकोंका काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है इस उपदेशका निर्णय सूत्रके बलसे होता है।

* उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ५६४. क्योंकि अनन्तगुणवृद्धिके कालसे अवस्थितसंक्रमका काल संख्यातगुणा पाया जाता है।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको अनन्तगुणहानिके संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं।

§ ५६५. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवोंका ही उस रूपसे परिणमन उपलब्ध होता है।

* उनसे अवक्तव्यसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ५६६. क्योंकि पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीव उस रूपसे परिणमन करते हुए पाये जाते हैं।

* उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ५६७. कुदो ? तव्वदिरित्तासेससम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसंतकम्मियजीवाणमवट्ठिद-संकामयभावेणावट्ठाणदंसणादो। एत्थ गुणगारपमाणं आवलि० असंखे०भागमेत्तो घेत्तव्वो।

❀ सेसाणं कम्माणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया।

§ ५६८. कुदो ? अणंताणुबंधीणं विसंजोयणापुव्वसंजोगे वट्टमाणपलिदोवमासंखेज्ज-भागमेत्तजीवाणं सेसकसाय-णोकसायाणं पि सव्वोवसामणापडिवादपढमसमयमहिट्ठिदसंखेज्जोव-सामयजीवाणमवत्तव्वभावेण परिणदाणमुवलद्धीदो।

❀ अणंतभागहाणिसंकामया अणंतगुणा।

§ ५६९. कुदो ? सव्वजीवाणमसंखेज्जभागपमाणत्तादो।

❀ सेसाणं संकामया मिच्छत्तभंगो।

§ ५७०. सुगममेदमप्पणासुत्तं।

एवमोघेणप्पाबहुअं समत्तं।

§ ५७१. आदेसेण मणुसतिए विहत्तिभंगो। णवरि बारसक०—णवणोक० अणंताणु० भंगो। सेससव्वमग्गणासु विहत्तिभंगो। एवं जाव अणाहारि त्ति।

एवं वड्ढिसंकमो समत्तो।

---

§ ५६७. क्योंकि पूर्वोक्त दो पदवाले जीवोंके सिवा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके सत्कर्मवाले शेष सब जीव अवस्थितसंक्रम करते हुए पाये जाते हैं। यहाँ पर गुणकारका प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण लेना चाहिए।

*** शेष कर्मोंके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं।**

§ ५६८. क्योंकि अनन्तानुबन्धियोंके विसंयोजनापूर्वक संयोगमें विद्यमान हुए पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीव तथा शेष कषायों और नोकषायोंके भी सर्वोपशमनासे गिरते हुए संक्रमके प्रथम समयमें स्थित हुए संख्यात उपशामक जीव अवक्तव्यभावसे परिणमन करते हुए उपलब्ध होते हैं।

*** उनसे अनन्तभागहानिके संक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं।**

§ ५६९. क्योंकि ये सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण होते हैं।

*** शेष पदोंके संक्रामक जीवोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।**

§ ५७०. यह अर्पणासूत्र सुगम है।

इस प्रकार ओघसे अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

§ ५७१. आदेशसे मनुष्यत्रिकमें अनुभागविभक्तिके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग अनन्तानुबन्धीके समान है। शेष सब मार्गणाओंमें अनुभाग विभक्तिके समान भङ्ग है।

इस प्रकार वृद्धिसंकम समाप्त हुआ।

⁂ एत्तो ट्ठाणाणि कायव्वाणि ।

§ ५७२. सण्णादिचउवीसाणिओगद्दाराणं सभुजगार-पदणिक्खेव-वड्ढीणं समत्ति-समणंतरमेत्तो संकमट्ठाणपरूवणा कायव्वा त्ति पइण्णावक्कमेदं । किमट्ठमेसा ट्ठाणपरूवणा आगया? वड्ढीए परूविदछवड्ढि-हाणीणमणंतरवियप्पपदुप्पायणट्ठमागया ? ण, वड्ढिपरूवणाए चेव गयत्थत्तादो णिरत्थयमिदं, तत्थापरूविदबंधसमुप्पत्तिय-हदसमुप्पत्तिय-हदहदसमुप्पत्तियभेदाणं पादेक्कमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणसरूवाणमिह परूवणोवलंभादो ।

⁂ जहा संतकम्मट्ठाणाणि तहा संकमट्ठाणाणि ।

§ ५७३. जहा संतकम्मट्ठाणाणि बंधसमुप्पत्तियादिभेयभिण्णाणि अणुभागविहत्तीए सवित्थरं परूविदाणि तहा संकमट्ठाणाणि वि एत्थाणुगंतव्वाणि, दव्वट्ठियणयावलंबणेण तत्तो एदेसिं विसेसाभावादो त्ति भणिदं होदि ।

⁂ तहा वि परूवणा कायव्वा ।

§ ५७४. तथापि पर्यायार्थिकनयानुग्रहार्थं तेषामिह पुनः प्ररूपणा कर्तव्यैवेत्यर्थः । संपहि तेसु परूविज्जमाणेसु तत्थ संकमट्ठाणपरूवणदाए इमाणि चत्तारि अणियोगद्दाराणि भवंति—समुक्कित्तणा परूवणा पमाणमप्पाबहुअं च । तत्थ समुक्कित्तणा—सव्वेसिं कम्माणमत्थि

⁂ अब इससे आगे अनुभागसंक्रमस्थानोंका कथन करना चाहिए ।

§ ५७२. भुजगार, पदनिक्षेप और वृद्धिके साथ संज्ञा आदि चौबीस अनुयोगद्वारोंका कथन समाप्त होनेके बाद आगे संक्रमस्थानोंका कथन करना चाहिए इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है ।

शंका—यह स्थानप्ररूपणा किसलिए आई है ?

समाधान—वृद्धिके द्वारा कही गई छह वृद्धियों और छह हानियोंके अवान्तर भेदोंका कथन करनेके लिए यह प्ररूपणा आई है । वृद्धिप्ररूपणाके द्वारा काम चल जाता है, इसलिए इसका कथन करना निरर्थक है ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि वहाँ पर नहीं कहे गये अलग अलग प्रत्येक असंख्यात लोकप्रमाण षट्स्थानस्वरूप बन्धसमुत्पत्तिक, हतसमुत्पत्तिक और हतहतसमुत्पत्तिकरूप भेदोंका यहाँ पर कथन पाया जाता है ।

⁂ जिस प्रकार सत्कर्मस्थान हैं उसी प्रकार संक्रमस्थान हैं ।

§ ५७३. जिस प्रकार बन्धसमुत्पत्तिक आदिके भेदसे अनेक प्रकारके सत्कर्मस्थान अनुभाग-विभक्तिमें विस्तारके साथ कहे हैं उसी प्रकार यहाँ पर संक्रमस्थान भी जानने चाहिए, क्योंकि द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षा उनसे इनमें विशेष भेद नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

⁂ तो भी उनकी प्ररूपणा करनी चाहिए ।

§ ५७४. तथापि पर्यायार्थिकनयका अनुग्रह करनेके लिए उनकी यहाँ पर पुनः प्ररूपणा करनी ही चाहिए यह इसका तात्पर्य है । अब उनका कथन करने पर उनमेंसे संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणामें ये चार अनुयोग द्वार होते हैं—समुत्कीर्तना, प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व । उनमेंसे समुत्कीर्तना—

बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि हदहदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि च। णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णत्थि बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि। एवं सुगमत्तादो समुक्कित्तणामुल्लंघिऊण परूवणं पमाणं च एक्कदो भणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरमाढवेदि—

*** उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एगं संतकम्मं तमेगं संकमट्ठाणं।**

§ ५७५. उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एयं संतकम्ममेगो संतकम्मवियप्पो त्ति वुत्तं होइ, बंधाणंतरसमए बंधट्ठाणस्सेव संतकम्मववएससिद्धीदो। तमेव संकमट्ठाणं पि, बंधावलियवदिक्कमाणंतरं तस्सेव संकमट्ठाणभावेण परिणयत्तादो। तदो पज्जवसाणबंधट्ठाणस्स संतकम्मट्ठाणत्ताणुवादमुहेण संकमट्ठाणभावविहाणमेदेण सुत्तेण कयं ति दट्ठव्वं।

*** दुचरिमे अणुभागबंधठाणे एवमेव।**

§ ५७६. दुचरिमाणुभागबंधट्ठाणं णाम चरिमाणुभागबंधट्ठाणस्स अणंतरहेट्ठिमबंधट्ठाणं तत्थ एवं चेव संतकम्मट्ठाण-संकमट्ठाणभावपरूवणा कायव्वा, अणंतरपरूविदणाएण तदुभयववएससिद्धीए पडिबंधाभावादो। एवं तिचरिमादिबंधट्ठाणेसु वि तदुभयभावसंभवो णेदव्वो त्ति परूवणट्ठमुत्तरसुत्तावयारो—

*** एवं ताव जाव पच्छाणुपुव्वीए पढममणंतगुणहीणबंधट्ठाणमपत्तो त्ति।**

सब कर्मोंके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान, हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान और हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान होते हैं। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान नहीं होते। इस प्रकार सुगम होनेसे समुत्कीर्तनाको उल्लंघन कर प्ररूपणा और प्रमाणका एक साथ कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको आरम्भ करते हैं—

*** उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थानमें एक सत्कर्म होता है। वह एक संक्रमस्थान है।**

§ ५७५. उत्कृष्ट अनुभागबन्धस्थानमें एक सत्कर्म अर्थात् एक सत्कर्मविकल्प होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है, क्योंकि बन्धके अनन्तर समयमें बन्धस्थानको ही सत्कर्म संज्ञाकी सिद्धि है। तथा वही संक्रमस्थान भी है, क्योंकि बन्धावलिके व्यतीत होनेके बाद वही संक्रमस्थानरूपसे परिणत हो जाता है। इसलिए इस सूत्रके द्वारा अन्तिम बन्धस्थानका सत्कर्मस्थानके अनुवादकी मुख्यतासे संक्रमस्थानभावका विधान किया ऐसा जानना चाहिए।

*** द्विचरम अनुभागबन्धस्थानमें इसी प्रकार जानना चाहिए।**

§ ५७६. अन्तिम अनुभागबन्धस्थानके अनन्तर अधस्तन बन्धस्थानको द्विचरम अनुभागबन्धस्थान कहते हैं। वहाँ पर इसीप्रकार सत्कर्मस्थान और संक्रमस्थानभावका कथन करना चाहिए, क्योंकि अनन्तर कहे गये न्यायके अनुसार उक्त दोनों संज्ञाओंकी सिद्धिमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है। इसी प्रकार त्रिचरम आदि बन्धस्थानोंमें भी उक्त दोनों भावोंका सम्भव जान लेना चाहिए इस प्रकारका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रका अवतार किया है—

*** इस प्रकार पश्चादानुपूर्वीसे जब तक प्रथम अनन्तगुणहीन बन्धस्थान नहीं प्राप्त होता तब तक जानना चाहिए।**

§ ५७७. एवमणेण विहाणेण पच्छाणुपुव्वीए ताव णेदव्वं जाव पढममणंतगुणहीण-बंधट्ठाणमपावेऊण तत्तो उवरिमट्ठंकट्ठाणं पत्तो त्ति । कुदो ? तेसिं सव्वेसिं बंधसमुप्पत्तिय-संतकम्मट्ठाणत्तसिद्धीए पडिसेहाभावादो । तत्तो हेट्ठा वि एसा चेव परूवणा होइ, किंतु एत्थंतरे को वि विसेससंभवो अत्थि त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तपबंधमुत्तरमाह—

❀ पुव्वाणुपुव्वीए गणिज्जमाणे जं चरिममणंतगुणं बंधट्ठाणं तस्स हेट्ठा अणंतरमणंतगुणहीणमेदम्मि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि ।

§ ५७८. एदस्स सुत्तस्स अत्थविहासणं कस्सामो । तं जहा—पुव्वाणुपुव्वी णाम सुहुमहदसमुप्पत्तियसव्वजहण्णसंतकम्मट्ठाणप्पहुडि छवड्ढीए अवट्ठिदाणमणुभागबंधट्ठाणाणमादीदो परिवाडीए गणणा । ताए गणिज्जमाणे जं चरिममणंतगुणबंधट्ठाणं पज्जवसाणट्ठाणादो हेट्ठा रूवूणछट्ठाणमेत्तमोसरिदूणवट्ठिदं तस्स हेट्ठा अणंतरमणंतगुणहीणबंधट्ठाणमपावेदूण एदम्मि अंतरे घादट्ठाणाणि समुप्पज्जंति । केत्तियमेत्ताणि ताणि त्ति वुत्ते असंखेज्जलोगमेत्ताणि त्ति तेसिं पमाणणिद्देसो कदो । कुदो ? रूवूणछट्ठाणपमाणउवरिमबंधट्ठाणेसु पादेक्कमसंखेज्जलोगमेत्ता-णुभागघादहेदुविसोहिपरिणामेहिं घादिज्जमाणेसु रूवूणछट्ठाणविक्खंभपरिणामट्ठाणायामहद-समुप्पत्तियट्ठाणाणं हदहदसमुप्पत्तिट्ठाणसहगयाणमसंखेज्जलोगमेत्ताणमुप्पत्तीए विरोहाभावादो ।

---

§ ५७७. 'एवं' अर्थात् इस विधिसे पश्चादानुपूर्वीके अनुसार प्रथम अनन्त गुणहीन बन्ध-स्थानको नहीं प्राप्त करके उससे आगे अष्टांकस्थानके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए, क्योंकि उन सबके बन्धसमुत्पत्तिकसत्कर्मस्थानत्वकी सिद्धिमें कोई प्रतिषेध नहीं है । इससे नीचे भी यही प्ररूपणा है । किन्तु यहाँ पर अन्तरालमें कुछ विशेष सम्भव है, इसलिए उसका कथन करते हुए आगेके सूत्र-प्रबन्धको कहते हैं—

*** पूर्वानुपूर्वीसे गणना करने पर जो अन्तिम अनन्तगुणित बन्धस्थान है और उसके नीचे अनन्तरवर्ती जो अनन्तगुणहीन बन्धस्थान है, इन दोनोंके मध्यमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान होते हैं ।**

§ ५७८. इस सूत्रके अर्थका व्याख्यान करते हैं । यथा—सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी सबसे जघन्य हतसमुत्पत्तिक सत्कर्मस्थानसे लेकर छह वृद्धिरूपसे अवस्थित अनुभागबन्धस्थानोंकी प्रारम्भसे परिपाटीक्रमसे गणना करना पूर्वानुपूर्वी कहलाती है । उसके अनुसार गणना करने पर जो अन्तिम अनन्तगुणित बन्धस्थान अन्तिम स्थानसे नीचे एक कम छह स्थानमात्र उतरकर स्थित है उसके नीचे अनन्तर अनन्तगुणहीन बन्धस्थानको नहीं प्राप्त करके इस अन्तरालमें घातस्थान उत्पन्न होते हैं । वे कितने होते हैं ऐसा पूछने पर असंख्यात लोकप्रमाण होते हैं इस प्रकार उनके प्रमाणका निर्देश किया, क्योंकि एक कम षट्स्थानप्रमाण उपरिम बन्धस्थानोंका अलग-अलग असंख्यात लोकप्रमाण अनुभागघातके हेतुभूत परिणामोंके द्वारा घात करने पर हतहतसमुत्पत्तिकस्थानोंके साथ प्राप्त हुए असंख्यात लोकप्रमाण एक कम षट्स्थानप्रमाण विष्कम्भवाले तथा परिणामस्थानप्रमाण आयामवाले

एदेसिं च परूवणा अणुभागविहत्तीए सवित्थरमणुगया त्ति णेह पुणो परूविज्जदे। संपहि एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्तघादट्ठाणाणं बंधसमुप्पत्तियभावपडिसेहमुहेण संतकम्मसंकमट्ठाणत्त-विहाणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

*** ताणि संतकम्मट्ठाणाणि ताणि चेव संकमट्ठाणाणि।**

§ ५७९. ताणि समणंतरणिद्दिट्ठघादट्ठाणाणि संतकम्मट्ठाणाणि, हदसमुप्पत्तियसंत-कम्मभावेणावट्ठिदाणं तब्भावाविरोहादो। ताणि चेव संकमट्ठाणाणि। कुदो? तेसिमुप्पत्ति-समणंतरसमयप्पहुडि ओकड्डणादिवसेण संकमपज्जायपरिणामे पडिसेहाभावादो। ताणि चेवे त्ति एत्थतणएवकारो ताणि संतकम्मसंकमट्ठाणाणि चेव, ण पुणो बंधट्ठाणाणि त्ति अवहारणफलो। एवमेत्थंतरे घादट्ठाणसंभवगयविसेसं पदुप्पाइय संपहि एत्तो हेट्ठिमबंधट्ठाण-पडिबद्धसंकमट्ठाणाणि परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

*** तदो पुणो बंधट्ठाणाणि संकमट्ठाणाणि च ताव तुल्लाणि जाव पच्छाणुपुव्वीए विदियमणंतगुणहीणबंधट्ठाणं।**

§ ५८०. तदो अणंतरणिद्दिट्ठघादट्ठाणसमुप्पत्तिविसयादो हेट्ठिमाणंतगुणहीणबंधट्ठाण-प्पहुडि पुणो वि बंधट्ठाणाणि संकमट्ठाणाणि च ताव सरिसाणि होदूण गच्छंति जाव पच्छाणु-पुव्वीए छट्ठाणमेत्तमोसरिऊण विदियमणंतगुणहीणबंधट्ठाणसंधिमपत्ताणि त्ति। कुदो? तत्थ

हतसमुत्पत्तिकस्थानोंकी उत्पत्ति होनेमें कोई विरोध नहीं आता। इनकी प्ररूपणा अनुभागविभक्तिमें विस्तारके साथ की गई है, इसलिए यहाँ पर पुनः प्ररूपणा नहीं करते। अब ये असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान बन्धसमुत्पत्तिकरूप नहीं होकर सत्कर्म और संक्रमस्थानरूप हैं इस बातका विधान करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** वे सत्कर्मस्थान हैं और वे ही संक्रमस्थान हैं।**

§ ५७९. अनन्तर पूर्व कहे गये वे घातस्थान सत्कर्मस्थान हैं, क्योंकि वे हतसमुत्पत्तिक सत्कर्मरूपसे अवस्थित हैं, इसलिए उनके उन रूप होनेमें कोई विरोध नहीं आता। और वे ही संक्रमस्थान हैं, क्योंकि उत्पत्ति होनेके अनन्तर समयसे लेकर अपकर्षण आदिके वशसे उनका संक्रमपर्यायरूपसे परिणमन करनेमें कोई प्रतिबन्ध नहीं है। 'ताणि चेव' इस प्रकार यहाँ पर जो एवकार है सो इस अवधारणका यह फल है कि वे सत्कर्मस्थान और संक्रमस्थान ही हैं। परन्तु बन्धस्थान नहीं हैं। इस प्रकार यहाँ पर अन्तरालमें घातस्थानोंमें सम्भव विशेषताका कथन करके अब यहाँसे नीचे बन्धस्थानोंसे सम्बन्ध रखनेवाले संक्रमस्थानोंका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** वहाँ से लेकर पश्चादानुपूर्वीसे द्वितीय अनन्तगुणहीन बन्धस्थानके प्राप्त होने तक जितने बन्धस्थान और संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं वे सब तुल्य होते हैं।**

§ ५८०. 'तदो' अर्थात् अनन्तर पूर्व कहे गये घातस्थानसमुत्पत्तिविषयसे नीचे जो अनन्त-गुणहीन बन्धस्थान है उससे लेकर पुनरपि बन्धस्थान और संक्रमस्थान तब तक सदृश होकर जाते

तदुभयसंभवे विरोहाणुवलंभादो । संतकम्मट्ठाणत्तमेदेसिं किण्ण परूविदं ? ण, अणुत्तसिद्धत्तादो । एवमेदासिं परूवणं कादूण संपहि विदियअणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्स उवरिल्ले अंतरे पुव्वं व घादट्ठाणाणि होंति त्ति परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ विदियअणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्सुवरिल्ले अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि ।

५८१. कुदो ? एगछट्ठाणेणूणाणुभागसंतकम्मियमादिं कादूण जाव पच्छाणुपुव्वीए विदियअट्ठंकट्ठाणे त्ति ताव एदेसु ट्ठाणेसु घादिज्जमाणेसु पयदंतरे असंखेज्जलोगमेत्तघादट्ठाणाणमुप्पत्तीए परिप्फुडमुवलंभादो ।

❀ एवमणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्सुवरि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि ।

§ ५८२. एवमणंतरपरूविदविहाणेण असंखेज्जलोगमेत्तघादट्ठाणाणि त्ति चरिमादिहेट्ठिमासेसअट्ठंकुव्वंकाणमंतरेसु अव्वामोहेण परूवेयव्वाणि त्ति भणिदं होदि । णवरि सुहुमहदसमुप्पत्तियजहण्णट्ठाणादो उवरिमाणं संखेज्जाणमट्ठंकुव्वंकाणमंतरेसु हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाण-

---

हैं जब तक पश्चादानुपूर्वीसे षट्स्थानमात्र उतर कर दूसरे अनन्तगुणहीन बन्धस्थानकी सन्धिको नहीं प्राप्त होते, क्योंकि वहाँ पर उन दोनोंके सम्भव होनेमें कोई विरोध नहीं पाया जाता ।

शंका—ये सत्कर्मस्थान भी हैं ऐसा क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि यह बात बिना कहे ही सिद्ध है ।

इसप्रकार इनका कथन करके अब द्वितीय अनन्तगुणहीन बन्धस्थानके उपरिम अन्तरमें पहलेके समान घातस्थान होते हैं इस बातका कथन करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** द्वितीय अनन्तगुणहीनबन्धस्थानके उपरिम अन्तरमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान होते हैं ।**

§ ५८१. क्योंकि षट्स्थानसे न्यून अनुभागसत्कर्मसे लेकर पश्चादानुपूर्वीसे द्वितीय अष्टांक स्थानके प्राप्त होने तक इन स्थानोंके घात करने पर प्रकृत अन्तरमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थानोंकी उत्पत्ति स्पष्टरूपसे उपलब्ध होती है ।

*** इस प्रकार प्रत्येक अनन्तगुणहीन बन्धस्थानके अन्तरालमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान होते हैं ।**

§ ५८२. इस प्रकार अनन्तर पूर्व कहे गये विधानके अनुसार अन्तिम आदि अधस्तन सब अष्टांक और उर्वकोंके अन्तरालोंमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थानोंका व्यामोह रहित होकर कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सूक्ष्म एकेन्द्रियसम्बन्धी हतसमुत्पत्तिक जघन्य स्थानसे लेकर उपरिम संख्यात अष्टांक और उर्वकोंके अन्तरालोंमें हत-

मुप्पत्ती णत्थि त्ति वत्तव्वं । सुत्तेण विणा कथमेदं परिच्छिज्जदे ? ण, सुत्ताविरुद्धपरमगुरुपरंपरागयविसिट्ठोवएसबलेण तदवगमादो । संपहि उत्तत्थविसयणिण्णयदढीकरणट्ठमुवसंहारवक्कमाह—

*** एवमणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्स उवरिल्ले अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि भवंति णत्थि अण्णम्मि ।**

§ ५८३. सुगममेदमुवसंहारवक्कं । णवरि अट्ठंकुव्वंकाणं विच्चालेसु चेव घादट्ठाणाणि होंति, णाण्णत्थे त्ति जाणावणट्ठं 'णत्थि अण्णम्हि' त्ति भणिदं । एवमेदमुवसंहरिय संपहि बंध-संकमट्ठाणाणमण्णोण्णविसयावहारणकमपदंसणट्ठमिदमाह—

*** एवं जाणि बंधट्ठाणाणि ताणि णियमा संकमट्ठाणाणि ।**

§ ५८४. किं कारणं ? पुव्वुत्तेण णाएण सव्वेसिं बंधट्ठाणाणं संकमट्ठाणत्तसिद्धीए विरोहाभावादो ।

*** जाणि संकमट्ठाणाणि ताणि बंधट्ठाणाणि वा ण वा ।**

§ ५८५. कुदो ? बंधट्ठाणेहिंतो पुधभूदघादट्ठाणेसु वि संकमट्ठाणाणमणुवुत्तिदंसणादो ।

समुत्पत्तिक संक्रमस्थानोंकी उत्पत्ति नहीं होती ऐसा कहना चाहिए ।

शंका—सूत्रके बिना इस तथ्यका ज्ञान कैसे होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सूत्रके अविरोधी परम गुरुओंके परम्परासे आए हुए विशिष्ट उपदेशके बलसे इस तथ्यका ज्ञान होता है ।

अब उक्त विषयके निर्णयको दृढ़ करनेके लिए उपसंहाररूप सूत्रको कहते हैं—

*** इस प्रकार प्रत्येक अनन्तगुणहीन बन्धस्थानके उपरिम अन्तरालमें असंख्यात लोकप्रमाण घातस्थान होते हैं, अन्यमें नहीं ।**

§ ५८३. यह उपसंहार बचन सुगम है । इतनी विशेषता है कि अष्टांक और उर्वंकोंके अन्तरालोंमें ही घातस्थान होते हैं, अन्यत्र नहीं होते इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'णत्थि अण्णम्हि' यह वचन कहा है । इस प्रकार इसका उपसंहार करके अब बन्धस्थानों और संक्रमस्थानोंके परस्पर विषयका अवधारणक्रम दिखलानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इस प्रकार जो बन्धस्थान हैं वे नियमसे संक्रमस्थान हैं ।**

§ ५८४ क्योंकि पूर्वोक्त न्यायसे सब बन्धस्थानोंके संक्रमस्थानरूपसे सिद्धि होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

*** तथा जो संक्रमस्थान हैं वे बन्धस्थान हैं भी और नहीं भी हैं ।**

§ ५८५. क्योंकि बन्धस्थानोंसे पृथग्भूत घातस्थानोंमें भी संक्रमस्थानोंकी अनुवृत्ति देखी जाती है ।

❀ तदो बंधट्ठाणाणि थोवाणि ।

§ ५८६. जदो एवं घादट्ठाणेसु बंधट्ठाणाणं संभवो णत्थि तदो ताणि थोवाणि त्ति भणिदं होइ ।

❀ संतकम्मट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।

§ ५८७. कुदो ? बंधट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणघादट्ठाणेसु वि संतकम्मट्ठाणाणं संभवदंसणादो ।

❀ जाणि च संतकम्मट्ठाणाणि ताणि संकमट्ठाणाणि ।

§ ५८८. कुदो ? बंध-घादट्ठाणसरूवसंतकम्मट्ठाणाणं सव्वेसिमेव संकमट्ठाणत्तसिद्धीए अणंतरमेव परूविदत्तादो । एवमेत्तिएण पबंधेण संकमट्ठाणाणं परूवणं पमाणाणुगमं च कादूण संपहि तेसिं सव्वाओ पयडीओ अस्सिऊण सत्थाण-परत्थाणेहि अप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ अप्पाबहुअं जहा सम्माइट्ठिगे बंधे तहा ।

§ ५८६. जहा सम्माइट्ठिबंधे बंधट्ठाणाणमप्पाबहुअं परूविदं सव्वकम्माणं तहा एत्थ वि संकमट्ठाणाणमप्पाबहुअं परूवेयव्वमिदि भणिदं होइ । एदेण सुत्तेण परत्थाणप्पाबहुअं सूचिदं । सत्थाणप्पाबहुअं पि देसामासयभावेण सूचिदमिदि घेत्तव्वं । तदो सत्थाण-परत्थाण-

---

* इसलिए बन्धस्थान थोड़े हैं ।

§ ५८६. यतः इस प्रकार घातस्थानोंमें बन्धस्थान सम्भव नहीं हैं अतः वे स्तोक हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* उनसे सत्कर्मस्थान असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५८७. क्योंकि बन्धस्थानोंसे असंख्यातगुणे घातस्थानोंमें भी सत्कर्मस्थानोंकी सम्भावना देखी जाती है ।

* जो सत्कर्मस्थान हैं वे सक्रमस्थान हैं ।

§ ५८८. क्योंकि बन्धस्थान और घातस्थानरूप सभी सत्कर्मस्थान संक्रमस्थान हैं इसकी सिद्धिका कथन पहले ही कर आये हैं । इस प्रकार इतने प्रबन्धके द्वारा संक्रमस्थानोंका कथन और प्रमाणानुगम करके अब उनकी सब प्रकृतियोंका आश्रय लेकर स्वस्थान और परस्थान दोनों प्रकारसे अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* जिस प्रकार सम्यग्दृष्टिके बन्धस्थानोंका अल्पबहुत्व कहा है उसी प्रकार यहाँ पर जानना चाहिए ।

§ ५८६. जिस प्रकार सम्यग्दृष्टिसम्बन्धी बन्ध अनुयोगद्वारमें सब कर्मोंके बन्धस्थानोंका अल्पबहुत्व कहा है उसी प्रकार यहाँ पर भी संक्रमस्थानोंके अल्पबहुत्वका कथन करना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस सूत्रके द्वारा परस्थान अल्पबहुत्वका सूचन किया है । तथा देशामर्षक-

भेदेण दुविहं पि अप्पाबहुअमेत्थ वत्तइस्सामो । तं जहा, सत्थाणे पयदं—मिच्छत्तस्स सव्व-त्थोवाणि बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि । हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हद-हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । को गुणगारो ? असंखेज्जा लोगा । कारणं सुगमं । एवं सव्वकम्माणं । णवरि सम्म०—सम्मामि० सव्वत्थोवाणि घादट्ठाणाणि, दंसणमोह-क्खवणाए चेव तेसिमुवलंभादो । संकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । केत्तियमेत्तेण ? एगरूव-मेत्तेण । कुदो ? उक्कस्साणुभागट्ठाणस्स वि तत्थ पवेसुवलंभादो । एवं सत्थाणप्पाबहुअं समत्तं ।

§ ५६०. संपहि परत्थाणप्पाबहुअं वत्तइस्सामो । तं जहा—सव्वत्थोवाणि सम्मामि० अणुभागसंकमट्ठाणाणि । कुदो ? संखेज्जसहस्सपमाणत्तादो । सम्मत्त०अणुभागसंकम-ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । कुदो ? अंतोमुहुत्तपमाणत्तादो । हस्सबंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । हदसमुप्पत्तिय०ट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्पत्तिय०ट्ठा० असंखेज्ज-गुणाणि । रदीए बंधसमु०संकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । हदसमुप्प०संकमट्ठा० असंखेज्ज-गुणाणि । हदहदसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । पुरिसवेदस्स बंधसमुप्पत्तियसंकम-ट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्पत्तिय-संकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । इत्थिवेदस्स बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि ।

भावसे स्वस्थान अल्पबहुत्वका भी सूचन किया है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इसलिए स्वस्थान और परस्थानके भेदसे दोनों प्रकारके अल्पबहुत्वको यहाँ पर बतलाते हैं । यथा—स्वस्थानका प्रकरण है । मिथ्यात्वके बन्धसमुत्पत्तिक संक्रमस्थान सबसे स्तोक हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिक संक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । गुणकार क्या है ? असंख्यात लोक गुणकार है । कारण सुगम है । इसी प्रकार सब कर्मोंके उक्त स्थानोंका अल्प बहुत्व जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके घातस्थान सबसे स्तोक हैं, क्योंकि वे दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें ही उपलब्ध होते हैं । उनसे संक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । कितने अधिक हैं । एक अङ्कप्रमाण अधिक हैं, क्योंकि उत्कृष्ट अनुभागस्थानका भी उनमें प्रवेश देखा जाता है । इस प्रकार स्वस्थान अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

§ ५६०. अब परस्थान अल्पबहुत्वको बतलाते हैं । यथा—सम्यग्मिथ्यात्वके अनुभागसंक्रम-स्थान सबसे स्तोक हैं, क्योंकि वे संख्यात हजार हैं । उनसे सम्यकत्वके अनुभागसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं, क्योंकि वे अन्तर्मुहूर्तके समयप्रमाण हैं । उनसे हास्यके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रम-स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहत-समुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे रतिके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यात-गुणे हैं । उनसे पुरुषवेदके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिक-संक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे स्त्रीवेदके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं ।

दुगुंछाए बंधसमु०सं०ट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । भयस्स बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्ज-गुणाणि । हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । सोगस्स बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदसमु-प्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । अरदीए बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । णवुंसयवेदस्स बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्पत्तिय-संकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । अपच्चक्खाणमाणस्स बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । कोधे० विसेसाहिया० । मायाए विसेसा० । लोभे विसेसा० । अपच्चक्खाणमाणस्स हदसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । कोहे० विसेसा० । मायाए० विसेसा० । लोभे० विसेसा० । अपच्चक्खाणमाणस्स हदहदसमुप्पत्तिय-संकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । कोहे० विसे० । मायाए० विसेसा० । लोभे० विसेसा० । पच्चक्खाणमाणस्स बंधसमु०संकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसे० ।

उनसे हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे जुगुप्साके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिक-संक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे भयके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं। उनसे शोकके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे अरतिके बन्ध-समुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे नपुंसकवेदके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिक-संक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे अप्रत्याख्यानमानके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यात-गुणे हैं । उनसे अप्रत्याख्यानक्रोधके बन्धसमुत्पत्तिक संक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अप्रत्याख्यानमायाके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अप्रत्याख्यानलोभके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अप्रत्याख्यानमानके हतसमुत्पत्तिकसंक्रम-स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे अप्रत्याख्यानक्रोधके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अप्रत्याख्यानमायाके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अप्रत्याख्यानलोभके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अप्रत्याख्यानमानके हतहतसमुत्पत्तिक संक्रम-स्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे अप्रत्याख्यानक्रोधके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अप्रत्याख्यानमायाके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अप्रत्या-ख्यानलोभके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानमानके बन्धसमु-त्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे प्रत्याख्यानक्रोधके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष

लोभे विसे० । पच्चक्खाणमाणस्स हदसमु०संकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । पच्चक्खाणमाणस्स हदहदसमुप्पत्तियसंकमट्ठा० असंखेज्ज-गुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । माणसंजलणस्स बंधसमु०संकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । माणसंजलणस्स हदसमु०संकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसेसा० । लोहे विसे० । माणसंजलण० हदहदसमु०संकमट्ठा० असंखेज्ज-गुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । अणंताणु०माणस्स बंधसमु०संकट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । अणंताणु०माणस्स हद०-समु०संकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे विसे० । अणंताणु०—माणस्स हदहदसमुप्प०संकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । कोहे विसे० । मायाए विसे० । लोहे

अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानमायाके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानलोभके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानमानके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे प्रत्याख्यानक्रोधके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानमायाके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानलोभके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानमानके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे प्रत्याख्यानक्रोधके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानमायाके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे प्रत्याख्यानलोभके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे मानसंज्वलनके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे क्रोधसंज्वलनके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे संज्वलनमायाके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे संज्वलनलोभके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे मानसंज्वलनके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे क्रोधसंज्वलनके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे मायासंज्वलनके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे लोभसंज्वलनके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे मानसंज्वलनके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे क्रोधसंज्वलनके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक है । उनसे मायासंज्वलनके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे लोभ-संज्वलनके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीमानके बन्धसमुत्पत्तिक संक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीक्रोधके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीमायाके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीलोभके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्तानुबन्धी मानके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीक्रोधके हतसमुत्पत्तिक-संक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीमायाके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीलोभके हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्ता-नुबन्धीमानके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे अनन्तानुबन्धी क्रोधके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीमायाके हतहतसमुत्पत्तिक-

विसे० । मिच्छत्तस्स बंधसमुप्पत्तियसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदसमुप्प०संकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । हदहदसमुप्प०संकमट्ठा० असंखेज्जगुणाणि । एत्थ सव्वत्थ गुणगारो असंखेज्जा लोगा । विसेसो च सव्वत्थासंखेज्जलोगपडिभागिओ घेत्तव्वो । जेसिं कम्माणमणुभागसंतकम्ममणंतगुणं तेसिमणुभागसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । जेसिं पुण विसेसाहियमणुभागसंतकम्मं सव्वेसिं संकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि त्ति । एत्थमत्थपदं साहणं काऊणप्पाबहुगमिदं सकारणमणुमग्गिदं ।

एवमप्पाबहुअं समत्तं । तदो अणुभागसंकमट्ठाणपरूवणा समत्ता । एवं 'संकामेदि कदिं वा' त्ति एदस्स पदस्स अत्थं समाणिय अणुभागसंकमो समत्तो ।

संक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे अनन्तानुबन्धीलोभके हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । उनसे मिथ्यात्वके बन्धसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । उनसे हतहतसमुत्पत्तिकसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । यहाँ पर सर्वत्र गुणकार असंख्यात लोक और विशेष असंख्यात लोकका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतना ग्रहण करना चाहिए । जिन कर्मोंका अनुभागसत्कर्म अनन्तागुणा है उनके अनुभागसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं । और जिनका अनुभागसत्कर्म विशेष अधिक है उन सबके संक्रमस्थान विशेष अधिक हैं । इस प्रकार यहाँ पर अर्थपदका साधन करके इस अल्पबहुत्वका सकारण विचार किया ।

इस प्रकार अल्पबहुत्व समाप्त हुआ । अनन्तर अनुभागसंक्रमस्थान समाप्त हुआ । इस प्रकार 'संकामेदि कदिं वा' इस पदके अर्थका व्याख्यान करके अनुभागसंक्रम समाप्त हुआ ।

सिरि-जइवसहाइरियविरइय-चुण्णिसुत्तसमण्णिदं

सिरि-भवंतगुणहरभडारओवइट्ठं

कसायपाहुडं

तस्स

सिरि-वीरसेणाइरियविरइया टीका

जयधवला

तत्थ

बंधगो णाम छट्ठो अत्थाहियारो

पणमिय मोक्खपदेसं पदेससंकंतिविरहियं सव्वगयं ।
पयडिय धम्मुवएसं वोच्छामि पदेससंकमं णीसंकं ।।

प्रदेशके संक्रमणसे रहित और सर्वग मोक्षप्रदेशको अर्थात् सिद्धपरमेष्ठीको प्रणाम करके धर्मोपदेशको प्रकट करते हुए निःशंक होकर प्रदेशसंक्रम अधिकारको कहता हूँ ।। १ ।।

❀ पदेससंकमो ।

§ १. पयडि-ट्ठिदि-अणुभागसंकमविहासणाणंतरमिदाणिमवसरपत्तो पदेससंकमो 'गुणहीणं वा गुणविसिट्ठं' इदि गाहासुत्तावयवपडिबद्धो विहासियव्वो त्ति अहिया संभालणसुत्तमेदं । एवमहिकयस्स पदेससंकमस्स सरूवविसेसणिद्धारणट्ठमुत्तरो पुच्छाणिद्देसो—

❀ तं जहा ।

§ २. सुगमं ।

❀ मूलपदेससंकमो णत्थि ।

§ ३. कुदो सहावदो चेव मूलपयडीणमण्णोण्णविसयसंकंतीए असंभवादो ।

❀ उत्तरपयडिपदेससंकमो ।

§ ४. उत्तरपयडिपदेससंकमो अत्थि त्ति सुत्तत्थसंबंधो । कुदो तासिं समयाविरोहेण परोप्परविसयसंकमस्स पडिसेहाभावादो ।

❀ अट्ठपदं ।

§ ५. तत्थ उत्तरपयडिपदेससंकमे अट्ठपदं भणिस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं । किमट्ठ पद णाम ? जत्तो विवक्खियस्स पयत्थस्स परिच्छित्ती तमट्ठपदमिदि भण्णदे ।

* अब प्रदेशसंक्रमको कहते हैं ।

§ १. प्रकृतिसंक्रम, स्थितिसंक्रम और अनुभागसंक्रमका व्याख्यान करनेके बाद इस समय गाथासूत्रके 'गुणहीणं वा गुणविसिट्ठं' इस अवयवसे सम्बन्ध रखनेवाले अवसर प्राप्त प्रदेशसंक्रमका व्याख्यान करना चाहिए इस प्रकार यह सूत्र अधिकारकी सम्हाल करता है । इस प्रकार अधिकार प्राप्त प्रदेशसंक्रमके स्वरूपविशेषका निश्चय करनेके लिए आगेके पृच्छासूत्रका निर्देश करते हैं—

* यथा—

§ २. यह सूत्र सुगम है ।

* मूलप्रकृतिप्रदेशसंक्रम नहीं है ।

§ ३. क्योंकि स्वभावसे ही मूल प्रकृतियोंके परस्पर प्रदेशोंका संक्रम असम्भव है ।

* उत्तरप्रकृतिप्रदेशसंक्रम है ।

§ ४. उत्तरप्रकृतिप्रदेशसंक्रम है, ऐसा सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध करना चाहिए, क्योंकि उनके परमाणुओंका समयके अविरोधपूर्वक परस्पर संक्रम होनेका निषेध नहीं है ।

* उस विषयमें यह अर्थपद है ।

§ ५. वहाँ उत्तरकृतिप्रदेशसंक्रमके विषयमें अर्थपदको कहते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञा वचन है ।

शंका—अर्थपद किसे कहते हैं ?

समाधान—जिससे विवक्षित पदार्थका ज्ञान होता है उसे अर्थपद कहते हैं । आगे उसे बतलाते हैं—

❀ जं पदेसग्गमण्णपयडिं णिज्जदे जत्तो पयडीदो तं पदेसग्गं णिज्जदि तिस्से पयडीए सो पदेससंकमो।

§ ६. जं पदेसग्गमण्णपयडिं णिज्जदि सो पदेससंकमो त्ति सुत्तत्थसंबंधो। सो कस्स ? किंपडिग्गहपयडीए आहो पडिगेज्झमाणपयडीए त्ति आसंकिय इदमाह–'जत्तो पयडीदो' इच्चादि। जत्तो पयडीदो तं पदेसग्गमण्णपयडिं णिज्जदे तिस्से चेव पडिगेज्झमाणपयडीए सो पदेससंकमो होइ, णाण्णपयडीए त्ति भणिदं होइ। एदेण परपयडिसंकंतिलक्खणो चेव पदेससंकमो ण ओकड्डुकड्डणलक्खणो त्ति जाणाविदं, ट्ठिदि-अणुभागाणं व ओकड्डुकड्डणाहि पदेसग्गस्स अण्णभावावत्तीए अणुवलंभादो। संपहि एदस्सेवत्थस्स उदाहरणमुहेण फुडीकरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह–

❀ जहा मिच्छत्तस्स पदेसग्गं सम्मत्ते संछुहदि तं पदेसग्गं मिच्छत्तस्स पदेससंकमो।

§७. 'जहा' तं जहा त्ति भणिदं होदि। मिच्छत्तसरूवेण ट्ठिदं पदेसग्गं जदा सम्मत्तायारेण परिणमिज्जदि तदा पदेसग्गं मिच्छत्तस्स पदेससंकमो होइ, णाण्णस्से त्ति भणिदं होइ।

❀ एवं सव्वत्थ।

*** जो प्रदेशाग्र जिस प्रकृतिसे अन्य प्रकृतिको ले जाया जाता है वह प्रदेशाग्र यतः ले जाया जाता है इसलिए उस प्रकृतिका वह प्रदेशसंक्रम है।**

§ ६. जो प्रदेशाग्र अन्य प्रकृतिको ले जाया जाता है वह प्रदेशसंक्रम है इस प्रकार इस सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध है। वह किसका होता है, क्या प्रतिग्रह प्रकृतिका होता है या प्रतिग्राह्यमान प्रकृतिका होता है इस प्रकार आशंका करके 'जत्तो पयडीदो' इत्यादि वचन कहा है। जिस प्रकृतिसे वह प्रदेशाग्र अन्य प्रकृतिको ले जाया जाता है उसी प्रतिग्राह्यमान प्रकृतिका वह प्रदेशसंक्रम होता है, अन्य प्रकृतिका नहीं होता यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस वचन द्वारा परप्रकृतिसंक्रमलक्षण ही प्रदेशसंक्रम है, अपकर्षण उत्कर्षणलक्षण नहीं यह ज्ञान कराया गया है, क्योंकि जिस प्रकार अपकर्षण-उत्कर्षणके द्वारा स्थिति और अनुभागका अन्यरूप होना पाया जाता है उस प्रकार उन द्वारा प्रदेशाग्रका अन्यरूप होना नहीं पाया जाता।

*** जैसे मिथ्यात्वका प्रदेशाग्र सम्यक्त्वमें संक्रान्त किया जाता है, अतः वह प्रदेशाग्र मिथ्यात्वका प्रदेशसंक्रम है।**

§ ७. सूत्रमें 'जहा' पद 'तं जहा' के अर्थमें आया है ऐसा समझना चाहिए। मिथ्यात्वरूपसे स्थित हुआ प्रदेशाग्र जब सम्यक्त्वरूपसे परिणमाया जाता है तब वह प्रदेशाग्र मिथ्यात्वका प्रदेशसंक्रम होता है, अन्यका नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

*** इसी प्रकार सर्वत्र जानना चाहिये।**

§ ८. जहा मिच्छत्तस्स पदेससंकमो णिदरिसिदो एवं सेसकम्माणं पि सगसगपडिग्गहाविरोहेण णिदरिसेयव्वो त्ति भणिदं होइ।

※ एदेण अट्ठपदेण तत्थ पंचविहो संकमो।

§ ९. एदेणाणंतरपरूविदेण अट्ठपदेण उत्तरपयडिपदेससंकमे विहासणिज्जे तत्थ इमो पंचविहो संकमवियप्पो णायव्वो त्ति भणिदं होइ—

※ तं जहा।

§ १०. सुगममेदं पयदसंकमवियप्पसरूवणिद्देसावेक्खं पुच्छावक्कं।

※ उव्वेल्लणसंकमो विज्झादसंकमो अधापवत्तसंकमो गुणसंकमो सव्वसंकमो च।

§ ११. एवमेदे उव्वेल्लणादयो पंचवियप्पा पदेससंकमस्स होंति त्ति सुत्तत्थसमुच्चयो। तत्थुव्वेल्लणसंकमो णाम करणपरिणामेहि विणा रज्जुव्वेल्लणकमेण कम्मपदेसाणं परपयडि-

---

§ ८. जिस प्रकार मिथ्यात्वके प्रदेशसंक्रमका उदाहरण दिया है उसी प्रकार शेष कर्मोंका भी अपनी अपनी प्रतिग्रह प्रकृतियोंके अविरोधरूपसे उदाहरण दिखलाना चाहिये यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

विशेषार्थ—यहाँ पर प्रदेशसंक्रमका विचार चल रहा है। मूल प्रकृतियोंका तो परस्परमें संक्रम नहीं होता, उत्तर प्रकृतियोंका यथायोग्य संक्रम अवश्य होता है। तदनुसार जिस प्रकृतिके प्रदेश अन्य प्रकृतिमें संक्रान्त किये जाते हैं उस प्रकृतिका वह प्रदेशसंक्रम कहलाता है। उदाहरण मूलमें दिया ही है। तात्पर्य यह है कि उत्कर्षण और अपकर्षण एक ही प्रकृतिमें होता है। पर प्रदेशसंक्रमके लिए दो प्रकारकी प्रकृतियाँ विवक्षित होती हैं। एक वे जिनमें अन्य प्रकृतियोंके प्रदेशोंका संक्रमण होता है, इन्हें प्रतिग्रह प्रकृतियाँ कहते हैं और दूसरी वे जिनके प्रदेशोंका अन्य प्रकृतियोंमें संक्रमण होता है, इन्हें प्रतिग्राह्यमान प्रकृतियाँ कहते हैं। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि अमुक प्रकृतियाँ प्रतिग्रहरूप हैं और अमुक प्रकृतियाँ प्रतिग्राह्यमान हैं इस प्रकार वे कुछ बटी हुई नहीं हैं। यथा समय समयानुसार सभी प्रकृतियाँ प्रतिग्रहरूप हैं और सभी प्रकृतियाँ प्रतिग्राह्यमानरूप हैं। आगममें नियम दिये हैं उनके अनुसार यह सब विधि जान लेनी चाहिये। इस विधिका विशेष विचार प्रकृतिसंक्रम अधिकारमें कर ही आये हैं, इसलिए पुनरुक्त दोषके भयसे यहाँ पर पुनः विचार नहीं किया है।

※ इस अर्थपदके अनुसार प्रदेशसंक्रम पाँच प्रकारका है।

§ ९. इस पहले कहे गये अर्थपदके अनुसार उत्तरप्रकृतिप्रदेशसंक्रमका व्याख्यान करने योग्य है। उसमें यह पाँच प्रकारका संक्रम जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

※ यथा।

§ १०. प्रकृत संक्रमके भेदोंके स्वरूपके निर्देशकी अपेक्षा रखनेवाला यह पृच्छासूत्र सुगम है।

※ उद्वेलनासंक्रम, विध्यातसंक्रम, अधःप्रवृत्तसंक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम।

§ ११. इस प्रकार प्रदेशसंक्रमके ये उद्वेलना आदिक पाँच भेद होते हैं यह सूत्रार्थका समुच्चय है। उनमेंसे करणपरिणामोंके बिना रस्सीके उकेलनेके समान कर्मप्रदेशोंका परप्रकृतिरूपसे

सरूवेण संछोहणा । तस्स भागहारो अंगुलस्सासंखेज्ज दिभागो । एदस्स विसयो वुच्चदे—तं जहा—सम्माइट्ठी मिच्छत्तं गंतूण जाव अंतोमुहुत्तं ताव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमधापवत्तसंकमं कुणइ । तत्तो परमुव्वेल्लणासंकमं पारभिय सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ट्ठिदिघादं कुणमाणस्स जाव पलिदो० असंखे०भागमेत्तो तदुव्वेल्लणाकालो ताव णिरंतरमुव्वेल्लणभागहारेण विसेसहीणो पदेससंकमो होइ । विसेसहाणीए कारणं भज्जमाणदव्वं समयं पडि विसेसहीणं होदूण गच्छदि त्ति वत्तव्वं । णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चरिमट्ठिदिखंडयम्मि गुणसंकमो सव्वसंकमो च जायदे । एवमुव्वेल्लणसंकमसरूवपरूवणं कयं ।

§ १२. संपहि विज्झादसंकमस्स परूवणा कीरदे । तं जहा—वेदगसम्मत्तकालब्भंतरे सव्वत्थेव मिच्छत्त सम्मामिच्छत्ताणं विज्झादसंकमो होइ जाव दंसणमोहक्खवयअधापवत्त-करणचरिमसमयो त्ति । उवसमसम्माइट्ठिम्मि वि गुणसंकमकालादो उवरि सव्वत्थ विज्झाद-संकमो होइ । एदस्स वि भागहारो अंगुलस्सासंखे०भागो । णवरि उव्वेल्लणभागहारादो असंखे०गुणहीणो । एवमण्णासिं वि पयडीणं जहासंभवं विज्झादसंकमविसओ अणुगंतव्वो ।

§ १३. संपहि अधापवत्तसंकमस्स लक्खणं वुच्चदे । बंधपयडीणं सगबंधसंभवविसए जो पदेससंकमो सो अधापवत्तसंकमो त्ति भण्णदे । तस्स पडिभागो पलिदो० असंखे०भागो। तं जहा—चरित्तमोहपयडीणं पणुवीसण्हं पि सगबंधपाओग्गविसए बज्झमाणपयडिपडिग्गहेण अधापवत्तसंकमो होइ ।

संक्रान्त होना उद्वेलनासंक्रम है । उसका भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अब इसका विषय कहते हैं । यथा—सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्वमें जाकर अन्तर्मुहूर्त तक सम्यक्त्व और सम्यग्मि-थ्यात्वका अधःप्रवृत्तसंक्रम करता है । उसके बाद उद्वेलनासंक्रमका प्रारम्भ कर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका स्थितिघात करनेवाले उसके पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण उद्वेलना कालके अन्त तक निरन्तर उद्वेलना भागहारके द्वारा विशेष हीन प्रदेशसंक्रम होता है । यहाँ पर भज्यमान द्रव्य प्रत्येक समयमें विशेष हीन होता जाता है इसे विशेष हानिका कारण कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अन्तिम स्थितिकाण्डकमें गुणसंक्रम और सर्व-संक्रम हो जाता है । इस प्रकार उद्वेलना संक्रमके स्वरूपका कथन किया ।

§ १२. अब विध्यातसंक्रमका कथन करते हैं । यथा—वेदकसम्यक्त्वके कालके भीतर दर्शनमोहनीयकी क्षपणासम्बन्धी अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समय तक सर्वत्र ही मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका विध्यातसंक्रम होता है । तथा उपशमसम्यग्दृष्टिके भी गुणसंक्रमके कालके बाद सर्वत्र विध्यातसंक्रम होता है । इसका भी भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इतनी विशेषता है कि उद्वेलनाके भागहारसे यह असंख्यातगुणा हीन है । इसी प्रकार अन्य प्रकृतियोंके भी यथासम्भव विध्यातसंक्रमका विषय जानना चाहिए ।

§ १३. अब अधःप्रवृत्तसंक्रमका लक्षण कहते हैं—बन्धप्रकृतियोंका अपने बन्धके सम्भव विषयमें जो प्रदेशसंक्रम होता है उसे अधःप्रवृत्तसंक्रम कहते हैं । उसका प्रतिभाग पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । यथा—चारित्रमोहनीयकी पच्चीसों प्रकृतियोंका अपने बन्धके योग्य विषयमें बध्यमान प्रकृतिप्रतिग्रहरूपसे अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है ।

§ १४. संपहि गुणसंकमस्स लक्खणं वुच्चदे। तं जहा—समयं पडि असंखेज्जगुणाए सेढीए जो पदेससंकमो सो गुणसंकमो त्ति भण्णदे। तं जहा—अपुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि दंसणमोहक्खवणाए चरित्तमोहक्खवणाए उवसमसेढिम्मि अणंताणुबंधिविसंजोयणाए सम्मत्तुप्पायणाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुव्वेल्लणचरिमखंडए च गुणसंकमो होइ। एदस्स वि भागहारो पलिदो० असंखे०भागो होंतो वि अधापवत्तभागहारादो असंखे०गुणहीणो।

§ १५. संपहि सव्वसंकमस्स सरूवं वुच्चदे। तं जहा—सव्वस्सेव पदेसग्गस्स जो संकमो सो सव्वसंकमो त्ति भण्णदे। सो कत्थ होइ ? उव्वेल्लणाए विसंजोयणाए खवणाए च चरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालिसंकमो होइ। तस्स भागहारो एयरूवमेत्तो। एवमेसो पंचविहो संकमो सुत्तेणेदेण णिद्दिट्ठो। एत्थुवसंहारगाहा—

उव्वेल्लण-विज्झादो अधापवत्त-गुणसंकमो चेय।
तह सव्वसंकमो त्ति य पंचविहो संकमो णेयो ॥१॥

§ १६. एवमेदेसिं पदेससंकमभेदाणं सरूवणिद्देसं कादूण संपहि तेसिं चेव दव्वगय-विसेसजाणावणट्ठं अप्पाबहुअमेत्थ कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

* उव्वेल्लणसंकमे पदेसग्गं थोवं।

§ १७. कुदो ? अंगुलासंखेज्जभागपडिभागियत्तादो।

---

§ १४. अब गुणसंक्रमका लक्षण कहते हैं। यथा—प्रत्येक समयमें असंख्यात गुणित श्रेणि-रूपसे जो प्रदेशसंक्रम होता है उसे गुणसंक्रम कहते हैं। यथा—अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें, चारित्रमोहनीयकी क्षपणामें, उपशमश्रेणिमें, अनन्तानुबन्धीकी विसं-योजनामें, सम्यक्त्वकी उत्पत्तिमें तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाके अन्तिम काण्डक-में गुणसंक्रम होता है। इसका भी भागहार पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होकर भी अधःप्रवृत्त-भागहारसे असंख्यातगुणा हीन है।

§ १५. अब सर्वसंक्रमके स्वरूपको कहते हैं। यथा—सभी प्रदेशोंका जो संक्रम होता है उसे सर्वसंक्रम कहते हैं। वह कहाँ पर होता है ? उद्वेलनामें, विसंयोजनामें और क्षपणामे अन्तिम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिके संक्रमके समय होता है। उसका भागहार एक अङ्कप्रमाण है। इस प्रकार यह पाँच प्रकारका संक्रम इस सूत्रद्वारा दिखलाया गया है। इस विषयमें यहाँ पर उपसंहार गाथा—

उद्वेलनसंक्रम, विध्यातसंक्रम, अधःप्रवृत्तसंक्रम, गुणसंक्रम और सर्वसंक्रम इस प्रकार पाँच प्रकारका संक्रम जानना चाहिये ॥१॥

§ १६. इस प्रकार इन प्रदेशसंक्रमके भेदोंके स्वरूपका निर्देश करके अब उन्हींकी द्रव्यगत विशेषताका ज्ञान करानेके लिए यहाँ पर अल्पबहुत्वको करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* उद्वेलनसंक्रममें प्रदेशाग्र सबसे स्तोक है।

§ १७. क्योंकि उसे लानेका भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

❀ विज्झादसंकमे पदेसग्गमसंखेज्जगुणं।

§ १८. कुदो ? दोण्हमेदेसिमंगुलासंखेज्जभागपडिभागियत्ते समाणे वि पुव्विल्लभागहारादो विज्झादभागहारस्सासंखेज्जगुणहीणत्तब्भुवगमादो।

❀ अधापवत्तसंकमे पदेसग्गमसंखेज्जगुणं।

§ १९. किं कारणं ? पलिदोवमासंखेज्जभागपडिभागियत्तादो।

❀ गुणसंकमे पदेसग्गमसंखेज्जगुणं।

§ २०. किं कारणं ? पुव्विल्लभागहारादो एदस्स असंखेज्जगुणहीणभागहारपडिबद्धत्तादो।

❀ सव्वसंकमे पदेसग्गमसंखेज्जगुणं।

§ २१. किं कारणं ? एगरूवभागहारपडिबद्धत्तादो। एवं दव्वप्पाबहुअमुहेण पंचण्हमेदेसिं संकमभेदाणं भागहारविसेसो वि जाणाविदो। तदो एदेण सूचिदभागहारप्पाबहुअं पि विलोमकमेण णेदव्वं। एवमेदेसिं संकमपभेदाणं सरूवपरूवणं कादूण संपहि एदेण अट्ठपदेण उत्तरपयडिपदेससंकमाणुगमे कायव्वे तत्थ इमाणि चउवीसमणिओगद्दाराणि— समुक्कित्तणा भागाभागो जाव अप्पाबहुए त्ति। भुजगार-पदणिक्खेव-वड्ढि-ट्ठाणाणि च। तत्थ समुक्कित्तणा दुविहा जहण्णुक्कस्सभेएण। तत्थुक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण अट्ठावीसं पयडीणमत्थि उक्कस्सओ पदेससंकमो। एवं चदुगदीसु।

---

* उससे विध्यातसंक्रममें प्रदेशाग्र असंख्यातगुणा है।

§ १८. क्योंकि इन दोनोंको लानेका भागहार अंगुलके असंख्यातवें भागरूपसे समान होने पर भी पहलेके भागहारसे विध्यातसंक्रमका भागहार असंख्यातगुणा हीन स्वीकार किया गया है।

* उससे अधःप्रवृत्तसंक्रममें प्रदेशाग्र असंख्यातगुणा है।

§ १९. क्योंकि इसे लानेके लिए भागहार पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

* उससे गुणसंक्रममें प्रदेशाग्र असंख्यातगुणा है।

§ २०. क्योंकि पूर्व द्रव्यके भागहारसे यह द्रव्य असंख्यातगुणे हीन भागहारसे सम्बन्ध रखता है।

* उससे सर्वसंक्रममें प्रदेशाग्र असंख्यातगुणा है।

§ २१. क्योंकि यह द्रव्य एक अङ्कप्रमाण भागहारसे सम्बन्ध रखता है। इस प्रकार द्रव्योंके अल्पबहुत्वके द्वारा इन पाँच संक्रमभेदोंके भागहारविशेषका भी ज्ञान करा दिया है। इसलिए इस द्वारा रचित हुए भागहारोंके अल्पबहुत्वको भी विलोमक्रमसे ले जाना चाहिए। इस प्रकार इन संक्रमके भेदोंके स्वरूपका कथन करके अब इस अर्थपदके अनुसार उत्तरप्रकृतिप्रदेशसंक्रमका अनुगम करते समय उस विषयमें समुत्कीर्तना और भागाभागसे लेकर अल्पबहुत्व तक ये चौबीस अनुयोगद्वार होते हैं। तथा भुजगार, पदनिक्षेप, वृद्धि और स्थान ये अनुयोगद्वार और होते हैं। उनमेंसे समुत्कीर्तना दो प्रकारकी है—जघन्य और उत्कृष्ट। उनमेंसे उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे अट्ठाईस प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम है। इसी प्रकार चारों

णवरि पंचिंदि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० अणुदिसादि सव्वट्ठ त्ति सत्तावीसण्हं पयडीणं अत्थि उक्कस्सओ पदेससंकमो। एवं जाव०। एवं जहण्णयं पि णेदव्वं।

§ २२. भागाभागो दुविहो—जीवविसयो पदेसविसओ च। तत्थ जीवभागाभागमुवरि जहावसरमणुवत्तइस्सामो। पदेसभागाभागो ताव वुच्चदे। सो दुविहो—जहण्णओ उक्कस्सओ च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मोह० अट्ठावीसंपयडीणं पदेसविहत्तिभागाभागभंगो। णवरि दंसणतियचदुसंजलणभागाभागे सम्मत्त-लोहसंजलणदव्वमसंखे०भागो।

§ २३. एत्थ सत्थाणभागाभागे कीरमाणे मिच्छत्तदव्वमसंखेज्जाणि खंडाणि कादूण तत्थ बहुभागा सव्वसंकमदव्वं होइ। सेसमसंखेज्जे भागे कादूण तत्थ बहुभागा गुणसंकमदव्वं होइ। सेसेयभागो विज्झादसंकमदव्वं होइ। सम्मत्तदव्वमसंखेज्जे भागे कादूण तत्थ बहुभागा अधापवत्तसंकमदव्वं होइ। सेसमसंखेज्जे भागे कादूण तत्थ बहुभागा सव्वसंकमदव्वं होइ। सेसमसंखेज्जे भागे कादूण तत्थ बहुभागा

गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त, मनुष्य अपर्याप्त और अनुदिशासे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। इसी प्रकार जघन्य प्रदेशसंक्रमका भी कथन करना चाहिए।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें सम्यक्त्वकी प्राप्ति न होनेसे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट और जघन्य किसी प्रकारका प्रदेशसंक्रम नहीं पाया जाता। तथा अनुदिशादि देवोंमें मिथ्यात्वगुणस्थान न होनेसे सम्यक्त्वप्रकृतिका किसी भी प्रकारका प्रदेशसंक्रम नहीं पाया जाता। इन मार्गणाओंमें इसीलिए सत्ताईस प्रकृतियोंका उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशसंक्रम कहा है। किन्तु इनके सिवा गतियोंके जितने अवान्तर भेद हैं उनमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्व दोनोंकी प्राप्ति सम्भव है, इसलिए उनमें अट्ठाईस प्रकृतियोंका उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेशसंक्रम कहा है।

§ २२. भागाभाग दो प्रकारका है—जीवविषयक भागाभाग और प्रदेशविषयक भागाभाग। उनमेंसे जीवभागाभागको यथावसर आगे बतलावेंगे। यहाँ पर प्रदेशभागाभागको कहते हैं। वह दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मोहनीयकी अट्ठाईस प्रकृतियोंका उत्कृष्ट भागाभाग प्रदेशविभक्तिके उत्कृष्ट भागाभागके समान है। इतनी विशेषता है कि तीन दर्शनमोहनीय और चार संज्वलनोंके भागाभागमें सम्यक्त्व और लोभसंज्वलनका द्रव्य असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ २३. यहाँ पर स्वस्थानभागाभागके करने पर मिथ्यात्वके द्रव्यके असंख्यात भाग करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण सर्वसंक्रम द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात भाग करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण गुणसंक्रमद्रव्य है। तथा शेष एक भागप्रमाण विध्यातसंक्रम द्रव्य है। सम्यक्त्वके द्रव्यके असंख्यात भाग करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात भाग करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण सर्वसंक्रमद्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात भाग

गुणसंकमदव्वं होइ। सेसेयभागमेत्तमुव्वेल्लणसंकमदव्वं होइ। सम्मामिच्छत्तदव्वमसंखेज्जाणि खंडाणि कादूण तत्थ बहुभागा सव्वसंकमदव्वं होइ। सेसमसंखेज्जाणि खंडाणि कादूण तत्थ बहुखंडपमाणं गुणसंकमदव्वं होइ। सेसमसंखे०खंडाणि कादूण तत्थ बहुभागा अधापवत्त-संकमदव्वं होइ। सेसमसंखे०खंडाणि कादूण तत्थ बहुभागा विज्झादसंकमदव्वं होइ। सेसेयभागमेत्तमुव्वेल्लणसंकमदव्वं होइ। एवं बारसक०—इत्थि-णवुंसयवेदारइ-सोगाणं। णवरि उव्वेल्लणसंकमो णत्थि। पुरिसवेद-कोह-माण-मायासंजलणाणमप्पप्पणो दव्वमसंखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ बहुभागा सव्वसंकमदव्वं होइ। सेसेयखंडपमाणमधापवत्तसंकमदव्वं होइ। हस्स-रइ-भय-दुगुंछाणमप्पप्पणो दव्वमसंखेज्जखंडाणि कादूण तत्थ बहुखंडपमाणं सव्वसंकमदव्वं होइ। सेसमसंखेज्जाणि खंडाणि कादूण तत्थ बहुखंडपमाणं गुणसंकमदव्वं होइ। सेसेयभागमेत्तमधापवत्तसंकमदव्वं होइ। लोहसंजलणस्स णत्थि भागाभागविहाणं। किं कारणं? एगो चेव अधापवत्तसंकमो त्ति। एवं मणुसतिए। आदेसभागाभागो जहण्ण-भागाभागो च जाणिदूण णेदव्वो। तदो पदेसभागाभागो समत्तो।

§ २४. सव्वसंकम-णोसव्वसंकमो त्ति दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण सव्वपयडीणं सव्वुक्कस्सयं पदेसग्गं संकममाणयस्स सव्वसंकमो। तदूणं संकामेमाणस्स णोसव्वसंकमो। एवं जाव०।

करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण गुणसंक्रमद्रव्य है। तथा शेष एक भागप्रमाण उद्वेलनासंक्रम द्रव्य है। सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण सर्वसंक्रम द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण गुणसंक्रम द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात भाग करके उनमेसे बहुभागप्रमाण विध्यातसंक्रमद्रव्य है। तथा शेष एक भागप्रमाण उद्वेलनासंक्रमद्रव्य है। इसीप्रकार बारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, और शोकके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इन प्रकृतियोंका उद्वेलनासंक्रम नहीं होता। पुरुषवेद, क्रोधसंज्वलन, मानसंज्वलन और माया-संज्वलनके अपने अपने द्रव्यके असंख्यात खण्ड करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण सर्वसंक्रमद्रव्य है। तथा शेष एक भागप्रमाण अधःप्रवृत्तसंक्रमद्रव्य है। हास्य, रति, भय और जुगुप्साके अपने अपने द्रव्यके असंख्यात खंड करके उनमेंसे बहुभागप्रमाण सर्वसंक्रमद्रव्य है। शेष एक भागके असंख्यात खण्ड करके उनमेसे बहुभागप्रमाण गुणसंक्रमद्रव्य है। तथा शेष एक भागप्रमाण अधःप्रवृत्तसंक्रमद्रव्य है। लोभसंज्वलनका भागाभागविधान नहीं है, क्योंकि इसमें एकमात्र अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। आदेश भागाभाग और जघन्य भागाभाग जानकर लेजाना चाहिए। इस प्रकार प्रदेशभागाभाग समाप्त हुआ।

§ २४. सर्वसंक्रम और नोसर्वसंक्रमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंके सर्वोत्कृष्ट प्रदेशाग्रका संक्रम करनेवाले जीवके सर्वसंक्रम होता है। तथा इससे न्यून प्रदेशाग्रका संक्रम करनेवाले जीवके नोसर्वसंक्रम होता है। इसीप्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ २५. उक्कस्ससंकमो अणुक्कस्ससंकमो जहण्णसंकमो अजहण्णसंकमो त्ति विहत्ति-भंगो। णवरि संकामयालावो कायव्वो।

§ २६. सादि-अणादि-धुव-अद्धुवाणुगमेण दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०—सम्म०—सम्मामिच्छत्ताणमुक्क०-अणुक्क०-जह०-अजहण्णपदेससंकमो किं सादिओ ४ ? सादी अद्धुवो। सेसपयडीणमुक्क०—जह०पदे० किं सादि०४ ? सादी अद्धुवो। अणु०-अजह०पदे० किं सादि०४ ? सादिओ अणादिओ धुवो अद्धुवो वा। सेसमग्गणासु सव्वपय० उक्क०—अणुक्क०—जह०—अजह० पदे०संक० किं० सादि०४ ? सादी अद्धुवो। एवं जाव०।

§ २७. एवमेदेसिमणिओगद्दाराणं सुगमत्ताहिप्पाएण परूवणमकादूण संपहि सामित्त-परूवणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

✽ एत्तो सामित्तं।

---

§ २५. उत्कृष्टसंक्रम, अनुत्कृष्टसंक्रम, जघन्यसंक्रम और अजघन्यसंक्रमका भङ्ग प्रदेश-विभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि प्रदेशसत्कर्मके स्थान पर प्रदेशसंक्रमका आलाप करना चाहिए।

§ २६. सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुवानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रम क्या सादि है,अनादि है,ध्रुव है या अध्रुव है? सादि और अध्रुव है। शेष प्रकृतियोंका उत्कृष्ट और जघन्य प्रदेसंक्रम क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है ? सादि, और अध्रुव है। अनुत्कृष्ट और अजघन्य प्रदेशसंक्रम क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है ? सादि, अनादि, ध्रुव और अध्रुव है। शेष मार्गणाओंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रम क्या सादि है, अनादि है, ध्रुव है या अध्रुव है ? सादि और अध्रुव है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक यथायोग्य जानना चाहिए।

विशेषार्थ—मिथ्यात्व प्रकृति सर्वदा प्रतिग्रह प्रकृति नहीं है,तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति ही सादि हैं, अतः इनके उत्कृष्ट आदि चारों सादि और अध्रुव हैं। अब रहीं शेष प्रकृतियाँ सो इनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम गुणितकर्मांश जीवके और जघन्य प्रदेशसंक्रम क्षपितकर्मांशजीवके यथा-योग्य स्थानमें होते हैं, अतः ये भी सादि और अध्रुव हैं। तथा इनके अनुत्कृष्ट और अजघन्य प्रदेशसंक्रम उपशमश्रेणिके प्राप्त होनेके पर्व तक अनादि हैं, उपशमश्रेणिसे गिरनेके बाद सादि हैं तथा भव्योंकी अपेक्षा अध्रुव और अभव्योंकी अपेक्षा ध्रुव हैं। गतिसम्बन्धी अवान्तर मार्गणाएँ कादाचित्क हैं, अतः इनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट आदि चारों सादि और अध्रुव हैं। इसी प्रकार अन्य मार्गणाओंमें भी यथायोग्य जान लेना चाहिए।

§ २७ इस प्रकार ये अनुयोगद्वार सुगम हैं इस अभिप्रायसे प्ररूपण न करके अब स्वामित्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रको कहते हैं—

✽ आगे स्वामित्वको कहते हैं।

§ २८. एत्तो अणंतरसामित्तमणुवत्तइस्सामो त्ति पइण्णासुत्तमेदं ।

*** मिच्छत्तस्स उक्कस्सयपदेससंकमो कस्स ?**

§ २९. सुगमं ।

*** गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो ।**

§ ३०. जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीदो उव्वट्टिदो सो पयदुक्कस्ससंकमदव्वसामिओ होदि त्ति सुत्तत्थसंबंधो । किमट्ठमेसो तत्तो उवट्टाविदो ? ण, णेरइयचरिमसमए चेव पयदुक्कस्ससामित्तविहाणोवायाभावेण तहाकरणादो । कुदो तत्थ तदसंभवो चे ? मणुसगदीदो अण्णत्थ दंसणमोहक्खवणाए असंभवादो । ण च दंसणमोहक्खवणादो अण्णत्थ सव्वसंकमसरूवो मिच्छत्तुक्कस्सपदेससंकमो अत्थि तम्हा गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीदो उवट्टिदो त्ति सुसंबद्धमेदं ।

*** दो तिण्णि भवग्गहणाणि पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्तएसु उववण्णो ।**

§ ३१. किमट्ठमेसो पंचिंदियतिरिक्खेसुप्पाइदो ? ण सत्तमपुढवीदो उवट्टिदस्स दो-तिण्णिपंचिंदियतिरिक्खभवग्गहणेहिं विणा तदणंतरमेव मणुसगदीए उप्पज्जणासंभवादो ।

---

§ २८. इससे आगे स्वामित्वको बतलावेंगे इस प्रकार यह प्रतिज्ञासूत्र है ।

*** मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका स्वामी कौन है ?**

§ २९. यह सूत्र सुगम है ।

*** जो गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीसे निकला ।**

§ ३०. जो गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीसे निकला वह प्रकृत उत्कृष्ट संक्रमद्रव्यका स्वामी है ऐसा सूत्रका अर्थके साथ सम्बन्ध कर लेना चाहिए ।

शंका—इस जीवको वहाँसे किसलिए निकाला है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि नारकियोंके अन्तिम समयमें ही प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वके विधानका अन्य उपाय न होनेसे वैसा किया है ।

शंका—वहाँ अर्थात् नरकमें उत्कृष्ट स्वामित्व असम्भव क्यों है ?

समाधान—क्योंकि मनुष्यगतिके सिवा अन्यत्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणा होना असम्भव है और दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके सिवा अन्यत्र सर्वसंक्रमरूप मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम पाया नहीं जाता, इसलिए गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीसे निकला इस प्रकार यह सूत्र सुसम्बद्ध है ।

*** वहाँसे निकलकर तथा पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च पर्याप्तकोंमें दो-तीन भव धारण करके उत्पन्न हुआ ।**

§ ३१. शंका—इसे पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें किसलिए उत्पन्न कराया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सातवीं पृथिवीसे निकला हुआ जीव पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें दो-तीन भव धारण किये बिना वहाँसे निकलनेके बाद ही मनुष्यगतिमें नहीं उत्पन्न हो सकता ।

❀ अंतोमुहुत्तेण मणुसेसु आगदो ।

§ ३२. पंचिंदियतिरिक्खेसु तसट्ठिदिं समाणिय पुणो एइंदिएसुप्पज्जिय अंतोमुहुत्तकालेणेव मणुसगइमागदो त्ति भणिदं होइ ।

❀ सव्वलहुं दंसणमोहणीयं खवेदुमाढत्तो ।

§ ३३. एत्थ सव्वलहुणिद्देसेण गब्भादिअट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो त्ति घेत्तव्वं ।

❀ जाधे मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते सव्वं संछुभमाणं संछुद्धं ताधे तस्स मिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पएससंकमो ।

§ ३४. पुव्वुत्तविहाणेणागंतूण मणुसेसुप्पज्जिय सव्वलहुं दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदेण जाधे मिच्छत्तसव्वदव्वमुदयावलियवज्जं सम्मामिच्छत्तस्सुवरि सव्वसंकमेण संछुद्धं ताधे तस्स जीवस्स मिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो होइ । तत्थ गुणसेढिणिज्जरासहिदगुणसंकमदव्वेणूणदिवड्ढगुणहाणिमेत्तुक्कस्ससमयपबद्धाणमेक्कवारेणेव सम्मामिच्छत्तसरूवेण संकतिदंसणादो ।

❀ सम्मत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ३५. सुगमं ।

---

* पुनः अन्तर्मुहुर्तमें मनुष्योंमें आ गया ।

§ ३२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चोंमें त्रसस्थितिको समाप्त करके पुनः एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तकालमें ही मनुष्योंमें आ गया यह उक्त सूत्रका तात्पर्य है ।

* वहाँ अतिशीघ्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ ।

§ ३३. यहाँ पर सूत्रमें जो 'सव्वलहुं' पदका निर्देश किया है उससे गर्भसे लेकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ ऐसा ग्रहण करना चाहिए ।

* जिस समय मिथ्यात्वको सम्यग्मिथ्यात्वमें सर्वसंक्रमरूपसे संक्रमित किया उस समय उसके मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ।

§ ३४. पूर्वोक्त विधिसे आकर और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुए उसने जब मिथ्यात्वके उदयावलिके सिवा अन्य सब द्रव्यको सम्यग्मिथ्यात्वमें सर्वसंक्रमके द्वारा संक्रमित किया तब उस जीवके मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है, क्योंकि वहाँ पर गुणश्रेणि निर्जरा सहित गुणसंक्रम द्रव्यसे न्यून डेढ़ गुणहानिप्रमाण उत्कृष्ट समयप्रबद्धोंका एक बारमें ही सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे संक्रम देखा जाता है ?

* सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका स्वामी कौन है ?

§ ३५. यह सूत्र सुगम है ।

* गुणिदकम्मंसिएण सत्तमाए पुढवीए णेरइएण मिच्छत्तस्स उक्कस्स-पदेससंतकम्ममंतोमुहुत्तेण होहिदि त्ति सम्मत्तमुप्पाइदं, सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए सम्मत्तं पूरिदं, तदो उवसंतद्धाए पुण्णाए मिच्छत्तमुदीरयमाणस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो।

§ ३६. एत्थ गुणिदकम्मंसियणिद्देसेणागुणिदकम्मंसियपडिसेहो कओ। सत्तम-पुढविणेरइयणिद्देसेण वि अणेरइयपडिसेहो अण्णपुढविणेरइयपडिसेहो च कओ त्ति दट्ठव्वो। मिच्छत्तस्स उक्कस्सयं पदेससंतकम्मं अंतोमुहुत्तेण होइदि त्ति सम्मत्तमुप्पाइदमिदि भणिदे अंतोमुहुत्तेण चरिमसमयणेरइयभावेण परिणमिय मिच्छत्तपदेससंतकम्ममुक्कस्सं काहिदि त्ति एदम्मि अवत्थाविसेसे तिण्णि वि करणाणि काढूण तेण पढमसम्मत्तमुप्पाइदमिदि वुत्तं होइ। सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए सम्मत्तं पूरिदमिदि भणिदे सव्वजहण्णगुणसंकमभाग-हारेण सव्वुक्कस्सगुणसंकमपूरणकालेण च सम्मत्तमावूरिदमिदि भणिदं होइ। एवं च पूरिदूण कमेण मिच्छत्तं पडिवण्णस्स पढमसमए चेव पयदुक्कस्ससामित्तं होइ, णाण्णत्थे त्ति जाणावणट्ठमिदं वयणं—'तदो उवसंतद्धाए पुण्णाए मिच्छत्तमुदीरयमाणस्स' इच्चादि। एतदुक्तं भवति, तहा पूरिदसम्मत्तो तेण दव्वेणाविणट्ठेणुवसमसम्मत्तकालमंतोमुहुत्तमेत्तमणुपालेऊण तदवसाणे मिच्छत्तमुदीरयमाणो पढमसमयमिच्छाइट्ठी जादो। तस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स

---

* जिस गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीके नारकीके अन्तर्मुहूर्त बाद मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होगा, अतएव जिसने अन्तर्मुहूर्त पहले ही सम्यक्त्वको उत्पन्न कर सबसे उत्कृष्ट पूरणाके द्वारा सम्यक्त्वको पूरित किया। तदनन्तर जो उपशमसम्यक्त्वके कालके पूरा होनेपर मिथ्यात्वकी उदीरणा कर रहा है ऐसे प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ३६. यहाँ पर 'गुणितकर्मांशिक' पदके निर्देश द्वारा अगुणितकर्मांशिकका निषेध किया गया है। 'सातवीं पृथिवीका नारकी' इस पदके निर्देश द्वारा भी जो नारकी नहीं हैं या अन्य पृथिवियोंके नारकी हैं उनका निषेध किया गया जानना चाहिए। 'मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म अन्तर्मुहूर्तमें होगा ऐसी अवस्थामें सम्यक्त्वको उत्पन्न किया' ऐसा कहने पर उससे इस अवस्था-विशेषमें तीनों ही करणोंको करके उसने प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न किया यह उक्त कथनका तात्पर्य है। सबसे उत्कृष्ट पूरणाके द्वारा सम्यक्त्वको पूरित किया ऐसा कहनेपर, उससे सबसे जघन्य गुणसंक्रम भागहार और सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रमकालके द्वारा सम्यक्त्वको पूरित किया यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार पूरित करके क्रमसे मिथ्यात्वको प्राप्त हुए उस जीवके प्रथम समयमें ही प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है, अन्यत्र नहीं इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'तदनन्तर उपशम-सम्यक्त्वके कालके समाप्त होने पर मिथ्यात्वकी उदीरणा करनेवाले जीवके' इत्यादिरूपसे यह वचन दिया है। उक्त कथनका यह तात्पर्य है कि जो उस प्रकारसे सम्यक्त्वको पूरितकर उस द्रव्यको नष्ट किये बिना अन्तर्मुहूर्तप्रमाण सम्यक्त्वके कालको पालनकर उसके अन्तमें मिथ्यात्वकी

पयडुक्कस्ससामित्ताहिसंबंधो त्ति । किं कारणमेत्थेवुक्कस्ससामित्तं जादमिदि चे ? सम्मत्तस्स तदवत्थाए मिच्छत्तगुणणिबंधणमधापवत्तसंकमपज्जाएण सव्वुक्कस्सएण परिणमणदंसणादो । संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुत्तरं सुत्तावयवमाह—

※ सो पुण अधापवत्तसंकमो ।

§ ३७. सो पुण सामित्तसमयभाविओ अधापवत्तसंकमो चेव, णाण्णो । कुदो एवं चे ? बंधसंबंधाभावे वि सहावदो चेव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं मिच्छाइट्ठिम्मि अंतोमुहुत्त-मेत्तकालमधापवत्तसंकमपवुत्तीए संभवब्भुवगमादो । एदेणुव्वेल्लणचरिमफालीए सामित्त-विहाणासंका पडिसिद्धा, अधापवत्तभागहारादो उव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाण-मण्णोण्णब्भत्थरासीए असंखेज्जगुणत्तादो । तं कुदोवगम्मदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो । एत्थ सामित्तविसईकयदव्वस्स पमाणाणुगमे कीरमाणे दिवड्ढगुणहाणिगुणिदुक्कस्ससमयपबद्धं ठविय तत्तो गुणसंकमेण सम्मत्तस्सुवरि संकंतदव्वमिच्छामो त्ति किंचूणचरिमगुणसंकम-भागहारो तस्स भागहारत्तेण ठवेयव्वो । पुणो तत्तो पढमसमयमिच्छाइट्ठिणा अधापवत्तेण संकामिददव्वमिच्छामो त्ति अधापवत्तसंकमभागहारो वि तस्स भागहारत्तेण ठवेयव्वो । एवं

उदीरणा करता हुआ प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि हो गया उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वका सम्बन्ध होता है ।

शंका—यहीं पर उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त हुआ इसका क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि उस अवस्थामें मिथ्यात्वगुणनिमित्तक सर्वोत्कृष्ट अधःप्रवृत्त संक्रमरूप पर्यायके द्वारा सम्यक्त्वके द्रव्यका मिथ्यात्वरूपसे परिणमन देखा जाता है ।

※ और वह अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है ।

§ ३७. और वह स्वामित्वके समय होनेवाला अधःप्रवृत्तसंक्रम ही है, अन्य नहीं ।

※ शंका—ऐसा क्यों होता है ?

समाधान—क्योंकि बन्धका सम्बन्ध नहीं होने पर भी स्वभावसे ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें अन्तर्मुहूर्त काल तक अधःप्रवृत्तसंक्रमकी प्रवृत्तिकी सम्भावना स्वीकार की गई है ।

इस द्वारा उद्वेलनाकी अन्तिम फालिकी अपेक्षा स्वामित्वके विधानकी आशंकाका निषेध हो गया, क्योंकि अधःप्रवृत्तभागहारसे उद्वेलनाकालके भीतर नानागुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि असंख्यातगुणी होती है ।

शंका—वह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है ।

यहाँ पर स्वामित्वरूपसे विषय किये गये द्रव्यके प्रमाणका अनुगम करने पर डेढ़ गुणहानिसे गुणित उत्कृष्ट समयप्रबद्धको स्थापित कर उसमेंसे गुणसंक्रमके द्वारा सम्यक्त्वके ऊपर संक्रान्त हुए द्रव्यकी इच्छासे कुछ कम अन्तिम गुणसंक्रम भागहारको उसके भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिए । पुनः उसमेंसे प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा अधःप्रवृत्तके द्वारा संक्रम कराये

ठविदे पयदुक्कस्ससामित्तविसईकयदव्वमागच्छदि । एवं सम्मत्तस्स सामित्ताणुगमं कादूण संपहि सम्मामिच्छत्तस्स सामित्तविहासणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ३८. सुगमं ।

❀ जेण मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसग्गं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं तेणेव जाधे सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते संपक्खित्तं ताधे तस्स सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो ।

§ ३९. एदस्स सामित्तसुत्तस्सावयवत्थपरूवणा सुगमा त्ति समुदायत्थविवरणमेव कस्सामो । तं जहा—जेण गुणिदकम्मंसिएण मणुसगइमागंतूण सव्वलहुं दंसणमोह-क्खवणाए अब्भुट्ठिदेण जहाकममधापवत्तापुव्वकरणाणि वोलिय अणियट्टिकरणद्धाए संखेज्जदि-भागसेसे मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसग्गं सगासंखे०भागभूदगुणसेढिणिज्जरासहिदगुणसंकमदव्व-परिहीणं सव्वसंकमेण सम्मामिच्छत्ते संपक्खित्तं तेणेव मिच्छत्तुक्कस्सपदेससंकमसामिएण जाधे सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते पक्खित्तं ताधे तस्स सम्मामिच्छत्तविसयो उक्कस्सओ पदेससंकमो होइ त्ति एसो सुत्तत्थसंगहो ।

❀ अणंताणुबंधीणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ?

द्रव्यकी इच्छासे उसके भागहाररूपसे अधःप्रवृत्तसंक्रम भागहारको भी स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार स्थापित करने पर प्रकृत स्वामित्वका विषयभूत द्रव्य आता है। इस प्रकार सम्यक्त्वके स्वामित्वका अनुगम करके अब सम्यग्मिथ्यात्वके स्वामित्वका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?**

§ ३८. यह सूत्र सुगम है।

*** जिसने मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशाग्रको सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त किया वही जब सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त करता है तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेश-संक्रम होता है।**

§ ३९. इस स्वामित्वसूत्रकी अर्थप्ररूपणा सुगम है, इसलिए समुदायरूप अर्थका विवरण ही करते हैं। यथा—जिस गुणितकर्मांशिक जीवने मनुष्यगतिमें आकर अतिशीघ्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत होकर क्रमसे अधःप्रवृत्त और अपूर्वकरणको विताकर अनिवृत्तिकरणके संख्यातवें भागके शेष रहने पर अपने असंख्यातवें भागरूप गुणिश्रेणि निर्जरासहित गुणसंक्रम द्रव्यसे हीन मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशाग्रको सर्वसंक्रमके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रक्षिप्त किया। तथा मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका स्वामी वही जीव जब सम्यग्मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमें प्रक्षिप्त करता है तब उसके सम्यग्मिथ्यात्वविषयक उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। इस प्रकार यह सूत्रार्थ-संग्रह है।

*** अनन्तानुबन्धियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?**

§ ४० सुगमं।

❀ सो चेव सत्तमाए पुढवीए णेरइयो गुणिदकम्मंसिओ अंतोमुहुत्तेणेव तेसिं चेव उक्कस्सपदेससंतकम्मं होहिदि त्ति उक्कस्सजोगेण उक्कस्ससंकिलेसेण च णीदो, तदो तेण रहस्सकाले सेसे सम्मत्तमुप्पाइयं। पुणो सो चेव सव्वलहुमणंताणुबंधीणं विसंजोएदुमाढत्तो तस्स चरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तेसिमुक्कस्सओ पदेससंकमो।

§ ४१. एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—सो चेवाणंतरपरूविदलक्खणो सत्तमपुढवीए णेरइओ गुणिदकम्मंसिओ पयदकम्माणमुक्कस्सपदेससंकमसामिओ होइ त्ति सुत्तत्थसंबंधो। सो पुण कदमम्मि अवत्थाविसेसे कदरेण वावारविसेसेण परिणदो पयदुक्कस्ससंकमसामित्तमल्लियदि त्ति आसंकाए इदमुत्तरं 'अंतोमुहुत्तेण' इच्चादि। अंतोमुहुत्तेण णेरइयचरिमसमयम्मि तेसिं चेव अणंताणुबंधीणमोघुक्कस्सयं पदेससंतकम्मं होहिदि त्ति एदम्मि अंतरे जहासंभवमुक्कस्सजोगेणुक्कस्ससंकिलेससहगदेण परिणदो त्ति भणिदं होइ। किमट्ठमेसो उक्कस्सजोगमुक्कस्ससंकिलेसं वा णिज्जदे? ण, बंधेण बहुपोग्गलग्गहणट्ठं बहुदव्वुक्कड्डणणिमित्तं च तहा करणादो। तदो तेण रहस्सकालेण सम्मत्तमुप्पाइदमिच्चादि सुत्तावयव-

§ ४०. यह सूत्र सुगम है।

* उसी सातवीं पृथिवीके गुणितकर्मांशिक नारकीके अन्तर्मुहूर्तकालके द्वारा उन्हीं अनन्तानुबन्धियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होगा। किन्तु अन्तर्मुहूर्त पहले ही वह उत्कृष्ट योग और उत्कृष्ट संक्लेशसे परिणत हुआ। अनन्तर उसने स्वल्प काल शेष रहनेपर सम्यक्त्वको उत्पन्न किया। पुनः वही अतिशीघ्र अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना करनेके लिए उद्यत हुआ उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रम करते समय अनन्तानुबन्धियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ४१. इस सूत्रके अर्थका कथन करते हैं। यथा—वही पहले कहे गये लक्षणवाला सातवीं पृथिवीका गुणितकर्मांशिक नारकी जीव प्रकृत कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेसंक्रमका स्वामी है इस प्रकार सूत्रार्थका सम्बन्ध है। परन्तु वह किस अवस्थाविशेषमें किस व्यापार विशेषसे परिणत होकर प्रकृत उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके स्वामित्वको प्राप्त करता है ऐसी आशंका होनेपर यह उत्तर है—'अन्तर्मुहूर्तके द्वारा' इत्यादि। अन्तर्मुहूर्तके द्वारा नारकियोंके अन्तिम समयमें उन्हीं अनन्तानुबन्धियोंका ओघ उत्कृष्ट प्रदेशसत्कर्म होगा कि इसी बीच यथासम्भव उत्कृष्ट संक्लेशके साथ प्राप्त हुए उत्कृष्ट योगसे परिणत हुआ यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यह उत्कृष्ट योग और उत्कृष्ट संक्लेशको किसलिए प्राप्त कराया गया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि बन्धके द्वारा बहुत पुद्गलोंका ग्रहण करनेके लिए और बहुत पुद्गलोंका उत्कर्षण करनेके लिए उस प्रकार कराया गया है।

कलावेण संकिलेसादो णियत्तिदूण विसोहिसमावूरणेण पढमसम्मत्तमुप्पाइय तक्कालब्भंतरे चेव अणंताणुबंधिविसंजोयणाए परिणदो त्ति जाणाविदं, अण्णहा पयदुक्कस्ससामित्तविहाणाणुववत्तीदो। एवं विसंजोएमाणस्स तस्स णेरइयस्स चरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तेसिमणंताणुबंधीणमुक्कस्सओ पदेससंकमो होदि, तत्थ सव्वसंकमेणाणंताणुबंधिदव्वस्स कम्मट्ठिदिअब्भंतरसंगलिदस्स थोवूणस्स सेसकसायाणमुवरि संकमंतस्सुक्कस्सभावसिद्धीए विरोहाभावादो।

❀ अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ४२. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं मणुसगइमागदो, अट्ठवस्सिओ खवणाए अब्भुट्ठिदो, तदो अट्ठण्हं कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सओ पदेससंकमो।

§ ४३. गयत्थमेदं सुत्तं। एवमट्ठकसायाणं सामित्तविणिण्णयं कादूण छण्णोकसायाणं पि एसो चेव सामित्तालावो कायव्वो, विसेसाभावादो त्ति पदुप्पायणट्ठमप्पणासुत्तं भणइ—

❀ एवं छण्णोकसायाणं।

§ ४४. सुगममेदमप्पणासुत्तं।

'तदो तेण रहस्सकालेण सम्मत्तमुप्पाइदं' इत्यादि रूपसे जो सूत्र वचनकलाप कहा है सो उस द्वारा संक्लेशसे निवृत्त होकर विशुद्धिको पूरित करनेके साथ सम्यक्त्वको उत्पन्न कर उस कालके भीतर ही अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजनासे परिणत हुआ यह ज्ञान कराया गया है, अन्यथा प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान नहीं बन सकता। इस प्रकार विसंयोजना करनेवाले उस नारकीके अन्तिम स्थितिकाण्डकको संक्रमित करनेके अन्तिम समयमें उन अनन्तानुबन्धियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है, क्योंकि वहाँ पर कर्मस्थितिके भीतर गल कर थोड़े कम हुए तथा शेष कषायोंके ऊपर संक्रमण करते हुए अनन्तानुबन्धीके द्रव्यके उत्कृष्टभावकी सिद्धिमें विरोध नहीं आता।

*** आठ कषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?**

§ ४२. यह सूत्र सुगम है।

*** कोई गुणितकर्मांशिक जीव अतिशीघ्र मनुष्यगतिमें आया। तथा आठ वर्षका होकर क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। अनन्तर आठ कषायोंके अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रम करते हुए उसके आठ कषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।**

§ ४३. यह सूत्र गतार्थ है। इस प्रकार आठ कषायोंके स्वामित्वका निर्णय करके छह नोकषायोंका भी इसी प्रकार स्वामित्वालाप करना चाहिए, क्योंकि उसमें कोई अन्य विशेषता नहीं है इस प्रकार कथन करनेके लिए अर्पणासूत्रको कहते कहते हैं—

*** इसी प्रकार छह नोकषायोंका उत्कृष्ट स्वामित्व जानना चाहिए।**

§ ४४. यह अर्पणासूत्र सुगम है।

*** इत्थिवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ?**

§ ४५. सुगमं।

*** गुणिदकम्मंसिओ असंखेज्जवस्साउएसु इत्थिवेदं पूरेदूण तदो कमेण पूरिदकम्मंसिओ खवणाए अब्भुट्ठिदो, तदो चरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमय-संछुहमाणयस्स तस्स इत्थिवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो।**

§ ४६. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—गुणिदकम्मंसिओ पलिदोवमस्सा-संखेज्जदिभागमेत्तकालेणूणियं कम्मट्ठिदिं बादरपुढविजीवेसु तसकाइएसु च समयाविरोहेणाणु-पालेऊण तदो असंखेज्जवस्साउएसु पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागमेत्ताउट्ठिदीए समुप्पज्जिऊण तत्थ णवुंसयवेदबंधवोच्छेदं कादूण तत्थ बंधगद्धाए संखेज्जे भागे इत्थिवेदबंधगद्धं पवेसिय बंधगद्धामाहप्पेणित्थिवेददव्वं पूरेमाणो गच्छदि जाव सगाउट्ठिदिचरिमसमयो त्ति। एवमित्थि-वेददव्वमुक्कस्सं करिय तत्थेव कम्मट्ठिदिं समाणिय तत्तो णिस्सरिऊण दसवस्ससहस्साउएसु देवेसुववण्णो। तत्थ सम्मत्तं घेत्तूण सगाउट्ठिदिमणुपालिय तत्तो चुदो मणुसेसुववण्णो। एवमित्थिवेदं पूरेदूण मणुसेसुववण्णस्स खवयचरिमफालीए सामित्तविहाणट्ठमिदं वयणं—'तदो कमेण पूरिदकम्मंसिओ' इच्चादि। एत्थ संचयाणुगमे विहत्तिभंगो। णवरि दिवड्ढगुणहाणीणं संखेज्जाभागमेत्तित्थिवेदुक्कस्ससंचयदव्वं थोवूणमेत्थ सामित्तविसयीकयदव्वमिदि घेत्तव्वं,

---

*** स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?**

§ ४५. यह सूत्र सुगम है।

*** कोई गुणितकर्मांशिक जीव असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें स्त्रीवेदको पूरण करके अनन्तर क्रमसे पूरित कर्मांशिक होकर क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। अनन्तर अन्तिम स्थिति-काण्डकको अन्तिम समयमें संक्रमित करनेवाले उस जीवके स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।**

§ ४६. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। यथा - कोई एक गुणितकर्मांशिक जीव पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालसे न्यून कर्मस्थितिप्रमाण कालको बादर पृथिवी जीवोंमें और त्रस-कायिकोंमें समयके अविरोधपूर्वक बिताकर अनन्तर असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण आयुस्थितिके साथ उत्पन्न होकर पश्चात् वहाँ पर नपुंसकवेदकी बन्धव्युच्छित्ति करके तथा उस बन्धककालके संख्यात बहुभागको स्त्रीवेदके बन्धककालमें प्रवेश कराके बन्धककालके माहात्म्य-वश स्त्रीवेदकेद्रव्यको पूरण करता हुआ अपनी आयुस्थितिके अन्तिम समयको प्राप्त होता है। इस प्रकार स्त्रीवेदके द्रव्यको उत्कृष्ट करके और वहीं पर कर्मस्थितिको समाप्तकर वहाँसे निकल कर दस हजार वर्षकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ। पश्चात् वहाँ पर सम्यक्त्वको ग्रहणकर और अपनी आयुस्थितिका पालनकर वहाँसे च्युत होकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। इस प्रकार स्त्रीवेदको पूरण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हुए उस जीवके क्षपकसम्बन्धी स्त्रीवेदकी अन्तिम फालिमें स्वामित्वका विधान करनेके लिए यह वचन आया है—'तदो कमेण पूरिदकम्मंसिओ' इत्यादि। यहाँ पर सञ्चयका अनुगम करने पर उसका भङ्ग अनुभागविभक्तिके समान है। इतनी विशेषता है कि डेढ़ गुण-हानियोंके कुछ कम संख्यात बहुभागप्रमाण स्त्रीवेदका उत्कृष्ट सञ्चयद्रव्य यहाँ पर स्वामित्वका विषय

अधट्ठिदिगलणाए गुणसेढिणिज्जराए गुणसंकमेण च गदासेसदव्वस्स तदसंखेज्जदिभाग-पमाणत्तादो ।

*** पुरिसवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ?**

§ ४७. सुगमं ।

*** गुणिदकम्मंसिओ इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदे पूरेदूण तदो सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो पुरिसवेदस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुह-माणयस्स तस्स पुरिसवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो ।**

§ ४८. एदस्स सुत्तस्सत्थे भण्णमाणे विहत्तिसामित्तसुत्ताणुसारेण वत्तव्वं, तिवेद-पूरिदकम्मंसियम्मि सामित्तविहाणं पडि तत्तो एदस्स विसेसाभावादो । णवरि णवुंसयवेदं पक्खिविदूण जम्मि इत्थिवेदो पुरिसवेदस्सुवरि पक्खित्तो तदवत्थाए विहत्तिसामित्तं जादं । एत्थ पुण णवुंसय-इत्थिवेदसव्वसंकमं पडिच्छिऊणंतोमुहुत्तादीदेण जम्मि समए पुरिसवेद-चरिमफाली सव्वसंकमेण छण्णोकसाएहि सह कोहसंजलणे पक्खित्ता ताधे पुरिसवेदुक्कस्स-पदेससंकमसामित्तमिदि एसो एत्थतणो विसेसो । अण्णं च परोदएणेव सामित्तमेत्थ गहेयव्वं, सोदएण दीहयरपढमट्ठिदिम्मि गुणसेढीए बहुदव्वहाणिप्पसंगादो ।

*** णवुंसयवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ?**

किया गया द्रव्य है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि अधःस्थितिगलना, गुणश्रेणिनिर्जरा और गुणसंक्रमके द्वारा गया हुआ समस्त द्रव्य उसके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है ।

*** पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?**

§ ४७. यह सूत्र सुगम है ।

*** कोई एक गुणितकर्मांशिक जीव स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेदको पूरण करके अनन्तर अतिशीघ्र क्षपणाके लिए उद्यत हुआ । पुनः पुरुषवेदके अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रम करनेवाले उस जीवके पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है ।**

§ ४८. इस सूत्रके अर्थका कथन करने पर वह अनुभागविभक्तिके स्वामित्वसूत्रके अनुसार कहना चाहिये, क्योंकि जिसने तीन वेदोंको पूरण किया है ऐसा कर्मांशिक जीव स्वामी है इस दृष्टिसे उससे इसमें कोई भेद नहीं हैं । किन्तु इतनी विशेषता है कि नपुंसकवेदको संक्रमित कराके जहाँ स्त्रीवेद पुरुषवेदके ऊपर प्रक्षिप्त होता है उस अवस्थामें अनुभागविभक्तिसम्बन्धी स्वामित्व प्राप्त हुआ है । परन्तु यहाँ पर नपुंसकवेद और स्त्रीवेदका सर्वसंक्रम करके अन्तर्मुहूर्तके बाद जिस समय पुरुषवेदकी अन्तिम फालि सर्वसंक्रमके द्वारा छह नोकषायोंके साथ क्रोधसंज्वलनमें प्रक्षिप्त होती है उस समय पुरुषवेदके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका स्वामित्व होता है इतनी यहाँ पर विशेषता है । दूसरी विशेषता यह है कि यहाँ पर परोदयसे ही स्वामित्व ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि स्वोदयसे प्रथम स्थितिके अपेक्षाकृत बड़ी होनेपर गुणश्रेणिके द्वारा बहुत द्रव्यकी हानिका प्रसङ्ग आता है ।

*** नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?**

§ ४९. सुगमं।

*** गुणिदकम्मंसिओ ईसाणादो आगदो सव्वलहुं खवेदुमाढत्तो, तदो णवुंसयवेदस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स णवुंसयवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो।**

§ ५०. जो गुणिदकम्मंसिओ जाव सक्कं ताव ईसाणदेवेसु चेव णवुंसयवेदकम्मं गुणेदूण तत्थेव कम्मट्ठिदिं समाणिय तत्तो चुदो संतो मणुसेसुप्पज्जिय सव्वलहुमट्ठवस्साण-मंतोमुहुत्ताहियाणमुवरि खवगसेढिमारुहिय अणियट्टिकरणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु समइक्कंतेसु णवुंसयवेदस्सापच्छिमट्ठिदिखंडयं पुरिसवेदस्सुवरि सव्वसंकमेण संछुहमाणयस्स तस्स दिवड्ढगुणहाणिमेत्तगुणिदसमयपबद्धाणं संखेज्जे भागे घेत्तूण णवुंसयवेदस्स उक्कस्सओ पदेस-संकमो होइ त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसंगहो। एत्थ वि परोदएणेव सामित्तं दायव्वं, सोदएण पढमट्ठिदीए गुणसेढिसरूवेण गलमाणबहुदव्वपरिरक्खणट्ठं।

*** कोहसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ?**

§ ५१. सुगमं।

*** जेण पुरिसवेदो उक्कस्सओ संछुद्धो कोधे तेणेव जाधे माणे कोधो सव्वसंकमेण संछुभदि ताधे तस्स कोधस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो।**

---

§ ४९. यह सूत्र सुगम है।

* कोई एक गुणितकर्मांशिक जीव ईशान कल्पसे आकर अतिशीघ्र क्षय करनेके लिए उद्यत हुआ। अनन्तर नपुंसकवेदके अन्तिम स्थितिकाण्डकको अन्तिम समयमें संक्रमित करनेवाले उसके नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ५०. जो गुणितकर्मांशिक जीव जब तक शक्य हो तब तक ईशानकल्पके देवोंमें ही नपुंसक-वेदकर्मको गुणित करके तथा वहीं पर कर्मस्थितिको समाप्त करके वहाँसे च्युत होकर मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। पुनः अतिशीघ्र अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षके बाद क्षपकश्रेणिपर आरोहण करके अनिवृत्तिकरणके कालमेंसे संख्यात बहुभागके व्यतीत होने पर नपुंसकवेदके अन्तिम स्थितिकाण्डकको पुरुषवेदके ऊपर सर्वसंक्रमके द्वारा संक्रमित करता है उसके डेढ़ गुणहानिगुणित समयप्रबद्धोंके संख्यात बहुभागको ग्रहण कर नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है इस प्रकार यह यहाँ पर सूत्रार्थसंग्रह है। यहाँ पर भी परोदयसे ही स्वामित्व देना चाहिए, क्योंकि स्वोदयसे प्रथम स्थितिके गुणश्रेणिरूप होनेके कारण बहुत द्रव्यका गलन सम्भव है, अतः उसकी रक्षा करना आवश्यक है।

* क्रोधसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?

§ ५१. यह सूत्र सुगम है।

* जिसने उत्कृष्ट पुरुषवेदको क्रोधमें संक्रमित किया है वही जीव जब क्रोधको सर्वसंक्रमके द्वारा मानमें संक्रमित करता है तब उसके क्रोधसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ५२. जेण तिण्हं वेदाणं पूरिदकम्मंसिएण पुरिसवेदो उक्कस्सओ कोहसंजलणे संछुद्धो तेणेव तत्तो अंतोमुहुत्तमुवरि गंतूण जाधे कोधसंजलणो सव्वसंकमेण माणसंजलणे संछुब्भदे ताधे तस्स जीवस्स कोहसंजलणविसयो उक्कस्सओ य एस संकमो होइ त्ति सुत्तत्थसंबंधो। परोदएणेव सामित्तावहारणमेत्थ वि कायव्वं; सोदएण सामित्तविहाणे पढमट्ठिदीए बहुदव्वहाणिप्पसंगादो। एवं कोहसंजलणस्स सामित्तपरूवणं कादूण संपहि माण-माया-संजलणाणं पि एसो चेव सामित्तालावो थोवयरविसेसाणुविद्धो कायव्वो त्ति पदुप्पायणट्ठ-मुत्तरसुत्तद्दयमाह—

❀ एदस्स चेव माणसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कायव्वो। णवरि जाधे माणसंजलणो मायासंजलणे संछुभइ ताधे।

❀ एदस्स चेव माया- संजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कायव्वो। णवरि जाधे मायासंजलणो लोभसंजलणे संछुब्भइ ताधे।

§ ५३. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि। णवरि माया-लोहोदएहि चढिदस्स माणसंजलणसामित्तं वत्तव्वं। लोभोदएणेव सेढिमारूढस्स मायासंजलणसामित्तं होइ त्ति दट्ठव्वं।

❀ लोभसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स?

---

§ ५२. तीन वेदोंके कर्मांशको पूरित कर जिसने उत्कृष्ट पुरुषवेदको क्रोधसंज्वलनमें संक्रमित किया है वही जब वहाँसे अन्तर्मुहूर्त आगे जाकर क्रोधसंज्वलनको सर्वसंक्रमके द्वारा मानसंज्वलनमें संक्रमित करता है तब उस जीवके क्रोधसंज्वलनविषयक यह उत्कृष्ट संक्रम होता है इस प्रकार यह सूत्रार्थसम्बन्ध है। यहाँ पर भी परोदयसे ही स्वामित्वका निश्चय करना चाहिए, क्योंकि स्वोदयसे स्वामित्वका कथन करने पर प्रथम स्थितिके द्वारा बहुत द्रव्यकी हानिका प्रसङ्ग आता है। इस प्रकार क्रोधसंज्वलनके स्वामित्वका कथन करके अब मान और मायासंज्वलनका भी यही स्वामित्वसम्बन्धी आलाप अपेक्षाकृत थोड़ी विशेषताको लिए हुए करना चाहिए इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके दो सूत्र कहते हैं—

*** इसी जीवके मानसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम करना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि जब मानसंज्वलन मायासंज्वलनमें प्रक्षिप्त होता है उस समय मान-संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।**

*** तथा इसी जीवके मायासंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम करना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि जब मायासंज्वलन लोभसंज्वलनमें संक्रमित होता है तब माया संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।**

§ ५३. ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं। इतनी विशेषता है कि माया और लोभके उदयसे श्रेणि पर आरोहण करनेवाले जीवके मानसंज्वलनका स्वामित्व कहना चाहिए। तथा मात्र लोभके उदयसे श्रेणिपर चढ़े हुए जीवके मायासंज्वलनका स्वामित्व होता है ऐसा जानना चाहिए।

*** लोभसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है?**

§ ५४. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो अंतरं से काले कादूण लोहस्स असंकामगो होहिदि त्ति तस्स लोहस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो ।

§ ५५. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे । तं जहा—जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीए दव्वमुक्कस्सं कादूण समयाविरोहेण मणुसगइमागंतूण तत्थ तप्पाओग्गसंखेज्जवस्समेत्तदो-मणुसभवग्गहणेसु चत्तारि वारे कसाए उवसामेऊण तदो सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स अणियट्टिकरणं पविट्ठस्स अंतरकरणं कादूण से काले लोहस्सासंकामगो होहिदि त्ति एदम्मि अवत्थाविसेसे वट्टमाणस्स लोहसंजलणपदेससंकमो उक्कस्सओ होइ, अधापवत्तसंकमेण तत्थ दिवड्ढगुणहाणिमेत्तगुणिदकम्मंसियसमयपबद्धाणमसंखेज्जदिभागस्स सेससंजलणाणमुवरि संकंतिदंसणादो । किमट्ठमेसो चत्तारि वारे कसायोवसामणाए पयट्टाविदो ? ण, तत्था-बज्झमाणणवुंसयवेदारइ-सोगादिपयडीणं गुणसंकमदव्वपडिग्गहणट्ठं तहाकरणादो । तं कध-मेदेण सुत्तेणाणुवइट्ठमेदं चदुक्खुत्तो कसायाणमुवसामणं लब्भदे ? ण, वक्खाणादो तदुवलद्धीए उवरि भणिस्समाणुक्कस्सवड्ढिसामित्तसुत्तबलेण च तदवगमादो ।

---

§ ५४. यह सूत्र सुगम है ।

*** जो गुणितकर्मांशिक जीव क्षपणाके लिए उद्यत हो करके तदनन्तर समयमें लोभका असंक्रामक हो जायगा उसके इस अवस्थामें रहते हुए लोभसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेश-संक्रम होता है ।**

§ ५५. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । यथा—जो गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीमें उत्कृष्ट द्रव्य करके समयके अविरोधपूर्वक मनुष्य गतिमें आकर और वहाँ पर तत्प्रायोग्य संख्यात वर्षप्रमाण कालके भीतर दो मनुष्यभवोंको ग्रहण करके उनमें रहते हुए चार बार कषायोंका उपशम करके अनन्तर अतिशीघ्र क्षपणाके लिए उद्यत हो तथा अनिवृत्तिकरणमें प्रवेशपूर्वक अन्तरकरण करके अनन्तर समयमें लोभका असंक्रामक होगा उसके इस विशेष अवस्थामें रहते हुए लोभ-संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है, क्योंकि वहाँ पर अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा डेढ़ गुणहानिगुणित सत्कर्मरूप समयप्रबद्धोंके असंख्यातवें भागका शेष संज्वलनोंके ऊपर संक्रम देखा जाता है ।

शंका—इसे चार बार कषायोंकी उपशामनारूपसे किसलिए प्रवृत्त कराया है ।

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ पर नहीं बँधनेवाली नपुंसकवेद, अरति और शोक आदि प्रकृतियोंके गुणसंक्रमके द्वारा द्रव्यको ग्रहण करनेके लिए वैसा किया है ।

शंका—इस सूत्रमें तो यह बात नहीं कही गई है फिर यह चार बार कषायोंकी उपशामना कैसे प्राप्त होती है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि एक तो व्याख्यानसे उसकी उपलब्धि होती है । दूसरे आगे कहे जानेवाले उत्कृष्ट वृद्धिसम्बन्धी स्वामित्वविषयक सूत्रके बलसे इसका ज्ञान होता है ।

§ ५९. एवमोघेण सव्वकम्माणमुक्कस्ससामित्तविणिण्णयं सुत्ताणुसारेण कादूण एत्तो एदेण सुत्तेण सूचिदादेसपरूवणट्ठ[1]मुच्चारणागंथमिहाणुवत्तइस्सामो। तं जहा—सामित्तं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सयं च। उक्क० पयदं। दुविहो णिद्देसो। ओघं मूलगंथसिद्धं। आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि० उक्क० पदेससंकमो कस्स? अण्णदरस्स गुणिदकम्मंसियस्स जो अंतोमुहुत्तमोसक्किऊण सम्मत्तं पडिवज्जिय गुणसंकमेण सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए पूरिदो से काले विज्झादं पडिहिदि त्ति तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। सम्मत्त० सो चेव आलावो कायव्वो। णवरि विज्झादं पडिदूणंतोमुहुत्तेण मिच्छत्तं गदो तस्स पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स उक्कस्सपदेससंकमो। जइ एवं, सम्मामिच्छत्तस्स वि सम्मत्तेण सह सामित्तणिद्देसो कायव्वो, अंगुलस्सासंखेज्जदिभागपडिभागियविज्झादगुणसंकमादो अधापवत्तसंकमदव्वस्सासंखेज्ज-गुणत्तदंसणादो त्ति। सच्चमेदं, जइ सम्मामिच्छत्तविसए विज्झादगुणसंकमो अंगुलस्सासंखेज्ज-भागपडिभागिओ त्ति एत्थ विवक्खिओ होज्ज। णवरि ण तहाविहो एत्थ उच्चारणाहिप्पायो। किंतु मिच्छत्तस्सेव पलिदो० असंखे०भागमेत्तो सम्मामिच्छत्तगुणसंकमभागहारो त्ति एवंविहो उच्चारणाहिप्पाओ, अधापवत्तसंकमपरिहारेण तव्विसयसामित्तविहाणण्णहाणुववत्तीदो।

§ ५९. इस प्रकार सूत्रानुसार ओघसे सब कर्मोंके उत्कृष्ट स्वामित्वका निर्णय करके आगे इस सूत्रसे सूचित हुए आदेशका कथन करनेके लिए यहाँ पर उच्चारणाग्रन्थको बतलाते हैं। यथा—स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है। ओघनिर्देश मूलग्रन्थसे सिद्ध है। आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव अन्तर्मुहूर्त बाद सम्यक्त्वको प्राप्तकर गुणसंक्रमके द्वारा सबसे उत्कृष्ट पूरणाके रूपसे पूरित हो अनन्तर समयमें विध्यातसंक्रमको प्राप्त होगा उसके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। सम्यक्त्व प्रकृतिका वही आलाप करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि विध्यातसंक्रमको प्राप्त कर जो अन्तर्मुहूर्तमें मिथ्यात्वमें गया उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

शंका—यदि ऐसा है तो सम्यग्मिथ्यात्वके भी स्वामित्वका निर्देश सम्यक्त्वके साथ करना चाहिए, क्योंकि अङ्गुलके असंख्यातवें भागरूपसे प्रतिभागको प्राप्त हुए विध्यातसंक्रम और गुणसंक्रमसे अधःप्रवृत्तसंक्रमका द्रव्य असंख्यातगुणा देखा जाता है?

समाधान—यह सत्य है, यदि सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें विध्यातसंक्रम और गुणसंक्रम यहाँ पर अङ्गुलके असंख्यातवें भागका प्रतिभागी विवक्षित होता। परन्तु उस प्रकारका यहाँ पर उच्चारणाका अभिप्राय नहीं है। किन्तु मिथ्यात्वके समान पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण सम्यग्मिथ्यात्वका गुणसंक्रमभागहार है इस तरह इस प्रकारका उच्चारणाका अभिप्राय है, क्योंकि अन्यथा अधःप्रवृत्तसंक्रमके परिहार द्वारा तद्विषयक स्वामित्वका विधान नहीं बन सकता। चूर्णिसूत्रके

१. ता०प्रतौ -णट्ठ (णट्ठं) मुच्चारणा-, आ०प्रतौ -णट्ठ मुच्चारणा- इति पाठः।

चुण्णिसुत्ताहिप्पाएण पुण सम्मामिच्छत्तविसयविज्झादगुणसंकमभागहारो अंगुलस्सासंखेज-भागमेत्तो, उवरि भणिस्समाणुक्कस्सहाणि सामित्तसुत्तबलेण तहाभूदाहिप्पायसिद्धीदो। तम्हा दोण्हमेदेसिमहिप्पायाणं थप्पभावेण वक्खाणं कायव्वं। सोलसक०—छण्णोक० उक्क० पदेस-संकम० कस्स? अण्णद० गुणिदकम्मंसियस्स जो अंतोमुहुत्तकम्मं गुणेहिदि त्ति सम्मत्तं पडिवण्णो। पुणो अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदि तस्स विसंजोएंतस्स चरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंकामयस्स उक्क० पदे०संक०। तिण्हं वेदाणमुक्क० पदे०संक० कस्स? अण्णद० जो पूरिदकम्मंसिओ णेरइएसु उववण्णो अंतोमु० सम्मत्तं पडिवण्णो, पुणो अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदि तस्स चरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयसंकामयस्स उक्क० पदे०संक०। एत्थ विज्झादसंकमेणित्थि-णवुंसयवेदाणमुक्कस्ससामित्तविहाणे उच्चारणा-हिप्पाओ जाणिय वत्तव्वो, अण्णहा मिच्छाइट्ठिम्मि अधापवत्तसंकमेण तदुक्कस्ससामित्ते लाहदंसणादो। एवं सत्तमाए।

§ ५७. पढमाए जाव छट्ठि त्ति मिच्छ०-सम्मामि० उक्क० पदेससंक० कस्स? अण्णद० जो गुणिदकम्मंसिओ संखेजतिरियभवे अदिच्छ अप्पप्पणो णेरइएसुववण्णो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो, सव्वुक्कस्सियाए पूरणद्धाए पूरिदूण से काले विज्झादं पडिहिदि त्ति तस्स उक्क० पदे०संक०। सम्मत्त० सो चेवालावो। णवरि विज्झादं पडिदूण अंतोमु०

अभिप्रायसे तो सम्यग्मिथ्यात्वविषयक विध्यात और गुणसंक्रम भागहार अङ्गुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है, क्योंकि ऊपर कहे जानेवाले उत्कृष्ट हानिसम्बन्धी स्वामित्वविषयक सूत्रके बलसे उस प्रकारके अभिप्रायकी सिद्धि होती है, इसलिए इन दोनों ही अभिप्रायोंको स्थापित करके व्याख्यान करना चाहिए।

सोलह कषाय और छह नोकषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर गुणित-कर्मांशिक जीव अन्तर्मुहूर्तमें कर्मोंको गुणितकर्मांशिक करेगा। किन्तु इसी बीच सम्यक्त्वको प्राप्त हो अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करता है उस विसंयोजना करनेवाले जीवके अन्तिम स्थिति-काण्डकका अन्तिम समयमें संक्रमण करते हुए उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। तीन वेदोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर पूरितकर्मांशिक जीव नारकियोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त-में सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुनः जो अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकका अन्तिम समयमें संक्रमण करते हुए उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। यहाँ पर विध्यातसंक्रमके द्वारा स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन करने पर उच्चारणाका अभिप्राय जानकर कहना चाहिए, अन्यथा मिथ्यादृष्टि जीवमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा उनके उत्कृष्ट स्वामित्वके प्राप्त करनेमें लाभ देखा जाता है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए।

§ ५७. पहिलीसे लेकर छटी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक जीव संख्यात तिर्यञ्चभवोंको उल्लंघन कर अपने अपने नारकियोंमें उत्पन्न हो अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। अनन्तर सबसे उत्कृष्ट पूरणकालके द्वारा पूरण करके अनन्तर समयमें विध्यातको प्राप्त करेगा उसके उत्कृष्ट प्रदेश-संक्रम होता है। सम्यक्त्वका वही आलाप है। इतनी विशेषता है कि विध्यातको प्राप्त करके अन्त-

मिच्छत्तं गदो तस्स पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स उक० पदे०संक० । सो पुण अधापवत्तसंकमो। सोलसक०-छण्णोक० उक० पदे०संक० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ संखेज्जतिरियभवे कादूण पयदणेरइएसु उववण्णो, अंतोमु० सम्मत्तं पडिवण्णो । पुणो अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदि तस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमयसंकामयस्स उक० पदे०संक० । तिण्हं वेदाणं णारयभंगो ।

§ ५८. तिरिक्ख-पंचिंदियतिरिक्खतिय०३ मिच्छ०-सम्मामि० उक० पदे०संक० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ संखेज्जतिरियभवं कादूणप्पप्पणो तिरिक्खेसु उववण्णो, सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवज्जिय सव्वुक्कस्सियाए गुणसंकमद्धाए पूरेदूण से काले विज्झादं पडिहिदि त्ति तस्स उक० पदेससंक० । सम्मत्तस्स सो चेव उवसंतद्धाए पुण्णाए मिच्छत्तं पडिवण्णो तस्स पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स सम्मत्त० उक० पदे०संक० । सोलसक०-छण्णोक० उक० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० जो गुणिदकम्मंसि० अप्पप्पणो तिरिक्खेसु उववण्णो सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवण्णो, पुणो अणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोएदि तस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमयसंकामेंत० तस्स उक० पदे०संक० । पुरिसवे०-णवुंस० णारयभंगो । णवरि अप्पप्पणो तिरिक्खेसुववज्जावेयव्वो । इत्थिवेद० उक० पदेससंक० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसि० अप्पप्पणो तिरिक्खेसु असंखेज्जवस्साउएसु उववज्जिदूण पलिदो० असंखे०भागेण कालेण

मुहूर्तमें मिथ्यात्वमें गया उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। और वह अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक जीव संख्यात तिर्यञ्चभवोंको करके प्रकृत नारकियोंमें उत्पन्न हो अन्तमुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ। पुनः जो अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकका संक्रम करनेके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। तीन वेदोंका भङ्ग नारकियोंके समान है।

§ ५८. सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक जीव तिर्यञ्चोंके संख्यात भवोंको करके अपने अपने तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हो अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्तकर सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रम कालके द्वारा पूरण करके अनन्तर समयमें विध्यातसंक्रमको प्राप्त करेगा उसके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। सम्यक्त्वका वही आलाप है। किन्तु जो उपशमसम्यक्त्वके कालको पूराकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर गुणितकर्मांशिक जीव अपने अपने तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हो, अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्तकर अनन्तर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकके संक्रम करनेके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। पुरुषवेद और नपुंसकवेदके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके स्वामित्वका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अपने अपने तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न कराना चाहिए। स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक जीव अपने अपने असंख्यात वर्षकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हो, पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा स्त्रीवेदको पूरण करके

इत्थिवेदं पूरेदूण सम्मत्तं पडिव०। पुणो अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदि तस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमयसंकामयस्स तस्स उक्क० पदेस०संक०।

§ ५६. पंचिं०तिरिक्खअपज०-मणुसअपज० सम्म०—सम्मामि० उक्क० पदे०संक० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ तिरिक्खेसु उववण्णो,सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवण्णो,सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए पूरेऊण मिच्छत्तं गदो, अविणट्ठासु गुणसेढीसु मदो अपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णल्लयस्स उक्क० पदे०सं०। सोलसक०-छण्णोक० उक्क० पदे०संक० कस्स० ? जो गुणिदकम्मंसिओ संखेज्जतिरियभवं कादूण अपज्जत्तेसु उववण्णो तस्स अंतोमुहुत्तउववण्णल्लयस्स तप्पाओग्गविसुद्धस्स उक्क० पदेससंक०। तिण्णं वेदाणं उक्कस्स-पदेससंकमो कस्स ? जो पूरिदकम्मंसिओ अपज्जत्तएसु उववण्णो तस्स अंतोमुहुत्तं उववण्णल्लयस्स तप्पाओग्गविसुद्धस्स तस्स उक्कस्सपदेससंकमो।

§ ६०. मणुसतिए ओघं। णवरि सम्मत्त० उक्क० पदे०संक० कस्स ? जो गुणिद-कम्मंसिओ संखेज्जतिरियभवं कादूण तदो मणुसेसु उववण्णो सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवण्णो, सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए पूरेदूण मिच्छत्तं गदो तस्स पढमस० मिच्छा० उक्क० पदे०सं०। अणंताणु०चउक्कस्स वि एवं चेव मणुसेसुप्पाइय विसंजोयणचरिमफालीए सामित्तं वत्तव्वं।

§ ६१. देवेसु पढमपुढविभंगो। णवरि पुरिसवेद० उक्क० पदेस०संक० कस्स ?

सम्यक्त्वको प्राप्त हो पुनः अनन्तानुबन्धीचतुष्कको विसंयोजना करता है उसके अन्तिम स्थिति-काण्डकका संक्रम करनेके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ५६. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मि-थ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक जीव तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर, अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त हो सबसे उत्कृष्ट पूरणाके द्वारा पूरण करके मिथ्यात्वमें गया। फिर गुणश्रेणियोंके नष्ट होनेसे पहले मरकर अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समय-में उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक जीव तिर्यञ्चोंके संख्यात भव करके विवक्षित अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ, उत्पन्न होने अन्तर्मुहूर्तमें तत्प्रायोग्य विशुद्ध हुए उसके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। तीन वेदोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो पूरितकर्मांशिक जीव अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ, उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्तमें तत्प्रायोग्य विशुद्ध हुए उसके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ६०. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक जीव तिर्यञ्चोंके संख्यात भव करके अनन्तर मनुष्योंमें उत्पन्न हो अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त करके तथा सबसे उत्कृष्ट पूरणाके द्वारा पूरण करके मिथ्यात्वमें गया उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भी इसी प्रकार मनुष्योंमें उत्पन्न कराके विसंयोजनाकी अन्तिम फालिके पतनके समय उत्कृष्ट स्वामित्व कहना चाहिए।

§ ६१. देवोंमें प्रथम पृथिवीके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेश-

जो गुणिदकम्मंसिओ ईसाणिएसु णवुंस० पूरेदूण असंखेज्जवस्साउएसु पलिदो० असंखे०-भागमेत्तकालेण इत्थिवेदं पूरेदूण सम्मत्तं लद्धूण पलिदोवमट्ठिदिएसु देवेसु उववण्णो, तत्थ य भवट्ठिदिमणुपालेदूण अंतोमु० कम्मं गुणेहदि त्ति अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदि तस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमयसंका०तस्स उक्क० पदे०संक०। णवुंसयवेद० उक्क० पदे०संक० कस्स? जो गुणिदकम्मंसिओ ईसाणिगेसु णवुंसवे० अंतोमु० पूरेहदि त्ति सम्मत्तं पडिवण्णो पुणो अणंताणु०चउक्कं० विसंजोएदि तस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिम-समयसंका० तस्स उक्क० पदेससंक०। एवं सोहम्मीसाणे। भवण-वाणवें—जोदिसि—सणक्कुमारादि जाव सहस्सारे त्ति पढमपुढविभंगो।

§ ६२. आणदादि णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०—सम्मामि० उक्क० पदे०संक० कस्स? अण्णद० जो गुणिदकम्मंसिओ संखेज्जतिरियभवं कादूण मणुसेसु उववण्णो, सव्वलहुं दव्वलिंगी जादो, अंतोमुहुत्तं मदो देवो जादो। अंतोमु० सम्मत्तं पडिव० सव्वुक्कस्सगुण-संकमेण संकामेदूण से काले विज्झादं पडिहदि त्ति तस्स उक्क० पदे०संक०। सम्म० सो चेव भंगो। णवरि उवसंतद्धाए पुण्णाए मिच्छत्तं गदो तस्स पढमसमयमिच्छादिट्ठिस्स उक्क० पदे०संक०। सोलसक०—छण्णोक० मिच्छत्तभंगो। णवरि सम्मत्तं पडिवज्जिऊण

संक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक जीव ऐशान कल्पके देवोंमें नपुंसकवेदको पूरण करके पुनः असंख्यात वर्षकी आयुवालोंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा स्त्रीवेदको पूरण करके तथा सम्यक्त्वको प्राप्त करके पल्यप्रमाण स्थितिवाले देवोंमें उत्पन्न हुआ और वहाँ पर भव-स्थितिका पालन कर अन्तमुहूर्तमें कर्मको गुणितकर्मांशिक करेगा कि इसी बीच अनन्तानुबन्धी-चतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक जीव ऐशान कल्पके देवोंमें नपुंसकवेदको अन्तर्मुहूर्तमें पूरण करेगा कि इसी बीच सम्यक्त्वको प्राप्त करके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकके संक्रम करनेके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। इसी प्रकार सौधर्म और ऐशान कल्पमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और सनत्कुमारसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें पहिली पृथिवीके समान भङ्ग है।

§ ६२. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो गुणितकर्मांशिक जीव तिर्यञ्चोंके संख्यात भवोंको करके मनुष्योंमें उत्पन्न हो अतिशीघ्र द्रव्यलिङ्गी हो गया। पुनः अन्तमुहूर्तमें मरकर आनतादि कल्पोंका देव हो गया। पश्चात् अन्तमुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हो सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रमके द्वारा संक्रम करके अनन्तर समयमें विध्यातको प्राप्त होगा उसके विध्यातको प्राप्त होनेके अनन्तर पूर्व समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। सम्यक्त्वका वही भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि उपशमसम्यक्त्वके कालके पूर्ण होनेपर मिथ्यात्वमें गया उस प्रथम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। सोलह कषाय और छह नोकषायोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वको प्राप्तकर जो अनन्तर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकका

पुणो अणंताणु० विसंजोएदि तस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमय०संकाम० तस्स उक्क० पदेस०संक० । तिण्हं वेदाणमेवं चेव । णवरि पूरिदकम्मंसिओ मणुसेसुववज्जावेयव्वो ।

§ ६३. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०–सम्मामि० उक्क० पदेससंक० कस्स ? जो गुणिदकम्मंसिओ संखेज्जतिरियभवपरिब्भमणं कादूण मणुसेसु उववण्णो, सव्वलहुं सम्म० पडिव०, अविणट्ठासु गुणसेढीसु मदो देवेसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्ण०- तस्स उक्क० पदे०संक० । सोलसक०–छण्णोक० एवं चेव । णवरि देवेसु उववज्जिऊण अंतोमुहुत्तं अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदि तस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए चरिमसमयसंका०तस्स उक्क० पदे०संक० । एवं तिण्हं वेदाणं । णवरि पूरिदकम्मंसिओ मणुसेसु उववज्जावेदव्वो । एवं जाव अणाहारि त्ति ।

एवमुक्क०सामित्तं समत्तं ।

❀ एत्तो जहण्णयं ।

§ ६४ एत्तो उवरि जहण्णयं सामित्तमहिकयं त्ति अहियारसंभालणवक्कमेदं ।

❀ मिच्छत्तस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ६५. सुगमं ।

संक्रम करनेके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है । तीन वेदोंका इसी प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि पूरित कर्मांशिक जीवको मनुष्योंमें उत्पन्न कराना चाहिए ।

§ ६३. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो गुणितकर्मांशिक जीव तिर्यञ्चोंके संख्यात भवोंमें परिभ्रमण करके मनुष्योंमें उत्पन्न हो अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुनः गुणश्रेणियोंके नष्ट होनेके पूर्व ही मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ, प्रथम समयमें उत्पन्न हुए उस देवके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है । सोलह कषाय और छह नोकषायोंका उत्कृष्ट स्वामित्व इसी प्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि जो देवोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तमें अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करता है उसके अन्तिम स्थितिकाण्डकके संक्रम करनेके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है । इसी प्रकार तीन वेदोंका उत्कृष्ट स्वामित्व जानना चाहिये । इतनी विशेषता है कि पूरित कर्मांशिक जीवको मनुष्योंमें उत्पन्न कराना चाहिए । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ ।

* आगे जघन्य स्वामित्वको कहते हैं ।

§ ६४. इससे आगे जघन्य स्वामित्व अधिकृत है इस प्रकार यह वचन अधिकारकी संम्हाल करता है ।

* मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?

§ ६५. यह सूत्र सुगम है ।

❀ खविदकम्मंसिओ एइंदियकम्मेण जहण्णएण मणुसेसु आगदो, सव्वलहुं चेव सम्मत्तं पडिवण्णो, संजमं संजमासंजमं च बहुसो लभिदाउओ, चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि सम्मत्तमणुपालिदं, तदो मिच्छत्तं गदो, अंतोमुहुत्तेण पुणो तेण सम्मत्तं लद्धं, पुणो सागरोवमपुधत्तं सम्मत्तमणुपालिदं, तदो दंसणमोहणीयक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणस्स मिच्छत्तस्स जहण्णओ पदेससंकमो ।

§ ६६. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—एत्थ खविदकम्मंसियणिद्देसो सेसकम्मंसियपडिसेहफलो । एइंदियकम्मेण जहण्णएणे त्ति वयणेण भवसिद्धियाणमभवसिद्धियाणं च साहारणभूदं खविदकम्मंसियलक्खणमुवइट्ठं, सुहुमेइंदिएसु छावासयविसुद्धखविदकिरियाए कम्मट्ठिदिमेत्तकालमच्छिदस्स तदुभयसाहारणजहण्णेइंदियकम्मसमुप्पत्तिदंसणादो । एवमेइंदिएसु कम्मट्ठिदिं समयाविरोहेणाणुपालेऊण तदो मणुस्सेसु आगदो । किमट्ठमेसो मणुसगइमाणीदो ? सम्मत्तुप्पत्तियादिगुणसेढिणिज्जराहि बहुकम्मपोग्गलग्गालणं कादूण भवसिद्धियपाओग्गजहण्णसंतकम्मुप्पायणट्ठं । एदस्स चेव अत्थविसेसस्स जाणावणट्ठ-

---

*** किसी एक क्षपितकर्मांशिक जीवने एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ मनुष्योंमें आकर अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त किया, अनेकबार संयम और संयमासंयमको प्राप्त किया, चार बार कषायोंका उपशम किया, साधिक दो छयासठ सागर कालतक सम्यक्त्वका पालन किया, अनन्तर मिथ्यात्वमें गया, पुनः अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त किया और सागरपृथक्त्व कालतक सम्यक्त्वका पालन किया, अनन्तर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ, अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान उसके मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ।**

§ ६६. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । यथा—यहाँ पर 'क्षपितकर्मांशिक' पदके निर्देशका फल शेष कर्मांशिकोंका निषेध करना है । 'एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ' इस वचनसे भव्यों और अभव्योंके क्षपितकर्मांशिकका साधारणभूत लक्षण कहा गया है, क्योंकि जो सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें छह आवश्यकोंसे विशुद्ध क्षपित क्रियाके साथ कर्मस्थितिप्रमाण काल तक रहा है उसके भव्य और अभव्य दोनोंके साधारणभूत एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्म पाया जाता है । इस प्रकार एकेन्द्रियोंमें कर्मस्थितिका समयके अविरोधसे पालनकर अनन्तर मनुष्योंमें आया ।

शंका—इसे मनुष्यगतिमें किसलिए लाया गया है ?

समाधान—सम्यक्त्वकी उत्पत्तिसे लेकर गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा बहुत कर्म पुद्गलोंका गालन करके भव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्मको उत्पन्न करनेके लिये इसे मनुष्यगतिमें लाया गया है ।

मिदं वयणं—'सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवण्णो संजमं संजमासंजमं च बहुसो लद्धिदाउगो' त्ति। एइंदिएहिंतो आगंतूण मणुस्सेसुप्पज्जिय तत्थ अट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि सम्मत्तं संजमं च जुगवं पडिवज्जिय संजमगुणसेढिणिज्जरं कादूण तदो कमेण पलिदो० असंखे०-भागमेत्तसम्मत्त-संजमासंजमाणंताणु०विसंजोयणकंडयाणि थोवूणट्ठसंजमकंडयाणि च कुणमाणो गुणसेढिणिज्जरावावारेण पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालमच्छिदो त्ति वुत्तं होइ। 'चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता' इच्चेदेण वि सुत्तावयवेण चउण्हमेव कसायोवसामणावाराणं संभवो णादिरित्ताणमिदि जाणाविदं। एवं च गुणसेढिणिज्जराए जहण्णीकयदव्वस्स पुणो वि पयदसामित्तोवजोगिविसेसंतरपदुप्पायणट्ठमिदं वुत्तं—वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयं सम्मत्तमणुपालिदो त्ति। किमट्ठमेवं सादिरेयं वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालाविदो? ण, तत्तियमेत्तमिच्छत्तगोपुच्छाणमधट्ठिदिगलणेण णिज्जरं कादूण जहण्णसामित्तविहाणट्ठं तहाकरणादो। एवं छावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय तदो मिच्छत्तं गदो त्ति किमट्ठं वुच्चदे? ण, मिच्छत्तेणाणंतरिदस्स पुणो सागरोवमपुधत्तमेत्तकालं सम्मत्तेणावट्ठाणविरोहादो। तदेव प्रदर्शयन्नाह—पुणो तेण सम्मत्तं लद्धमिच्चादि। णेदं घडदे,

इसी अर्थविशेषका ज्ञान करानेके लिए 'अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त हो अनेक बार संयम और संयमासंयमको प्राप्त किया, यह वचन आया है। एकेन्द्रियोंमेंसे आकर तथा मनुष्योंमें उत्पन्न होकर वहाँ आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद सम्यक्त्व और संयमको एक साथ प्राप्तकर तथा संयमगुणश्रेणिनिर्जरा करके अनन्तर क्रमसे पल्यके असंख्यातवें भाग बार सम्यक्त्व, संयमासंयम और अनन्तानुबन्धीके विसंयोजनारूप काण्डकोंको करके तथा कुछ कम आठ संयमकाण्डकोंको करके गुणश्रेणिनिर्जराके व्यापार द्वारा पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक स्थित रहा यह उक्त कथनका तात्पर्य है। 'चार बार कषायोंका उपशम किया' इत्यादि सूत्र वचन द्वारा भी कषायोंके चार ही उपशम बार सम्भव हैं अधिक नहीं यह ज्ञान कराया गया है। इस प्रकार गुणश्रेणिनिर्जरा द्वारा जिसने द्रव्यको जघन्य किया है उसके प्रकृत स्वामित्वमें उपयोगी और भी विशेषताका कथन करनेके लिए 'साधिक दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन किया, यह वचन कहा है।

शंका—इस प्रकार साधिक दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन किसलिए कराया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वकी तावन्मात्र गोपुच्छाओंकी अधःस्थितिगलनाके द्वारा निर्जरा करके जघन्य स्वामित्वका विधान करनेके लिए वैसा किया है।

शंका—इस प्रकार दो छयासठ सागर कालतक परिभ्रमण करके अनन्तर मिथ्यात्वमें गया ऐसा किसलिए कहते हैं?

समाधान—नहीं, क्योंकि मिथ्यात्वके द्वारा अन्तरको नहीं प्राप्त हुए उक्त जीवका पुनः सागरपृथक्त्व काल तक सम्यक्त्वके साथ रहनेमें विरोध आता है।

अतः इसी बातको दिखलाते हुए 'पुनः उसने सम्यक्त्वको प्राप्त किया' इत्यादि वचन कहा है।

वेछावट्ठिसा० सम्मत्तेणावट्ठिदजीवस्स पुणो सागरोवमपुधत्तमेत्तकालं परिब्भमणासंभवादो। ण एस दोसो, एदस्स सुत्तस्साहिप्पाए वेछावट्ठीओ सम्मत्तेण परिब्भमिदस्स वि पुणो सागरोवमपुधत्तमेत्तकालं सम्मत्तगुणेणावट्ठाणसंभवदंसणादो। ण विहत्तिसामित्तसुत्तेणेदस्स विरोहो आसंकणिज्जो; तत्तो उवएसंतरपदंसणट्ठमेदस्स पयट्टत्तादो। एवं वेछावट्ठिसागरोवमबहिब्भूदसागरोवमपुधत्तमेत्तवेदयसम्मत्तकालमणंतरपरूविदोववत्तीए त्ति एसमणुपालिय अपच्छिमे मणुसभवग्गहणे देसूणपुव्वकोडिं संजमगुणसेढिणिज्जरं कादूण तदो दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो। एवं च दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठियस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए मिच्छत्तस्स जहण्णपदेससंकमो होइ त्ति सामित्ताहिसंबंधो, तस्स ताधे विज्झादसंकमेण जहण्णभावसिद्धीए विप्पडिसेहाभावादो। अधापवत्तकरणचरिमसमयादो उवरि सामित्तविहाणमेत्थ किण्ण कयं ? ण, तत्थ गुणसंकमपारंभेण संकमदव्वस्स जहण्णभावाणुववत्तीदो। हेट्ठा तरिहि अधापवत्तकरणविसोहीदो अणंतगुणहीणविसोहीए विज्झादसंकमो जहण्णो होदि त्ति णासंकणिज्जं, विज्झादसंकमस्स परिणामविसेसणिरवेक्खत्तादो। कधमेदं परिच्छिज्जदे ?

शंका—यह वचन नहीं बनता, क्योंकि जो जीव दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ रहा है उसका पुनः सागर पृथक्त्व काल तक उसके साथ परिभ्रमण करना नहीं बन सकता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि इस सूत्रके अभिप्रायसे जिसने दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वके साथ परिभ्रमण किया है उसका फिर भी सागर पृथक्त्व काल तक सम्यक्त्व गुणके साथ अवस्थान होना सम्भव दिखाई देता है। प्रकृतमें प्रदेशविभक्तिविषयक स्वामित्व सूत्रके साथ इस सूत्रका विरोध है ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि उससे भिन्न उपदेशके दिखलानेके लिए यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है।

इस प्रकार दो छयासठ सागर कालके बाहर सागर पृथक्त्व काल तक वेदकसम्यक्त्व का पहले कहा गया काल बन जाता है, इसलिए उसका पालन कर अन्तिम मनुष्यभवमें कुछ कम एक पूर्व कोटि काल तक संयम गुणश्रेणिनिर्जरा करके अनन्तर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। इस प्रकार दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुए जीवके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है इस प्रकार स्वामित्वका अभिसम्बन्ध करना चाहिए, क्योंकि उस समय उसके अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा जघन्यभावकी सिद्धिमें किसी प्रकारका निषेध नहीं है।

शंका—अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयसे ऊपर स्वामित्वका कथन यहाँ पर क्यों नहीं किया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ पर गुणसंक्रमका प्रारम्भ हो जानेसे संक्रम द्रव्यका जघन्यपना नहीं बन सकता।

शंका—तो नीचे अधःप्रवृत्तकरणकी विशुद्धिसे अनन्तगुणी हीन विशुद्धि होती है, अतः अधःप्रवृत्तकरण जघन्य हो जायगा ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि विध्यातसंक्रम परिणामविशेषकी

एदम्हादो चेव सुत्तादो। अंतोमुहुत्तमेत्तगुणसेढिणिज्जरालाहसंगहणट्ठं च अधापवत्तकरण-चरिमसमए सामित्तविहाणं संजुत्तं पेच्छामहे।

§ ६७. एत्थ सामित्तविसईकयदव्वपमाणाणयणमेवं कायव्वं। तं जहा—दिवड्ढ-गुणहाणिगुणिदेइंदियसमयपबद्धं ठविय तत्तो उक्कड्डिददव्वमिच्छामो त्ति तस्सोकड्डुक्कड्डण-भागहारो अंतोमुहुत्तोवट्टिदो भागहारत्तेण ठवेयव्वो। पुणो उक्कड्डिददव्वादो सागरोवम-पुधत्ताहियवेछावट्ठिसागरोवमकालब्भंतरे गलिदसेसदव्वमिच्छिय तक्कालब्भंतरणाणागुणहाणि-सलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी भागहारो ठवेयव्वो। एवं ठविदे सामित्तसमयगलिद-सेसासेसमिच्छत्तदव्वमागच्छइ। एत्तो विज्झायसंकमेण संकामिददव्वमिच्छामो त्ति अंगुलस्सासंखेज्जदिभागमेत्तो विज्झादसंकमभागहारो अवहारभावेण ठवेयव्वो। एवं ठविदे सामित्तविसइकयजहण्णदव्वमागच्छइ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ६८. सुगमं।

❀ एसो चेव जीवो मिच्छत्तं गदो, तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागं

अपेक्षा न करके होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है। तथा अन्तमुहूर्त काल तक होनेवाली गुणश्रेणि-निर्जराके लाभका संग्रह करनेकेलिए अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें स्वामित्वका कथन संयुक्त है ऐसा हम समझते हैं।

§ ६७. यहाँ पर स्वामित्वके विषयभावको प्राप्त हुए द्रव्यका प्रमाण इस प्रकार लाना चाहिए। यथा—डेढ़ गुणहानिसे गुणित एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धको स्थापित कर उसमेंसे उत्कर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यकी इच्छा करके उसका अन्तमुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार भागहाररूप-से स्थापित करना चाहिए। पुनः उत्कर्षित द्रव्यमेंसे सागरपृथक्त्व अधिक दो छयासठ सागर-प्रमाण कालके भीतर गलकर शेष बचे हुए द्रव्यको लानेकी इच्छासे उस कालके भीतर जितनी नाना गुणहानिशलाकाएँ हों उनकी अन्योन्याभ्यस्तराशिको भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार स्थापित करने पर स्वामित्व समयमें गलकर शेष बचा हुआ मिथ्यात्वका समस्त द्रव्य आता है। इसमेंसे विध्यातसंक्रमके द्वारा संक्रमको प्राप्त हुए द्रव्यको लानेकी इच्छासे अङ्गुलके असंख्यातवें भागप्रमाण विध्यातसंक्रमभागहारको भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार स्थापित करने पर स्वामित्वके विषयभावको प्राप्त हुआ जघन्य द्रव्य आता है।

*** सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?**

§ ६८. यह सूत्र सुगम है।

*** यही जीव मिथ्यात्वमें गया। अनन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालको**

गंतूण अप्पप्पणो दुचरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयउव्वेल्लमाणयस्स तस्स जहण्णओ पदेससंकमो।

§ ६६. एसो चेवाणंतरणिद्दिट्ठो मिच्छत्तजहण्णसामित्ताहिमुहो खविदकम्मंसियजीवो दंसणमोहक्खवणाए अणब्भुट्ठिय पुव्वमेवंतोमुहुत्तमत्थि त्ति संकिलेसमावूरिय परिणामपच्चएण मिच्छत्तं गदो तदो अंतोमुहुत्तेणुव्वेल्लणमाढविय पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालं गंतूण जहाकममप्पप्पणो दुचरिमट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमयउव्वेल्लमाणओ जादो तस्स पयदकम्माणं जहण्णसामित्तं होदि । चरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालीए जहण्णसामित्तमेदं किण्ण दिण्णं ? ण, तत्थ सव्वसंकमेण संकमंताणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णभावविरोहादो। तो क्खहि चरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमादिफालीसु पयदसामित्तविहाणं कस्सामो त्ति णासंकणिज्जं, तत्थ वि गुणसंकमसंभवेण जहण्णभावाणुववत्तीदो ।

§ ७०. एत्थ जहण्णसामित्तविसईकयदव्वपमाणमेवमणुगंतव्वं । तं जहा—वेछावट्ठिसागरोवमाणमादीए पढमसम्मत्तमुप्पाएंतेण मिच्छत्तस्स दिवड्ढगुणहाणिमेत्तएइंदियसमयपबद्धेहिंतो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुवरि गुणसंकमेण संकामिददव्वमुक्कड्डणपडिमागिय-

---

बिताकर जब वह अपने अपने द्विचरम स्थितिकाण्डककी अन्तिम समयमें उद्वेलना करता है तब उसके उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ।

§ ६६. यही अनन्तर पूर्व कहा गया मिथ्यात्वके जघन्य स्वामित्वके अभिमुख हुआ क्षपितकर्मांशिक जीव दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत होनेके अन्तर्मुहूर्त पूर्व ही संक्लेशको पूरकर परिणामवश मिथ्यात्वमें गया । अनन्तर अन्तर्मुहूर्तमें उद्वेलना आरम्भ करके पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालको बिताकर जब क्रमसे अपने अपने द्विचरम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें उद्वेलना करनेवाला हुआ तब प्रकृत कर्मोंका जघन्य स्वामित्व होता है ।

* शंका—अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिके समय यह जघन्य स्वामित्व क्यों नहीं दिया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ पर सर्वसंक्रमके द्वारा संक्रमको प्राप्त हुए सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्यपना होनेमें विरोध आता है ।

शंका—तो अन्तिम स्थितिकाण्डककी द्विचरम आदि फालियोंके समय प्रकृत जघन्य स्वामित्वका कथन करना चाहिए ?

समाधान—ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि वहाँ पर भी गुणसंक्रम सम्भव होनेसे जघन्यपना नहीं बन सकता ।

§ ७०. यहाँ पर जघन्य स्वामित्वके विषयभावको प्राप्त हुए द्रव्यके प्रमाणका अनुगम करना चाहिए । यथा—दो छयासठ सागरप्रमाण कालके प्रारम्भमें प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके जो मिथ्यात्वके डेढ़ गुणहानिप्रमाण एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धोंमेंसे गुणसंक्रम भागहारके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर द्रव्य संक्रमित होता है उसमेंसे उत्कर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यके

मिच्छामो त्ति अंतोमुहुत्तोवट्टिदुक्कड्डणभागहारपदुप्पण्णगुणसंकमभागहारो खविदकम्मंसिय-कम्मट्ठिदिसंचयस्स भागहारत्तेण ठवेयव्वो। एदं घेत्तूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सागरोवम-पुधत्तमेत्तकालं च अधट्ठिदिगलणाए गालिदं ति तक्कालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाण-मण्णोण्णब्भत्थरासी एदस्स भागहारभावेण ठवेयव्वो। पुणो दीहुव्वेल्लणकालपज्जवसाणे उव्वेल्लणसंकमेण सामित्तं जादमिदि उव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्ण-ब्भत्थरासी उव्वेल्लणभागहारो च एदस्स भागहारत्तेण ठवेयव्वो। एवं ठविदे पयद-सामित्तविसइकयजहण्णदव्वमुप्पज्जदि त्ति घेत्तव्वं।

✽ अणंताणुबंधीणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ७१. सुगमं।

✽ एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो, संजमं संजमासंजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो एइंदिएसु पलिदोवमस्स असंखे०भागमच्छिदो जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलिदा त्ति। तदो पुणो तसेसु आगदो, सव्वलहुं सम्मत्तं लद्धं, अणंताणुबंधिणो च विसंजोइदा, पुणो मिच्छत्तं गंतूण अंतोमुहुत्तं संजोएदूण पुणो तेण सम्मत्तं

प्रतिभागकी इच्छामें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे गुणित गुणसंक्रमभागहारको क्षपितकर्मांशिकके कर्मस्थितिके भीतर सञ्चित हुए सञ्चयके भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिए। पुनः इसे ग्रहणकर दो छयासठ सागर और सागरपृथक्त्व कालके भीतर अधःस्थितिगलना-के द्वारा द्रव्य गलित हुआ है, इसलिए उस कालके भीतर नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिको इसके भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिए। पुनः दीर्घ उद्वेलना कालके अन्तमें उद्वेलना संक्रमके द्वारा स्वामित्व उत्पन्न हुआ है, इसलिए उद्वेलना कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिको और उद्वेलनाभागहारको उसके भागहाररूपसे स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार स्थापित करनेपर प्रकृत स्वामित्वके विषयभावको प्राप्त हुआ जघन्य द्रव्य उत्पन्न होता है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए।

✽ अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?

§ ७१. यह सूत्र सुगम है।

✽ जो एकेन्द्रियसम्बन्धी सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आया। वहाँ पर संयम और संयमा-संयमको अनेक बार प्राप्तकर और चार बार कषायोंका उपशम कर अनन्तर एकेन्द्रियोंमें तावत्प्रमाण पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक रहा जब तक उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंको गलाया। अनन्तर पुनः त्रसोंमें आया तथा अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त कर अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना की। पुनः मिथ्यात्वमें जाकर और अन्तर्मुहूर्त काल तक संयुक्त होकर पुनः उसने सम्यक्त्वको प्राप्त किया। अनन्तर दो छयासठ सागर काल

सद्धं, तदो सागरोवमबेछावट्ठीओ अणुपालियं, तदो विसंजोएदुमाढत्तो तस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए अणंताणुबंधीणं जहण्णओ पदेससंकमो।

§ ७२. एइंदियजहण्णकम्मावलंबणं पयदसामियस्स खविदकम्मंसियत्तपदुप्पायणट्ठं। तसेसु तस्साणयणं संजम-संजमासंजम-सम्मत्ताणंताणुबंधिविसंजोयणाकंडएहि बहुपोग्गलगालणट्ठं। चदुक्खुत्तो कसायोवसामणकरणं पि तदट्ठमेवे त्ति दट्ठव्वं। पुणो एइंदिएसु पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालावट्ठाणं पि उवसामयसमयपबद्धाणं तत्थतणट्ठिदिखंडयजणिदथूलयरगोवुच्छायारेणाधट्ठिदीए णिग्गालणट्ठं। तत्तो पुणो वि तसेसु आगमणब्भुवगमो सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवज्जावणफलो। तत्थाणंताणुबंधिविसंजोयणं पि तेसिं णिस्संतीकरणफलं। पुणो मिच्छत्तथावणमणंताणुबंधीणं विसंजोयणावसेणासब्भूदाणं संतकम्मसुप्पायणफलं। ण तदवलंबणस्स पयदाणुवजोगित्तमासंकणिज्जं, अणंताणुबंधिचिराणसंतकम्मस्स णिम्मूलावणयणं कादूण पुणो मिच्छत्तं गयस्स अंतोमुहुत्तमेत्तणवकबंधसमयपबद्धेहिं सह सेसकसाएहिंतो तक्कालपडिच्छिददव्वं घेत्तूण पुणो सम्मत्तपडिलंभेण वेछावट्ठिसागरोवमाणमणुपालणेण णिरुद्धदव्वस्स सुट्ठु जहण्णीभावसंपादणाए पयदोवजोगित्तसिद्धीदो। एवं वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालिय जहण्णीकयाणंताणुबंधिकम्मो तदवसाणे

तक उसके साथ रहा। अनन्तर जब विसंयोजनाका आरम्भ करता है तब उसके अधः-प्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें अनन्तानुबन्धियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ७२. यहाँ पर प्रकृत स्वामी क्षपितकर्मांशिक होता है इस बातका कथन करनेके लिए एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मका अवलम्बन किया है। संयम, संयमासंयम, सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धियोंके विसंयोजनाकाण्डकोंके द्वारा बहुत पुद्गलोंके गलानेके लिए उक्त जीवको त्रसोंमें लाया गया है। तथा इसीलिए चार बार कषायोंका उपशम कराया गया है ऐसा जानना चाहिए। पुनः उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंके स्थितिकाण्डकोंसे उत्पन्न हुई स्थूलतर गोपुच्छाओंकी अधः-स्थितिके द्वारा गलानेके लिए उसे एकेन्द्रियोंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक रखा है। अनन्तर वहाँसे फिर भी त्रसोंमें आगमनके स्वीकारके फलस्वरूप अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त कराया है। तथा वहाँ पर अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना करानेका फल भी उनका निसत्त्व करना है। पुनः मिथ्यात्वमें स्थापित करनेका फल विसंयोजनाके वशसे असद्भावको प्राप्त हुए अनन्तानुबन्धियोंके सत्कर्मको उत्पन्न करना है। यहाँ पर उसका अवलम्बन करना प्रकृतमें उपयोगी नहीं है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि अनन्तानुबन्धियोंके प्राचीन सत्कर्मका निर्मूल अपनयन करके पुनः मिथ्यात्वको प्राप्त हुए जीवके अन्तर्मुहूर्तप्रमाण नवकबन्धके समयप्रबद्धोंके साथ शेष कषायोंमेंसे तत्काल संक्रमित हुए द्रव्यको ग्रहणकर पुनः सम्यक्त्वके प्राप्त होनेसे और उसका दो छयासठ सागर काल तक पालन करनेसे विवक्षित द्रव्यके अत्यन्त जघन्यरूपसे सम्पादन करनेमें प्रकृतमें उपयोगीपनेकी सिद्धि होती है। इस प्रकार दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन-कर जो अनन्तानुबन्धीकर्मको जघन्य करके उसके अन्तमें विसंयोजना करनेके लिए उद्यत हुआ है

विसंजोएदुमाढत्तो तस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए विज्झादसंकमेण पयदकम्माणं जहण्णओ पदेससंकमो होइ ।

§ ७३. एत्थ जहण्णसामित्तविसईकयदव्वपमाणाणुगमो एवं कायव्वो । तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिगुणिदएइंदियसमयपबद्धं ठविय अंतोमुहुत्तोवट्टिदोकड्डुक्कड्डणभागहारपदुप्पण्णेण अधापवत्तसंकमभागहारेणोवट्टिदे संजुत्तपढमसमयप्पहुडि अंतोमुहुत्तमेत्तकालमधापवत्तसंकमेण सेसकसाएहिंतो पडिच्छिदाणंताणुबंधिदव्वमुक्कड्डणपडिभागियमागच्छइ । पुणो वेछावट्ठि-सागरोवमब्भंतरगलिदसेसदव्वमिच्छामो त्ति तक्कालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्ण-ब्भासजणिदरासिणा तम्मि ओवट्टिदे गलिदसेसदव्वं होइ । तत्तो विज्झादसंकमेण गददव्व-मिच्छामो त्ति अंगुलस्सासंखेज्जभागमेत्तब्भागहारेण ओवट्टिदे जहण्णसामित्तविसईकय-दव्वमागच्छदि । अहवा एत्थ वि वेछावट्ठिसागरोवमाणमवसाणे मिच्छत्तं णेदूणंतोमुहुत्तेण पुणो वि सम्मत्तपडिलंभेण सागरोवमपुधत्तमेत्तकालं गालिय विसंजोयणाए अब्भुट्ठिदस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए जहण्णसामित्तमिदि एसो वि सुत्तयाराहिप्पाओ एदम्मि सुत्ते णिलीणो त्ति वक्खाणेयव्वो । कथमेदं णव्वदे ? उवरि भणिस्समाणप्पाबहुअसुत्तादो । तत्थेव तस्सोववत्तिं भणिस्सामो ।

❀ अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ?

उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विध्यातसंक्रमक द्वारा प्रकृत कर्मोंका जघन्य प्रदेश-संक्रम होता है ।

§ ७३. यहाँ पर जघन्य स्वामित्वके विषयभावको प्राप्त हुए द्रव्यके प्रमाणका अनुगम इस प्रकार करना चाहिए । यथा—डेढ़ गुणहानिसे गुणित एकेन्द्रियसम्बन्धी समप्रबद्धको स्थापितकर अन्तमुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे गुणित अधःप्रवृत्तसंक्रमभागहारसे भाजित करने पर संयुक्त होनेके प्रथम समयसे लेकर अन्तमुहूर्त काल तक अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा शेष कषायोंमेंसे संक्रमित हुआ अनन्तानुबन्धीका द्रव्य उत्कर्षणका प्रतिभागी होकर आता है । पुनः दो छयासठ सागर कालके भीतर गलित हुए शेष द्रव्यकी इच्छासे उस कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानि-शलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे उसके अपवर्तित करने पर गलित होनेके बाद शेष बचा हुआ द्रव्य आता है । पुनः उसमेंसे विध्यातसंक्रमके द्वारा गये हुए द्रव्यकी इच्छासे अङ्गुलके असंख्यातवें भागप्रमाण उसके भागहारके द्वारा भाजित करने पर जघन्य स्वामित्वके विषयभावको प्राप्त हुआ द्रव्य आता है । अथवा यहाँ पर भी दो छयासठ सागर कालके अन्तमें मिथ्यात्वमें ले जाकर अन्त-मुहूर्तके बाद फिर भी सम्यक्त्वको प्राप्त कर और सागरपृथक्त्व काल तक उसके साथ रह कर विसंयोजनाके लिए उद्यत हुए जीवके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य स्वामित्व होता है । इस प्रकार यह भी सूत्रकारका अभिप्राय इस सूत्रमें गर्भित है ऐसा व्याख्यान करना चाहिए ।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—आगे कहे जानेवाले अल्पबहुत्व सूत्रसे जाना जाता है । उसकी उपपत्तिका कथन वहीं पर करेंगे ।

*** आठ कषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?**

§ ७४. सुगमं ।

*** एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो, संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो, चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो एइंदिएसु गदो, असंखेज्जाणि वस्साणि अच्छिदो जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलंति। तदो तसेसु आगदो, संजमं सव्वलहुं लद्धो, पुणो कसायक्खवणाए उवट्ठिदो तस्स अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णओ पदेससंकमो ।**

§ ७५. एत्थ एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगमणकारणं पुव्वं व वत्तव्वं। एवमणेयवारं सम्मत्ताणुविद्धसंजमादिपरिणामेहिं गुणसेढिणिज्जरं कादूण पुणो चदुक्खुत्तो कसायोवसामणाए च वावदो। एत्थ वि कारणं गुणसेढिणिज्जराबहुत्तं गुणसंकमेण बहुदव्वावणयणं च दट्ठव्वं। एवमेत्थ गुणसेढिणिज्जराए बहुदव्वगालणं कादूण पुणो वि मिच्छत्तपडिवादेणेइंदिएसु पइट्ठो त्ति जाणावणट्ठमिदं वयणं—'तदो एइंदिएसु गदो' त्ति। णेदं णिरत्थयं, पलिदो० असंखे०भागमेत्तमप्पयरकालं तत्थच्छिऊण ट्ठिदिखंडयघादवसेणुवसामयसमयपबद्धं गालणाए सहलत्तदंसणादो त्ति पदुप्पायणट्ठमेदं वुत्तं—'असंखेज्जाणि वस्साणि अच्छिदो' इच्चादि। ण च तत्थतणबंधबहुत्तमस्सिऊण पयदत्थविहडावणं जुत्तं,

§ ७४. यह सूत्र सुगम है।

*** जो एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आया। संयमासंयम और संयमको बहुत बार प्राप्त किया। तथा चार बार कषायोंका उपशम करके अनन्तर एकेन्द्रियोंमें गया। वहाँ उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंके गलनेमें लगनेवाले असंख्यात वर्ष काल तक रहा। अनन्तर त्रसोंमें आकर और अतिशीघ्र संयमको प्राप्त कर पुनः कषायोंकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें आठ कषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।**

§ ७५. यहाँ पर एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य कर्मके साथ त्रसोंमें आनेके कारणका पहलेके समान कथन करना चाहिए। इस प्रकार अनेक बार सम्यक्त्वसे युक्त संयम आदि रूप परिणामोंके द्वारा गुणश्रेणिनिर्जरा करके पुनः चार बार कषायोंकी उपशामना करनेमें व्यापृत हुआ। यहाँ पर गुणश्रेणिनिर्जराके बहुत्वरूप और गुणसंक्रमके द्वारा बहुत द्रव्यके अपनयनरूप कारणको जानना चाहिए। इस प्रकार यहाँ पर गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा बहुत द्रव्यका गालन करके फिर भी मिथ्यात्वमें गिरकर एकेन्द्रियोंमें प्रविष्ट हुआ इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिए 'अनन्तर एकेन्द्रियोंमें गया' यह वचन कहा है और यह वचन निरर्थक भी नहीं है, क्योंकि पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अल्पतर काल तक वहाँ रहकर स्थितिकाण्डकघातके वशसे उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंकी गलनेरूप सफलता देखी जाती है, इसलिए इस बातके कथन करनेके लिए 'असंख्यात वर्ष तक रहा' इत्यादि वचन कहा है। यदि कहा जाय कि वहाँ पर होनेवाले बहुत बन्धके आश्रयसे प्रकृत

बंधादो णिज्जराए तत्थ बहुत्तोवलंभादो। एवमुवसामयसमयपबद्धे गालिय तदो तसेसु आगदो, सव्वलहुं संजमं लद्धो। पुणो कसायक्खवणाए उवट्ठिदो त्ति। एतदुक्तं भवति— मणुसेसुप्पज्जिय गब्भादिअट्ठवस्साणमुवरि सम्मत्तं संजमं च जुगवं पडिवज्जिय देसूणपुव्वकोडिमेत्तकालं गुणसेढिणिज्जरमणुपालिय पच्छा अंतोमुहुत्तसेसे सिज्झिदव्वए कदासेसपरियरो कसायक्खवणाए अब्भुट्ठिदो त्ति। एवमवट्ठिदस्स तस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए विज्झादसंकमेण अट्ठकसायाणं जहण्णओ पदेससंकमो होइ त्ति सामित्तसंबंधो। एत्थुवसंहारपरूवणा सुगमा। एवमेदं सामित्तमुवसंहरिय एदेण सरिससामित्ताणमरदि-सोगाणमप्पणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

एवमरइ-सोगाणं

§ ७६. सुगममेदमप्पणासुत्तं।

❀ हस्स-रइ-भय-दुगुंछाणं पि एवं चेव। णवरि अपुव्वकरणस्सावलियपविट्ठस्स।

§ ७७. हस्स-रइ-भय-दुगुंछाणमेवं चेव खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण खवणाए उवट्ठियस्स जहण्णसामित्तं होइ। विसेसो दु अधापवत्तकरणं वोलिय अपुव्वकरणं पविट्ठस्स

अर्थ विघटित हो जाता है सो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि वहाँ पर बन्धकी अपेक्षा बहुत निर्जरा उपलब्ध होती है। इस प्रकार उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंको गलाकर अनन्तर त्रसोंमें आया और अतिशीघ्र संयमको प्राप्त हुआ। पुनः कषायोंकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। कहनेका तात्पर्य यह है कि मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भसे लेकर आठ वर्षके बाद सम्यक्त्व और संयमको युगपत् प्राप्त होकर कुछ कम एक पूर्वकोटि काल तक गुणश्रेणिनिर्जराका पालनकर पश्चात् सिद्ध होने के लिए अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर पूरी तैयारीके साथ कषायोंकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। इस प्रकार अवस्थित हुए उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विध्यातसंक्रमके द्वारा आठ कषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ऐसा यहाँ स्वामित्वका सम्बन्ध करना चाहिए। यहाँ पर उपसंहारकी प्ररूपणा सुगम है। इस प्रकार इस स्वामित्वका उपसंहार करके इसके स्वामित्वके सदृश कथनवाले अरति और शोककी मुख्यता करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इसी प्रकार अरति और शोका जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए।**

§ ७६. यह अर्पणासूत्र सुगम है

*** हास्य, रति, भय और जुगुप्साका भी जघन्य स्वामित्व इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इन कर्मोंका जघन्य स्वामित्व जिसे अपूर्वकरणमें प्रविष्ट हुए एक आवलि हुआ है उसके होता है।**

§ ७७. हास्य, रति, भय और जुगुप्साका इसी प्रकार क्षपितकर्मांशिकविधिसे आकर क्षपणाके लिए उद्यत हुए जीवके जघन्य स्वामित्व होता है। विशेषता इतनी है कि अधःकरणको बिताकर अपूर्वकरणमें प्रविष्ट हुए जीवके प्रथम आवलिके अन्तिम समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा यह

पढमावलियचरिमसमए अधापवत्तसंकमेणेदं सामित्तं कायव्वमिदि । जइ एवं, अपुव्वकरण-चरिमसमए जहण्णसामित्तमेदेसिं दादव्वो, अपुव्वगुणसेढिणिज्जराए णिज्जिण्णसेसाणं तत्थ सुट्ठु जहण्णभावोववत्तीदो त्ति ण पच्चवट्ठाणं कायव्वं, तत्थतणगुणसेढिणिज्जरादो समयं पडि अरइ-सोगादिअबज्झमाणपयडीहिंतो गुणसंकमेण ढुक्कमाणदव्वस्सासंखेज्जगुणत्तेण तहा कादुमसक्कियत्तादो ।

❀ कोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ७८. सुगमं ।

❀ उवसामयस्स चरिमसमयपबद्धो जाधे उवसामिज्जमाणो उवसंतो ताधे तस्स कोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो ।

§ ७९. अण्णदरकम्मंसियलक्खणेणागंतूण उवसमसेढिमारूढस्स जाधे कोधसंजलण-चरिमसमयजहण्णणवकबंधो बंधावलियवदिक्कंतसमयप्पहुडि संकमणावलियब्भंतरे कमेणोव-सामिज्जमाणो उवसंतो ताधे तस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ त्ति घेत्तव्वं ।

❀ एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं ।

§ ८० जहा कोहसंजलणस्स उवसामयचरिमसमयणवकबंधसंकमणचरिमसमयम्मि जहण्णसामित्तं दिण्णं एवमेदेसिं पि कम्माणं कायव्वं, विसेसाभावादो ।

स्वामित्व करना चाहिए। यदि ऐसा है तो अपूर्वकरणके अन्तिम समयमें इन कर्मोंका जघन्य स्वामित्व देना चाहिए, क्योंकि अपूर्व गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा निर्जीर्ण होकर शेष बचे अनन्त कर्म परमाणुओंकी अत्यन्त जघन्यरूपसे उपपत्ति बन जाती है सो ऐसा निश्चय करना ठीक नहीं है, क्योंकि वहाँ होनेवाली गुणश्रेणि निर्जराकी अपेक्षा प्रत्येक समयमें नहीं बँधनेवाली अरति और शोक आदि प्रकृतियोंमेंसे गुणसंक्रमके द्वारा प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा होनेसे वैसा करना अशक्य है।

* क्रोधसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?

§ ७८. यह सूत्र सुगम है।

* उपशामकके अन्तिम समयवर्ती समयप्रबद्ध जब उपशमको प्राप्त होता हुआ उपशान्त होता है तब उसके क्रोधसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ७९. अन्यतर क्षपितकर्मांशिकविधिसे आकर उपशमश्रेणि पर आरूढ़ हुए जीवके जब क्रोध-संज्वलनका अन्तिम समयवर्ती जघन्य नवकबन्ध बन्धावलिके बाद प्रथम समयसे लेकर संक्रमणावलिके भीतर क्रमसे उपशमको प्राप्त होता हुआ उपशान्त होता है तब उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

* इसी प्रकार मानसंज्वलन, मायासंज्वलन और पुरुषवेदका जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए।

§ ८०. जिस प्रकार उपशामकके अन्तिम समयवर्ती नवकबन्धके संक्रमणके अन्तिम समयमें क्रोधसंज्वलनका जघन्य स्वामित्व दिया है उसी प्रकार इन कर्मोंका भी जघन्य स्वामित्व करना चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है।

* लोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ८१. खविद-गुणिदकम्मंसियादिविसेसावेक्खमेदं पुच्छासुत्तं।

* एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो, संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण कसाएसु किं पि णो उवसामेदि। दीहं संजमद्धमणुपालिदूण खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स अपुव्वकरणस्स आवलियपविट्ठस्स लोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो।

§ ८२. एत्थेइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगमणे बहुसो संजमादिपडिलंभे च कारणं पुव्वं परूविदमेव। संपहि सइं पि कसाए णो उवसामेदि त्ति एत्थ कारणं वुच्चदे— जइ चारित्तमोहोवसामयगुणसेढिणिज्जराणुपालणट्ठमेसो सेढिमारुहिअदे, तो तत्थाबज्झमाण-पयडीहिंतो गुणसंकमेण पडिच्छिज्जमाणदव्वं गुणसेढिणिज्जरादो समयं पडि असंखेज्ज-गुणमत्थि। एवं संते लोहसंजलणस्स तत्थुवचओ चेवे त्ति। एदेण कारणेण कसाएसु किं पि णो उवसामेदि त्ति वुत्तं। तदो सेसगुणसेढिणिज्जराओ जहावुत्तेण कमेणाणुपालिय पुणो अंतोमुहुत्तसेसे सिज्झिदव्वए त्ति कसायक्खवणाए उवट्ठिदो तस्स अधापवत्तकरणं वोलाविय अपुव्वकरणे आवलियपविट्ठस्स अधापवत्तसंकमेण लोहसंजलणजहण्णसामित्तं होइ त्ति एसो सुत्तत्थसब्भावो।

---

* लोभसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?

§ ८१. क्षपितकर्मांशिक और गुणितकर्मांशिक आदिरूप विशेषताकी अपेक्षा करनेवाला यह पृच्छासूत्र है।

* जोएकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आकर तथा संयमासंयम और संयमको बहुत बार प्राप्तकर कषायोंका एक बार भी उपशम नहीं करता है। मात्र दीर्घकाल तक संयमका पालनकर क्षपणाके लिये उद्यत हुआ है उसके अपूर्वकरणमें प्रविष्ट होनेके आवलिके अन्तिम समयमें लोभसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ८२. यहाँ पर एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आनेका और अनेकबार संयम आदि प्राप्त करनेका कारण पहले अनेक बार कह ही आये हैं। 'तत्काल एकबार भी कषायोंका उपशम नहीं करता है' यह जो सूत्रवचन कहा है सो इसके कारणका निर्देश करते हैं—यदि चारित्र-मोहके उपशामकसम्बन्धी गुणश्रेणिनिर्जराके पालन करनेके लिए यह जीव श्रेणिपर आरोहण करता है तो वहीं पर नहीं बँधनेवाली प्रकृतियोंमेंसे गुणसंक्रमके द्वारा संक्रमित होनेवाला द्रव्य गुणश्रेणि-निर्जराकी अपेक्षा प्रत्येक समयमें असंख्यातगुणा होता है और ऐसा होने पर लोभसंज्वलनका वहाँ पर उपचय ही होगा। इस कारणसे वह कषायोंका एक बार भी उपशम नहीं करता है ऐसा कहा है, इसलिए शेष गुणश्रेणिनिर्जराओंका यथोक्त क्रमसे पालनकर पुन सिद्ध होनेके लिए अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर जो कषायोंकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ उसके अधःप्रवृत्तकरणको बिताकर अपूर्वकरणमें एक आवलिकाल प्रविष्ट होने पर उसके अन्तिम समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा लोभसंज्वलनका जघन्य स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका अर्थ है।

❀ णवुंसयवेदस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ?

§ ८३. सुगमं ।

❀ एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो तिपलिदोवमिएसु उववण्णो, तिपलिदोवमे अंतोमुहुत्ते सेसे सम्मत्तमुप्पाइदं । तदो पाए सम्मत्तेण अपडिवदिदेण सागरोवमछावट्ठिमणुपालिदेण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धो, चत्तारि वारे कसाए उवसामिदा । तदो सम्मामिच्छत्तं गंतूण पुणो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं घेत्तूण सागरोवमछावट्ठिमणुपालिदूण मणुसभवग्गहणे सव्वचिरं संजममणुपालिदूण खवणाए उवट्ठिदो तस्स अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए णवुंसयवेदस्स जहण्णओ पदेससंकमो ।

§ ८४. एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणा विहत्तिसामित्ताणुसारेण परूवेयव्वा । णवरि वेछावट्ठिसागरोवमाणमवसाणे मिच्छत्तं गंतूण सोदएण मणुसेसुप्पण्णस्स तत्थ सामित्तं दिण्णं, अण्णहा जहण्णसामित्तविहाणाणुववत्तीदो । एत्थ पुण मिच्छत्तमगंतूण पुरिसवेदोदएणेव खवयसेढिमारुहमाणयस्स अधापवत्तकरणचरिमसमए जहण्णसामित्तमिदि एसो विसेसो णायव्वो ।

※ नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ?

§ ८३. यह सूत्र सुगम है ।

※ जो एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ त्रसोंमें आया । वहाँ तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ । तीन पल्यमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर सम्यक्त्वको उत्पन्न किया । अनन्तर वहाँसे लेकर सम्यक्त्वसे च्युत न होकर तथा छयासठ सागर काल तक उसका पालन करते हुए जिसने संयमासंयम और संयमको अनेकबार प्राप्त किया और चार बार कषायोंका उपशम किया । अनन्तर सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त कर पुनः अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको ग्रहण कर और छयासठ सागर काल तक उसका पालनकर अन्तमें मनुष्यभवको प्राप्तकर चिरकाल तक संयमका पालन करते हुए जो क्षपणाके लिए उद्यत हुआ उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ।

§ ८४. इस सूत्रके अर्थका कथन प्रदेशविभक्तिके स्वामित्वसूत्रके अनुसार करना चाहिए । इतनी विशेषता है कि दो छयासठ सागरके अन्तमें मिथ्यात्वमें जाकर स्वोदयसे मनुष्योंमें उत्पन्न हुए जीवके वहाँ पर स्वामित्व दिया है, अन्यथा जघन्य प्रदेशस्वामित्व नहीं बन सकता । किन्तु यहाँ पर मिथ्यात्वमें नहीं जाकर पुरुषवेदके उदयसे ही क्षपकश्रेणि पर आरोहण करनेवाले जीवके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य स्वामित्व दिया है इस प्रकार दोनोंमें इतना विशेष जान लेना चाहिए ।

❀ एवं चेव इत्थिवेदस्स वि । णवरि तिपलिदोवमिएसु ण अच्छिदाउगो ।

८५. एदस्स सुत्तस्स अत्थो सुगमो । एवमोघेण सव्वकम्माणं चुण्णिसुत्ताणुसारेण जहण्णसामित्तविहासणा कया । एत्तो एदेण सूचिदादेसजहण्णसामित्तविहासणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—

* ८६. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो । ओघो मूलगंथसिद्धो । आदेसेण णेरइय० मिच्छ० जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० जो खविदकम्मंसिओ विवरीयं गंतूण दीहाए आउट्ठिदीए उववज्जिदूण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो, पुणो अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदूण तत्थ भवट्ठिदिमणुपालिय से काले मिच्छत्तं गाहिदि त्ति तस्स जह० पदे०संक०। एवमित्थि-णवुंस०वेदाणं । सम्म०—सम्मामि० जह० पदेससंक० कस्स ? अण्णद० जो खविद-कम्मंसि० विवरीदं गंतूग णेरइएसु उववण्णो, दीहाए उव्वेल्लणद्धाए उव्वेल्लेऊण दुचरिम-ट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमयसंकामेंतयस्स तस्स जह० पदे०संकमो । अणंताणु०चउक्क० जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णदरो खविदकम्मंसिओ विवरीयं गंतूण णेरइएसु दीहाउ-ट्ठिदिएसुववण्णो अंतोमुहुत्तं सम्मत्तं पडिवण्णो । पुणो अणंताणु०४ विसंजोएदूण मिच्छत्तं गदो सव्वलहुं पुणो वि सम्मत्तं पडिवण्णो, तत्थ भवट्ठिदिमणुपालेऊण थोवावसेसे

---

* इसी प्रकार स्त्रीवेदका भी जघन्य संक्रमस्वामित्व जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यह तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न हुआ नहीं होता है ।

§ ८५. इस सूत्रका अर्थ सुगम है । इस प्रकार ओघसे चूर्णिसूत्रके अनुसार सब कर्मोंके जघन्य स्वामित्वका व्याख्यान किया । अब आगे इससे सूचित होनेवाले समस्त जघन्य स्वामित्वका व्याख्यान करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—

§ ८६. जघन्यका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघ मूल ग्रन्थसे सिद्ध है । आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर दीर्घ आयुवाले नारकियोंमें उत्पन्न होकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुनः अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके और वहाँ भवस्थिति काल तक उसका पालन कर अनन्तर समयमें मिथ्यात्वको ग्रहण करेगा उसके जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । इसी प्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रमका स्वामित्व जानना चाहिए । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर नारकियोंमें उत्पन्न हुआ । तथा दीर्घ उद्वेलनाकालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके उसके अन्तिम समयमें द्विचरम स्थितिकाण्डकका संक्रम करता है उसके उक्त प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर दीर्घ आयुवाले नारकियोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुनः अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके मिथ्यात्वमें गया । तथा फिर भी अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त कर वहाँ भवस्थिति काल तक उसका पालन करते हुए जीवनके थोड़ा शेष रहने पर जब मिथ्यात्वके अभिमुख होता है तब उसके

जीविदव्वए त्ति मिच्छत्ताहिमुहचरिमसमयसम्माइट्ठिस्स जह० पदे०संक० । बारसक०-भय-दुगुंछाणं जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० खविदकम्मंसिओ विवरीयं गंतूण णेरइएसु उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णल्लयस्स जह० पदे०संकमो । पंचणोक० जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० खविदकम्मंसियस्स विवरीयं गंतूण णेरइय० उववण्णस्स तस्स अंतोमुहुत्तुववण्णल्लयस्स तेसिं जह० पदे०संक० । एवं सत्तमाए ।

§ ८७. पढमादि जाव छट्ठि त्ति मिच्छ०-इत्थिवे०-णवुंस० जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० खविदकम्मंसि० विवरीयं गंतूण दीहाए आउट्ठिदीए उववज्जिदूण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो । अणंताणु०चउक्क विसंजोएदूण तत्थ भवट्ठिदिमणुपालिय चरिमसमयणिप्पिडिमाणयस्स तस्स जह० पदेससंकमो । सम्म०-सम्मामि०-बारसक०-सत्तणोक० णिरओघभंगो । अणंताणु०४ जह० पदेससंकमो कस्स ? अण्ण० खविदकम्मंसियस्स विवरीयं गंतूण दीहाए आउट्ठिदीए उववजिदूण सम्मत्तं पडिवण्णो, पुणो अणंताणु०चउक्कं विसंजोएदूण संजुत्तो, तदो अंतोमुहुत्तसम्मत्तं पडिवण्णो, तत्थ भवट्ठिदिमणुपालेदूण चरिमसमयणिप्पिदमाण० तस्स० जह० पदेससंक० ।

§ ८८. तिरिक्खाणं पढमपुढवीभंगो । णवरि तिपलिदोवमिएसु उववज्जावेयव्वो । णवरि इत्थि-णवुंस० जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० खविदकम्मंसि० खइयसम्माइट्ठी

सम्यक्त्वके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । बारह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर नारकियोंमें उत्पन्न हुआ उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । पाँच नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर नारकियोंमें उत्पन्न हुआ उसके वहाँ उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त होने पर उसके अन्तिम समयमें उक्त कर्मों का जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए ।

§ ८७. पहली पृथिवीसे लेकर छटी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर दीर्घ आयुवाले नारकियोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पश्चात् अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके वहां भवस्थिति काल तक उसका पालन करते हुए रहा, उसके वहांसे निकलनेके अन्तिम समयमें उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है । सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और सात नोकषायोंके जघन्य स्वामित्वका भङ्ग नारकियोंके समान है । अनन्तानुबधीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर दीर्घ आयुवाले नारकियोंमें उत्पन्न होकर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । पुनः अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करके संयुक्त हुआ । तदनन्तर अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त हो वहाँ उसका भवस्थिति काल तक पालन कर जो निकल रहा है उसके वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है ।

§ ८८. तिर्यञ्चोंमें जघन्य स्वामित्वका भङ्ग पहिली पृथिवीके समान है । इतनी विशेषता है कि इन्हें तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न कराना चाहिए । इतनी और विशेषता है कि स्त्रीवेद और

विवरीयं गंतूण तिरिक्खेसु तिपलिदोवमिएसु उववण्णो तस्स चरिमसमयणिप्पिदमाण० जह० पदे०संकमो। एवं पंचिं०तिरिक्खतिए। णवरि जोणिणी० इत्थिवे०–णवुंसयवेद० मिच्छत्तभंगो।

§ ८९. पंचिं०तिरिक्खअपज्ज०–मणुसअपज्ज० सम्म०–सम्मामि० जह० पदे०संक० कस्स? अण्णद० खविदकम्मंसि० विवरीयं गंतूण दीहाए उव्वेल्लणद्धाए उव्वेल्लमाणगो अपज्जत्तएसु उववण्णो, जाधे दुचरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयसंकामओ जादो ताधे तस्स जह० पदे०संक०। सोलसक०–भय-दुगुंछा० जह० पदे०संक० कस्स? अण्णद० खविदकम्मंसि० विवरीयं गंतूण अपज्ज० उववण्णो तस्स पढमसमयउववण्णल्लयस्स जहण्णपदेससंकमो। सत्तणोक० जह० पदे०संक० कस्स? अण्णद० खविदकम्मंसि० विवरीयं गंतूण अपज्ज० अंतोमु० उववण्णल्लयस्स०।

§ ९०. मणुसतिए ओघं। णवरि मणुसिणी० पुरिसवे० भय-दुगुंछभंगो।

§ ९१. देवेसु मिच्छ० जह० पदे०संक० कस्स? अण्णद० खविदकम्मंसि० विवरीयं गंतूण चउवीससंतकम्मिओ दीहाए आउट्ठिदीए उववज्जिय चरिमसमयणिप्पिदमाण० तस्स जह० पदे०संकमो। सम्म०–सम्मामि०-बारसक०–णवणोक० तिरिक्खभंगो। णवरि

नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव विपरीत जाकर तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न हुआ उसके वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि योनिनी तिर्यञ्चोंमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके जघन्य स्वामित्वका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है।

§ ८९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर दीर्घ उद्वेलनाकालके द्वारा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करता हुआ अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। वह जब द्विचरम स्थितिकाण्डकका उसके अन्तिम समयमें संक्रमण करता है तब उसके उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ, प्रथम समयमें उत्पन्न हुए उसके उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। सात नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ उसके वहाँ उत्पन्न होनेके बाद अन्तर्मुहूर्तके अन्तिम समयमें जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है।

§ ९०. मनुष्यत्रिकमें जघन्य स्वामित्वका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग भय और जुगुप्साके समान है।

§ ९१. देवोंमें मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर चौबीस सत्कर्मके साथ दीर्घ आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें विद्यमान है उसके मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। सम्यक्त्व,

जम्मि तिण्णि पलिदोवमाणि तम्मि तेत्तीसं सागरोवमा० उववज्जावेयव्वो। अणंताणु०-चउक्क० जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० खविदकम्मंसियस्स विवरीयं गंतूण अट्ठावीस-संतकम्म० सम्माइट्ठी० तेत्तीससागरोवमिएसु देवेसुववज्जिय चरिमसमयणिप्पिदमाण० तस्स जह० पदे०संक०। एवं सोहम्मादि णवगेवज्जा त्ति। णवरि सगट्ठिदी। भवण०-वाण०-जोदिसि० पढमपुढविभंगो। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-अणंताणु० ४-इत्थिवे०[1]-णवुंस० देवोघं। सम्मामि० मिच्छत्तभंगो। बारसक०-पुरिसवेद-भय-दुगुंछा० जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० खविदकम्मंसि० खइयसम्मादिट्ठिस्स विवरीयं गंतूण देवेसु पढमसमयउववण्णल्लयस्स। चदुणोक० जह० पदे०संक० कस्स ? अण्णद० खविदकम्मंसि० विवरीयं गंतूण खइयसम्मादिट्ठिदेवेसु अंतोमुहुत्तद्धुववण्णल्लयस्स तस्स जह० पदे०संक०। एवं जाव०। एवं जहण्णयं सामित्तं समत्तं।

※ एयजीवेण कालो।

सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग तिर्यञ्चोंके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर तीन पल्य कहे हैं वहाँ पर तेतीस सागरप्रमाण आयुवालोंमें उत्पन्न कराना चाहिए। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर अट्ठाईस सत्कर्मके साथ सम्यग्दृष्टि होकर तेतीस सागरकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें विद्यमान है उसके उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। इसी प्रकार सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सब कर्मोंका जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें सब कर्मोंके जघन्य स्वामित्वका भङ्ग पहली पृथिवीके समान है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके जघन्य स्वामित्वका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य स्वामित्वका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक क्षायिकसम्यग्दृष्टि जीव विपरीत जाकर देवोंमें उत्पन्न हुआ है उसके वहाँ उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। चार नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम किसके होता है ? जो अन्यतर क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर क्षायिक सम्यक्त्वके साथ देवोंमें उत्पन्न होकर अन्तर्मुहूर्त काल बिता चुका है उसके अन्तर्मुहूर्तके अन्तिम समयमें उक्त कर्मोंका जघन्य प्रदेश-संक्रम होता है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार जघन्य स्वामित्व समाप्त हुआ।

※ एक जीवकी अपेक्षा कालका कथन करते हैं।

---

1. ता०-आ०प्रत्योः मिच्छ-इत्थिवे० इति पाठः।

§ ६२. एत्तो एयजीवेण विसेसिओ कालो विहासियव्वो त्ति अहियारसंभालण-वयणमेदं ।

❀ सव्वेसिं कम्माणं जहण्णुक्कस्सपदेससंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ६३. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ६४. कुदो ? सव्वेसिं कम्माणं जहण्णुक्कस्सपदेससंकमाणमेयसमयादो उवरि-मवट्ठाणासंभवादो । संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदत्थविवरणमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—कालो दुविहो—जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छ० उक्क० पदे०संक० केव० ? जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरे० । सम्मा० उक्क० पदेस०संका० जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सम्मामि० उक्क० पदे०संका० जहण्णुक्क० एयस० । अणु० जह० अंतोमु०, उक्क० बेछावट्ठिसागरो० सादिरे० । सोलसक०-णवणोक० उक्क० पदे०संका० केव० ? जहण्णुक्क० एयस० । अणुक्क० तिण्णि भंगा । जो सो सादिओ सपज्जवसिदो जह० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

---

§ ६२. आगे एक जीवकी अपेक्षा कालका व्याख्यान करते हैं इस प्रकार यह अधिकारकी सम्हाल करनेवाला वचन है ।

*** सब कर्मोंके जघन्य और उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ६३. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।**

§ ६४. क्योंकि सब कर्मोंके जघन्य और उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमोंका एक समयसे अधिक काल तक अवस्थान पाया जाना असम्भव है । अब इस सूत्रके द्वारा सूचित होनेवाले अर्थके विवरण-स्वरूप उच्चारणाको बतलाते हैं । यथा—काल दो प्रकारका है, जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागरप्रमाण है । सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर-प्रमाण है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका कितना काल है ? जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकके तीन भङ्ग हैं । उनमेंसे जो सादि-सान्त भङ्ग है उसकी अपेक्षा जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन-प्रमाण है ।

§ ९५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० उक्क० पदे०संका० जहण्णुक० एयस० । अणु० जह० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । सम्म० उक्क० पदे०संका० जहण्णुक्क० एयसमओ । अणु० जह० एयस०,उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सम्मामि०-अणंताणु०४ उक्क० पदे०संका० जहण्णु० एयस० । अणु० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमं ।

विशेषार्थ—स्वामित्वके अनुसार सब कर्मोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम एक समयके लिए होता है, इसलिए सर्वत्र इसका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है । मात्र सब कर्मोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके कालमें फरक है जिसका खुलासा इस प्रकार है—मिथ्यात्वका प्रदेशसंक्रम मात्र सम्यग्दृष्टिके होता है और २८ प्रकृतियोंकी सत्तावाले सम्यग्दृष्टिका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर है, इसलिए इसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर कहा है । सम्यक्त्वका प्रदेशसंक्रम मिथ्यात्व गुणस्थानमें होता है । यतः मिथ्यात्वका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और मिथ्यात्वमें रहते हुए सम्यक्त्वका अधिकसे अधिक सत्त्व पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक रहता है, इसलिए इसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । सम्यग्मिथ्यात्वका प्रदेशसंक्रम मिथ्यात्व गुणस्थानमें भी होता है और उसकी सत्तावाले सम्यग्दृष्टिके भी होता है । इन गुणस्थानोंमें कमसे कम रहनेका काल अन्तर्मुहूर्त है यह तो स्पष्ट ही है । साथ ही यदि कोई जीव मध्यमें वेदक काल तक मिथ्यात्वमें रहकर मिथ्यात्वमें रहनेके पहले और बादमें कुल मिलाकर दो छयासठ सागर काल तक वेदक सम्यक्त्वके साथ रहे । तथा वहाँसे आकर पुनः मिथ्यात्वमें सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके काल तक रहता हुआ उसका संक्रम करे तो यह सम्भव है । साथ ही सम्यक्त्वके साथ प्रथम छयासठ सागर कालमें प्रवेश करनेके पूर्व भी वह सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तावाला होकर अपने संक्रमके उत्कृष्ट काल तक उसका संक्रम करे तो यह भी सम्भव है । इन्हीं सब बातोंका विचार कर यहाँ पर सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर कहा है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम क्षपणाके समय होता है । इसके पहले इनका अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है, इसलिए भव्योंकी अपेक्षा तो यह अनादि-सान्त और सादि-सान्त है । किन्तु अभव्योंके सदाकाल होनेके कारण अनादि-अनन्त है । सादि-सान्त विकल्प उन भव्योंके होता है जो उपशमश्रेणि पर आरोहण कर चुके हैं और ऐसे जीव या तो अन्तर्मुहूर्तमें क्षपकश्रेणि पर आरोहण कर अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्त कर देते हैं या उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन काल तक उसके साथ रहते हैं, इसलिए यहाँ पर उक्त प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है ।

§ ९५. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस

बारसक०-णवणोक० उक्क० पदे०संका० जहण्णुक्क० एयस०। अणु० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमं०। एवं सव्वणेरइय०। णवरि समट्ठिदी। णवरि सत्तमाए अणंताणु०४ अणु० जह० अंतोमु०।

§ ९६. तिरिक्खेसु मिच्छ० उक्क० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अणु० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। सम्म० णारयभंगो। सम्मामि० उक्क०

सागर है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी आयुस्थिति कहनी चाहिए। तथा इतनी और विशेषता है कि सातवीं पृथिवीमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—सामान्यसे और प्रत्येक पृथिवीकी अपेक्षा सब नारकियोंमें सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अपने स्वामित्व कालमें एक समयके लिए ही होता है इसलिए इसका सर्वत्र जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। किसी नारकीका सम्यग्दृष्टि होकर कम से कम अन्तर्मुहूर्त तक और अधिक से अधिक कुछ कम तेतीस सागर तक मिथ्यात्वका अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके साथ रहना सम्भव है, इसलिए यहाँ पर मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर कहा है। यह सम्भव है कि कोई एक जीव सम्यक्त्वकी उद्वेलना करते हुए उसके संक्रममें एक समय शेष रहने पर नरकमें उत्पन्न हो और यह भी सम्भव है कि अन्य कोई जीव नरकमें उद्वेलनाके उत्कृष्ट काल तक वहाँ रहकर उसका संक्रम करे, इसलिए सम्यक्त्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र उत्कृष्ट काल तेतीस सागर प्राप्त करनेके लिए अधिकतर समय तक वेदकसम्यक्त्वके साथ रखकर प्रारम्भमें और अन्तमें मिथ्यात्वमें रखकर उसका संक्रम कराके प्राप्त करना चाहिए। सोलह कषायों और नौ नोकषायोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है यह तो स्पष्ट ही है। जघन्य कालका खुलासा इस प्रकार है—कोई एक अनन्तानुबन्धीचतुष्कका विसंयोजक जीव सासादनमें जाकर और अनन्तानुबन्धीका एक समय तक संक्रामक होकर अन्य गतिमें चला जाय यह सम्भव है, इसलिए इसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय कहा है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंका जिस नारकीके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है वह उसके बाद कमसे कम अन्तर्मुहूर्त काल तक नरकमें अवश्य रहता है, इसलिए इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। यह जघन्य और उत्कृष्ट काल सब नरकोंमें भी बन जाता है, इसलिए उनमें सामान्य नारकियोंके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र प्रत्येक नरककी अलग अलग आयुस्थिति होनेसे उसका निर्देश अलगसे किया है। यहाँ इतना विशेष जान लेना चाहिए कि सातवें नरकमें सम्यग्दृष्टि नारकी मिथ्यात्वमें आकर अन्तर्मुहूर्त काल व्यतीत हुए बिना मरणको नहीं प्राप्त होता, इसलिए वहाँ अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ ९६. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है।

पदे०संका० जहण्णु० एयसमओ। अणु० जह० एयस०, उक० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि। सोलसक०—णवणोक० उक० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अणु० जह० खुद्दाभवग्गहणं, अणंताणु०४ एयस०, उक० सव्वेसिमणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिय०। णवरि जम्हि अणंतकालं तम्हि तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। सम्मामि० अणु० जह० एयस०, उक० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुध०।

§ ६७. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०—मणुसअपज्ज० सत्तावीसं पयडीणं उक० पदे०-

---

सम्यक्त्वका भङ्ग नारकियोंके समान है। सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल खुल्लकभवग्रहणप्रमाण है, अनन्तानुबन्धीचतुष्कका एक समय है तथा सबका उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनोंके बराबर है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर अनन्त काल कहा है वहाँ पर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य कहना चाहिए। तथा सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें सम्यक्त्वका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है, इसलिए इनमें मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य कहा है। सम्यक्त्वका भङ्ग नारकियोंके समान है यह स्पष्ट ही है। सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके जघन्य काल एक समयका खुलासा नारकियोंके समान कर लेना चाहिए। उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य कहनेका कारण यह है कि उत्तम भोगभूमिमें वेदक सम्यक्त्वके साथ रखकर तो कुछ कम तीन पल्य काल प्राप्त हो ही जाता है। साथ ही इसके पूर्व तिर्यञ्च पर्यायमें सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ताके साथ यथासम्भव अधिकसे अधिक काल तक रखे और इस प्रकार साधिक तीन पल्य कास ले आवे। तिर्यञ्चोंमें रहनेके जघन्य काल और उत्कृष्ट कालको ध्यानमें रख कर वहाँ सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल खुल्लक भवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल अनन्तकाल कहा है। मात्र अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य काल एक समय नारकियोंके समान यहाँ भी बन जाता है, इसलिए उसका अलगसे निर्देश किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य होनेसे उनमें अनन्तकालके स्थानमें इसे कहना चाहिए यह सूचना की है। इनके सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके उत्कृष्ट कालका निर्देश भी अलगसे इसी दृष्टिसे किया है। शेष कथन सुगम है।

§ ६७. पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका

संका० जहण्णुक० एयस० । अणु० जह० अंतोमु०, सम्म०-सम्मामि० एगस०, सव्वेसिमुक० अंतोमु० ।

§ ९८. मणुसतिए मिच्छ०-सम्म० तिरिक्खभंगो । सम्मामि०—सोलसक०-णवणोक० उक० पदे०संका० जहण्णु० एयस० । अणुक० जह० अंतोमु०, सम्मामि०-अणंताणु०४ एयस०, उक०[1] तिण्णि पलिदो० पुव्वको० ।

§ ९९. देवेसु मिच्छ० उक० पदेससंका० जहण्णुक० एयस०, अणुक० जह० अंतोमु०, उक० तेत्तीसं सागरोवमं । एवं बारसक०—णवणोक० । सम्म० णारयभंगो । सम्मामि०-अणंताणु०४ उक० पदे०संका० जहण्णु० एयस० । अणु० जह० एयस०, उक० तेत्तीसं सागरोवमं । एवं भवणादि णवगेवज्जा त्ति । णवरि सगट्ठिदी । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०—सम्मामि० उक० पदे०संका० जहण्णु० एयस० । अणु० जह०

जघन्य काल अन्तमुहूर्त है, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य काल एक समय है और सबका उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है ।

विशेषार्थ—उक्त जीवोंमें एक मात्र मिथ्यात्व गुणस्थान होनेसे मिथ्यात्वका प्रदेशसंक्रम सम्भव नहीं, इसलिए उसके कालका निर्देश नहीं किया । शेष प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त बन जानेसे उक्त प्रमाण कहा है । मात्र सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य काल नारकियोंके समान एक समय भी बन जाता है, इसलिए उसका अलगसे निर्देश किया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ९८. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वका भङ्ग तिर्यञ्चोंके समान है । सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटि पृथक्त्व अधिक तीन पल्य है ।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिककी जघन्य स्थिति अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटि-पृथक्त्व अधिक तीन पल्य होनेसे इनमें सम्यग्मिथ्यात्व आदि छब्बीस प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेश-संक्रमका जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य कहा है । मात्र सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य काल एक समय भी बन जाता है, इसलिए इसका अलगसे निर्देश किया है । शेष कथन सुगम है ।

§ ९९. देवोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग जानना चाहिए । सम्यक्त्वका भङ्ग नारकियोंके समान है । सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है । इसी प्रकार भवनवासी देवोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व

1. ता०-आ०प्रत्योः अंतोमु०, उक्क० इति पाठः ।

जहण्णाट्ठिदी समयूणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी। सोलसक०[1]-णवणोक० उक्क० पदे०संका० जहण्णुक्क० एयस०। अणु० जह० अंतोमु०, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी। एवं जाव०।

§ १००. जहण्णए पयदं। दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण मिच्छ० जह० पदे०संका० जहण्णुक्क० एयसमओ। अजह० जह० अंतोमु०, उक्क० छावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। सम्म० जह० पदे०संका० जहण्णुक्क० एयस०। अज० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। सम्मामि० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अजह० जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। सोलसक०-णवणोक० उक्कस्सभंगो।

और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समयकम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इस प्रकार अनाहारकमार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—देवोंमें सम्यक्त्वके जघन्य और उत्कृष्ट कालको ध्यानमें रखकर यहाँ पर मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल तेंतीस सागर कहा है। यह काल बारह कषाय और नौ नोकषायोंका भी बन जाता है, इसलिए उसे मिथ्यात्वके समान जाननेकी सूचना की है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके विषयमें भी जानना चाहिए। मात्र इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय नारकियोंके समान बन जानेसे यह एक समय कहा है। सम्यक्त्वका भङ्ग नारकियोंके समान है यह स्पष्ट ही है। भवनवासी आदि नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें अन्य सब काल इसी प्रकार बन जाता है। मात्र तेंतीस सागरके स्थानमें अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए। तथा भवनत्रिकमें मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट काल कहते समय वह कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहना चाहिए, क्योंकि इन देवोंमें सम्यग्दृष्टि जीव मरकर उत्पन्न नहीं होते, अतएव वहाँ भवके प्रथम समयसे सम्यग्दर्शन सम्भव नहीं होनेसे मिथ्यात्वका सम्यक्त्व प्राप्तिके पूर्व संक्रम नहीं बन सकता। अनुदिश आदिमें सब जीव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, अतएव उनमें सम्यक्त्वका प्रदेशसंक्रम सम्भव नहीं होनेसे उसका निर्देश नहीं किया। मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण कहनेका कारण उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके एक समयको कम करना है। शेष कथन सुगम है।

§ १००. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर है। सम्यक्त्वके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान है।

विशेषार्थ—सब प्रकृतियोंका अपने-अपने जघन्य स्वामित्वके समय जघन्य प्रदेशसंक्रम

---

१ ता०प्रतौ उक्कस्सट्ठिदी....सोलसक० इति पाठः।

§ १०१. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० जह० पदे०संका० जहण्णु एयस० । अजह० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । सम्म० ओघं । सम्मामि०-अणंताणु०४ जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस० । अजह० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । एवं सत्तणोकसाय० । णवरि अज० जह० अंतोमु० । बारसक०-भय-दुगुंछ० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस० । अजह० जह० दसवस्ससहस्साणि समयूणाणि, उक्क० तेत्तीसं सागरो० । एवं सत्तमाए । णवरि बारसक०-भय-दुगुंछ० अज० जह० बावीसं सागरो० । अणंताणु०४ अंतोमु० ।

होता है, इसलिए उसका सर्वत्र जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय कहा है। अब रहा अजघन्य प्रदेशसंक्रमके कालका विचार सो सम्यग्दर्शनका जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर होनेसे मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर कहा है। यहाँ पर साधिक छयासठ सागरसे उपशम सम्यक्त्व और मिथ्यात्वकी क्षपणा होनेके पूर्व तकका वेदकसम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल लेना चाहिए। उसमें भी जब तक मिथ्यात्वका संक्रमण होता रहता है उस समय तकका काल लेना चाहिए। सम्यक्त्वके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय जघन्य संक्रमके एक समय पश्चात् सम्यक्त्व प्राप्त कराकर ले आना चाहिए। तथा उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण इसके उत्कृष्ट उद्वेलना कालको ध्यानमें रखकर ले आना चाहिए। सम्यग्मिथ्यात्वके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर जिस प्रकार अनुत्कृष्टका घटित करके बतला आये हैं उस प्रकार घटित कर लेना चाहिए। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग उत्कृष्टके समान हैं यह स्पष्ट ही है।

§ १०१. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है। सम्यक्त्वका भङ्ग ओघके समान है। सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सात नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका एक समय कम दसहजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, भय और जुगुप्साके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल बाईस सागर है और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है।

विशेषार्थ—यहाँ व आगे सर्वत्र सब प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपने-अपने स्वामित्वकी अपेक्षा एक समय है यह स्पष्ट है, अतः उसका सर्वत्र उल्लेख न कर केवल अजघन्य प्रदेशसंक्रमके जघन्य व उत्कृष्ट कालका खुलासा करेंगे। नरकमें सम्यक्त्वका जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागरको ध्यानमें रखकर यहाँ पर मिथ्यात्वके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल कहा है। सम्यक्त्वके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जो काल ओघके समान बतलाया है वह यहाँ भी बन जाता है, अतः इस प्ररूपणाको यहाँ पर ओघके समान जाननेकी सूचना की है। सम्यग्मिथ्यात्वके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल

§ १०२. पढमाए जाव छट्टि त्ति मिच्छ० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अजह० जह० अंतोमु०, उक० सगट्ठिदी देसूणा। सम्म० ओघं। सम्मामि०—अणंताणु०४ जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अज० जह० एयस०, उक० सगट्ठिदी। एवं पंचणोक०। णवरि अज० जह० अंतोमु०। बारसक०-भय-दुगुंछ० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अज० जह० जहण्णट्ठिदी समयूणा, उक० उकस्सट्ठिदी। एवमित्थिवेद-णवुंसय०। णवरि अजह० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी भाणिदव्वा।

एक समय ऐसे जीवके जानना चाहिए जो इसके उद्वेलनासंक्रममें एक समय शेष रहने पर नरकमें उत्पन्न हुआ है। तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय ऐसे जीवके जानना चाहिए जो अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनाके बाद सासादनमें आकर तथा पुनः संयुक्त होकर एक समय एक आवलिकाल तक नरकमें रहकर अन्य गतिको प्राप्त हो गया है। सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट काल तेतीस सागर स्पष्ट ही है, क्योंकि यथा योग्य मिथ्यात्व और सम्यक्त्वमें रखकर सम्यग्मिथ्यात्वका और मिथ्यात्वमें रखकर अनन्तनुबन्धीचतुष्कका यह काल प्राप्त किया जा सकता है। सात नोकषायोंका उत्कृष्ट काल अनन्तानुबन्धीके समान ही घटित कर लेना चाहिए। मात्र जघन्य कालमें फरक है। बात यह है कि स्त्रीवेद और नपुसकवेदका भवस्थितिमें अन्तमुहूर्तकाल शेष रहने पर जघन्य प्रदेशसंक्रम होकर अन्तिम अन्तर्मुहूर्तमें अजघन्य प्रदेशसंक्रम होना सम्भव है तथा पाँच नोकषायोंका नरकमें उत्पन्न होनेके बाद जघन्य प्रदेशसंक्रम होनेके पूर्व प्रथम अन्तर्मुहूर्तमें अजघन्य प्रदेशसंक्रम होना सम्भव है, इसलिए इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तमुहूर्त कहा है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें होता है, इसलिए इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम दसहजार वर्ष और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है। सातवें नरकमें यह काल इसी प्रकार बन जाता है। मात्र वहाँ की जघन्य आयु एक समय अधिक बाईस सागर है, इसलिए उनमें बारह कषाय, भय और जुगुप्साके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल बाईस सागर कहा है। इनमेंसे एक समय इनके जघन्य प्रदेशसंक्रमका काल घटा दिया है। तथा जो सम्यग्दृष्टि अन्तमें मिथ्यादृष्टि होता है वह सातवें नरकमें अन्तमुहूर्त हुए बिना मरण नहीं करता, इसलिए यहाँ अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तमुहूर्त कहा है।

§ १०२. पहिली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेश-संक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। सम्यक्त्वका भङ्ग ओघके समान है। सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार पाँच नोकषायोंका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय कम अपनी-अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अपनी-अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहना चाहिए।

§ १०३. तिरिक्खेसु उक्कस्सभंगो। णवरि हस्स-रदि-अरदि-सोग-पुरिसवे० जह० पदे० जहण्णु० एयस०। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। पंचिंदियतिरिक्खतिय० उक्कस्सभंगो। णवरि हस्स-रदि-अरदि-सोग-पुरिसवे० अजह० जह० अंतोमु०।

§ १०४. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अज० जह० खुद्दाभवग्गहणं समयूणं, उक्क० अंतोमु०। सम्म०-सम्मामि० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अज० जह० एगस०, उक्क० अंतोमु०। सत्तणोक० जह० पदे०संका० जहण्णु० अंतोमु०।

विशेषार्थ—पूर्वमें सामान्य नारकियोंमें कालका स्पष्टीकरण कर आये हैं। उसी प्रकार यहाँ भी कर लेना चाहिये। मात्र यहाँ पर स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य व उत्कृष्ट काल जो जघन्य व उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है सो इसका कारण यह है कि इन नरकोंमें उक्त प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम जघन्य स्थितिवालोंमें नहीं होता, अतः यहाँ पर इन प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य व उत्कृष्ट काल जघन्य व उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण बन जाता है। शेष कथन सुगम है।

§ १०३. तिर्यञ्चोंमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि हास्य, रति, अरति, शोक और पुरुषवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें उत्कृष्टके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि हास्य, रति, अरति, शोक और पुरुषवेदके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें हास्य आदि पाँच नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम ऐसे जीवके होता है जो क्षपितकर्मांशिक जीव विपरीत जाकर तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होता है। उसमें भी उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्तबाद होता है। तथा इसके पहले इन प्रकृतियोंका अन्तर्मुहूर्त तक अजघन्य प्रदेशसंक्रम होता है, इसलिए यहाँ पर इन प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेश-संक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। शेष सब काल अपने अपने स्वामित्वको ध्यानमें रखकर उत्कृष्टके समान घटित कर लेना चाहिए।

§ १०४. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेश-संक्रामकका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सात नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेश संक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—उक्त जीवोंमें सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम प्रथम समयमें होता है, इसलिए यहाँ इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक-

§ १०५. मणुसतिए मिच्छ० सम्म० तिरिक्खभंगो। सम्मामि०–सोलसक०–णवणोक० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अजह० जह० एयस०, उक० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि।

§ १०६. देवेसु मिच्छ० पंचणोक० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयसमओ। अजह० जह० अंतोमु०, उक० तेत्तीसं सागरो०। एवं सम्मामि०–अणंताणु०४। णवरि अज० जह० एयस०। सम्म० ओघं। बारसक०–चदुणोक० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अजह० जह० दसवस्ससहस्साणि, उक० तेत्तीसं सागरोवमं।

भवग्रहणप्रमाण और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलनाकी अपेक्षा एक समय तक संक्रम हो यह भी संभव है और कायस्थितिप्रमाण काल तक संक्रम होता रहे यह भी सम्भव है, इसलिए यहाँ इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। सात नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम इन जीवोंमें अन्तर्मुहूर्तके बाद प्राप्त होता है। इसके पहिले अजघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। तथा जिसके जघन्य प्रदेशसंक्रम नहीं होता उसके कायस्थितिप्रमाण काल तक इनका अजघन्य प्रदेशसंक्रम होता रहता है। यतः ये दोनों काल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण हैं, अतः यहाँ इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ १०५. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वका भङ्ग तिर्यञ्चोंके समान है। सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रमका काल तिर्यञ्चोंके समान बन जानेसे उनके समान कहा है। सम्यग्मिथ्यात्वके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय उद्वेलनाकी अपेक्षा और सोलह कषाय, भय व जुगुप्साके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय उपशम श्रेणिसे उतरते समय एक समय इनका संक्रम कराकर मरणकी अपेक्षा बन जाता है, इसलिए यहाँ पर इन प्रकृतियोंका यह काल एक समय कहा है। तथा उत्कृष्ट काल कायस्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट है। यहाँ इतना विशेष जानना चाहिए कि सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट काल इसकी सत्तावाले जीवको यथायोग्य सम्यक्त्व और मिथ्यात्वमें रख कर यह काल ले आना चाहिए।

§ १०६. देवोंमें मिथ्यात्व और पाँच नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय है। सम्यक्त्वका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय और चार नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल दस हजार वर्ष है और उत्कृष्ट काल तेतीस सागरप्रमाण है।

विशेषार्थ—देवोंमें सम्यक्त्वका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर है, इसलिए तो इनमें मिथ्यात्वके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट

§ १०७. भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-पंचणोक० जह० जहण्णु० एयस०। अज० जह० अंतोमु०, + उक्क० सगट्ठिदी। एवं सम्मामि०-अणंताणु०४। णवरि अजह० जह० एयस०। सम्म० ओघं। बारसक०-भय-दुगुंछ० जह० प०सं० जहण्णु० एयस०। अजह० जह० जहण्णट्ठिदी समयूणा, उक्क० उक्कस्सट्ठिदी। इत्थिवे०-णवुंस० जह० प०संका० जहण्णु० एयस०। अजह० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी।

§ १०८. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस०। अजह० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी। एवमित्थि०-णवुंस०। एवं बारसक०-

---

काल तेतीस सागर कहा है। तथा तत्प्रायोग्य देवके देव होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद पाँच नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम होता है, इसके पहले अन्तर्मुहूर्त तक अजघन्य प्रदेशसंक्रम होता है। तथा अन्य देवोंकी पूरी पर्याय तक इनका अजघन्य प्रदेशसंक्रम सम्भव है, इसलिए यहाँ पर उक्त प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है। सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका यह काल इसीप्रकार बन जाता है। मात्र जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है सो इसका खुलासा सामान्य नारकियोंके समान कर लेना चाहिए। सम्यक्त्वका भङ्ग ओघके समान है यह स्पष्ट ही है। बारह कषाय और भय व जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम क्षपितकर्मांशिक नारकीके प्रथम समयमें होता है। स्त्री व नपुंसक वेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम तेतीस सागरकी आयुवालोंके अन्तिम समयमें होता है, इसलिए बारह कषायादि उक्त प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट काल तेतीस सागर कहा है।

§ १०७. भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व और पाँच नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी-अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है। सम्यक्त्वका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है।

विशेषार्थ—भवनवासी आदि देवोंमें बारह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें होता है, इसलिए यहाँ इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है जो अपने स्वामित्वको जानकर घटित कर लेना चाहिए।

§ १०८. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका

भय-दुगुंछ०-पुरिसवे० । णवरि अजह० जह० जहण्णट्ठिदी समयूणा । अणंताणु०४ हस्स-रदि-अरदि-सोग० जह० पदे०संका० जहण्णु० एयस० । अजह० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० सगट्ठिदी । णवरि सव्वट्ठे इत्थिवे०-णवुंसवे०-मिच्छ०-सम्मामि० अजह० सगट्ठिदी समयूणा । एवं जाव० ।

एवं कालाणुगमो समत्तो ।

❀ अंतरं ।

§ १०९. सुगममेदमहियारसंभालणवक्कं ।

❀ **सव्वेसिं कम्माणमुक्कस्सपदेससंकामयस्स णत्थि अंतरं ।**

जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार बारह कषाय, भय, जुगुप्सा और पुरुषवेदका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क, हास्य, रति, अरति और शोकके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी स्थितिप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य काल एक समय कम अपनी स्थितिप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा जानना चाहिए।

विशेषार्थ—अनुदिश आदिमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम दीर्घ आयुवालोंमें वहाँसे निकलनेके अन्तिम समयमें होता है, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें ऐसे जीवोंके भी होता है जो जघन्य आयु लेकर वहाँ पर उत्पन्न हुए हैं, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम जघन्य स्थितिप्रमाण विशेष रूपसे कहा है। उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। इन देवोंमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अजघन्य प्रदेशसंक्रम अन्तर्मुहूर्त तक होकर उनकी विसंयोजना होना सम्भव है। तथा वेदक सम्यग्दृष्टिके जीवन भर इनका अजघन्य प्रदेशसंक्रम होता रहता है, इसलिए तो इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। अब रहीं चार नोकषाय प्रकृतियाँ सो इनका जघन्य प्रदेशसंक्रम वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद होना सम्भव है, इसलिए इनके भी अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। सर्वार्थसिद्धिमें यह काल इसी प्रकार घटित हो जाता है। मात्र वहाँ जघन्य और उत्कृष्ट स्थितिका भेद नहीं होनेसे मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय कम स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल अपनी स्थितिप्रमाण प्राप्त होनेसे से अलगसे कहा है। शेष कथन स्पष्ट है।

इस प्रकार कालानुगम समाप्त हुआ।

* **अब अन्तरका कथन करते हैं।**

§ १०९. अधिकार की सम्हाल करनेवाला यह सूत्र सुगम है।

* **सब कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है।**

§ ११०. होउ णाम खवगसंबंधेण लद्धुक्कस्सभावाणं मिच्छत्तादिकम्माणमंतराभावो, ण पुण सम्मत्ताणंताणुबंधीणमंतराभावो जुत्तो, तेसिमखवयविसयत्तेण लद्धुक्कस्सभावाणमंतरसंभवे विप्पडिसेहाभावादो ? ण एस दोसो, गुणिदकम्मंसियलक्खणेणेयवारं परिणदस्स पुणो जहण्णदो वि अद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तकालब्भंतरे तब्भावपरिणामो णत्थि त्ति एवंविहाहिप्पाएणेदस्स सुत्तस्स पयट्टत्तादो । एसो ताव एको उवएसो चुण्णिसुत्तयारेण सिस्साणं परूविदो । अण्णेणोवएसेण पुण सम्मत्ताणंताणुबंधीणं अंतरसंभवो अत्थि त्ति तप्पमाणावहारणट्ठं उत्तरसुत्तं भणइ—

*** अधवा सम्मत्ताणंताणुबंधीणं उक्कस्ससंकामयस्स अंतरं केवचिरं ?**

§ १११. अण्णेणोवएसेण सम्मत्ताणंताणुबंधीणमुक्कस्सपदेससंकामयंतरं संभवइ । पुण केवचिरमंतरं होइ त्ति पुच्छा कया होइ ।

*** जहण्णेण असंखेज्जा लोगा ।**

§ ११२. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण णेरइयचरिमसमयादो हेट्ठा अंतोमुहुत्तमोसरिय पढमसम्मत्तमुप्पाइय जहावुत्तपदेसे सम्मत्ताणंताणुबंधीणमुक्कस्सपदेससंकमस्सादिं

---

§ ११०. शंका—मिथ्यात्व आदि कर्मोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम क्षपणा करनेवाले जीवके होनेके कारण इनके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तर न होओ यह ठीक है। किन्तु सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके अन्तरका अभाव युक्त नहीं है, क्योंकि इनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम क्षपकको विषय नहीं करता, इसलिए उनके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तर सम्भव होनेसे उसका निषेध नहीं बनता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि गुणितकर्मांशिक लक्षणसे एक बार परिणत हुए जीवके पुनः जघन्य रूपसे भी उसके योग्य परिणाम अर्धपुद्गल परिवर्तनप्रमाण कालके भीतर नहीं होता इस प्रकार ऐसे अभिप्रायसे यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है।

यह एक उपदेश है जो सूत्रकारने शिष्योंके लिए कहा है। परन्तु अन्य उपदेशके अनुसार सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तर सम्भव है, इसलिए उसके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए आगे का सूत्र कहते हैं—

*** अथवा सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?**

§ १११. अन्यके उपदेशानुसार सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तर सम्भव है। परन्तु वह कितना है यह पृच्छा इस सूत्र द्वारा की गई है।

*** जघन्य अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण है ।**

§ ११२. गुणितकर्मांशिक लक्षणसे आकर नारकीके अन्तिम समयसे पीछे अन्तर्मुहूर्त रहकर अर्थात् नारकीके अन्तिम समयके प्राप्त होनेके अन्तर्मुहूर्त पहिले प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्नकर यथोक्त स्थानमें सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम पूर्वक उसका अन्तर करके अनुत्कृष्ट

कादूण अंतरिय अणुक्कस्सपरिणामेसु असंखे०लोगपमाणेसु तेत्तियमेत्तकालमच्छिऊण पुणो सव्वलहुं गुणिदकिरियासंबंधमुवसामिय पुव्वुत्तेणेव कमेण पडिवण्णतब्भावम्मि तदुवलंभादो।

※ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ११३. पुव्वुत्तविहाणेणेवादिं करिय अंतरिदस्स देसूणद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तकालं परिभमिय तदवसाणे गुणिदकम्मंसिओ होदूण सम्मत्तमुप्पाइय पुव्वं व पडिवण्णतब्भावम्मि तदुवलद्धीदो।

§ ११४. एवमोघेणुक्कस्सपदेससंकामयंतरसंभवासंभवणिण्णयं कादूण संपहि एदेण सूचिददेसपरूवणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो। तं जहा—अंतरं दुविहं जह० उक्क०। उक्क० पयदं। दुविहो णि०—ओघे० आदेसे०। ओघेण मिच्छ०-सम्मामि० उक्क० पदे० संका० णत्थि अंतरं। अणु० जह० अंतोमुहुत्तं, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। णवरि सम्मामि० अणु० जह० एयस०। सम्म० मिच्छत्तभंगो। अणंताणु०४ उक्क० णत्थि अंतरं। अणु० जह० अंतोमु०, उक्क० वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि। बारसक०-णवणोक० उक्क० णत्थि अंतरं। अणु० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।[1]

प्रदेशसंक्रमके योग्य असंख्यात लोकप्रमाण परिणामोंमें उतने ही काल तक रहकर पुनः अतिशीघ्र गुणितक्रियाविधिको उपशमा कर पूर्वोक्त क्रमसे ही उक्त कर्मोंके उत्कृष्ट भावके प्राप्त होने पर उक्त अन्तर प्राप्त होता है।

※ उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है।

§ ११३. पूर्वोक्त विधिसे उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके अन्तरका प्रारम्भ करके तथा कुछ कम अर्ध पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक परिभ्रमण करके उसके अन्तमें गुणित कर्मांशिक होकर तथा सम्यक्त्वको उत्पन्नकर पहिलेके समान उत्कृष्ट भावके प्राप्त होने पर उक्त अन्तरकाल प्राप्त होता है।

§ ११४. इस प्रकार ओघसे उत्कृष्ट प्रदेशसक्रामकके अन्तरसम्बन्धी सम्भवासम्भव भावका निर्णय करके अब इससे सूचित होनेवाले आदेशका कथन करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं। यथा—अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तर-काल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध-पुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है। सम्यक्त्वका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

1 ता० प्रतौ 'अणु० जह० अंतोमु० एयस०' इति पाठः।

§ ११५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-सम्मामि० उक्क० पदे०संक० णत्थि अंतरं। अणु० जह० एयस०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवं सम्म०-अणंताणु०४। णवरि अणु० जह० अंतोमुहुत्तं। बारसक०-णवणोक० उक्क० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जहण्णुक्क० एयसमओ। एवं सव्वणेरइय०। णवरि सगट्ठिदी देसूणा।

विशेषार्थ—सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम क्षपणाके समय होता है इससे यहाँ पर उनके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके अन्तरकालका निषेध किया है। अब रहा अनुत्कृष्टके अन्तरकालका विचार सो सादि मिथ्यादृष्टिका मिथ्यात्वमें रहनेका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है, इसलिए इसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है। सम्यग्मिथ्यात्व गुणस्थानमें भी दर्शनमोहनीयका संक्रमण नहीं होता, इसलिए इस अपेक्षासे भी मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त ले आना चाहिए। कोई सादि मिथ्यादृष्टि पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वकी उद्वेलना करके उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक उसकी सत्तारहित रहता है। तथा कोई सादि मिथ्या दृष्टि प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वका सर्वसंक्रम द्वारा अभाव करके और दूसरे समयमें उपशम सम्यग्दृष्टि होकर तीसरे समयमें पुनः उसका संक्रम करने लगता है, इसलिए यहाँ पर सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है। सम्यक्त्वका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है यह स्पष्ट ही है। मात्र यहाँ पर सम्यक्त्वकी सत्तावाले सादि मिथ्यादृष्टिको अन्तर्मुहूर्त तक सम्यक्त्वमें रख कर मिथ्यात्वमें ले जाकर जघन्य अन्तर घटित करना चाहिए। तथा उत्कृष्ट अन्तर उद्वेलनाके बाद उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण काल तक मिथ्यात्वमें रखकर तदनन्तर उपशमसम्यक्त्व प्राप्त कराके पुनः मिथ्यात्वमें ले जाकर लाना चाहिए। विसंयोजनापूर्वक सम्यक्त्वका जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागर प्रमाण है यह देखकर अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर प्रमाण कहा है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंका उपशम श्रेणीमें मरणकी अपेक्षा एक समय और चढ़कर उतरनेकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त संक्रमका अन्तर बन जाता है, इसलिए यहाँ पर इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ ११५. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

विशेषार्थ—सामान्य नारकियों और प्रत्येक पृथिवीके नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल न होनेका कारण यह है कि इनमें दो बार इनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सम्भव नहीं। इसी प्रकार आगेकी मार्गणाओंमें भी जानना चाहिए। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके

§ ११६. तिरिक्खेसु मिच्छ०—सम्मामि०—सम्म० उक्क० णत्थि अंतरं। अणु० जह० एगस०, सम्म० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अणंताणु०४ उक्क० णत्थि अंतरं। अणु० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। बारसक०—णवणोक० उक्क० णत्थि अंतर। अणुक्क० जहण्णु० एयसमओ।

अन्तरकालका खुलासा इस प्रकार है—यहाँ पर मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम एक समयके लिए होता है इसलिए तो इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय कहा है। तथा प्रारम्भमें और अन्तमें सम्यक्त्वमें रखकर मध्यमें कुछ कम तेतीस सागरकाल तक मिथ्यात्वमें रखनेसे मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। तथा प्रारम्भमें और अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रमण करावे और मध्यमें उद्वेलना द्वारा उसका अभाव हो जानेसे कुछ कम तेतीस सागरकाल तक उसकी सत्ताके बिना रखे। इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। सम्यक्त्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र यह अन्तर मध्यमें कुछ कम तेतीस सागरकाल तक सम्यक्त्वके साथ रखकर प्राप्त करना चाहिए। सम्यक्त्वके अनुत्कृष्ट प्रदेश-संक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहनेका कारण यह है कि इसका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम ऐसे जीवके होता है जो सम्यक्त्वसे च्युत होकर मिथ्यात्वके प्रथम समयमें स्थित है। यहाँ जो सम्यक्त्वका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है वही इसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तरकाल जानना चाहिए। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका काल एक समय है वही यहाँ इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल होता है, इसलिए यहाँ उक्त प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेश संक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। यह सामान्यसे नारकियोंमें अन्तरकालका विचार है। प्रत्येक पृथिवीमें यह अन्तरकाल इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र जहाँ पर कुछ कम तेतीस सागर कहा है वहाँ पर वह कुछ कम अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहना चाहिए।

§ ११६. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, सम्यक्त्वका अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेश-संक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है।

विशेषार्थ—यहाँ पर अन्य सब अन्तरकाल नारकियोंके समान घटित कर लेना चाहिए। केवल मिथ्यात्व आदि तीन प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गल-परिवर्तनप्रमाण कहनेका कारण यह है कि तिर्यञ्च पर्यायमें कोई भी जीव इतने काल तक रहकर प्रारम्भमें और अन्तमें इनका संक्रम करे और मध्यमें न करे यह सम्भव है, इसलिए तो इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है, तथा अनन्तानुबन्धीचतुष्कका ऐसा तिर्यञ्च ही असंक्रामक हो सकता है जिसने इनकी विसंयोजना की है और यह काल कुछ कम तीन पल्य ही हो सकता है, इसलिए तिर्यञ्चोंमें इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ ११७. पंचि०तिरि०३ मिच्छ०—सम्मामि०—सम्म० उक्क० पदे० संका० णत्थि अंतरं। अणु० जह० एयस०, सम्म० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। सोलसक०—णवणोक० तिरिक्खभंगो।

§ ११८. पंचिंदियतिरि०अपज्ज०—मणुसअपज्ज० पणुवीसपय० उक्क० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जहण्णु० एयस०। सम्म०—सम्मामि० उक्क० अणुक्क० पदे०संका० णत्थि अंतरं।

§ ११९. मणुसतिए मिच्छ०—सम्मामि०—सम्म० उक्क० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जह० अंतोमु०, सम्मामि० एयस०, उक्क० तिण्णिपलिदो० पुव्वकोडिपुध०। अणंताणु०४ तिरिक्खभंगो। बारसक०—णवणोक० उक्क० पदे० संका० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जहण्णु० अंतोमु०। णवरि पुरिसवे० तिण्णिसंज० अणु० जह० एयस०।

---

§ ११७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, सम्यक्त्वका अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है।

विशेषार्थ—पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिककी उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य होनेसे यहाँ पर मिथ्यात्व आदि तीन प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ११८. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पच्चीस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है।

विशेषार्थ—उत्कृष्ट स्वामित्वको देखनेसे विदित होता है कि इन जीवोंमें पच्चीस प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें न होकर मध्यमें होता है। साथ ही वह पर्याप्त पर्यायसे आकर होता है, इसलिए इनमें पच्चीस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके अन्तरका तो निषेध किया है और अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है। तथा शेष तीन प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें होता है, इसलिए इनके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट दोनों प्रकारके प्रदेशसंक्रमका अन्तर सम्भव न होनेसे दोनोंके अन्तरका निषेध किया है।

§ ११९. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, सम्यग्मिथ्यात्वका एक समय है और सबका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग तिर्यञ्चोंके समान है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेश संक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और तीन संज्वलनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और

उक्क० अंतोमु० । णवरि मणुसिणी पुरिसवे० अणु० जहण्णु० अंतोमु० ।

§ १२०. देवगदीए देवेसु मिच्छ०–सम्मामि०–सम्म० उक्क० णत्थि अंतरं । अणु० जह० एयस०, सम्म० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि । अणंताणु०४ सम्मत्तभंगो । बारसक० णवणोक० उक्क० णत्थि अंतरं । अणुक्क० जहण्णु० एयसमओ । एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । णवरि सगट्ठिदी देसूणा ।

उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है । इतनी और विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है ।

विशेषार्थ—मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व आदि सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम गुणितकर्मांशिक जीवके होता है और मनुष्यत्रिक पर्यायके चालू रहने जीवका दो बार गुणितकर्मांशिक होना सम्भव नहीं है. इसलिए इनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके अन्तरकालका निषेध किया है . अब रहा अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तर काल सो सम्यक्त्व और मिथ्यात्वका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त होनेसे इनमें मिथ्यात्व और सम्यक्त्व कर्मके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है । कारण कि सम्यक्त्व गुण-स्थानमें सम्यक्त्वका और मिथ्यात्व गुणस्थानमें मिथ्यात्वका संक्रम नहीं होता । परन्तु दोनों गुणस्थानोंमें सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रम सम्भव है, इसलिए इसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय कहा है। कारणका विचार ओघ प्ररूपणाके समय कर आये हैं । इन तीनों प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है यह स्पष्ट ही है जो अपनी अपनी कायस्थितिके प्रारम्भमें और अन्तमें अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके कराने से प्राप्त होता है ऐसा यहाँ समझना चाहिये । अनन्तानुबन्धी चतुष्कके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तर तिर्यञ्चोंके समान यहाँ घटित हो जानेसे उसे अलगसे नहीं कहा है । सो तिर्यञ्चोंमें इन प्रकृतियोंके अन्तरको जान कर यहाँ पर भी उसे साध लेना चाहिए। यहाँ पर बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त उपशमश्रेणिकी अपेक्षासे कहा है । कारण कि मात्र उपशमश्रेणिमें अन्तर्मुहूर्त काल तक इन प्रकृतियोंका संक्रम नहीं होता । किन्तु इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और तीन संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम क्षपकश्रेणिमें एक समयके लिए होता है । किन्तु इसके पहले और बादमें उनका अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता रहता है, इसलिए इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर उपशमश्रेणिकी अपेक्षा अन्तर्मुहूर्त कहा है । मात्र मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय नहीं बनता, क्योंकि परोदयसे क्षपकश्रेणि पर चढ़े हुए जीवके पुरुषवेदकी क्षपणाके अन्तिम समय में उसका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम प्राप्त होता है, इसलिए मनुष्यिनियोंमें इसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है ।

§ १२०. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, सम्यक्त्वका अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग सम्यक्त्वके समान है । बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तर नहीं है । अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है । इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण कहना चाहिए ।

§ १२१. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-अणंताणु०४ उक्क० अणुक्क० णत्थि अंतरं। बारसक०-णवणोक० उक्क० णत्थि अंतरं। अणुक्क० जहण्णु० एयस०। एवं जाव०।

❀ एत्तो जहण्णयं।

§ १२२. एत्तो उक्कस्संतर विहासणादो उवरि जहण्णयमंतरमिदाणिं विहासइस्सामो त्ति अहियारसंभालणवक्कमेदं।

❀ कोहसंजलण-माणसंजलण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णपदेस-संकामयस्संतरं केवचिरं कालादो होदि?

§ १२३. सुगमं।

विशेषार्थ—अपने अपने स्वामित्वको देखते हुए नारकियोंके समान देवोंमें भी सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल नहीं बनता यह स्पष्ट ही है। तथा इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका जो अलग अलग जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल कहा है सो उसे जिस प्रकार हम नारकियोंमें घटित कर बतला आये हैं उसी प्रकार यहाँ पर भी घटित कर लेना चाहिए। मात्र यहाँ उत्कृष्ट अन्तर अपनी अपनी कुछ कम उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण ही कहना चाहिए। अन्य कोई विशेषता न होनेसे इसका अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है।

§ १२१. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—उक्त देवोंमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें प्राप्त होता है। तथा अनन्तानुबन्धीका वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद विसंयोजनाके अन्तिम समयमें प्राप्त होता है, इसलिए इनके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तर सम्भव नहीं होनेसे उसका निषेध किया है। तथा बारह कषाय और नौ नोकषायोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम भी वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद अपने स्वामित्वके अनुसार होता है, इसलिए वहाँ इनके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका अन्तर सम्भव न होनेसे उसका तो निषेध किया है और अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमका एक समय अन्तर प्राप्त होनेसे जघन्य और उत्कृष्ट दोनों प्रकारका वह एक समय कहा है।

इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तरकाल समाप्त हुआ।

*** इससे आगे जघन्य अन्तरकालका व्याख्यान करते हैं।**

§ १२२. इससे अर्थात् उत्कृष्ट अन्तरकालके व्याख्यानके बाद अब जघन्य अन्तरकालका व्याख्यान करते हैं इस प्रकार यह सूत्रवचन अधिकारकी सम्हाल करता है।

*** क्रोधसंज्वलन, मानसंज्वलन, मायासंज्वलन और पुरुषवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तरकाल कितना है।**

§ १२३. यह सूत्र सुगम है।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ १२४. तं जहा—चिराणसंतकम्ममेदेसिमुवसामिय घोलमाणजहण्णजोगेण बद्ध-चरिमसमयणवकबंधसंकामयचरिमसमयम्मि जहण्णसंकमस्सादिं कादूण विदियादिसमएसु अंतरिय उवरिं चढिय ओइण्णो संतो पुणो वि सव्वलहुमंतोमुहुत्तेण विसुज्झिदूण सेढिसमा-रोहणं करिय पुव्वुत्तपदेसे तेणेव विहिणा जहण्णपदेससंकामओ जादो, लद्धमंतरं ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ १२५. तं कथं ? पुव्वुत्तकमेणेवादिं करिय अंतरिदो संतो देसूणद्धपोग्गलपरियट्ट-मेत्तकालं परियट्टिदूण पुणो अंतोमुहुत्तसेसे संसारे उवसमसेढिमारुहिय जहण्णपदेससंकामओ जादो, लद्धमुक्कस्संतरं ।

❀ सेसाणं कम्माणं जाणिऊण णेदव्वं ।

§ १२६. सेसाणं कम्माणमंतरमत्थि णत्थि त्ति णादूण णेदव्वमिदि सोदाराणमत्थ समप्पणं कयमेदेण सुत्तेण ।

§ १२७. संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदत्थस्स परूवणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो । तं जहा—जह० पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० जह० पदे०संका० णत्थि अंतरं । अजह० जह० एयस०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ १२४. यथा—जो इन कर्मोंके प्राचीन सत्कर्मको उपशमा कर घोलमान जघन्य योगके द्वारा अन्तिम समयमें बाँधे गये नवकबन्धके संक्रमके अन्तिम समयमें जघन्य संक्रमका प्रारम्भ करके और द्वितीयादि समयोंमें उसका अन्तर करके ऊपर चढ़कर उपशमश्रेणिसे उतर आया है। तथा फिर भी सबसे लघु अन्तर्मुहूर्तके द्वारा विशुद्ध होकर और उपशमश्रेणि पर आरोहण करके पूर्वोक्त स्थानमें जाकर उसी विधिसे उक्त कर्मोंके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक हुआ है इस प्रकार उक्त कर्मोंको जघन्य प्रदेश संक्रमका जघन्य अन्तरकाल प्राप्त हो गया।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है ।

§ १२५. वह कैसे ? पूर्वोक्त विधिसे ही जघन्य संक्रमका प्रारम्भ करके और उसका अन्तर करके कुछ कम अर्धपुद्गलपरिवर्तन काल तक परिभ्रमण करके पुनः संसारके अन्तर्मुहूर्त प्रमाण शेष रहने पर उपशमश्रेणि पर आरोहण करके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक हो गया, इस प्रकार उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त हुआ।

* शेष कर्मोंका अन्तरकाल जानकर ले आना चाहिए ।

§ १२६. शेष कर्मोंका अन्तरकाल है या नहीं है ऐसा जानकर उसे ले आना चाहिए। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा श्रोताओंको अर्थका ज्ञान कराया गया है।

§ १२७. अब इस सूत्र द्वारा सूचित हुए अर्थका कथन करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं। यथा—जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेश-

अणंताणु०४ जह० णत्थि अंतरं। अजह० जह० एयस०, उक० वेछावट्ठिसा० सादिरेयाणि। बारसक०-णवणोक० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० एयस०, उक० अंतोमु०। णवरि तिण्णिसंजल०-पुरिसवे० जह० पदे०संका० जह० अंतोमु०, उक० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर साधिक दो छयासठ सागर प्रमाण है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि तीन संज्वलन और पुरुषवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है।

विशेषार्थ—ओघसे मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम क्षपित कर्मांशिक जीवके क्षपणाका प्रारम्भ कर अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम क्षपितकर्मांशिक जीवके अन्तमें उद्वलना करते हुए द्विचरमकाण्डकके पतनके अन्तिम समयमें होता है। यतः यह विधि दूसरी बार सम्भव नहीं है, इसलिए इन कर्मोंके जघन्य प्रदेशसंक्रमके अन्तरकालका निषेध किया है। इन कर्मोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम एक समयके लिए होता है इसलिए तो इनके अजघन्यप्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय कहा है। तथा इनका अजघन्य प्रदेशसंक्रम अर्धपुद्गलपरिवर्तनके प्रारम्भमें और अन्तमें हो, मध्यमें न हो यह सम्भव है, इसलिए इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसंक्रम क्षपित कर्मांशिक जीवके उनकी विसंयोजना करते समय अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें होता है, इसलिए इसके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा इनके जघन्य प्रदेशसंक्रमका काल एक समय होनेसे इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय कहा है और अधिकसे अधिक साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण काल तक इनका अभाव रहता है, इसलिए इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण कहा है। बारह कषाय, लोभसंज्वलन, छह नोकषाय, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम क्षपितकर्मांशिक जीवके क्षपणाके समय ही यथास्थान प्राप्त होता है, इसलिए इनके जघन्य प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल नहीं बननेसे उसका निषेध किया है। तथा इनके जघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य काल एक समय है, इसलिए इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय कहा है और उपशमश्रेणिमें इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका अन्तर्मुहूर्त काल प्राप्त होनेसे उत्कृष्टरूपसे वह तत्प्रमाण कहा है। अब रहे क्रोधसंज्वलन आदि तीन संज्वलन और पुरुषवेद सो इनके जघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गलपरिवर्तनप्रमाण पहले मूलमें ही घटित करके बतला आये हैं, इसलिए वहाँसे जान लेना चाहिए। तथा इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त बारह कषाय आदिके समान ही प्राप्त होता है, इसलिए इस अन्तरकालका कथन उनके साथ किया है।

§ १२८. आदेसे० णेरइय० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ जह० णत्थि अंतरं। अजह० जह० एयस०, मिच्छ० अंतोमु०, उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि। बारसक०-भय-दुगुंछ० जह० अजह० णत्थि अंतरं। सत्तणोक० जह० पदे०-संका० णत्थि अंतरं। अजह० जहण्णु० एयसमओ। एवं सत्तमाए। पढमाए जाव छट्ठि त्ति एवं चेव। णवरि सगट्ठिदी देसूणा। इत्थिवेद०-णवुंस० जह० अजह० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अणंताणु०४ अजह० जह० अंतोमु०।

§ १२८. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, मिथ्यात्वका अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागरप्रमाण है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साके जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। सात नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए। पहली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी-अपनी स्थिति कहनी चाहिए। तथा इनमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—सामान्य नारकियोंमें और प्रत्येक पृथिवीके नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल न होनेका कारण यह है कि इनमें इनका दोबार जघन्य प्रदेशसंक्रम सम्भव नहीं है। इसी प्रकार गतिमार्गणाके सब अवान्तर भेदोंमें भी जानना चाहिए। अजघन्यप्रदेशसंक्रमके अन्तरकालका खुलासा इस प्रकार है—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम एक समयके लिए होता है और आगे-पीछे अजघन्यप्रदेशसंक्रम होता रहता है, इसलिए तो इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय कहा है। तथा मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम अपने स्वामित्वके अनुसार सम्यक्त्वसे च्युत होनेके अन्तिम समयमें होता है और उसके बाद मिथ्यात्वका असंक्रामक हो जाता है, इसलिए मिथ्यात्व गुणस्थानके जघन्य काल अन्तर्मुहूर्तकी अपेक्षा इसके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर काल कुछ कम तेतीस सागर कहा है सो इसे इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके उत्कृष्ट अन्तरकालके समान घटित कर लेना चाहिए। उससे इसमें कोई विशेषता न होनेके कारण इसका अलगसे स्पष्टीकरण नहीं किया है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें प्राप्त होता है, इसलिए इनके दोनों प्रकारके प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल नहीं बननेसे उसका निषेध किया है। सात नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम एक समयके लिए होता है, इसलिए इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। यह सामान्य नारकियों और सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें अन्तरकालका विचार है। अन्य पृथिवियोंमें इसे इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र उनमें जो विशेषता है उसका अलगसे उल्लेख किया है। बात यह है कि एक तो प्रत्येक पृथिवीके नारकियोंकी भवस्थिति अलग अलग है इसलिए जहाँ भी अजघन्य प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तेतीस सागर कहा है वहाँ वह अपनी अपनी भवस्थिति

§ १२६. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० जह० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अजह० जह० एयस०, मिच्छ० अंतोमु०, उक्क० उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अणंताणु०४ जह० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि। बारसक०-चदुणोक० जह० अजह० पदे०संका० णत्थि अंतरं। हस्स-रदि-अरदि-सोग-पुरिसवे० ज० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अज० जहण्णु० एयस०। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिय३। णवरि मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० जह० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अज० जह० एयस०, मिच्छ० अंतोमु०, उक्क० तिण्णिपलिदो० पुव्वकोडिपुध०।

प्रमाण जानना चाहिए। दूसरे इनमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवके अन्तिम समयमें प्राप्त होनेसे इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल नहीं बनता, इसलिए उसका निषेध किया है। तीसरे इनमें अनन्तानुबन्धी चतुष्कका जघन्य प्रदेशसंक्रम भी भवके अन्तिम समयमें प्राप्त होता है, अतः विसंयोजित अनन्तानुबन्धीके जघन्यकाल अन्तर्मुहूर्तको ध्यानमें रखकर यहाँ पर इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है।

§ १२६. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, मिथ्यात्वका अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य प्रमाण है। बारह कषाय और चार नोकषायोंके जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। हास्य, रति, अरति, शोक और पुरुषवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्व के जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, मिथ्यात्वका अन्तर्मुहूर्त है और सबका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य प्रमाण है।

विशेषार्थ—यहाँ पर अन्तरकालका सब स्पष्टीकरण प्रथमादि छह पृथिवियोंके समान कर लेना चाहिए। जो थोड़ी-बहुत विशेषता है उसका खुलासा इस प्रकार है। तिर्यञ्चोंमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवके अन्तिम समयमें प्राप्त होता है, इसलिए यहां पर इन प्रकृतियोंको भी बारह कषाय, भय और जुगुप्सामें सम्मिलित कर उनके दोनों प्रकारके प्रदेशसंक्रमका निषेध किया है। एक विशेषता तो यह है। दूसरी विशेषता है तिर्यञ्चोंकी कायस्थितिकी अपेक्षासे। बात यह है कि तिर्यञ्चोंकी कायस्थिति बहुत अधिक है, इसलिए उनमें मिथ्यात्व आदि तीन प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण बन जानेसे वह उक्त कालप्रमाण कहा है। तीसरी विशेषता अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजनाकी अपेक्षासे। बात यह है कि तिर्यञ्चोंमें वेदकसम्यक्त्वकी अपेक्षा अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजनाका काल कुछ कम तीन पल्यसे अधिक नहीं है, इसलिए इनमें इन प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेश-

१३०. पंचि०तिरि०अपज०-मणुसअपज०-सोलसक०-भय-दुगुंछा० जह० अजह० णत्थि अंतरं। सम्म०-सम्मामि०२-सत्तणोक० जह० णत्थि अंतरं। अजह० जहण्णु० एयस०।

१३१. मणुसतिए दंसणतियस्स जह० पदेस०संका० णत्थि अंतरं। अजह० जह० एयस०, उक्क० तिण्णिपलिदो० पुव्वकोडिपुध०। अणंताणु०चउ० जह० पदे०-संका० णत्थि अंतरं। अज० जह० एयस०, उक्क० तिण्णिपलिदो० देसू०। णवकसाय-अट्ठणोक ाय-जह०पदे०संका० णत्थि अंतरं। अजह० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०। तिण्णिसंजल०-पुरिसवेद० जह० पदे०संका० जह० अंतोमु०, उक्क० पुव्वकोडिपुध० अजह० जहण्णुक० अंतोमु०। णवरि मणुसिणी०-पुरिसवे० जह० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अजह० जह० एयस०, उक्क० अंतोमु०।

संक्रमका उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य कहा है। यह सामान्य तिर्यञ्चोंकी अपेक्षा विशेषता क स्पष्टीकरण है। पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकमें अन्य सब अन्तरकाल इसी प्रकार बन जाता है। मात्र इनकी कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य होनेसे इनमें मिथ्यात्व आदि तीन प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उक्त काल प्रमाण प्राप्त होनेसे वह उतना कहा है।

§ १३०. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल नहीं है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सात नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय है।

विशेषार्थ—इन जीवोंमें सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें प्राप्त होता है, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रमके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम द्विचरम काण्डकके पतनके अन्तिम समयमें और सात नोकषायों का जघन्य प्रदेशसंक्रम इनमें उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद प्राप्त होता है। इस कारण यतः इनमें उक्त नौ प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशसंक्रमका अन्तरकाल सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है और अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय प्राप्त होनेसे वह उक्त काल प्रमाण कहा है।

§ १३१ मनुष्यत्रिकमें दर्शनमोहनीयत्रिकके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पूर्व कोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। नौ कषाय और आठ नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। तीन संज्वलन और पुरुषवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

§ १३२. देवगईए देवेसु मिच्छ०-अणंताणु०चउ० जह० णत्थि अंतरं। अज० जह० अंतोमु०, उक्क० एक्कत्तीसं सागरो० देसूणाणि। एवं सम्म०-सम्मामि०। णवरि अज० जह० एयस०। बारसक०-चदुणोक० जह० अज० णत्थि अंतरं। पंचणोक० जह० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अजह० जहण्णु० एयस०। एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। णवरि सगट्ठिदी देसूणा।

§ १३३. अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-तिण्णिवे०-भय-दुगुं० जह० अजह० णत्थि अंतरं। हस्स-रइ-अरइ-सोग ज० पदे०संका० णत्थि अंतरं। अजह० जहण्णु० एयस०, एवं जाव०।

विशेषार्थ—साधारण ओघप्ररूपणाके समय जो अन्तरकाल घटित करके बतला आये हैं उसके अनुसार यहाँ पर भी घटित कर लेना चाहिए। मात्र कायस्थिति और इनमें वेदकसम्यक्त्वके साथ अनन्तानुबन्धीके विसंयोजनाकाल आदिकी अपेक्षा जो विशेषता आती है उसे अलगसे जान लेना चाहिए।

§ १३२. देवगतिमें देवोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर है। इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है। बारह कषाय और चार नोकषायोंके जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। पाँच नोकषायोंके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

विशेषार्थ—देवोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवस्थितिके अन्तिम समयमें प्राप्त होनेसे इनके जघन्य प्रदेशसंक्रमके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा इनमें उक्त प्रकृतियोंका अजघन्य प्रदेशसंक्रम कमसे-कम अन्तर्मुहूर्त काल तक और अधिक-से-अधिक कुछ कम इकतीस सागर काल तक न होकर इस कालके पूर्व और बादमें हो यह सम्भव है, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम इकतीस सागर कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका यह अन्तरकाल इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए। मात्र इन प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम उद्वेलनाके समय द्विचरम काण्डकके पतनके समय होता है, अतः इनका अजघन्य प्रदेशसंक्रम इसके बाद भी प्राप्त होनेसे इनके अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य अन्तर एक समय कहा है। शेष प्रकृतियोंका अन्तरकाल यहां पर भी तिर्यञ्चोंके समान बन जानेसे उसे उनके समान यहां पर भी घटित कर लेना चाहिए। विशेष खुलासा हम पहले कर ही आये हैं। भवनवासी आदिमें यह अन्तरकाल इसी प्रकार है। मात्र उनकी भवस्थिति अलग अलग होनेसे जहां कुछ कम इकतीस सागर अन्तरकाल कहा है वहाँ उसका विचार कर लेना चाहिए।

§ १३३. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय, तीन वेद, भय और जुगुप्सा के जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। हास्य, रति, अरति और शोकके जघन्य प्रदेशसंक्रामकका जघन्य अनन्तरकाल नहीं है। अजघन्य

*** सण्णियासो ।**

§ १३४. एत्तो उवरि सण्णियासो अहिकाओ त्ति अहियार पडिबोहण सुत्तमेदं ।

*** मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंकामओ सम्मत्ताणंताणुबंधीणमसंकामओ ।**

§ १३५. कुदो ? सम्माइट्ठिम्मि सम्मत्तस्स संकमाभावादो, अणंताणुबंधीणं च पुव्वमेव विसंजोइयत्तादो ।

*** सम्मामिच्छत्तस्स णियमा अणुक्कस्सं पदेसं संकामेदि ।**

§ १३६. कुदो ? मिच्छत्तुक्कस्सपदेससंकमं पडिच्छिऊण अंतोमुहुत्तेण सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्स पदेससंकमुप्पत्तिदंसणादो ।

*** उक्कस्सादो अणुक्कस्समसंखेज्जगुणहीणं ।**

§ १३७. कुदो ? सम्मामिच्छत्तुक्कस्सपदेससंकमादो सव्वसंकमसरूवादो एत्थतणसंकमस्स गुणसंकमसरूवस्स असंखे०गुणहीणत्ते संदेहाभावादो ।

प्रदेशसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर एक समय है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

विशेषार्थ—इन देवोंमें मिथ्यात्व आदि २३ प्रकृतियोंमेंसे कुछका जघन्य प्रदेशसंक्रम या तो भवस्थितिके प्रथम समयमें या अन्तिम समयमें प्राप्त होनेसे यहां इनके जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रमके अन्तरकालका निषेध किया है। तथा चार नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम वहाँ उत्पन्न होनेके अन्तर्मुहूर्त बाद प्राप्त होता है। यतः यह एक पर्यायमें दो बार सम्भव नहीं है, इस लिए इनके जघन्य प्रदेशसंक्रमके अन्तरकालका निषेध कर अजघन्य प्रदेशसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकाल एक समय कहा है ।

इस प्रकार एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकाल समाप्त हुआ ।

*** अब सन्निकर्षका अधिकार है ।**

§ १३४. इससे आगे अर्थात् एक जीवकी अपेक्षा अन्तरकालके कथनके बाद अब सन्निकर्ष अधिकार प्राप्त है इस प्रकार अधिकारका ज्ञान करानेवाला यह सूत्र है ।

*** मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धियोंका असंक्रामक होता है ।**

§ १३५. क्योंकि सम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें सम्यक्त्वका प्रदेशसंक्रमण नहीं होता और अनन्तानुबन्धियोंकी पहले ही विसंयोजना हो लेती है ।

*** वह सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रमण करता है ।**

§ १३६. क्योंकि मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका अन्य प्रकृतियोंमें संक्रमण करनेके अन्तर्मुहूर्त बाद सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रमणकी उत्पत्ति देखी जाती है ।

*** किन्तु वह अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा अनन्तगुणाहीन होता है ।**

§ १३७. क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सर्वसंक्रमस्वरूप है, और यहाँ पर होनेवाला संक्रम गुणसंक्रम स्वरूप है, अतः उससे यह असंख्यातगुणा हीन है इसमें सन्देह नहीं है ।

❀ सेसाणं कम्माणं संकामओ णियमा अणुक्कस्सं संकामेदि ।

§ १३८. कुदो ? सव्वेसिमप्पप्पणो गुणिदकम्मंसियक्खवयचरिमफालीसंकमे लद्धुक्कस्सभावाणमेत्थाणुक्कस्सभावसिद्धीए विसंवादाभावादो ।

❀ उक्कस्सादो अणुक्कस्सं णियमा असंखेज्जगुणहीणं ।

§ १३९. किं कारणं ? अप्पप्पणो खवयचरिमफालिसंकमादो एत्थतणसंकमस्स असंखेज्जगुणहीणत्तं मोत्तूण पयारंतरा संभवादो ।

❀ णवरि लोभसंजलणं विसेसहीणं संकामेदि ।

§ १४०. कुदो ? दंसणमोहक्खवणाविसए लोहसंजलणस्स अधापवत्तसंकमादो चरित्त-मोहक्खवयसामित्तविसईकयअधापवत्तसंकमस्स गुणसेढिणिज्जरापरिहीणगुणसंकमदव्वस्सा-संखेज्जदिभागमेत्तेण विसेसाहियत्तदंसणादो ।

❀ सेसाणं कम्माणं साहेयव्वं ।

§ १४१. सम्मत्तादिसेसपयडीणं एदेणाणुमाणेणुक्कस्ससण्णियासविहाणं जाणिऊण भाणिदव्वमिदि सिस्साणमत्थसमप्पणं कयमेदेण सुत्तपदेण । संपहि एदेण सुत्तेण समप्पिदत्थस्स परिप्फुडीकरणट्ठमुच्चारणाणुगममिह कस्सामो । तं जहा—सण्णियासो दुविहो, जह० उक्कस्सओ च । उक्क० पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ० उक्क०

* वह शेष कर्मोंका संक्रामक होता हुआ नियमसे अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रमण करता है ।

§ १३८. क्योंकि सबका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अपने-अपने गुणितकर्मांशिक क्षपकसम्बन्धी अन्तिम फालिके संक्रमणके समय प्राप्त होता है, इसलिए यहाँ पर उनके प्रदेशसंक्रमके अनुत्कृष्ट-रूपसे सिद्ध होनेमें किसी प्रकारका विसंवाद नहीं है ।

* किन्तु वह अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अपने उत्कृष्टकी अपेक्षा असंख्यातगुणा हीन होता है ।

§ १३९. क्योंकि अपने अपने क्षपकसम्बन्धी अन्तिम फालिके संक्रमणसे यहाँ पर होनेवाला संक्रमण असंख्यातगुणा हीन होता है इसके सिवा प्रकृतमें अन्य कोई प्रकार सम्भव नहीं है ।

* इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनको विशेषहीन संक्रमण करता है ।

§ १४०. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणाविषयक लोभसंज्वलनके अधःप्रवृत्तसंक्रमसे चारित्र मोहक्षपकसम्बन्धी स्वामित्वको विषय करनेवाला अधःप्रवृत्तसंक्रम गुणश्रेणिनिर्जरासे हीन गुण-संक्रमद्रव्यके असंख्यातवाँ भाग अधिक देखा जाता है ।

* शेष कर्मोंका सन्निकर्ष साध लेना चाहिए ।

§ १४१. सम्यक्त्व आदि शेष प्रकृतियोंका भी इस अनुमानसे उत्कृष्ट सन्निकर्ष विधान जान कर कहना चाहिए । इस प्रकार इस सूत्रके द्वारा शिष्योंको अर्थका समर्पण किया गया है । अब इस सूत्रके द्वारा समर्पित अर्थका स्पष्टीकरण करनेके लिए यहाँ पर उच्चारणाका अनुगम करते हैं । यथा—सन्निकर्ष दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका

पदे०संका० सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० णियमा अणुक० असंखे०गुणहीणं। णवरि सुत्ताहिप्पाएण लोहसंजलणं विसेसहीणं। एसो अत्थो उवरि वि जहासंभवमणुगंतव्वो। सम्म०-असंकामय० अणंताणुबंधी णत्थि। एवं सम्मामि०। णवरि मिच्छ० णत्थि। सम्म० उक्क० पदे०संका० सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० णियमा अणुक० असंखे०गुणहीणं मिच्छ० असंकाम०।

§ १४२. अणंताणु०कोध० उक्क० पदे०संका० मिच्छ०-सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० णियमा अणुक० असंखे०गुणहीणं। तिण्हं कसायाणं णिय० तं तुविट्ठाणपदिदं अणंतभागहीणं वा असंखे० भागहीणं वा। सम्म० असंका०। एवं तिण्हं कसायाणं।

§ १४३. अपच्चक्खाण-कोध० उक्क० पदे०संका० चदुसंज०-णवणोक० णियमा अणुक० असंखे०गुणहीणं। सत्तकसा० णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागही० असंखे०-भागहीणं वा। सेसं णत्थि। एवं सत्तकसायाणं।

§ १४४. कोहसंज० उक्क० पदे०संका० दोसंजल० णियमा अणु० असंखे०-

है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इतनी विशेषता है कि चूर्णिसूत्रके अभिप्रायानुसार लोभसंज्वलनके विशेषहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। यह अर्थ आगे भी यथासम्भव जानना चाहिए। वह सम्यक्त्वका असंक्रामक होता है और उसके अनन्तानुबन्धी चतुष्कका सत्त्व नहीं होता। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उसके मिथ्यात्वका सत्त्व नहीं होता। सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके असंख्यात गुणेहीन अनुत्कृष्ट ,प्रदेशोंका संक्रामक होता है। वह मिथ्यात्वका असंक्रामक होता है।

§ १४२. अनन्तानुबन्धी क्रोधके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कषायोंका नियमसे संक्रामक होता है जो उत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो कदाचित् अनन्त भागहीन और कदाचित् असंख्यात भागहीन इस प्रकार द्विस्थान पतित प्रदेशोंका संक्रामक होता है। वह सम्यक्त्वका असंक्रामक होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १४३. अप्रत्याख्यानावरण क्रोधके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव चार संज्वलन और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। सात कषायोंका नियमसे संक्रामक होता है जो उत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो कदाचित् अनन्तभागहीन और कदाचित् असंख्यात भागहीन द्विस्थान पतित अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसके शेष प्रकृतियोंका सत्त्व नहीं पाया जाता। इसी प्रकार सात कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १४४. क्रोधसंज्वलनके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव दो संज्वलनोंका नियमसे असंख्यात

गुणहीणं । सेसं णत्थि । माणसंज० उक्क० पदे०संका० । मायासंजल० णिय० अणु० असंखे० गुणहीणं । सेसं णत्थि । मायासंज० उक्क० पदे० संका० सव्वेसिमसंकामगो । लोभसंज० उक्क० पदेससंका० तिण्णिसंज०-णवणोक० णिय० अणु० असंखे०गुणहीणं । सेसं णत्थि ।

§ १४५. इत्थिवे० उक्क० पदे० संका० तिण्णिसंज०-सत्तणोक० णियमा अणु० असंखे०गुणहीणं । णवुंस० सिया अत्थि सिया णत्थि । जदि अत्थि णिय० अणु० असंखे०भागहीणं । णवुंस० उक्क० पदे०संका० तिण्णिसंज०-अट्ठणोक० णिय० अणु० असंखे०गुणहीणं । पुरिसवे० उक्क० पदे० संका० तिण्णिसंजल० णिय० अणुक० असंखे०गुणही० छण्णोक०, णिय अणुक० असंखे०भागहीणं ।

§ १४६. हस्सस्स उक्क० पदे०संका० पंचणोक० णिय० तं तु विट्ठाणपडि० अणंतभागही० असंखे०भागही०, पुरिसवे० णिय० अणुक० असंखे०भागही०, तिण्हं संजल० णिय० अणुक० असंखे०, गुणहीणं । एवं पंचणोक० ।

§ १४७. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० उक्क० पदे०संका० सम्मामि० णिय० उकस्सं । सोलसक०-णवणोक० णिय० अणुक० असंखे०गुणहीणं, एवं सम्मामि०-सम्म०

गुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसके शेष प्रकृति अर्थात् संज्वलन लोभका संक्रम नहीं है । मानसंज्वलनके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव मायासंज्वलनके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसके शेष अर्थात् लोभसंज्वलनका संक्रम नहीं है । माया-संज्वलनके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सबका असंक्रामक होता है । लोभसंज्वलनके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव तीन संज्वलन और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसके शेष प्रकृतियोंका सत्त्व नहीं है ।

§ १४५. स्त्रीवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव तीन संज्वलन और सात नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इस जीवके नपुंसकवेदका सत्त्व कदाचित् है और कदाचित् नहीं है । यदि है तो नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । नपुंसकवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव तीन संज्वलन और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । पुरुषवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव तीन संज्वलनके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । छह नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है ।

§ १४६. हास्यके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव पाँच नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे कदाचित् अनन्तभागहीन और कदाचित् असंख्यातभागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । पुरुषवेदके नियमसे असंख्यातभागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । तीन संज्वलनोंके नियमसे असंख्यातगुणहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार पाँच नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १४७. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणे

उक्क० पदे०संका० सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० णिय० अणुक्क० असंखे०गुणही०

§ १४८. अणंताणु०कोह० उक्क० पदे०संका० मिच्छ०-सम्मामि० णिय० अणुक्क० असंखे०गुणही०, पण्णारसक०-छण्णोक० णिय० तं तु बिट्ठाणपदिदं अणंत-भागहीणं असंखे०भागहीणं। तिण्णं वेदाणं णिय० अणुक्क० असंखे०भागहीणं। एवं पण्णारसक०-छण्णोक०।

§ १४९. इत्थिवेद० उक्क० पदे०संका० सोलसक०-अट्ठणोक० णिय० अणुक्क० असंखे०भागही०। मिच्छ०-सम्मामि० णिय० अणु० असंखे०गुणही०। एवं पुरिस-णवुंसयवेदाणं। एवं सव्वणेरइय-तिरिक्ख०-पंचिं० तिरि०तिय-देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति।

§ १५०. पंचिं०तिरि० अपज्ज०-मणु०अपज्ज० सम्म० उक्क० पदे०संका० सम्मामि० णिय० तं तु बिट्ठाणपदिदं अणंतभागही० असंखे०भागहीणं वा। सोलसक०-णवणोक० णिय० अणु० असंखे०भागही०। एवं सम्मामि०।

हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है।

§ १४८. अनन्तानुबन्धी क्रोधके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यातगुणे हीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। पन्द्रह कषाय और छह नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे कदाचित् अनन्तभागहीन और कदाचित् असंख्यातभागहीन इन द्विस्थान पतित अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। तीन वेदोंका नियमसे असंख्यात भागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार पन्द्रह कषाय और छह नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १४९. स्त्रीवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सोलह कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातभागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यातगुणहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। यह सामान्य नारकियोंमें जो सन्निकर्ष कहा है इसी प्रकार सब नारकी, तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिक, सामान्यदेव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ १५०. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्वका नियमसे संक्रामक होता है। जो उत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तभागहीन या असंख्यातभागहीन द्विस्थानपतित अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके असंख्यातभागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १५१. अणंताणु०कोध० उक्क० पदे०संका० पण्णारसक०-छण्णोक० णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागही० असंखे०भागही० । तिण्हं वेदाणं णिय० अणुक० असंखे०भागही० । एवं पण्णारसक०-छण्णोकसायाणं ।

§ १५२. इत्थिवे० उक्क० पदे०संका० सोलसक०-अट्ठणोक० णिय० अणुक० असंखे०भागही० । एवं णवुंस० । एवं पुरिसवे० । णवरि सम्म०-सम्मामि० णिय० अणुक० असंखे० ।

§ १५३. मणुसतिए ओघं । णवरि मणुसिणी-इत्थिवे० उक्क० पदेससंका० णवुंस० णत्थि ।

§ १५४. अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ० उक्क० पदे०संका० सम्मामि० णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागही० असंखे०भागही० वा । सोलसक०-णवणोक०णिय० अणु० असंखे०गुणही० । एवं सम्मामि० ।

§ १५५. अणंताणु०कोध० उक्क० पदे०संका० मिच्छ०-सम्मामि० तिण्णिवे० णिय० अणुक० असंखे०भागही० । पण्णारसक०-छण्णोक० णिय० तं तु विट्ठाणपदि०

---

§ १५१. अनन्तानुबन्धी क्रोधके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव पन्द्रह कषाय और छह नोकषायोंका नियमसे संक्रामक होता है जो उत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तभागहीन या असंख्यातभागहीन द्विस्थानपतित अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । तीन वेदोंके नियमसे असंख्यातभागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार पन्द्रह कषाय और छह नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १५२. स्त्रीवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सोलह कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातभागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यातगुणहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है ।

§ १५३. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें स्त्रीवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवके नपुंसकवेद नहीं है ।

§ १५४. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तभागहीन या असंख्यातभागहीन द्विस्थानपतित अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातगुणहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १५५. अनन्तानुबन्धी क्रोधके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और तीन वेदोंके नियमसे असंख्यातभागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । पन्द्रह कषाय

अणंतभागहो० असंखे०भागहो० । एवं पण्णारसक०-छण्णोक० ।

§ १५६. इत्थिवे० उक्क० पदे०संका० मिच्छ०-सम्मामि०-सोलसक०-अट्ठणोक० णिय० अणुक्क० असंखे०भागहीणं । एवं पुरिस० णवुंस० । एत्थ सव्वत्थ तिवेदसण्णियासो परिसाहिय वत्तव्वो । एवं जाव० ।

एवमुक्कस्ससण्णियासो समत्तो ।

❀ सव्वेसिं कम्माणं जहण्णसण्णियासो वि साहेयव्वो ।

§ १५७. एदेण सुत्तेण जहण्णसण्णियासो ओघादेसभेयभिण्णो सवित्थरमेत्थाणुगंतव्वो त्ति सिस्साणमत्थसमप्पणं कयं होइ । संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदत्थविवरणमुच्चारणाबलेणाणुवत्तइस्सामो । तं जहा—जह० पय० दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघेण मिच्छ० जह० पदे०संका० सम्मामि०-पुरिस०-तिण्णिसंजल० णिय० अजह० असंखे० गुणब्भ० । णवक०-अट्ठणो० णिय० अज० असंखे०भागब्भहियं । सम्मामि० जह० पदे०संका० तेरसक०-अट्ठणोक० णियमा अज० असंखे०भागब्भहियं । पुरिसवे०-

---

और छह नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है । यदि अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तभागहीन या असंख्यातभागहीन द्विस्थानपतित अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार पन्द्रह कषाय और छह नोकषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १५६ स्त्रीवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातभागहीन अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इसी प्रकार सर्वत्र तीन वेदोंके सन्निकर्षको साधकर कहना चाहिए । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

इस प्रकार उत्कृष्ट सन्निकर्ष समाप्त हुआ ।

*** सब कर्मोंका जघन्य सन्निकर्ष भी साध लेना चाहिए ।**

§ १५७. ओघ और आदेशके भेदसे भेदको प्राप्त हुआ जघन्य सन्निकर्ष विस्तारके साथ यहाँ पर साध लेना चाहिए । इस प्रकार इस सूत्रद्वारा शिष्योंको अर्थका समर्पण किया गया है । अब इस सूत्र द्वारा सूचित हुए अर्थके विवरणको उच्चारणाके बलसे बतलाते हैं । यथा—जघन्य सन्निकर्षका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्व, पुरुषवेद और तीन संज्वलनोंके नियमसे असंख्यातगुणे अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । नौ कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यातवें भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव तेरह कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । पुरुषवेद और तीन संज्वलनके नियमसे असंख्यातगुणा

तिण्णिसंज० णिय० अज० असंखे०गुणब्भ० । एवं सम्म० । णवरि सम्मामि० णिय० अजह० असंखे०भागब्भहियं ।

§ १५८. अणंताणु०कोधस्स जह० पदे०संका० मिच्छ०-णवक०-अट्ठणोक० णिय० अजह० असंखे०भागब्भहियं । सम्मामि०-पुरिसवे०-तिण्णिसंज० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० । तिण्हं कसा० णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागब्भ० असंखे०भागब्भहियं वा । एवं तिण्हं कसायाणं ।

§ १५६ अपच्चक्खाणकोह० जह० पदे०संका० इत्थिवेद-णवुंस०-हस्स-रदि-भय-दुगुंछ०-लोहसंज० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । पुरिसवे०-तिण्णिसंज० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भहियं । सत्तक०-अरदि-सोग० णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागब्भ० असंखे०भागब्भहि० वा । एवं सत्तकसाय-अरदिसोगाणं ।

§ १६०. कोहसंज० जह० पदे०संका० अट्ठक० णिय० अज० असंखे०गुणब्भ० मिच्छ० सिया अत्थि । जदि अत्थि णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । एवं सम्मामि० । णवरि असंखे०गुणब्भ० । एवं माणसंजल० । णवरि पंचक० भाणिदव्वा । एवं माया-

---

अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार सम्यक्त्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यातभाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है ।

§ १५८. अनन्तानुबन्धी क्रोधके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, नौ कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । सम्यग्मिथ्यात्व, पुरुषवद और तीन संज्वलनोंके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशों का संक्रामक होता है । तीन कषायोंके नियमसे जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है । यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तभाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थान पतितक्ष जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १५९. अप्रत्याख्यान क्रोधके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा और लोभसंज्वलनके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । पुरुषवेद और तीन संज्वलनके नियमसे असंख्यातगुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । सात कषाय, अरति और शोकके नियमसे जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है । यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तभाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार सात कषाय, अरति और शोककी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १६०. क्रोधसंज्वलनके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव आठ कषायोंके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसके मिथ्यात्व कदाचित् है । यदि है तो नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार अर्थात् मिथ्यात्वके समान सम्यग्मिथ्यात्वका सन्निकर्ष है । इतनी विशेषता है कि इसके असंख्यातगुण

संजल० । णवरि दुविहं लोभं णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० । लोहसंज० जह० पदे० संका० एक्कारसक०-तिण्णिवे० अरदि-सोग० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० । हस्स-रदि-भय-दुगुंछ० णियमा० अजह० असंखे०भागब्भ० ।

§ १६१. इत्थिवे० जह० पदे०संका० णवक०-सत्तणोक० णिय० अज० असंखे०-भागब्भ० । तिण्णिसंज०-पुरिसवे० णिय० अज० असंखे०गुणब्भ० । एवं णवुंस० । पुरिसवे० कोहसंजलणभंगो । णवरि एक्कारसक० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० ।

§ १६२. हस्सस्स जह० पदे०संका० एक्कारसक०-तिण्णिवे०-अरदि-सो० णिय० अज० असंखे०गुणब्भ० । लोहसंज० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । रदि०-भय-दुगुं० णिय० तं तु विट्ठाणपदिदं अणंतभागब्भ० असंखे०भागब्भ० । एवं रदि-भय-दुगुंछ० ।

§ १६३. आदेसे० णेरइय०-मिच्छ० जह० पदे०संका० सम्मामि० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० । बारसक०-णवणोक० णिय अजह० असंखे० भागब्भ० ।

अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार मानसंज्वलनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसके आठ कषायोंके स्थानमें पाँच कषाय कहलाना चाहिए। इसी प्रकार मायासंज्वलनकी मुख्यतासे सन्निकर्ष कहना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह दो प्रकारके लोभों के नियमसे असंख्यातगुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। लोभसंज्वलनके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव ग्यारह कषाय, तीन वेद, अरति और शोकके नियमसे असंख्यातगुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। हास्य, रति, भय और जुगुप्साके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है।

§ १६१. स्त्रीवेदके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव नौ कषाय और सात नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। तीन संज्वलन और पुरुषवेदके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। पुरुषवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्षका भङ्ग क्रोधसंज्वलनके समान है। इतनी विशेषता है कि यह ग्यारह कषायोंके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है।

§ १६२. हास्यके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव ग्यारह कषाय, तीन वेद, अरति और शोकके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। लोभसंज्वलनके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। रति, भय और जुगुप्साके नियमसे जघन्य प्रदेशों का भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्त भाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार रति, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १६३. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यातगुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। सम्यक्त्वके

सम्म० जह० पदे०संका० सम्मामि० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । सोलसक०-णवणोक० णि० अज० असंखे०भागब्भ० । मिच्छ० असंका० । एवं सम्मामि० । णवरि सम्म० असंका० ।

§ १६४. अणंताणु०कोधस्स जह० पदे०संका० सम्म०-सम्मामि० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० । बारसक०-णवणोक० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । तिण्हं कसायाणं णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागब्भ० असंखे०भागब्भ० वा । एवं तिण्हं कसायाणं ।

§ १६५. अपच्चक्खाणकोध० जह० पदे०संका सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क-भंगो । सत्तणोक०-अणंताणु०४ णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । एक्कारसक०-भय-दुगुं० णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागब्भ० असंखे०भागब्भ० । एवमेक्कारसक० भय-दुगुंछा० ।

§ १६६. इत्थिवेद० जह० पदे०संका० सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ भंगो। सोलसक०-अट्ठणोक० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । एवं पुरिसवेद०-णवुंसवेद० ।

जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । मिथ्यात्वका असंक्रामक होता है । इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्व की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि यह सम्यक्त्वका असंक्रामक होता है ।

§ १६४. अनन्तानुबन्धी क्रोधके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यातगुणा अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । बारह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । तीन कषायोंके नियमसे जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है । यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तभाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १६५. अप्रत्याख्यान क्रोधके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग अनन्तानुबन्धी चतुष्कके समान है। सात नोकषाय और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । ग्यारह कषाय, भय और जुगुप्साके नियमसे जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है । यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्तभाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार ग्यारह कषाय, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १६६. स्त्रीवेदके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है । सोलह कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार पुरुषवेद और नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १६७. हस्सस्स जह० पदे०संका० इत्थिवेदभंगो। णवरि रदीए णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागब्भ० असंखे०भागब्भ०। एवं रदीए। एवमरदिसोगाणं। एवं सत्तमाए। पढमाए जाव छट्ठित्ति एवं चेव। णवरि अणंताणु०४ जह० पदे०संका० सम्म०असंका०। मिच्छ० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। इत्थिवेद० जह० पदे०-संका० मिच्छ०-बारसक०-अट्ठणोक० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। सम्मामि० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। एवं णवुंस०।

§ १६८. तिरिक्ख-पंचि०तिरिक्खदुग० पढमपुढविभंगो। णवरि इत्थिवे०-णवुंस० जह० पदे०संका० मिच्छ० सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ असंकाम०। जोणिणी पढमपुढविभंगो।

§ १६९. पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० सम्म० जह० पदे०संका० सोलसक०-णवणोक० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। सम्मामि० णिय० अज० असंखे०भागब्भहि०। सम्मामि० जह० पदे०संका० सोलसक०-णवणोक० णिय० अज० असंखे०भागब्भ०।

---

§ १६७. हास्यके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। इतनी विशेषता है कि रतिके नियमसे जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्त भाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार अरति और शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इसी प्रकार सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें जानना चाहिए। पहिली पृथिवीसे लेकर छठी पृथिवी तकके नारकियोंमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कका संक्रामक जीव सम्यक्त्वका असंक्रामक होता है। मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। स्त्रीवेदके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, बारह कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १६८. सामान्य तिर्यञ्च और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चद्विकमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका असंक्रामक होता है। योनिनी तिर्यञ्चोंमें पहली पृथिवीके समान भङ्ग है।

§ १६९. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्वके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है।

§ १७०. अणंताणु०कोध० जह० पदे०संका० बारसक०-णवणोक० णिय० अजह० असंखे० भाग०भ० । सम्म०-सम्मामि० णिय० अजह० असंखे० गुणब्भ० । तिण्हं कसा० णिय० तं तु० विट्ठाणपदि० अणंतभागब्भ० असंखे० भागब्भ० । एवं तिण्हं कसायाणं ।

§ १७१. अपच्चक्खाणकोध० जह० पदे० संका० सम्म०-सम्मामि० अणंताणु०-चउक्कभंगो । अणंताणु०चउ०-सत्तणोक० णिय० अजह० असं०भागब्भ०-एक्कारसक०-भय-दुगुं० णियमा तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागब्भ० असंखे०भागब्भ० वा । एवमेक्कारसक० भय-दुगुंछ० ।

§ १७२. इत्थिवेद० जह० पदे०संका० सोलसक० अट्ठणोक० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ० । सम्म०-सम्मामि० णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ० । एवं पुरसवे० णवुंस० । एवं हस्स-रदी० । णवरि रदि विट्ठाणपदि० । एवं रदीए । एवमरदि-सोगाणं । एवं मणुसअपज्ज० ।

§ १७०. अनन्तानुबन्धी क्रोधके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव बारह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। तीन कषायोंके नियमसे जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्त भाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार अनन्तानुबन्धी मान आदि तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १७१. अप्रत्याख्यान क्रोधके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवके सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्क और सात नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। ग्यारह कषाय, भय और जुगुप्साके नियमसे जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्त भाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार ग्यारह कषाय, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १७२. स्त्रीवेदके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव सोलह कषाय और आठ नोकषायोंके असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार पुरुषवेद और नपुंसकवेद की मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार हास्यकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए। इतनी विशेषता है इसके रतिका द्विस्थानपतित सन्निकर्ष कहना चाहिए। इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए। अरति और शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष इसी प्रकार कहना चाहिए। इसी प्रकार अर्थात् तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान मनुष्य अपर्याप्तकोंमें भी सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १७३. मणुसतिए ओघं। णवरि मणुसिणी० पुरिस० जह० पदे०संका० एक्कारसक०-इत्थिवेद-णवुंस०-अरदि-सोगाणं णिय० अजह० असंखे०गुणब्भ०। लोभसंज० हस्स-रदि-भय-दुगुंछा० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०।

§ १७४. देवेसु तिरिक्खभंगो। एवं सोहम्मादि णवगेवज्जा त्ति। भवण०-वाण०-जोदिसि० णारयभंगो। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ० जह० पदे०संका० सम्मामि० णिय० तं तु विट्ठाणपदि० अणंतभागब्भ०, असंखे०भागब्भ०। बारसक०-णवणोक० णिय० अज० असंखे०भागब्भ०। एवं सम्मामि०।

§ १७५. अणंताणु०कोध० जह० पदे०संका० मिच्छ०-सम्मामि०-बारसक० णवणोक० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०। तिण्हं क० णिय० तं तु विट्ठाणपदि०। एवं तिण्हं क०।

§ १७६. अपच्चक्खाणकोह० जह० पदे०संका० एक्कारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछा० णिय० तं तु विट्ठाणपदिदं। छण्णोक० णिय० अजह० असंखे०भागब्भ०।

---

§ १७३. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव ग्यारह कषाय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति और शोकके नियमसे असंख्यात गुण अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। लोभसंज्वलन, हास्य, रति, भय और जुगुप्साके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है।

§ १७४. देवोंमें सामान्य तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इसी प्रकार सौधर्म कल्पसे लेकर नौग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव सम्यग्मिथ्यात्वके नियमसे जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्त भाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १७५. अनन्तानुबन्धी क्रोधके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। तीन कषायोंके जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्त भाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। इसी प्रकार मान आदि तीन कषायोंकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए।

§ १७६. अप्रत्याख्यान क्रोधके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव ग्यारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके जघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है और अजघन्य प्रदेशोंका भी संक्रामक होता है। यदि अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है तो नियमसे अनन्त भाग अधिक या असंख्यात भाग अधिक द्विस्थानपतित अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है। छह नोकषायोंके

एवमेकारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगु ० ।

§ १७७. इत्थिवे० जह० पदे०संका० बारसक०-अट्ठणोक० णिय० अजह० असंखे० भागभ० । एवं णवुंस० । एवं हस्स० । णवरि रदीए विट्ठाणपदि० । एवं रदीए । एवमरदि-सोगाणं । एवं जाव० ।

§ १७८. एदम्मि जहण्णसण्णियासे कत्थ वि कत्थ वि पदविसेसे विसंवादो अत्थि, तत्थुच्चारणाइरियाहिप्पायमणुमाणिय विवरीयपदेसविण्णासावलंबणेणाण्णहा वासमत्थणा कायव्वा ।

§ १७९. संपहि एत्थुद्देसे सुगमत्ताहिप्पाएण चुण्णिसुत्तायारेण परूविदाणं णाणा-जीवभंगविचयादीणमट्ठण्हमणियोगद्दाराणं उच्चारणाबलेण परूवणं वत्तइस्सामो । तं जहा—णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो—जह० उक्क० च । उक्क० पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसे० । ओघे० सव्वपयडी० उक्क० पदेसस्स सिया सव्वे असंकामया, सिया असंकामया च संकामओ च, सिया असंकामया च संकामया च ३ । अणुक्कस्सपदेसस्स सिया सव्वे संकामया, सिया संकामया च असंकामओ च, सिया संकामया च असंकामया च ३ । एवं चदुसु गदीसु । णवरि मणुसअपज्ज० उक्क०

नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार ग्यारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए ।

§ १७७. स्त्रीवेदके जघन्य प्रदेशोंका संक्रामक जीव बारह कषाय और आठ नोकषायोंके नियमसे असंख्यात भाग अधिक अजघन्य प्रदेशोंका संक्रामक होता है । इसी प्रकार नपुंसकवेदकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । इसी प्रकार हास्यकी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसके रतिका द्विस्थानपतित सन्निकर्ष होता है । इसी प्रकार रतिकी मुख्यतासे सन्निकर्ष जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार अरति और शोककी मुख्यतासे भी सन्निकर्ष जानना चाहिए । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए ।

§ १७८. इस जघन्य सन्निकर्षमें कहीं-कहीं पदविशेषमें विसंवाद है सो वहाँ पर उच्चारणा-चार्यके अभिप्रायका अनुमान करके विपरीत प्रदेशविन्यासके अवलम्बन द्वारा अन्य प्रकारसे उसकी अवस्थितिका विचार करना चाहिए ।

§ १७९. 'अब इस स्थल पर सुगम हैं' इस अभिप्रायसे चूर्णिसूत्रकार द्वारा नहीं कहे गये 'नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्गविचय' आदि आठ अनुयोगद्वारोंका उच्चारणाके बलसे कथन करते हैं । यथा—नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्ग विचय दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकार है—ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके कदाचित् सब जीव असंक्रामक हैं १, कदाचित् नाना जीव असंक्रामक हैं और एक जीव संक्रामक है २ तथा कदाचित् नाना जीव असंक्रामक हैं और नाना जीव संक्रामक हैं । ३ अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके कदाचित् सब जीव संक्रामक हैं १, कदाचित् नाना जीव संक्रामक हैं और एक जीव असंक्रामक है २ तथा कदाचित् नाना जीव संक्रामक हैं और नाना जीव असंक्रामक हैं ३ । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट

अणुक० पदे०संका० अट्ठ भंगा। एवं जहण्णयं पि णेदव्वं।

§ १८०. भागाभागो दुविहो—जहण्णमुक्कस्सं च। उक्कस्से पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० उक्क० पदे०संका० सव्वजीवाणं केव० भागो? असंखे० भागो। अणु० असंखेज्जा[1] भागा। सोलसक०-णवणोक० उक्क० पदे०संका० अणंतभागो। अणुक्क० अणंता भागा। एवं तिरिक्खा०।

§ १८१. आदेसेण णेरइय० सव्वपयडी० उक्क० पदे०संका० सव्वजी० असंखे०-भागो। अणुक्क० असंखेज्जा भागा। एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचि०तिरिक्ख०-मणुस-अपज्ज०-देवगदिदेवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति। मणुस्सेसु णारयभंगो। णवरि मिच्छ० उक्क० पदे०संका० संखे०भागो। अणुक्क० संखेज्जा भागा। मणुसपज्ज०-मणुसिणी०—सव्वट्ठ०देवा० सव्वपयडी उक्क० पदे०संका० संखे०भागो। अणुक्क० संखेज्जा भागा। एवं जाव०।

§ १८२. जहण्णयं पि उक्कस्सभंगेण णेदव्वं।

प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंके आठ भङ्ग होते हैं। इसी प्रकार जघन्य संक्रमकी मुख्यतासे भी जानना चाहिए।

§ १८०. भागाभाग दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव अनन्त बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

§ १८१. आदेशसे नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव सब जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, देवगतिमें सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ १८२. जघन्य प्रदेश भागाभागको भी उत्कृष्टके समान ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यद्यपि सामान्य मनुष्य असंख्यात हैं तथापि उनमें मिथ्यात्वके संक्रामक (सम्यग्दृष्टि) संख्यात हैं। उनमेंसे संख्यातवें भाग उत्कृष्ट प्रदेश संक्रामक है। शेष बहु भाग अनुत्कृष्ट प्रदेश संक्रामक हैं।

---

१. ता० प्रतौ संखेज्जा इति पाठः।

§ १८३. परिमाणं दुविहं-जह० उक्क० च । उक्कस्से पयदं दुविहो । णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छ०-सम्मामि० उक्क० पदे०संका० केत्तिया ? संखेज्जा । अणुक्क० केत्ति० ? असंखेज्जा । सम्म० उक्क० अणुक्क० पदे०संका० केत्तिया ? असंखेज्जा । अणंताणु० चउक्क० उक्क० पदे०संका० केत्ति० ? असंखेज्जा । अणुक्क० केत्ति० ? अणंता । एवं बारसक०-णवणोक० । णवरि उक्क० पदे०संका० केत्ति० ? संखेज्जा ।

§ १८४. आदेसेण णेरइय० सव्वपयडी उक्क० अणुक्क० पदे०संका केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचि०-तिरिक्खमणुसअपज्ज० देवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति । तिरिक्खेसु दंसणतिय उक्क० अणुक्क० केत्ति ? असंखेज्जा । सोलसक०-णवणोक० उक्क० पदे०संका० केत्ति० ? असंखेज्जा । अणुक्क० केत्ति० ? अणंता । मणुसेसु मिच्छ० उक्क० अणुक्क० पदे०संका० केत्तिया ? संखेज्जा । सेसकम्माणमुक्क० केत्ति० ? संखेज्जा । अणुक्क० असंखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी सव्वट्ठदेवा उक्क० अणुक्क० पदे०-संका० केत्ति० ? संखेज्जा । आणदादि अवराइदा त्ति सव्वपयडी उक्क० पदे०संका० केत्ति० ? संखेज्जा । अणुक्क० पदे०संका० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं जाव० ।

---

§ १८३. परिमाण दो प्रकारका है— जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सम्यक्त्वके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्कके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । इसी प्रकार बारह कषाय और नौ नोकषायोंकी अपेक्षा परिमाण जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं ।

§ १८४. आदेशसे नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए । सामान्य तिर्यञ्चोंमें दर्शनमोहनीयत्रिकके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं ? अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं । मनुष्योंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । शेष कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्राम० जीव असंख्यात हैं । मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंमें संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । आनत कल्पसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए ।

§ १८५. जहण्णए पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदेसे० । ओघे० मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० जह० पदे०संका० केत्ति० ? संखेज्जा । अजह० केत्ति० ? असंखे० । सोलसक०-णवणोक० जह० पदे०संका० केत्ति० ? संखेज्जा । अजह० केत्ति० ? अणंता । एवं तिरिक्खा ।

§ १८६. आदेसेण णेरइय० सव्वपयडी० जह० केत्ति० ? संखेज्जा । अजह० केत्ति० ? असंखेज्जा । एवं सव्वणेरइय०-सव्वपंचिंदिय-तिरिक्ख-मणुसअपज्ज०-देवगइ-देव भवणादि जाव अवराइद त्ति । मणुसेसु मिच्छ० जह० अजह० पदे०संका० केत्ति० ? संखेज्जा । सेसकम्माणं जह० संखेज्जा । अजह० केत्ति० ? असंखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वट्ठदेवा सव्वपयडी जह० अजह० पदे०संका० केत्ति० ? संखेज्जा । एवं जाव० ।

§ १८७. खेत्तं दुविहं—जह० उक्क० च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघे० आदेसे० । ओघेण दंसणतिय उक्क० अणुक्क० पदे०संका० लोगस्स असंखे०भागे । सोलसक०-णवणोक० उक्क० पदे०संका० लोगस्स असंखे०भागे । अणुक्क० सव्वलोगे । एवं तिरिक्खेसु । सेसगइमग्गणासु सव्वपयडी उक्क० अणुक्क० पदे०संका० लोग० असंखे०-भागे । एवं जाव० । एवं जहण्णयं पि णेदव्वं ।

---

§ १८५. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? अनन्त हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए।

§ १८६. आदेशसे नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। अजघन्य प्रकृतियोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, देवगतिमें सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। शेष कर्मोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव संख्यात हैं। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। मनुष्यपर्याप्त, मनुष्यिनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ १८७. क्षेत्र दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट। उत्कृष्टका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे दर्शनमोहनीयत्रिकके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र कितना है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र सर्व लोक है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। गतिसम्बन्धी शेष मार्गणाओंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए। तथा इसी प्रकार जघन्य क्षेत्रको भी ले जाना चाहिए।

§ १८८. पोसणं दुविहं—जहण्णमुक्कस्सं च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णिद्देसो—ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छ० उक्क० पद०संका० केव० पोसिदं ? लोगस्स असंखे०भागो । अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा । सम्म०-सम्मामि० उक्क० पदे०-संका० लोगस्स असंखे०भागो । अणुक्क० लोग० असंखे०भागो, अट्ठचोद्दस भागा वा देसूणा सव्वलोगो वा । सोलसक०-णवणोक० उक्क०पदेस० लोगस्स असंखे०भागो । अणुक्क० सव्वलोगो ।

विशेषार्थ—ओघसे सब प्रकृतियोंमेंसे किन्हीं प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव संख्यात हैं और किन्हीं प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव असंख्यात हैं, इसलिए इनका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है । मात्र सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव अनन्त हैं, इसलिए इनका सर्वलोक क्षेत्र प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है । सामान्य तिर्यञ्चोंमें यह व्यवस्था बन जाती है, इसलिए उनमें क्षेत्रप्ररूपणाको ओघके समान जाननेकी सूचना की है । गतिसम्बन्धी शेष मार्गणाओंका क्षेत्र ही लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए उनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका क्षेत्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । आगे अनाहारक मार्गणा तक यह यथायोग्य इसी प्रकार घटित किया जाने योग्य है यह जानकर उसे इसी प्रकार जानने की सूचना की है । जघन्य क्षेत्रमें उत्कृष्टसे अन्य कोई विशेषता नहीं है ऐसा समझकर उसे भी इसी प्रकार ले जाने की सूचना की है ।

§ १८८. स्पर्शन दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने कितने क्षेत्रका स्पर्शन किया है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्र का स्पर्शन किया है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण और सब लोक प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है ।

विशेषार्थ—ओघसे एक सम्यक्त्व प्रकृतिको छोड़कर शेष सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रम अपनी अपनी क्षपणाके समय यथा योग्य स्थानमें होता है । सम्यक्त्व का भी उत्कृष्ट प्रदेश-संक्रम स्वामित्वके अनुसार सातवें नरकके नारकीके होता है । यतः इन सब जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाणसे अधिक नहीं है, अतः ओघसे सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है । अब रहा अनुत्कृष्टका विचार सो मिथ्यात्वका संक्रम सम्यग्दृष्टिके ही सम्भव है, अतः सम्यग्दृष्टियोंके स्पर्शनको देखकर मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण कहा है । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवों

§ १८६. आदेसेण णेरइएसु मिच्छ० उक्क० अणुक्क० पदेससंकाम० लोगस्स असंखे० । सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० उक्क० पदे०संका० लोगस्स असंखे०-भागो । अणुक्क० लोगस्स असंखे०भागो छ चोद्दस भागा वा देसूणा । एवं विदियादि जाव सत्तमा त्ति । णवरि सगपोसणं । पढमाए खेत्तं ।

§ १६०. तिरिक्खेसु मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदे०संका० लोग० असंखे०भागो । अणुक्कस्स० लोग० असंखे०भागो छ चोद्दस० देसूणा । सम्म०-सम्मामि०-उक्क० पदे०-

---

गतियोंके जीव होते हैं, परन्तु उनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागसे अधिक नहीं होता। मात्र अतीत कालकी अपेक्षा इनका स्पर्शन या तो विहारवत्स्वस्थान आदिकी अपेक्षा त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण और एकेन्द्रिय आदिके मारणान्तिक समुद्घात और उपपादपदकी अपेक्षा सर्वलोक प्रमाण बन जाता है। यह देखकर इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण और सर्वलोक प्रमाण कहा है। तथा सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका प्रदेश संक्रमण निर्बाधरूपसे सर्वत्र सर्वदा होता रहता है, इसलिए इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन वर्तमान और अतीत दोनों प्रकारके कालोंकी अपेक्षा एकमात्र सर्वलोक कहा है।

§ १८९. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार द्वितीयादि पृथिवियोंके नारकियोंमें स्पर्शन जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीमें स्पर्शनका भङ्ग क्षेत्रके समान है।

विशेषार्थ—मिथ्यात्वका संक्रमण सम्यग्दृष्टि ही करता है और नरकमें सम्यग्दृष्टियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाणसे अधिक नहीं है इसलिए तो नारकियोंमें मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा शेष प्रकृतियोंका संक्रमण मारणान्तिकसमुद्घात और उपपादपदके समय भी सम्भव है, किन्तु नारकियोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है, इसलिए यहाँ पर शेष सब प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण कहा है। द्वितीयादि पृथिवियोंमें यह स्पर्शन इसी प्रकार बन जाता है। मात्र त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागके स्थानमें अपना-अपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीके सब नारकियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है। इनका क्षेत्र भी इतना ही है। इसलिए यहाँ पर पहली पृथिवीमें स्पर्शनको क्षेत्रके समान जाननेकी सूचना की है। शेष कथन सुगम है।

§ १९०. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

संका० लोग० असंखे०भागो। अणुक० लो० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। सोलसक०-णवणोक० उक्क० पदेससंकामएहि लोग० असंखे०भागो। अणुक० सव्वलोगो वा। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि पणुवीसं पयडीणं अणु० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज० एवं चेव। णवरि मिच्छत्तं णत्थि। मणुसतिए एवं चेव। णवरि मिच्छ० उक्क० अणुक० पदे०संका० लोग० असंखे०भागो।

सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्वलोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने सर्वलोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पच्चीस प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्वलोक प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वका संक्रमण नहीं होता। मनुष्यत्रिकमें इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम छहबटे चौदह भाग प्रमाण है. इसलिए सामान्य तिर्यञ्चों में मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और त्रसनाली के कुछ कम छह बटे चौदह भाग प्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्ता वाले तिर्यञ्चोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और मारणान्तिक समुद्घात आदिकी अपेक्षा अतीत स्पर्शन सर्वलोक प्रमाण है, इसलिए सामान्य तिर्यञ्चोंमें इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सर्व लोक प्रमाण कहा है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन सर्वलोक प्रमाण दोनों कालोंकी अपेक्षासे है यह स्पष्ट ही है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें और सब स्पर्शन तो सामान्य तिर्यञ्चोंके समान बन जाता है। मात्र इनका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और अतीत स्पर्शन सर्वलोक प्रमाण होनेसे इनमें सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण और सब लोक प्रमाण कहा है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकों में अन्य सब स्पर्शन तो तिर्यञ्चत्रिकके समान बन जाता है। मात्र इनमें एकमात्र मिथ्यात्व गुणस्थान होनेसे मिथ्यात्वका संक्रमण सम्भव नहीं है, इस लिए उसका निषेध किया है। मनुष्यत्रिकमें अन्य सब स्पर्शन तो उक्त अपर्याप्तकोंके समान बन जाता है। मात्र इनमें सम्यग्दृष्टि जीव होनेके कारण मिथ्यात्वका संक्रमण सम्भव है। परन्तु इनमें ऐसे जीवोंका वर्तमान और अतीत स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भाग से अधिक प्राप्त न होनेके कारण मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशों के संक्रामक जीवोंका भी उक्त क्षेत्रप्रमाण स्पर्शन कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ १६१. देवेसु मिच्छ० उक्क० पदे०संका०लोग०असंखे०भागो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस०देसूणा। सेसकम्माणमुक्क० खेत्तं। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो, अट्ठ णवचोद्दस० देसूणा। णवरि पुरिस०-णवुंस० उक्क० पदे०संका० अट्ठचोद्दस० देसूणा। एवं सोहम्मीसाण०।

§ १६२. भवण०-वाणवे०-जोदिसि० मिच्छ० उक्क० पदे०संका० लोग० असंखे०-भागो। अणुक्क० लोग० असंखे०भागो अद्धुट्ठ अट्ठचोद्दस० देसूणा। सेसकम्माणं उक्क० पदे०-संका० लोग० असंखे०भागो। अणुक्क० लो० असंखे०भागो, अद्धुट्ठ-अट्ठ-णव-चोद्दस०देसूणा।

§ १६१. देवोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेद और नपुंसकवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सौधर्म और ऐशान कल्पवासी देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—सम्यग्दृष्टि देवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण होनेसे इनमें मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन उक्त क्षेत्र प्रमाण कहा है। देवोंका उक्त स्पर्शन तो है ही। मारणान्तिक समुद्घातकी अपेक्षा इनका स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण है और इन सब स्पर्शनोंके समय शेष सब प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रम होता है, इसलिए यहाँ पर देवोंमें शेष प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण कहा है। यहाँ पर पुरुषवेद और नपुंसकवेदके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंके स्पर्शनमें अन्य प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंके स्पर्शनसे कुछ विशेषता है, इसलिए उसका निर्देश अलगसे किया है। बात यह है कि सौधर्म और ऐशान कल्पकी अपेक्षा सामान्य देवोंमें पुरुषवेद और नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विहारवत्स्वस्थान आदिके समय भी सम्भव है, इसलिए इनमें उक्त कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रामक जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण बन जानेसे वह अलगसे कहा है। यह स्पर्शन सौधर्म और ऐशान कल्पमें अविकल घटित हो जाता है, इसलिए इसे सामान्य देवोंके समान जाननेकी सूचना की है। शेष कथन सुगम है।

§ १६२. भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी देवोंमें मिथ्यात्वके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन और आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष कर्मोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ १९३. सणक्कुमारादि अच्चुदा त्ति सव्वपयडि० उक्क० पदे०संका० लोग० असंखे०भागो। अणुक्क० सगपोसणं। उवरि खेत्तं। एवं जाव०।

§ १९४. जह० पयदं। दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य। ओघेण मिच्छ० जह० पदे०संका० लोग० असंखे०भागो। अजह० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्द० देसूणा। सम्म०-सम्मामि० जह० अजह० पदे०संका० लोग० असंखे०भागो अट्ठ-चोद्द० देसूणा सव्वलोगो वा। सोलसक०-णवणोक० जह० पदे०संका० लोग० असंखे०-भागो। अजह० सव्वलोगो।

विशेषार्थ—सम्यग्दृष्टि उक्त देवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन कुछ कम साढ़े तीन और कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण होनेसे इनमें मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन उक्तप्रमाण कहा है। शेष कर्मोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंका संक्रम उक्त देवोंकी सब अवस्थाओंमें भी सम्भव है, इसलिए उनमें उनके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भाग प्रमाण कहा है। शेष कथन सुगम है।

§ १९३. सनत्कुमारसे लेकर अच्युत कल्प तकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन अपने-अपने कल्पके स्पर्शनके समान जानना चाहिए। आगे नौ ग्रैवेयक आदिमें स्पर्शन क्षेत्रके समान जानना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—आगे सनत्कुमार आदि कल्पोंमें मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि देवोंके स्पर्शनमें कोई फरक नहीं है, इसलिए वहाँ सब प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन एक साथ कहा है। साथ ही जिस कल्पमें जो स्पर्शन है वही प्राप्त होता है, इसलिए उसे अपने-अपने स्पर्शनके समान जाननेकी सूचना की है। नौ ग्रैवेयक आदिमें स्पर्शन क्षेत्रके समान होनेसे सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट और अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंके स्पर्शनको क्षेत्रके समान जाननेकी सूचना की है। शेष कथन सुगम है।

§ १९४. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशों के संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग-प्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भाग प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, त्रसनालीके कुछ कम आठबटे चौदह भाग प्रमाण और सर्वलोक प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशके संक्रामक जीवोंने सर्वलोक प्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—ओघसे मिथ्यात्व का जघन्य प्रदेशसंक्रम क्षपित कर्मांशिक जीवके क्षपणाके समय होता है, इसलिए इसके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा इसके अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन जो लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण कहा है सो इसका खुलासा

§ १९५. आदेसेण णेरइय० मिच्छ० जह० अजह० पदे०संका० लोग० असंखे० भागो। सेसा० जह० लोग० असंखे०भागो। अजह० लोग० असंखे०भागो, छ-चोद्दस भागा वा देसूणा। एवं विदियादि जाव सत्तमा त्ति। णवरि सगपोसणं। पढमाए खेत्तं।

§ १९६. तिरिक्खेसु मिच्छ० जह० पदे०संका० लोग० असंखे०भागो। अजह० लोग० असंखे०भागो छचोद्दस० देसूणा। सम्म०-सम्मामि० जह० अजह०

जैसा इसके अनुत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमके समय कर आये हैं उसी प्रकार यहाँ पर भी कर लेना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य और अजघन्य प्रदेशसंक्रम एकेन्द्रियादि जीवोंके भी सम्भव है। किन्तु ऐसे जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा अतीत स्पर्शन विहारवत्स्वस्थान आदिकी अपेक्षा त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण और मारणान्तिक समुद्घात व उपपादपदकी अपेक्षा सर्वलोकप्रमाण प्राप्त होनेसे वह तत्प्रमाण कहा है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम अधिकतरका क्षपणाके समय और कुछका उपशमनाके समय प्राप्त होता है। अतः ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इन कर्मोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। तथा इनका अजघन्य प्रदेशसंक्रम कुछ गुणस्थानप्रतिपन्न जीवोंको छोड़कर प्रायः सब जीव करते हैं, इसलिए इनके अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन सर्वलोकप्रमाण कहा है।

§ १९५. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार दूसरी पृथिवीसे लेकर सातवीं पृथिवी तकके नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना अपना स्पर्शन कहना चाहिए। पहली पृथिवीके नारकियोंमें क्षेत्रके समान स्पर्शन है।

विशेषार्थ—नरकमें सर्वत्र सम्यग्दृष्टियोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनमें मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। शेष प्रकृतियोंका जघन्य प्रदेशसंक्रम क्षपितकर्मांशिक जीवोंके यथास्थान होता है और ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है, इसलिए इनके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इनके अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण है यह स्पष्ट ही है। शेष कथन सुगम है।

§ १९६. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्या-

पदे०संका० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। सोलसक०-णवणोक० जह० पदे०-संका० लोग० असंखे०भागो। अजह० सव्वलोगो।

§ १६७. पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खभंगो। सोलसक०-णवणोक० जह० खेत्तं। अजह० पदे०-संकाम० लोग० असंखे०भागो सव्वलोगो वा। एवं पंचिंदियतिरिक्ख०अपज्ज०-मणुसअपज्ज०। णवरि मिच्छ० णत्थि। एवं मणुसतिए। णवरि मिच्छ० जह० अजह० पदे०संका० लोग० असंखे०भागो।

तवें भागप्रमाण और सर्वलोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सोलह कपाय और नौ नोकषायोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने सर्वलोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम उत्तम भोगभूमिमें क्षपितकर्मांशिक जीवके अन्तिम समयमें सम्भव है। यतः ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है अतः इनमें मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है। तथा सम्यग्दृष्टि तिर्यञ्चोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण है अतः इनमें मिथ्यात्वके अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन उक्त प्रमाण कहा है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवेंभागप्रमाण और सब लोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है यह स्पष्ट ही है, क्योंकि सम्यक्त्वका जघन्य और अजघन्य दोनों प्रकारका स्पर्शन तो मिथ्यादृष्टियोंके होता ही है। सम्यग्मिथ्यात्वका भी यह संक्रम मिथ्यादृष्टियोंके सम्भव है और मिथ्यादृष्टि तिर्यञ्चोंका स्पर्शन उक्त प्रमाण है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य संक्रमके स्वामित्व पर अलग-अलग विचार करने पर विदित होता है कि इन प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागसे अधिक नहीं बन सकता इसलिए यह उक्त क्षेत्रप्रमाण कहा है। तथा इनका अजघन्य प्रदेशसंक्रम एकेन्द्रियादि सब तिर्यञ्चोंके सम्भव है, इसलिए इनके अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन सर्वलोकप्रमाण कहा है।

§ १६७. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन क्षेत्रके समान है। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भाग और सर्वलोकप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि ये मिथ्यात्वके संक्रामक नहीं होते। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि उनमें मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

विशेषार्थ—सामान्य तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिककी मुख्यतासे ही कहा है। तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामकोंका जो स्पर्शन सामान्य तिर्यञ्चोंमें है वह

§ १९८. देवेसु मिच्छ० जह० पदे०संका० लोगस्स असंखे०भागो। अजह० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा। सम्म०-सम्मामि० जह० अजह० पदे०-संका० लोग० असंखे०भागो, अट्ठणव चोद्दस० देसूणा। सेसाणं जह० खेत्तं। अजह० [लोग० असंखे०] अट्ठणव चोद्दस० देसूणा। एवं सव्वदेवाणं। णवरि सगपोसणं णेदव्वं। णवरि जोदिसि० सम्म०-सम्मामि० जह० पदे०संका० लोग० असंखे०भागो, अद्धट्ठ अट्ठचोद्द० दे०। अजह० लो० असंखे०भागो अद्धुट्ठअट्ठणवचोद्दस० देसूणा। एवं जाव०।

पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें भी बन जाता है। इसलिए इनमें उक्त तीनों प्रकृतियोंके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामकोंका स्पर्शन सामान्य तिर्यञ्चोंके समान कहा है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण प्राप्त होने से उसे क्षेत्रके समान जानने की सूचना की है। तथा उक्त तिर्यञ्चोंके सर्वत्र इनका अजघन्य प्रदेशसंक्रम सम्भव है, अतः उक्त तिर्यञ्चोंके स्पर्शनको देखकर यहाँ पर इनके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका वर्तमान स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और अतीत स्पर्शन सर्वलोकप्रमाण कहा है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें यह स्पर्शन अविकल बन जाता है इसलिए उनमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकके समान जाननेकी सूचना की है। मात्र इनमें मिथ्यात्वका संक्रम नहीं होता, इसलिए उसका निषेध किया है। मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीव सम्यग्दृष्टि होते हैं और मनुष्योंमें ऐसे जीवोंका स्पर्शन लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण है जो तीनों प्रकारके मनुष्योंमें सम्भव है। मात्र इस विशेषताको छोड़कर अन्य सब स्पर्शन इनमें उक्त अपर्याप्त जीवोंके समान बन जानेसे उनके समान जानने की सूचना की है।

§ १९८ देवोंमें मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य और अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंके स्पर्शनका भङ्ग क्षेत्रके समान है। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन ले जाना चाहिए। इतनी और विशेषता है कि ज्योतिषी देवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन और कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम साढ़े तीन, कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

विशेषार्थ—ज्योतिषी देवोंकी जघन्य आयु पल्यके आठवें भागसे कम नहीं होती, अतएव इनमें इसके पूर्व मारणान्तिक समुद्घात सम्भव नहीं है। यही कारण है कि इनमें सम्यक्त्व और

§ १९९. कालो दुविहो—जहण्णमुक्कस्सं च । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०—ओघेण आदेसेण य । ओघेण मिच्छ०-सम्मामि०-बारसक०-णवणोक० उक्क० पदे०संका० केवचिरं० ? जह० एयसमओ । उक्क० संखेज्जा समया । अणुक्क० सव्वद्धा । सम्म०-अणंताणु०चउक्क० उक्क० पदे०संका० जह० एयस० । उक्क० आवलि० असंखे०-भागो । अणुक्क० सव्वद्धा ।

§ २००. आदेसेण णेरइएसु सव्वपयडी० उक्क० पदे०संका० जह० एयस० । उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणुक्क० सव्वद्धा । एवं सव्वणेरइय-सव्वतिरिक्ख०-देवा जाव सहस्सार त्ति । मणुसतिय आणदादि सव्वट्ठा त्ति सव्वपयडी० उक्क० पदे०संका०

सम्यग्मिथ्यात्वके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका स्पर्शन त्रसनालीके कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण न बतलाकर मात्र लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण बतलाया है । शेष कथन सुगम है ।

§ १९९. काल दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय और नौ नोकषायोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका कितना काल है ? जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है । सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है ।

विशेषार्थ—ओघसे मिथ्यात्व आदि २३ प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम मनुष्योंमें क्षपणाके समय प्राप्त होता है । यह सम्भव है कि नाना मनुष्य एक साथ इनका उत्कृष्ट प्रदेश संक्रम करें और दूसरे समयमें अन्य मनुष्य न करें । साथ ही यह भी सम्भव है कि नाना मनुष्य अलग-अलग संख्यात समय तक इनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम करते रहें, इसलिए इनके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है । सम्यक्त्व और अनन्तानुबन्धी चतुष्कका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सातवें नरकके नारकी करते हैं । ये जीव एक समय तक इनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम करके द्वितीयादि समयोंमें अन्य जीव न करें यह तो सम्भव है ही । साथ ही यहाँ पर सम्यक्त्वका उपक्रमणकाल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे इनका उत्कृष्ट प्रदेश संक्रम इतने काल तक भी सम्भव है, इसलिए ओघसे इनके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है । सभी अट्ठाईस प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है ।

§ २००. आदेशसे नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है । इसी प्रकार सब नारकी, सब तिर्यञ्च, सामान्य देव और सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । मनुष्यत्रिक और आनतकल्पसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट-

जह० एयस० । उक्क० संखेज्जा समया । अणुक्क० सव्वद्धा । मणुसअपज्ज० सत्तावीसं पयडीणं उक्क० पदे०संका० जह० एयसमओ । उक्क० आवलि० असंखे०भागो । अणुक्क० जह० अंतोमुहुत्तं । उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । णवरि सम्म०-सम्मामि० अणुक्क० जह० अंतोमु० । उक्क० पलिदो० असंखे० भागो-णवरि सम्म०-सम्मामि० अणुक्क० जह० एयस० । एवं जाव० ।

§ २०१. जहण्णए पयदं । दुविहो णि०-ओघे०-आदेसे० । ओघेण सव्वपयडी० जह० पदे०संका० जह० एयस० । उक्क० संखेज्जा समया । अजह० सव्वद्धा । एवं चदुसु गदीसु णवरि मणुसअपज्ज० अजह० अणुक्क०भंगो । णवरि सोलसक०-भय-दुगुंछा०अजह०

काल संख्यात समय है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्यकाल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणातक ले जाना चाहिए।

विशेषार्थ—यहाँ पर जिन मार्गणाओंकी संख्या संख्यातसे अधिक है उनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग प्रमाण है तथा जिनका परिमाण संख्यात है उनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है यह स्पष्ट ही है मात्र इसका एक अपवाद है वह यह कि आनतकल्पसे लेकर अपराजित विमान तकके देव यद्यपि परिमाणमें असंख्यात होते हैं फिर भी इनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय बतलाया है सो इसका कारण स्वामित्वसम्बन्धी विशेषता है। बात यह है कि इनमें गुणितकर्मांशिक मनुष्य आकर सब प्रकृतियोंका उत्कृष्ट प्रदेश संक्रम करते हैं, इसलिए इनमें सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय ही बनता है। सर्वत्र सब प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है यह स्पष्ट ही है। मात्र मनुष्य अपर्याप्तकोंका जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होनेसे इनमें सब प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंके जघन्य काल अन्तमुहूर्त और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। इसमें इतनी और विशेषता है कि यह सान्तर मार्गणा होनेसे इनमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीव एक समय तक रहें और दूसरे समयमें असंक्रामक हो जायँ यह सम्भव है, इसलिए यह काल एक समय कहा है।

§ २०१. जघन्यका प्रकरण है। निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे सब प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्यकाल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंके कालका भङ्ग अनुत्कृष्टके समान है। इतनी और विशेषता है कि

जह० खुद्दाभव० समऊणं । एवं जाव० ।

§ २०२. अंतरं दुविहं–जह० उक्क० । उक्कस्से पयदं । दुविहो णि०–ओघे० आदे० । ओघेण सव्वपयडी० उक्क० पदे०संका० जह० एयसमओ । उक्क० अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । अणुक्क० णत्थि अंतरं । एवं चदुसु, गदीसु । णवरि मणुसअपज्ज० अणुक्क० जह० एयस० । उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । एवं जाव० ।

§ २०३. एवं जहण्णयं पि णेदव्वं । णवरि ओघे तिण्णिसंजल० पुरिस० जह० एयसमओ उक्क० सेढीए असंखे०भागो । एवं मणुसतिए । णवरि मणुसिणी० पुरिस० उक्कस्सभंगो ।

सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए ।

विशेषार्थ—मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम भवके प्रथम समयमें होता है इसलिए इनमें इनके अजघन्य प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य काल एक समय कम क्षुल्लक भवग्रहणप्रमाण कहा है । शेष कथन स्पष्ट ही है ।

§ २०२. अन्तर दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उत्कृष्टका प्रकरण है । निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनप्रमाण है । अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है । इसी प्रकार चारों गतियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्य अपर्याप्तकोंमें अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए ।

§ २०३. इसी प्रकार जघन्य प्रदेशसंक्रामकोंके अन्तरकालको भी जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि ओघसे तीन संज्वलन और पुरुषवेदका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर श्रेणीके असंख्यातवें भागप्रमाण है । इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका भङ्ग उत्कृष्टके समान है ।

विशेषार्थ—ओघसे नाना जीव सब प्रकृतियोंके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक एक समयके अन्तरसे हों यह तो सम्भव है ही । साथ ही गुणित कर्मांशिक जीवोंके उत्कृष्ट अन्तरकालको देखते हुए वे अनन्तकाल तक न हों यह भी सम्भव है, इसलिए इनके उत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल कहा है । इनके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है यह स्पष्ट ही है । चारों गतियाँ निरन्तर मार्गणाएं होनेसे उनमें भी यह अन्तरकाल बन जाता है । इसलिए उनमें ओघके समान जाननेकी सूचना की है । मात्र मनुष्य अपर्याप्त सान्तर मार्गणा है, इसलिए उनमें उक्त मार्गणाके अन्तरकालके अनुसार सब प्रकृतियोंके अनुत्कृष्ट प्रदेशोंके संक्रामक जीवोंका जघन्य और उत्कृष्ट अन्तर काल कहा है । यहाँ पर उत्कृष्ट की अपेक्षा जिस प्रकार विचार किया है उसी प्रकार जघन्यकी अपेक्षा भी विचार कर लेना चाहिए । जो इसमें विशेषता है उसका अलगसे निर्देश कर दिया है ।

§ २०४. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

❀ अप्पाबहुअं ।

§ २०५. सुगममेदमहियारसंभालणवक्कं ।

❀ सव्वत्थोवो सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंकमो ।

§ २०६. कुदो ? सम्मत्तदव्वे अधापवत्तभागहारेण खंडिदे तत्थेयखंडपमाणत्तादो ।

❀ अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सओ पदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २०७. कुदो ? मिच्छत्तसयलदव्वादो आवलियाए असंखेज्जभागपडिभागेण परिहीणदव्वं घेत्तूण सव्वसंकमेणेदस्सुक्कस्ससामित्तविहाणादो । एत्थ गुणगारो गुणसंकम-भागहारपदुप्पण्णअधापवत्तभागहारमेत्तो ।

❀ कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २०८. कुदो ? दोण्हमेदेसिं सामित्तभेदाभावे वि पयडिविसेसमेत्तेण तत्तो एदस्साहियभावोवलद्धीदो ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

---

§ २०४. भाव सर्वत्र औदयिक भाव है ।

* अल्पबहुत्वका अधिकार है ।

§ २०५. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्रवचन सुगम है ।

* सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सबसे स्तोक है ।

§ २०६. क्योंकि सम्यक्त्वके द्रव्यको अधःप्रवृत्त भागहारसे भाजित करने पर वह उसमेंसे एक भागप्रमाण है ।

* उससे अप्रत्याख्यानमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २०७. क्योंकि मिथ्यात्वके समस्त द्रव्यसे आवलिके असंख्यातवें भागरूप प्रतिभागसे हीन द्रव्यको ग्रहण कर सर्वसंक्रमके आश्रयसे इसके उत्कृष्ट स्वामित्वका विधान किया गया है ।

* उससे अप्रत्याख्यान क्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २०८. क्योंकि इन दोनोंके स्वामीमें भेद नहीं होने पर भी प्रकृतिविशेषके कारण उसमें इसका अधिकपना उपलब्ध होता है ।

* उससे अप्रत्याख्यानमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यानलोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २०९. एदाणि सुत्ताणि पयडिविसेसमेत्तकारणपडिबद्धाणि सुगमाणि ।

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २१०. केत्तियमेत्तेण ? आवलि० असंखे०भागेण खंडिदय खंडमेत्तेण ।

❀ सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २११. मिच्छत्तं संकामिय पुणो जेण कालेण सम्मामिच्छत्तं सव्वसंकमेण संकामेदि तक्कालब्भंतरे णट्ठासेसदव्वं सम्मामिच्छत्तमूलदव्वादो असंखेज्जगुणहीणं ति कट्टु तत्थ तम्मि सोहिदे सुद्धसेसमेत्तेण विसेसाहियत्तमिदि वुत्तं होइ ।

❀ लोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो अणंतगुणो ।

§ २१२. कुदो ? देसघादित्तादो ।

---

* उससे प्रत्याख्यानमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानलोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धीमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धीक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धीमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धीलोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २०९. ये सूत्र प्रकृति विशेषमात्र कारणसे सम्बन्ध रखते हैं, इसलिए सुगम हैं ।

* उससे मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २१०. कितना अधिक है ? आवलीके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना अधिक है ।

* उससे सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २११. मिथ्यात्वको संक्रमण करके पुनः जितने कालमें सम्यग्मिथ्यात्वका सर्वसंक्रमके द्वारा संक्रमण करता है उस कालके भीतर नष्ट हुआ समस्त द्रव्य मिथ्यात्वके मूल द्रव्यसे असंख्यात गुणा हीन है ऐसा समझकर उसे उसमेंसे कम कर देने पर जो शेष बचे उतना विशेष अधिक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* उससे लोभसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ २१२. क्योंकि यह देशघाति प्रकृति है ।

❀ हस्से उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २१३. कुदो ? दोण्हं देसघादित्ताविसेसेवि अधापवत्तसव्वसंकमविसयसामित्त-भेदावलंबणेण तहाभावसिद्धीए विरोहाभावादो ।

❀ रदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २१४. पयडिविसेसेण ।

❀ इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंकमो संखेज्जगुणो ।

§ २१५. कुदो ? हस्सरइबंधगद्धादो संखेज्जगुणकुरवित्थिवेदबंधगद्धाए संचिदत्तादो ।

❀ सोगे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २१६. एत्थ वि अद्धाविसेसमस्सिऊण संखेज्जभागाहियत्तं दट्ठव्वं कुरवित्थिवेद-बंधगद्धादो णेरइयाणमरदिसोगबंधगद्धाए संखेज्जभागब्भहियत्तदंसणादो ।

❀ अरदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २१७. पयडिविसेसमेत्तमेव कारणमेत्थाणुगंतव्वं ।

❀ णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २१८. कुदो ? अद्धाविसेसमस्सिऊण हस्सरइबंधगद्धाए संखेज्जभागसंचयस्स अहियत्तुवलंभादो ।

* उससे हास्यका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २१३. क्योंकि देशघातिरूपसे दोनोंमें भेद नहीं है तो भी अधःप्रवृत्तसंक्रम और सर्व-संक्रमविषयक स्वामित्वरूप भेदका अवलम्बन करनेसे उस प्रकारकी सिद्धि होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

* उससे रतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २१४. इसका कारण प्रकृति विशेष है ।

* उससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ २१५. क्योंकि हास्य और रतिके बन्धककालसे संख्यातगुणे कुरुक्षेत्रसम्बन्धी स्त्रीवेदके बन्धककाल द्वारा इसका सञ्चय हुआ है ।

* उससे शोकका उत्कृष्ट प्रदेशसञ्चय विशेष अधिक है ।

§ २१६. यहां पर भी कालविशेषका आश्रय कर संख्यातभाग रूपसे अधिकता जाननी चाहिए, क्योंकि कुरुक्षेत्रमें स्त्रीवेदके बन्धककालसे नारकियोंमें अरति-शोकका बन्धककाल संख्यातवें भाग अधिक देखा जाता है ।

* उससे अरतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २१७. यहाँ पर प्रकृतिविशेष मात्र कारण जानना चाहिए ।

* उससे नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २१८. क्योंकि कालविशेषका आश्रय कर हास्य-रतिके बन्धककालसे संख्यात भागमें हुए सञ्चयमें विशेष अधिकता उपलब्ध होती है ।

※ दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २१६. कुदो ? धुवबंधित्तादो ।

※ भए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २२०. सुगममेदं पयडिविसेसमेत्तकारणपडिबद्धत्तादो ।

※ पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २२१. कुदो ? दोण्हं धुवबंधित्तेण समाणविसयसामित्तपडिलंभे वि पयडिविसेसमस्सिऊण पुव्विल्लादो एदस्स विसेसाहियत्तसिद्धीए विरोहाभावादो ।

※ कोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो संखेज्जगुणो ।

§ २२२. को गुणगारो ? एगरूवचउब्भागाहियाणि छरूवाणि । कुदो ? कसायचउब्भागेण सह सयलणोकसायभागस्स कोहसंजलणायारेण परिणदस्सुवलंभादो । एत्थ संदिट्ठीए मोहणीयसव्वदव्वमेत्तियमिदि घेत्तव्वं ४० । तदद्धमेत्तं कसायदव्वमेदं २० । णोकसायदव्वं पि एत्तियं चेव होइ २० । पुणो एदस्स पंचभागमेत्तो पुरिसवेदुक्कस्ससंकमो एत्तिओ होइ ४ । एदं छग्गुणं करिय चउब्भागाहिए कदे कोहसंजलणदव्वमेत्तियं होइ २५ ।

※ माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २२३. केत्तियमेत्तेण ? पंचमभागमेत्तेण । तस्स संदिट्ठी ३० ।

---

* उससे जुगुप्साका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २१९. क्योंकि यह ध्रुवबन्धिनी प्रकृति है ।

* उससे भयका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २२०. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि यह प्रकृतिविशेषमात्र कारणसे सम्बन्ध रखता है ।

* उससे पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २२१. क्योंकि दोनों ध्रुवबन्धी होनेसे इनका स्वामी समान विषयसे सम्बन्ध रखता है तो भी प्रकृति विशेषका आश्रय कर पूर्व प्रकृतिसे इसके विशेष अधिकके सिद्ध होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

* उससे क्रोध संज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ २२२. गुणकार क्या है ? एकका चतुर्थभाग अधिक छहरूप गुणकार है, क्योंकि कषायके चतुर्थभागके साथ नोकषायोंका समस्त भाग क्रोधसंज्वलनरूप से परिणत होता हुआ उपलब्ध होता है । यहाँ पर संदृष्टिके लिये मोहनीयका समस्त द्रव्य ४० ग्रहण करना चाहिए । उसका अर्धमात्र कषायका द्रव्य इतना है २० । नोकषायोंका द्रव्य भी इतना ही होता है २० । पुनः इसका पाँचवाँ भागमात्र पुरुषवेदका उत्कृष्ट संक्रम इतना होता है ४ । इसे छहसे गुणा करके उसने इसका चतुर्थभाग अधिक करने पर क्रोधसज्वलनका द्रव्य इतना होता है २५ ।

* उससे मानसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २२३. कितना अधिक है ? पाँचवाँ भागमात्र अधिक है । उसकी संदृष्टि ३० है ।

✽ मायासंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २२४. केत्तियमेत्तेण ? छब्भागमेत्तेण । तस्स संदिट्ठी ३५ ।

एवमोघप्पाबहुअमुक्कस्सं समत्तं ।

§ २२५. एत्तो आदेसप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तपबंधमाह—

✽ णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंकमो ।

§ २२६. कुदो ? मिच्छत्तादो गुणसंकमेण पडिच्छिददव्वमधापवत्तभागहारेण खंडिदेय-खंडपमाणत्तादो ।

✽ सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २२७. कुदो ? दोण्हमेयविसयसामित्तपडिलंभे वि सम्मत्तमूलदव्वादो सम्मा-मिच्छत्तमूलदव्वस्सासंखेज्जगुणत्तमस्सिऊण तहाभावसिद्धीदो ।

✽ अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २२८. दोण्हमधापवत्तसंकमविसयत्ते वि दव्वगयविसेसोवलंभादो । तं कधं ? मिच्छत्तदव्वं गुणसंकमभागहारेण खंडिदेयखंडमेत्तं सम्मामिच्छत्तदव्वं अधापवत्तभागहार पडिभागेण संकमदि । अपच्चक्खाणमाणदव्वं पुण मिच्छत्तादो पयडिविसेसहीणं होऊणा-धापवत्तसंकमेण उक्कस्सं जादमेदेण कारणेण तत्तो एदस्सासंखेज्जगुणत्तं सिद्धं ।

✽ उससे मायासंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २२४. कितना अधिक है ? छठवाँ भागमात्र अधिक है । उसकी संदृष्टि ३५ है ।

इस प्रकार उत्कृष्ट ओघ अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

§ २२५. आगे आदेश अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्र प्रबन्धको कहते हैं—

✽ नरकगतिमें सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सबसे स्तोक है ।

§ २२६. क्योंकि मिथ्यात्वके द्रव्यमें से गुणसंक्रमके द्वारा संक्रमित हुए द्रव्यको अधःप्रवृत्त-भागहारसे भाजित करके जो एक भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम है ।

✽ उससे सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २२७. क्योंकि दोनोंका स्वामित्व एक विषयको अवलम्बन करनेवाला है तो भी सम्यक्त्व के मूलद्रव्यसे सम्यग्मिथ्यात्वका मूल द्रव्य असंख्यात गुणा है, इसलिए उस प्रकारकी सिद्धि होती है ।

✽ उससे अप्रत्याख्यानमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २२८. क्योंकि ये दोनों अधःप्रवृत्तसंक्रमको विषय करते हैं तो भी द्रव्यगत विशेषता उपलब्ध होती है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—मिथ्यात्वके द्रव्यको गुणसंक्रम भागहारके द्वारा भाजित करके जो एक भाग लब्ध आवे उतना सम्यग्मिथ्यात्वका द्रव्य है जो अधःप्रवृत्तभागहारके प्रतिभागरूपसे संक्रमित होता है । परन्तु अप्रत्याख्यान मानका द्रव्य मिथ्यात्वसे प्रकृति विशेष रूपसे हीन होकर अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा उत्कृष्ट हुआ है । इस कारणसे उससे यह असंख्यात गुणा सिद्ध होता है ।

❀ कोधे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २२९. एत्थ सव्वत्थ पयडिविसेसमेत्तमेव विसेसाहियत्तकारणमणुगंतव्वं ।

❀ मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २३०. किं कारणं ? अधापवत्तसंकमादो पुव्विल्लादो गुणसंकमदव्वस्सेदस्सासंखेज्जगुणत्ते विसंवादाणुवलंभादो ।

❀ अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २३१. केण कारणेण ? सव्वसंकमेण पडिलद्धकम्मस्स भावत्तादो ।

❀ कोधे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

---

* उससे अप्रत्याख्यान क्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यानमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यानलोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानलोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २२९. यहाँ सर्वत्र प्रकृति विशेषमात्र ही विशेष अधिकपनेका कारण जानना चाहिए ।

* उससे मिथ्यात्वमें उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २३०. क्योंकि पहलेके अधःप्रवृत्तसंक्रमसे इस गुणसंक्रमद्रव्यके असंख्यातगुणे होनेमें विसंवाद नहीं पाया जाता ।

* उससे अनन्तानुबन्धीमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २३१. क्योंकि सर्वसंक्रमके द्वारा इसका उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त हुआ है ।

* उससे अनन्तानुबन्धीक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धीमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

❀ लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ २३२. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि।

❀ हस्से उक्कस्सपदेससंकमो अणंतगुणो।

§ २३३. कुदो? सव्वघादिपदेसग्गं पेक्खिऊण देसघादिपदेसग्गस्साणंतगुणत्ते संदेहाभावादो।

❀ रदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ २३४. पयडिविसेसेण।

❀ इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंकमो संखेज्जगुणो।

❀ सोगे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

❀ अरदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

❀ णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

❀ दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

❀ भए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

❀ पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ २३५. एत्थ सव्वत्थ ओघाणुसारेण कारणमणुगंतव्वं।

---

* उससे अनन्तानुबन्धीलोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ २३२. ये सूत्र सुगम हैं।

* उससे हास्यका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २३३. क्योंकि सर्वघाति द्रव्यको देखते हुए देशघाति द्रव्यके अनन्तगुणे होनेमें सन्देह नहीं है।

* उससे रतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ २३४. क्योंकि यह प्रकृति विशेष है।

* उससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है।

* उससे शोकका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे अरतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे जुगुप्साका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे भयका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे पुरुषवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ २३५. यहाँ पर सर्वत्र ओघके अनुसार कारण जानना चाहिए।

❀ माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २३६. केत्तियमेत्तो विसेसो ? पुरिसवेददव्वस्स सादिरेयचउब्भागमेत्तो ।

❀ कोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायासंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २३७. एदाणि सुत्ताणि पयडिविसेसमेत्तकारणपडिबद्धाणि सुबोहाणि । एवं णिरयोघो परूविदो । एवं चेव सत्तसु पुढवीसु; विसेसाभावादो ।

❀ एवं सेसासु गदीसु णेदव्वं ।

§ २३८. एदेण सुत्तेण सेसगदीणमप्पाबहुअं सूचिदं । तं जहा—तिरिक्खपंचिंदियतिरिक्खतिय देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति णिरयोघो । अणुदिसाणुत्तरदेवेसु एवं चेव । णवरि सम्मत्तसंकमो णत्थि; इत्थि-णवुंसयवेदाणं पि तत्थ विज्झादसंकमो चेवेत्ति विसेसमवहारिऊणप्पाबहुअमणुगंतव्वं । मणुसतिए ओघभंगो । पंचिं० तिरिक्ख-अपज्ज०-मणुसअपज्जत्तएसु पुरदो भण्णमाणेइंदियप्पाबहुअभंगो ।

* उससे मानसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २३६. विशेषका प्रमाण कितना है ? पुरुषवेदके द्रव्यका साधिक चतुर्थ भागमात्र विशेषका प्रमाण है ।

* उससे क्रोधसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे मायासंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे लोभसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २३७. ये सूत्र प्रकृतिविशेषमात्र कारणसे प्रतिबद्ध हैं, इसलिए सुगम हैं । इस प्रकार सामान्यसे नारकियोंमे उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अल्पबहुत्वका कथन किया । इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए, क्योंकि उससे यहाँ पर अन्य कोई विशेषता नहीं है ।

* इसी प्रकार शेष गतियोंमें ले जाना चाहिए ।

§ २३८ इस सूत्र द्वारा शेष गतियोंमें अल्पबहुत्वका सूचन किया है । यथा—सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्यदेव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें सामान्य नारकियोंके समान भङ्ग है । अनुदिश और अनुत्तर देवोंमें इसी प्रकार जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्वका संक्रम नहीं है । तथा वहाँ पर स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भी विध्यातसंक्रम ही है । इस प्रकार इस विशेषताको जानकर अल्पबहुत्व समझ लेना चाहिए । मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें आगे कहे जाने वाले एकेन्द्रिय सम्बन्धी अल्पबहुत्वके समान भङ्ग है ।

§ २३९. संपहि सेसमग्गणाणं देसामासयभावेणिंदियमग्गणावयवभूदेयिंदिएसु पयदप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तपबंधमाढवेइ ।

❀ **तदो एइंदिएसु सव्वत्थोवो सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंकमो ।**

§ २४०. तदो गइमग्गणप्पाबहुअविहासणादो अणंतरमेइंदिएसु अप्पाबहुअगवेसणे कीरमाणे तत्थ सव्वत्थोवो सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंकमो त्ति वुत्तं होइ ।

❀ **सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।**

§ २४१. कुदो ? दोण्हमेदेसिं अधापवत्तेण सामित्तपडिलंभाविसेसे वि दव्वविसेसमस्सिऊण तत्तो एदस्सासंखेज्जगुणब्भहियकमेणावट्ठाणदंसणादो ।

❀ **अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।**

§ २४२. एत्थकारणपरूवणाए णारयभंगो ।

❀ **कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।**

❀ **मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।**

❀ **लोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।**

❀ **पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेशसंकमो विसेसाहिओ ।**

❀ **कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।**

---

§ २३९. अब शेष मार्गणाओंके देशामर्षकभावसे इन्द्रियमार्गणाके अवयवभूत एकेन्द्रियोंमें प्रकृत अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धका आलोडन करते हैं—

* **इसके बाद एकेन्द्रियोंमें सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सबसे स्तोक है ।**

§ २४०. इसके बाद अर्थात् गतिमार्गणामें अल्पबहुत्वका व्याख्यान करनेके बाद एकेन्द्रियोंमें अल्पबहुत्वकी गवेषणा करने पर वहाँ सम्यक्त्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम सबसे स्तोक है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* **उससे सम्यग्मिथ्यात्वका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।**

§ २४१. क्योंकि इन दोनोंके अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा स्वामित्वके प्राप्त करनेमें विशेषता न होने पर भी द्रव्यविशेषकी अपेक्षा उससे इसका असंख्यातगुणे अधिकरूपसे अवस्थान देखा जाता है ।

* **उससे अप्रत्याख्यानमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।**

§ २४२. यहाँ पर कारणका कथन करनेमें नारकियोंके समान कारण जानना चाहिए ।

* **उससे अप्रत्याख्यानक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।**

* **उससे अप्रत्याख्यानमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।**

* **उससे अप्रत्याख्यानलोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।**

* **उससे प्रत्याख्यानमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।**

* **उससे प्रत्याख्यानक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।**

❀ मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ हस्से उक्कस्सपदेससंकमो अणंतगुणो ।
❀ रदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंकमो संखेज्जगुणो ।
❀ सोगे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ अरदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ भए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।
❀ पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

---

* उससे प्रत्याख्यानमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे प्रत्याख्यानलोभका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे अनन्तानुबन्धीमानका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उ..से अनन्तानुबन्धीक्रोधका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे अनन्तानुबन्धीमायाका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे अनन्तानुबन्धीलोभका उत्कृष्ट प्रदेससंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे हास्यका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अनन्तगुणा है ।
* उससे रतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे स्त्रीवेदका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे शोकका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे अरतिका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे नपुंसकवेदका उत्कृष्ट प्रदेससंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे जुगुप्साका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे भयका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।
* उससे पुरुषवेदको उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

❀ माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ कोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायासंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २४३. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । एवं जाव० तदो उक्कस्सपदेसप्पाबहुअं समत्तं ।

❀ एत्तो जहण्णपदेससंकमदंडओ ।

§ २४४. एत्तो उवरि जहण्णपदेससंकमपडिबद्धप्पाबहुअ-दंडओ कायव्वो त्ति अहियारसंभालणवक्कमेदं ।

❀ सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णपदेससंकमो ।

§ २४५. सम्मामिच्छत्तादिसेससव्वपयडीणं जहण्णपदेससंकमेहितो सम्मत्तजहण्ण-पदेससंकमो थोवयरो त्ति सुत्तत्थो ।

❀ सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २४६. कुदो ? दोण्हमेदेसिं सामित्तभेदाभावे वि सम्मत्तमूलदव्वादो सम्मामिच्छत्त-मूलदव्वस्सासंखेज्जगुणक्कमेणावट्ठाणदंसणादो । सम्मत्ते उव्वेल्लिदे जो सम्मामिच्छत्तुव्वे-ल्लणकालो तस्स एयगुणहाणीए असंखेज्जदिभागपमाणत्तब्भुवगमादो च ।

* उससे मानसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे क्रोधसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे मायासंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे लोभसंज्वलनका उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २४३. ये सूत्र सुगम हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए । इस प्रकार उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

* इससे आगे जघन्य प्रदेशसंक्रम दण्डकका अधिकार है ।

§ २४४. इससे आगे जघन्य प्रदेशसंक्रमसे सम्बन्ध रखनेवाला अल्पबहुत्वदण्डक करना चाहिए । इस प्रकार अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र वचन है ।

* सम्यक्त्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम सबसे स्तोक है ।

§ २४५. सम्यग्मिथ्यात्व आदि शेष सब प्रकृतियोंके जघन्य प्रदेशसंक्रमसे सम्यक्त्वका जघन्य प्रदेश संक्रम स्तोक है यह इस सूत्रका अर्थ है ।

* उससे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २४६. क्योंकि इन दोनोंके स्वामित्वमें भेद नहीं होने पर भी सम्यक्त्वके मूल द्रव्यसे सम्यग्मिथ्यात्वके मूलद्रव्यका असंख्यातगुणित क्रमसे अवस्थान देखा जाता है । तथा सम्यक्त्वकी उद्वेलना होने पर जो सम्यग्मिथ्यात्वका उद्वेलनाकाल रहता है उसकी एक गुणहानि असंख्यातवें भागप्रमाण स्वीकार की गई है । अर्थात् वह काल एक गुणहानिके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

❀ अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २४७. किं कारणं ? विसंजोयणापुव्वसंजोगणवकबंधसमयपबद्धाणमंतोमुहुत्त-मेत्ताणमुवरि सेसकसायाणमधापवत्तसंकमसुकड्डणापडिभागेण पडिच्छिय सम्मत्तपडिलंभेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिहिंडिय तप्पज्जवसाणे विसंजोयणाए उवट्ठिदस्स अधापवत्त-करणचरिमसमए विज्झादसंकमेणेदस्स जहण्णसामित्तं जादं। सम्मामिच्छत्तस्स पुण बे छावट्ठिसागरोवमाणि सागरोवमपुधत्तं च परिभमिय दीहुव्वेल्लणकालेण उव्वेल्लेमाणस्स दुचरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए उव्वेल्लणभागहारेण जहण्णं जादं। तदो उव्वेल्लण-भागहारमाहप्पेणण्णोण्णब्भत्थरासिमाहप्पेण च सम्मामिच्छत्तदव्वादो एदमसंखेज्ज-गुणं जादं ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २४८. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

❀ मिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २४९. किं कारणं; अणंताणुबंधीणं विसंजोयणापुव्वसंजोगेणणवकबंधस्सुवरि अधा-पवत्तभागहारेण पडिच्छिदसेसकसायदव्वस्सुकड्डणापडिभागेण बेछावट्ठिसागरोवमगालणाए

*** उससे अनन्तानुबन्धीमानका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यात गुणा है ।**

§ २४७. क्योंकि विसंयोजनापूर्वक संयोग होने पर अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर जो नवकबन्धके समयप्रबद्ध प्राप्त होते हैं उनके ऊपर शेष कषायोंके अधःप्रवृत्तसंक्रमको उत्कर्षणके प्रतिभागरूपसे निक्षिप्त करके सम्यक्त्वकी प्राप्ति द्वारा दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करके उसके अन्तमें विसंयोजनाके लिए उपस्थित हुए जीवके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विध्यातसंक्रमके द्वारा इसका जघन्य स्वामित्व हुआ है। परन्तु सम्यग्मिथ्यात्वका दो छयासठ सागर और सागरपृथक्त्व काल तक परिभ्रमण करके दीर्घ उद्वेलनाकालके द्वारा उद्वेलना करनेवाले जीवके द्विचरम स्थिति-काण्डककी अन्तिम फालिके प्राप्त होने पर उद्वेलनाभागहारके आश्रयसे जघन्य स्वामित्व प्राप्त हुआ है, इसलिए उद्वेलनाभागहारके माहात्म्यवश और अन्योन्याभ्यस्तराशिके माहात्म्यवश सम्यग्मि-थ्यात्वके द्रव्यसे इसका द्रव्य असंख्यातगुणा हो गया है ।

*** उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।**

*** उससे अनन्तानुबन्धीमायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।**

*** उससे अनन्तानुबन्धीलोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।**

§ २४८. ये सूत्र सुगम हैं ।

*** उससे मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।**

§ २४९. क्योंकि अनन्तानुबन्धियोंका विसंयोजनापूर्वक संयोगद्वारा नवकबन्धके ऊपर अधः-प्रवृत्तभागहार द्वारा प्राप्त हुए शेष कषायोंके द्रव्यके उत्कर्षण-अपकर्षणभागहाररूप प्रतिभागके

जहण्णसामित्तं जादमेदस्स पुण अधापवत्तभागहारेण विणा कम्मट्ठिदिजहण्णसंचयादो उक्कड्डिददव्वस्स सादिरेयबेछावट्ठिसागरोवमाणमधट्ठिदिगालणाए जहण्णभावो संजादो तेण कारणेणाणंताणुबंधिलोभजहण्णपदेससंकमादो मिच्छत्तजहण्णपदेससंकमो असंखेज्ज-गुणो णेदं घडदे; मिच्छत्तस्सेवाणंताणुबंधीणं बेछावट्ठिसागरोवमबहिब्भूदसागरोवम-पुधत्तमेत्तकालगालणाभावादो। ण, सागरोवमपुधत्तकालपडिबद्धण्णोण्णब्भत्थरासीए अधा-पवत्तभागहारादो असंखेज्जगुणहीणत्तावलंबणेण पयदप्पाबहुअसमत्थाणं वि जुत्तिमंतयं। उव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागण्णोण्णब्भत्थरासीदो वि असंखेज्जगुणहीणस्स तस्स सागरोवमपुधत्तपडिबद्धण्णोण्णब्भत्थरासीदो असंखेज्जगुणत्तविरोहादो। तम्हा जहावुत्तेण णाएण हेट्ठुवरि णिवदेयव्वमेदेणप्पाबहुएणे त्ति ? ण एस दोसो, अणंताणुबंधीणं मिच्छत्त-भंगेण सागरोवमपुधत्तं गालिय विसंजोयणाए अब्भुट्ठिदम्मि जहण्णसामित्तावलंबणादो। ण सागरोवमपुधत्तपरिब्भमणट्ठं बेछावट्ठीणमवसाणे मिच्छत्तमुवगमंतस्स सेसकसाएहिंतो अधापवत्तसंकमेण बहुदव्वपडिच्छणमेत्थासंकणिज्जं; तस्स वयाणुसारित्तब्भुवगमादो। ण सामित्तसुत्तेण सह विरोहो वि; तत्थ सागरोवमपुधत्तणिद्देसाभावे वि एदम्हादो चेव तदत्थित्तसमत्थणादो।

आश्रयसे दो छयासठ सागर काल तक गलने पर जघन्य स्वामित्व प्राप्त हुआ है। परन्तु इसका अधःप्रवृत्त भागहारके बिना कर्मस्थितिके भीतर हुए जघन्यसंचयमेंसे उत्कर्षणको प्राप्त हुए द्रव्यको साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण काल तक अधःस्थितिके द्वारा गलाने पर जघन्यपना प्राप्त हुआ है। इस कारण अनन्तानुबन्धीलोभके जघन्य प्रदेशसंक्रमसे मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है।

शंका—यह अल्पबहुत्व घटित नहीं होता, क्योंकि मिथ्यात्वके समान अनन्तानुबन्धियोंका दो छयासठसागरके बाहर सागरपृथक्त्व काल तक गलन नहीं होता ? यदि सागरपृथक्त्वकालसे सम्बन्ध रखनेवाली अन्योन्याभ्यस्त राशि अधःप्रवृत्तभागहारसे असंख्यातगुणी हीन है इस बातका अवलम्बन करनेसे प्रकृत अल्पबहुत्वका समर्थन किया जाय सो ऐसा करना भी युक्तियुक्त नहीं है, क्योंकि उद्वेलनाकालके भीतर प्राप्त हुई नानागुणहानियोंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे भी असंख्यात-गुणेहीन उसके सागरपृथक्त्वकालसे प्रतिबद्ध अन्योन्याभ्यस्त राशिसे असंख्यातगुणे होनेका विरोध है। इसलिए यथोक्त न्यायके अनुसार इस अल्पबहुत्वको नीचे-ऊपर निक्षिप्त करना चाहिए ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि मिथ्यात्वके समान सागरपृथक्त्व काल तक गलाकर अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजनाके लिए उद्यत होने पर जघन्य स्वामित्वका अवलम्बन किया है। यदि कोई ऐसी आशंका करे कि सागरपृथक्त्व काल तक परिभ्रमण करनेके लिए दो छयासठ सागर कालके अन्तमें मिथ्यात्वको प्राप्त हुए जीवके शेष कषायोंमें से अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा बहुत द्रव्य संक्रमित हो जाता है सो यहाँ पर ऐसी आशंका करना भी ठीक नहीं है, क्योंकि आयको व्ययके अनुसार स्वीकार किया है। इससे स्वामित्व सूत्रके साथ विरोध आता है यह कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि स्वामित्व सूत्रमें यद्यपि सागरपृथक्त्वका निर्देश नहीं है तो भी इससे ही उस के अस्तित्वका समर्थन होता है।

❀ अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २५०. कुदो ? बेछावट्ठिसागरोवमपरिब्भमणेण विणा लद्धजहण्णभावत्तादो ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २५१. एत्थ सव्वत्थ विसेसपमाणमावलि० असंखे० भागेण खंडिदेयखंडमेत्तं ।

❀ णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंकमो अणंतगुणो ।

§ २५२. जइवि तिपलिदोवमाहियवेछावट्ठिसागरोवमाणि परिगालिय णवुंसयवेदस्स जहण्णसामित्तं जादं, तो वि पुव्विल्लदव्वादो अणंतगुणमेव णवुंसयवेददव्वं होइ; देसघाइ पडिभागियत्तादो ।

❀ इत्थिवेदे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

---

* उससे अप्रत्याख्यानमानका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २५०. क्योंकि दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण किये बिना इसका जघन्यपना प्राप्त होता है ।

* उससे अप्रत्याख्यानक्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यानमायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यानलोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानमानका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानक्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानमायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यानलोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २५१. यहाँ पर सर्वत्र विशेष अधिकका प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित कर जो एक भाग लब्ध आवे उतना है ।

* उससे नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ २५२. यद्यपि तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागरको गलाकर नपुंसकवेदका जघन्य स्वामित्व उत्पन्न हुआ है तो भी पहलेके द्रव्यसे नपुंसकवेदका द्रव्य अनन्तगुणा ही है, क्योंकि प्रतिभाग होकर इसे देशघातिका द्रव्य मिला है ।

* उससे स्त्रीवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यात गुणा है ।

§ २५३. कुदो ? णवुंसयवेदजहण्णसामियस्से व इत्थिवेदजहण्णसामियस्स तिसु पलिदोवमेसु परिब्भमणाभावादो।

❀ सोगे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो।

§ २५४. कुदो ? इत्थिवेदजहण्णसामियस्सेव पयदजहण्णसामियस्स वेछावट्ठि-सागरोवमाणमपरिब्भमणादो।

❀ अरदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ २५५. कुदो ? पयडिविसेसेणेव सव्वकालमेदेसिमण्णोण्णं पेक्खिऊण सव्वत्थ विसेसहीणाहियभावेणावट्ठाणदंसणादो।

❀ कोहसंजलणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो

§ २५६. कुदो ? विज्झादभागहारोवट्टिददिवड्ढगुणहाणिमेत्तेइन्दियसमयपबद्धेहिंतो अधापवत्तभागहारोवट्टिदपंचिंदियसमयपबद्धस्सासंखेज्जगुणत्तुवलंभादो।

❀ माणसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ २५७. किं कारणं ? कोहसंजलणदव्वमेयसमयपबद्धस्स चउब्भागमेत्तं। माणसंजलण-दव्वं पुण तत्तिभागमेत्तं, तेण विसेसाहियं जादं।

❀ पुरिसवेदे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ २५८. कुदो ? समयपबद्धदुभागपमाणत्तादो।

---

§ २५३. क्योंकि नपुंसकवेदके स्वामीके समान स्त्रीवेदका स्वामी तीन पल्यके भीतर परि-भ्रमण नहीं करता।

* उससे शोकका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है।

§ २५४. क्योंकि स्त्रीवेदके जघन्य स्वामीके समान प्रकृत जघन्य स्वामी दो छयासठ सागर कालके भीतर परिभ्रमण नहीं करता।

* उससे अरतिका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ २५५. क्योंकि प्रकृतिविशेषके कारण ही सर्वदा इनका एक दूसरेको देखते हुए सर्वत्र विशेषहीन अधिक रूपसे अवस्थान देखा जाता है।

* उससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है।

§ २५६. क्योंकि विध्यातभागहारसे भाजित डेढगुणहानिमात्र एकेन्द्रिय सम्बन्धी समयप्रबद्धोंसे अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित पञ्चेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्ध असंख्यातगुणे उपलब्ध होते हैं।

* उससे मानसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ २५७. क्योंकि क्रोधसंज्वलनका द्रव्य एक समय प्रबद्धके चौथे भागप्रमाण है। परन्तु मानसंज्वलनका द्रव्य उसके तृतीय भागप्रमाण है, इसलिए यह उससे विशेष अधिक है।

* उससे पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ २५८. क्योंकि यह समयप्रबद्धके द्वितीय भागप्रमाण है।

❀ मायासंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २५६. कुदो ? दोण्हं पि समयपबद्धमाणत्ताविसेसे वि णोकसायभागादो कसाय-भागस्स पयडिविसेसमेत्तेणाहियत्तदंसणादो ।

❀ हस्से जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २६०. कुदो ? अधापवत्तभागहारो वड्ढिददिवड्ढगुणहाणिमेत्तेइंदियसमयपबद्धेसु असंखेज्जाणं पंचिंदियसमयपबद्धाणमुवलंभादो ।

❀ रदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २६१. केत्तियमेत्तेण ? पयडिविसेसमेत्तेण ।

❀ दुगुंछाए जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो ।

§ २६२. कुदो ? हस्सरदिपडिवक्खबंधकाले वि दुगुंछाए बंधसंभवादो ।

❀ भए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २६३. कुदो ? पयडिविसेसादो ।

❀ लोभसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २६४. केत्तियमेत्तेण ? चउब्भागमेत्तेण। कुदो ? णोकसायपंचभागमेत्तेण भयदव्वेण कसायचउब्भागमेत्तलोहसंजलणजहण्णसंकमदव्वे ओवट्टिदे सचउब्भागेगरूवागमदंसणादो ।

* उससे मायासंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २५६. क्योंकि दोनोंके ही समयप्रबद्धोंके प्रमाणमें विशेषताके नहीं होने पर भी नोकषायके भागसे कषायका भाग प्रकृतिविशेष होनेके कारण अधिक देखा जाता है ।

* उससे हास्यका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २६०. क्योंकि अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित डेढ़ गुणहानिप्रमाण एकेन्द्रिय सम्बन्धी समयप्रबद्धोंमें असंख्यात पञ्चेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्ध उपलब्ध होते हैं ।

* उससे रतिका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २६१. कितना अधिक है ? प्रकृति विशेषमात्र अधिक है ।

* उससे जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ २६२. क्योंकि हास्य और रतिकी प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके बन्धके समय भी जुगुप्साका बन्ध सम्भव है ।

* उससे भयका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २६३. क्योंकि यह प्रकृति विशेष है ।

* उससे लोभसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २६४. कितना अधिक है ? चतुर्थ भागमात्र अधिक है, क्योंकि नोकषायोंके पाँचवें भागमात्र भयके द्रव्यसे कषायोंके चतुर्थ भागमात्र लोभसंज्वलनके जघन्य संक्रमद्रव्यको भाजित करने पर चतुर्थभागके साथ एक पूर्णाङ्ककी प्राप्ति देखी जाती है ($\frac{1}{4} \div \frac{1}{5} = \frac{1}{4} \times \frac{5}{1} = \frac{5}{4} = 1\frac{1}{4}$) ।

§ २६५. एवमोघप्पाबहुअं परूविय संपहि आदेसपरूवणाए णिरयगइपडिबद्धमप्पाबहुअं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ।

❀ णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णपदेससंकमो।

§ २६६. सुगमं।

❀ सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो।

§ २६७. एदंपि सुगमं, ओघम्मि परूविदकारणत्तादो।

❀ अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो।

§ २६८. एत्थ वि कारणमोघपरूवणाणुसारेण वत्तव्वं।

❀ कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

❀ लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ २६९. एदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि सुबोहाणि।

❀ मिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो।

§ २७०. दोण्हमेदेसि जइवि थोवूण तेत्तीससागरोवममेत्तगोवुच्छागालणेण सम्माइट्ठिचरिमसमयम्मि विज्झादसंकमेण जहण्णसामित्तमविसिट्ठं तो वि पुव्विल्लादो एदस्सासंखेज्जगुणत्तमविरुद्धं, अधापवत्तभागहारसंभवासंभवं कय विसेसोवत्तीदो।

§ २६५. इस प्रकार ओघ अल्पबहुत्वका कथन करके अब आदेश अल्पबहुत्वका कथन करने पर नरकगतिमें सम्बद्ध अल्पबहुत्वको करते हुए आगेका सूत्रप्रबन्ध कहते हैं—

*** नरकगतिमें सम्यक्त्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम सबसे स्तोक है।**

§ २६६. यह सूत्र सुगम है।

*** उससे सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है।**

§ २६७. यह भी सुगम है, क्योंकि ओघप्ररूपणाके समय इसके कारणका कथन कर आये हैं।

*** उससे अनन्तानुबन्धीमानका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है।**

§ २६८. यहाँ पर भी कारणका कथन ओघप्ररूपणाके अनुसार कहना चाहिए।

*** उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।**

*** उससे अनन्तानुबन्धी मायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।**

*** उससे अनन्तानुबन्धी लोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।**

§ २६९. ये तीनों ही सूत्र सुबोध हैं।

*** उससे मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है।**

§ २७०. इन दोनोंका ही यद्यपि कुछ कम तेतीस सागरप्रमाण गोपुच्छाओंके गलानेसे सम्यग्दृष्टिके अन्तिम समयमें विध्यातसंक्रमके द्वारा जघन्य स्वामित्व अवस्थित है तो भी पहलेसे यह असंख्यातगुणा है इसमें कोई विरोध नहीं आता, क्योंकि अधःप्रवृत्तभागहारकी सम्भावना और असम्भावनाके निमित्तसे यह विशेषता बन जाती है।

* अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २७१. किं कारणं ? खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण णेरइएसुप्पण्णपढमसमए अधापवत्तसंकमेणेदस्स सामित्तावलंबणादो ।

* कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

* मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

* लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

* पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

* कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

* मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

* लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २७२. एत्थ सव्वत्थ विसेसपमाणमावलि० असंखे०भागपडिभागियमिदि घेत्तव्वं ।

* इत्थिवेदे जहण्णपदेससंकमो अणंतगुणो ।

§ २७३. जइ वि सम्मत्तगुणपाहम्मेण इत्थीवेदस्स बंधवोच्छेदं कादूण तेत्तीससागरोवमाणि देसूणाणि गालिय विज्झादसंकमेण जहण्णसामित्तं जादं । तो वि देसघादिमाहप्पेणाणंतगुणत्तमेदस्स पुव्विल्लादो ण विरुज्झदे ।

* उससे अप्रत्याख्यानमानका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २७१. क्योंकि क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे आकर नारकियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा इसके स्वामित्वका अवलम्बन किया गया है ।

* उससे अप्रत्याख्यान क्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यान मायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अप्रत्याख्यान लोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यान मानका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यान क्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यान मायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे प्रत्याख्यान लोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २७२. यहाँ पर सर्वत्र विशेष का प्रमाण आवलिके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो लब्ध आवे उतना लेना चाहिए ।

* उससे स्त्रीवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम अनन्तगुणा है ।

§ २७३. यद्यपि सम्यक्त्वगुणके माहात्म्यवश स्त्रीवेदकी बन्धव्युच्छित्ति करके उसके साथ कुछ कम तेतीस सागर गलाकर विध्यातसंक्रमके द्वारा जघन्य स्वामित्व हुआ है तथापि देशघाति होनेके माहात्म्यवश इसका पूर्व प्रकृतिके प्रदेशसंक्रमसे अनन्तगुणा होना विरोधको नहीं प्राप्त होता ।

❀ णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो ।

§ २७४. कुदो ? बंधगद्धावसेणेदस्स तत्तो संखे०गुणत्तं पडि विरोहाभावादो ।

❀ पुरिसवेदे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २७५. कुदो ? खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण णेरइएसुप्पण्णस्स पडिवक्ख-बंधगद्धामेत्तगलणेण पुरिसवेदस्स अधापवत्तसंकमणिबंधणजहण्णसामित्तावलंभादो ।

❀ हस्से जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो ।

§ २७६. कुदो ? पुरिसवेदबंधगद्धादो हस्सरदिबंधगद्धाए संखेज्जगुणकमेणावट्ठाण-दंसणादो ।

❀ रदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २७७. पयडि विसेसमेत्तेण ।

❀ सोगे जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगु० ।

§ २७८. कुदो ? बंधगद्धापडिबद्धगुणगारस्स तहाभावोवलंभादो ।

❀ अरदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २७९. केत्तियमेत्तेण ? पयडिविसेसमेत्तेण ।

❀ दुगुंछाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २८०. केत्तियमेत्तेण हस्सरदिबंधगद्धा पडिबद्धसंखेज्जदिभागमेत्तेण ।

* उससे नपुंसकवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ २७४. क्योंकि बन्धककालके वशसे इसके उससे संख्यातगुणे होनेमें विरोध नहीं आता ।

* उससे पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २७५. क्योंकि क्षपितकर्मांशिक लक्षणसे आकर नारकियोंमें उत्पन्न हुए जीवके प्रतिपक्ष बन्धककालके गलनेसे पुरुषवेदके अधःप्रवृत्तसंक्रम निमित्तक जघन्य स्वामित्व उपलब्ध होता है ।

* उससे हास्यका जघन्य प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ २७६. क्योंकि पुरुषवेदके बन्धक कालसे हास्य-रतिके बन्धककालका संख्यात गुणित रूपसे अवस्थान देखा जाता है ।

* उससे रतिका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २७७. क्योंकि इसका कारण प्रकृति विशेषमात्र है ।

* उससे शोकका जघन्य प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ २७८. बन्धक कालमें सम्बन्ध रखनेवाले गुणकारकी इस प्रकारसे उपलब्धि होती है ।

* उससे अरतिका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २७९. कितना अधिक है ? प्रकृति विशेषमात्र अधिक है ।

* उससे जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २८०. कितना अधिक है ? हास्य-रतिके बन्धककालके संख्यातवें भाग अधिक है ।

❀ भए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २८१. केत्तियमेत्तेण ? पयडिविसेसमेत्तेण ।

❀ माणसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २८२. केत्तियमेत्तेण ? चउब्भागमेत्तेण ।

❀ कोहसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायासंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोहसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २८३. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । एवं णिरयोघजहण्णप्पाबहुअं गयं । एसो चेव अप्पाबहुआलावो सत्तसु पुढवीसु अणुगंतव्वो, विसेसाभावादो ।

❀ जहा णिरयगईए तहा तिरिक्खगईए ।

§ २८४. सुगममेदमप्पणासुत्तमप्पाबहुआलावगयविसेसाभावमस्सिऊण पयट्टत्तादो । तदो णेरइयगईए अप्पाबहुगमणूणाहियं तिरिक्खगईए वि जोजेयव्वं । एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए मणुसतिए ओघभंगो । णवरि मणुस्सिणीसु मायासंजलणस्सुवरि पुरिसवेदजहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो । तदो हस्से जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो । सेसमोघभंगेण णेदव्वं । पंचिं०तिरि०अपज्ज० मणुसअपज्जत्तएसु एइंदियभंगेणप्पाबहुअमुवरि कस्सामो ।

---

* उससे भयका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २८१. कितना अधिक है ? प्रकृतिविशेषमात्र अधिक है ।

* उससे मानसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २८२. कितना मात्र अधिक है ? चतुर्थभागमात्र अधिक है ।

* उससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे मायासंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे लोभसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २८३. ये सूत्र सुगम हैं । इस प्रकार सामान्य नारकियोंका जघन्य अल्पबहुत्व समाप्त हुआ । यही अल्पबहुत्वका कथन सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है ।

* जिस प्रकार नरकगतिमें है उसी प्रकार तिर्यञ्चगतिमें जानना चाहिए ।

§ २८४. यह अर्पणासूत्र सुगम है, क्योंकि अल्पबहुत्वगत विशेषता नहीं है इस बातका आश्रय लेकर इस सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है । इसलिए नरकगतिमें जो अल्पबहुत्व है उसे न्यूनाधिकताके बिना तिर्यञ्चगतिमें भी लगाना चाहिए । इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए । मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भंग है । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें मायासंज्वलनके ऊपर पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है । उससे हास्यका जघन्य प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है । शेष ओघभंगके साथ ले जाना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें अल्पबहुत्व एकेन्द्रियोंके समान आगे करेंगे । यतः यह प्ररूपणा तिर्यञ्चगति सामान्य

जेणेसा तिरिक्खगइसामण्णप्पणा देसामासिया तेणेसो सव्वो अत्थविसेसो एत्थंतब्भूदो त्ति दट्ठव्वो। संपहि देवगईए णाणत्तपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** देवगईए णाणत्तं; णवुंसयवेदादो इत्थिवेदो असंखेज्जगुणो।**

§ २८५. देवगईए वि णिरयगईभंगेणप्पाबहुअं णेदव्वं। णाणत्तं पुण णवुंसयवेद-जहण्णपदेससंकमादो उवरि इत्थिवेदजहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो कायव्वो त्ति। णिरयगईए तिरिक्खगईए च इत्थिवेदादो णवुंसयवेदस्स संखेज्जगुणत्तोवलंभादो। किं कारणमेदं णाणत्तमिदि चे वुच्चदे-णवुंसयवेदस्स तिपलिदोवमिएसु गलिदसेसस्स बेछावट्ठि-सागरोवमपरिब्भमणेण देवगईए जहण्णसामित्तं। इत्थिवेदस्स पुण तिपलिदोवमिएसु अणु-प्पाइय ओघभंगेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि गालाविय जहण्णसामित्तविहाणमेदेण कारणेण णाणत्तमेदं णादव्वं।

§ २८६. एवं गइमग्गणाए अप्पाबहुअविणिण्णयं कादूण संपहि सेसमग्गणाणमुव-लक्खणभावेणेइंदिएसु पयदप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमणुवत्तइस्सामो।

*** एइंदिएसु सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णपदेससंकमो।**

§ २८७. सुगमं।

की मुख्यतासे देशामर्षक है, इसलिए यह सब अर्थ विशेष इसमें अन्तर्भूत है ऐसा जानना चाहिए। अब देवगतिमें नानात्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** देवगतिमें इतना भेद है कि नपुंसकवेदसे स्त्रीवेद असंख्यातगुणा है।**

§ २८५. देवगतिमें भी नरकगतिके समान अल्पबहुत्व जानना चाहिए। परन्तु इतना भेद है कि नपुंसकवेदके जघन्य प्रदेशसंक्रमसे आगे स्त्रीवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा करना चाहिए, क्योंकि नरकगति और तिर्यञ्चगतिमें स्त्रीवेदसे नपुंसकवेद संख्यातगुणा उपलब्ध होता है।

शंका—नानात्वका क्या कारण है?

समाधान—कहते हैं—नपुंसकवेदका तीन पल्यकी आयुवालोंमें गलकर जो अन्तमें शेष बचता है उसके साथ दो छयासठ सागर कालके भीतर परिभ्रमण करनेके अनन्तर देवगतिमें जघन्य स्वामित्व प्राप्त होता है। परन्तु स्त्रीवेदका तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न न कराकर ओघके समान दो छयासठ सागर काल गला कर जघन्य स्वामित्व कहा गया है। इस कारणसे अल्पबहुत्व सम्बन्धी यह भेद जान लेना चाहिए।

§ २८६. इस प्रकार गतिमार्गणामें अल्पबहुत्वका निर्णय करके अब शेषमार्गणाओंके उप-लक्षणरूपसे एकेन्द्रियोंमें प्रकृतअल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको बतलाते हैं—

*** एकेन्द्रियोंमें सम्यक्त्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम सबसे स्तोक है।**

§ २८७. यह सूत्र सुगम है।

❀ सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २८८. सुगममेदमोघादो अविसिट्ठकारणपरूवणत्तादो ।

❀ अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २८९. कुदो ? अधापवत्तभागहारवग्गेण खंडिददिवड्ढगुणहाणिमेत्तजहण्ण-समयपबद्धपमाणत्तादो । तं पि कुदो ? विसंजोयणापुव्वसंजोगेण सेसकसाएहिंतो अधापवत्तसंकमेण पडिच्छिदखविदकम्मंसियदव्वेण सह समयाविरोहेण सव्वलहुमेइंदिएसुप्पण्णस्स पढमसमए अधापवत्तसंकमेण पयदजहण्णसामित्तावलंबणादो ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

❀ लोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २९०. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि ।

❀ अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो ।

§ २९१. कुदो ? खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण दिवड्ढगुणहाणिमेत्तजहण्ण-समयबद्धेहिं सह एइंदिएसुप्पण्णपढमसमए अधापवत्तसंकमेण पडिलद्धजहण्णभावत्तादो । एत्थ गुणगारो अधापवत्तभागहारमेत्तो ।

---

* सम्यग्मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २८८. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि इसके कारणका कथन ओघके समान ही है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मानका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २८९. क्योंकि वह अधःप्रवृत्तभागहारके वर्गसे भाजित डेढ़ गुणहानिमात्र जघन्य समयप्रबद्धप्रमाण है ।

शंका—वह भी कैसे ?

समाधान—क्योंकि विसंयोजनापूर्वक संयोगके कारण शेष कषायोंमें से अधःप्रवृत्त संक्रम प्राप्त हुए क्षपित कर्मांशिक द्रव्यके साथ यथाविधि अति शीघ्र एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए जीवके प्रथम समयमें अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा प्रकृत जघन्य स्वामित्वका अवलम्बन किया गया है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी क्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी मायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

* उससे अनन्तानुबन्धी लोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २९०. ये सूत्र सुगम हैं ।

* उससे अप्रत्याख्यान मानका जघन्य प्रदेशसंक्रम असंख्यातगुणा है ।

§ २९१. क्योंकि क्षपितकर्मांशिक लक्षणसे आकर डेढ़ गुणहानिमात्र जघन्य समयप्रबद्धोंके साथ एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा जघन्यपनेकी प्राप्ति होती है । यहाँ पर गुणकार अधःप्रवृत्त भागहार प्रमाण है ।

✽ कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

✽ मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

✽ लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

✽ पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेशसंकमो विसेसाहिओ।

✽ कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

✽ मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

✽ लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ २९२. एदाणि सुत्ताणि पयडिविसेसमेत्तकारणगब्भाणि सुगमाणि।

✽ पुरिसवेदे जहण्णपदेससंकमो अणंतगुणो।

§ २९३. कुदो ? देसघादिकारणावेक्खित्तादो।

✽ इत्थिवेदे जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो।

§ २९४. कुदो ? बंधगद्धावसेण तावदिगुणत्तोवलंभादो।

✽ हस्से जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो।

§ २९५. एत्थ वि बंधगद्धावसेण संखेज्जगुणत्तसिद्धी दट्ठव्वा।

✽ रदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

✽ उससे अप्रत्याख्यान क्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

✽ उससे अप्रत्याख्यान मायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

✽ उससे अप्रत्याख्यान लोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

✽ उससे प्रत्याख्यान मानका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

✽ उससे प्रत्याख्यान क्रोधका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

✽ उससे प्रत्याख्यान मायाका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

✽ उससे प्रत्याख्यान लोभका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ २९२. इन सूत्रोंमें प्रकृति विशेषमात्र कारण गर्भित है, इसलिए ये सुगम हैं।

✽ उससे पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम अनन्तगुणा है।

§ २९३. क्योंकि इसका कारण देशघातिपना है।

✽ उससे स्त्रीवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है।

§ २९४. क्योंकि बन्धककालवश उतने गुणेकी उपलब्धि होती है।

✽ उससे हास्यका जघन्य प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है।

§ २९५. यहाँ पर भी बन्धक कालवश संख्यातगुणे की सिद्धि जान लेनी चाहिए।

✽ उससे रतिका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ २९६. पयडिविसेसवसेण विसेसाहियत्तमेत्थ दट्ठव्वं ।

❀ सोगे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २९७. कुदो ? पुव्विल्लबंधगद्धादो संखेज्जगुणबंधगद्धाए संचिददव्वाणुसारेण संकमपवुत्तिअब्भुवगमादो ।

❀ अरदीए जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो ।

§ २९८. पयडिविसेसमेत्तमेत्थ कारणं ।

❀ णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २९९. केत्तियमेत्तेण ? इत्थिपुरिसवेदबंधगद्धापरिसुद्धहस्सरदिबंधगद्धापडिबद्ध-संचयमेत्तेण ।

❀ दुगुंछाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ ३००. केत्तियमेत्तेण ? इत्थिपुरिसवेदबंधगद्धासंचयमेत्तेण ।

❀ भए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ ३०१. केत्तियमेत्तो विसेसो ? पयडिविसेसमेत्तो ।

❀ माणसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ ३०२. केत्तियमेत्तो विसेसो ? चउब्भागमेत्तो ।

❀ कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

§ २९६. प्रकृति विशेष होनेके कारण यहाँ पर विशेष अधिकपना जान लेना चाहिए ।

* उससे शोकका जघन्य प्रदेशसंक्रम संख्यातगुणा है ।

§ २९७. क्योंकि पूर्व प्रकृतिके बन्धक कालसे संख्यातगुणे बन्धक कालमें सञ्चित हुए द्रव्यके अनुसार संक्रमकी प्रवृत्ति स्वीकार की गई है ।

* उससे अरतिका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २९८. प्रकृति विशेषमात्र यहाँ पर कारण है ।

* उससे पुरुषवेदका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ २९९. कितना अधिक है ? स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धककालसे न्यून हास्य रतिके बन्धक कालके भीतर जितना सञ्चय होता है उतना अधिक है ।

* उससे जुगुप्साका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ३००. कितना अधिक है ? स्त्रीवेद-पुरुषवेदके बन्धककालमें हुआ सञ्चयमात्र अधिक है ।

* उससे भयका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ३०१. विशेषका प्रमाण कितना है ? प्रकृतिविशेषमात्र विशेषका प्रमाण है ।

* उससे मान संज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

§ ३०२. विशेषका प्रमाण कितना है ? चतुर्थ भागमात्र विशेषका प्रमाण है ।

* उससे क्रोधसंज्वलनका जघन्य प्रदेशसंक्रम विशेष अधिक है ।

❀ मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

❀ लोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

§ ३०३. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि। एवमेइंदिएसु जहण्णप्पाबहुअं समत्तं। एदं चेव सव्वविगलिंदिएसु पंचिं०तिरिक्खमणुस-अपज्जत्तएसु वि विहासियव्वं, विसेसाभावादो। पंचिंदिएसु ओघभंगो। एवं जाव।

एवं जहण्णपदेससंकमप्पाबहुअं समत्तं।

तदो चउवीसमणिओगद्दाराणि समत्ताणि।

❀ भुजगारस्स अट्ठपदं।

§ ३०४. एत्तो पदेससंकमस्स भुजगारो कायव्वो; पत्तावसरत्तादो। तत्थ य ताव अट्ठपदं परूवइस्सामो त्ति जाणावणट्ठमेदं सुत्तं।

❀ एण्हिं पदेसे बहुदरगे संकामेदि त्ति उसक्काविदे, अप्पदरसंकमादो एसो भुजगारसंकमो।

§ ३०५. एदस्स सुत्तस्स पदसंबंधो एवं कायव्वो। तं जहा—उसक्काविदे अणंतरविदिक्कंतसमए अप्पयरसंकमादो थोवयरपदेससंकमादो एण्हिं वट्टमाणसमए बहुदरगे बहुवयरसंखावच्छिण्णे कम्मपदेसे संकामेदि त्ति एसो एवं लक्खणो भुजगारसंकमो दट्ठव्वो

* उससे मायासंज्वलनका जघन्य देशसंक्रम विशेष अधिक है।

* उससे लोभसंज्वलनका जघन्य देशसंक्रम विशेष अधिक है।

§ ३०३. ये सूत्र सुगम हैं। इस प्रकार एकेन्द्रियोंमें जघन्य अल्पबहुत्व समाप्त हुआ। इसे ही सब विकलेन्द्रिय, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त जीवोंमें समझ लेना चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है। पञ्चेन्द्रियोंमें ओघके समान भङ्ग है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार जघन्य प्रदेश संक्रम अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

इससे चौबीस अनुयोगद्वार समाप्त हुए।

भुजगार अनुयोगद्वार

* अब भुजगार के अर्थपदका कहते हैं।

§ ३०४. इससे आगे प्रदेशसंक्रमका भुजगार करना चाहिए, क्योंकि उसका अवसर प्राप्त है। उसमें भी सर्व प्रथम अर्थ पदको बतलाते हैं। इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिए यह सूत्र आया है।

* अनन्तर व्यतीत हुए समयमें हुए अल्पतर संक्रमसे वर्तमान समयमें बहुत प्रदेशोंका संक्रम करता है यह भुजगार संक्रम है।

§ ३०५. इस सूत्रका पदसम्बन्ध इस प्रकार करना चाहिए। यथा—'ओसक्काविदे' अर्थात् अनन्तर व्यतीत हुए समयमें 'अप्पयरसंकमादो' अर्थात् स्तोकतर प्रदेश संक्रमसे 'एण्हिं' अर्थात् वर्तमान समयमें 'बहुदरगे' अर्थात् बहुतर संख्यासे युक्त कर्म प्रदेशोंको संक्रमित करता है इसलिए

त्ति । कुदो उण तारिसस्स संकमभेदस्स भुजगार-ववएसो ? ण, बहुदरीकरणं च भुजगारो त्ति तस्स तव्ववएसोववत्तीदो ।

❀ एण्हिं पदेसअप्पदरगे संकामेदि ओसक्काविदे बहुदरपदेससंकमादो । एस अप्पयरसंकमो ।

§ ३०६. अत्रापि पूर्ववत्पदघटना, ततोऽयं सूत्रार्थः—इदानीमल्पतरकान् प्रदेशान् संक्रामयतीत्ययमल्पतरसंक्रमः । कुतोऽल्पतरत्वमिदानींतनस्य प्रदेशसंक्रमस्य विवक्षितमिति चेदनन्तरातिक्रान्तसमयसम्बन्धिबहुतरप्रदेशसंक्रमविशेषादिति ।

❀ ओसक्काविदे एण्हिं च तत्तिगे चेव पदेसे संकामेदि त्ति एस अवट्ठिदसंकमो ।

§ ३०७. अनन्तरव्यतिक्रान्तसमये साम्प्रतिके च समये तावत एव प्रदेशाननूनाधिकान् संक्रामयतीत्यतोऽवस्थितसंक्रम इत्युक्तं भवति ।

❀ असंकमादो संकामेदि त्ति अवत्तव्वसंकमो ।

§ ३०८. पूर्वमसंक्रमादिदानीमेव संक्रमपर्यायमभूतपूर्वमास्कन्दयतीत्यस्यां विवक्षायामवक्तव्यसंक्रमस्यात्मलाभ इत्युक्तं भवति । अस्य चावक्तव्यव्यपदेशोऽवस्थात्रयप्रति-

---

'एसो' अर्थात् इस प्रकारके लक्षणवाला भुजगार संक्रम जानना चाहिए ।

शंका—इस प्रकारके संक्रमके भेदकी भुजगार संज्ञा क्यों है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि बहुतर करना भुजगार है, इसलिए इसकी भुजगार संज्ञा बन जाती है ।

*** अनन्तर व्यतीत हुए समयमें हुए बहुतर संक्रमसे वर्तमान समयमें अल्पतर प्रदेशोंका संक्रम करता है यह अल्पतर संक्रम है ।**

§ ३०६. यहाँ पर भी पहलेके समान पदघटना है, इसलिए सूत्रका अर्थ इस प्रकार होता है—इस समय अल्पतर प्रदेशोंको संक्रमाता है, इसलिए यह अल्पतर संक्रम है । इस समयके प्रदेशोंका अल्पतरपना किसकी अपेक्षासे विवक्षित है ऐसा प्रश्न होने पर कहते हैं कि अनन्तर व्यतीत हुए समय सम्बन्धी बहुतर प्रदेशसंक्रम विशेषकी अपेक्षासे यह विवक्षित है ।

*** अनन्तर व्यतीत हुए समयमें और वर्तमान समयमें उतने ही प्रदेशोंको संक्रमाता है यह अवस्थितसंक्रम है ।**

§ ३०७. अनन्तर व्यतीत हुए समयमें और वर्तमान समयमें न्यूनाधिकतासे रहित उतने ही प्रदेशोंको संक्रमाता है, इसलिए यह अवस्थित संक्रम है यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

*** असंक्रमसे प्रदेशोंको संक्रमाता है यह अवक्तव्य संक्रम है ।**

§ ३०८. पहले असंक्रमरूप अवस्था थी उससे इस समय ही संक्रमरूप अभूतपूर्व पर्यायको प्राप्त होता है इस प्रकार इस विवक्षाके होने पर अवक्तव्य संक्रमका आत्मलाभ होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इसकी अवक्तव्य संज्ञा अवस्थात्रयके प्रतिपादक शब्दोंके द्वारा अनभिलाप्य

पादकैरभिलापैरनभिलाप्यत्वादिति प्रतिपत्तव्यम् ।

❀ एदेण अट्ठपदेण तत्थ समुक्कित्तणा ।

§ ३०९. एदेणाणंतरं णिद्दिट्ठेणट्ठपदेण भुजगारसंकमे परूवणिज्जे तेरसाणियोगद्दाराणि तत्थ णादव्वाणि भवंति समुक्कित्तणा जाव अप्पाबहुए त्ति । तत्थ ताव सामित्तादीणमणियोगद्दाराणं जोणीभूदा समुक्कित्तणा अहिकीरदि त्ति जाणाविदमेदेण सुत्तेण । तत्थ वि ओघादेसभेदेण दुविहणिद्देससंभवे ओघणिद्देसं ताव कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ ।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिद-अवत्तव्व-संकामया अत्थि ।

§ ३१०. मिच्छत्तस्स पदेसग्गभेदेहि चउहि मि पयारेहि संकामेंता जीवा अत्थि त्ति समुक्कित्तिदं होदि । तत्थेदेसिं पदाणं संभवविसयो इत्थमणुगंतव्वो । तं जहा—अट्ठावीससंतकम्मियमिच्छाइट्ठिणा वेदगसम्मत्ते पडिवण्णे पढमसमये मिच्छत्तस्स विज्झादेणावत्तव्वसंकमो होइ । पुणो विदियादिसमएसु भुजगारसंकमो अवट्ठिदसंकमो अप्पयरसंकमो वा होइ जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति । तत्तो उवरि सव्वत्थ वेदयसम्माइट्ठिम्मि अप्पयरसंकमो जाव दंसणमोहक्खवणाए अपुव्वकरणं पविट्ठस्स गुणसंकमपारंभो त्ति गुणसंकमविसए सव्वत्थेव भुजगारसंकमो दट्ठव्वो । उवसमसम्मत्तं पडिवण्णस्स वि पढमसमए अवत्तव्वसंकमो विदियादिसमएसु भुजगारसंकमो जाव गुणसंकमचरिमसमयो त्ति । तदो विज्झादसंकमविसए सव्वत्थ अप्पयरसंकमो त्ति घेत्तव्वं ।

होनेसे है ऐसा यहाँ जान लेना चाहिए ।

*** इस अर्थपदके अनुसार प्रकृतमें समुत्कीर्तना कहते हैं ।**

§ ३०९. 'एदेण' अर्थात् अनन्तर निर्दिष्ट किये गये अर्थपदके अनुसार भुजगार संक्रमकी प्ररूपणा करने पर उसके विषयमें समुत्कीर्तनासे लेकर अल्पबहुत्व तक ये तेरह अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं उनमेंसे सर्व प्रथम स्वामित्व आदि अनुयोगद्वारोंका योनिभूत समुत्कीर्तना अधिकृत है यह इस सूत्र द्वारा जताया गया है । उसमें भी ओघ और आदेशसे दो प्रकारका निर्देश सम्भव होने पर सर्व प्रथम ओघ निर्देशको करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं ।

*** मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य संक्रामक जीव हैं ।**

§ ३१०. मिथ्यात्वके प्रदेशोंके इन चार प्रकारोंसे संक्रमण करनेवाले जीव हैं इस प्रकार इस सूत्र-द्वारा यह समुत्कीर्तना की गई है । उसमेंसे इन पदोंका सम्भव विषय यहाँ पर समझ लेना चाहिए । यथा—अट्ठाईस प्रकृतियोंकी सत्तावाले मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा वेदकसम्यक्त्वके प्राप्त होने पर प्रथम समयमें मिथ्यात्वका विध्यात संक्रमके द्वारा अवक्तव्य संक्रम होता है । पुनः द्वितीयादि समयोंमें भुजगार संक्रम, अवस्थित संक्रम या अल्पतर संक्रम होता है । जो सम्यग्दृष्टिके एक आवलिप्रमाण काल जाने तक होता है । उसके आगे सर्वत्र वेदकसम्यग्दृष्टिके दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें अपूर्वकरणमें प्रविष्ट हुए जीवके गुण संक्रमके प्रारम्भ होने तक अल्पतर संक्रम होता है । गुणसंक्रमकी अवस्थामें सर्वत्र ही भुजगारसंक्रम जानना चाहिए । उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त हुए जीवके भी प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रम होता है और द्वितीयादि समयोंमें गुणसंक्रमके अन्तिम समय तक भुजगार संक्रम होता है । इसके बाद विध्यातसंक्रमके होने पर सर्वत्र अल्पतरसंक्रम ग्रहण करना चाहिए ।

*** एवं सोलसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं ।**

§ ३११. एदेसिं च कम्माणं मिच्छत्तस्सेव भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकामयाणमत्थित्तं समुक्कित्तियव्वमिदि भणिदं होइ। जत्थागमादो णिज्जरा थोवा, तत्थ भुजगारसंकमो, जत्थागमादो णिज्जरा बहुगी एयंतणिज्जरा चेव वा, तत्थ अप्पयरसंकमो। जम्हि विसए दोण्हं पि सरिसभावो, तम्हि अवट्ठिदसंकमो। असंकमादो संकमो जत्थ, तत्थावत्तव्वसंकमो त्ति पुव्वं व सव्वमेत्थाणुगंतव्वं। णवरि अवत्तव्वसंकमो बारसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं सव्वोवसामणापडिवादे अणंताणुबंधीणं च विसंजोयणा [ण] अपुव्वसंजोगे दट्ठव्वो।

*** एवं चेव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-इत्थिवेद-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं। णवरि अवट्ठिदसंकामगा णत्थि।**

§ ३१२. संपहि भुजगार-अप्पदरावत्तव्वसंकामयसंभवो एदेसु सुगमो त्ति कट्टु अवट्ठिदसंकमासंभवे किं चि कारणपरूवणं कस्सामो। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं ताव णावट्ठिदसंकमसंभवो; बंधसंबंधेण विणा तेसिमागमणिज्जराणं सरिसीकारणो वायाभावादो। इत्थिवेदादीणं पि सांतरबंधीणं सगबंधकाले भुजगारसंकमो चेव; णिज्जरादो तत्थागमस्स बहुत्तोवलंभादो। अबंधकाले वि अप्पयरसंकमो चेव; पडिसमयं तेसिं पदेसग्गस्स तत्थ

---

* इसी प्रकार सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके विषयमें जानना चाहिए।

§ ३११. इन कर्मोंके मिथ्यात्वके समान भुजगार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामकोंके अस्तित्वका समुत्कीर्तन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। जहाँपर आगमके अनुसार निर्जरा स्तोक है वहाँ पर भुजगारसंक्रम होता है, जहाँ पर आगमके अनुसार निर्जरा बहुत है-एकान्तसे निर्जरा ही है वहाँपर अल्पतरसंक्रम होता है, जहाँपर दोनोंकी ही समानता है वहाँपर अवस्थितसंक्रम होता है और जहाँपर असंक्रम अवस्थाके बाद संक्रम है वहाँपर अवक्तव्यसंक्रम होता है। इस प्रकार पहलेके समान सब यहाँ पर जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका अवक्तव्यसंक्रम सर्वोपशामनासे गिरने पर और अनन्तानुबन्धियोंका अवक्तव्यसंक्रम विसंयोजनापूर्वक संयोगके होने पर जानना चाहिए।

*** इसी प्रकार सम्यक्त्व, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोकके विषयमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है इनके अवस्थित संक्रामक जीव नहीं हैं।**

§ ३१२. अब इन प्रकृतियोंके विषयमें भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्य संक्रामकोंकी जानकारी सुगम है इसलिए अवस्थित संक्रमकी असम्भावनामें जो कुछ कारण है उसका कथन करते हैं—सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका तो अवस्थितसंक्रम इसलिए सम्भव नहीं है, क्योंकि बन्धके सम्बन्धके बिना उनके आगमन और निर्जराको एक समान करनेका कोई उपाय नहीं है। स्त्रीवेद आदि भी सान्तर बन्ध प्रकृतियोंका अपने बन्धकालमें भुजगारसंक्रम ही होता है, क्योंकि वहाँ पर निर्जराकी अपेक्षा प्रदेशोंका आगमन बहुत देखा जाता है। अबन्धकालमें भी अल्पतरसंक्रम ही होता है, क्योंकि प्रति समय वहाँ पर उनके प्रदेशोंकी निर्जराको छोड़कर सञ्चय नहीं पाया जाता।

गलणं मोत्तूण संचयाणुवलद्धीदो। तदो ण तेसिमवट्ठिदसंकमसंभवो त्ति। किं कारणमेदेसिं बंधकाले आगमणिज्जराणं सरिसत्ताभावो चे वुच्चदे—इत्थिवेद-हस्स-रदीणमेयसमयणिज्जरा समयपबद्धस्स संखेज्जदिभागमेत्ती होइ। णवुंसयवेदारइसोगाणं पि संखेज्जभागूणसमयपबद्धमेत्ता होइ; बंधगद्धापडिभागेण संचयगोवुच्छाणमवट्ठाणब्भुवगमादो। आगमो पुण सव्वेसिमेयसमयपबद्धो संपुण्णो लब्भदे; तक्कालियणवकबंधस्स णिप्पडिवक्खमेदेसिं बंधकाले समागमणदंसणादो। एदेण कारणेण परावत्तणपयडीणमवट्ठिदसंकमो णत्थि त्ति सिद्धं पलिदो० असंखे०भागमेत्तकालं णिरंतरबंधेण विणा आगमणिज्जराणं सरिसभावाणुप्पत्तीदो।

एवमोघसमुक्कित्तणा गदा।

§ ३१३. आदेसेण णेरइय० मिच्छ०-अणंताणु०४चउक्क०-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमोघं। बारसक०-पुरिसवेद-भय-दुगुंछ० अत्थि भुज० अप्प० अवट्ठि०। इत्थि० णवुंस० हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमत्थि भुज० अप्प०। एवं सव्वणेरइयतिरिक्ख४ देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति पंचिंदियतिरिक्खमणुसअपज्ज० सम्म०-सम्मामि० तिण्णिवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमत्थि भुज० अप्प०। [मिच्छ०]सोलसक० भयदुगुंछ० अत्थि भुज० अप्प० अवट्ठि०। मणुसतिए ओघं। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थि-

इसलिए इनका भी अवस्थितसंक्रम सम्भव नहीं है।

शंका—इनका बन्धकालमें आगमन और निर्जरा समान नहीं होते इसका क्या कारण है?

समाधान—स्त्रीवेद हास्य और रतिकी एक समयमें होनेवाली निर्जरा समयप्रबद्धके संख्यातवें भागप्रमाण होती है। नपुंसकवेद, अरति और शोककी भी संख्यातवाँ भाग कम समयप्रबद्धप्रमाण निर्जरा होती है, क्योंकि बन्धककालको प्रतिभाग करके सञ्चय गोपुच्छाओंका अवस्थान उपलब्ध होता है। परन्तु उक्त सभी कर्मोंकी आय सम्पूर्ण एक समयप्रबद्धप्रमाण उपलब्ध होती है, क्योंकि इन कर्मोंके बन्धकालके भीतर तत्काल होनेवाले नवकबन्धका प्रतिपक्षके बिना आगमन देखा जाता है। इस कारणसे बदल-बदल कर बँधनेवाली प्रकृतियोंका अवस्थितसंक्रम नहीं होता यह सिद्ध हुआ, क्योंकि पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण काल तक निरन्तर बन्धके बिना आगमन और निर्जराकी समानता नहीं बन सकती।

इस प्रकार ओघसमुत्कीर्तना समाप्त हुई।

§ ३१३. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी चतुष्क, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामक जीव हैं। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोकके भुजगार और अल्पतरसंक्रामक जीव हैं। इसी प्रकार सब नारकी, तिर्यञ्चचतुष्क, सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, तीन वेद, हास्य, रति, अरति और शोकके भुजगार और अल्पतरसंक्रामक जीव हैं। मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके भुजगार अल्पतर

णवुंस० अत्थि अप्प० । अणंताणु०४-चदुणोक० अत्थि भुज० अप्प० । बारसक०-पुरिसवेद-भय-दुगुंछा० अत्थि भुज० अप्प० अवट्ठि० । एवं जाव० ।

❀ सामित्तं ।

§ ३१४. एवं समुक्कित्तिदाणं भुजगारादिपदाणमिदाणिं सामित्तमहिकीरदि त्ति अहियारसंभालणमेदेण कयं होइ । तस्स दुविहो णिद्देसो ओघादेसभेएण । तत्थोघेण पयडिपरिवाडीए भुजगारादिपदाणं सामित्तविहाणं कुणमाणो पुच्छावक्कमाह ।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामओ को होइ ?

§ ३१५. सुगमं ।

❀ पढमसम्मत्तमुप्पादयमाणगो पढमसमए अवत्तव्वसंकामगो । सेसेसु समएसु जाव गुणसंकमो ताव भुजगारसंकामगो ।

§ ३१६. पढमसम्मत्तमुप्पादेमाणगो तदुप्पत्तिपढमसमए मिच्छत्तस्सावत्तव्वसंकमं कुणइ । पुव्वमसंकंतस्स तस्स ताधे चेव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तसरूवेण संकंतिदंसणादो । सेसेसु पुण विदियादिसमएसु भुजगारसंकामगो होदि जाव गुणसंकमचरिमसमओ त्ति । कुदो ? पडिसमयमसंखेज्जगुणाए सेढीए गुणसंकमेण मिच्छत्तपदेसग्गस्स तत्थ संकंति-

और अवस्थित संक्रामक जीव हैं । मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है । अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धितकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतरसंक्रम जीव हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्क और चार नोकषायोंके भुजगार और अल्पतरसंक्रामक जीव हैं । बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार, अल्पतर और अवस्थितसंक्रामक जीव हैं । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

❀ अब स्वामित्वका अधिकार है ।

§ ३१४. इस प्रकार जिनकी समुत्कीर्तना की है ऐसे स्वामित्व आदि पदोंका इस समय स्वामित्व अधिकृत है इस प्रकार इस सूत्र द्वारा अधिकारकी सम्हाल की गई है । उसका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमेंसे ओघकी अपेक्षा प्रकृतियोंके क्रमानुसार भुजगार आदि पदोंके स्वामित्वका विधान करते हुए पृच्छावाक्यको कहते हैं—

❀ मिथ्यात्वका भुजगार संक्रामक कौन है ?

§ ३१५. यह सूत्र सुगम है ।

❀ प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेवाला जीव प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रामक है । शेष समयोंमें गुणसंक्रमके होने तक भुजगार संक्रामक है ।

§ ३१६. प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेवाला जीव उसके उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें मिथ्यात्वका अवक्तव्यसंक्रम करता है, क्योंकि पहले संक्रमित नहीं होनेवाले उसका उस समय ही सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वरूपसे संक्रमण देखा जाता है । परन्तु द्वितीयादि शेष समयोंमें गुणसंक्रमके अन्तिम समय तक भुजगार संक्रामक होता है, क्योंकि प्रत्येक समयमें असंख्यात गुणित श्रेणिरूपसे गुणसंक्रमके द्वारा मिथ्यात्वके प्रदेशोंका सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें संक्रमण

दंसणादो। एवं पढमसम्मत्तुप्पत्तीए विदियादिसमएसु अंतोमुहुत्तमेत्तगुणसंकमकालपडिबद्धं भुजगारसंकमसामित्तं परूविय-पयारंतरेण वि तस्स संभवपदुप्पायणट्ठमुवरिमसुत्तं भणइ।

*** जो वि दंसणमोहणीयक्खवगो अपुव्वकरणस्स पढमसमयमादिं कादूण जाव मिच्छत्तं सव्वसंकमेण संछुहदि त्ति ताव मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो।**

§ ३१७. जो वि दंसणमोहणीयक्खवगो सो वि मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो होदित्ति एत्थ पदाहिसंबंधो। तत्थ वि अधापवत्तकरणपढमसमयप्पहुडि भुजगारसंकमसामित्ताइप्पसंगे तण्णिवारणट्ठमिदं वुत्तमपुव्वकरणपढमसमयमादिं कादूण इच्चादि। अपुव्वकरणद्धाए सव्वत्थ अणियट्टिकरणद्धाए च जाव मिच्छत्तस्स सव्वसंकमसमयो[1] ताव अंतोमुहुत्तमेत्तकालं गुणसंकमेण भुजगारसंकामगो होइ त्ति भणिदं होइ। एवमेसो विदियो सामित्तपयारो णिद्दिट्ठो। संपहि तदियो वि पयारो मिच्छत्तभुजगारपदेससंकामयस्स संभवइ त्ति पदुप्पाएमाणो सुत्तपबंधमुत्तरमाह—

*** जो वि पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो सम्मत्तमागदो तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स जं बंधादो आवलियादीदं मिच्छत्तस्स पदेसग्गं तं विज्झादसंकमेण संकामेदि। आवलियचरिमसमयमिच्छाइट्ठिमादिं कादूण**

देखा जाता है। इस प्रकार प्रथम सम्यक्त्वकी उत्पत्ति होने पर द्वितीयादि समयोंमें अन्तर्मुहूर्त प्रमाण गुणसंक्रमकालसे सम्बन्ध रखनेवाले भुजगारसंक्रम सम्बन्धी स्वामित्वका कथन करके प्रकारान्तरसे भी वह सम्भव है इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** और जो भी दर्शनमोहनीयका क्षपक जीव है वह अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर जिस स्थान पर सर्वसंक्रमके द्वारा मिथ्यात्वका संक्रमण करता है उस स्थान तक मिथ्यात्वका भुजगार संक्रामक है।**

§ ३१७. जो भी दर्शनमोहनीयका क्षपक जीव है वह भी मिथ्यात्वका भुजगारसंक्रामक होता है इस प्रकार यहाँ पर पदसम्बन्ध करना चाहिए। उसमें भी अधःप्रवृत्तकरणके प्रथम समयसे लेकर भुजगार संक्रमके स्वामित्वका अतिप्रसङ्ग प्राप्त होने पर उसका निवारण करनेके लिए 'अपूर्वकरणके प्रथम समयसे लेकर' इत्यादि वचन कहा है। अपूर्वकरणके कालमें सर्वत्र और अनिवृत्तिकरणके कालमें जब जाकर मिथ्यात्वका सर्व संक्रम होता है वहाँ तक अन्तर्मुहूर्त काल तक गुणसंक्रमके द्वारा भुजगार संक्रामक होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार यह दूसरा स्वामित्वका प्रकार निर्दिष्ट किया है। अब मिथ्यात्वके भुजगार प्रदेश संक्रामकका तीसरा प्रकार भी सम्भव है इस बातका कथन करते हुए आगेके सूत्र प्रबन्धको कहते हैं—

*** तथा जो भी पूर्वोत्पन्न (वेदक) सम्यक्त्वके साथ मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वमें आया है उस प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके बन्धकी अपेक्षा जो एक आवलि पूर्वके अर्थात् द्विचरमावलि मिथ्यात्वके प्रदेश हैं उन्हें विध्यातसंक्रमके द्वारा संक्रमाता है। आवलिके**

१. विसयो ता०।

जाव चरिमसमयमिच्छाइट्ठि त्ति । एत्थ जे समयपबद्धा ते समयपबद्धे पढमसमयसम्माइट्ठि त्ति ण संकामेइ । तकालप्पहुडि जस्स जस्स बंधावलिया पुण्णा तदो तदो सो संकामिज्जदि । एवं पुव्वुप्पाइदेण सम्मत्तेण जो सम्मत्तं पडिवज्जइ तं दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति ताव मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो होज्ज ।

§ ३१८. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा—जो जीवो पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो सम्मत्तं गंतूण पुणो अविणट्ठवेदगपाओग्गकालब्भंतरे चेव सम्मत्तमुवगओ तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स मिच्छत्तं[१] चिराणसंतकम्मं सव्वमेव संकमपाओग्गं होइ । तं पुण सो विज्झादसंकमेणावत्तव्वभावेण संकामेदि त्ति ण तत्थ भुजगारसंकमसंभवो । किंतु मिच्छाइट्ठिचरिमावलियणवकबंधसमयपबद्धे अस्सिऊण तस्स विदियादिसमएसु भुजगारसंकमो संभवइ । तं कधमावलियचरिमसमयमिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव चरिमसमयमिच्छाइट्ठि त्ति । एत्थंतरे जे बद्धा समयपबद्धा ते पढमसमयसम्माइट्ठी ण संकामेइ । कुदो ? तत्थ तेसिं बंधावलियाए असमत्तीदो । णवरि आवलियचरिमसमयमिच्छाइट्ठिणा बद्धसमयपबद्धो तत्थ संकमपाओग्गो होदि; मिच्छाइट्ठिचरिमसमए पूरिदबंधावलियत्तादो । जइ एवं, तमादिं

चरम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिसे लेकर अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि तक इस अन्तकालमें जो समयप्रबद्ध हैं उन समयप्रबद्धोंको प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टि जीव नहीं संक्रमाता है । तदनन्तर कालसे लेकर जिस जिसकी बन्धावलि पूर्ण होती जाती है वहाँ से लेकर उस उस समयप्रबद्धको वह संक्रमाता है । इस प्रकार पहले उत्पन्न किये गये सम्यक्त्वके साथ जो सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उस सम्यग्दृष्टिके दूसरे समयसे लेकर सम्यग्दृष्टि होनेके एक आवलि काल तक वह मिथ्यात्वका भुजगार संक्रामक है ।

§ ३१८. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । यथा—जो जीव पहले उत्पन्न किये गये सम्यक्त्वके साथ मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको प्राप्त करके पुनः नहीं नष्ट हुए वेदककालके भीतर ही सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है उस प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके मिथ्यात्वका प्राचीन सत्कर्म सभी संक्रमणके योग्य है । परन्तु उसे वह विध्यातसंक्रमके द्वारा अवक्तव्य रूपसे संक्रमाता है, इसलिए वहाँ पर भुजगारसंक्रम सम्भव नहीं है । किन्तु मिथ्यादृष्टिकी अन्तिम आवलिके नवकबन्ध समयप्रबद्धोंका आलम्बन लेकर उसके द्वितीयादि समयोंमें भुजगार संक्रम सम्भव है ।

शंका—सो कैसे ?

समाधान—उक्त आवलिके चरम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिसे लेकर अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके होने तक इस अन्तरालमें जो समयप्रबद्ध बन्धको प्राप्त हुए हैं उन्हें प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टि जीव नहीं संक्रमाता है, क्योंकि वहाँ पर उनकी बन्धावलि समाप्त नहीं हुई है । इतनी विशेषता है कि उक्त आवलिके अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिके द्वारा बन्धको प्राप्त हुआ समयप्रबद्ध

१. 'त्त' ता० । २. 'सुत्ते सुत्त' ता० ।

कादूणे त्ति णेदं वयणं घडदे; समयूणावलियचरिमसमयमिच्छाइट्ठिमादिं कादूणे त्ति वत्तव्वं ? सच्चमेदं; आवलियचरिमसमयमिच्छाइट्ठिमुवलक्खणं कादूण सेससमयमिच्छाइट्ठीणं गहणणिमित्तं सुत्ते तस्स णिद्देसो कदो। पर्वतादीनि क्षेत्राणीत्यादिवत्। तदो सम्माइट्ठिपढमसमए असंकमपाओग्गाणं समयूणावलियमेत्त समयपबद्धाणं मज्झे सम्माइट्ठि विदियसमयप्पहुडि जहाकमं बंधावलियवदिक्कंतवसेण जस्स जस्स संकमपाओग्गभावो होइ; सो सो समयपबद्धो संकामिज्जदि। एवं संकामिज्जमाणेसु तेसु तं विदियसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलिय सम्माइट्ठि त्ति ताव एत्थ भुजगारसंकमसंभवो होज्ज। किं कारणं ? एत्थतणणिज्जरादो संकमपाओग्गभावेण ढुक्कमाणसमयपबद्धस्स बहुत्ते संते भुजगारसंकमसंभवस्स तत्थ परिप्फुडमुवलंभादो। तदो एदम्मि विसए मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमसामित्तं होइ त्ति सिद्धं। संपहि एत्थ भुजगारसंकमो चेवेत्ति अवहारणपडिसेहट्ठमिदमाह—

❀ णहु सव्वत्थ आवलियाए भुजगारसंकमो जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेणावलिया समयूणा।

वहाँ पर संक्रमके योग्य होता है, क्योंकि उसकी मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें बन्धावलि पूर्ण हो गई है।

शंका—यदि ऐसा है तो उससे 'लेकर' यह वचन नहीं बनता। किन्तु इसके स्थानमें 'एक समय कम आवलिके अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिसे लेकर' ऐसा कहना चाहिए ?

समाधान—यह सत्य है। किन्तु आवलिके अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टिको उपलक्षण करके शेष समयवर्ती मिथ्यादृष्टियोंका ग्रहण करनेके लिए सूत्रमें उक्त वचनका निर्देश किया है। जिस प्रकार लोकमें पर्वतसे लगे हुए क्षेत्रका ज्ञान करानेके लिए 'पर्वतादि क्षेत्र' वचनका व्यवहार होता है उसी प्रकार प्रकृतमें जान लेना चाहिए।

इसलिए सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें असंक्रमके योग्य एक समय कम आवलिमात्र समयप्रबद्धोंमेंसे सम्यग्दृष्टिके दूसरे समयसे लेकर क्रमसे बन्धावलिके व्यतीत होनेके कारण जो जो समयप्रबद्ध संक्रमणके योग्य होता है वह वह समयप्रबद्ध संक्रमाया जाता है। इस प्रकार उन समयप्रबद्धोंको संक्रामित करते हुए द्वितीय समयवर्ती सम्यग्दृष्टिसे लेकर सम्यग्दृष्टिके एक आवलिकाल होने तक यहाँ पर भुजगारसंक्रम सम्भव है, क्योंकि यहाँ पर होनेवाली निर्जरासे संक्रमके योग्यरूपसे प्राप्त होनेवाले समयप्रबद्धके बहुत होने पर वहाँ पर भुजगारसंक्रमकी सम्भावना स्पष्टरूपसे उपलब्ध होती है इसलिए इस स्थल पर जीव मिथ्यात्वके भुजगार संक्रमका स्वामी होता है यह सिद्ध हुआ। अब यहाँ पर भुजगारसंक्रम है ही इस निश्चयका निषेध करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** मात्र सर्वत्र आवलिकालके भीतर भुजगारसंक्रम न होकर उसका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल एक समय कम एक आवलि है।**

§ ३१९. पुव्वुत्तावलियमेत्तकालब्भंतरे सव्वत्थ भुजगारसंकमो चेवेत्ति णावहारणमिह कायव्वं; किंतु आगमणिज्जरावसेण जहण्णेणेयसमयमुक्कस्सेण समयूणावलियमेत्तकालं, एदम्मि विसए भुजगारसंकमो संभवदि त्ति वुत्तं होइ।

❀ एवं तिसु कालेसु मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो।

§ ३२०. एवमेदेसु चेवाणंतरणिद्दिट्ठेसु तिसु उद्देसेसु मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो होइ, णाण्णत्थे त्ति भणिदं होइ। संपहि एदेसिं चेव तिण्हं भुजगारसंकमविसयाणमुवसंहार-मुहेण फुडीकरणट्ठमुत्तरपबंधमाह—

❀ तं जहा।

§ ३२१. सुगमं।

❀ **उवसामग-दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव गुणसंकमो त्ति ताव णिरंतरं भुजगारसंकमो। खवगस्स वा जाव गुणसंकमेण खविज्जदि मिच्छत्तं ताव णिरंतरं भुजगारसंकमो। पुव्वुप्पादिदेण वा सम्मत्तेण जो सम्मत्तं पडिवज्जदि तं दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलिय-सम्माइट्ठि त्ति एत्थ जत्थ वा तत्थ वा जहण्णेण एयसमयं, उक्कस्सेण आव-**

---

§ ३१९. पूर्वोक्त आवलिमात्र कालके भीतर सर्वत्र भुजगारसंक्रम होता ही है ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए किन्तु होनेवाली आय और निर्जराके कारण जघन्यसे एक समय तक और उत्कृष्टसे एक समय कम एक आवलि तक इस कालके भीतर भुजगारसंक्रम सम्भव है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

* इस प्रकार तीन कालोंमें जीव मिथ्यात्वका भुजगार संक्रामक है।

§ ३२०. इस प्रकार पहले बतलाये गये इन्हीं तीन स्थानोंमें जीव मिथ्यात्वका भुजगार संक्रामक है, अन्यत्र नहीं यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इन्हीं तीन भुजगारसंक्रम विषयोंका उपसंहार द्वारा स्पष्ट करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* यथा—

§ ३२१. यह सूत्र सुगम है।

* उपशामक सम्यग्दृष्टिके द्वितीय समयसे लेकर गुणसंक्रमके अन्तिम समय तक निरन्तर भुजगार संक्रम होता है। अथवा क्षपकके जब तक गुणसंक्रमके द्वारा मिथ्यात्वकी क्षपणा होती है तब तक निरन्तर भुजगारसंक्रम होता है। अथवा पहले उत्पन्न किये गये सम्यक्त्वके साथ जो सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उस सम्यग्दृष्टिके दूसरे समयसे लेकर सम्यग्दृष्टिके एक आवलिकाल होने तक इस कालके भीतर जहाँ-कहीं जघन्यसे एक समय

त्तिया समयूणा भुजगारसंकमो होज्ज । एवमेदेसु तिसु कालेसु मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो ।

§ ३२२. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि । णेदेसिं पुणरुत्तभावो ण आसंकणिज्जो; पुव्वुत्तत्थो व संहारमुहेण पयट्टाणं तहाभावविरोहादो । एवमेत्तिएण पबंधेण मिच्छत्त-भुजगारसंकमसामित्तं परूविय संपहि सेसपदाणं सामित्तविहाणमुत्तरपबंधमाह—

❀ सेसेसु समएसु जइ संकामगो अप्पयरसंकामगो वा अवत्तव्व-संकामगो वा ।

§ ३२३. पुव्वुत्तोवसामगखवगगुणसंकमकालं पुव्वुप्पण्णसम्मत्तमिच्छाइट्ठि पच्छा-यदवेदयसम्माइट्ठि पढमावलिय विदियादि समए च मोत्तूण सेसेसु समएसु जइ मिच्छत्तस्स संकामगो तो जहासंभवं सो अप्पयरसंकामगो अवत्तव्वसंकामगो वा होदि त्ति घेत्तव्वो; पयारंतरासंभवादो ।

❀ उवट्ठिदसंकामगो मिच्छत्तस्स को होइ ?

§ ३२४. सुगमं ।

❀ पुव्वुप्पादिदेण सम्मत्तेण जो सम्मत्तं पडिवज्जदि जाव आवलिय-सम्माइट्ठि त्ति एत्थ होज्ज अवट्ठिदसंकामगो अण्णम्मि णत्थि ।

तक और उत्कृष्टसे एक समय कम एक आवलितक भुजगारसंक्रम हो सकता है। इस प्रकार इन कालोंके भीतर मिथ्यात्वका भुजगारसंक्रम होता है ।

§ ३२२. ये सूत्र सुगम हैं। ये सूत्र पुनरुक्त हैं ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त अर्थके उपसंहार द्वारा ये सूत्र प्रवृत्त हुए हैं, इसलिए पुनरुक्त दोष होनेमें विरोध आता है। इस प्रकार इतने प्रबन्धद्वारा मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रमके स्वामित्वका कथन करके अब शेष पदोंके स्वामित्वका कथन करनेके लिए आगेके सूत्र प्रबन्धको कहते हैं—

*** शेष समयोंमें यदि संक्रामक है तो या तो अल्पतरसंक्रामक होता है या अवक्तव्य संक्रामक होता है ।**

§ ३२३. पूर्वोक्त उपशामक और क्षपकके गुणसंक्रमके कालको छोड़कर तथा पूर्वोत्पन्न सम्यक्त्व पूर्वक मिथ्यादृष्टि होकर जो पुनः वेदकसम्यग्दृष्टि हुआ है उसकी प्रथमावलिके द्वितीयादि समयोंको छोड़कर शेष समयोंमें यदि मिथ्यात्वका संक्रामक होता है तो यथासम्भव वह अल्पतरसंक्रामक या अवक्तव्यसंक्रामक होता है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि अन्य कोई प्रकार नहीं है।

*** मिथ्यात्वका अवस्थित संक्रामक कौन है ?**

§ ३२४. यह सूत्र सुगम है ।

*** पूर्व उत्पादित सम्यक्त्वके साथ जो सम्यक्त्वको प्राप्त होता है वह सम्यग्दृष्टि होनेके एक आवलिकाल तक इस अवस्थामें अवस्थितसंक्रामक हो सकता है। अन्यत्र अवस्थितसंक्रामक नहीं होता ।**

§ ३२५. एदम्मि चेव पुव्वुप्पाइदसम्मत्तमिच्छाइट्ठिपच्छायदवेदगसम्माइट्ठिपढमावलियविसयमिच्छाइट्ठिचरिमावलियणवकबंधसंबंधेणागमणिज्जराणं सरिसत्तावलंबणेणावट्ठिदसंकमसंभवो णाण्णत्थे त्ति सुत्तत्थ समुच्चयो ।

❀ सम्मत्तस्स भुजगारसंकामगो को होदि ?

§ ३२६. सुगमं ।

❀ सम्मत्तमुव्वेल्लमाणयस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए सव्वम्हि चेव भुजगारसंकामगो ।

§ ३२७. कुदो ? तत्थगुणसंकमणियमदंसणादो ।

❀ तव्वदिरित्तो जो संकामगो सो अप्पयरसंकामगो वा अवत्तव्वसंकामगो वा ।

§ ३२८. किं कारणं ? उव्वेल्लणचरिमट्ठिदिखंडयादो अण्णत्थ जहासंभवमप्पदरावत्तव्वसंकमाणं चेव संभवदंसणादो ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो को होइ ?

§ ३२९. सुगमं ।

❀ उव्वेल्लमाणयस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए सव्वम्हि चेव ।

---

§ ३२५. जिसने पहले सम्यक्त्वको उत्पन्न किया वह मिथ्यादृष्टि होकर जब पुनः वेदकसम्यग्दृष्टि होता है तब उसके प्रथम आवलिमें मिथ्यादृष्टिकी अन्तिम आवलिके नवकबन्धके सम्बन्धसे आय और निर्जराकी सदृशताका अवलम्बन लेनेसे अवस्थित संक्रमकी सम्भावना जाननी चाहिए अन्यत्र नहीं यह सूत्रका समुच्चय अर्थ है ।

*** सम्यक्त्वका भुजगारसंक्रामक कौन है ?**

§ ३२६. यह सूत्र सुगम है ।

*** सम्यक्त्वकी उद्वेलना करते हुए अन्तिम स्थितिकाण्डकमें सर्वत्र ही जीव भुजगार संक्रामक है ।**

§ ३२७. क्योंकि वहाँ पर नियमसे गुणसंक्रम देखा जाता है ।

*** इसके सिवा जो संक्रामक है वह या तो अल्पतरसंक्रामक है या अवक्तव्यसंक्रामक है ।**

§ ३२८. क्योंकि उद्वेलनाके अन्तिम स्थितिकाण्डकके सिवा अन्यत्र यथासम्भव अल्पतर संक्रम और अवक्तव्य संक्रमकी ही सम्भावना देखी जाती है ।

*** सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगारसंक्रामक कौन है ?**

§ ३२९. यह सूत्र सुगम है ।

*** उद्वेलना करते हुए अन्तिम स्थितिकाण्डकमें सर्वत्र ही सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगारसंक्रामक है ।**

§ ३३०. कुदो ? तत्थ गुणसंकमणियमदंसणादो ।

❀ खवगस्स वा जाव गुणसंकमेण संछुहदि सम्मामिच्छत्तं ताव भुजगारसंकामगो ।

§ ३३१. कुदो ? दंसणमोहक्खवयापुव्वकरणपढमसमयप्पहुडि जाव सव्वसंकमो त्ति ताव सम्मामिच्छत्तस्स गुणसंकमसंभववसेण तत्थ भुजगारसिद्धीए विसंवादाभावादो ।

❀ पढमसम्मत्तमुप्पादयमाणयस्स वा तदियसमयप्पहुडि जाव विज्झादसंकमपढमसमयादो त्ति ।

§ ३३२. णिस्संतकम्मिय मिच्छाइट्ठिणा पढमसम्मत्ते उप्पादिदे पढमसमयम्मि सम्मामिच्छत्तस्स संतं होदूण विदियसमए अवत्तव्वसंकमो होइ । पुणो तदियादिसमएसु गुणसंकमवसेण भुजगारसंकमो होदूण गच्छदि जाव विज्झादसंकमपारंभपढमसमयो त्ति । एदं णिस्संतकम्मिय मिच्छाइट्ठिं पडुच्च वुत्तं । संतकम्मिय मिच्छाइट्ठिणा पुण उवसमसम्मत्ते समुप्पाइदे तप्पढमसमयप्पहुडि जाव गुणसंकमचरिमसमयो त्ति ताव भुजगारसंकमसामित्तमविरुद्धं दट्ठव्वं; उव्वेल्लणसंकमादो गुणसंकमपारंभसमए चेव भुजगारसंभवं पडि विरोहाभावादो । एवमेसो सम्मामिच्छत्तस्स भुजगारसंकमसामित्तविसयो तीहि पयारेहि णिद्दिट्ठो । जदो एदं देसामासियं तदो सम्माइट्ठिणा मिच्छत्ते पडिवण्णे तप्पढमसमयम्मि

---

§ ३३०. क्योंकि वहाँ पर गुणसंक्रमका नियम देखा जाता है ।

※ अथवा क्षपकके जब तक गुणसंक्रमके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वका संक्रमण होता है तब तक वह उसका भुजगारसंक्रामक है ।

§ ३३१. क्योंकि दर्शनमोहनीयके क्षपकके अपूर्वकरणके पहले समयसे लेकर सर्वसंक्रम होने तक सम्यग्मिथ्यात्वका गुणसंक्रम सम्भव होनेसे वहाँ भुजगारकी सिद्धिमें कोई विसंवाद नहीं है ।

※ अथवा प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न कर तीसरे समयसे लेकर विध्यातसंक्रमके प्रथम समयके प्राप्त होने तक सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगारसंक्रामक है ।

§ ३३२. सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तासे रहित मिथ्यादृष्टि जीवके द्वारा प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करने पर प्रथम समयमें सम्यग्मिथ्यात्वका सत्त्व होकर दूसरे समयमें अवक्तव्यसंक्रम होता है । पुनः तृतीय आदि समयोंमें गुणसंक्रमवश भुजगारसंक्रम होकर विध्यातसंक्रमके प्रारम्भके प्रथम समयके प्राप्त होने तक जाता है । यह सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तासे रहित मिथ्यादृष्टिकी अपेक्षा कथन किया है । सत्कर्म मिथ्यादृष्टि के द्वारा तो उपशमसम्यक्त्व उत्पन्न करने पर उसके पहले समयसे लेकर गुणसंक्रमके अन्तिम समय तक भुजगारसंक्रमका स्वामित्व निर्विरोध जानना चाहिए, क्योंकि उद्वेलनासंक्रमके बाद गुणसंक्रमके प्रारम्भ होनेके समयमें ही भुजगार सम्भव होनेके प्रति कोई विरोध नहीं आता । इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगारसंक्रमविषयक यह निर्देश तीन प्रकारसे कहा है । यतः यह देशामर्षक है अतः सम्यग्दृष्टि जीवके मिथ्यात्वको प्राप्त होने पर उसके प्रथम

अधापवत्तसंकमेण भुजगारसंकमो होइ तहा उव्वेल्लमाणमिच्छाइट्ठिणा वेदयसम्मत्ते गहिदे तस्स पढमसमए वि विज्झादसंकमेण भुजगारसंकमसंभवो वत्तव्वो ।

⊛ तव्वदिरित्तो जो संकामगो सो अप्पदरसंकामगो वा अवत्त-संकामगो वा ।

§ ३३३. पुव्वुत्त भुजगारसंकामणादो अण्णो जो संकामगो सो जहासंभवमप्पयर-संकामगो वा अवत्तव्वसंकामगो वा होइ; तत्थ पयारंतरासंभवादो ।

⊛ सोलसकसायाणं भुजगारसंकामगो अप्पदरसंकामगो अवट्ठिद-संकामगो अवत्तव्वसंकामगो को होदि ?

§ ३३४. सुगममेदं पुच्छावक्कं ।

⊛ अण्णदरो ।

§ ३३५. अणंताणुबंधीणं ताव भुजगारसंकामगो अण्णदरो मिच्छाइट्ठी सम्माइट्ठी वा होइ, मिच्छाइट्ठिम्मि णिरंतरबंधीणं तेसिं तदविरोहादो । सम्माइट्ठिम्मि वि गुणसंकमपरिण-दम्मि सम्मत्तग्गहणपढमावलियाए वा विदियादिसमएसु तदुवलद्धीदो । अप्पयरसंकामओ वि अण्णयरो मिच्छाइट्ठी सम्माइट्ठी वा होइ; उहयत्थ वि अप्पयरसंभवे विरोहाणुवलंभादो । तहा अवट्ठिदसंकामगो वि अण्णदरो मिच्छाइट्ठी सासणसम्माइट्ठी वा होइ; तत्तो अण्णत्थ तदणुवलंभादो । मिच्छाइट्ठिस्स सम्मत्त-

समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा भुजगारसंक्रम होता है । उसी प्रकार उद्वेलना करनेवाले मिथ्या-दृष्टिके वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त होने पर उसके प्रथम समयमें भी विध्यातसंक्रमके द्वारा भुजगारसंक्रम सम्भव है ऐसा कहना चाहिए ।

*** उससे भिन्न जो संक्रामक है वह या तो अल्पतर संक्रामक है या अवक्तव्य संक्रामक है ।**

§ ३३३. पूर्वोक्त भुजगारसंक्रामकसे अन्य जो संक्रामक है वह यथासम्भव या तो अल्पतर संक्रामक है या अवक्तव्यसंक्रामक है, क्योंकि वहाँ अन्य प्रकार सम्भव नहीं है ।

*** सोलह कषायोंका भुजगारसंक्रामक, अल्पतरसंक्रामक, अवस्थितसंक्रामक और अवक्तव्यसंक्रामक कौन है ?**

§ ३३४. यह पृच्छासूत्र सुगम है ।

*** अन्यतर जीव है ।**

§ ३३५ अनन्तानुबन्धियोंका तो भुजगारसंक्रामक अन्यतर मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि जीव है, क्योंकि मिथ्यादृष्टि जीवके निरन्तर बँधनेवाली उक्त प्रकृतियोंका भुजगारसंक्रम होनेमें कोई विरोध नहीं आता । सम्यग्दृष्टि जीवके भी गुणसंक्रम रूपसे परिणत होने पर या सम्यक्त्वको ग्रहण करने की प्रथम आवलिके द्वितीयादि समयोंमें भुजगारसंक्रमकी उपलब्धि होती है । इनका अल्पतरसंक्रामक भी अन्यतर मिथ्यादृष्टि या सम्यग्दृष्टि जीव है, क्योंकि दोनों ही स्थलोंमें अल्पतरसंक्रमके होनेमें कोई विरोध नहीं पाया जाता । तथा अवस्थित संक्रामक भी मिथ्यादृष्टि या सासादन सम्यग्दृष्टि जीव है, क्योंकि इन दो स्थानोंके सिवा अन्यत्र उसकी उपलब्धि नहीं होती ।

भुजगयस्स पढमावलियाए आयव्वयाणं सरिसत्तावलंबणेण मिच्छत्तस्सेव तेसिमवट्ठाणसंभवो किण्ण होइ ? ण, तत्थ मिच्छाइट्ठि चरिमावलियाए पडिच्छिददव्ववसेण भुजगारसंकमं मोत्तूणावट्ठाणासंभवादो। संपहि अणंताणुबंधीणमवत्तव्वसंकामगो अण्णदरो त्ति वुत्ते विसंजोयणापुव्वसंजोगपढमसमयणवकबंधमावलियादिक्कंतं संकामेमाणयस्स मिच्छाइट्ठिस्स सासणसम्माइट्ठिस्स वा गहणं कायव्वं। एवं चेव सेसकसायाणं पि भुजगारादिपदाणमण्णदरसामित्ताहिसंबंधो अणुगंतव्वो। णवरि तेसिमवत्तव्वसंकामगो अण्णदरो सव्वोवसामणापडिवादपढमसमए वट्टमाणगो सम्माइट्ठो चेव होइ णाण्णो त्ति वत्तव्वं। अण्णदरणिद्देसेण वि ओगाहणादि विसेसपडिसेहो दट्ठव्वो।

❀ एवं पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं।

§ ३३६. कुदो ? भुजगारादिपदाणमण्णदरसामित्तं पडि पुव्विल्लसामित्तादो विसेसाभावादो। पुरिसवेदावट्ठिदसंकमसामित्तगओ को वि विसेससंभवो अत्थि त्ति तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरं सुत्तमाह।

❀ णवरि पुरिसवेद-अवट्ठिदसंकामगो णियमा सम्माइट्ठी।

§ ३३७. कुदो ? सम्माइट्ठीदो अण्णत्थ पुरिसवेदस्स णिरंतरबंधित्ताभावादो। ण च

शंका—जो मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको प्राप्त होता है उसकी प्रथम आवलिमें आय और व्ययकी समानताका अवलम्बन करनेसे मिथ्यात्वके समान अनन्तानुबन्धियोंका अवस्थान क्यों सम्भव नहीं है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि सम्यग्दृष्टिकी प्रथम आवलिमें मिथ्यादृष्टिकी अन्तिम आवलिके द्रव्यके संक्रमित होनेके कारण वहाँ भुजगारसंक्रमको छोड़कर अवस्थानसंक्रम सम्भव नहीं है।

अब अनन्तानुबन्धियोंका अवक्तव्यसंक्रामक जीव अन्यतर होता है ऐसा करने पर विसंयोजना पूर्वक संयोगके प्रथम समयमें हुए नवकबन्धको बन्धावलिके बाद संक्रमण करनेवाले मिथ्यादृष्टि या सासादन सम्यग्दृष्टिका ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार शेष कषायोंके भी भुजगारादिपदोंका अन्यतर जीव स्वामी है इसका सम्बन्ध समझ लेना चाहिए। इतनी विशेषता है इनका अवक्तव्यसंक्रामक अन्यतर सर्वोपशामनासे गिरनेके प्रथम समयमें विद्यमान सम्यग्दृष्टि जीव ही होता है, अन्य जीव नहीं ऐसा यहाँ पर कथन करना चाहिए। सूत्रमें अन्यतर पदका निर्देश करनेसे अवगाहना आदि विशेषका निषेध जान लेना चाहिए।

* इसी प्रकार पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका स्वामित्व जानना चाहिए।

§ ३३६. क्योंकि भुजगार आदि पदोंके अन्यतर जीवके स्वामी होनेकी अपेक्षा पहले कहे गये स्वामित्वसे इसमें कोई विशेषता नहीं है। मात्र पुरुषवेदके अवस्थित संक्रमके स्वामित्वमें कुछ विशेषता सम्भव है, इसलिए उसका निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदका अवस्थित संक्रामक नियमसे सम्यग्दृष्टि जीव है।

§ ३३७. क्योंकि सम्यग्दृष्टिके सिवा अन्यत्र पुरुषवेदका निरन्तर बन्ध नहीं होता। और

णिरंतरबंधेण विणा अवट्ठिदसंकमसामित्तविहाणसंभवो विरोहादो ।

*** इत्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुजगार-अप्पदर-अवत्तव्वसंकमो कस्स ?**

§ ३३८. सुगमं ।

*** अण्णदरस्स ।**

§ ३३९. एत्थण्णदरणिद्देसेण मिच्छाइट्ठि-सम्माइट्ठीणं गहणं कायव्वं; भुजगारप्पदरसामित्ताणमुहयत्थ वि संभवे विरोहाभावादो । तं जहा—मिच्छाइट्ठिम्मि ताव अप्पप्पणो बंधगद्धामेत्तकालं भुजगारसंकमो होइ; तत्थागमादो णिज्जराए थोवभावोवलंभादो । तं कधं ? इत्थिवेद-हस्सरदीणं तक्कालबंधावलियादिक्कंतणवकबंधो संपुण्णसमयपबद्धमेत्तो णिज्जरागोवुच्छाबुण समयपबद्धस्स संखेज्जभागमेत्ती चेव बंधगद्धाणुसारेण सव्वत्थ संचयसिद्धीदो । णवुंसयवेदारइसोगाणं पि णवकबंधागमादो तक्कालभाविगोवुच्छणिज्जरा संखेज्जभागहीणा । एदस्स कारणं बंधगद्धाणुसरणेण वत्तव्वं । एवं च संते भुजगारसंकमसामित्तमेत्थाविरुद्धं सिद्धं । बंधविच्छेदकाले पुण अप्पयरसंकमो चेव होइ; तत्थागमाभावेणेयं त

निरन्तर बन्धके बिना अवस्थित संक्रमके स्वामित्वका विधान करना सम्भव नहीं है, क्योंकि उसमें विरोध आता है ।

*** स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोकका भुजगार, अल्पतर और अवक्तव्यसंक्रम किसके होता है ?**

§ ३३८. यह सूत्र सुगम है ।

*** अन्यतर जीवके होता है ।**

§ ३३९. यहाँ पर अन्यतर पदका निर्देश करनेसे मिथ्यादृष्टि और सम्यग्दृष्टि जीवोंका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि भुजगार और अल्पतर संक्रमका स्वामित्व उभयत्र ही सम्भव होनेमें कोई विरोध नहीं आता । यथा—मिथ्यादृष्टिके तो अपने-अपने बन्धककालप्रमाण काल तक भुजगार संक्रम होता है, क्योंकि वहाँ पर आयसे निर्जरा स्तोक उपलब्ध होती है ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि स्त्रीवेद, हास्य और रतिका बन्धावलिके बाद तात्कालिक जो नवकबन्ध है वह सम्पूर्ण समयप्रबद्धप्रमाण है । परन्तु निर्जरासम्बन्धीगोपुच्छा समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण ही है, क्योंकि बन्धककालके अनुसार सर्वत्र सञ्चयकी सिद्धि होती है । नपुंसकवेद, अरति और शोकके नवकबन्धके आयसे तत्कालभावी गोपुच्छाकी निर्जरा संख्यातवें भागहीन है । इसका कारण बन्धककालके अनुसार कहना चाहिए और ऐसा होने पर भुजगारसंक्रमका स्वामित्व यहाँ पर अविरोध रूपसे सिद्ध होता है । बन्धविच्छेदके कालमें तो अल्पतरसंक्रम ही होता है, क्योंकि

णिज्जरा-परिणदाणमेदेसिं तदविरोहादो। एवं चेव सम्माइट्ठिम्हि वि तदुभयसामित्ताविरोहो दट्ठव्वो। णवरि इत्थि-णवुंसयवेदाणं सम्माइट्ठिम्मि बंधविरहियाणमप्पयरसंकमो चेवेत्ति गुणसंकमविसए तेसिं भुजगारसामित्तमवहारेयव्वं। सव्वेसिमवत्तव्वसंकमो सव्वोवसामणा-पडिवादपढमसमए दट्ठव्वो।

एवमोघेण सामित्ताणुगमो समत्तो।

§ ३४०. आदेसेण णेरइय०-मिच्छ० भुज० अप्प० अवट्ठि० संक० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि०। अवत्त० संक० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठिस्स पढमसमयसंका-मयस्स सम्म० भुज० अप्प० संक० कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० अवत्त० संक० कस्स? अण्णद० पढमसमयसंका० मिच्छाइट्ठि० सम्मामि० भुज० अप्प० संक० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि वा। एवमवत्त० अणंताणु०चउक्क० भुज० अप्प० संक० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा। अवट्ठि० संक० कस्स? अण्णद० मिच्छाइट्ठि०। अवत्त० संक० कस्स? अण्णद० मिच्छादिट्ठि० पढमसमयसंका० बारसक०-भय-दुगुंछा० ओघं। णवरि अवत्त० णत्थि। पुरिसवे० भुज० अप्प० संक० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठिस्स वा। अवट्ठि० संक० कस्स? अण्णद० सम्माइट्ठी। इत्थीवे० णवुंस० भुज०

वहाँ पर आयका अभाव हो जानेसे एकान्तसे निर्जरारूपसे परिणत हुए इन कर्मोंके अल्पतरसंक्रमके होनेमें कोई विरोध नहीं आता। इसी प्रकार सम्यग्दृष्टि जीवके भी इन दोनोंके स्वामित्वका अविरोध जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका सम्यग्दृष्टिके बन्ध नहीं होता इसलिए वहाँ इनका अल्पतरसंक्रम ही है। तथा गुणसंक्रमके समय उनके भुजगारसंक्रमका स्वामित्व जानना चाहिए। सबका अवक्तव्यसंक्रम सर्वोपशामनासे गिरनेके प्रथम समयमें जानना चाहिए।

इस प्रकार ओघसे स्वामित्वानुगम समाप्त हुआ

§ ३४०. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वका भुजगार, अल्पतर और अवस्थितसंक्रम किसके होता है? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होता है। अवक्तव्यसंक्रम होता है? प्रथम समयमें संक्रमण करनेवाले अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होता है। सम्यक्त्वका भुजगार और अल्पतर संक्रम किसके होता है? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होता है। अवक्तव्यसंक्रम किसके होता है? प्रथम समयमें संक्रमण करनेवाले अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होता है। सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगार और अल्पतरसंक्रम किसके होता है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होता है। इसी प्रकार अवक्तव्यसंक्रमका स्वामित्व जानना चाहिए। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भुजगार और अल्पतरसंक्रम किसके होता है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि या मिथ्यादृष्टिके होता है। अवस्थितसंक्रम किसके होता है? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होता है। अवक्तव्यसंक्रम किसके होता है? प्रथम समयमें संक्रमण करनेवाले अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होता है। बारह कषाय भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघके समान है। इतनी विशेषता है कि यहाँ पर इनका अवक्तव्यसंक्रम नहीं है। पुरुषवेदका भुजगार और अल्पतरसंक्रम किसके होता है? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होता है। अवस्थित-संक्रम किसके होता है? अन्यतर सम्यग्दृष्टिके होता है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भुजगारसंक्रम

संक० कस्स ? अण्णद० मिच्छाइट्ठि० । अप्पद० संक० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि० वा । हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुज० अप्प० संक० कस्स ? अण्णद० सम्माइट्ठि० मिच्छाइट्ठि० । एवं सव्वणेरइय-तिरिक्खपंचिंदिय-तिरिक्खतिय-देवभवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति ।

§ ३४१. पंचिंदियतिरिक्खअप्प०-मणुसअपज्ज०-सम्म०-सम्मामि०-सत्तणोक० भुज० अप्पद० संक० कस्स ? अण्णद०-सोलसक०-भय-दुगुंछ० भुज० अप्प० अवट्ठि० संक० कस्स ? अण्णद० ।

§ ३४२. मणुसतिए ओघं । णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० देवो त्ति ण भाणिदव्वो । अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थिवेद०-णवुंस०-अप्प० अणंताणु० चउक०, चदुणोक० भुज० अप्प०-बारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछा० भुज० अप्प० अवट्ठि० संक० कस्स ? अण्णद० । एवं जाव० ।

❀ कालो एयजीवस्स ।

§ ३४३. भुजगारादिपदविसयसामित्तविहासणाणंतरमेत्ते । एयजीवसंबंधिओ कालो भुजगारादिपदाणं विहासियव्वो त्ति अहियारसंभालणापरमिदं सुत्तं ।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

किसके होता है ? अन्यतर मिथ्यादृष्टिके होता है। अल्पतरसंक्रम किसके होता है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होता है। हास्य, रति, अरति और शोकका भुजगार और अल्पतर संक्रम किसके होता है ? अन्यतर सम्यग्दृष्टि और मिथ्यादृष्टिके होता है। इसी प्रकार सब नारकी, सामान्य तिर्यञ्च, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, सामान्यदेव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ ३४१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सात नोकषायोंका भुजगार और अल्पतरसंक्रम किसके होता है ? अन्यतरके होता है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका भुजगार, अल्पतर और अवस्थितसंक्रम किसके होता है ? अन्यतरके होता है।

§ ३४२. मनुष्यत्रिकमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि यहाँ पर बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवक्तव्यसंक्रम देवोंके होता है ऐसा नहीं कहना चाहिए। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका अल्पतर, अनन्तानुबन्धीचतुष्क और चार नोकषायोंका भुजगार और अल्पतर, बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साका भुजगार, अल्पतर और अवस्थितसंक्रम किसके होता है ? अन्यतरके होता है। इसी प्रकार अनाहारकमार्गणा तक ले जाना चाहिए।

इस प्रकार स्वामित्व समाप्त हुआ।

*** एक जीवकी अपेक्षा कालका अधिकार है।**

§ ३४३. भुजगार आदि पदोंके स्वामित्वका व्याख्यान करनेके बाद आगे भुजगार आदि पदोंका एक जीव सम्बन्धी कालका व्याख्यान करना चाहिए। इस प्रकार अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र है।

*** मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ३४४. सुगममेदमोघेण मिच्छत्तभुजगारसंकामयस्स जहण्णुक्कस्सकालणिद्देसा-वेक्खं पुच्छासुत्तं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ३४५. तं जहा—पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो वेदगसम्मत्तभागयस्स पढमसमए विज्झादसंकमेणावत्तव्वसंकमो होइ। पुणो विदियादीणमण्णदरसमए जत्थ वा तत्थ वा चरिमावलियमिच्छाइट्ठिणा वड्ढिदूण बंधणवकबंधसमयपबद्धं बंधावलियादिक्कंतं भुजगारसरूवेण संकामिय तदणंतरसमए अप्पदरमवट्ठिदं वा गयस्स लद्धो[1] मिच्छत्तभुजगार-संकामयस्स जहण्णकालो एयसमयमेत्तो।

❀ उक्कस्सेण आवलिया समयूणा।

§ ३४६. तं कथं? पुव्वुप्पण्णसम्मत्तपच्छायदमिच्छाइट्ठिणा चरिमावलियाए णिरंतर-मुदयावलियं पविसमाणगोवुच्छेहिंतो अब्भहियकमेण बंधिदूण वेदगसम्मत्ते पडिवण्णे तस्स पढमसमए अवत्तव्वसंकमो होदूण पुणो विदियादिसमएसु पुव्वुत्तणवकबंधवसेण णिरंतरं भुजगारसंकमे संजादे लद्धो[1] मिच्छत्तभुजगारसंकमस्स समयूणावलियमेत्तो उक्कस्सकालो। एवं ताव पुव्वुप्पण्णसम्मत्तमिच्छाइट्ठिणवकबंधावलंबणेण समयूणावलियमेत्त-मिच्छत्त भुज-गारसंकमुक्कस्सकालसंभवं परूविय संपहि गुणसंकमकालावेक्खाए अंतोमुहुत्तमेत्तो पयदुक्कस्स-

§ ३४४. ओघसे मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रामकके जघन्य और उत्कृष्टकालके निर्देशकी अपेक्षा करनेवाला यह पृच्छासूत्र सुगम है।

* जघन्यकाल एक समय है।

§ ३४५. यथा—पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वके साथ मिथ्यात्वसे वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुए जीवके प्रथम समयमें विध्यातसंक्रमके द्वारा अवक्तव्यसंक्रम होता है। पुनः द्वितीय आदि समयोंमेंसे किसी समयमें जहाँ कहीं अन्तिम आवलिमें विद्यमान मिथ्यादृष्टिके द्वारा बढ़ाकर बाँधे गये नवकबन्ध समयप्रबद्धको बन्धावलिके बाद भुजगाररूपसे संक्रमा कर तदनन्तर समयमें अल्पतर या अवस्थितसंक्रमको प्राप्त हुए जीवके मिथ्यात्वके भुजगार संक्रामकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ।

* उत्कृष्ट काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण है।

§ ३४६. शंका—वह कैसे?

समाधान—पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे पीछे आये हुए मिथ्यादृष्टिके द्वारा चरमावलिके निरन्तर उदयावलिमें प्रवेश करनेवाले गोपुच्छामे अधिक रूपसे बाँधकर वेदकसम्यक्त्वके प्राप्त होने पर उसके प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रम होकर पुनः द्वितीयादि समयोंमें पूर्वोक्त नवकबन्धके वशसे निरन्तर भुजगारसंक्रमके होने पर मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रमका उत्कृष्ट काल एक समय कम एक आवलिप्रमाण उपलब्ध हुआ। इस प्रकार सर्वप्रथम पूर्वोत्पन्न सम्यक्त्वसे मिथ्यादृष्टि होकर वहाँ पर होनेवाले नवकबन्धके अवलम्बनसे मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रमके एक समय कम एक आवलिप्रमाण उत्कृष्टकालकी सम्भावनाका कथन करके अब गुणसंक्रम कालकी अपेक्षासे प्रकृत उत्कृष्ट काल

1. 'लद्धो' ता०।

कालो होइ त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ ।

❀ अथवा अंतोमुहुत्तं ।

§ ३४७. तं जहा—दंसणमोहमुवसामेंतयस्स वा जाव गुणसंकमो ताव णिरंतरं भुजगारसंकमो चेव; तत्थ पयारंतरासंभवादो। सो च गुणसंकमकालो अंतोमुहुत्तमेत्तो तदो पयदुकस्सकालवलंभो ण विरुद्धो ।

❀ अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३४८. सुगममेदं ।

❀ एक्को वा समयो जाव आवलिया दुसमयूणा ।

§ ३४९. पुव्वुप्पण्णसम्मत्तपच्छायदमिच्छाइट्ठि-चर-वेदयसम्माइट्ठि पढमावलियावेक्खाए एसो कालवियप्पो णिद्दिट्ठो । तं जहा—तहाविहसम्माइट्ठिणो पढमसमए अवत्तव्वसंकामगो काद्रूण[1] विदियसमयम्मि अप्पयरसंकमेण परिणमिय तदणंतरसमए चरिमावलियमिच्छाइट्ठिबंधवसेण भुजगारमवट्ठिदभावं वा गयस्स लद्धो एयसमयमेत्तो अप्पयरकालजहण्णवियप्पो । एवं दुसमय-तिसमयादिकमेण णेदव्वं जाव आवलिया दुसमयूणा त्ति । तत्थ चरिमवियप्पो वुच्चदे—पढमसमए अवत्तव्वसंकामगो होदूण विदियादि समएसु

अन्तर्मुहूर्त प्रमाण होता है इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

* अथवा उत्कृष्टकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३४७. यथा—दर्शनमोहनीयका उपशम करनेवाले जीवके जब तक गुणसंक्रम होता है तबतक निरन्तर भुजगारसंक्रम ही होता है, क्योंकि गुणसंक्रमके समय अन्य कोई प्रकार सम्भव नहीं है। और वह गुणसंक्रमका काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है, इसलिए प्रकृत उत्कृष्ट कालकी प्राप्ति विरोधको नहीं प्राप्त होती ।

* अल्पतरसंक्रमका कितना काल है ?

§ ३४८. यह सूत्र सुगम है ।

* एक समयसे लेकर दो समय कम आवलितक काल है ।

§ ३४९. पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे पीछे आकर जो मिथ्यादृष्टि हुआ है और बादमें जो वेदकसम्यग्दृष्टि हुआ है उसकी प्रथम आवलिकी अपेक्षासे यह कालका विकल्प निर्दिष्ट किया है। यथा—प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रामक होकर दूसरे समयमें अल्पतरसंक्रम रूपसे परिणमन कर उसके अनन्तर समयमें अन्तिम आवलिमें हुए मिथ्यादृष्टिके बन्धके कारण भुजगारसंक्रम या अवस्थितसंक्रमको प्राप्त हुए उस प्रकारके सम्यग्दृष्टिके अल्पतरसंक्रमका जघन्य विकल्परूप एक समय काल प्राप्त हुआ। इस प्रकार दो समय और तीन समय आदिके क्रमसे दो समय कम एक आवलिप्रमाण काल तक ले जाना चाहिए। उसमें अन्तिम विकल्पको कहते हैं—प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रामक होकर द्वितीयादि सब समयोंमें ही अल्पतर संक्रमको करके पुनः प्रथम आवलिके अन्तिम समयमें

१. 'होदूण' ता० ।

सव्वेसु चेव अप्पयरसंकमं कादूण पुणो पढमावलियचरिमसमए भुजगारावट्ठिदाणमण्णयर संकमपज्जायं गदो लद्धो दुसमयूणावलियमेत्तो। मिच्छत्तप्पयरसंकमं कादूण समयूणावलियमेत्तो अप्पयरकालवियप्पो किण्ण परूविदो ? ण, तहा कीरमाणे अप्पयरकालस्स ववच्छेद-करणोवायाभावादो।

*** अथवा अंतोमुहुत्तं।**

§ ३५०. तं जहा—बहुसो दिट्ठमग्गेण मिच्छाइट्ठिणा वेदगसम्मत्तमुप्पाइदं। तस्स पढमावलियचरिमसमए पुव्वुत्तेण णाएण भुजगारसंकमं कादूण तदो अप्पयरसंकमं पारमिय सव्वजहण्णेण कालेण मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्ताणमण्णदरगुणं गयस्स जहण्णेणंतोमुहुत्तपमाणो अप्पयरकालवियप्पो लब्भदे।

*** तदो समयुत्तरो जाव छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।**

§ ३५१. तदो सव्वजहण्णंतोमुहुत्तमेत्तप्पदरकालादो समउत्तरादिकमेणप्पयरसंकम-कालवियप्पो णिरंतरमणुगंतव्वो जाव सादिरेयछावट्ठिसागरोवममेत्तो तदुक्कस्सकालो समुवलद्धो त्ति। तत्थ सव्वपच्छिमवियप्पं वत्तइस्सामो। तं जहा—अणादियमिच्छाइट्ठिणा सम्मत्ते समुप्पाइदे अंतोमुहुत्तकालं गुणसंकमो होदि, तदो विज्झादे पदिदस्स णिरंतरमप्पयर-संकमो होदूण गच्छदि जावंतो मुहुत्तमेत्तुवसमसम्मत्तकालसेसो वेदगसम्मत्तकालो च देसूण छावट्ठिसागरोवममेत्तो त्ति। तत्थंतो मुहुत्तसेसे वेदगसम्मत्तकाले खवणाए अब्भुट्ठिदस्सापुव्व-

भुजगार या अवस्थित इनमेंसे किसी एक संक्रमरूप पर्यायको प्राप्त हुआ। इस प्रकार मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रमका दो समय कम एक आवलिप्रमाण काल प्राप्त हुआ।

शंका—अन्तिम समयमें भी अल्पतरसंक्रमको करके अल्पतर संक्रमका एक समय कम एक आवलिप्रमाण काल प्राप्त किया जा सकता है वह यहाँ पर क्यों नहीं कहा ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वैसा करने पर अल्पतरसंक्रमके कालका विच्छेद करनेका कोई उपाय नहीं रहता।

*** अथवा अन्तर्मुहूर्तकाल है।**

§ ३५०. यथा—जिसने बहुत बार मार्गको देखा है ऐसे मिथ्यादृष्टिने वेदकसम्यक्त्वको उत्पन्न किया वह प्रथमावलिके अन्तिम समयमें पूर्वोक्त न्यायके अनुसार भुजगारसंक्रमको करके अनन्तर अल्पतरसंक्रमका प्रारम्भ करके सबसे जघन्य काल द्वारा मिथ्यात्व या सम्यग्मिथ्यात्व इनमेंसे किसी एक गुणस्थानको प्राप्त हुआ। इस प्रकार उसके अल्पतर कालका विकल्प जघन्यसे अन्तर्मुहूर्त प्रमाण प्राप्त होता है।

*** इसके बाद एक एक समय बढ़ाते हुए साधिक छ्यासठ सागर काल प्राप्त होता है।**

§ ३५१. 'तदो' अर्थात् सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्तप्रमाण कालसे लेकर एक-एक समय अधिकके क्रमसे बढ़ाते हुए अल्पतरसंक्रम कालका विकल्प साधिक छ्यासठ सागरप्रमाण उसका उत्कृष्ट काल उपलब्ध होने तक निरन्तरक्रमसे जानना चाहिए। अब उसमें सबसे अन्तिम विकल्पको बतलाते हैं। यथा—अनादि मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्वको उत्पन्न करने पर अन्तर्मुहूर्त काल तक गुणसंक्रम होता है। इसके बाद विध्यातसंक्रमको प्राप्त हुए उसके निरन्तर अल्पतरसंक्रम अन्तर्मुहूर्तप्रमाण उपशम

करणपढमसमए गुणसंकमपारंभेणाप्पयरसंकमस्स पज्जवसाणं होइ। तदो संपुण्णाछावट्ठि-सागरोवममेत्तवेदगसम्मत्तुक्कस्सकालम्मि अपुव्वाणियट्टिकरणद्धामेत्तमप्पयरसंकमस्स ण लब्भइ त्ति। तम्मि पुव्विल्लोवसमसम्मत्तकालब्भंतरअप्पयरकालादो सोहिदे सुद्धसेस-मेत्तेयसादिरेयछावट्ठिसागरोवमपमाणो पयदुक्कस्सकालवियप्पो समुवलद्धो होइ।

*** अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?**

§ ३५२. सुगममेदं।

*** जहण्णेण एयसमओ।**

§ ३५३. पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो पडिणियत्तिय वेदयसम्मत्तमुवगयस्स पढमावलियाए विदियादिसमएसु जत्थ वा तत्थ वा एयसमयमागमणिज्जराणसरिसत्त-सेणावट्ठिदसंकमं कादूण तदणंतरसमए भुजगारमप्पयरभावं वा गयस्स एयसमयमेत्तावट्ठिद-संकमजहण्णकालोवलंभादो।

*** उक्कस्सेण संखेज्जा समया।**

§ ३५४. तत्थेव सत्तट्ठसमएसु आगमणिज्जराणं सरिसत्तसंभवेण तेत्तियमेत्तावट्ठिद-संकमुक्कस्सकालसिद्धीए विरोहाभावादो।

सम्यक्त्वका काल शेष रहने तक तथा कुछ कम छयासठ सागरप्रमाण वेदक सम्यक्त्वके कालके पूर्ण होने तक होता रहता है। उसमें वेदकसम्यक्त्वके अन्तर्मुहूर्त कालके शेष रहने पर क्षपणाके लिए उद्यत हुए उसके अपूर्वकरणके प्रथम समयमें गुणसंक्रमका प्रारम्भ होनेसे अल्पतरसंक्रमका अन्त होता है। इसलिए वेदकसम्यक्त्वके सम्पूर्ण छयासठ सागरप्रमाणकालमें जो अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणका काल है उतना अल्पतरसंक्रमका काल नहीं प्राप्त होता, इसलिए इस अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणके कालको पूर्वोक्त उपशमसम्यक्त्वके भीतर प्राप्त हुए अल्पतरसंक्रमके कालमेंसे घटा देने पर जो काल शेष बचे उसे कुछ न्यून वेदकसम्यक्त्वके उत्कृष्टकालमें जोड़ देने पर साधिक छयासठ सागरप्रमाण प्रकृत उत्कृष्ट कालका विकल्प प्राप्त होता है।

* अवस्थितसंक्रमका कितना काल है ?

§ ३५२. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

§ ३५३. पूर्वोत्पन्न सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर और वहाँसे निवृत्त होकर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुए जीवके प्रथम आवलिके द्वितीयादि समयोंमें जहाँ-कहीं एक समयके लिए आय और निर्जराके समान होनेके कारण अवस्थित संक्रमको करके उसके अनन्तर समयमें भुजगारसंक्रम या अल्पतरसंक्रमको प्राप्त होने पर अवस्थित संक्रमका जघन्य काल एक समय मात्र उपलब्ध होता है।

* उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।

§ ३५४. वहीं पर आय और निर्जराके सात-आठ समय तक समान रूपसे सम्भव होनेके

❀ अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३५५. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ३५६. सम्माइट्ठिपढमसमयं मोत्तूणण्णत्थ तदभावविणिण्णयादो ।

❀ सम्मत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३५७. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ३५८. तं जहा—उव्वेल्लेमाणमिच्छाइट्ठिणा सम्मत्ताहिमुहेण मिच्छत्तपढमट्ठिदिचरिमसमए चरिमुव्वेल्लणखंडयपढमफालिगुणसंकमेण संकामिदा । तदो अणंतरसमए सम्मत्तमुप्पाइय असंकामगो जादो लद्धो जहण्णेणेयसमयमेत्तो सम्मत्तभुजगारसंकामयकालो ।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३५९. कुदो ? चरिमुव्वेल्लणकंडए सव्वत्थेव गुणसंकमेण परिणदम्मि पयदभुजगारसंकमुक्कस्सकालस्स तप्पमाणत्तोवलंभादो ।

❀ अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

कारण अवस्थित संक्रमके उतने मात्र उत्कृष्ट कालकी सिद्धिमें कोई विरोध नहीं आता ।

* अवक्तव्य संक्रमका कितना काल है ।

§ ३५५ यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ३५६. क्योंकि सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयको छोड़कर अन्यत्र मिथ्यात्वका अवक्तव्यसंक्रम नहीं होता ऐसा निर्णय है ।

* सम्यक्त्वके भुजगारसंक्रमका कितना काल है ?

§ ३५७. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल एक समय है ।

§ ३५८. यथा—उद्वेलना करनेवाले और सम्यक्त्वके अभिमुख हुए मिथ्यादृष्टि जीवने मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके अन्तिम समयमें अन्तिम स्थिति काण्डककी प्रथम फालिको गुणसंक्रमके द्वारा संक्रमित किया । उसके बाद अनन्तर समयमें सम्यक्त्वको उत्पन्न करके वह असंक्रामक हो गया । इस प्रकार सम्यक्त्वके भुजगार संक्रामकका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो गया ।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३५९. क्योंकि अन्तिम उद्वेलना काण्डकके सर्वत्र ही गुणसंक्रमरूपसे परिणत होने पर प्रकृत भुजगार संक्रमका उत्कृष्ट काल तत्प्रमाण उपलब्ध होता है ।

* अल्पतरसंक्रमका कितना काल है ?

§ ३६०. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३६१. सम्मत्तादो मिच्छत्तं गंतूण सव्वलहुण्णंतोमुहुत्तमेत्तकालमप्पयरसंकमेण परिणमिय पुणो सम्मत्तमुवगंतूणासंकामयभावेण परिणदम्मि तदुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

§ ३६२. कुदो ? सम्मत्तादो मिच्छत्तं गंतूण सव्वुक्कस्सेणुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लमाणयस्स तदुवलंभादो ।

❀ अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३६३. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ३६४. सम्मत्तादो मिच्छत्तमुवगयस्स पढमसमयादो अण्णत्थ तदभावविणिण्णयादो ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३६५. सुगमं ।

❀ एक्को वा दो वा समया एवं समयुत्तरो उक्कस्सेण जाव चरिमुव्वेल्लणकंडयुक्कीरणात्ति ।

---

§ ३६०. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है ।**

§ ३६१. क्योंकि सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक अल्पतर संक्रमरूपसे परिणमन करके पुनः सम्यक्त्वको उत्पन्न करके असंक्रामकभावसे परिणत होने पर उक्त काल उपलब्ध होता है ।

*** उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।**

§ ३६२. क्योंकि सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर सबसे उत्कृष्ट उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करनेवाले जीवके उक्त कालकी उपलब्धि होती है ।

*** अवक्तव्यसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ३६३. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।**

§ ३६४. क्योंकि सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वको प्राप्त हुए जीवके प्रथम समयको छोड़कर अन्यत्र उसके अभावका निर्णय है ।

*** सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार संक्रमका कितना काल है ?**

§ ३६५. यह सूत्र सुगम है ।

*** एक समय और दो समय भी है । इस प्रकार एक समय बढ़ाते हुए उत्कृष्ट काल अन्तिम उद्वेलना काण्डकके उत्कीरण करनेमें जितना समय लगे उतना है ।**

§ ३६६. एत्थेयसमयपरूवणा ताव कीरदे। तं जहा—उव्वेल्लमाणमिच्छादिट्ठिणा मिच्छत्तपढमट्ठिदिचरिमसमए चरिमुव्वेल्लणखंडयं पढमफालीए गुणसंकमेण संकामिदाए एयसमयं भुजगारसंकमो होदूण सम्मत्तुप्पत्तिपढमसमए अप्पयरसंकमो जादो लद्धो एय-समयमेत्तो सम्मामिच्छत्तभुजगारसंकमजहण्णकालो। 'दो वा समया' पुव्वं व उव्वेल्ले-माणएण दोसु समएसु चरिमुव्वेल्लणखंडयं संकामिय सम्मत्ते समुप्पाइदे तदुवलंभादो। एवं तिसमय-चदुसमयादिभुजगारसंकमकालवियप्पा समुप्पाएयव्वा जाव उक्कस्सेण अंतो-मुहुत्तमेत्तचरिमुव्वेल्लणखंडयुक्कीरणद्धापमाणो सम्मामिच्छत्तभुजगारसंकामयकालो संजादो त्ति। संपहि सम्मामिच्छत्तस्स पयारंतरेणावि अंतोमुहुत्तमेत्तभुजगारुक्कस्सकालसंभवपदुप्पा-यणट्ठं सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ।

*** अथवा सम्मत्तमुप्पादेमाणयस्स वा तदो खवेमाणयस्स वा जो गुणसंकमकालो सो वि भुजगारसंकामयस्स कायव्वो।**

§ ३६७. कुदो? गुणसंकमविसए भुजगारसंकमं मोत्तूण पयारंतरासंभवादो।

*** अप्पदरसंकामगो केवचिरं कालादो होदि?**

§ ३६८. सुगमं।

*** जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।**

---

§ ३६६. यहाँ पर सर्व प्रथम एक समयकी प्ररूपणा करते हैं। यथा—उद्वेलना करने वाले मिथ्यादृष्टिके द्वारा मिथ्यात्वकी प्रथम स्थितिके अन्तिम समयमें अन्तिम उद्वेलना काण्डककी प्रथम फालिके गुणसंक्रमके द्वारा संक्रमित करने पर एक समय तक भुजगार संक्रम होकर सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके प्रथम समयमें अल्पतर संक्रम हो गया। इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार संक्रमका जघन्य काल एक समय प्राप्त हुआ। अथवा दो समय काल है, क्योंकि पहलेके समान उद्वेलना करनेवाले जीवके द्वारा दो समय तक अन्तिम उद्वेलना काण्डकको संक्रमा कर सम्यक्त्वको उत्पन्न करने पर उक्त दो समय काल उपलब्ध होता है। इस प्रकार दो समय और तीन समय आदि भुजगार संक्रम कालके विकल्प उत्कृष्टसे अन्तर्मुहूर्त मात्र अन्तिम उद्वेलना काण्डकके उत्कीर्ण काल प्रमाण सम्यग्मिथ्यात्व सम्बन्धी भुजगार संक्रामक कालके उत्पन्न होने तक उत्पन्न करने चाहिए। अब सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार संक्रमका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण प्रकारान्तरसे भी सम्भव है इस बातका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** अथवा सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेवालेका तथा क्षपणा करनेवालेका जो गुण संक्रमका काल है वह भी भुजगार संक्रामकका करना चाहिए।**

§ ३६७. क्योंकि गुणसंक्रममें भुजगार संक्रमको छोड़कर अन्य कोई प्रकार सम्भव नहीं है।

*** अल्पतर संक्रामकका कितना काल है?**

§ ३६८. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है।**

§ ३६६. सम्मामिच्छत्तादो वेदयसम्मत्तं मिच्छत्तं वा गंतूण तत्थ सव्वजहण्णंतोमुहुत्तमेत्तकालमप्पयरसंकमं कादूण पुणो सम्मामिच्छत्तगुणमिय असंकामयभावेण परिणदम्मि तदुवलंभादो। अहवा सम्मामिच्छत्तादो वेदयसम्मत्तं गंतूणंतोमुहुत्तमप्पयरसंकमं करिय सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदस्स अपुव्वकरणपढमसमए भुजगारसंकमपारंभेण पयदजहण्णकालो वत्तव्वो।

*** एयसमयो वा।**

§ ३७०. एदस्स संभवविसयो उच्चदे। तं जहा—चरिमुव्वेल्लणकंडयं गुणसंकमेण संकामेंतएण सम्मत्तमुप्पाइदं। तस्स पढमसमए विज्झादेणप्पयरसंकमो जादो। पुणो विदियसमए गुणसंकमपारंभेण भुजगारसंकमो जादो, लद्धो एयसमयमेत्तो सम्मामिच्छत्तप्पयरसंकमकालो। संपहि तदुक्कस्स कालणिद्देसकरणट्ठं सुत्तमोइण्णं।

*** उक्कस्सेण छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि।**

§ ३७१. तं जहा—अणादियमिच्छाइट्ठिउवसमसम्मत्तमुप्पाइय गुणसंकमकाले वोलीणे विज्झादसंकमेणप्पयरपारंभं कादूण वेदयसम्मत्तं पडिवज्जिय अंतोमुहुत्तूण छावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्सापुव्वकरणपढमसमए गुणसंकमपारंभेण अप्पयरसंकमस्साभावो जादो। एवं सादिरेयछावट्ठिसागरोवममेत्तो सम्मामिच्छत्तप्पयरसंकमकालो लद्धो होइ। उवसमसम्मत्तकालब्भंतरे विज्झादं पदिदस्स असंखेज्ज-

---

§ ३६९. क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वसे वेदक सम्यक्त्व या मिथ्यात्वको प्राप्त कर वहाँ पर सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त काल तक अल्पतर संक्रमको करके पुनः सम्यग्मिथ्यात्वको प्राप्त होकर जो असंक्रामक भावको प्राप्त होता है उसके उक्त काल उपलब्ध होता है। अथवा सम्यग्मिथ्यात्वसे वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त कर अन्तर्मुहूर्त काल तक अल्पतर संक्रम करके अतिशीघ्र क्षपणाके लिए उद्यत हुए जीवके अपूर्वकरणके प्रथम समयमें गुणसंक्रमका प्रारम्भ हो जानेसे प्रकृत जघन्य काल कहना चाहिए।

*** अथवा जघन्य काल एक समय है।**

§ ३७०. यह कहाँ पर सम्भव है इसे बतलाते हैं। यथा—अन्तिम उद्वेलना काण्डकको गुणसंक्रमके द्वारा संक्रमित करनेवाले जीवने सम्यक्त्वको उत्पन्न किया। उसके प्रथम समयमें विध्यात संक्रमके द्वारा अल्पतर संक्रम हुआ। इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर संक्रमका जघन्य काल एक समय प्राप्त हो गया। अब उसके उत्कृष्ट काल का निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्र आया है–

*** उत्कृष्ट काल साधिक छयासठ सागर प्रमाण है।**

§ ३७१. यथा–एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीव उपशम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके गुण संक्रमके व्यतीत हो जाने पर विध्यात संक्रमके द्वारा अल्पतर संक्रमका प्रारम्भ करके तथा वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त हो अन्तर्मुहूर्त कम छयासठ सागर काल तक उसके साथ परिभ्रमण करके दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। उसके अपूर्वकरणके प्रथम समयमें गुणसंक्रमका प्रारम्भ हो जाने से अल्पतरसंक्रमका अभाव हो गया। इस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रमका उत्कृष्ट

भागवड्ढीए भुजगारसंकमो चेव होइ, तत्थ सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्तं गच्छमाणदव्वं पेक्खि-ऊण मिच्छत्तादो सम्मामिच्छत्तमागच्छमाणदव्वस्सासंखेज्जगुणत्तदंसणादो त्ति भणंताण-माइरियाणमहिप्पाएण देसूण छावट्ठिसागरोवममेत्तो सम्मामिच्छत्तप्पयरसंकमकालो होइ; तत्थ सुत्ताविरोहो जाणिय वत्तव्वो ।

❀ अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३७२. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ३७३. एदं पि सुगमं ।

❀ अणंताणुबंधीणं भुजगारसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ।

§ ३७४. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमयो ।

§ ३७५. कुदो ? मिच्छाइट्ठिस्स एयसमयं भुजगारसंकमेण परिणमिय बिदियसमए अप्पदरमवट्ठिदभावं वा गयस्स तदुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

§ ३७६. तं जहा—थावरकायादो आगंतूण तसकाएसुप्पण्णस्स जाव पलिदोवमा-

---

काल साधिक छयासठ सागर प्रमाण प्राप्त हो गया । उपशमसम्यक्त्वके कालके भीतर विध्यातसंक्रम को प्राप्त हुए जीवके असंख्यातभागवृद्धिके द्वारा भुजगारसंक्रम ही होता है, क्योंकि वहाँ पर सम्य-ग्मिथ्यात्वमेंसे सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले द्रव्यको देखते हुए मिथ्यात्वमेंसे सम्यग्मिथ्यात्वमें आने-वाला द्रव्य असंख्यातगुणा देखा जाता है ऐसा कथन करनेवाले आचार्योंके अभिप्रायानुसार सम्य-ग्मिथ्यात्वका अल्पतरसंक्रमकाल कुछ कम छयासठ सागरप्रमाण होता है सो यहाँ पर जिस प्रकार सूत्रसे अविरोध हो ऐसा जानकर कथन करना चाहिए ।

✱ अवक्तव्यसंक्रमका कितना काल है ?

§ ३७२. यह सूत्र सुगम है ।

✱ जघन्य और उत्कृष्टकाल एक समय है ।

§ ३७३. यह सूत्र भी सुगम है ।

✱ अनन्तानुबन्धियोंके भुजगारसंक्रामकका कितना काल है ।

§ ३७४. यह सूत्र सुगम है ।

✱ जघन्य काल एक समय है ।

§ ३७५. क्योंकि जो मिथ्यादृष्टि जीव भुजगारसंक्रमरूपसे परिणमन करके दूसरे समयमें अल्पतर या अवस्थित भावको प्राप्त हो गया है उसके उक्त काल उपलब्ध होता है ।

✱ उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ३७६. यथा—स्थावरकायमेंसे आकर त्रसकायिकोंमें उत्पन्न हुए जीवके पल्यके असंख्यातवें

संखेज्जभागमेत्तकालो गच्छदि ताव आगमो बहुगो, णिज्जरा थोवयरा होइ; तम्हा पलिदो-वमासंखेज्जभागमेत्तो पयदभुजगारसंकमुकस्सकालो ण विरुज्झदे ।

❀ अप्पदरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३७७. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ३७८. एदं पि सुगमं ।

❀ उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ ३७९. तं जहा—पुव्वं पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तकालमप्पयरसंकमं कादूण पुणो सम्मत्तमुप्पाइय पढम विदिय छावट्ठीओ[1] जहाकममणुपालिय तदवसाणे अणंताणुबंधि-विसंजोयणाए अब्भुट्ठिदेणापुव्वकरणपढमसमए पारद्धगुणसंकमेणप्पयरसंकमसंताणस्स विच्छेदो कदो । एवमेसो पलिदोवमासंखेज्जभागेण सादिरेयबेछावट्ठिसागरोवममेत्तो अणं-ताणुबंधीणमप्पयरसंकमुकस्सकालो होइ ।

❀ अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३८० सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ३८१. एदं पि सुगमं ।

भागप्रमाणकालके जाने तक आय बहुत होती है और निर्जरा उसकी अपेक्षा स्तोक होती है, इसलिए प्रकृत भुजगारसंक्रमका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण विरोधको नहीं प्राप्त होता ।

** अल्पतरसंक्रमका कितना काल है ?*

§ ३७७. यह सूत्र सुगम है ।

** जघन्य काल एक समय है ।*

§ ३७८. यह सूत्र भी सुगम है ।

** उत्कृष्ट काल साधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।*

§ ३७९. यथा—पहले पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक अल्पतरसंक्रम करके पुनः सम्यक्त्वको उत्पन्नकर प्रथम और द्वितीय छयासठसागरका क्रमसे पालनकर उसके अन्तमें अनन्ता-नुबन्धीकी विसंयोजनाके लिए उद्यत हुए जीव अपूर्वकरणके प्रथम समयमें गुणसंक्रमका प्रारम्भकर अल्पतरसंक्रमकी सन्तानका विच्छेद किया । इस प्रकार अनन्तानुबन्धियोंके अल्पतरसंक्रमका यह उत्कृष्ट काल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक दो छयासठ सागर प्रमाण होता है ।

** अवस्थितसंक्रमका कितना काल है ?*

§ ३८०. यह सूत्र सुगम है ।

** जघन्यकाल एक समय है ।*

§ ३८१. यह सूत्र भी सुगम है ।

---

१. 'च' ता० ।

❀ उक्कस्सेण संखेज्जा समया ।

§ ३८२. आगमणिज्जराणं सरिसत्तणेण सत्तट्ठसमएसु अवट्ठिदसंकमसंभवे विरोहाभावादो ।

❀ अवत्तव्वसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३८३. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ३८४. विसंजोयणापुव्वसंजोगणवकबंधावलियवदिक्कंतपढमसमए तदुवलंभादो ।

❀ बारसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं भुजगार-अप्पदरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३८५. सुगमं ।

❀ जहण्णेणेयसमओ ।

§ ३८६. भुजगारादो अप्पयरमप्पयरादो वा भुजगारं गयस्स तदणंतरसमए पदंतरगमणेण तदुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

§ ३८७. एइंदिएहिंतो पंचिंदिएसु पंचिंदिएहिंतो वा एइंदिएसुप्पण्णस्स जहाकमं

*** उत्कृष्ट काल संख्यात समय है ।**

§ ३८२. क्योंकि आय और निर्जराके समान होनेके कारण सात-आठ समय तक अवस्थित-संक्रम सम्भव है इसमें कोई विरोध नहीं आता ।

अवक्तव्यसंक्रामकका कितना काल है ?

§ ३८३. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।**

§ ३८४. क्योंकि विसंयोजनापूर्वक संयोग होने पर जो नवकबन्ध होता है उसकी बन्धावलिके व्यतीत होने के प्रथम समयमें उस कालकी उपलब्धि होती है ।

*** बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतरसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ३८५. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य काल एक समय है ।**

§ ३८६. क्योंकि भुजगारसे अल्पतरको या अल्पतरसे भुजगारको प्राप्त हुए जीवके तदनन्तर समयमें दूसरे पदको प्राप्त करनेसे उक्त काल उपलब्ध होता है ।

*** उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।**

§ ३८७. क्योंकि एकेन्द्रियोंसे पञ्चेन्द्रियोंमें अथवा पञ्चेन्द्रियोंसे एकेन्द्रियोंमें उत्पन्न हुए

तदुभयकालस्स तप्पमाणत्तसिद्धीए विरोहाभावादो। णवरि पुरिसवेदस्स सम्माइट्ठिम्मि तदुभयमुक्कस्सकालसंभवो दट्ठव्वो।

❀ अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३८८. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ३८९. सुगममेदं।

❀ उक्कस्सेण संखेज्जा समया।

§ ३९०. संखेज्जसमए मोत्तूण तत्तो उवरि संतकम्मावट्ठाणाभावेण तदणुसारिणो संकमस्स वि तहाभावसिद्धीए विरोहादो।

❀ अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३९१. सुगमं।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ।

§ ३९२. सव्वोवसामणापडिवादपढमसमयादो अण्णत्थ तदसंभवणिण्णयादो।

❀ इत्थिवेदस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि।

§ ३९३. सुगमं।

जीवके यथाक्रम उन दोनों के काल के उक्त प्रमाण सिद्ध होनेमें विरोध नहीं आता। इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदके उक्त दोनों पदों का उत्कृष्ट काल सम्यग्दृष्टि जीवके सम्भव जानना चाहिए।

*** अवस्थितसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ३८८. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य काल एक समय है।**

§ ३८९. यह सूत्र सुगम है।

*** उत्कृष्ट काल संख्यात समय है।**

§ ३९०. क्योंकि संख्यात समयको छोड़कर उससे अधिक काल तक सत्कर्मका समानरूपसे अवस्थानका अभाव होनेसे उसके अनुसार होनेवाले संक्रमका भी उससे अधिक काल तक सिद्ध होनेमें विरोध आता है।

*** अवक्तव्यसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ३९१. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।**

§ ३९२. क्योंकि सर्वोपशामनासे गिरनेके प्रथम समयके सिवा अन्यत्र उसका होना असम्भव है ऐसा निर्णय है।

*** स्त्रीवेदके भुजगारसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ३९३. यह सूत्र सुगम है।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ३९४. तं कधं ? अण्णवेदबंधादो एयसमयमित्थिवेदबंधं कादूण तदणंतरसमए पुणो वि पडिवक्खवेदबंधमाढविय बंधावलियवदिक्कंतसमए कमेण संकामेमाणयस्स एयसमयमेत्तो इत्थिवेदस्स भुजगारसंकमकालो जहण्णकालो होइ ।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ३९५. सगबंधगद्धाए सव्वत्थेव बंधावलियादिक्कंतसमयपबद्धसंकमवसेण तेत्तियमेत्तकालं भुजगारसिद्धीए णिव्वाहमुवलंभादो । अथवा गुणसंकमकालो घेत्तव्वो ।

❀ अप्पयरसंकमं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ३९६. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एगसमओ ।

§ ३९७. तं जहा—इत्थिवेदं बंधमाणो एगसमयं पडिवक्खपयडिबंधं कादूण पुणो वि इत्थिवेदं चेव बंधिय बंधावलियवदिक्कमे एगसमयमप्पयरसंकामगो जादो लद्धो एगसमयमेत्त जहण्णकालो ।

❀ उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि संखेज्जवस्स[1]ब्भहियाणि ।

* जघन्यकाल एक समय है ।

§ ३९४. शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि अन्य वेदके बन्धके बाद एक समय तक स्त्रीवेदका बन्ध करके उसके बाद दूसरे समयमें फिर भी प्रतिपक्ष वेदका बन्ध करके बन्धावलिको बिताकर अनन्तर समयमें क्रमसे संक्रमण करनेवाले जीवके स्त्रीवेदके भुजगारसंक्रमका जघन्य काल एक समय प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ३९५. क्योंकि अपने बन्धक कालमें सर्वत्र ही बन्धको प्राप्त हुए समयप्रबद्धोंका बन्धावलिके बाद संक्रम होनेसे भुजगार संक्रमका उतना काल निर्बाधरूपसे सिद्ध होता हुआ उपलब्ध होता है । अथवा यहाँ पर गुणसंक्रमका काल ग्रहण करना चाहिए ।

* अल्पतरसंक्रमका कितना काल है ?

§ ३९६. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य काल एक समय है ।

§ ३९७. यथा—स्त्रीवेदका बन्ध करनेवाला जीव एक समय तक प्रतिपक्ष प्रकृतिका बन्ध करके फिर भी स्त्रीवेदका ही बन्ध करके बन्धावलिके व्यतीत होने पर एक समय तक स्त्रीवेदका अल्पतरसंक्रामक हो गया । इस प्रकार एक समयमात्र जघन्य काल उपलब्ध हुआ ।

* उत्कृष्ट काल संख्यात वर्ष अधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।

१. 'वास' ता० ।

§ ३९८. तं जहा—पढमसम्मत्तं गेण्हमाणो पुव्वमेव अंतोमुहुत्तमत्थि त्ति इत्थिवेदस्स अप्पदरसंकमं कादूण सम्मत्तमुप्पाइय तदो वेदगसम्मत्तं पडिवज्जिय पढमछावट्ठिमप्पयर संकमेणाणुपालिय तदवसाणे सम्मामिच्छत्तेणंतरिय पुणो वेदगसम्मत्तं घेत्तूण बिदियछावट्ठि-अप्पयरसंकममणुपालेमाणो अट्ठवस्सूण तेत्तीससागरोवममेत्तकालं देवेसु भमिय तदो पुव्वकोडाउअमणुसेसुववण्णो तत्थ गब्भादिअट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि दंसणमोहणीयं खविय पुव्वकोडिजीविदावसाणे तेत्तीससागरोवमियदेवेसुववज्जिय तत्तो कमेण चुदो संतो पुणो वि पुव्वकोडाउअमणुसेसुववण्णो अंतोमुहुत्तावसेसे जीविदव्वए खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स धापवत्तकरणचरिमसमए पयदप्पयरकालपरिसमत्ती जादा। तदो देसूणपुव्वकोडीहि सादिरेयवेछावट्ठिसागरोवममेत्तो पयदुक्कस्सकालो लद्धो होइ।

❀ अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो ?

§ ३९९. सुगमं।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ।

§ ४००. सव्वोवसामणापडिवादपढमसमए चेव तदुवलंभादो।

❀ णवुंसयवेदस्स अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो ?

§ ४०१. सुगममेदं पुच्छासुत्तं।

---

§ ३९८. यथा—प्रथम सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाला कोई जीव अन्तर्मुहूर्तकाल पहले ही स्त्रीवेदका अल्पतरसंक्रम करके और सम्यक्त्वको उत्पन्न करके उसके बाद वेदकसम्यक्त्वको उत्पन्न करके प्रथम छयासठ सागर काल तक अल्पतरसंक्रमको करते हुए उसके अन्तमें सम्यग्मिथ्यात्वके द्वारा वेदकसम्यक्त्वका अन्तर करके इसके बाद पुनः वेदक सम्यक्त्वको ग्रहण कर दूसरी बार छयासठ सागर काल तक अल्पतरसंक्रमको करते हुए आठ वर्ष कम तेतीस सागर काल देवोंमें व्यतीत कर उसके बाद पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ पर गर्भ से लेकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करके पूर्वकोटिप्रमाण जीवनके अन्तमें तेतीस सागरकी आयुवाले देवोंमें उत्पन्न होकर फिर वहाँ से क्रमसे च्युत होता हुआ फिर भी पूर्वकोटिकी आयुवाले मनुष्योंमें उत्पन्न हुआ। वहाँ जीवनमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर क्षपणा के लिए उद्यत हुआ। उसके अध प्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें प्रकृत अल्पतर संक्रमकी समाप्ति हो गई। इसलिए प्रकृत उत्कृष्ट काल कुछ कम दो पूर्वकोटि अधिक दो छयासठ सागरप्रमाण प्राप्त हुआ।

*** अवक्तव्यसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ३९९. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।**

§ ४००. क्योंकि सर्वोपशामनासे गिरनेके प्रथम समयमें ही अवक्तव्यसंक्रम उपलब्ध होता है।

*** नपुंसकवेदके अल्पतरसंक्रमका कितना काल है ?**

§ ४०१. यह पृच्छासूत्र सुगम है।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ४०२. एदं पि सुगमं; इत्थिवेदप्पयरजहण्णकालेण समाणपरूवणत्तादो ।

❀ उक्कस्सेण बे छावट्ठिसागरोवमाणि तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ ४०३. एदस्स वि कालस्स परूवणा इत्थिवेदप्पदरुक्कस्सकालेण समाणा। णवरि पढमं तिपलिदोवमिएसुप्पज्जिय णवुंसयवेदस्सप्पयरसंकमं कुणमाणो तदवसाणे सम्मत्तलंभेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि संखेज्जवस्साहियाणि हिंडावेयव्वो ।

❀ सेसाणि इत्थीवेदभंगो ।

§ ४०४. सेसाणि भुजगारावत्तव्वपदाणि णवुंसयवेदपडिबद्धाणि इत्थिवेदभंगेणाणुगंतव्वाणि, भुजगारस्स जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं, अवत्तव्वस्स जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ त्ति एदेण भेदाभावादो ।

❀ हस्स-रइ-अरइसोगाणं भुजगार-अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४०५. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

*** जघन्य काल एक समय है ।**

§ ४०२. यह सूत्र भी सुगम है, क्योंकि स्त्रीवेदके अल्पतरसंक्रमके जघन्य कालके समान इसका कथन है ।

*** उत्कृष्ट काल तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागरप्रमाण है ।**

§ ४०३. इस कालकी प्ररूपणा स्त्रीवेदके अल्पतरसंक्रमके उत्कृष्ट कालके समान है । इतनी विशेषता है कि सर्वप्रथम तीन पल्यकी आयुवालोंमें उत्पन्न होकर नपुंसकवेदके अल्पतरसंक्रमको करके उसके अन्तमें सम्यक्त्वकी प्राप्तिके साथ संख्यात वर्ष अधिक दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण करावे ।

*** शेष पदोंका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है ।**

§ ४०४. नपुंसकवेदसे सम्बन्ध रखनेवाले शेष भुजगार और अवक्तव्यपद स्त्रीवेदके भङ्गके समान जानने चाहिए, क्योंकि भुजगारसंक्रमका जघन्य काल एक समय है । और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है तथा अवक्तव्यसंक्रमका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है इस प्रकार इस द्वारा दोनोंके कथनमें कोई भेद नहीं है ।

*** हास्य, रति, अरति और शोकके भुजगार और अल्पतर संक्रमका कितना काल है ?**

§ ४०५. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य काल एक समय है ।**

§ ४०६. इत्थिवेदस्सेव एसो जहण्णकालो साहेयव्वो ।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४०७. अप्पप्पणो बंधकाले भुजगारसंकमो होइ, पडिवक्खपयडिबंधकाले एदेसिमप्पयरसंकमो होदि त्ति पयदुक्कस्सकालसिद्धी वत्तव्वा ।

❀ अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ।

§ ४०८. सुगमं ।

❀ जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

§ ४०९. सुगमं । एवमोघेण कालाणुगमो कादूण संपहि आदेसपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ ।

❀ एवं चदुगदीसु ओघेण साधेदूण णेदव्वो ।

§ ४१०. एवमेदीए दिसाए चदुसु वि गदीसु भुजगारादिसंकमयाणं कालो ओघपरूवणाणुसारेण चिंतिय णेदव्वो त्ति वुत्तं होइ । संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदमत्थमुच्चारणावलंबणेण वत्तइस्सामो । तं जहा—आदेसेण णेरइय०—मिच्छ० भुज० अवट्ठि० अवत्त० संका० ओघं । अप्प० संका० जह० एयस० । उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि देसूणाणि । सम्म० भुज० अवत्त० ओघं । अप्प० संका० जह० एयस० उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । सम्मामि० भुज० संका० जह० एयसमओ । उक्क० अंतोमुहुत्तं ।

---

§ ४०६. स्त्रीवेदके इन पदोंके जघन्य काल के समान यह जघन्य काल साध लेना चाहिए ।

* उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४०७. अपने अपने बन्धकालमें भुजगारसंक्रम होता है तथा प्रतिपक्षप्रकृतिके बन्धकालमें इनका अल्पतरसंक्रम होता है इस प्रकार प्रकृत उत्कृष्ट कालकी सिद्धि कहनी चाहिए ।

* अवक्तव्य संक्रमका कितना काल है ?

§ ४०८. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है ।

§ ४०९. यह सूत्र सुगम है इस प्रकार ओघसे कालका अनुगम करके अब आदेश का कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इस प्रकार चारों गतियोंमें ओघसे साध कर ले जाना चाहिए ।

§ ४१०. 'एवं' अर्थात् इस दिशाके अनुसार चारों ही गतियोंमें भुजगार आदि संक्रामकोंका काल ओघप्ररूपणाके अनुसार विचार कर ले जाना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब इस सूत्रके द्वारा सूचित हुए अर्थको उच्चारणाका अवलम्बन लेकर बतलाते हैं । यथा—आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके भुजगार अवस्थित और अवक्तव्य संक्रामकका काल ओघके समान है । अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । सम्यक्त्वके भुजगार और अवक्तव्य संक्रामकका काल ओघके समान है । अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है । सम्यग्मिथ्यात्वके

अप्प० संका० जह० एयस० । उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । अवत्त० ओघं । अणंताणु०४ भुज० अवट्ठि० अवत्त० संका० ओघं । अप्प० संका० मिच्छत्तभंगो । बारसक०-पुरिसवेद-छण्णोकसाय ओघभंगो । णवरि अवत्त० णत्थि । इत्थिवेद-णवुंस० भुज० ओघं । अप्प० संका० जह० एयस० । उक्क० तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि । एवं सत्तमाए । एवं छसु उवरिमासु पुढवीसु । णवरि सगट्ठिदी । अणंताणु०४ अप्पद० देसूणत्तं णत्थि ।

§ ४११. तिरिक्खेसु मिच्छ० भुज० अवट्ठि० अवत्त० ओघं । अप्प० संका० जह० एयस० । उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । सम्म० णारयभंगो । सम्मामि० भुज० अवत्त० संका० णारयभंगो । अप्प० संका० जह० एयस० । उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि । अणंताणु०४ भुज० अवट्ठि० अवत्त० ओघं । अप्प० संका० जह० एगस० । उक्क० तिण्णि पलिदो० सादिरेयाणि । बारसक०-पुरिसवेद-छण्णोक०

भुजगार संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । अवक्तव्य संक्रामकका काल ओघके समान है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य-संक्रामकका काल ओघके समान है । अल्पतर संक्रामकका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है । बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि यहाँ पर इनका अवक्तव्य पद नहीं है । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके भुजगार संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है । अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है । इसी प्रकार सातवीं पृथिवीमें जानना चाहिए । तथा इसी प्रकार छह ऊपरकी पृथिवियोंमें जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि जहाँ तेतीस सागर कहा है वहाँ अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए । तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अल्पतर संक्रामकका देशोनपना नहीं है ।

विशेषार्थ—सामान्यसे नारकियोंमें और सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें वेदकसम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर है, इसलिए इनमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धी-चतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतर संक्रामकका उत्कृष्ट काल कुछ कम तेतीस सागर कहा है, क्योंकि इस कालके भीतर इनका सर्वदा अल्पतर संक्रम सम्भव है । शेष कालप्ररूपणा ओघको देखकर जो यहाँ सम्भव हो उसे घटित कर लेना चाहिए । जहाँ ओघसे कालमें कुछ विशेषता है उसका निर्देश किया ही है ।

§ ४११. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है । अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है । सम्यक्त्वका भङ्ग नारकियोंके समान है । सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अवक्तव्य संक्रामकका भङ्ग नारकियोंके समान है । अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है । अनन्तानुबन्धी चतुष्कके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है । अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य है । बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान

णारयभंगो। इत्थिवेद-णवुंस० भुज० संका० ओघं। अप्प० संका० जह० एयस०। उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि। एवं पंचिंदियतिरिक्खतिए। णवरि जोणिणी०-इत्थिवेद०-णवुंस० अप्प० संका० जह० एयस०। उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणाणि।

§ ४१२. पंचिं०तिरिक्ख-अपज्ज० - मणुसअपज्ज०-सम्म० - सम्मामि०-सत्तणोक० भुज० अप्प० संका० जह० एयस०। उक्क० अंतोमु०। सोलसक०-भय०-दुगुंछा० भुज० संका० जह० एयसमओ, उक्क० अंतोमु०। अवट्ठि० संका० जह० एयस०। उक्क० संखेज्जा समया। अप्प० संका० भुज० भंगो।

§ ४१३. मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खतियभंगो। णवरि जासिं अवत्त० संका० तासिं जहण्णुक्क०। णवरि मणुस-मणुसपज्ज०-इत्थिवे०- णवुंस० अप्प० संका० जह०

है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके भुजगार संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है। अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तीन पल्य है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेपता है कि योनिनी तिर्यञ्चोंमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य है।

विशेषार्थ—तिर्यञ्चोंमें और पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें वेदकसम्यक्त्वका काल कुछ कम तीन पल्य है, इसलिए इनमें मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर संक्रामकका उत्कृष्ट काल कुछ कम तीन पल्य कहा है। इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अल्पतर संक्रामकका उत्कृष्ट काल साधिक तीन पल्य कहनेका कारण यह है कि जिन तिर्यञ्चोंने पहले अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अल्पतर संक्रम किया उसके बाद वे तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर और वेदक सम्यक्त्वको उत्पन्न कर जीवन भर उनका अल्पतर संक्रम करते रहे उनके इनके अल्पतर संक्रमका साधिक तीन पल्य उत्कृष्ट काल बन जाता है। इनमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतर संक्रामकका उत्कृष्ट काल जो तीन पल्य कहा है सो वह क्षायिक सम्यग्दृष्टियोंकी अपेक्षासे घटित कर लेना चाहिए। मात्र योनिनी तिर्यञ्चोंमें क्षायिक सम्यग्दृष्टि नहीं उत्पन्न होते, इसलिए उनमें उक्त काल कुछ कम तीन पल्य प्राप्त होनेसे उक्त प्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है, क्योंकि उसका व्याख्यान ओघ प्ररूपणाके समय विशद रूपसे कर आये हैं।

§ ४१२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सात नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके भुजगार संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अवस्थित संक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। अल्पतर संक्रामकका भङ्ग भुजगारके समान है।

विशेषार्थ—उक्त मार्गणाओंकी एक जीवकी कायस्थिति ही अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है, इसलिए यहाँ पर उसे ध्यानमें रखकर कालका निरूपण किया। शेष विचार ओघ प्ररूपणाको देखकर कर लेना चाहिए।

§ ४१३. मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिकके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि इनमें जिन प्रकृतियोंके अवक्तव्यसंक्रामक होते हैं उनका जघन्य और उत्कृष्ट काल एक समय है।

एयस० । उक्क० तिण्णि पलिदोवमाणि पुव्वकोडितिभागेण सादिरेयाणि ।

§ ४१४. देवेसु मिच्छ०-सम्मामि०-अणंताणु०चउक्क० इत्थिवे०-णवुंस० णारयभंगो । णवरि अप्प० संका० जह० एयस० । उक्क० तेत्तीसं सागरोवमाणि । सम्म०-बारसक०-पुरिसवे०-छण्णोक० णारयभंगो । एवं भवणादि जाव णव गेवज्जा त्ति । णवरि सगट्ठिदी [1]जाणियव्वा ।

§ ४१५. अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थिवे०-णवुंस० अप्प० संका० जहण्णुक्क० जहण्णुक्कस्सट्ठिदी । अणंताणु०चउक्क० भुज० जहण्णुक्क० अंतोमु० । अप्प० संका० जह० अंतोमु० । उक्क० सगट्ठिदी । बारसक०-पुरिसवे०-छण्णोक० देवोघं ।

इतनी और विशेषता है कि सामान्य मनुष्य और मनुष्यपर्याप्तकोंमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतरसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य है

विशेषार्थ—सामान्य मनुष्य और मनुष्यपर्याप्त अधिकसे अधिक पूर्वकोटिका त्रिभाग अधिक तीन पल्य तक ही सम्यग्दृष्टि रहते हैं, इसलिए इनमें स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतरसंक्रमका उत्कृष्ट काल उक्त प्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४१४. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग नारकियोंके समान है । इतनी विशेषता है कि इनमें उक्त कर्मोंके अल्पतरसंक्रामकका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल तेंतीस सागर है । सम्यक्त्व, बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है । इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तक जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपनी अपनी स्थिति जाननी चाहिए ।

विशेषार्थ—देवोंमें सम्यक्त्वका उत्कृष्ट काल तेंतीस सागर है, इसलिए इनमें मिथ्यात्व आदि आठ कर्मोंके अल्पतरसंक्रामकोंका उत्कृष्टकाल तेंतीस सागर बन जानेसे यह उक्त कालप्रमाण कहा है । सौधर्म कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयकतकके देवोंमें भी यह काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण इसी प्रकार घटित कर लेना चाहिए । भवनत्रिकोंमें यद्यपि सम्यग्दृष्टि जीव मरकर नहीं उत्पन्न होते फिर भी जो जीव वहाँ उत्पन्न होनेके पूर्व अन्तर्मुहूर्त तक अल्पतर बन्ध कर रहे हैं उनके वहाँ उत्पन्न होने पर और अतिशीघ्र सम्यक्त्वको स्वीकार कर लेने पर उनके भी इन कर्मोंके अल्पतर संक्रामकोंका अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण यह काल बन जाता है, इसलिए इनमें भी यह काल अपनी स्थितिप्रमाण कहा है । शेष कथन सुगम है ।

§ ४१५. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतर संक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है । अनन्तानुबन्धी चतुष्कके भुजगारसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है । अल्पतरसंक्रामकका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त है और उत्कृष्ट काल अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण है । बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है ।

विशेषार्थ—उक्त देवोंमें सब जीव सम्यग्दृष्टि ही होते हैं, इसलिए इनमें मिथ्यात्व आदि चारके अल्पतरसंक्रामकोंका जघन्य काल अपनी अपनी जघन्य स्थितिप्रमाण और उत्कृष्ट काल

१. भाणियव्वा ।

§ ४१६. एवं चदुसु गदीसु कालविणिण्णयं कादूण पुणो सेसमग्गणाणं देसामासयभावेणिं दियमग्गणावयवभूदेइंदिएसु पयदकालविहासणट्ठमुत्तरं[1] सुत्तपबंधमाह।

ॐ एइंदिएसु सव्वेसिं कम्माणमवत्तव्वसंकमो णत्थि।

§ ४१७. कुदो? गुणंतरपडिवत्तिपडिवादणिबंधणस्स सव्वेसिमवत्तव्वसंकमस्से-इंदिएसु असंभवादो। तदो तव्विसयकालपरूवणं मोत्तूण सेसपदविसयमेव कालणिद्देसं कस्सामो त्ति जाणाविदमेदेण सुत्तेण। तत्थ य मिच्छत्तसंकमो एइंदिएसु णत्थि चेवेत्ति कयणिच्छयो सेसपयडीणमेव भुजगारादिपदविसयकालाणुसारेण विहाणट्ठमुत्तरं[2] पबंधमाढवेइ।

ॐ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगारसंकामओ केवचिरं कालादो होदि?

§ ४१८. सुगमं।

ॐ जहण्णेण एयसमओ।

अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितिप्रमाण कहा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कका सम्यग्दृष्टिके गुणसंक्रमके समय भुजगारसंक्रम होता है, और गुणसंक्रमका काल अन्तर्मुहूर्त है, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियों-के भुजगारसंक्रामकका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त कहा है। यहाँ पर इनके अल्पतर संक्रामकोंका जघन्य काल अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट काल कुछ कम अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण है यह स्पष्ट ही है। शेष कथन सुगम है।

§ ४१६. इसी प्रकार चारों गतियोंमें कालका निर्णय करके पुनः शेष मार्गणाओंके देशा-मर्षकरूपसे इन्द्रिय मार्गणाके अवयवभूत एकेन्द्रियोंमें प्रकृत कालका व्याख्यान करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* एकेन्द्रियोंमें सब कर्मोंका अवक्तव्य संक्रम नहीं है।

§ ४१७. क्योंकि अन्य गुणस्थानको प्राप्त होकर वहाँसे गिरनेके कारण होनेवाला सब कर्मोंका अवक्तव्य संक्रम एकेन्द्रियोंमें असम्भव है। इसलिए तद्विषयककालकी प्ररूपणा छोड़कर शेष पदविषयक कालका ही यहाँ पर निर्देश करते हैं इस प्रकार इस सूत्र द्वारा इस बातका ज्ञान कराया गया है। उसमें भी एकेन्द्रियोंमें मिथ्यात्वका संक्रम नहीं ही होता ऐसा निश्चय करके शेष प्रकृतियोंके ही भुजगार आदि पदोंके कालके अनुसार व्याख्यान करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धका आलोडन करते हैं—

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार संक्रामकका कितना काल है?

§ ४१८. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य काल एक समय है।

---

१. ता० । २. ता० ।

§ ४१६. कुदो ? चरिमुव्वेल्लणखंडयदुचरिमफालीए सह तत्थुप्पण्णस्स बिदियसमयम्मि तदुवलंभादो। दुचरिमुव्वेल्लणखंडयचरिमफालिसंकमादो चरिमुव्वेल्लणखंडयपढमफालिं संकामिय तदणंतरसमए तत्तो णिस्सारिदस्स वा तदुवलंभसंभवादो।

✻ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

§ ४२०. कुदो ? चरिमट्ठिदिखंडयउक्कीरणकालम्मि एगाहियस्स भुजगारसंकमविसईकयस्स तत्थुवलंभादो।

✻ अप्पदरसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४२१. सुगमं।

✻ जहण्णेण एयसमओ।

§ ४२२. कुदो ? दुचरिमुव्वेल्लणखंडय दुचरिमफालीए सह तत्थुववण्णयम्मि तदुवलद्धीदो।

✻ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।

§ ४२३. कुदो ? अप्पदरसंकमाविणाभाविदीहुव्वेल्लणकालावलंबणादो।

✻ सोलसकसाय-भयदुगुंछाणमोघ अपच्चक्खाणावरणभंगो।

---

§ ४१९. क्योंकि चरम उद्वलना काण्डककी द्विचरम फालिके साथ वहाँ उत्पन्न हुए जीवके दूसरे समयमें उक्त प्रकृतियोंके भुजगार संक्रमका जघन्य काल एक समय उपलब्ध होता है। अथवा द्विचरम उद्वलना काण्डककी चरम फालिके संक्रमके बाद चरम उद्वलना काण्डककी प्रथम फालिको संक्रमाकर उसके अनन्तर समयमें वहाँसे निकले हुए जीवके जघन्य काल एक समय उपलब्ध होता है।

✻ उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४२०. क्योंकि एकेन्द्रियोंमें भुजगार संक्रमका विषयभूत चरम स्थिति काण्डकका उत्कीरणकाल न्यूनाधिकतासे रहित अन्तर्मुहूर्त प्रमाण पाया जाता है।

✻ अल्पतर संक्रामकका कितना काल है ?

§ ४२१. यह सूत्र सुगम है।

✻ जघन्य काल एक समय है।

§ ४२२. क्योंकि द्विचरम उद्वलन काण्डककी द्विचरम फालिके साथ वहाँ पर उत्पन्न होने पर जघन्य काल एक समय उपलब्ध होता है।

✻ उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है।

§ ४२३. क्योंकि अल्पतर संक्रमके अविनाभावी दीर्घ उद्वलन कालका अवलम्बन लिया गया है।

✻ सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघ अप्रत्याख्यानावरणके समान है।

§ ४२४. कुदो ? भुजगार-अप्पदराणं जह० एगसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो, अवट्ठि० जह० एगस०, उक्क० संखेज्जा समया इच्चेदेण भेदाभावादो ।

❀ सत्तणोकसायाणं ओघ-हस्स-रदीणं भंगो ।

§ ४२५. कुदो ? भुज०अप्प० संकामयाणं जह एयसमओ, उक्क० अंतोमु० इच्चेदेण तत्तो भेदाणुवलंभादो ।

❀ एयजीवेण अंतरं ।

§ ४२६. एयजीवसंबंधिकालविहासणाणंतरमेयजीवविसेसिदमंतरमेत्तो वत्तइस्सामो त्ति अहियारसंभालणमुत्तमेदं । तस्स य दुविहो णिद्देसो; ओघादेसभेएण । तत्थोघणिद्देसं ताव कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ ।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४२७. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ वा दुसमओ वा; एवं णिरंतरं जाव तिसमऊणावलिया ।

§ ४२८. तं जहा—पुव्वुप्पण्णसम्मत्त-मिच्छाइट्ठिणा वेदयसम्मत्ते पडिवण्णे तस्स पढमसमए अवत्तव्वसंकमादो विदियसमयम्मि भुजगारसंकमे जादे आदिट्ठा[1] तदो

§ ४२४. क्योंकि ओघमें अप्रत्याख्यानावरणके भुजगार और अल्पतर संक्रमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण तथा अवस्थित संक्रमका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल संख्यात समय कहा है। इससे इसमें कोई भेद नहीं है।

*** सात नोकषायोंके कालका भङ्ग ओघसे हास्य-रतिके समान है ।**

§ ४२५. क्योंकि ओघसे हास्य-रतिके भुजगार और अल्पतर संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त बतला आये हैं। उससे इसमें कोई भेद नहीं उपलब्ध होता ।

*** अब एक जीव की अपेक्षा अन्तरकालका अधिकार है ।**

§ ४२६. एक जीव सम्बन्धी कालका व्याख्यान करनेके बाद आगे एक जीव सम्बन्धी अन्तरकालको बतलाते हैं। इस प्रकार यह सूत्र अधिकारकी सम्हाल करता है। उसका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। उनमेंसे सर्व प्रथम ओघ प्ररूपणाका निर्देश करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** मिथ्यात्वके भुजगार संक्रामकका अन्तर काल कितना है ?**

§ ४२७. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य काल एक समय है, दो समय है । इस प्रकार निरन्तर क्रमसे तीन समय कम एक आवलि प्रमाण है ।**

§ ४२८. यथा—पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिथ्या दृष्टि होकर वेदक सम्यक्त्वके प्राप्त करने पर उसके प्रथम समयमें हुए अवक्तव्यसंकमके बाद दूसरे समयमें भुजगार संक्रमके

1. आदीविट्ठा ता० ।

तदियसमए अप्पदरेणावट्ठिदेण वा अंतरियचउत्थसमए पुणो वि भुजगारसंकामगो जादो लद्धमेगसमयमेत्तं पयदजहण्णंतरं। दुसमयो वा पुव्वं व आदिं कादूण दोसु समएसु विरुद्धपदेणंतरिय पुणो पंचसमयम्मि भुजगारसंकमपरिणदम्मि तदुवलद्धीदो। एवं तिसमयचदुसमयादिकमेणेदमंतरं वड्ढाविय णेदव्वं जाव सम्माइट्ठि-पढमावलियबिदिय-समए पुव्वं व आदिं कादूण पुणो तदियादिसमएसु पडिवक्खपदसंकमेणंतरिय पढमा-वलियचरिमसमए भुजगारसंकमेण लद्धमंतरं कादूण ट्ठिदो त्ति। एवं कदे तिसमऊणावलियमेत्ता चेव पयदंतरवियप्पा समयुत्तरकमेण लद्धा होंति; एत्तो उवरि लद्धमंतरकरणोवायाभावादो। एवं पुव्वुप्पण्णसम्मत्तमिच्छाइट्ठिपच्छायदवेदयसम्माइट्ठिपढमावलियावलंबणेण तिसमऊणा-वलियमेत्तंतर-वियप्पपदुप्पायणं कादूण एत्तो अण्णत्थ जहण्णंतरमंतोमुहुत्तादो हेट्ठा णोवलब्भदि त्ति जाणावेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ।

❀ अथवा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ ४२९. तं कधं? उवसमसम्माइट्ठिगुणसंकमेण भुजगारं संकममादिं कादूण विज्झादेणंतरिय पुणो सव्वलहुं दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्सापुव्वकरणपढमसमए

होने पर उसका प्रारम्भ हुआ। अनन्तर तीसरे समयमें अल्पतरसंक्रम या अवस्थितसंक्रमके द्वारा अन्तर करके चौथे समयमें फिरसे भुजगार संक्रामक हो गया। इस प्रकार प्रकृत जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो गया। अथवा दो समय अन्तर है, क्योंकि पहले के समान भुजगार संक्रमका प्रारम्भ करके उसके बाद दो समय तक विरुद्ध पदोंके द्वारा अन्तर करके पुनः पाँचवें समयमें भुजगार संक्रमसे परिणत होने पर उक्त दो समय अन्तर कालकी उपलब्धि होती है। इस प्रकार तीन समय और चार समय आदिके क्रमसे अन्तर कालको बढ़ाकर सम्यग्दृष्टिकी प्रथम आवलिके द्वितीय समयमें पहलेके समान भुजगार संक्रमका प्रारम्भ करके पुनः द्वितीयादि समयोंमें प्रतिपक्ष पदोंके संक्रमण द्वारा उसका अन्तर करके प्रथम आवलिके अन्तिम समयमें भुजगार संक्रमके द्वारा अन्तरको प्राप्त करके स्थित होने तक ले जाना चाहिए। ऐसा करने पर एक एक समय अधिकके क्रमसे तीन समय कम एक आवलि प्रमाण ही प्रकृत अन्तर कालके विकल्प प्राप्त होते हैं, क्योंकि इनसे अधिक अन्तर करनेका अन्य कोई उपाय नहीं प्राप्त होता। इस प्रकार पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें आकर पुनः वेदक सम्यग्दृष्टि हुए जीवके प्रथम आवलिके अवलम्बन द्वारा तीन समय कम आवलि प्रमाण अन्तर कालके विकल्पोंको उत्पन्न करके इसके सिवा अन्यत्र जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्तसे कम नहीं उपलब्ध होता इस बातका ज्ञान कराते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

* अथवा जघन्य अन्तर काल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४२९ शंका—वह कैसे?

समाधान—कोई उपशम सम्यग्दृष्टि जीव गुणसंक्रमके द्वारा भुजगार संक्रमका प्रारम्भ करके और विध्यात संक्रमके द्वारा उसका अन्तर करके पुनः अति शीघ्र दर्शनमोहकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ। उसके अपूर्वकरणके प्रथम समयमें गुणसंक्रमका प्रारम्भ हो जाने से प्रकृत अन्तर

गुणसंकमपारंभेण पयदंतरपरिसमत्ती जादा लद्धो जहण्णेणंतोमुहुत्तमेत्तो पयदभुजगारं-तरकालो ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४३०. तं जहा[1]—एक्को अणादियमिच्छाइट्ठी पढमसम्मत्तं पडिवज्जिय गुणसंकमेण भुजगारसंकामगो जादो । तदो सव्वजहण्णगुणसंकमकाले बोलीणे अप्पयर-संकमेणंतरिय कमेण संकामगो होदूणद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं परिभमिय तदवसाणे अंतो-मुहुत्तसेसे उवसमसम्मत्तं घेत्तूण गुणसंकमवसेण भुजगारसंकामगो जादो लद्धो आदिल्लं तिल्लेहिं दोहिं अंतोमुहुत्तेहिं परिहीणद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तो पयदुक्कस्संतरकालो ।

❀ एवमप्पदरावट्ठिदसंकामयंतरं ।

§ ४३१. जहा भुजगारसंकामयंतरं परूविदमेवमेदेसिं पि पदाणं परूवेयव्वं; विसेसा-भावादो । णवरि जहण्णेणंतोमुहुत्तपरूवणा अप्पदरसंकमस्स[2] जहण्णमिच्छत्तकालेणं-तरिदस्स परूवेयव्वा । अवट्ठिदसंकमस्स वि पुव्वुप्पण्णसम्मत्तेण मिच्छत्तादो सम्मत्त-मुवगयस्स पढमावलियाए चरिमसमए आदिं कादूण पुणो सव्वजहण्णवेदयसम्मत्तकाल-सेसेण तप्पाओग्गजहण्णंतोमुहुत्तपमाणमिच्छत्तकालेण चांतरिदस्स पुणो वेदयसम्मत्त-

---

कालकी समाप्ति हो गई । इस प्रकार प्रकृत भुजगार संक्रमका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्राप्त हो गया ।

* उत्कृष्ट अन्तर काल उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है ।

§ ४३०. यथा—एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीव प्रथम सम्यक्त्वको प्राप्त करके गुणसंक्रमके द्वारा भुजगार संक्रामक हो गया । उसके बाद सबसे जघन्य गुणसंक्रमके कालके व्यतीत होने पर उसका अल्पतर संक्रमके द्वारा अन्तर करके तथा क्रमसे असंक्रामक होकर कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन काल तक परिभ्रमण करके उसके अन्तमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर उपशमसम्यक्त्व को ग्रहण करके गुणसंक्रमके द्वारा भुजगार संक्रामक हो गया । इस प्रकार प्रकृत उत्कृष्ट अन्तरकाल आदि और अन्तके दो अन्तर्मुहूर्तोंसे हीन अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण प्राप्त हो गया ।

* इसी प्रकार अल्पतर और अवस्थित संक्रामकोंका अन्तर काल जानना चाहिए ।

§ ४३१. जिस प्रकार भुजगार संक्रामकका अन्तर काल कहा है उसी प्रकार इन पदोंका भी अन्तर काल कहना चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है । अथवा इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त कहना चाहिए । तथा अवस्थित संक्रमका भी, पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर पुनः सम्यक्त्वको प्राप्त हुए जीवके प्रथम आवलिके अन्तिम समयमें अवस्थित संक्रमको पुनः शेष रहे सबसे जघन्य वेदकसम्यक्त्वके काल द्वारा तथा मिथ्यात्वके तत्प्रायोग्य जघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रमाण कालके द्वारा उसका अन्तर कराके पुनः वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त करके उसकी प्रथम आवलिके द्वितीय समयमें, अन्तर काल प्राप्त कर लेना चाहिए ।

---

१. कुदो ? ता० । २. कालस्स ता० ।

पडिलंभपढमावलियाए विदियसमयम्मि लद्धमंतरं कायव्वं । एवमुक्कस्सेणुवड्ढपोग्गल-परियट्टमेत्तंतरपरूवणाए वि जाणिय वत्तव्वं ।

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४३२. सुगमं ।

❀ जहण्णेणंतोमुहुत्तं ।

§ ४३३. सम्माइट्ठिपढमसमए आदिं कादूण विदियादिसमएसु अंतरियसव्वलहुं मिच्छत्तं गंतूण पडिणियत्तिय पडिवण्णतब्भावम्मितदुवलद्धीदो ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४३४. पढमसम्मत्तग्गहणपढमसमए लद्धप्पसरूवस्सावत्तव्वसंकमस्स पुणो मिच्छत्तं गंतूण सव्वुक्कस्सेणंतरेण सम्मत्तं पडिवण्णस्स पढमसमए लद्धमंतरमेत्थ कायव्वं ।

❀ सम्मत्तस्स भुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४३५. सुगमं ।

❀ जहण्णेण पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागो ।

§ ४३६. तं जहा—चरिमुव्वेल्लणकंडयम्मि गुणसंकमेण पयदसंकमस्सादिं करिय तदणंतरसमए सम्मत्तमुप्पाइय असंकामगो होदूणंतरिय सव्वलहुं गंतूण सव्वजहण्णुव्वेल्लण-

---

इसी प्रकार इनके उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर कालकी प्ररूपणा भी जानकर करनी चाहिए ।

* अवक्तव्यसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४३२. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्तप्रमाण है ।

§ ४३३. क्योंकि सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें उसका प्रारम्भ करके तथा द्वितीयादि समयोंमें अन्तर करके अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर और लौटकर पुनः अवक्तव्य संक्रमके प्राप्त होने पर उक्त अन्तरकाल प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है ।

§ ४३४. प्रथम सम्यक्त्वग्रहणके प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रमका स्वरूप लाभ किया । पुनः मिथ्यात्वमें जाकर और सबसे उत्कृष्ट कालतक वहाँ रहकर सम्यक्त्वको प्राप्त कर अवक्तव्यसंक्रम किया । इस प्रकार यहाँ अवक्तव्यसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त कर लेना चाहिए ।

* सम्यक्त्वके भुजगार संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४३५. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है ।

§ ४३६. यथा—अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकमें गुणसंक्रमके द्वारा प्रकृत संक्रमका प्रारम्भ करके उसके अनन्तर समयमें सम्यक्त्वको उत्पन्न कर असंक्रामक होकर और उसका अन्तर

कालेणुव्वेल्लमाणयस्स चरिमट्ठिदिखंडए पढमसमए लद्धमंतरं होइ ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४३७. तं कधं ? अणादियमिच्छाइट्ठी सम्मत्तमुप्पाइय सव्वलहुं मिच्छत्तं गंतूण जहण्णुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लमाणो चरिमट्ठिदिखंडयम्मि भुजगारसंकमस्सादिं कादूणंतरिय देसूणद्धपोग्गलपरियट्टं परिभमिय पुणो पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तसेसे सिज्झणकाले सम्मत्तं घेत्तूण मिच्छत्तपडिवादेणुव्वेल्लेमाणयस्स चरिमे ट्ठिदिखंडए लद्धमंतरं कायव्वं । एवमादिल्लंतिल्लेहि पलिदो० असंखे० भागंतोमुहुत्तेहि परिहीणद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तं पयदुक्कस्संतरपमाणं होदि ।

❀ अप्पदरावत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४३८. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४३९. अप्पयरस्स ताव उच्चदे । मिच्छाइट्ठी सम्मत्तस्स अप्पयरसंकमं कुणमाणो सम्मत्तं पडिवण्णो । तत्थ सव्वजहण्णंतोमुहुत्तमेत्तमंतरिय पुणो मिच्छत्तं गदो, तस्स बिदियसमए लद्धमंतरं होइ । अवत्तव्वसंकमस्स वि सम्मत्तादो मिच्छत्तं पडिवण्णस्स पढमसमए

करके अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर सबसे जघन्य उद्वेलना करनेवाले जीवके अन्तिम स्थितिकाण्डकके प्रथम समय अन्तरकाल प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तर उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है ।

§ ४३७. शंका—वह कैसे ?

समाधान—जो अनादि मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वको उत्पन्न करके तथा अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें जाकर जघन्य उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करता हुआ चरम स्थितिकाण्डकके प्राप्त होने पर भुजगारसंक्रमका प्रारम्भ करके तथा उसका अन्तर करके कुछ कम अर्ध पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण परिभ्रमण करके पुनः सिद्ध होनेके कालमें पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण शेष रहने पर सम्यक्त्वको ग्रहण कर और मिथ्यात्वमें जाकर पुनः सम्यक्त्वकी उद्वेलना करते हुए अन्तिम स्थितिकाण्डकमें स्थित होता है उसके भुजगारसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तर काल प्राप्त करना चाहिए। इस प्रकार प्रारम्भके और अन्तके पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण और अन्तर्मुहूर्तसे हीन अर्ध पुद्गल परिवर्तन मात्र प्रकृत उत्कृष्ट अन्तरकालका प्रमाण होता है ।

* अल्पतर और अवक्तव्यसंक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४३८. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४३९. उनमेंसे सर्व प्रथम अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल कहते हैं—एक मिथ्यादृष्टि जीव सम्यक्त्वका अल्पतर संक्रम करता हुआ सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । वहाँ पर सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त प्रमाण कालका अन्तर करके मिथ्यात्वमें गया । उसके दूसरे समयमें यह जघन्य अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है । इसी प्रकार जो जीव सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर उसके प्रथम

आदिं कादूण सव्वजहण्णमिच्छत्तद्धमच्छिय सम्मत्तं घेत्तूण पुणो सव्वलहुं मिच्छत्तं गदस्स पढमसमए लद्धमंतरं कायव्वं ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४४०. तं कधं ? एक्को अणादियमिच्छाइट्ठी अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए सम्मत्त-मुप्पाइय सव्वलहुं परिणामपच्चएण मिच्छत्तमुवगओ तदो सम्मत्तस्सुव्वेल्लणावसेणप्पदर-संकमं करेमाणो गच्छदि, जाव सव्वजहण्णुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लेमाणयस्स दुचरिमट्ठिदिखंडय-चरिमफालि त्ति । तत्तोप्पहुडिपयदंतरपारंभं कादूण देसूणमद्धपोग्गलपरियट्टं परियट्टिदूण तदवसाणे अंतोमुहुत्तावसेसे संसारे सम्मत्तं पडिवण्णो संतो पुणो वि मिच्छत्तं पडिदो तस्स बिदियसमए अप्पयरसंकामयस्स लद्धमंतरं होइ । एवमवत्तव्वसंकामयस्स वि वत्तव्वं, णवरि अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए पढमसम्मत्तमुप्पाइय सव्वलहुं मिच्छत्तं पडिवण्णस्स पढम-समए पयदसंकमस्सादिं कादूण पुणो दीहंतरेण सम्मत्तमुप्पाइय मिच्छत्तमुवगयस्स पढम-समयम्मि लद्धमंतरं कायव्वं ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

समयमें अवक्तव्य संक्रमका प्रारम्भ करके और सबसे जघन्य काल तक मिथ्यात्वमें रह कर तथा सम्यक्त्वको ग्रहण कर पुनः अतिशीघ्र मिथ्यात्वको प्राप्त होकर उसके प्रथम समयमें अवक्तव्य संक्रम करता है उसके अवक्तव्य संक्रमका भी अन्तरकाल प्राप्त करना चाहिए ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है ।

§ ४४०. शंका—वह कैसे ?

समाधान—एक अनादि मिथ्यादृष्टि जीव अर्धपुद्गल परिवर्तनके प्रथम समय मे सम्यक्त्व उत्पन्न करके अति शीघ्र परिणाम वश मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । अनन्तर सम्यक्त्वकी उद्वेलनाके कारण अल्पतर संक्रमको करता हुआ वह भी सबसे जघन्य उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करता हुआ द्विचरमस्थिति काण्डककी अन्तिम फालिके प्राप्त होने तक जाता है । इसके बाद वहाँ से लेकर प्रकृत संक्रमके अन्तरकालका प्रारम्भ करके तथा कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन काल तक परिभ्रमण करके उसके अन्तमें संसारमें रहनेका अन्तर्मुहूर्त प्रमाण काल शेष रहने पर सम्यक्त्वको प्राप्त होकर पुनः मिथ्यात्वमें गया । उसके मिथ्यात्वमें जानेके दूसरे समयमें अल्पतर संक्रामकका उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त होता है । इसी प्रकार अवक्तव्य संक्रामकका भी अन्तर काल करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अर्धपुद्गल परिवर्तनके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके और अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें ले जाकर उसके प्रथम समयमें प्रकृत संक्रमका प्रारम्भ करावे । पुनः दीर्घ अन्तरकालके बाद सम्यक्त्वको उत्पन्न कराके और मिथ्यात्वमें ले जाकर उसके प्रथम समयमें प्रकृत संक्रमका अन्तरकाल प्राप्त कर लेना चाहिए ।

* सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ।

§ ४४१. सुगमं ।

ॐ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ४४२. तं जहा—चरिमुव्वेल्लणकंडयम्मि भुजगारसंकमस्सादिं कादूण तदणंतरसमए सम्मत्तमुप्पाइय अप्पयरभावेणेयसमयमंतरिय पुणो वि बिदियसमए गुणसंकमवसेण भुजगारसंकामगो जादो लद्धमंतरं। अप्पयरस्स वुच्चदे—दुचरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालीए अप्पयरसंकमं कुणमाणो चरिमुव्वेल्लणखंडयपढमफालिविसयगुणसंकमेणेयसमयमंतरिय पुणो वि सम्मत्तुप्पत्तिपढमसमए अप्पयरसंकामगो जादो लद्धमंतरं ।

ॐ उक्कस्सेण उवड्डपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४४३. तं जहा—भुजगारसंकमस्स सम्मत्तभंगेण चरिमुव्वेल्लणकंडयम्मि आदिं कादूणंतरियस्स पुणो दीहंतरेणसम्मत्ते समुप्पाइदे तदियसमयम्मि गुणसंकमवसेण लद्धमंतरं कायव्वं । अप्पयरसंकमस्स वि सम्मत्त-भंगेण पयदंतरपरूवणा कायव्वा । णवरि दीहंतरेण सम्मत्तं पडिवज्जिय गुणसंकमादो विज्झादं पदिदस्स लद्धमंतरं दट्ठव्वं ।

ॐ अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४४४. सुगमं ।

---

§ ४४१. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ४४२. यथा—अन्तिम उद्वेलना काण्डकमें भुजगारसंक्रमका प्रारम्भ करके उसके अनन्तर समयमें सम्यक्त्वको उत्पन्न कराके उस समय हुए अल्पतरसंक्रमके द्वारा एक समयका अन्तर देकर पुनः दूसरे समयमें गुणसंक्रम होनेके कारण भुजगारसंक्रामक हो गया । इस प्रकार भुजगारसंक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो जाता है । अब अल्पतर संक्रमका अन्तर काल कहते हैं—द्विचरम उद्वेलना काण्डककी अन्तिम फालिमें अल्पतर संक्रमको करता हुआ अन्तिम उद्वेलना काण्डककी प्रथम फालिविषयक गुणसंक्रमके द्वारा उसका अन्तर करके पुनः सम्यक्त्वकी उत्पत्तिके प्रथम समयमें अल्पतर संक्रामक हो गया । इस प्रकार अल्पतर संक्रमका जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हुआ ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गलपरिवर्तन प्रमाण है ।

§ ४४३. यथा—सम्यक्त्वके समान इसके भुजगार संक्रमका अन्तिम उद्वेलना काण्डकमें प्रारम्भ करके तथा अनन्तर समयमें उसका अन्तर करके पुनः दीर्घ अन्तर देकर सम्यक्त्वके उत्पन्न कराने पर उसके तीसरे समयमें गुणसंक्रमके कारण भुजगार संक्रम कराके अन्तरकाल प्राप्त कर लेना चाहिए । तथा इसके अल्पतर संक्रमकी भी सम्यक्त्वके समान उत्कृष्ट अन्तरकालकी प्ररूपणा कर लेनी चाहिए । इतनी विशेषता है कि दीर्घ अन्तरके बाद सम्यक्त्वको प्राप्त कराके गुणसंक्रम होकर विध्यात संक्रमको प्राप्त हुए जीवके अन्तरकाल होता है ऐसा जानना चाहिए ।

* अवक्तव्य संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४४४. यह सूत्र सुगम है ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४४५. तं कथं ? णिस्संतकम्मियमिच्छाइट्ठिणा सम्मत्तमुप्पाइदं तस्स बिदियसमयम्मि अवत्तव्वसंकमस्सादी दिट्ठा । तदो अंतरिय उवसमसम्मत्तकालावसाणे सासणं पडिवज्जिय मिच्छत्ते पदिदस्स पढमसमए लद्धमंतरं कायव्वं ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४४६. तं जहा—अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए सम्मत्तुप्पायणाए वावदस्स बिदियसमए आदी दिट्ठा । तदो दीहंतरेणंतरिय अंतोमुहुत्तसेसे संसारकाले सम्मत्तुप्पत्तीए परिणदस्स बिदियसमयम्मि लद्धमंतरं होइ ।

❀ अणंताणुबंधीणं भुजगार-अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं ?

§ ४४७. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ४४८. भुजगारप्पदराणमणप्पिदपदेणेयसमयमंतरिदाणं तदुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

---

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४४५. शंका—वह कैसे ?

* समाधान—सम्यग्मिथ्यात्वकी सत्तासे रहित किसी एक मिथ्यादृष्टि जीवने सम्यक्त्वको उत्पन्न किया उसके दूसरे समयमें अवक्तव्य संक्रमका प्रारम्भ दिखाई दिया । उसके बाद उसका अन्तर करके उपशम सम्यक्त्वके कालके अन्तमें सासादनको प्राप्त होकर मिथ्यात्वमें जाकर उसके प्रथम समयमें पुनः उसका अवक्तव्य संक्रम किया । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्तप्रमाण जघन्य अन्तर काल प्राप्त कर लेना चाहिए ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है ।

§ ४४६. यथा—अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण कालके प्रथम समयमें सम्यक्त्वके उत्पन्न करनेमें लगे हुए जीवके उसके दूसरे समयमें अवक्तव्य संक्रमका प्रारम्भ दिखलाई दिया । उसके बाद दीर्घ काल तक अन्तर देकर संसारमें रहनेका काल अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर सम्यक्त्वके उत्पन्न करनेमें परिणत हुए जीवके दूसरे समयमें पुनः अवक्तव्य संक्रम होनेसे उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त काल प्रमाण प्राप्त होता है ।

* अनन्तानुबन्धियोंके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४४७. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ४४८. क्योंकि अनर्पित पदके द्वारा अन्तरको प्राप्त हुए भुजगार और अल्पतर संक्रमका जघन्य अन्तर एक समय उपलब्ध होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक दो छयासठ सागर प्रमाण है ।

§ ४४९. तं जहा—पंचिदिएसु भुजगारसंकमस्सादिं कादूणेइंदिएसु पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तप्पयरकालेणंतरिय पुणो असण्णिपंचिदिएसु देवेसु च समयाविरोहेण जहाकममुप्पज्जिय तदो सम्मत्तं घेत्तूण बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय तदवसाणे मिच्छत्तं गंतूण भुजगारसंकामगो जादो लद्धमंतरं पयदभुजगारसंकामयस्स पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागेण सादिरेयबेछावट्ठिसागरोवममेत्तमुक्कस्सेण संपहि अप्पयरसंकमस्स उच्चदे। तं जहा—एक्को मिच्छाइट्ठी उवसमसम्मत्तं घेत्तूण तक्कालब्भंतरे चेव विसंजोयणाए अब्भुट्ठिदो। तत्थापुव्वकरणपढमसमए पयदंतरस्सादिं कादूण कमेण वेदयसम्मत्तं पडिवज्जिय पढमबिदियछावट्ठीओ सम्मामिच्छत्तंतरिदाओ जहाकममणुपालिय तदवसाणे परिणामपच्चएण मिच्छत्तं गदो तत्थ वि पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तकालं भुजगारसंकामओ होदूण तदो अप्पयरसंकामओ जादो लद्धमंतरमुक्कस्सेण पदयप्पयरसंकामयस्स पुव्विल्लंतोमुहुत्तेण पच्छिल्लपलिदोवमासंखेज्जदिभागेण च सादिरेयबेछावट्ठिसागरोवममेत्तं।

*** अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?**

§ ४५०. सुगमं।

*** जहण्णेणेयसमओ।**

§ ४५१. तं जहा—अवट्ठिदसंकमादो भुजगारमप्पदरं वा एयसमयं कादूण तदणंतरसमए पुणो वि अवट्ठिदसंकामओ जादो लद्धमंतरं।

---

§ ४४९. यथा—कोई एक जीव पञ्चेन्द्रियोंमें भुजगार संक्रमका प्रारम्भ करके एकेन्द्रियोंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक रह कर पुनः असंज्ञी पञ्चेन्द्रियों और देवोंमे यथाविधि क्रमसे उत्पन्न होकर अनन्तर सम्यक्त्वको ग्रहण कर दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर उसके अन्तमें मिथ्यात्वमें जाकर भुजगारसंक्रामक हो गया। इसप्रकार प्रकृत भुजगार संक्रामकका उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यका असंख्यातवाँ भाग अधिक दो छयासठ सागर प्रमाण प्राप्त हो गया। अब अल्पतरसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल कहते हैं। यथा—कोई एक मिथ्यादृष्टि जीव उपशम सम्यक्त्वको ग्रहण कर उस कालके भीतर ही विसंयोजनाके लिए उद्यत हुआ। वहाँ पर वह अपूर्वकरणके प्रथम समयमें प्रकृत संक्रमके अन्तरकालका प्रारम्भ करके तथा क्रमसे वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होकर सम्यग्मिथ्यात्वसे अन्तरित प्रथम और द्वितीय छयासठ सागर कालका क्रमसे पालन करके उनके अन्तमें परिणामवश मिथ्यात्वमें जाकर वहाँ पर भी पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक भुजगार संक्रामक होकर अनन्तर अल्पतर संक्रामक हो गया। इस प्रकार प्रकृत अल्पतर संक्रमकका उत्कृष्ट अन्तरकाल पहलेका अन्तर्मुहूर्त और बादका असंख्यातवाँ भाग अधिक दो छयासठ सागर प्रमाण प्राप्त हो गया।

*** अवस्थितसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ४५०. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य अन्तरकाल एक समय है।**

§ ४५१. यथा—अवस्थित संक्रमके बाद एक समय तक भुजगार या अल्पतर संक्रम करके उसके अनन्तर समयमें फिर भी अवस्थित संक्रामक हो गया। इस प्रकार जघन्य अन्तर एक समय प्राप्त हो गया।

❀ उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ।

§ ४५२. कुदो; एयवारमवट्ठिदसंकमेण परिणदस्स पुणो तदसंभवेणासंखेज्ज-पोग्गलपरियट्टमेत्तकालमुक्कस्सेणावट्ठाणब्भुवगमादो । असंखेज्ज-लोगमेत्तमुक्कस्संतरमवट्ठिद-पदस्स परूविदमुच्चारणाकारेण कथमेदेण सुत्तेण तस्साविरोहो त्ति ण, उवएसंतरावलंबणे-णाविरोहसमत्थणादो ।

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४५३. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४५४. तं जहा-विसंजोयणापुव्वं[1] संजोगे णवकबंधावलियादिक्कंतपढमसमए-अवत्तव्वसंकमस्सादिं कादूणंतरिय पुणो सव्वलहुं सम्मत्तं पडिवज्जिय विसंजोएदूण संजुत्तस्स बंधावलियवदिक्कमे लद्धमंतरं होइ ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४५५. तं कधं ? अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए सम्मत्तमुप्पाइय उवसमसम्मत्त-

* उत्कृष्ट अन्तरकाल अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन के बराबर है ।

§ ४५२. क्योंकि एक बार अवस्थित संक्रमसे परिणत हुए जीवके पुनः वह असम्भव होने-से अवस्थित संक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात पुद्गल परिवर्तन प्रमाण स्वीकार किया गया है ।

शंका—उच्चारणाकारने अवस्थित संक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण कहा है, इसलिए सूत्रके साथ उसका अविरोध कैसे घटित होता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उपदेशान्तरके अवलम्बन द्वारा अविरोधका समर्थन किया गया है ।

* अवक्तव्य संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४५३. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४५४. यथा—विसंयोजनापूर्वक संयोग होने पर नवकबन्धावलिके व्यतीत होनेके प्रथम समयमें अवक्तव्य संक्रमका प्रारम्भ करके और उसका अन्तर करके पुनः अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त करके विसंयोजनापूर्वक संयुक्त होनेके बाद बन्धावलिके व्यतीत होने पर पुनः अवक्तव्य-संक्रम होकर उसका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त प्रमाण प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है ।

§ ४५५. शंका—वह कैसे ?

समाधान—अर्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण कालके प्रथम समयमें सम्यक्त्वको उत्पन्न करके

[1] पुव्व ता० ।

कालब्भंतरे चेवाणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय सव्वलहुं संजुत्तस्स बंधावलियादिक्कंतपढम-समए अवत्तव्वसंकमस्सादी दिट्ठा। तदो सव्वचिरमंतरिदूणद्धपोग्गलपरियट्टावसाणे अंतो-मुहुत्तावसेसे सम्मत्तमुप्पाइय विसंजोयणापुव्वं संजुत्तस्स बंधावलियादिक्कमे लद्धमंतरं होइ।

❀ बारसकसाय-पुरिसवेद-भयदुगुंछाणं भुजगारप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४५६. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ४५७. कुदो ? भुजगारप्पदराणमणप्पिदपदेणेयसमयमंतरिदाणं तदुवलद्धीदो।

❀ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।

§ ४५८. कुदो ? भुजगारप्पयराणमण्णोण्णुक्कस्सकालेणावट्ठिदकालसहिदेणंतरिदाण-मुक्कस्संतरस्स तप्पमाणत्तोवलंभादो।

❀ अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४५९. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

उपशमसम्यक्त्व कालके भीतर ही अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करके अति शीघ्र संयुक्त हुए जीवके बन्धावलिके व्यतीत होनेके प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रमका प्रारम्भ दिखलाई दिया। उसके बाद बहुत दीर्घ काल तक उसका अन्तर करके अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण कालके अन्तमें अन्तर्मुहूर्त शेष रहने पर सम्यक्त्वको उत्पन्न करके विसंयोजनापूर्वक संयुक्त हुए जीवके बन्धावलिके व्यतीत होने पर पुनः अवक्तव्य संक्रम होनेसे उसका उक्त अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है।

*** बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ४५६. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य अन्तरकाल एक समय है।**

§ ४५७. क्योंकि अनर्पित पद द्वारा एक समयके लिए अन्तरित किये गये भुजगार और अल्पतर पदोंका जघन्य अन्तर एक समय उपलब्ध होता है।

*** उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।**

§ ४५८. क्योंकि अवस्थित पदके कालके साथ एक दूसरेके उत्कृष्ट कालसे अन्तरको प्राप्त हुए भुजगार और अल्पतर संक्रमका उत्कृष्ट अन्तर उक्त कालप्रमाण उपलब्ध होता है।

*** अवस्थित संक्रामकका अन्तर काल कितना है ?**

§ ४५९. यह सूत्र सुगम है।

*** जघन्य अन्तरकाल एक समय है।**

§ ४६०. भुजगारप्पदराणमण्णदरसंकमेणेयसमयमंतरिदस्स तदुवलद्धीदो।

❀ उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा।

§ ४६१. सुगममेदं; अणंताणुबंधीणमवट्ठिदुक्कस्संतरपरूवणाए समाणत्तादो। संपहि एदेण सुत्तेण पुरिसवेदस्स वि असंखेज्जपोग्गलपरियट्टमेत्तावट्ठिदसंकमुक्कस्संतराविसंगे[1] तदसंभवपदुप्पायणदुवारेण तत्थ देसूणअद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तंतरपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ।

❀ णवरि पुरिसवेदस्स उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ४६२. कुदो? सम्माइट्ठिम्मि चेव तदवट्ठिदसंकमस्स संभवणियमादो।

❀ सव्वेसिमवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि?

§ ४६३. सुगममेदं पुच्छावक्कं।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

§ ४६४. सव्वोवसामणापडिवादजहण्णंतरस्स तप्पमाणत्तोवलंभादो।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ४६५. अद्धपोग्गलपरियट्टादिसमए पढमसम्मत्तमुप्पाइय सव्वलहुं सव्वोवसामणापडिवादेणादिं कादूणंतरिदस्स पुणो तदवसाणे अंतोमुहुत्तसेसे सव्वोवसामणा-

---

§ ४६०. क्योंकि भुजगार और अल्पतर संक्रमके द्वारा एक समयके लिए अन्तरको प्राप्त हुए अवस्थित संक्रमका जघन्य अन्तर एक समय उपलब्ध होता है।

* उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनोंके बराबर है।

§ ४६१. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि यह अनन्तानुबन्धियोंके अवस्थित संक्रमके उत्कृष्ट अन्तरके कथनके समान है। अब इस सूत्र द्वारा पुरुषवेदके भी अवस्थित संक्रमका उत्कृष्ट अन्तर असंख्यात लोकप्रमाण प्राप्त होने पर वह असम्भव है इसके कथन द्वारा उसमें कुछ कम अर्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण अन्तरका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदका उक्त अन्तरकाल उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है।

§ ४६२. क्योंकि सम्यग्दृष्टिके ही पुरुषवेदके अवस्थित संक्रमकी सम्भावनाका नियम है।

* उक्त सब कर्मोंके अवक्तव्य संक्रामकका अन्तरकाल कितना है?

§ ४६३. यह पृच्छा वाक्य सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४६४. क्योंकि सर्वोपशामनाके प्रतिपातके जघन्य अन्तरकाल प्रमाण वह उपलब्ध होता है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है।

§ ४६५. अर्धपुद्गल परिवर्तनके प्रथम समयमें प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न करके अतिशीघ्र सर्वोपशामनासे गिरनेके कारण अवक्तव्य संक्रमका प्रारम्भ करके उसके अन्तरको प्राप्त हुए जीवके पुनः अर्धपुद्गल परिवर्तनके अन्तमें अन्तर्मुहूर्त प्रमाण काल शेष रहने पर सर्वोपशामनाके प्रतिपात

१. ता०।

पडिवादेण लद्धमंतरमेत्थ कायव्वं ।

❀ इत्थिवेदस्स भुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४६६. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ४६७. सगबंधणिरु[illegible] यमेत्तपडिवक्खबंधकालावलंबणेण पयदंतरसाहणं कायव्वं ।

❀ उक्कस्सेण बेछा[illegible]सागरोवमाणि संखेज्जवस्सब्भहियाणि ।

§ ४६८. कुदो ? तदप्पयरसंकमुक्कस्सकालस्स पयदंतरत्तेण विवक्खियत्तादो ।

❀ अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४६९. सुगमं ।

❀ जहण्णेणेयसमओ ।

§ ४७०. कुदो ? पडिवक्खबंधणिरुद्धेयसमयमेत्तसगबंधकालम्मि तदुवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४७१. कुदो ? सगबंधगद्धामेत्तभुजगारकालावलंबणेण पयदंतरसमत्थणादो ।

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

द्वारा पुनः अवक्तव्य संक्रम प्राप्त होनेसे यहाँ पर उत्कृष्ट अन्तरकाल प्राप्त कर लेना चाहिए।

*** स्त्रीवेदके भुजगार संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ४६६. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।**

§ ४६७. अपने बन्धके रुकने पर प्रतिपक्ष प्रकृतिके एक समय तक होने वाले बन्धका अवलम्बन लेनेसे प्रकृत अन्तरकालकी सिद्धि कर लेनी चाहिए ।

*** उत्कृष्ट अन्तरकाल संख्यात वर्ष अधिक दो छयासठ सागर प्रमाण है ।**

§ ४६८. क्योंकि प्रकृत अन्तरकालरूपसे उसके अल्पतर संक्रमका उत्कृष्ट काल विवक्षित है ।

*** अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ४६९. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।**

§ ४७०. क्योंकि प्रतिपक्ष प्रकृतिके बन्धके रुकने पर एक समय मात्र अपने बन्धकालमें उसकी उपलब्धि होती है ।

*** उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तमुहूर्त है ।**

§ ४७१. क्योंकि अपने बन्धकाल मात्र भुजगार कालका अवलम्बन लेनेसे प्रकृत अन्तर कालका समर्थन होता है ।

*** अवक्तव्य संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ४७२. सुगमं ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४७३. सुगमं ।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४७४. एदं पि सुगमं ।

❀ णवुंसयवेदभुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४७५. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ४७६. एदं पि सुगमं ।

❀ उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि ।

§ ४७७. कुदो ? तदप्पयरुक्कस्सकालस्स पयदंतरत्तेण विवक्खियत्तादो ।

❀ अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

---

§ ४७२. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४७३. यह सूत्र सुगम है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है।

§ ४७४. यह सूत्र भी सुगम है।

* नपुंसकवेदके भुजगार संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४७५. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ ४७६. यह सूत्र भी सुगम है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर प्रमाण है।

§ ४७७. क्योंकि उसके अल्पतर संक्रमका उत्कृष्टकाल प्रकृत अन्तरकाल रूपसे विवक्षित है।

* अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

* अवक्तव्य संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं।

❀ उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

§ ४७८. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि।

❀ हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुजगारअप्पयरसंकामयंतं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४७९. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ४८०. कुदो ? भुजगारप्पदराणमण्णोण्णेणंतरिदाणं तदुवलंभादो।

❀ उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

§ ४८१. पडिवक्खबंधगद्धाए सगबंधकालेण च जहाकममंतरिदाणं पयदभुजगार-प्पयरसंकमाणं तेत्तियमेत्तुकस्संतरसिद्धीए पडिबंधाभावादो। संपहि पुव्वुत्तणिद्दिट्ठेयस-मयमेत्तजहण्णंतरस्स फुडीकरणट्ठं सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ।

❀ कधं ताव हस्स-रदि-अरदिसोगाणमेयसमयमंतरं ?

§ ४८२. सुगममेदं सिस्साहिप्पायासंकावयणं।

---

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्ध पुद्गल परिवर्तन प्रमाण है।

§ ४७८. ये सूत्र सुगम हैं।

* हास्य, रति, अरति और शोकके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ४७९. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ ४८०. क्योंकि एक दूसरेके द्वारा अन्तरको प्राप्त भुजगार और अल्पतर संक्रमोंका जघन्य अन्तर एक समय उपलब्ध होता है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ४८१. क्योंकि प्रतिपक्ष प्रकृतियोंके बन्धक काल और अपने अपने बन्धककालके द्वारा यथाक्रम अन्तरको प्राप्त हुए प्रकृत भुजगार और अल्पतर संक्रमका अन्तर्मुहूर्त प्रमाण उत्कृष्ट अन्तर कालके सिद्ध होनेमें कोई रुकावट नहीं पाई जाती। अब पूर्वोक्त सूत्रमें निर्दिष्ट एक समयमात्र जघन्य अन्तरको स्पष्ट करनेके लिए आगेके सूत्र प्रबन्धको कहते हैं—

* हास्य, रति, अरति और शोकका एक समय अन्तरकाल कैसे है ?

§ ४८२. शिष्योंके अभिप्रायको प्रगट करनेवाला यह आशंका वचन सुगम है।

❀ हस्स-रदिभुजगारसंकामयंतरं जइ इच्छसि, अरदि-सोगाणमेय-समयं बंधावेदव्वो ।

§ ४८३. तं जहा—हस्सरदीओ बंधमाणो एयसमयमरइ-सोगबंधगो जादो । तदो पुणो वि तदणंतरसमए हस्सरदीणं बंधगो जादो । एवं बंधिदूण बंधावलियवदिक्कमे बंधाणुसारेण संकामेमाणयस्स लद्धमेयसमयमेत्तभुजगारसंकामयंतरं ।

❀ जइ अप्पयरसंकामयंतरमिच्छसि हस्सरदीओ एयसमयं बंधावेयव्वाओ ।

§ ४८४. एदस्स णिदरिसणं—एदो अरदिसोगबंधगो एयसमयं हस्सरदिबंधगो जादो । तदणंतरसमए पुणो वि परिणामपच्चएणारदिसोगाणं बंधो पारद्धो । एवं बंधिऊण बंधावलिया दिक्कमेदेणेव[1] कमेण संकामेमाणयस्स लद्धमेयसमयमेत्तं मयदजहण्णंतरं । एदेणेव णिदरिसणेणारदिसोगाणं पि भुजगारप्पयरसंकामयंतरमेयसमयमेत्तं । हस्स-रइ-विवज्जासेण जोजेयव्वं । इत्थि-णवुंसयवेदाणं वि भुजगारप्पयरजहण्णंतरमेवं चेव साहेयव्वं विसेसाभावादो ।

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ४८५. सुगमं ।

*** हास्य और रतिके भुजगार संक्रामकका यदि अन्तर लाना इष्ट है तो अरति और शोकका बन्ध कराना चाहिए ।**

§ ४८३. यथा—हास्य और रतिका बन्ध करनेवाला जीव एक समयके लिए अरति और शोकका बन्ध करनेवाला हो गया । उसके बाद फिर भी उसके अनन्तर समयमें हास्य और रतिका बन्ध करनेवाला हो गया । इस प्रकार बन्ध करके बन्धावलिके व्यतीत होने पर बन्धके अनुसार संक्रम करनेवाले जीवके भुजगार संक्रमका एक समयप्रमाण अन्तरकाल प्राप्त हो जाता है ।

*** यदि अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल लाना इष्ट है तो हास्य और रतिका एक समय तक बन्ध कराना चाहिए ।**

§ ४८४. इसका उदाहरण—अरति और शोकका बन्ध करनेवाला कोई एक जीव एक समय तक हास्य और रतिका बन्ध करनेवाला हो गया । उसके बाद अनन्तर समयमें उसने फिर भी परिणाम वश अरति और शोकका बन्ध प्रारम्भ किया । इस प्रकार बन्ध करके बन्धावलिके व्यतीत होनेके कारण क्रमसे संक्रम करनेवाले उसके प्रकृत जघन्य अन्तरकाल एक समयमात्र प्राप्त हो जाता है । इसी उदाहरणके अनुसार अरति और शोकके भी भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय मात्र हास्य और रतिको अरति और शोकके स्थानमें रखकर लगा लेना चाहिए । स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके भी भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तर काल इसी प्रकार साध लेना चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त कथनसे इस कथनमें कोई विशेषता नहीं है ।

*** अवक्तव्य संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ४८५. यह सूत्र सुगम है ।

❀ जहण्णेण अंतोमुहुत्तं ।

§ ४८६. कुदो ? सव्वोवसामणापडिवादजहण्णंतरस्स तप्पमाणोवलंभादो ।

❀ उक्कस्सेण उवड्डपोग्गलपरियट्टं ।

§ ४८७. कुदो ? तदुक्कस्सविरहकालस्स तप्पमाणत्तोवलंभादो । एवमोघेण सव्व-पयडीणं भुजगारादिपदसंकामय जहण्णुक्कस्संतरपमाणविणिण्णयं कादूण संपहि तदादेस-परूवणाणिबंधणमुत्तरसुत्तपदमाह ।

❀ गदीसु च साहेयव्वं ।

§ ४८८. एदीए दिसाए गदीसु च णिरयादिसु पयदंतरं विहाणमणुमाणिय णेदव्वमिदि वुत्तं होइ ।

§ ४८९. संपहि एदेण बीजपदेण सूचिदत्थस्स उच्चारणाइरियपरूविदविवरण-मणुवत्तइस्सामो । त जहा—आदेसेण णेरइयमिच्छत्तअणंताणु०४ भुज० अप्प० अवट्ठि० संका० जह० एयस० । अवत्त० जह० अंतोमु० । सम्म०-भुज० जह० पलिदो० असंखे०भागो । अप्प० अवत्त०संका० जह० अंतोमु० । सम्मामि० भुज० अप्प० संका० जह० एयस० । अवत्त० जह० अंतोमु० । उक्क० सव्वेसिं तेत्तीसं सागरोवमाणि

---

* जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है ।

§ ४८६. क्योंकि सर्वोपशामनाके प्रतिपातका जघन्य अन्तरकाल तत्प्रमाण उपलब्ध होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल उपार्धपुद्गल परिवर्तन प्रमाण है ।

§ ४८७. क्योंकि सर्वोपशामनाके प्रतिपातका उत्कृष्ट विरहकाल तत्प्रमाण उपलब्ध होता है । इस प्रकार ओघसे सब प्रकृतियोंके भुजगार आदि पदोंके संक्रामक जीवोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालके प्रमाणका निर्णय करके अब उनकी आदेश प्ररूपणाको बतलाने वाले आगेके सूत्रको कहते हैं—

* इसी प्रकार चारों गतियोंमें अन्तरकाल साध लेना चाहिए ।

§ ४८८. इसी दिशासे नारक आदि गतियोंमें प्रकृत अन्तरकालके विधानका अनुमान करके ले जाना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

§ ४८९. अब इस बीज पदसे सूचित होनेवाले अर्थका उच्चारणाचार्यके द्वारा कहे गये विवरणको बतलाते हैं । यथा—आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और अवक्तव्य संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । सम्यक्त्वके भुजगार संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है तथा अल्पतर और अवक्तव्य संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है तथा अवक्तव्य संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है । तथा उक्त सब प्रकृतियोंके अपने अपने सब पदोंके संक्रामकोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तेतीस सागर है । बारह कषाय, पुरुष-

देसूणाणि । बारसक०-पुरिसवेद-भय-दुगुंछ० भुज० अप्प०संका० जह० एयसमओ । उक्क० पलिदो० असंखे०भागो । अवट्ठि० मिच्छत्तभंगो । इत्थिवेद-णवुंसवे० भुज० संका० मिच्छत्तभंगो । अप्प०संका० जह० एयस० । उक्क० अंतोमु० । चदुणोक० भुज० अप्प०संका० जह० एयसमओ । उक्क० अंतोमु० । एवं सव्वणेरइएसु । णवरि सगट्ठिदी देसूणा ।

§ ४६०. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ओघं । अणंताणु०४ भुज० जह० एयस० । उक्क० तिण्णिपलिदो० सादिरेयाणि । अप्प०संका० जह० एयस० । उक्क० तिण्णिपलिदो० देसूणाणि । अवट्ठि० अवत्त० ओघं । बारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछ० भुज० अप्प० अवट्ठि० ओघं । इत्थिवे० भुज० पुरिसवे० अवट्ठि० जह० एयस० । उक्क० तिण्णिपलिदो० देसूणाणि । इत्थिवेद-अप्प०संका० ओघं । णवुंस० भुज० संका० जह० एयस० । उक्क० पुव्वकोडी देसूणा । अप्प०संका० ओघं० । चदुणोक० भुज० अप्प० ओघं ।

वेद, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अवस्थित पदका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके भुजगार संक्रामकका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। चार नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है। इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि कुछ कम अपनी अपनी स्थिति कहनी चाहिए।

विशेषार्थ—पहले ओघप्ररूपणाके समय सब प्रकृतियोंके अलग-अलग पदोंके जघन्य और उत्कृष्ट अन्तरकालका स्पष्टीकरण कर आये हैं। उसी प्रकार यहाँपर जिन प्रकृतियोंके जो पद सम्भव हैं उनके अन्तरकालको समझ लेना चाहिए। मात्र ओघप्ररूपणाके समय उत्कृष्ट अन्तरकाल बतलाते समय जहाँ सामान्य नारकियोंकी और प्रत्येक पृथिवीके नारकियोंकी उत्कृष्ट स्थितिसे अधिक अन्तरकाल बतलाया है वहाँ नारकियोंमें कुछ कम अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति ले लेनी चाहिए।

§ ४६०. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके भुजगार संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। अवस्थित और अवक्तव्य संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है। स्त्रीवेदके भुजगार और पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामकका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य है। स्त्रीवेदके अल्पतर संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है। नपुंसकवेदके भुजगारसंक्रमका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि है। अल्पतर संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है। चार नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है।

§ ४९१. पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ० भुज० अप्प० अवट्ठि० संका० जह० एयस०। अवत्त० जह० अंतोमु०। सम्म० भुज० जह० पलिदो० असंखे०भागो। अप्प० अवत्त० जह० अंतोमु०। सम्मामि० भुज० अप्पयर०संका० जह० एयस०। अवत्त० जह० अंतोमु०। उक्क० सव्वेसिं तिण्णिपलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। अणंताणु०४ भुज० अवट्ठि० अवत्त० मिच्छत्तभंगो। अप्प०संका० जह० एयस०। उक्क० तिण्णिपलिदो० देसूणाणि। बारसक०-भय-दुगुं० भुज० अप्प०संका० ओघं। अवट्ठि०संका० मिच्छत्तभंगो, पुरिसवे० भुज० अप्प०संका० ओघं। अवट्ठि० जह० एयस० उक्क० तिण्णि पलिदो० देसूणा। इत्थिवे०-णवुंस०-चदुणोक० तिरिक्खोघं।

विशेषार्थ—यहाँपर अन्य सब प्ररूपणा ओघके समान होनेसे उसे देखकर घटित कर लेना चाहिए। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके भुजगार संक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक तीन पल्य कहनेका कारण यह है कि संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें इनका भुजगार करके बादमें अन्तर करके यथा योग्य तिर्यञ्च सम्बन्धी पर्यायोंमें उत्पन्न होकर तथा अन्तमें तीन पल्यकी आयुवाले तिर्यञ्चोंमें उत्पन्न होकर जीवनके अन्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त कर अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना करते हुए गुण संक्रम द्वारा पुनः भुजगारसंक्रम करनेसे यह अन्तरकाल साधिक तीन पल्य बन जाता है, इसलिए उक्त अन्तरकाल कहा है। उत्तम भोगभूमिके तिर्यञ्चोंमें वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कराके अनन्तानुबन्धीचतुष्ककी विसंयोजना कराते समय अल्पतर संक्रम करावे। उसके बाद जीवनके अन्तमें संयुक्त होनेके बाद पुनः अल्पतर संक्रम करावे। इस प्रकार अल्पतरसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य प्राप्त होनेसे उक्त प्रमाण कहा है। इसमें पुरुषवेदके अवस्थित संक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य कहा है सो विचार कर लेना चाहिए। भोगभूमिज पर्याप्त तिर्यञ्चोंमें नपुंसकवेदका बन्ध नहीं होता इसलिए इनमें भुजगारसंक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम एक पूर्वकोटि प्राप्त होनेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। शेष कथन स्पष्ट ही है।

§ ४९१. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्वके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य संक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, सम्यक्त्वके भुजगार संक्रामकका जघन्य अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है, अल्पतर और अवक्तव्य संक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है, सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है, अवक्तव्य संक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त है और इन सब प्रकृतियोंके उक्त पदोंका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्य संक्रामकका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है। अवस्थित संक्रामकका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। पुरुषवेदके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है। अवस्थित संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम तीन पल्य है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है।

विशेषार्थ—पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिककी उत्कृष्ट कायस्थिति पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है, इसलिए यहाँ पर मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके उक्त तिर्यञ्चोंमें सम्भव पदोंका

§ ४९२. पंचिं०तिरि०अपज्ज० मणुस-अपज्ज० सम्म०-सम्मामि० भुज० अप्प० णत्थि अंतरं। सोलसक०-भय-दुगुंछा० भुज० अप्प० अवट्ठि०संका० जह० एयस०। उक्क० अंतोमु०। सत्तणोक० भुज० अप्प०संका० जह० एयस०। उक्क० अंतोमु०।

§ ४९३. मणुसतिए पंचिंदियतिरिक्खभंगो। णवरि मणुस०-मणुसपज्ज०-पुरिसवे०-अवट्ठि० तिण्णिपलिदो० पुव्वकोडिपुधत्तेणब्भहियाणि। णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० जह० अंतोमु०। उक्क० पुव्वकोडिपुधत्तं।

उत्कृष्ट अन्तरकाल उक्त प्रमाण कहा है। इतना अवश्य है कि उक्त कायस्थितिके प्रारम्भमें और अन्तमें यथायोग्य इन पदोंकी प्राप्ति करा कर यह अन्तरकाल ले आना चाहिए। इनमें अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अल्पतर संक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल कुछ कम तीन पल्य प्रमाण जिस प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें घटित करके बतलाया है उसी प्रकार यहाँ पर भी घटित कर लेना चाहिए। इसी प्रकार अन्य अन्तरकाल भी ओघ प्ररूपणा और सामान्य तिर्यञ्चोंमें की गई प्ररूपणाको देख कर घटित कर लेना चाहिए। अन्य कोई विशेषता न होनेसे हम यहाँ पर अलगसे खुलासा नहीं कर रहे हैं।

§ ४९२. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त है। सात नोकषायोंमें भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त है।

विशेषार्थ—उक्त जीवोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भुजगार और अल्पतर संक्रम उद्वेलनाके समय ही सम्भव है और इनकी कायस्थिति मात्र अन्तमुहूर्त है, इसलिए इनमें उक्त प्रकृतियोंके इन पदोंका अन्तरकाल सम्भव न होनेसे उसका निषेध किया है। शेष प्रकृतियोंके यथा सम्भव पदोंका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तमुहूर्त है यह स्पष्ट ही है।

§ ४९३. मनुष्यत्रिकमें पञ्चेन्द्रियोंका तिर्यञ्चोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि मनुष्य और मनुष्यपर्याप्तकोंमें पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामकका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य है। इतनी और विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्य संक्रामकका जघन्य अन्तर अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण है।

विशेषार्थ—पुरुषवेदका अवस्थित संक्रम नियमसे सम्यग्दृष्टिके होता है, इस लिए यहाँ पर मनुष्य और मनुष्यपर्याप्तकोंमें पुरुषवेदके अवस्थित संक्रमका उत्कृष्ट अन्तरकाल पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य बन जानेसे वह उक्त प्रमाण कहा है। यद्यपि पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चत्रिक और मनुष्यिनियोंमें अपनी कायस्थितिके प्रारम्भमें और अन्तमें सम्यक्त्व उत्पन्न करा कर पुरुषवेदके अवस्थितसंक्रमका यह अन्तरकाल प्राप्त करना सम्भव है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें ओघके समय यह अन्तरकाल प्राप्त करना सम्भव है, अन्यथा ओघप्ररूपणाकी व्याप्ति नहीं बन सकती। फिर भी उसका निर्देश न कर वह कुछ कम तीन पल्य ही क्यों कहा है यह अवश्य ही विचारणीय है। अभी हम इसका निर्णय नहीं कर सके हैं। मनुष्यत्रिकका उत्तम भोगभूमिमें उत्पन्न होनेके बाद पुनः मनुष्य होना सम्भव नहीं है, इसलिए इनमें बारह कषाय और नौ

§ ४६४. देवेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४-इत्थि-णवुंस० णारय-भंगो। णवरि जम्मि तेत्तीसं सागरो० देसूणाणि तम्मि० एकत्तीसं सागरो० देसूणाणि। बारसक०-पुरिसवे०-छण्णोक० णारयभंगो। एवं भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति। णवरि सगट्ठिदी देसूणा।

§ ४६५. अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थिवे०-णवुंस० णत्थि-अंतरं। अणंताणु०४ भुज० अप्प०संका० णत्थि अंतरं। बारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछ० भुज० अप्प० ओघं। अवट्ठि० संका० जह० एयस०। उक्क० सगट्ठिदी देसूणा। चदु-णोक० भुज० अप्प०संका० जह० एयस०। उक्क० अंतोमु०। एवं गइमग्गणा समत्ता।

नोकषायोंके अवक्तव्य संक्रमका उत्कृष्ट अन्तर पूर्वकोटिपृथक्त्व प्रमाण कहा है, क्योंकि इन प्रकृतियोंका अवक्तव्य संक्रम उपशमश्रेणिमें होता है और उपशम श्रेणिका आरोहण कर्मभूमिज मनुष्योंमें ही सम्भव है।

विशेषार्थ (२)—पुरुषवेदको अवस्थितका अन्तर ओघमें अर्धपुद्गल परिवर्तन, सामान्य मनुष्य व मनुष्यपर्याप्तमें पूर्वकोटिपृथक्त्व अधिक तीन पल्य कहनेका यह कारण ज्ञात होता है कि पुरुषवेद वाले मनुष्यके सम्यग्दर्शनमें पुरुषवेदको अवस्थित हो जाने पर मिथ्यात्वमें जाकर अन्तर हो गया पुनः जब वह पुरुषवेद वाला मनुष्य होकर सम्यक्त्व ग्रहण किया उसके पुनः पुरुषवेदको अवस्थित हुई। किन्तु अन्य जीवोंके सम्यक्त्व कालके प्रारंभ और अन्तमें पुरुषवेदको अवस्थित होनेसे अन्तर कहा है उनके मिथ्यात्व अवस्थामें पहुँचकर पुनः सम्यक्त्वकी प्राप्ति होनेपर पुरुषवेदको अवस्थितका अन्तर उपलब्ध नहीं होता। इसका कारण क्या है यह समझमें नहीं आता। फिर भी अन्तरकाल उपर्युक्त दृष्टिसे कहा गया है यह बात समझमें आती है।

§ ४६४. देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, अनन्तानुबन्धीचतुष्क, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ पर कुछ कम तेतीस सागर कहा है वहाँ पर कुछ कम इकतीस सागर कहना चाहिए। बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोक-षायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

विशेषार्थ—देवोंमें सम्यक्त्व और मिथ्यात्व दोनों गुणोंकी प्राप्ति नौ ग्रैवेयक तक ही सम्भव है, इसलिए इनमें नारकियोंकी अपेक्षा इतनी विशेषता कही है। शेष कथन स्पष्ट है।

§ ४६५. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके सम्भव पदोंका अन्तरकाल नहीं है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल नहीं है। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका भङ्ग ओघके समान है। अवस्थित संक्रामकका जघन्य अन्तर एक समय है और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त है।

विशेषार्थ—बारह कषाय आदिके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका जघन्य काल एक समय और उत्कृष्टकाल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण होनेसे यहाँ इनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कहा है। किन्तु इनके अवस्थित संक्रमका ऐसा कोई नियम नहीं है। वह एक समयके अन्तरसे भी हो सकता है और मध्यमें न

§ ४९६. एत्तो सेसमग्गणाणं देसामासयभावेणिंदियमग्गणेय[1]देसभूदेएइंदिएसु पयदंतरविहासणट्ठमुत्तरप्पबंधमाह।

❀ एइंदिएसु सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णत्थि किंचि वि अंतरं।

§ ४९७. कुदो? तत्थ संभवंताणं पि भुजगारप्पदरपदाणं लद्धंतरकरणोवाया-भावादो।

❀ सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणं भुजगार-अप्पयर-संकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि?

§ ४९८. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ४९९. भुजगारप्पदराणमण्णोण्णेणावट्ठिदसंकमेण वा एयसमयमंतरिदाणं बिदियसमये पुणो वि संभवं पडि विरोहाभावादो।

❀ उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो।

होकर जीवनके प्रारम्भमें और अन्तमें भी हो सकता है। यही कारण है कि यहाँ पर इनके अवस्थित संक्रमका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर कुछ कम अपनी अपनी स्थिति प्रमाण कहा है। चार नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर संक्रमका जघन्य संक्रमकाल एक समय और उत्कृष्ट संक्रमकाल अन्तर्मुहूर्त होनेसे यहाँ पर इनका जघन्य अन्तर एक समय और उत्कृष्ट अन्तर अन्तर्मुहूर्त कहा है। शेष कथन सुगम है।

इस प्रकार गतिमार्गणा समाप्त हुई।

§ ४९६. अब शेष मार्गणाओंके देशामर्षक भावसे एक देशभूत एकेन्द्रिय मार्गणाके एकेन्द्रियोंमें प्रकृत अन्तरकालका व्याख्यान करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* एकेन्द्रियोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका कुछ भी अन्तरकाल नहीं है।

§ ४९७. क्योंकि वहाँ पर यद्यपि उक्त प्रकृतियोंके भुजगार और अल्पतर संक्रम होते हैं फिर भी उनके अन्तर करनेका कोई उपाय नहीं पाया जाता।

* सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतरसंक्रामकका अन्तर काल कितना है?

§ ४९८. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ ४९९. क्योंकि परस्पर या अवस्थित संक्रमके द्वारा एक समयके लिए अन्तरको प्राप्त हुए भुजगार और अल्पतरसंक्रम फिर भी सम्भव हैं इसमें कोई विरोध नहीं पाया जाता।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

---

1. 'पदेस' ता०।

§ ५००. कुदो ? भुजगारप्पयरकालाणमुक्कस्सेण पलिदोवमासंखेज्जभागपमाणाणं जोण्हे-दरपक्खाणं व परियत्तमाणाणमण्णोण्णेणंतरिदाणमेइंदिएसु संभवे विरोहाभावादो ।

* अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ५०१. सुगमं ।

* जहण्णेण एयसमओ ।

§ ५०२. भुजगारप्पदराणमण्णदरेणेयसमयमंतरिदस्स तदुवलंभादो ।

* उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा ।

§ ५०३. गयत्थमेदं सुत्तं; ओघेण समाणपरूवणत्तादो ।

* सेसाणं सत्तणोकसायाणं भुजगार-अप्पयर-संकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ५०४. सुगमं ।

* जहण्णेण एयसमओ ।

§ ५०५. पडिवक्खबंधेण सगबंधेण च एयसमयमंतरिदस्स तदुवलंभादो ।

* उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

---

§ ५००. क्योंकि भुजगार और अल्पतर संक्रमका उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। इसके बाद वे शुक्ल और कृष्णपक्षके समान परस्पर नियमसे अन्तरको प्राप्त हो जाते हैं, इसलिए एकेन्द्रियोंमें इस अन्तरकालके प्राप्त होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

* अवस्थितसंक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ५०१. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अंतरकाल एक समय है।

§ ५०२. क्योंकि भुजगार और अल्पतरसंक्रमके द्वारा एक समयके लिए अन्तरको प्राप्त हुए इसका उक्त अन्तरकाल उपलब्ध होता है।

* उत्कृष्ट अन्तर अनन्तकाल है जो असंख्यात पुद्गल परिवर्तनके बराबर है।

§ ५०३. यह सूत्र गतार्थ है, क्योंकि इसकी प्ररूपणा ओघके समान है।

* शेष सात नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर संक्रामकका अन्तरकाल कितना है ?

§ ५०४. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

§ ५०५. क्योंकि प्रतिपक्ष प्रकृतिके बन्धसे और अपने बन्धसे एक समयके लिए अन्तरको प्राप्त हुए उक्त संक्रमोंका यह अन्तरकाल उपलब्ध होता है।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल अन्तर्मुहूर्त है।

§ ५०६. परियत्तमाणबंधपयडीसु भुजगारप्पयरकालस्स अंतोमुहुत्तपमाणस्स अण्णोण्णंतरभावेण समुवलद्धीए विसंवादाणुवलंभादो। एवमेदेण बीजपदेण सेसमग्गणासु वि जाणिऊण णेदव्वं जाव अणाहारि त्ति।

❀ णाणाजीवेहि भंगविचयो।

§ ५०७. अहियारसंभालणपरमेदं सुत्तं।

❀ अट्ठपदं कायव्वं।

§ ५०८. तत्थ भंगविचये अट्ठपदं ताव कायव्वं; अण्णहा तव्विसयणिण्णयाणुप्पत्तीदो।

❀ जा जेसु पयडी अत्थि तेसु पयदं।

§ ५०९. जेसु जीवेसु जा पयडी अत्थि, तेसु चेव पयदं। कुदो? अकम्मेहि अव्ववहारादो।

❀ सव्वजीवा मिच्छत्तस्स सिया अप्पयरसंकामया च असंकामया च।

§ ५१०. एत्थ सव्वजीवणिद्देसेण मिच्छत्तसंतकम्मियसव्वजीवाणं गहणं कायव्वं। कुदो? एवमणंतरणिद्दिट्ठट्ठपदसामत्थियादो। तेसु अप्पयरसंकामया असंकामया च णियमा अत्थि। कुदो? मिच्छत्तप्पयर-संकामयवेदयसम्माइट्ठीणं तदसंकामय मिच्छाइट्ठीणं च सव्वकालमवट्ठाणणियमदंसणादो।

§ ५०६. क्योंकि परिवर्तमान बन्ध प्रकृतियोंमें भुजगार और अल्पतर संक्रमका उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त प्रमाण है। उसके परस्पर अन्तरकाल रूपसे उपलब्ध होनेमें कोई विसंवाद नहीं पाया जाता। इस प्रकार इस बीजपदके अनुसार शेष मार्गणाओंमें भी जानकर अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

इस प्रकार एक जीव की अपेक्षा अन्तरकाल समाप्त हुआ।

* अब नाना जीवोंकी अपेक्षा भङ्ग विचयका अधिकार है।

§ ५०७. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह सूत्र है।

* उसमें अर्थपद करना चाहिए।

§ ५०८. उसमें अर्थात् भङ्गविचयमें सर्व प्रथम अर्थपद करना चाहिए अन्यथा उसके विषय का निर्णय नहीं हो सकता।

* जिनमें जो प्रकृति विद्यमान है उनमें प्रकृत है।

§ ५०९. जिन जीवोंमें जो प्रकृति विद्यमान है उनमें ही प्रकृत है, क्योंकि कर्मरहित जीवोंका यहाँ उपयोग नहीं है।

* सब जीव मिथ्यात्वके कदाचित् अल्पतर संक्रामक हैं और असंक्रामक हैं।

§ ५१०. यहाँ पर सर्व जीव पदके निर्देश द्वारा मिथ्यात्वके सत्कर्म वाले सब जीवोंका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि अनन्तर निर्दिष्ट अर्थपदकी सामर्थ्यसे ऐसा ही निर्णय होता है। उनमें अल्पतर संक्रामक और असंक्रामक जीव नियमसे हैं, क्योंकि मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्राम वेदक सम्यग्दृष्टियोंके और मिथ्यात्वके असंक्रामक मिथ्यादृष्टियोंके सर्वदा अवस्थानका नियम देखा जाता है।

*** सिया एदे च, भुजगारसंकामगो च, अवट्ठिदसंकामगो च, अवत्तव्वसंकामगो च।**

§ ५११. तं जहा-सिया एदे च भुजगारसंकामगो च ? कदाइमप्पयरसंकामएहि सह भुजगारपज्जायपरिणदेयजीवसंभवोवलंभादो। सिया एदे च अवट्ठिदसंकामगो च; पुव्विल्लेहि सह कामहिमि[1] अवट्ठिदपरिणामपरिणदेय-जीवसंभवाविरोहादो २। सिया एदे च अवत्तव्वसंकामगो च; कयाइं धुवपदेण सह अवत्तव्वसंकमपज्जाएण परिणदेयजीवसंभवे विप्पडिसेहाभावादो ३। एवमेयवयणेण तिण्णि भंगा णिद्दिट्ठा। एदे चेव बहुवयणसंबंधेण वि जोजेयव्वा। एवमेदे एयसंजोगभंगा परूविदा। संपहि एदे चेव दुसंजोगतिसंजोगवियप्पेहिं सत्तावीसभंगसमुप्पत्तीए णिमित्तं होंति त्ति जाणावणट्ठमिदमाह।

*** एवं सत्तावीसभंगा।**

§ ५१२. एवमेदेण कमेण सत्तावीसभंगा उप्पाएयव्वा। तेसिमुच्चारणा सुगमा।

*** सम्मत्तस्स सिया अप्पयरसंकामया च असंकामया च णियमा।**

§ ५१३. सम्मत्तस्स अप्पयरसंकामया णाम उव्वेल्लणाणमिच्छादिट्ठिणो असंकामया च वेदगसम्माइट्ठिणो सव्वे चेव; तेसिमेय पाहण्णियादो। तेसिमुभएसिं णियमा अत्थित्त-

---

*** कदाचित् ये जीव हैं और एक एक भुजगार संक्रामक, अवस्थित संक्रामक और अवक्तव्य-संक्रामक जीव है।**

§ ५११. यथा—कदाचित् ये जीव हैं और एक भुजगार संक्रामक जीव है, क्योंकि कदाचित् अल्पतर संक्रामक जीवोंके साथ भुजगार पर्यायसे परिणत हुआ एक जीव सम्भव रूपसे उपलब्ध होता है। कदाचित् ये जीव हैं और एक अवस्थित संक्रामक जीव है, क्योंकि पूर्वोक्त जीवोंके साथ कदाचित् अवस्थित पर्यायसे परिणत हुए एक जीवके सम्भव होनेमें कोई विरोध नहीं है २। कदाचित् ये जीव हैं और एक अवक्तव्य संक्रामक जीव है, क्योंकि कदाचित् ध्रुवपदके साथ अवक्तव्य संक्रामक पर्यायसे परिणत हुए एक जीवके सम्भव होनेमें कोई निषेध नहीं है ३। इस प्रकार एक वचनके द्वारा तीन भङ्ग निर्दिष्ट किये गये हैं। तथा ये ही बहुवचनके साथ भी लगा लेने चाहिए। इस प्रकार ये एक संयोगी भङ्ग कहे। अब ये ही द्विसंयोगी और त्रिसंयोगी विकल्पोंके साथ सत्ताईस भङ्गों की उत्पत्तिमें निमित्त होते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए यह सूत्र कहते हैं—

*** इस प्रकार सत्ताईस भङ्ग होते हैं।**

§ ५१२. इस प्रकार इस क्रमसे सत्ताईस भङ्ग उत्पन्न करने चाहिए। उनकी उच्चारणा सुगम है।

*** सम्यक्त्वके कदाचित् अल्पतर संक्रामक और असंक्रामक जीव नियमसे हैं।**

§ ५१३. सम्यक्त्वके अल्पतर संक्रामक उद्वेलना करनेवाले मिथ्यादृष्टि जीव और असंक्रामक सभी वेदक सम्यग्दृष्टि जीव होते हैं, क्योंकि उनकी यहाँ पर प्रधानता है। उन दोनों प्रकारके जीवों का नियमसे अस्तित्व है यह सूत्र द्वारा जतलाया गया है। यदि ऐसा है तो यहाँ पर स्यात्

---

१. कयाइ ता०।

भेदेण सुत्तेण जाणाविदं । जइ एवं; एत्थ सिया सद्दो ण पयोत्तव्वो त्ति णासंकणिज्जं, उवरिम-भयणिज्जभंगसंजोगासंजोगविवक्खाए धुवपदस्स वि कदाचिक्कभाव सिद्धीदो ।

❀ सेससंकामया भजियव्वा ।

§ ५१४. एत्थ सेससंकामया णाम भुजगारावत्तव्वसंकामया, ते च भयणिज्जा; सिया अत्थि, सिया णत्थि त्ति । कुदो ? तेसिं कदाचिक्कभावदंसणादो । तदो एदेसिमेग-बहुवयणविसेसिदाणमेग-दु-संजोगेणट्ठभंगसमुप्पत्ती वत्तव्वा । धुवभंगेण सह सव्वेभंगा णव होंति ९ ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स अप्पयरसंकामया णियमा ।

§ ५१५. कुदो ? उव्वेल्लमाणमिच्छाइट्ठीणं वेदयसम्माइट्ठीणं च तदप्पयरसंकामयाणं सव्वकालमुवलंभादो । तदो एदेसिं धुवभावेण सेससंकामयाणमेत्थ भयणी[1] यत्तपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं ।

❀ सेससंकामया भजियव्वा ।

§ ५१६. एत्थ सेसग्गहणेण भुजगारावत्तव्वसंकामयाणमसंकामयसहिदाणं गहणं कायव्वं । ते भजिदव्वा । कुदो ? तेसिं धुवभावित्ताभावादो । तदो सत्तावीसभंगाणमेत्थुप्पत्ती वत्तव्वा ।

❀ सेसाणं कम्माणं अवत्तव्वसंकामगा च असंकामगा च भजियव्वा ।

शब्दका प्रयोग नहीं करना चाहिए इस प्रकार यहाँ पर आशंका नहीं करनी चाहिए क्योंकि आगेके भजनीय भङ्गोंके संयोग और असंयोगकी विवक्षा होने पर ध्रुवपदकी भी कादाचित्कभाव की सिद्धि होती है ।

* शेष पदों के संक्रामक जीव भजनीय हैं ।

§ ५१४. यहाँ पर शेष पदोंके संक्रामकोंसे भुजगार और अवक्तव्य संक्रामक जीव लिये गये हैं । वे भजनीय हैं अर्थात् कदाचित् होते हैं और कदाचित् नहीं होते, क्योंकि उनका कादाचित्कभाव देखा जाता है । इसलिए एकवचन और बहुवचनसे विशेषताको प्राप्त हुए इनके एक संयोगी और द्विसंयोगी आठ भङ्गोंकी उत्पत्ति करनी चाहिए । ध्रुवभङ्गके साथ सब भङ्ग नौ होते हैं ।

* सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रामक जीव नियमसे हैं ।

§ ५१५. क्योंकि उद्वेलना करनेवाले मिथ्यादृष्टि और वेदक सम्यग्दृष्टि जीव सम्यग्मिथ्यात्व की अल्पतर संक्रम करते और वे सर्वदा पाये जाते हैं इसके लिए इनके ध्रुवभावके साथ शेष पदोंके संक्रामकोंकी भजनीयताका यहाँपर कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है ।

* शेष पदोंके संक्रामक जीव भजनीय हैं ।

§ ५१६. यहाँपर शेष पदके ग्रहण करनेसे असंक्रामकोंके साथ भुजगार और अवक्तव्य संक्रामकोंका ग्रहण करना चाहिए । वे भजनीय हैं, क्योंकि वे ध्रुव नहीं हैं । इसलिए सत्ताईस भङ्गोंकी उत्पत्तिका यहाँ पर कथन करना चाहिए ।

* शेष कर्मोंके अवक्तव्यसंक्रामक और असंक्रामक जीव भजनीय हैं ।

---

[1] 'णि' ता० ।

§ ५१७. एत्थ सेसकम्मग्गहणेण सोलसकसाय-णवणोकसायाणं संगहो कायव्वो। तेसिमवत्तव्वसंकामया असंकामया च भजियव्वा। कुदो ? तेसिं सव्वकालमत्थित्तणियमाणुवलंभादो।

❀ सेसा णियमा।

§ ५१८. एत्थ सेसग्गहणेण भुजगारप्पयरावट्ठिदसंकामयाणं जहासंभवग्गहणं कायव्वं। ते णियमा अत्थि त्ति संबंधो कायव्वो। सेसं सुगमं। एदेण सामण्णणिद्देसेण पुरिसवेदावट्ठिदसंकामयाणं पि धुवभावाइप्पसंगे तण्णिवारणमुहेण तेसिमद्धुवत्तपरूवण-ट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं।

❀ णवरि पुरिसवेदस्सावट्ठिदसंकामया भजियव्वा।

§ ५१९. कुदो ? तेसिमद्धुवभावित्तेण सम्माइट्ठीसु कत्थवि कदाइ भाविब्भावदंसणादो। तदो भुजगारप्पयरसंकामयाणं धुवभावेणावट्ठिदावत्तव्वा। संकामयाणं भयणावसेण पुरिसवेदस्स सत्तावीसभंगा समुप्पाएदव्वा। एवमोघेण भंगविचयो सव्वकम्माणं परूविदो। संपहि आदेसपरूवणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो। तं जहा—

§ ५२०. आदेसेण णेरइय-मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ओघं०। अणंताणु०४-भुज० अप्प०संका० णिय० अत्थि। सेस[1]पदाणि भयणिज्जाणि। बारसक०-पुरिसवे०-

§ ५१७. यहाँपर शेष कर्मोंके ग्रहण करनेसे सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका ग्रहण करना चाहिए क्योंकि उनके सर्वदा अस्तित्वका नियम नहीं उपलब्ध होता।

* शेष पदोंके संक्रामक जीव नियमसे हैं।

§ ५१८. यहाँ पर शेष पदका ग्रहण करनेसे भुजगार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामकोंका यथा सम्भव ग्रहण करना चाहिए। वे नियमसे हैं ऐसा सम्बन्ध करना चाहिए। शेष कथन सुगम है। इस सामान्य निर्देशसे पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामकोंके भी ध्रुवपनेकी प्राप्तिका प्रसङ्ग आया, इसलिए उसके निवारण करनेके अभिप्रायसे, उनके अध्रुवपनेका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है—

* इतनी विशेषता है कि पुरुषवेदके अवस्थितसंक्रामक जीव भजनीय हैं।

§ ५१९. क्योंकि उनके अध्रुव होनेके कारण सम्यग्दृष्टियोंमें उनका कहीं पर कदाचित् सद्भाव देखा जाता है। इसलिए भुजगार और अल्पतर संक्रामकोंके ध्रुव होनेके कारण तथा अवक्तव्य संक्रामक तथा असंक्रामकोंके भजनीय होनेके कारण पुरुषवेदके सत्ताईस भङ्ग उत्पन्न करने चाहिए। इस प्रकार ओघसे सब कर्मोंका भङ्गविचय कहा। अब आदेशसे प्ररूपणा करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते है। यथा—

§ ५२०. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके भुजगार और अल्पतर संक्रामक नाना जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतर संक्रामक

[1] सेसाणि ता०।

भय-दुगुंछा० भुज० अप्प०संका० णिय० अत्थि। सिया एदे च अवट्ठिदसंकामगो च, सिया एदे च अवट्ठिदसंकामया च ३। इत्थिवेद०-णवुंस०-चदुणोक०-भुज०-अप्प०-संका० णिय० अत्थि। एवं सव्वणेरइय० पंचि०तिरिक्खतिय देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति।

§ ५२१. तिरिक्खेसु मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ ओघं। बारसक०-भय-दुगुंछा० भुज० अप्प० अवट्ठि० णिय० अत्थि। तिण्णिवेद-चदुणोक०-णारय-भंगो। पंचिंदियतिरिक्ख-अपज्ज०-सम्म०-सम्मामि० अप्प० णिय० अत्थि सिया एदे च भुज० संकामगो च, सिया एदे च भुजगारसंकामगा च ३। सोलसक०-भय-दुगुंछा० भुज० अप्प०संका० णिय० अत्थि। अवट्ठि०संका० भय-णिज्जा। तिण्णिवेद-चदुणोक० भुज० अप्प०संका० णियमा अत्थि।

§ ५२२. मणुसतिए मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-इत्थि०-णवुंस०-चदुणोक० ओघं। सोलसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछा० भुज० अप्प०संका० णिय० अत्थि। सेसाणि भय-णिज्जाणि पदाणि[1]। मणुसअपज्ज० सत्तावीस पयडीणं सव्वपदसंका० भय-णिज्जा। अणुद्दिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थिवेद०-णवुंस० अप्प०संका० णिय०

नाना जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये हैं और एक अवस्थित संक्रामक जीव है २। कदाचित् ये हैं और एक नाना अवस्थित संक्रामक जीव हैं ३। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायके भुजगार और अल्पतर संक्रामक नाना जीव नियमसे हैं। इसी प्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ ५२१. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित संक्रामक नाना जीव नियमसे हैं। तीन वेद और चार नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर संक्रामक नाना जीव नियमसे हैं। कदाचित् ये नाना जीव हैं और भुजगार संक्रामक एक जीव है २। कदाचित् ये नाना जीव हैं और भुजगारसंक्रामक नाना जीव हैं ३। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतरसंक्रामक नाना जीव नियमसे हैं। अवस्थित संक्रामक जीव भजनीय हैं। तीन वेद और चार नोकषायोंके भुजगार और अल्पतरसंक्रामक नाना जीव नियमसे हैं।

§ ५२२. मनुष्यत्रिकमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान है। सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगार और अल्पतरसंक्रामक नाना जीव नियमसे हैं। शेष पद भजनीय हैं। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंके सब पदोंके संक्रामक जीव भजनीय हैं। अनुदिशासे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतर संक्रामक नाना जीव नियम

1. 'पदाणि' इति ता० प्रतौ नास्ति।

अत्थि । अणंताणु०४ अप्प०संका० णिय० अत्थि भुज०संका० भय णिज्जा । बारसक०-पुरिसवे० छण्णोक० देवोघं । एवं जाव० ।

*** णाणाजीवेहि कालो एदाणुमाणिय णेदव्वो ।**

§ ५२३. एदेण सुत्तेण णाणाजीवेहि कालो भंगविचयादो साहिऊण णेदव्वो त्ति सिस्साणमत्थसमप्पणा कया होइ । ण केवलं कालाणुगमो चेव णेदव्वो, किंतु भागाभाग-परिमाण-खेत्त-पोसणाणि वि एदाणुमाणियं[1] णेदव्वाणि; सुत्तस्सेदस्स देसामासयभावेणावट्ठाणब्भुवगमादो । तदो उच्चारणावसेण तेसिमेत्थाणुगमं कस्सामो । तं जहा—भागाभागाणुगमेण दुविहो णिद्देसो ओघादेसभेएण । ओघेण मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० अप्प०संका० सव्वजीव० केवडिओ भागो ? असंखेज्जा भागा । सेसपदसंका० सव्वजी० केव०-भागो ? असंखे० भागो । सोलसक०-भय-दुगुंछा० अवत्त० सव्व० केव० ? अणंतभागो । अवट्ठि० असंखे०भागो । अप्प०संका० संखे० भागो । भुज० संका० संखेज्जा भागा । इत्थिवेद-हस्स-रदि० अवत्त०संका० अणंतभागो । भुज०संका० केव० ? संखे० भागो । अप्प०संका० संखेज्जा भागा । एवं पुरिसवे० । णवरि अवट्ठि०संका० केव० ? अणंतभागो । णवुंसयवे०-अरदि-सोग० अवत्त०संका० सव्वजी० केव० ? अणंतभागो ।

से हैं । अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अल्पतर संक्रामक नाना जीव नियमसे हैं । भुजगार संक्रामक जीव भजनीय हैं । बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है । इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए ।

*** नाना जीवोंकी अपेक्षा काल इससे अनुमान करके ले जाना चाहिए ।**

§ ५२३. इस सूत्रसे नाना जीवोंकी अपेक्षा काल भङ्ग विचयके अनुसार साधकर ले जाना चाहिए । इस प्रकार शिष्योंके लिए अर्थकी समर्पणा की गई है । केवल कालानुगम ही नहीं ले जाना चाहिए किन्तु भागाभाग, परिमाण, क्षेत्र और स्पर्शन भी इससे अनुमान कर ले जाना चाहिए, क्योंकि इस सूत्रको देशामर्षकभावसे अवस्थित स्वीकार किया गया है । इसलिए उच्चारणाके अनुसार उनका यहाँ पर अनुगम करते हैं । यथा—भागाभागानुगमसे निर्देश ओघ और आदेशके भेदसे दो प्रकारका है । ओघसे मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतर संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भाग प्रमाण हैं ? असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । शेष पदोंके संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं । अवस्थित संक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । अल्पतर संक्रामक जीव संख्यातवें भाग प्रमाण हैं । भुजगार संक्रामक जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । स्त्रीवेद, हास्य और रतिके अवक्तव्य संक्रामक जीव अनन्तवें भागप्रमाण हैं । भुजगार संक्रामक जीव कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं । अल्पतर संक्रामक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । इसी प्रकार पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अवस्थित संक्रामक जीव कितने हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं । नपुंसकवेद, अरति और शोकके अवक्तव्य संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? अनन्तवें भागप्रमाण हैं । भुजगार संक्रामक जीव कितने भागप्रमाण हैं ?

१. 'ब' ता० ।

भुज०संका० केव० ? संखेज्जा भागा । अप्प०संका० सव्वजी० केव० भागो ? संखेज्जदि-भागो ।

§ ५२४. आदेसेण णेरइय०-मिच्छ० सम्म०-सम्मामि० ओघभंगो । अणंताणु० ४ ओघं । णवरि अवत्त०संका० असंखे० भागो । बारसक०-भय-दुगुंछा० ओघं । णवरि अवत्त० णत्थि । पुरिसवे०-अवट्ठि० असंखे० भागो । भुज०संका० संखे० भागो । अप्प०संका० संखेज्जा भागा । एवमित्थिवेद०-हस्स-र[illegible]वरि अवट्ठि० संका० णत्थि । णवुंस०-अरदि-सोग० ओघं । णवरि अवत्त०सं[illegible]त्थि । एवं सव्वणेरइय०-पंचिंदियतिरिक्खतियदेवगइदेवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति ।

§ ५२५. तिरिक्खेसु ओघं । णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त०संका० णत्थि । पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज०-मणुसअपज्ज०-सम्म०-सम्मामि० भुजं० संका०असंखे० भागो । अप्प०संका० असंखेज्जा भागा । सोलसक०-णवणोक० तिरिक्खोघं । णवरि अणंताणु०४ अवत्त० णत्थि । पुरिसवेद० अवट्ठि-संका० णत्थि ।

§ ५२६. मणुसेसु मिच्छ० अप्प०संका० संखेज्जा भागा । सेसं संखे० भागो । सम्म०-सम्मामि० ओघं । सोलसक०-णवणोक० णारयभंगो । णवरि बारसक०-णवणोक०

संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । अल्पतर संक्रामक जीव सब जीवोंके कितने भागप्रमाण हैं ? संख्यातवें भागप्रमाण हैं ।

§ ५२४. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य संक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । बारह कषाय, भय और जुगुप्साका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य संक्रामक जीव नहीं हैं । पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । भुजगार संक्रामक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं । अल्पतर संक्रामक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं । इसी प्रकार स्त्रीवेद, हास्य और रतिकी अपेक्षा जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अवस्थित संक्रामक जीव नहीं हैं । नपुंसकवेद, अरति और शोकका भङ्ग ओघके समान हैं । इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य संक्रामक जीव नहीं हैं । इसी प्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देवगतिमें सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए ।

§ ५२५. तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्य संक्रामक जीव नहीं हैं । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार संक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं । अल्पतर संक्रामक जीव असंख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है । इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य संक्रामक जीव नहीं हैं । तथा पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामक जीव नहीं हैं ।

§ ५२६. मनुष्योंमें मिथ्यात्वके अल्पतर संक्रामक जीव संख्यात बहुभाग प्रमाण हैं । शेष पदोंके संक्रामक संख्यातवें भागप्रमाण हैं । सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान

अवत्त०संका० असंखे० भागो। एवं मणुसपज्जत्तमणुसिणि०। णवरि संखेज्जं कायव्वं।

§ ५२७. आणदादि णव गेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० ओघं। अणंताणु०चउक्क० भुज० संखे० भागो। अप्प० संखेज्जा भागा। अवट्ठि० अवत्त० असंखे० भागो। बारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछा० भुज०संका० संखेज्जा भागा। अप्प०संका० संखे० भागो। अवट्ठि०संका० असंखे० भागो। एवमरदिसोगा०। णवरि अवट्ठि०संका० णत्थि। णवुंस[illegible]वेद-हस्स-रइ० भुज० संखे० भागो। अप्प० संखेज्जा भागा। अणुद्दिसादि [illegible] त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थिवे०-णवुंस० णत्थि भागाभागो। अणंताणु०४ भुज०संका० असंखे० भागो। अप्प० असंखेज्जा भागा। बारसक०-पुरिसवे०-छण्णोक० आणदभंगो। णवरि सव्वट्ठे संखेज्जं[1] कायव्वं एवं जाव०।

§ ५२८. परिमाणाणुगमेण दुविहो णिद्देसो ओघेण आदेसेण य। ओघेण दंसणतिय सव्वपद संका० केत्तिया? असंखेज्जा। सोलसक०-णवणोक० सव्वपद० केत्तिया? अणंता। णवरि अवत्त०संका० केत्ति०? संखेज्जा। अणंताणु०४ अवत्त०संका०

है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्य संक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसी प्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए।

§ ५२७. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके भुजगार संक्रामक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतरसंक्रामक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित और अवक्तव्य संक्रामक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साके भुजगारसंक्रामक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अल्पतरसंक्रामक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अवस्थितसंक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। इसी प्रकार अरति और शोककी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवस्थितसंक्रामक जीव नहीं हैं। नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, हास्य और रतिके भुजगार संक्रामक जीव संख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतरसंक्रामक जीव संख्यात बहुभागप्रमाण हैं। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेद की अपेक्षा भागाभाग नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके भुजगार संक्रामक जीव असंख्यातवें भागप्रमाण हैं। अल्पतरसंक्रामक जीव असंख्यात बहुभागप्रमाण हैं। बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग आनत कल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि असंख्यातके स्थानमें संख्यात करना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ ५२८. परिमाणानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे तीन दर्शनमोहनीयके सब पदोंके संक्रामक जीव कितने हैं? सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदोंके संक्रामक जीव कितने हैं? अनन्त हैं। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रामक जीव कितने हैं? संख्यात हैं। तथा अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवक्तव्य संक्रामक जीव असंख्यात हैं।

---

1. 'संखेज्जगुणं' ता०।

असंखेज्जा । पुरिसवे० अवट्ठि० असंखेज्जा । एवं तिरिक्खा । णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त०संका० णत्थि ।

§ ५२६. आदेसेण णेरइय० सव्वपयडी० सव्वपद०संका० केत्तिया ? असंखेज्जा । एवं सव्वणेरइय-सव्वपंचि०-तिरिक्ख० मणुस-अपज्ज०-देवगदिदेवा भवणादि जाव अवराजिदा त्ति । मणुसेसु णारयभंगो । णवरि सव्वपय० अवत्त० मिच्छत्त-सव्वपदसंका० पुरिसवे० अवट्ठिदसंका० संखेज्जा । मणुसपज्ज०-मणुसिणी० सव्वट्ठदेवा सव्वपय० सव्वपदसंका० केत्तिया ? संखेज्जा । एवं जाव० ।

§ ५३०. खेत्ताणु० दुविहो णिद्देसो ओघेण आदेसेण य । ओघेण सव्वपदसंका० केव० खेत्ते ? लोगस्स असंखे० भागे । सोलसक०-भय-दुगुंछ० अवत्त० लोग० असंखे० भागे । सेसपदसंका० सव्वलोगे । सत्तणोक०-अवत्त०-पुरिसवे० अवट्ठि० लोग० असंखे० भागे । सेसपदसंका० सव्वलोगे । एवं तिरिक्खा० । णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० णत्थि । सेसगदीसु सव्वपयडी० सव्वपदसंका० लोगस्स असंखे० भागे । एवं जाव० ।

§ ५३१. पोसणाणु० दुविहो णि० ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छ० सव्वपदसं० लोग० असंखे० भागो, अट्ठचोद्दस० (देसूणा) । सम्म०-सम्मामि० भुज०अप्प०

पुरुषवेदके अवस्थितसंक्रामक जीव असंख्यात हैं। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामक जीव नहीं हैं।

§ ५२६. आदेशसे नारकियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? असंख्यात हैं। इसी प्रकार सब नारकी, सब पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, मनुष्य अपर्याप्त, देवगतिमें सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर अपराजित विमान तकके देवोंमें जानना चाहिए। मनुष्योंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि सब प्रकृतियोंके अवक्तव्यसंक्रामक जीव, मिथ्यात्वके सब पदोंके संक्रामक जीव और पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामक जीव संख्यात हैं। मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी और सर्वार्थसिद्धिके देवोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके संक्रामक जीव कितने हैं ? संख्यात हैं। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ ५३०. क्षेत्रानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे दर्शनमोहनीयत्रिकके सब पदोंके संक्रामक जीवोंका कितना क्षेत्र है ? लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके अवक्तव्यसंक्रामकोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। शेष पदोंके संक्रामकोंका सब लोक क्षेत्र है। सात नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामकोंका और पुरुषवेदके अवस्थितसंक्रामकोंका लोकके असंख्यावें भाग प्रमाण क्षेत्र है। शेष पदोंके संक्रामकोंका सब लोक क्षेत्र है। इसी प्रकार सामान्य तिर्यञ्चोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्यसंक्रामक नहीं हैं। शेष गतियोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदोंके संक्रामकोंका लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्र है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए।

§ ५३१. स्पर्शनानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वके सब पदोंके संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे

संका० लोग० असंखे० भागो अट्ठचोद्दस० (देसूणा) सव्वलोगो वा । अवत्त०संका० लोग० असंखे० भागो अट्ठबारह चोद्दस० (दे०) । अणंताणुबंधी४ अवट्ठि०१ अ० संका० लोग० असंखे० भागो अट्ठचोद्दस० (देसूणा) । सेसपदसंका० सव्वलोगो । बारसक०-णवणोक० सव्वपदसंका० सव्वलोगो । णवरि अवत्त० लोग० असंखे० भागो । पुरिसवे० अवट्ठि०संका० लोग० असंखे० भागो अट्ठचोद्दस० (देसूणा) ।

§ ५३२. आदेसेण णेरइय०-मिच्छ० सव्वपद० संका० लोग० असंखे० भागो । सम्म०-सम्मामि० अवत्त० लोग० असंखे० भागो पंचचोद्दस० (देसूणा) । भुज० अप्प० संका० लोग० असंखे० भागो छच्चोद्दस० (देसूणा) । सोलसक० णवणोक० सव्वपदसं० लोग० असंखे० भागो छ चोद्दस० (देसूणा) । णवरि अणंताणु० चउक्क० अवत्त० पुरिस० अवट्ठि०संका० लोग० असंखे० भागो । एवं सव्वणेरइय । णवरि सगपोसणं एवं सत्तमाए । णवरि सम्म०-सम्मामि० अवत्त०संका० लोग० असंखे०भागो । णवरि पढमाए खेत्तभंगो ।

चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतर संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण, त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भाग प्रमाण और सब लोक क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अवक्तव्यसंक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम बारह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। शेष पदोंके संक्रामक जीवोंने सर्व लोकका स्पर्शन किया है। बारह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदोंके संक्रामक जीवोंने सब लोकका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। तथा पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ५३२. आदेशसे नारकियोंमें मिथ्यात्वके सब पदोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवक्तव्यसंक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम पाँच बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। भुजगार और अल्पतरसंक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदोंके संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवक्तव्यसंक्रामक और पुरुषवेदके अवस्थितसंक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार सब नारकियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन करना चाहिए। सातवीं पृथिवीमें भी इसी प्रकार जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवक्तव्यसंक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी और विशेषता है कि पहिली पृथिवीमें क्षेत्रके समान भङ्ग है।

१. 'अवत्त' ता० ।

§ ५३३. तिरिक्खेसु मिच्छ० भुज०-अवट्ठि०-अवत्त० संकाम० लोग० असंखे० भागो। अप्प०संका० लोग० असंखे० भागो छ चोद्दस० (देसूणा)। सम्म०-सम्मामि० भुज० अप्प०संका० लोग० असंखे०भागो, सव्वलोगो वा। अवत्त०संका० लोग० असंखे०भागो, सत्त चोद्दस० (देसूणा)। सोलसक०-णवणोक० सव्वपदसंका० सव्वलोगो। णवरि अणंताणु०४ ·अवत्त० पुरिसवे० अवट्ठि०संका० लोग० असंखे० भागो।

§ ५३४. पंचिंदियतिरिक्खतिए मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि० तिरिक्खोघं। सोलसक० णवणोक० सव्वपदसंका० लोग० असंखे०भागो, सव्वलोगो वा। णवरि अणंताणु० चउक्क० अवत्त० पुरिसवे० अवट्ठि० इत्थिवे० भुज० लोग० असंखे०भागो। पुरिसवे० भुज० लोग० असंखे० भागो, छ चोद्दस० (देसूणा)। एवं मणुसतिए। णवरि मिच्छ० अप्प० पुरिसवे० भुज० बारसक० णवणोक० अवत्त० लोग० असंखे० भागो। पंचिं० तिरिक्ख अपज्ज०-मणुसअपज्ज० सत्तावीसं पयडीणं सव्वपदसं० लो० असंखे० भागो, सव्वलोगो वा। णवरि इत्थिवेद० पुरिसवेद भुज० संका० लोग० असंखे० भागो।

§ ५३३. तिर्यञ्चोंमें मिथ्यात्वके भुजगार, अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। अल्पतरसंक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतर संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और सर्व लोकका स्पर्शन किया है। अवक्तव्य संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम सात बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदोंके संक्रामकोंने सब लोकका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य संक्रामकोंने और पुरुषवेदके अवस्थितसंक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ५३४. पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिकमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग सामान्य तिर्यञ्चोंके समान है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदोंके संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्रका और सब लोकका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य संक्रामक, पुरुषवेदके अवस्थितसंक्रामक और स्त्रीवेदके भुजगार संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पुरुषवेदके भुजगार-संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम छह बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार मनुष्यत्रिकमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि मिथ्यात्वके अल्पतर संक्रामक, पुरुषवेदके भुजगार संक्रामक तथा बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्य-संक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंके सब पदोंके संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका और सब लोकका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और पुरुषवेदके भुजगारसंक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है।

§ ५३५. देवेसु मिच्छ० सव्वपदे संका० लोग० असंखे० भागो, अट्ठ चोद्दस० देसूणा। सम्म०-सम्मामि०-सोलसक०-णवणोक० सव्वपदसंका० लोग० असंखे०भागो अट्ठ णव चोद्दस० देसूणा। णवरि अणंताणु०-चउक्क०-अवत्त० पुरिसवे० भुज० अवट्ठि० इत्थिवे० भुज० संका० लोग० असंखे०भागो अट्ठचोद्दस० देसूणा। [1]एवं भवणादि जाव अच्चुदा त्ति। णवरि सगपोसणं जाणियव्वं। उवरि खेत्तभंगो।

§ ५३६. कालाणु० दुविहो णिद्देसो-ओघे० आदेसे०। ओघे० मिच्छ० भुज० संका० जह० एयसमओ, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। अप्प० संका० सव्वद्धा। अवट्ठि०-अवत्त० संका० जह० एयसमओ, उक्क० आवलि० असंखे०भागो। एवं सम्म०। णवरि अवट्ठि० णत्थि। सम्मामि० भुज० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो। अप्प० संका० सव्वद्धा। अवत्त० संका० मिच्छत्तभंगो। अणंताणु०४ भुज०-अप्प०-अवट्ठि० संका० सव्वद्धा। अवत्त० मिच्छत्तभंगो। एवं बारसक०-भय-दुगुंछा०। णवरि अवत्त० संका० जह० एयसमओ, उक्क० संखेज्जा समया। एवं पुरिसवेद०। णवरि

§ ५३५. देवोंमें मिथ्यात्वके सब पदोंके संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सोलह कषाय और नौ नोकषायोंके सब पदोंके संक्रामकोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण तथा त्रसनालीके कुछ कम आठ और कुछ कम नौ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कके अवक्तव्य संक्रामक, पुरुषवेदके भुजगार और अवस्थितसंक्रामक तथा स्त्रीवेदके भुजगारसंक्रामक जीवोंने लोकके असंख्यातवें भागप्रमाण और त्रसनालीके कुछ कम आठ बटे चौदह भागप्रमाण क्षेत्रका स्पर्शन किया है। इसी प्रकार भवनवासियोंसे लेकर अच्युतकल्प तकके देवोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अपना-अपना स्पर्शन जानना चाहिए। आगेके देवोंमें क्षेत्रके समान भङ्ग है।

विशेषार्थ—यहाँपर हमने स्पर्शनका विशेष खुलासा नहीं किया है। इसका कारण इतना ही है कि स्वामित्व और अपने-अपने स्पर्शनको ध्यानमें रखकर विचार करने पर यहाँ जिस प्रकृतिके जिस पदकी अपेक्षा जितना स्पर्शन कहा है वह स्पष्ट रूपसे प्रतिभासित होने लगता है।

नाना जीवोंकी अपेक्षा काल

§ ५३६. कालानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश। ओघसे मिथ्यात्वके भुजगार संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवेंभागप्रमाण है। अल्पतरसंक्रामकोंका काल सर्वदा है। अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है। इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा काल जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका अवस्थितपद नहीं है। तथा सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतरसंक्रमकोंका काल सर्वदा है। अवक्तव्यसंक्रामकोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। इसी प्रकार बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य-संक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। इसी प्रकार

अवट्ठि० संका० जह० एगस०, उक्क० आवलि० असंखे० भागो। एवमित्थिवे०-णवुंस०-चदुणोक०। णवरि अवट्ठि० णत्थि।

§ ५३७. आदेसेण णेरइय० दंसणतियस्स ओघं। अणंताणु०४ अवट्ठि० अवत्त० संका० जह० एगस०, उक्क० आवलि असंखे० भागो। भुज०-अप्प० संका० सव्वद्धा। एवं बारसक०-पुरिसवे०-भय-दुगुंछ०। णवरि अवत्त० णत्थि। एवमित्थिवेद-णवुंस०-चदुणोक०। णवरि अवट्ठि० णत्थि। एवं सव्वणेरइयपंचिंदिय तिरिक्खतिय-देवगदि देवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति।

§ ५३८. तिरिक्खा० ओघं। णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० णत्थि। पंचिंदियतिरिक्खअपज्ज० सम्म०-सम्मामि० णारयभंगो। णवरि अवत्त० णत्थि। सोलसक०-णवणोक० णारयभंगो। णवरि अणंताणु०४ अवत्त०-पुरिसवे० अवट्ठि० णत्थि।

§ ५३९. मणुसेसु मिच्छ० भुज० संका० जह० एयस० उक्क० अंतोमुहुत्तं। अप्प० संका० सव्वद्धा। अवट्ठि०-अवत्त० संका० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। सम्म०-सम्मामि० भुज० अप्प० संका० णारयभंगो। अवत्त० मिच्छत्तभंगो। सोलसक० भय-दुगुंछा० णारयभंगो। णवरि अवत्त० मिच्छत्तभंगो। पुरिसवेद० अवट्ठि०

पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवस्थितसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इसी प्रकार स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनका अवस्थितपद नहीं है।

§ ५३७. आदेशसे नारकियोंमें दर्शनमोहत्रिकका भङ्ग ओघके समान है। अनन्तानुबन्धी चतुष्कके अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है। भुजगार और अल्पतरसंक्रामकोंका काल सर्वदा है। इसी प्रकार बारह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यपद नहीं है। इसी प्रकार स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अवस्थितपद नहीं है। इसी प्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देवगतिमें सामान्य देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए।

§ ५३८. तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवक्तव्यपद नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि इनका अवक्तव्यपद नहीं है। सोलह कषाय और नौ नोकषायोंका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्यपद और पुरुष वेदका अवस्थितपद नहीं है।

§ ५३९. मनुष्योंमें मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तर्मुहूर्त है। अल्पतरसंक्रामकोंका काल सर्वदा है। अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल संख्यात समय है। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतरसंक्रामकोंक भङ्ग नारकियोंके समान है। अवक्तव्य संक्रामकोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। सोलह कषाय, भय और जुगुप्साका भङ्ग नारकियोंके समान है। इतनी विशेषता

अवत्त० संका० जह० एयस०, उक्क० संखेज्जा समया। सेसं सव्वद्धा। इत्थिवेद०-णवुंसवे०-चदुणोक० ओघं। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी०। जम्हि आवलि० असंखे० भागो तम्हि संखेज्जा समया। सम्म०-सम्मामि० भुज० संका० जह० एयस० उक्क० अंतोमु०। मणुस-अपज्ज० सव्वपयडी० सव्वपदसंका० जह० एयस०, उक्क० पलिदो० असंखे०भागो। णवरि सोलसक०- भय-दुगुंछा० अवट्ठि० जह० एयस०, आवलि० असंखे०भागो।

§ ५४०. अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थिवेद० णवुंस० अप्प० संका० सव्वद्धा। अणंताणु०४ भुज० संका० जह० अंतोमु०, उक्क० पलिदो० असंखे० भागो। अप्प० संका० सव्वद्धा। बारसक०-पुरिसवे० छण्णोक० देवोघं। णवरि सव्वट्ठे जम्मि आवलि० असंखे०भागो तम्मि संखेज्जा समया। अणंताणु० चउक्क० भुज० संका० जह० उक्क० अंतोमु०। एवं जाव०।

❀ णाणाजीवेहि अंतरं।

§ ५४१. एत्तो णाणाजीवविसेसिदमंतरं भुजगारादि संकामयविसयमणुवत्त-इस्सामो त्ति अहियारसंभालणवक्कमेदं।

है कि अवक्तव्यसंक्रामकोंका भङ्ग मिथ्यात्वके समान है। पुरुषवेदके अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्टकाल संख्यात समय है। शेष पदोंके संक्रामकोंका काल सर्वदा है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंका भङ्ग ओघके समान हैं। इसीप्रकार मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। मात्र जहाँ आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहा है वहाँ संख्यात समय काल जानना चाहिए। सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगारसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सब प्रकृतियोंके सब पदसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके अवस्थितसंक्रामकोंका जघन्य काल एक समय है और उत्कृष्ट काल आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण है।

§ ५४०. अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतर संक्रामकोंका काल सर्वदा है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके भुजगार संक्रामकोंका जघन्य काल अन्तमुहूर्त है और उत्कृष्ट काल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतर संक्रामकोंका काल सर्वदा है। बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इतनी विशेषता है कि जहाँ आवलिके असंख्यातवें भागप्रमाण काल कहा है वहाँ सर्वार्थसिद्धिमें संख्यात समय काल कहना चाहिए। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके भुजगार संक्रामकोंका जघन्य और उत्कृष्ट काल अन्तमुहूर्त है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

❀ अब नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्तरका अधिकार है।

§ ५४१. अब आगे भुजगार आदि पदोंका संक्रामक करनेवाले नाना जीवों सम्बन्धी अन्तरको बतलाते हैं इस प्रकार अधिकार की सम्हाल करनेवाला यह वाक्य है।

❀ मिच्छत्तस्स भुजगार-अवत्तव्व-संकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो ?

§ ५४२. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ५४३. भुजगारसंकामयाणं ताव उच्चदे—एक्को वा दो वा तिण्णि वा एवमुक्कस्सेण पलिदो० असंखे० भागमेत्ता वा मिच्छाइट्ठी उवसमसम्मत्तं पडिवज्जिय गुणसंकमचरिमसमए वट्टमाणा भुजगारसंकामया दिट्ठा, णट्ठो च तदणंतरसमए तेसिं पवाहो । एवमेयसमयमंतरिदपवाहाणं पुणो वि णाणाजीवाणुसंधाणेणागणंतरसमए समुब्भवो दिट्ठो णिणट्ठमंतरं होइ । एवमवत्तव्वसंकामयाणं वि वत्तव्वं । णवरि सम्मत्तं पडिवण्णपढमसमए आदी कायव्वा ।

❀ उक्कस्सेण सत्त रादिंदियाणि ।

§ ५४४. कुदो ? सम्मत्तग्गाहयाणमुक्कस्संतरस्स तप्पमाणत्तोवएसादो ।

❀ अप्पयरसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ।

§ ५४५. सुगमं ।

❀ णत्थि अंतरं ।

*** मिथ्यात्वके भुजगार और अल्पतरसंक्रामक जीवोंका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ५४२. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।**

§ ५४३. सर्व प्रथम भुजगारसंक्रामकोंका अन्तरकाल कहते हैं—एक, दो या तीन इस प्रकार उत्कृष्ट रूपसे पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण मिथ्यादृष्टि जीव उपशमसम्यक्त्वको प्राप्त कर गुणसंक्रमके अन्तिम समयमें रहते हुए भुजगारसंक्रामक देखे गये और तदनन्तर समयमें उनका प्रवाह नष्ट हो गया । इस प्रकार एक समय तक प्रवाहका अन्तर देकर फिर भी नाना जीवोंके प्रवाह रूपसे अनन्तर समयमें उत्पत्ति देखी गयी । तथा इसके बाद वह प्रवाह भी नष्ट हो गया । इस प्रकार भुजगारसंक्रामक नाना जीवोंका जघन्य अन्तर एक समय होता है । इसी प्रकार अवक्तव्यसंक्रामकोंका भी जघन्य अन्तर एक समय कहना चाहिए । इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें आदि करनी चाहिए ।

*** उत्कृष्ट अन्तरकाल सात रात्रि-दिन है ।**

§ ५४४. क्योंकि सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल तत्प्रमाण है ऐसा उपदेश है ।

*** अल्पतर संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ।**

§ ५४५. यह सूत्र सुगम है ।

*** अन्तरकाल नहीं है ।**

§ ५४६. कुदो ? तदप्पयरसंकामयाणं वेदयसम्माइट्ठीणमतुट्टसंताणक्कमेणावट्ठाण-णियमदंसणादो ।

❀ अवट्ठिदसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ५४७. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ५४८. तं जहा—पुव्वुप्पण्णसम्मत्तमिच्छाइट्ठीणं केत्तियाणं पि अवट्ठिदपाओग्गसंतकम्मेण सम्मत्तं पडिवण्णाणं पढमावलियाए-अवट्ठिदसंकमं कादूणेयसमयमंतरिदाणं पुणो तदणंतरसमए केत्तियाणं पि अवट्ठिदसंकामयाणमवट्ठाणेण विणासिदंतरंतराणं लद्धमंतरं कायव्वं ।

❀ उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ।

§ ५४९. कुदो ? एयवारमवट्ठिदपरिणामेण परिणदणाणाजीवाणमेत्तियमेत्तुक्कस्संतरेण पुणो अवट्ठिदसंकमहेदुपरिणामविसेसपडिलंभादो ।

❀ सम्मत्तस्स भुजगारसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ५५०. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

---

§ ५४६. क्योंकि मिथ्यात्वके अल्पतरसंक्रामक वेदकसम्यग्दृष्टिका अत्रुटित सन्तान रूपसे अवस्थान नियम देखा जाता है ।

* अवस्थितसंक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ ५४७. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ५४८ यथा—जिन्होंने पहले सम्यक्त्वको उत्पन्न किया है ऐसे कितने ही मिथ्यादृष्टि जीव अवस्थित पदके योग्य सत्कर्मके साथ सम्यक्त्वको प्राप्त कर प्रथम आवलिमें अवस्थित संक्रमको करके एक समयके लिए उसका अन्तर करते हैं तथा उसके अनन्तर समयमें कितने ही अवस्थित संक्रामक जीव अवस्थित पदके द्वारा अन्तरका विनाश करते हैं । इस प्रकार मिथ्यात्वके अवस्थित पदका एक समय जघन्य अन्तर प्राप्त होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है ।

§ ५४९. क्योंकि एक बार अवस्थित परिणाम रूपसे परिणत नाना जीवोंका इतने मात्र उत्कृष्ट अन्तरकालके बाद पुनः अवस्थित संक्रमके हेतुभूत परिणाम विशेष उपलब्ध होते हैं ।

* सम्यक्त्वके भुजगारसंक्रामक जीवोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ ५५०. यह सूत्र सुगम है ।

* जघन्य अन्तर काल एक समय है ।

§ ५५१. कुदो ? उव्वेल्लणाचरिमट्ठिदिखंडए भुजगारसंकमं कादूणंतरिदाणमेयसमयादो उवरि णाणाजीवावेक्खाए पुणो वि भुजगारपज्जायपरिणमणे विरोहाभावादो ।

❀ उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेये ।

§ ५५२. कुदो ? उव्वेल्लणापवेसयाणमुक्कस्संतरस्स तप्पमाणत्तोवएसादो ।

❀ अप्पयरसंकामयाणं णत्थि अंतरं ।

§ ५५३. कुदो ? सम्मत्तप्पयरसंकामयाणमुव्वेल्लणापरिणदमिच्छाइट्ठीणमवोच्छिण्णकमेण सव्वद्धमवट्ठाणणियमादो ।

❀ अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ।

§ ५५४. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ५५५. सम्मत्तादो मिच्छत्तं पडिवज्जमाणणाणाजीवाणमेयसमयमेत्त जहण्णंतरसिद्धीए विसंवादाभावादो ।

❀ उक्कस्सेण सत्त रादिंदियाणि ।

§ ५५६. कुदो ? सम्मत्तुप्पत्तिपडिभागेणेव तत्तो मिच्छत्तं गच्छमाण जीवाणमुक्कस्संतरसंभवं पडि विरोहाभावादो । जइ एदमणंतरसुत्तणिद्दिट्ठभुजगारसंकमुक्कस्संतरेण

---

§ ५५१. क्योंकि उद्वेलना संक्रमके अन्तिम स्थिति काण्डकके समय नाना जीवोंने भुजगार संक्रम करके अन्तर किया। पुनः एक समयके बाद नाना जीवोंकी अपेक्षा अन्य जीवोंका भुजगार पर्यायरूपसे परिणमन करनेमें कोई विरोध नहीं आता।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिन-रात्रि है ।

§ ५५२. क्योंकि उद्वेलना संक्रममें प्रवेश करनेवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल तत्प्रमाण है ऐसा उपदेश है।

* अल्पतर संक्रामक जीवोंका अन्तरकाल नहीं है ।

§ ५५३. क्योंकि सम्यक्त्वका अल्पतर संक्रम करनेवाले ऐसे उद्वेलना संक्रम रूपसे परिणत हुए मिथ्यादृष्टि जीवोंका अविच्छिन्नक्रमसे सर्वदा अवस्थान नियम देखा जाता है।

* अवक्तव्य संक्रामक जीवोंका अन्तरकाल कितना है ?

§ ५५४. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ५५५. सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वको प्राप्त होने वाले नाना जीवोंके एक समय प्रमाण जघन्य अन्तरकालके सिद्ध होनेमें कोई विसंवाद नहीं उपलब्ध होता।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल सात रात्रि-दिन है ।

§ ५५६. क्योंकि जितने जीव सम्यक्त्वको उत्पन्न करते हैं उसके अनुसार ही सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वको प्राप्त होने वाले जीवोंके उत्कृष्ट अन्तरकाल सम्भव होनेमें कोई विरोध नहीं आता।

शंका—यदि ऐसा है तो अनन्तर सूत्रमें निर्दिष्ट भुजगारसंकमका उत्कृष्ट अन्तर

वि सत्तरादिंदियमेत्तेण होदव्वं, उव्वेल्लणापवेसणाणुसारेणेव तत्तो णिस्सरणस्स णाइयत्तादो त्ति णासंकणिज्जं । किं कारणं ? सम्मत्तादो मिच्छत्तं पडिवण्णसव्वजीवाणमुव्वेल्लणापवेसणियमाभावादो उव्वेल्लणाए पविट्ठाणं पि सव्वेसिमेव णिस्संतीकरणणियमाणब्भुवगमादो च ।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स भुजगार-अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

§ ५५७. सुगमं ।

❀ जहण्णेण एयसमओ ।

§ ५५८. कुदो ? पयदभुजगारावत्तव्वसंकामयणाणाजीवाणमेयसमयमंतरिदाणं पुणो णाणाजीवाणुसंधाणेण तदणंतरसमए तहाभावपरिणामाविरोहादो ।

❀ उक्कस्सेण सत्त रादिंदियाणि ।

§ ५५९. कुदो ? सम्मत्तुप्पादयाणमुक्कस्संतरस्स वि तब्भावसिद्धीए पडिबंधाभावादो । एदेण सामण्णणिद्देसेणावत्तव्वसंकामयाणं पि पयदंतराइप्पसंगे तत्थ पयारंतरसंभवपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं ।

❀ णवरि अवत्तव्वसंकामयाणमुक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेये ।

काल भी सात रात्रि-दिन प्रमाण होना चाहिए, क्योंकि उद्वलना संक्रममें प्रवेश करनेवाले जीवोंके अनुसार ही उसमेंसे निकलना न्याय प्राप्त है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले सब जीवोंका उद्वेलनासंक्रममें प्रवेश करनेका कोई नियम नहीं है तथा उद्वेलनासंक्रममें प्रवेश करनेवाले सभी जीव निसत्त्व करते हैं ऐसा नियम भी नहीं स्वीकार किया गया है ।

*** सम्यग्मिथ्यात्वके भुजगार और अवक्तव्यसंक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है ?**

§ ५५७. यह सूत्र सुगम है ।

*** जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।**

§ ५५८. क्योंकि प्रकृत भुजगार और अवक्तव्यसंक्रम करनेवाले नाना जीवोंके एक समयका अन्तर करनेके बाद पुनः नाना जीवोंके क्रम परिपाटीसे तदनन्तर समयमें उस प्रकारके परिणामके माननेमें कोई विरोध नहीं आता ।

*** उत्कृष्ट अन्तर सात रात्रि-दिन है ।**

§ ५५९. क्योंकि सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेवाले जीवोंका जो उत्कृष्ट अन्तर है उसके तद्भावकी सिद्धि होनेमें कोई रुकावट नहीं आती । यहाँ इस सामान्य निर्देशसे अवक्तव्य संक्रामक जीवोंके भी प्रकृत अन्तरके प्राप्त होनेपर वहाँपर प्रकारान्तर सम्भव है इसका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है । यथा—

*** इतनी विशेषता है कि अवक्तव्यसंक्रामकोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस रात्रि-दिन है ।**

§ ५६०. णेदमुक्कस्संतरविहाणं घडंतयमुवसमसम्मत्तग्गाहयाणमुक्कस्संतरस्स सत्त-रादिंदियपमाणं मोत्तूण सादिरेयचउव्वीसाहोरत्तपमाणत्ताणुवलद्धीदो। एत्थ परिहारो उच्चदे–होउ णामोवसमसम्मत्तग्गाहीणं सत्तरादिंदियमेत्तुक्कस्संतरणियमो, तत्थ विसंवादाणुवलंभादो। किंतु णीसंतकम्मियमिच्छाइट्ठीणमुवसमसम्मत्तं गेण्हमाणाणमेदमुक्कस्संतरमिह सुत्ते विवक्खियं, ससंत[1]कम्मियाणमुवसमसम्मत्तग्गहणे अवत्तव्वसंकमसंभवाणुवलंभादो।

❀ अप्पयरसंकामयाणं णत्थि अंतरं।

§ ५६१. कुदो? सम्मामिच्छत्तप्पयरसंकामयवेदयसम्माइट्ठीणमुव्वेल्लमाणमिच्छाइट्ठीणं च पवाहोच्छेदेण विणा सव्वद्धमवट्ठाणणियमादो।

❀ अणंताणुबंधीणं भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसंकामयंतरं णत्थि।

§ ५६२. कुदो? सव्वद्धमेदेसिमवच्छिण्णपवाहकमेणावट्ठाणदंसणादो।

❀ अवत्तव्वसंकामयाणमंतरं केवचिरं?

§ ५६३. सुगमं।

❀ जहण्णेण एयसमओ।

§ ५६०. शंका—यह उत्कृष्ट अन्तरकालका कथन घटित नहीं होता, क्योंकि उपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल सात रात्रि-दिन प्रमाण इसे है, छोड़कर साधिक चौबीस दिन-रात्रिप्रमाण नहीं उपलब्ध होता?

समाधान—यहाँ पर उक्त शंकाका परिहार करते हैं—उपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करनेवाले जीवोंके सात रात्रि-दिनप्रमाण उत्कृष्ट अन्तरकालका नियम होओ, क्योंकि इसमें कोई विसंवाद नहीं उपलब्ध होता। किन्तु जिन्होंने सम्यग्मिथ्यात्वको निःसत्त्व कर दिया है ऐसे उपशम सम्यक्त्व को ग्रहण करनेवाले जीवोंका यह उत्कृष्ट अन्तरकाल यहाँ सूत्रमें विवक्षित है, क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्व की सत्तावाले जीवोंके उपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करने पर अवक्तव्य संक्रम सम्भव नहीं है।

* अल्पतर संक्रामकोंका अन्तरकाल नहीं है।

§ ५६१. क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वका अल्पतर संक्रम करनेवाले वेदक सम्यग्दृष्टियोंका तथा उसीकी उद्वेलना करनेवाले मिथ्यादृष्टियोंके प्रवाहका विच्छेद हुए बिना सर्वदा अवस्थान रहनेका नियम है।

* अनन्तानुबन्धियोंके भुजगार, अल्पतर और अवस्थित संक्रम करनेवालोंका अन्तरकाल नहीं है।

§ ५६२. क्योंकि इनका सर्वत्र अविच्छिन्न प्रवाहक्रमसे अवस्थान देखा जाता है।

* अवक्तव्य संक्रामकोंका अन्तरकाल कितना है?

§ ५६३. यह सूत्र सुगम है।

* जघन्य अन्तरकाल एक समय है।

1. ता० प्रतौ सत्संत (सस्संत) इति पाठः।

§ ५६४. विसंजोयणादो संजुत्तमिच्छाइट्ठीणं जहण्णंतरस्स तप्पमाणत्तादो ।

❀ उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे ।

§ ५६५. अणंताणुबंधिविसंजोजयाणं व तस्संजोजयाणं पि उक्कस्संतरस्स तप्पमाणत्त-सिद्धीए विरोहाभावादो ।

❀ एवं सेसाणं कम्माणं ।

§ ५६६. सुगममेदमप्पणासुत्तं । एदेण सामण्णणिद्देसेणावत्तव्वसंकामयाणं सादिरेय-चउवीसमहोरत्तमेत्तुक्कस्संतराइप्पसंगे तण्णिवारणमुहेण तत्थ पयारंतरसंभवपदुप्पायणट्ठ-मुत्तरसुत्तमोइण्णं ।

❀ णवरि अवत्तव्वसंकामयाणमुक्कस्सेण वासपुधत्तं ।

§ ५६७. किं कारणं ? सव्वोवसामणापडिवादुक्कस्संतरस्स तप्पमाणत्तोवलंभादो । ण केवलमेत्तियो चेव विसेसो, किंतु अण्णो वि अत्थि त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ पुरिसवेदस्स अवट्ठिदसंकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ ।

§ ५६८. सुगममेदं ।

❀ उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ।

---

§ ५६४. क्योंकि विसंयोजनाके बाद संयोजनाको प्राप्त होनेवाले मिथ्यादृष्टियोंका जघन्य अन्तरकाल तत्प्रमाण उपलब्ध होता है ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल चौबीस दिन-रात्रि है ।

§ ५६५. क्योंकि अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना करनेवाले जीवोंके समान उनकी संयोजना करनेवाले जीवोंके भी उत्कृष्ट अन्तरकालके तत्प्रमाण सिद्ध होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

* इसी प्रकार शेष कर्मोंके सम्भव पदोंका अन्तरकाल जानना चाहिए ।

§ ५६६. यह अर्पणासूत्र सुगम है । इस सामान्य निर्देशसे अवक्तव्य संक्रामकोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिन-रात्रिप्रमाण प्राप्त होनेपर उसके निवारण करनेके द्वारा वहाँ पर प्रकारान्तर सम्भव है इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र आया है ।

* इतनी विशेषता है कि अवक्तव्य संक्रामकोंका उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व प्रमाण है ।

§ ५६७. क्योंकि सर्वोपशामनासे गिरनेका उत्कृष्ट अन्तरकाल तत्प्रमाण उपलब्ध होता है । केवल इतनी ही विशेषता नहीं है, किन्तु अन्य विशेषता भी है इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है ।

§ ५६८. यह सूत्र सुगम है ।

* उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है ।

§ ५६९. कुदो ? एगवारं पुरिसवेदावट्ठिदसंकमेण परिणदणाणाजीवाणं सुट्ठु बहुअं कालमंतरिदाणमसंखेज्जलोगमेत्तकाले वोलीणे णियमा तब्भावसंभवोवएसादो ।

एवमोघो समत्तो ।

§ ५७०. संपहि आदेसपरूवणट्ठमुच्चारणं वत्तइस्सामो । अंतराणुगमेण दुविहो णिद्देसो-ओघे० आदेसे० । ओघेण मिच्छ० भुज०-अवत्त०संका० जह० एयस०, उक्क० सत्त-रादिंदियाणि । अप्प०संका० णत्थि अंतरं । अवट्ठि०संका० जह० एयस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । एवं सम्म०-सम्मामि० । णवरि अवट्ठि० णत्थि । सम्म० भुज० सम्मामि० अवत्त० ज० एगस०, उक्क० चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । अणंताणु०४ विहत्ति-भंगो । एवं बारसक०-भय-दुगुंछा० । णवरि अवत्त० जह० एगस०, उक्क० वासपुधत्तं । एवं पुरिसवेद० । णवरि अवट्ठि०संका० जह० एयस०, उक्क० असंखेज्जा लोगा । एवमित्थिवेद-णवुंस०-चदुणोक० । णवरि अवट्ठि० णत्थि ।

§ ५७१. आदेसेण णेरइय० दंसणतियस्स ओघं । अणंताणु०चउक्क० ओघं । णवरि अवट्ठि० जह० एयसमओ, उक्क० असंखेज्जा लोगा । एवं बारसक०-भय-दुगुंछ०—

---

§ ५६९. क्योंकि एक बार पुरुषवेदके अवस्थित संक्रमरूपसे परिणत हुए नाना जीवोंका अत्यन्त बहुत काल तक अन्तर हो तो भी असंख्यात लोकप्रमाण कालके जाने पर नियमसे तद्भाव सम्भव है ऐसा उपदेश है ।

इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ५७०. अब आदेशका कथन करनेके लिए उच्चारणाको बतलाते हैं—अन्तरानुगमकी अपेक्षा निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । ओघसे मिथ्यात्वके भुजगार और अवक्तव्य पदके संक्रामक जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल सात रात्रि-दिन है । अल्पतर संक्रामकोंका अन्तरकाल नहीं है । अवस्थित संक्रामकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है । इसी प्रकार सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें भी जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि यहाँ इनका अवस्थित पद नहीं है तथा सम्यक्त्वके भुजगार और सम्यग्मिथ्यात्वके अवक्तव्य पदके संक्रामक जीवोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल साधिक चौबीस दिन-रात्रि है । अनन्तानुबन्धी चतुष्कका भंग विभक्तिके समान है । इसी प्रकार बारह कषाय, भय और जुगुप्साके विषयमें भी जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनके अवक्तव्य संक्रामकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल वर्षपृथक्त्व प्रमाण है । इसी प्रकार पुरुषवेदके विषयमें भी जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अवस्थित संक्रामकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है । इसी प्रकार स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंके विषयमें भी जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनका अवस्थितपद नहीं है ।

§ ५७१. आदेशसे नारकियोंमें तीन दर्शनमोहनीयका भङ्ग ओघके समान है । अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग ओघके समान है । इतनी विशेषता है कि इनके अवस्थित संक्रामकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोकप्रमाण है । इसी प्रकार बारह

पुरिसवेद० । णवरि अवत्त० णत्थि । इत्थिवे०-णवुंस०-चदुणोक० भुज०-अप्प० णत्थि अंतरं । एवं सव्वणेरइय-पंचिंदियतिरिक्खतिय३—देवगइदेवा भवणादि जाव णवगेवज्जा त्ति । तिरिक्खाणमोघं । णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० णत्थि । पंचि०तिरिक्ख-अपज्ज० णारयभंगो । णवरि अणंताणु०चउक० अवत्त० पुरिसवे० अवट्ठि० सम्म०-सम्मामि० अवत्त० णत्थि । मिच्छत्तस्स असंका० ।

§ ५७२. मणुसतिए णारयभंगो । णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० ओघं । मणुसअपज्ज० सत्तावीसं पयडीणं सव्वपदसंका० जह० एगस०, उक० पलिदो० असंखे०भागो । णवरि सोलसक०-भय-दुगुंछा० अवट्ठि० जह० एयस०, उक० असंखेज्जा लोगा । अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थिवे०-णवुंस० अप्प० संका० णत्थि अंतरं, णिरंतरं । अणंताणु०४ भुज०संका० जह० एयस०, उक्क० वास-पुधत्तं पलिदो० असंखे०भागो । अप्प० णत्थि अंतरं । बारसक०-पुरिसवेद-छण्णोक० देवोघं । एवं जाव० ।

§ ५७३. भावो सव्वत्थ ओदइओ भावो ।

कषाय, भय, जुगुप्सा और पुरुषवेदकी अपेक्षा जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनका अवक्तव्यपद नहीं है। स्त्रीवेद, नपुंसकवेद और चार नोकषायोंके भुजगार और अल्पतर पदका अन्तरकाल नहीं है। इसी प्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देव गतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें जानना चाहिए। सामान्य तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवक्तव्यपद नहीं है। पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि अनन्तानुबन्धी चतुष्कका अवक्तव्यपद, पुरुषवेदका अवस्थित पद तथा सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वका अवक्तव्यपद नहीं है। ये मिथ्यात्वके असंक्रामक होते हैं।

§ ५७२. मनुष्यत्रिकमें नारकियोंके समान भङ्ग है। इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंके अवक्तव्य संक्रामकोंका भङ्ग ओघके समान है। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें सत्ताईस प्रकृतियोंके सब पदोंके संक्रामकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। इतनी विशेषता है कि सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके अवस्थित सक्रामकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है और उत्कृष्ट अन्तरकाल असंख्यात लोक प्रमाण है। अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके अल्पतर संक्रामकोंका अन्तरकाल नहीं है निरन्तर है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके भुजगार संक्रामकोंका जघन्य अन्तरकाल एक समय है तथा उत्कृष्ट अन्तरकाल नौ अनुदिश और चार अनुत्तर विमानोंमें वर्ष पृथक्त्वप्रमाण और सर्वार्थसिद्धिमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण है। अल्पतरपदका अन्तरकाल नहीं है। बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

§ ५७३. भाव सर्वत्र औदयिक भाव है।

❀ अप्पाबहुअं ।

§ ५७४. एत्तो भुजगारादिसंकामयाणमप्पाबहुअं भणिस्सामो त्ति वुत्तं होइ । तस्स दुविहो णिद्देसो—ओघादेसभेदेण । तत्थोघणिद्देसकरणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो ।

❀ सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स अवट्ठिदसंकामया ।

§ ५७५. मिच्छत्तस्सावट्ठिदसंकामया णाम पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो सम्मत्तपडिवण्णपढमावलियवट्टमाणा उक्कस्सेण संखेज्जसमयसंचिदा ते सव्वत्थोवा; उवरि भणिस्समाणासेसपदेहिंतो थोवयरा त्ति वुत्तं होइ ।

❀ अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५७६. कथं संखेज्जसमयसंचयादो पुव्विल्लादो एयसमयसंचिदो अवत्तव्वसंकामयरासी असंखेज्जगुणो होइ त्ति णेहासंकणिज्जं, कुदो ? सम्मत्तं पडिवज्जमाणजीवाणमसंखेज्जदिभागस्सेवावट्ठिदभावेण परिणामब्भुवगमादो । कुदो ? एवमवट्ठिदपरिणामस्स सुट्ठु दुल्लहत्तादो ।

❀ भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५७७. किं कारणं ? अंतोमुहुत्तमेत्तकालसंचिदत्तादो ।

* अल्पबहुत्वका अधिकार है ।

§ ५७४. आगे भुजगार आदि पदोंके संक्रामकोंके अल्पबहुत्वको बतलाते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उसका निर्देश दो प्रकारका है—ओघ और आदेश । उनमें से ओघका निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्र प्रबन्ध है—

* मिथ्यात्वके अवस्थित संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं ।

§ ५७५. जिन्होंने पहले सम्यक्त्वको उत्पन्न किया है ऐसे जो जीव मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको प्राप्त कर उसकी प्रथमावलिमें विद्यमान हैं और जो उत्कृष्ट रूपसे संख्यात समयोंमें सञ्चित हुए हैं वे मिथ्यात्वके अवस्थित संक्रामक जीव हैं । वे सबसे स्तोक हैं । आगे कहे जानेवाले पदोंसे स्तोकतर हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* उनसे अवक्तव्य संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५७६. **शंका**—संख्यात समयमें सञ्चित हुई पूर्वकी राशिसे एक समयमें सञ्चित हुई अवक्तव्य संक्रामक राशि असंख्यातगुणी कैसे हो सकती है ?

समाधान—ऐसी यहाँ आशंका नहीं करनी चाहिए; क्योंकि सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवोंके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंका ही अवस्थितरूपसे परिणाम स्वीकार किया गया है । कारण कि इस प्रकार अवस्थित परिणाम अत्यन्त दुर्लभ है ।

* उनसे भुजगार संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५७७. क्योंकि अन्तर्मुहूर्तकालमें इनका सञ्चय होता है ।

❀ अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५७८. कुदो ? छावट्ठिसागरोवममेत्तवेदयसम्मत्तकालब्भंतरसंचयावलंबणादो ।

❀ सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया ।

§ ५७९. कुदो ? एयसमयसंचयावलंबणादो ।

❀ भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५८०. कुदो ? अंतोमुहुत्तसंचिदत्तादो ।

❀ अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५८१. कुदो ? सम्मामिच्छत्तस्स उव्वेल्लमाणमिच्छाइट्ठीहिं सह छावट्ठिसागरोवमकालब्भंतरसंचिदवेदयसम्माइट्ठिरासिस्स सम्मत्तस्स वि पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तुव्वेल्लणकालब्भंतरसंकलिदरासिस्स गहणादो ।

❀ सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया ।

§ ५८२. कुदो ? अणंताणुबंधीणं विसंजोयणापुव्वसंजोगे वट्टमाणाणमेयसमयसंचिदं पलिदो० असंखे०भागमेत्तजीवाणं सेसाणं च सव्वोवसामणापडिवादपढमसमए पयट्टमाणसंखेज्जोवसामयजीवाणं गहणादो ।

❀ अवट्ठिदसंकामया अणंतगुणा ।

---

* उनसे अल्पतर संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५७८. क्योंकि छयासठ सागरप्रमाण वेदकसम्यक्त्वके कालके भीतर हुए सञ्चयका यहाँ अवलम्बन लिया गया है ।

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं ।

§ ५७९. क्योंकि यहाँ पर एक समयके सञ्चयका अवलम्बन लिया गया है ।

* उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५८०. क्योंकि इनका सञ्चय अन्तर्मुहूर्तमें होता है ।

* उनसे अल्पतर संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५८१. क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्वको उद्वेलना करनेवाली राशिके साथ छयासठ सागर कालके भीतर सञ्चित हुई वेदकसम्यग्दृष्टि राशिको तथा सम्यक्त्वकी अपेक्षासे पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके भीतर सञ्चित हुई राशिको यहाँ पर ग्रहण किया है ।

* सोलह कषाय, भय और जुगुप्साके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं ।

§ ५८२. क्योंकि अनन्तानुबन्धियोंकी अपेक्षा विसंयोजनापूर्वक संयोगमें विद्यमान एक समयमें सञ्चित हुए पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण जीवोंको तथा शेष कर्मोंकी अपेक्षा सर्वोपशामनासे गिरनेके प्रथम समयमें विद्यमान संख्यात उपशामक जीवोंको यहाँ पर ग्रहण किया है ।

* उनसे अवस्थित संक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं ।

§ ५८३. कुदो ? संखेज्जसमयसंचिदेइंदियरासिस्स पहाणीभावेणेत्थ विवक्खिय-त्तादो ।

❀ अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा ।

§ ५८४. किं कारणं ? पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तप्पयरकालसंचयावलंबणादो ।

❀ भुजगारसंकामया संखेज्जगुणा ।

§ ५८५. कुदो ? धुवबंधीणमप्पयरकालादो भुजगारकालस्स संखेज्जगुणत्तोवएसादो ।

❀ इत्थिवेदहस्सरदीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया ।

§ ५८६. संखेज्जोवसामयजीवविसयत्तेण पयदावत्तव्वसंकामयाणं थोवभावसिद्धीए विरोहाभावादो ।

❀ भुजगारसंकामया अणंतगुणा ।

§ ५८७. कुदो ? अंतोमुहुत्तमेत्तसगबंधकालसंचिदेइंदियरासिस्स गहणादो ।

❀ अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा ।

§ ५८८. कुदो ? सगबंधकालादो संखेज्जगुणपडिवक्खबंधगद्धाए संचिदरासिस्स गहणादो ।

---

§ ५८३. क्योंकि संख्यात समयके भीतर सञ्चित हुई एकेन्द्रिय जीव राशिप्रधानरूपसे यहाँ पर विवक्षित है ।

* उनसे अल्पतर संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं ।

§ ५८४. क्योंकि पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अल्पतर कालके भीतर हुए सञ्चयका यहाँ पर अवलम्बन लिया गया है ।

* उनसे भुजगारसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ५८५. क्योंकि ध्रुवबन्धी प्रकृतियोंके अल्पतर कालसे भुजगारकालके संख्यातगुणे होनेका उपदेश है ।

* स्त्रीवेद, हास्य और रतिके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं ।

§ ५८६. क्योंकि संख्यात उपशामक जीवोंके सम्बन्धसे प्रकृत अवक्तव्यसंक्रामक जीवोंके स्तोकपनेके सिद्ध होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

* उनसे भुजगारसंक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं ।

§ ५८७. क्योंकि अन्तर्मुहूर्तप्रमाण अपने बन्धकालके भीतर सञ्चित हुई एकेन्द्रिय जीव राशिको यहाँ पर ग्रहण किया है ।

* उनसे अल्पतर संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं ।

§ ५८८. क्योंकि अपने बन्धकालसे संख्यातगुणे प्रतिपक्ष बन्धक कालके भीतर सञ्चित हुई जीवराशिको यहाँ पर ग्रहण किया है ।

❀ पुरिसवेदस्स सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया।

§ ५८९. सुगमं।

❀ अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा।

§ ५९०. कुदो ? पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तसम्माइट्ठिजीवाणं पुरिसवेदावट्ठिदसंकमपज्जाएण परिणदाणमुवलंभादो।

❀ भुजगारसंकामया अणंतगुणा।

§ ५९१. सगबंधकालब्भंतरसंचिदेइंदियरासिस्स गहणादो।

❀ अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा।

§ ५९२. पडिवक्खबंधगद्धागुणगारस्स तप्पमाणत्तोवलंभादो।

❀ णवुंसयवेद-अरइ-सोगाणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया।

§ ५९३. संखेज्जोवसामयजीवविसयत्तादो।

❀ अप्पयरसंकामया अणंतगुणा।

§ ५९४. किं कारणं ? अंतोमुहुत्तमेत्तपडिवक्खबंधगद्धासंचिदेइंदियरासिस्स समवलंबणादो।

❀ भुजगारसंकामया संखेज्जगुणा।

---

* पुरुषवेदके अवक्तव्य संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं।

§ ५८९. यह सूत्र सुगम है।

* उनसे अवस्थित संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं।

§ ५९०. क्योंकि पुरुषवेदकी अवस्थित संक्रामक पर्यायरूपसे परिणत ऐसे पल्यके असंख्यातवे भागप्रमाण सम्यग्दृष्टि जीव उपलब्ध होते हैं।

* उनसे भुजगार संक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं।

§ ५९१. क्योंकि अपने बन्धकालके भीतर सञ्चित हुई एकेन्द्रिय जीवराशिको यहाँ पर ग्रहण किया है।

* उनसे अल्पतर संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ५९२. क्योंकि प्रतिपक्ष बन्धककालका गुणकार तत्प्रमाण उपलब्ध होता है।

* नपुंसकवेद, अरति और शोकके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं।

§ ५९३. क्योंकि संख्यात उपशामक जीव इस पदके विषय हैं।

* उनसे अल्पतर संक्रामक जीव अनन्तगुणे हैं।

§ ५९४. क्योंकि अन्तर्मुहूर्त प्रमाण प्रतिपक्षबन्धक कालके भीतर सञ्चित हुई एकेन्द्रिय जीवराशिका यहाँ पर अवलम्बन लिया है।

* उनसे भुजगार संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं।

§ ५९५. कुदो ? एदेसिं कम्माणं पडिवक्खबंधगद्धादो सगबंधकालस्स संखेज्ज-गुणत्तोवलंभादो ।

एवमोघप्पाबहुअं समत्तं ।

§ ५९६. आदेसेण णेरइयदंसणतियमोघं । अणंताणु०४ सव्वत्थोवा अवत्त०-संका० । अवट्ठि०संका० असंखेज्जगुणा । अप्प०संका० असंखे०गुणा । भुज०संका० संखे०गुणा । एवं बारसक०-भय-दुगुंछा० । णवरि अवत्त० णत्थि । पुरिसवे० सव्व-त्थोवा अवट्ठि०संका० । भुज०संका० असंखे०गुणा । अप्प०संका० संखे०गुणा । एवमित्थीवेद-हस्स-रदि० । णवरि अवट्ठि०संका० णत्थि । णवुंस०-अरदि-सोग० सव्वत्थोवा अप्प०संका० । भुज०संका० संखे०गुणा । एवं सव्वणेरइय-पंचिंदिय-तिरिक्खतिय-देवगइदेवा भवणादि जाव सहस्सार त्ति । पंचि०तिरिक्खअपज्ज०-मणुस-अपज्ज० णारयभंगो । णवरि सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ अवत्त० पुरिसवे० अवट्ठि० णत्थि । मिच्छत्तस्स असंकामया । तिरिक्खाणमोघं । णवरि बारसक०-णवणोक० अवत्त० णत्थि ।

§ ५९७. मणुसेसु मिच्छ० सव्वत्थोवा अवट्ठि०संका० । अवत्त०संका० संखे०-

---

§ ५९५. क्योंकि इन कर्मोका प्रतिपक्ष बन्धककालसे अपना बन्धककाल संख्यात गुणा उपलब्ध होता है ।

इस प्रकार ओघ अल्पबहुत्व समाप्त हुआ ।

§ ५९६. आदेशसे नारकियोंमें दर्शनमोहनीयत्रिकका भङ्ग ओघके समान है । अनन्तानु-बन्धियोंके अवक्तव्य संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अवस्थित संक्रामक जीव असंख्यात गुणे हैं । उनसे अल्पतर संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे भुजगार संक्रामक जीव संख्यात गुणे हैं । इसी प्रकार बारह कषाय, भय और जुगुप्साकी अपेक्षासे जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनका अवक्तव्यपद नहीं है । पुरुषवेदके अवस्थित संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे भुजगार संक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं । उनसे अल्पतर संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार स्त्रीवेद, हास्य और रतिकी अपेक्षासे जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इनके अव-स्थित संक्रामक जीव नहीं हैं । नपुंसकवेद, अरति और शोकके अल्पतर संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे भुजगारसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । इसी प्रकार सब नारकी, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्चत्रिक, देवगतिमें देव और भवनवासियोंसे लेकर सहस्रार कल्पतकके देवोंमें जानना चाहिए । पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तक जीवोंमें नारकियोंके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि इनमें सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका अवक्तव्य पद तथा पुरुषवेदका अवस्थितपद नहीं है । तथा ये मिथ्यात्वके असंक्रामक होते हैं । सामान्य तिर्यञ्चोंमें ओघके समान भङ्ग है । इतनी विशेषता है कि बारह कषाय और नौ नोकषायोंका अवक्तव्यपद नहीं है ।

§ ५९७. मनुष्योंमें मिथ्यात्वके अवस्थित संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं । उनसे अवक्तव्य संक्रामकजीव संख्यातगुणे हैं । उनसे भुजगार संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं । उनसे अल्पतर संक्रामक-

गुणा। भुज० संका० संखे०गुणा। अप्प०संका० संखे०गुणा। सम्म०-सम्मामि०-अणंताणु०४ णारयभंगो। बारसक०-भय-दुगुंछा० अणंताणु०४भंगो। पुरिसवेद० सव्वत्थोवा अवत्त०संका०। अवट्ठि०संका० संखे०गुणा। भुज०संका० असंखे०-गुणा। अप्प०संका० संखे०गुणा। इत्थिवेद-हस्स-रदि० सव्वत्थोवा अवत्त०संका०। भुज०संका० असंखे०गुणा। अप्प०संका० संखे०गुणा। णवुंसयवेद-अरदि-सोग० सव्वत्थोवा अवत्त०संका०। अप्प०संका० असंखे०गुणा। भुज०संका० संखे०गुणा। एवं मणुसपज्ज०-मणुसिणी०। णवरि संखे०गुणं कायव्वं।

§ ५९८. आणदादि जाव णवगेवज्जा त्ति मिच्छ०-सम्म०-सम्मामि०-बारसक०-इत्थिवे०-छण्णोक० देवोघं। अणंताणु०४ सव्वत्थोवा अवत्त०संका०। अवट्ठि०संका० असंखे०गुणा। भुज०संका० असंखे०गुणा। अप्प०संका० संखे०गुणा। पुरिसवेद० अपच्चक्खाणभंगो। णवुंस० इत्थीवेदभंगो। अणुदिसादि सव्वट्ठा त्ति मिच्छ०-सम्मामि०-इत्थिवे०-णवुंस० णत्थि अप्पाबहुअं। अणंताणु०४ सव्वत्थोवा भुज०संका०। अप्प०-संका० असंखे०गुणा। बारसक०-पुरिसवेद-छण्णोक० आणदभंगो। णवरि सव्वट्ठे संखेज्जं कायव्वं। एवं जाव०।

एवमप्पाबहुगे समत्ते भुजगारो समत्तो।

जीव संख्यातगुणे हैं। सम्यक्त्व सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबन्धीचतुष्कका भङ्ग नारकियोंके समान है। बारह कषाय, भय और जुगुप्साका भङ्ग अनन्तानुबन्धीचतुष्कके समान है। पुरुषवेदके अवक्तव्य-संक्रामकजीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतर संक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं। स्त्रीवेद, हास्य और रतिके अवक्तव्य संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं। नपुंसकवेद, अरति और शोकके अवक्तव्यसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे भुजगारसंक्रामक जीव संख्यातगुणे हैं। इसी प्रकार मनुष्यपर्याप्त और मनुष्यिनियोंमें जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इनमें संख्यातगुणा करना चाहिए।

§ ५९८. आनत कल्पसे लेकर नौ ग्रैवेयक तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, बारह कषाय, स्त्रीवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग सामान्य देवोंके समान है। अनन्तानुबन्धी-चतुष्कके अवक्तव्य संक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अवस्थितसंक्रामक जीव असंख्यात-गुणे हैं। उनसे भुजगारसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव संख्यात-गुणे हैं। पुरुषवेदका भङ्ग अप्रत्याख्यानावरणके समान है। नपुंसकवेदका भङ्ग स्त्रीवेदके समान है। अनुदिशासे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद और नपुंसकवेदका अल्पबहुत्व नहीं है। अनन्तानुबन्धीचतुष्कके भुजगारसंक्रामक जीव सबसे स्तोक हैं। उनसे अल्पतरसंक्रामक जीव असंख्यातगुणे हैं। बारह कषाय, पुरुषवेद और छह नोकषायोंका भङ्ग आनतकल्पके समान है। इतनी विशेषता है कि सर्वार्थसिद्धिमें संख्यातगुणा करना चाहिए। इसी प्रकार अनाहारक मार्गणा तक जानना चाहिए।

इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होने पर भुजगार समाप्त हुआ।

❀ एत्तो पदणिक्खेवो ।

§ ५९९. एत्तो भुजगारपरिसमत्तीदो अणंतरं पदणिक्खेवो अहिकओ त्ति दट्ठव्वो । को पदणिक्खेवो णाम ? पदाणं णिक्खेवो पदणिक्खेवो । जहण्णुक्कस्सवड्ढि-हाणि-अवट्ठाण-पदाण सामित्तादिणिद्देसमुहेण णिच्छयकरणं पदणिक्खेवो त्ति भण्णदे । एवमहियार-संभालणं कादूण संपहि तव्विसयाणमणियोगद्दाराणमियत्तावहारणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि ।

§ ६००. तत्थ पदणिक्खेवे इमाणि भणिस्समाणाणि तिण्णि अणिओगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति, अणियोगद्दारणियमेण विणा सव्वेसिं अत्थाहियाराणं परूवणा-णुववत्तीदो । काणि ताणि तिण्णि अणिओगद्दाराणि त्ति पुच्छिदे तेसिं णामणिद्देसो कीरदे—

❀ तं जहा ।

§ ६०१. सुगमं ।

❀ परूवणासामित्तमप्पाबहुगं च ।

§ ६०२. एवमेदाणि तिण्णि चेवाणिओगद्दाराणि पयदत्थपरूवणाए संभवंति । तत्थ ताव परूवणं भणिस्सामो त्ति जाणावणट्ठमुवरिमसुत्तणिद्देसो—

---

* आगे पदनिक्षेपका अधिकार है ।

§ ५९९. 'एत्तो' अर्थात् भुजगारकी समाप्तिके बाद पदनिक्षेपका अधिकार है ऐसा यहाँ जानना चाहिए ।

शंका—पदनिक्षेप किसे कहते हैं ?

समाधान—पदोंके निक्षेपको पदनिक्षेप कहते हैं । जघन्य और उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानरूप पदोंका स्वामित्व आदिके निर्देश द्वारा निश्चय करना पदनिक्षेप कहा जाता है ।

इस प्रकार अधिकारकी सम्हाल करके अब तद्विषयक अनुयोगद्वारोंकी इयत्ताका निश्चय करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* उसमें ये तीन अनुयोगद्वार होते हैं ।

§ ६००. उस पदनिक्षेपमें ये आगे कहे जानेवाले तीन अनुयोगद्वार ज्ञातव्य हैं, क्योंकि अनुयोगद्वारोंका नियम किये बिना सब अर्थाधिकारोंकी प्ररूपणा नहीं बन सकती । वे तीन अनुयोग-द्वार कौन हैं ऐसा पूछने पर उनका नामनिर्देश करते हैं—

* यथा ।

§ ६०१. यह सूत्र सुगम है ।

* प्ररूपणा, स्वामित्व और अल्पबहुत्व ।

§ ६०२. इस प्रकार प्रकृत अर्थकी प्ररूपणामें ये तीन अनुयोगद्वार ही सम्भव हैं । उनमेंसे सर्व प्रथम प्ररूपणाका कथन करते हैं इस बातका ज्ञान करानेके लिए आगेके सूत्रका निर्देश करते हैं—

❀ परूवणा ।

§ ६०३. सुगममेदमहियारपरामरसवक्कं । सा वुण दुविहा परूवणा जहण्णुक्कस्स-पदविसयभेदेण । तासिं जहाकममोघणिद्देसो ताव कीरदे—

❀ सव्वासिं पयडीणमुक्कस्सिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च अत्थि ।

§ ६०४. कुदो ? सव्वेसिमेव कम्माणं जहाणिद्दिट्ठविसए सव्वुक्कस्सवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणसरूवेण पदेससंकमपवुत्तीए बाहाणुवलंभादो ।

❀ एवं जहण्णयस्स वि णेदव्वं ।

§ ६०५. तं जहा—सव्वेसिं कम्माणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च अत्थि । कुदो ? सव्वजहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणसरूवेण संकमपवुत्तीए सव्वत्थ पडिसेहाभावादो । एवं सामण्णेण जहण्णुक्कस्सवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणमत्थित्तं पदुप्पाइय संपहि जेसिमवट्ठाण-संभवो णत्थि तेसिं पुध णिद्देसो कीरदे—

❀ णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-इत्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमवट्ठाणं णत्थि ।

§ ६०६. कुदो ? सव्वकालमेदेसिं कम्माणमागमणिज्जराणं सरिसत्ताभावादो । एवमोघपरूवणा गया । जहासंभवमेत्थादेसपरूवणा वि कायव्वा । तदो परूवणा समत्ता ।

---

* प्ररूपणाका अधिकार है ।

§ ६०३. अधिकारका परामर्श करनेवाला यह सूत्रवचन सुगम है । जघन्य पदविषयक प्ररूपणा और उत्कृष्ट पदविषयक प्ररूपणाके भेदसे वह प्ररूपणा दो प्रकारकी है । उनका यथाक्रमसे ओघनिर्देश करते हैं—

* सब प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान है ।

§ ६०४ क्योंकि सभी कर्मोंके यथानिर्दिष्ट विषयमें सर्वोत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थान रूपसे प्रदेशसंक्रमकी प्रवृत्तिमें बाधा नहीं उपलब्ध होती ।

* इसी प्रकार जघन्यका भी कथन जानना चाहिए ।

§ ६०५. यथा—सभी कर्मोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान है, क्योंकि सबसे जघन्य वृद्धि हानि और अवस्थानरूपसे संक्रमकी प्रवृत्ति होनेमें सर्वत्र प्रतिषेधका अभाव है । इस प्रकार सामान्यसे जघन्य और उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानके अस्तित्वका कथन कर अब जिनका अवस्थान सम्भव नहीं है उनका अलगसे निर्देश करते हैं—

* किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यक्त्व, सम्यग्मिथ्यात्व, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोकका अवस्थान नहीं है ।

§ ६०६. क्योंकि इन कर्मोंकी सदा काल आगमन और निर्जरामें सदृशता नहीं उपलब्ध होती । इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई । यहाँ पर यथासम्भव आदेश प्ररूपणा भी करनी चाहिए । इसके बाद प्ररूपणा समाप्त हुई ।

❀ सामित्तं ।

§ ६०७. एत्तो उवरि सामित्तमहियरं त्ति दट्ठव्वं । तं पुण सामित्तं दुविहं—जहण्णय-मुक्कस्सयं च । तत्थुक्कस्से ताव पयदं । तत्थ दुविहो णिद्देसो ओघादेसभेएण । तत्थोघ-परूवणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो ।

❀ मिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ?

§ ६०८. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स मिच्छत्तक्खवयस्स सव्वसंकामयस्स ।

§ ६०९. जो गुणिदकम्मंसियो सत्तमाए पुढवीए णेरइयो तत्तो उव्वट्टिदूण सव्व-लहुं समयाविरोहेण मणुसेसुप्पज्जिय गब्भादिअट्ठवस्साणि गमिय तदो दंसणमोह-क्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स अणियट्टिअद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु मिच्छत्तचरिमफालिं सव्वसंकमेण संछुहमाणयस्स पयदुक्कस्ससामित्तं होइ । तत्थ किंचूणदिवड्ढगुणहाणिमेत्त-समयपबद्धाणमुक्कस्सवड्ढिसरूवेण संकमदंसणादो ।

❀ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

§ ६१०. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स सम्मत्तमुप्पाएदूण गुणसंकमेण संकामिदूण

---

* स्वामित्वका अधिकार है ।

§ ६०७. इससे आगे स्वामित्वका अधिकार है ऐसा, जानना चाहिए। वह स्वामित्व दो प्रकारका है—जघन्य और उत्कृष्ट । उनमेंसे सर्व प्रथम उत्कृष्टका प्रकरण है । उसके विषयमें ओघ और आदेशसे निर्देश दो प्रकारका है । उनमेंसे ओघका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध है—

* मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?

§ ६०८. यह सूत्र सुगम है ।

* जो गुणितकर्मांशिक मिथ्यात्वका क्षपक जीव सर्वसंक्रम कर रहा है उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है ।

§ ६०९. जो गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीका नारकी जीव वहाँसे निकलकर अतिशीघ्र समयके अविरोध पूर्वक मनुष्योंमें उत्पन्न होकर और गर्भसे लेकर आठ वर्ष बिताकर अनन्तर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ उसके अनिवृत्तिकरणके कालके संख्यात बहुभाग व्यतीत होनेपर मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रमके द्वारा संक्रम करते हुए प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है, क्योंकि वहाँ पर कुछ कम डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबन्धोंका उत्कृष्ट वृद्धि रूपसे संक्रम देखा जाता है ।

* उत्कृष्ट हानि किसके होती है ?

§ ६१०. यह सूत्र सुगम है ।

* जो गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्वको उत्पन्न कर गुणसंक्रमके द्वारा संक्रम

पढमसमयविज्झादसंकामयस्स ।

§ ६११. जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमाए पुढवीए णेरइयो अंतोमुहुत्तेण कम्ममुक्कस्सं काहिदि त्ति विवरीयभावमुवगंतूण सम्मत्तुप्पायणाए वावदो तस्स सव्वुक्कस्सेण गुणसंकमेण मिच्छत्तं संकामेमाणयस्स चरिमसमयगुणसंकमादो पढमसमयविज्झादसंकमे पदिदस्स पयदुक्कस्ससामित्तं होइ । तत्थ किंचूणचरिमगुणसंकमदव्वस्स हाणिसरूवेण संभवदंसणादो ।

❀ उक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स ?

§ ६१२. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसिओ पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो सम्मत्तं गदो, तं दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति एत्थ अण्णदरम्हि समये तप्पाओग्गउक्कस्सेण वड्ढिं कादूण से काले तत्तियं संकममाणयस्स तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं ।

§ ६१३. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे—जो गुणिदकम्मंसिओ सम्मत्तमुप्पाइय सव्वलहुं मिच्छत्तं गदो । तत्तो पडिणियत्तिय तप्पाओग्गेण कालेण पुणो वेदयसम्मत्तं पडिवण्णो । तं दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति एत्थंतरे समया-

---

करके प्रथम समयमें विध्यात संक्रम करता है उसके मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि होती है ।

§ ६११. जो गुणितकर्मांशिक सातवीं पृथिवीका नारकी जीव अन्तर्मुहूर्तके द्वारा कर्मको उत्कृष्ट करेगा, किन्तु विपरीत भावको प्राप्त होकर सम्यक्त्वके उत्पन्न करनेमें व्यापृत हुआ उसके सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रमके द्वारा मिथ्यात्वका संक्रम करते हुए अन्तिम समयवर्ती गुणसंक्रमसे प्रथम समयवर्ती विध्यातसंक्रममें पतित होनेपर प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है, क्योंकि वहाँ पर कुछ कम अन्तिम गुणसंक्रम द्रव्यकी हानिरूपसे सम्भावना देखी जाती है ।

* उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है ?

§ ६१२. यह सूत्र सुगम है ।

* जो पहले उत्पन्न हुए सम्यक्त्वके साथ रहा है ऐसा जो गुणितकर्मांशिक जीव मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, उस सम्यग्दृष्टिके सम्यक्त्व उत्पन्न होनेके द्वितीय समयसे लेकर एक आवलि कालके भीतर किसी एक समयमें तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट वृद्धि करके तदनन्तर समयमें उतना ही संक्रम करने पर उत्कृष्ट अवस्थान होता है ।

§ ६१३. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—जो गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्वको उत्पन्न करके अतिशीघ्र मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ । फिर उससे निवृत्त होकर तत्प्रायोग्य कालके द्वारा पुनः वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । उस द्वितीय समयवर्ती सम्यग्दृष्टिसे लेकर एक आवलि प्रविष्ट सम्यग्दृष्टि होने तक इस कालके मध्य समयके अविरोध पूर्वक वृद्धिको करके तृतीय आदि किसी

विरोहेण वड्ढिं कादूण तदियादीणमण्णदरम्हि समए वट्टमाणस्स पयदसामित्तसंबंधो दट्ठव्वो। तं जहा—तहा सम्मत्तं पडिवण्णस्स पढमसमए अवत्तव्वसंकमो होइ। पुणो विदिय-समए तप्पाओग्गुक्कस्सएण संकमपज्जाएण वड्ढिदस्स वड्ढिसंकमो जायदे। एसो च वड्ढिसंकमो समयपबद्धस्सासंखेज्जदिभागमेत्तो। एवमेदेण तप्पाओग्गुक्कस्सेणासंखेज्जदिभागेण वड्ढिदूण से काले आगमणिज्जराणं सरिसत्तवसेण तत्तियं चेव संकामेमाणयस्स तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं होदि। एवं तदियादिसमएसु वि तप्पाओग्गुक्कस्सेण संकमपज्जाएण वड्ढिदूण तदणंतरसमए तत्तियं चेव संकामेमाणयस्स पयदसामित्तमविरुद्धं णेदव्वं जाव दुचरिमसमए तप्पाओग्गुक्कस्ससंकमवुड्ढीए वड्ढिं कादूण[1] चरिमसमए उक्कस्सावट्ठाणपज्जाएण परिणदावलियसम्माइट्ठि त्ति एत्तियो चेवुक्कस्सावट्ठाणसामित्तविसए। एत्थ पढमसमयो-वत्तव्वसंकमादो विदियसमयम्मि तत्तियं चेव संकामेमाणयस्स पयदुक्कस्सावट्ठाणसामित्तं किण्ण गहिदं? ण, वड्ढि-हाणीणमण्णदरणिबंधणस्स संकमावट्ठाणस्सेह विवक्खियत्तादो।

*** सम्मत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स?**

§ ६१४. सुगमं।

*** उव्वेल्लमाणयस्स चरिमसमए।**

§ ६१५. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तमुप्पाइय सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए

एक समयमें विद्यमान रहते हुए उसके प्रकृत स्वामित्वका सम्बन्ध जानना चाहिए। यथा—इस प्रकार सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाले जीवके प्रथम समयमें अवक्तव्य संक्रम होता है। पुनः दूसरे समयमें तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्रम पर्यायरूपसे रहते हुए उसके वृद्धि संक्रम उत्पन्न होता है। यह वृद्धि संक्रम समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। इस प्रकार इस तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट असंख्यातवें भागरूपसे वृद्धि होकर अनन्तर समयमें आय और निर्जराकी समानताके कारण उतने ही द्रव्यका संक्रम करनेवाले उस जीवके उत्कृष्ट अवस्थान होता है। इसी प्रकार तृतीय आदि समयोंमें भी तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्रम पर्यायसे वृद्धि करके तदनन्तर समयमें उतना ही संक्रम करनेवाले उसके प्रकृत स्वामित्व अविरुद्धरूपसे जानना चाहिए। जो कि द्विचरम समयमें तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट संक्रम वृद्धिके द्वारा वृद्धि करके अन्तिम समयमें उत्कृष्ट अवस्थान पर्यायरूपसे परिणत हुए आवलि प्रविष्ट सम्यग्दृष्टि जीवके होने तक इतना ही उत्कृष्ट अवस्थानके विषयमें सम्भव है।

शंका—यहाँ प्रथम समयमें हुए अवक्तव्य संक्रमसे दूसरे समयमें उतना ही संक्रम करने वाले जीवके प्रकृत उत्कृष्ट अवस्थान संक्रम क्यों नहीं ग्रहण किया?

समाधान—नहीं, क्योंकि वृद्धि और हानि इनमेंसे किसी एकका अवलम्बन लेकर हुआ संक्रम अवस्थान यहाँ पर विवक्षित है।

*** सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है?**

§ ६१४. यह सूत्र सुगम है।

*** उद्वेलना करनेवाले जीवके अन्तिम समयमें सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है।**

§ ६१५. गुणितकर्मांशिक लक्षणसे आकर और सम्यक्त्वको उत्पन्न कर तथा सर्वोत्कृष्ट

---

[1] ता० प्रतौ वड्ढिदूण इति पाठः।

सम्मत्तमावूरिय तदो मिच्छत्तं पडिवज्जिय सव्वरहस्सेणुव्वेल्लणकालेणुव्वेल्लमाणयस्स चरिमट्ठिदिखंडयचरिमसमए पयदुकस्ससामित्तं होइ। तत्थ किंचूणसव्वसंकमदव्वमेत्तस्स उक्कस्सवड्ढिसरूवेणुवलद्धीदो।

❀ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

§ ६१६. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसियो सम्मत्तमुप्पाएदूण लहुं मिच्छत्तं गओ तस्स मिच्छाइट्ठिस्स पढमसमए अवत्तव्वसंकमो विदियसमये उक्कस्सिया हाणी।

§ ६१७. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे—जो गुणिदकम्मंसियो अंतोमुहुत्तेण कम्मं गुणेहदि त्ति विवरीयं गंतूण सम्मत्तमुप्पाइय सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए सम्मत्तमावूरिय तदो सव्वलहुं मिच्छत्तं गदो तस्स विदियसमयमिच्छाइट्ठिस्स उक्कस्सिया सम्मत्तपदेससंकमहाणी होइ। कुदो ? तत्थ पढमसमय-अधापवत्तसंकमादो अवत्तव्वसरूवादो विदियसमए हीयमाणसंकमदव्वस्स उवरिमासेसहाणिदव्वं पेक्खिऊण बहुत्तोवलंभादो। एत्थ चोदओ भणइ—णेदमुक्कस्सहाणिसामित्तं घडदे, एत्तो अण्णस्स हाणिदव्वस्स बहुत्तोवलंभादो। तं जहा—गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तमुप्पाइय मिच्छत्तं गंतूणंतोमुहुत्तमधापवत्तसंकमं कादूण तदो उव्वेल्लणसंकमेण परिणदस्स पढमसमए उक्कस्सिया हाणी कायव्वा, पुव्विल्ल-

---

पूरणाके द्वारा सम्यक्त्वको पूर कर अनन्तर मिथ्यात्वमें जाकर सबसे लघु उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करनेवाले जीवके अन्तिम स्थितिकाण्डकके अन्तिम समयमें प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है, क्योंकि वहाँ पर कुछ कम सर्वसंक्रम प्रमाण द्रव्यकी उत्कृष्ट वृद्धिरूपसे उपलब्धि होती है।

*** इसकी उत्कृष्ट हानि किसके होती है ?**

§ ६१६. यह सूत्र सुगम है।

*** जो गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्वको उत्पन्न कर अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें गया उस मिथ्यादृष्टि जीवके प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रम होता है और दूसरे समयमें उत्कृष्ट हानि होती है।**

§ ६१७. इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—जो गुणितकर्मांशिक जीव अन्तमुहूर्तके द्वारा कर्मको गुणित करेगा; किन्तु विपरीत जाकर और सम्यक्त्वको उत्पन्न कर सर्वोत्कृष्ट पूरणाके द्वारा सम्यक्त्वको पूरकर अनन्तर अतिशीघ्र मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ उस द्वितीय समयवर्ती मिथ्यादृष्टि जीवके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम हानि होती है, क्योंकि वहाँ पर प्रथम समयमें होनेवाले अवक्तव्यरूप अधःप्रवृत्त संक्रमसे दूसरे समयमें हीयमान संक्रम द्रव्य उपरिम समस्त हानिरूप द्रव्यको देखते हुए बहुत उपलब्ध होता है।

शंका—यहाँ पर शंकाकार कहता है कि यह उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व घटित नहीं होता, क्योंकि इससे अन्य हानि द्रव्य बहुत उपलब्ध होता है। यथा—गुणित कर्मांशिक लक्षणसे आकर और सम्यक्त्वको उत्पन्न कर मिथ्यात्वमें जाकर अन्तमुहूर्त काल तक अधःप्रवृत्त संक्रम कर तदनन्तर उद्वेलना संक्रमरूपसे परिणत हुए उसके प्रथम समयमें उत्कृष्ट हानि करनी चाहिए,

हाणिदव्वादो एत्थतणहाणिदव्वस्सासंखेज्जगुणत्तदंसणादो। तदो पुव्विल्लविसयं मोत्तूणेत्थेव सामित्तेण होदव्वमिदि ? ण एस दोसो, परिणामविसेसमस्सिऊण पयट्टमाणस्स संकमस्स बिदियसमयं मोत्तूण उवरि अणंतगुणसंकिलेसविसए बहुत्तविरोहादो। कुदो एदं णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो।

❀ सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्डी कस्स ?

§ ६१८. सुगममेदं पुच्छावक्कं।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स।

§ ६१९. एदस्स सुत्तस्स अत्थपरूवणाए मिच्छत्तभंगो।

❀ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

§ ६२०. सुगमं।

❀ उप्पादिदे सम्मत्ते सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्ते जं संकामेदि तं पदेसग्गमंगुलस्सासंखेज्जभागपडिभागं। तदो उक्कस्सिया हाणी ण होदि त्ति।

§ ६२१. एदस्साहिप्पाओ उवसमसम्मत्ते समुप्पादिदे मिच्छत्तस्सेव सम्मामिच्छत्तस्स वि गुणसंकमो अत्थि चेव, उवसमसम्मत्तबिदियसमयप्पहुडि पडिसमयमसंखेज्जगुणाए

क्योंकि पूर्वोक्त हानि द्रव्यसे यहाँ पर प्राप्त हुआ हानि द्रव्य असंख्यातगुणा देखा जाता है। इसलिए पूर्वोक्त विषयको छोड़कर यहाँ पर ही स्वामित्व होना चाहिए ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि परिणामविशेषका आश्रय कर प्रवर्तमान हुए संक्रमका दूसरे समयके सिवा आगे अनन्तगुणे संक्लेशके सद्भावमें बहुत होनेका विरोध है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है।

*** सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?**

§ ६१८. यह पृच्छावाक्य सुगम है।

*** सर्वसंक्रम करनेवाले गुणितकर्मांशिक जीवके होती है।**

§ ६१९. इस सूत्रकी अर्थप्ररूपणा, जिस प्रकार मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट वृद्धिके स्वामीके प्रतिपादक सूत्रकी अर्थप्ररूपणा कर आये हैं, उसके समान है।

*** उत्कृष्ट हानि किसके होती है ?**

§ ६२०. यह सूत्र सुगम है।

*** सम्यक्त्वको उत्पन्न करने पर सम्यग्मिथ्यात्वसे सम्यक्त्वमें जो द्रव्य संक्रमित होता है वह द्रव्य अंगुलके असंख्यातवें भागरूप भागहारसे लब्ध होता है, इसलिए यहाँ पर उत्कृष्ट हानि नहीं होती है।**

§ ६२१. इस सूत्रका अभिप्राय—उपशमसम्यक्त्वके उत्पन्न करने पर मिथ्यात्वके समान सम्यग्मिथ्यात्वका गुणसंकम है ही, क्योंकि उपशम सम्यक्त्वके दूसरे समयसे लेकर प्रत्येक समयमें

सेढीए सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्तसरूवेण संकमपवुत्तीए वाहाणुवलंभादो। किंतु तहा संकममाणसम्मामिच्छत्तदव्वस्स पडिभागो अंगुलस्सासंखेज्जदिभागो। कुदो एदमवगम्मदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। एवं च संते तत्तो विज्झादसंकमे पदिदस्स उकस्सिया हाणी ण होइ, विज्झाद-गुणसंकमादो विज्झादसंकमेण परिणदम्मि सव्वुक्कस्सियाए हाणीए संभवविरोहादो। तदो एदं मोत्तूण विसयंतरे सामित्तविहाणेण होदव्वमिदि। एवं च कयणिच्छयो तण्णिद्देसकरणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** गुणिदकम्मंसिओ सम्मत्तमुप्पाएदूण लहुं चेव मिच्छत्तं गदो, जहण्णियाए मिच्छत्तद्धाए पुण्णाए सम्मत्तं पडिवण्णो, तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स उकस्सिया हाणी।**

§ ६२२. एदस्स सामित्तसुत्तस्स अत्थो वुच्चदे। तं जहा—गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तमुप्पाइय सव्वुक्कस्सगुणसंकमेण सम्मामिच्छत्तमावूरिय तदो लहुं चेव मिच्छत्तमुवगओ। किमट्ठमेसो मिच्छत्तमुवणिज्जदे ? अधापवत्तसंकमेण बहुदव्वसंकमं कादूण तत्तो सम्मत्तं पडिवण्णस्स पढमसमए विज्झादसंकमेणुकस्सहाणिसामित्तविहाणट्ठं। सेसं

असंख्यातगुणी श्रेणिरूपसे सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यमेंसे सम्यक्त्वरूपमें संक्रमकी प्रवृत्ति होने पर भी कोई बाधा नहीं उपलब्ध होती। किन्तु इस प्रकारसे संक्रमको प्राप्त होनेवाले सम्यग्मिथ्यात्वके द्रव्यका प्रतिभाग अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—इसी सूत्रसे जाना जाता है।

और ऐसा होने पर उसके बाद विध्यातसंक्रममें पतित हुए उसकी उत्कृष्ट हानि नहीं होती, क्योंकि विध्यात और गुणसंक्रमसे विध्यातसंक्रमरूपसे परिणत होने पर सर्वोत्कृष्ट हानिके सम्भव होनेमें विरोध है। इसलिए इसे छोड़कर दूसरे स्थल पर स्वामित्वका विधान होना चाहिए इस प्रकार उक्त प्रकारका निश्चय करके उसका निर्देश करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** जो गुणितकर्मांशिक जीव सम्यक्त्वको उत्पन्न कर अतिशीघ्र मिथ्यात्वमें गया। पुनः जघन्य मिथ्यात्वके कालके पूर्ण होने पर सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ, उस प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट हानि होती है।**

§ ६२२. इस स्वामित्व सूत्रका अर्थ कहते हैं। यथा—गुणितकर्मांशिकलक्षणसे आकर सम्यक्त्वको उत्पन्न कर सर्वोत्कृष्ट गुणसंक्रमके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वको पूरा कर अनन्तर अतिशीघ्र मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ।

शंका—यह मिथ्यात्वको किसलिए प्राप्त कराया जाता है ?

समाधान—अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा बहुत द्रव्यका संक्रम करके अनन्तर सम्यक्त्वको प्राप्त हुए जीवके प्रथम समयमें विध्यातसंक्रमके द्वारा उत्कृष्ट हानिके स्वामित्वका विधान करनेके लिए इसे सर्व प्रथम मिथ्यात्वको प्राप्त कराया जाता है।

सुत्ताणुसारेण वत्तव्वं। एत्थ हाणिदव्वपमाणे आणिज्जमाणे सम्माइट्ठिपढमसमयविज्झाद-संकमदव्वमधापवत्तसंकमदव्वादो सोहिदे सुद्धसेसमेत्तं होइ त्ति वत्तव्वं। तदो विज्झाद-गुणसंकमजणिदहाणिदव्वादो पयदहाणिदव्वमसंखेज्जगुणमिदि तप्परिहारेणेत्थेव सामित्त-विहाणमविरुद्धं सिद्धं। अधापवत्तसंकमादो उव्वेल्लणासंकमेण परिणदमिच्छाइट्ठिम्मि पयदुक्कस्ससामित्तावलंबणे सुट्ठु लाहो दिस्सदि त्ति णासंकणिज्जं, उव्वेल्लणाहिमुहस्स अधा-पवत्तसंकमादो एत्थतणअधापवत्तसंकमस्स परिणामपाहम्मेण बहुत्तोवलंभादो। णेदमसिद्धं, एदम्हादो चेव सामित्तसुत्तादो तस्सिद्धीए।

❀ अणंताणुबंधीणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स ?

§ ६२३. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स।

§ ६२४. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सव्वलहुं विसंजोयणाए अब्भुट्ठिदस्स चरिमफालीए सव्वसंकमेण पयदुक्कस्ससामित्तं होइ, तत्थ किंचूणकम्मट्ठिदिसंचयस्स वड्ढिसरूवेण संकंतिदंसणादो।

❀ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

§ ६२५. सुगमं।

शेष कथन सूत्रके अनुसार करना चाहिए। यहाँ पर हानिका द्रव्यप्रमाण लानेपर सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयके विध्यातसंक्रम द्रव्यको अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्रव्यमेंसे घटा देने पर जो शेष बचे उतना होता है ऐसा कहना चाहिए। इसलिए विध्यात और गुणसंक्रमसे उत्पन्न हुए हानिद्रव्यसे प्रकृत हानिद्रव्य असंख्यातगुणा होता है, इसलिए उसका परिहार करके यहीं पर स्वामित्वका विधान अविरुद्ध सिद्ध होता है। अधःप्रवृत्तसंक्रमसे उद्वेलनासंक्रमके द्वारा परिणत हुए मिथ्यादृष्टि जीवमें प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वका अवलम्बन करने पर अच्छा लाभ दिखाई देता है ऐसी आशंका भी नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उद्वेलनाके अभिमुख हुए जीवके होनेवाले अधः-प्रवृत्तसंक्रमसे यहाँ पर होनेवाला अधःप्रवृत्तसंक्रम परिणामोंके माहात्म्यवश बहुत उपलब्ध होता है। और यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि इसी स्वामित्व सूत्रसे उसकी सिद्धि होती है।

* अनन्तानुबन्धियोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?

§ ६२३. यह सूत्र सुगम है।

* सर्वसंक्रामक गुणितकर्मांशिक जीवके होती है।

§ ६२४. गुणितकर्मांशिकलक्षणसे आकर अतिशीघ्र विसंयोजना करनेमें उद्यत हुए जीवके चरम फालिका सर्वसंक्रम करनेपर प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्व होता है, क्योंकि वहाँ पर कुछ कम कर्मस्थिति सञ्चयकी वृद्धिरूपसे संक्रान्ति देखी जाती है।

* उत्कृष्ट हानि किसके होती है ?

§ ६२५. यह सूत्र सुगम है।

❀ गुणिदकम्मंसिओ तप्पाओग्गउक्कस्सियादो अधपवत्तसंकमादो सम्मत्तं पडिवज्जिऊण विज्झादसंकामगो जादो, तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स उक्कस्सिया हाणी ।

§ ६२६. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण मिच्छाइट्ठिचरिमसमए तप्पाओग्गुक्कस्सएण अधापवत्तसंकमेण परिणमिय तदणंतरसमए सम्मत्तपडिलंभवसेण विज्झादसंकामगो जादो तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स पयदुक्कस्सहाणिसामित्ताहिसंबंधो । सेसं सुगमं ।

❀ उक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स ?

§ ६२७. सुगमं ।

❀ जो अधापवत्तसंकमेण तप्पाओग्गुक्कस्सएण वड्ढिदूण अवट्ठिदो तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं ।

§ ६२८. जो गुणिदकम्मंसिओ तप्पाओग्गुक्कस्सएणाधापवत्तसंकमेण विवक्खियसमयम्मि वड्ढिऊण तदणंतरसमए तेत्तियमेत्तेणावट्ठिदो तस्स पयदसामित्ताहिसंबंधो त्ति सुत्तत्थसमुच्चयो । एत्थुक्कस्सहाणिविसयमुक्कस्सावट्ठाणं गेण्हामो, पयदवड्ढिविसयसंकमावट्ठाणादो तस्सासंखेज्जगुणत्तसमुवलंभादो ? ण एस दोसो, गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सम्मत्तमुप्पाइय उक्कस्सहाणीए परिणदस्स विदियसमए अवट्ठाणकरणोवायाभावादो । तं

* जो गुणितकर्मांशिक जीव तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्तसंक्रमसे सम्यक्त्वको प्राप्त कर विध्यातसंक्रामक हो गया उस प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टिके उत्कृष्ट हानि होती है ।

§ ६२६. क्योंकि गुणितकर्मांशिकलक्षणसे आकर मिथ्यादृष्टिके अन्तिम समयमें तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्तसंक्रमरूपसे परिणम कर तदनन्तर समयमें सम्यक्त्वको प्राप्त करनेके कारण विध्यातसंक्रामक हो गया उस प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टि जीवके प्रकृत उत्कृष्ट हानिके स्वामित्वका अभिसम्बन्ध है । शेष कथन सुगम है ।

* उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है ?

§ ६२७. यह सूत्र सुगम है ।

* जो तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा वृद्धि कर अवस्थित है उसके उत्कृष्ट अवस्थान होता है ।

§ ६२८. क्योंकि जो गुणितकर्मांशिक जीव तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा विवक्षित समयमें वृद्धि करके तदनन्तर समयमें उतने ही संक्रमरूपसे अवस्थित है उसके प्रकृत स्वामित्वका सम्बन्ध होता है यह सूत्रार्थका समुच्चय है ।

शंका—यहाँ पर उत्कृष्ट हानिविषयक उत्कृष्ट अवस्थानको ग्रहण करते हैं, क्योंकि प्रकृत वृद्धिविषयक संक्रमके अवस्थानसे वह असंख्यातगुणा उपलब्ध होता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि गुणितकर्मांशिक लक्षणसे आकर और सम्यक्त्वको उत्पन्न कर उत्कृष्ट हानिरूपसे परिणत हुए जीवके दूसरे समयमें अवस्थान करनेका कोई उपाय नहीं है।

पि कुदो ? तत्थ मिच्छाइट्ठिचरिमावलियाए पडिच्छिददव्ववसेणावलियकालब्भंतरे वड्ढिसंकमस्सेव दंसणादो।

❀ अट्ठकसायाणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स ?

§ ६२६. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स।

§ ६३० गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिय सव्वसंकमेण परिणदम्मि पयदकम्माणमुक्कस्सिया वड्ढी होइ, तत्थ सव्वसंकमेण किंचूणदिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धाणं पयदवड्ढिसरूवेण संकंतिदंसणादो।

❀ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

§ ६३१. सुगमं।

❀ गुणिदकम्मंसियो पढमदाए कसायउवसामणद्धाए जाधे दुविहस्स कोहस्स चरिमसमयसंकामगो जादो, तदो से काले मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्कस्सिया हाणी।

§ ६३२. 'दुविहस्स कोहस्स' अट्ठसु कसाएसु दुविहस्स ताव कोहस्स पयदुक्कस्सहाणिसामित्तमेदेण सुत्तेण णिद्दिट्ठं। तं जहा—गुणिदकम्मंसियो अणूणाहियगुणिदकिरियाए

शंका—यह भी कैसे ?

समाधान—क्योंकि वहाँ पर मिथ्यादृष्टि जीवकी अन्तिम आवलिमें संक्रामक हुए द्रव्यके कारण एक आवलि कालके भीतर वृद्धिका संक्रम ही देखा जाता है।

*** आठ कषायोंकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?**

§ ६२६. यह सूत्र सुगम है।

*** सर्वसंक्रामक गुणितकर्मांशिक जीवके होती है।**

§ ६३०. गुणितकर्मांशिकलक्षणसे आकर अतिशीघ्र क्षपणाके लिए उद्यत हो सर्वसंक्रमरूपसे परिणत होने पर प्रकृत कर्मोंकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है, क्योंकि वहाँ पर सर्वसंक्रमके द्वारा कुछ कम डेढ़ गुणहानिमात्र समयप्रबद्धोंका प्रकृत वृद्धिरूपसे संक्रम देखा जाता है।

*** उत्कृष्ट हानि किसके होती है ?**

§ ६३१. यह सूत्र सुगम है।

*** जो गुणितकर्मांशिक जीव सर्व प्रथम कषायोंके उपशामना कालके भीतर जब दो प्रकारके क्रोधका अन्तिम समयवर्ती संक्रामक हुआ और उसके बाद मर कर देव हुआ उस प्रथम समयवर्ती देवके उत्कृष्ट हानि होती है।**

§ ६३२. 'दुविहस्स कोहस्स' इस पदका निर्देश कर सर्व प्रथम आठ कषायोंमेंसे दो प्रकारके क्रोधके प्रकृत उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व इस सूत्र द्वारा निर्दिष्ट किया गया है। यथा—कोई एक

आगंतूण मणुसेसुप्पज्जिय गब्भादिअट्ठवस्साणमुवरि पढमदाए कसायउवसामणाए उवट्ठिदो। एत्थ पढमदाए कसायउवसामणाए त्ति वयणं विदियादिकसायोवसामणाणं पडिसेहकरणट्ठं। तं पि गुणसंकमेण गच्छमाणदव्वपरिरक्खणट्ठमिदि घेत्तव्वं, अण्णहा गुणसंकमेण पयदकम्माणं बहुदव्वहाणिप्पसंगादो। तस्स कदमम्मि[1] अवत्थाविसेसे सामित्तसंबंधो त्ति वुत्ते वुच्चदे—जाधे दुविहस्स कोहस्स गुणसंकमेण संकामिज्जमाणयस्स चरिमसमयसंकामओ जादो, तदो से काले मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवपज्जाए वट्टमाणयस्स पयदुक्कस्ससामित्ताहिसंबंधो। तत्थ गुणसंकमादो अधापवत्तसंकमेण परिणदस्स हाणीए उक्कस्सभावदंसणादो। तप्पाओग्गजहण्णअधापवत्तसंकमदव्वे सव्वुक्कस्सगुणसंकमदव्वादो सोहिदे सुद्धसेसदव्वपडिबद्धमेदमुक्कस्सहाणिसामित्तमिदि णिच्छेयव्वं।

* एवं दुविहमाण-दुविहमाया-दुविहलोहाणं।

§ ६३३. कुदो? चरिमसमयगुणसंकमादो अधापवत्तसंकमपज्जाएण परिणदपढमसमयदेवम्मि सामित्तं पडि विसेसाभावादो। थोवयरो दु विसेससंभवो अत्थि त्ति तप्पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

गुणितकर्मांशिक जीव न्यूनाधिकतासे रहित गुणित क्रियाके द्वारा आकर और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर गर्भसे लेकर आठ वर्षके बाद सर्व प्रथम कषायोंकी उपशामना करनेके लिए उद्यत हुआ। यहाँ पर 'पढमदाए कसायउवसामणाए' यह वचन द्वितीय आदि बार कषायोंकी उपशामनाका प्रतिषेध करनेके लिए दिया है। वह भी गुणसंक्रमके द्वारा जानेवाले द्रव्यकी रक्षा करनेके लिए दिया है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए, अन्यथा गुणसंक्रमके द्वारा प्रकृत कर्मोंके बहुत द्रव्यका हानिका प्रसंग आता है। उसका किस अवस्थाविशेषमें स्वामित्वका सम्बन्ध है ऐसा पूछने पर कहते हैं—जब दो प्रकारके क्रोधका गुणसंक्रमके द्वारा संक्रम करते हुए अन्तिम समयवर्ती संक्रामक हुआ, फिर तदनन्तर समयमें मरकर देव हो गया उसके प्रथम समयसम्बन्धी देवपर्यायमें रहते हुए प्रकृत उत्कृष्ट स्वामित्वका सम्बन्ध होता है, क्योंकि वहाँ पर गुणसंक्रमसे अधःप्रवृत्तसंक्रमरूपसे परिणत हुए जीवके हानिका उत्कृष्टपना देखा जाता है। तत्प्रायोग्य जघन्य अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्रव्यको सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रमके द्रव्यमेंसे घटाने पर शुद्ध शेष द्रव्यसे सम्बन्ध रखनेवाला यह उत्कृष्ट हानिविषयक स्वामित्व है ऐसा यहाँ पर निश्चय करना चाहिए।

* इसी प्रकार दो प्रकारके मान, दो प्रकारकी माया और दो प्रकारके लोभकी उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व है।

§ ६३३. क्योंकि अन्तिम समयसम्बन्धी गुणसंक्रमसे अधःप्रवृत्तसंक्रमपर्यायरूपसे परिणत हुए प्रथम समयवर्ती देवके स्वामित्वकी अपेक्षा कोई विशेषता नहीं है। किन्तु कुछ थोड़ीसी विशेषता सम्भव है, इसलिए उसका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र अवतीर्ण हुआ है—

---

१ आ. प्रतौ कदवम्मस्स ता.प्रतौ कदमम्मि (?) इति पाठः।

❀ णवरि अप्पप्पणो चरिमसमयसंकामगो होदूण से काले मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्कस्सिया हाणी।

§ ६३४. सुगममेदं ।

❀ अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स ?

§ ६३५. सुगमं ।

❀ अधापवत्तसंकमेण तप्पाओग्गउक्कस्सएण वड्ढिदूण से काले अवट्ठिदसंकामगो जादो तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं ।

§ ६३६. एदस्स सुत्तस्सत्थे भण्णमाणे अणंताणुबंधीणमुक्कस्सावट्ठाणसामित्त-सुत्तस्सेव परूवणा कायव्वा, विसेसाभावादो ।

❀ कोहसंजलणस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ?

§ ६३७. सुगमं ।

❀ जस्स उक्कस्सओ सव्वसंकमो तस्स उक्कस्सिया वड्ढी ।

§ ६३८. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणाणूणाहिएणागंतूण मणुसेसुप्पज्जिय सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदस्स कोहसंजलणचिराणसंतकम्मं सव्वसंकमेण संछुहमाणयस्स उक्कस्सओ

---

* किन्तु इतनी विशेषता है कि अपना अपना अन्तिम समयवर्ती संक्रामक होकर तदनन्तर समयमें मरा और देव हो गया, इस प्रथम समयवर्ती देवके उत्कृष्ट हानि होती है।

§ ६३४. यह सूत्र सुगम है।

* आठ कषायोंका उत्कृष्ट अवस्थान किसके होता है ?

§ ६३५. यह सूत्र सुगम है।

* तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा वृद्धि करके तदनन्तर समयमें अवस्थितसंक्रामक हो गया, उसके उत्कृष्ट अवस्थान होता है।

§ ६३६. इस सूत्रके अर्थका कथन करनेपर अनन्तानुबन्धियोंके उत्कृष्ट अवस्थानके स्वामित्व का कथन करनेवाले सूत्रके समान प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है।

* क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?

§ ६३७. यह सूत्र सुगम है।

* जिसके उसका उत्कृष्ट सर्वसंक्रम होता है उसके उत्कृष्ट वृद्धि होती है।

§ ६३८. न्यूनाधिकतासे रहित गुणितकर्मांशिक लक्षणसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र क्षपणाके लिए उद्यत हो क्रोध संज्वलनके प्राचीन सत्कर्मका सर्वसंक्रमके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रम होता है। उसीके उत्कृष्ट वृद्धिके स्वामित्वका निश्चय करना

पदेससंकमो होइ। तस्सेव उक्कस्सवड्ढिसामित्तमवहारेयव्वं, तत्थ किंचूणसव्वसंकमदव्वस्स उक्कस्सवड्ढिसरूवेण संकंतिदंसणादो।

❀ तस्सेव से काले उक्कस्सिया हाणी।

§ ६३९. तस्सेवाणंतरणिद्दिट्ठवड्ढिसामियस्स तदणंतरसमए उक्कस्सिया हाणी होइ त्ति सामित्तसंबंधो कायव्वो। कधं तत्थ हाणीए उक्कस्सभावो चे? वुच्चदे—चिराणसंतकम्मचरिमफालिं सव्वसंकमेण संकामिय तदणंतरसमए णवकबंधसंकममाढवेदि। तेण कारणेण तत्थुक्कस्सहाणिसामित्तसंबंधो ण विरुज्झदे। एत्थोवजोगिविसेसंतरपदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ णवरि से काले संकमपाओग्गा समयपबद्धा जहण्णा कायव्वा।

§ ६४०. सव्वुक्कस्सपदेससंकमादो हाइदूण सुट्ठु जहण्णपदेससंकमे पारद्धे उक्कस्सिया हाणी होइ, णाण्णहा। तदो सव्वुक्कस्सहाणिसंकमग्गहणट्ठं से काले संकमपाओग्गा णवकबंधसमयपबद्धा जहण्णा कायव्वा त्ति एदस्सत्थविसेसस्स परूवणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ तं जहा।

चाहिए, क्योंकि वहाँ पर कुछ कम सर्वसंक्रमद्रव्यका उत्कृष्ट वृद्धिरूपसे संक्रम देखा जाता है।

* उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट हानि होती है।

§ ६३९. जिस जीवके पूर्वमें संज्वलन क्रोधकी उत्कृष्ट वृद्धिके स्वामीका निर्देश किया है उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट हानि होती है इस प्रकार यहाँ पर स्वामित्वका सम्बन्ध करना चाहिए।

शंका—वहाँ उत्कृष्ट हानि कैसे सम्भव है?

समाधान—क्योंकि प्राचीन सत्कर्मकी अन्तिम फालिका सर्वसंक्रमके द्वारा संक्रम करके तदनन्तर समयमें नवकबन्धके संक्रमका प्रारम्भ करता है, इस कारणसे वहाँ पर उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व सम्बन्ध विरोधको प्राप्त नहीं होता। अब यहाँ पर उपयोगी दूसरी विशेषताका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* किन्तु इतनी विशेषता है कि तदनन्तर समयमें संक्रमके योग्य समयप्रबद्धोंको जघन्य करना चाहिए।

§ ६४०. क्योंकि सबसे उत्कृष्ट प्रदेशसंक्रमसे घटाकर अति कम जघन्य प्रदेशसंक्रमका प्रारम्भ करने पर उत्कृष्ट हानि होती है, अन्यथा नहीं। इसलिए सबसे उत्कृष्ट हानि संक्रमको ग्रहण करनेके लिए तदनन्तर समयमें संक्रमके योग्य नवकबन्ध समयप्रबद्धोंको जघन्य करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। वे समयप्रबद्ध कितने हैं अथवा उन्हें जघन्य कैसे करना चाहिए इस प्रकार इस अर्थविशेषका कथन करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

* यथा।

§ ६४१. सुगमं ।

❀ जेसिं से काले आवलियमेत्ताणं समयपबद्धाणं पदेसग्गं संकामिज्जहिदि ते समयपबद्धा तप्पाओग्गजहण्णा ।

§ ६४२ एतदुक्तं भवति—जेसिमावलियमेत्तणवकबंधसमयपबद्धाणं बंधावलियादिक्कंतसरूवाणं वड्ढिसमयं पेक्खिऊणाणंतरसमए संकमो भविस्सदि ते समयपबद्धा सगबंधकाले चेव तप्पाओग्गजहण्णजोगेण बंधावेयव्वा, अण्णहा सव्वुक्कस्सहाणीए असंभवादो । एदस्सेवत्थस्सोवसंहारवक्कमुत्तरं—

❀ एदीए परूवणाए सव्वसंकमं संछुहिदूण जस्स से काले पुव्वपरूविदो संकमो तस्स उक्कस्सिया हाणी कोहसंजलणस्स ।

§ ६४३. गयत्थमेदं सुत्तं ।

❀ तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं ।

§ ६४४. तस्सेव हाणिसामियस्स से काले बंधावलियादिक्कंतणवकबंधंतरसंबंधेण तेत्तियमेत्तं संकामेमाणयस्स उक्कस्सावट्ठाणसामित्तं दट्ठव्वं, उक्कस्सहाणिपमाणेणेव तत्थावट्ठाणदंसणादो ।

❀ जहा कोहसंजलणस्स तहा माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं ।

---

§ ६४१. यह सूत्र सुगम है ।

*** उत्कृष्ट वृद्धिके अनन्तर समयमें आवलिमात्र जिन समयप्रबद्धोंके प्रदेशाग्र संक्रमित होंगे वे समयप्रबद्ध तत्प्रायोग्य जघन्य होते हैं ।**

§ ६४२. कहनेका यह तात्पर्य है कि जो आवलिमात्र नवक समयप्रबद्ध बन्धावलिको उल्लंघन कर स्थित हैं उनका वृद्धि समयको देखते हुए अनन्तर समयमें संक्रम होगा उन समयप्रबद्धोंको अपने बन्धकालमें ही तत्प्रायोग्य जघन्य योगके द्वारा बन्ध कराना चाहिए, अन्यथा सर्वोत्कृष्ट हानि नहीं हो सकती । अब इसी अर्थका उपसंहार करते हुए आगेका वाक्य कहते हैं—

*** इस प्ररूपणाके अनुसार सर्वसंक्रमके आश्रयसे संक्रम करके जिसके तदनन्तर समयमें पहले कहा हुआ संक्रम होता है उसके क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट हानि होती है ।**

§ ६४३. यह सूत्र गतार्थ है ।

*** उसीके तदनन्तर समयमें उत्कृष्ट अवस्थान होता है ।**

§ ६४४. उत्कृष्ट हानिके स्वामी उसी जीवके तदनन्तर समयमें बन्धावलिको उल्लंघन कर स्थित हुए दूसरे नवकबन्धके सम्बन्धसे उतने ही द्रव्यका संक्रम करनेवाले जीवके उत्कृष्ट अवस्थानका स्वामित्व जानना चाहिए, क्योंकि यहाँ पर उत्कृष्ट हानिप्रमाण ही अवस्थान देखा जाता है ।

*** जिस प्रकार क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार मान संज्वलन, माया संज्वलन और पुरुषवेदकी उत्कृष्ट वृद्धि, हानि और अवस्थानकी प्ररूपणा जाननी चाहिए ।**

§ ६४५. सुगममेदमप्पणासुत्तं।

❀ लोहसंजलणस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ?

§ ६४६. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसिएण लहुं चत्तारि वारे कसाया उवसामिदा, अपच्छिमे भवे दो वारे कसाए उवसामेऊण खवणाए अब्भुट्ठिदो जाधे चरिमसमए अंतरमकदं ताधे उक्कस्सिया वड्ढी ।

§ ६४७. किमट्ठमेसो गुणिदकम्मंसिओ चदुक्खुत्तो कसायोवसामणाए पयट्टाविदो ? अवज्झमाणपयडीहिंतो गुणसंकमेण बहुदव्वसंगहणट्ठं । तदो गुणिदकम्मंसियलक्खणेण सत्तमपुढवीदो आगंतूण मणुसेसुववज्जिय गब्भादिअट्ठवस्साणमुवरि दोवारं कसायोवसामणाए परिणमिय पुणो मिच्छत्तपडिवादेण सव्वलहुं कालं कादूण मणुसेसु उववण्णेण अपच्छिमे तम्मि मणुसभवग्गहणे दो वारे कसाया उवसामिदा । तदो हेट्ठा ओसरिदूण खवणाए अब्भुट्ठिदेण तेण जाधे चरिमसमए अंतरमकदं तस्स उक्कस्सिया लोहसंजलणपदेससंकमविसया वड्ढी होइ त्ति घेत्तव्वं, हेट्ठिमासेससंकमेहिंतो तत्थतणसंकमस्स बहुत्तोवलंभादो ।

❀ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

---

§ ६४५. यह अर्पणासूत्र सुगम है ।

*** लोभसंज्वलनकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ।**

§ ६४६. यह सूत्र सुगम है ।

*** जिस गुणितकर्मांशिक जीवने अतिशीघ्र चार बार कषायोंकी उपशामना की है । उसमें भी अन्तिम भवमें दो बार कषायोंको उपशमा कर जो क्षपणाके लिए उद्यत हुआ । उसने जब अन्तिम समयमें अन्तर नहीं किया तब उसके संज्वलन लोभकी उत्कृष्ट वृद्धि होती है ।**

§ ६४७. **शंका**—इस गुणितकर्मांशिक जीवको चार बार कषायोंकी उपशामनाके लिए क्यों प्रवृत्त कराया है ?

समाधान— नहीं बँधनेवाली प्रकृतियोंमेंसे गुणसंक्रमके द्वारा बहुत द्रव्यका संग्रह करनेके लिए ऐसा किया है ।

इसलिए गुणितकर्मांशिक लक्षणके साथ सातवीं पृथिवीसे आकर मनुष्योंमें उत्पन्न हो गर्भसे लेकर आठ वर्षके बाद दोबार कषायोंकी उपशामनारूपसे परिणमा कर पुनः मिथ्यात्वमें गिरनेके साथ अतिशीघ्र मरकर और मनुष्योंमें उत्पन्न होकर अन्तिम उस मनुष्यभवमें दोबार कषायोंकी उपशामना की । तदनन्तर नीचे आकर क्षपणाके लिए उद्यत हुए उसने जब अन्तिम समयमें अन्तर नहीं किया तब उसके लोभसंज्वलनकी प्रदेशसंक्रमविषयक उत्कृष्ट वृद्धि होती है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि पूर्वके समस्त संक्रमोंसे यहाँका संक्रम बहुत उपलब्ध होता है ।

*** उत्कृष्ट हानि किसके होती है ?**

§ ६४८. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसियो तिण्णि वारे कसाए उवसामेऊण चउत्थीए उवसामणाए उवसामेमाणो अंतरे चरिमसमय-अकदे से काले मदो देवो जादो, तस्स समयाहियावलियउववण्णयस्स उक्कस्सिया हाणी ।

§ ६४९. एदस्सत्थो वुच्चदे—जो गुणिदकम्मंसिओ चदुक्खुत्तो कसाए उवसामेमाणो तत्थ तिण्णि वारे वोलाविय चउत्थीए उवसामणाए अंतरकरणमाढविय से काले अंतरं णिल्लेविहिदि त्ति कालं कादूण देवेसुववण्णो तस्स समयाहियावलियदेवस्स पयदुक्कस्सहाणि-सामित्तं दट्ठव्वं । किं कारणं ? अंतरचरिमफालीए गच्छमाणाए पडिच्छिदगुणसंकमदव्वं तक्कालियणवकबंधेण सहिदमावलियदेवभावेण संकामिय पुणो तदणंतरसमए पढमसमय-देवोववादजोगेण बद्धणवकबंधसमयपबद्धमधापवत्तसंकमेण तत्थ पडिच्छिददव्वेण सह संकामेमाणयस्स सव्वुक्कस्सहाणीए विरोहाभावादो ।

❀ उक्कस्सयमवट्ठाणमपच्चक्खाणावरणभंगो ।

§ ६५०. सुगमं ।

❀ भय-दुगुंछाणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स ?

---

§ ६४८. यह सूत्र सुगम है ।

*** जो गुणितकर्मांशिक जीव तीन बार कषायोंको उपशमाकर चौथी उपशामनाके द्वारा उपशम करता हुआ अन्तिम समयमें होनेवाले अन्तरको किये बिना तदनन्तर समयमें मरा और देव हो गया उसके उत्पन्न होनेके एक समय अधिक एक आवलि होने पर उत्कृष्ट हानि होती है ।**

§ ६४९. इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—जो गुणितकर्मांशिक जीव चार बार कषायोंकी उपशामना करता हुआ उनमेंसे तीन बारोंको बिताकर चौथी उपशामनामें अन्तरकरणका प्रारम्भ कर तदनन्तर समयमें अन्तरको समाप्त करेगा कि मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ उस देवके एक समय अधिक एक आवलि काल होने पर प्रकृत उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व जानना चाहिए ।

शंका—क्या कारण है ?

समाधान—क्योंकि अन्तरकी अन्तिम फालिके जाते हुए संक्रमको प्राप्त हुए गुणसंक्रमके द्रव्यको तत्कालीन नवकबन्धके साथ एक आवलि कालतक देवभावके साथ संक्रमित कर पुनः तदनन्तर समयमें प्रथम समयवर्ती देवके उपपादयोगके साथ बँधे हुए नवकबन्धके समयप्रबद्धको अधःप्रवृत्त संक्रमके द्वारा वहाँ संक्रमित किये गये द्रव्यके साथ संक्रम करनेवाले जीवके सबसे उत्कृष्ट हानि होनेमें विरोधको अभाव है ।

*** उत्कृष्ट अवस्थानका भङ्ग अप्रत्याख्यानावरणके समान है ।**

§ ६५०. यह सूत्र सुगम है ।

*** भय और जुगुप्साकी उत्कृष्ट वृद्धि किसके होती है ?**

§ ६५१. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स ।

§ ६५२. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण खवगसेढिमारुहिय सव्वसंकमेण परिणदम्मि सव्वुक्कस्सवड्ढिसंभवं पडिविरोहाभावादो ।

❀ उक्कस्सिया हाणी कस्स ?

§ ६५३. सुगमं ।

❀ गुणिदकम्मंसिओ पढमदाए कसाए उवसामेमाणो भय-दुगुंछासु चरिमसमयअणुवसंतासु से काले मदो देवो जादो, तस्स पढमसमयदेवस्स उक्कस्सिया हाणी ।

§ ६५४. गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पढमवारं कसायोवसामणं पट्ठविय तत्थ भयदुगुंछासु चरिमसमयअणुवसंतासु सव्वुक्कस्सगुणसंकमेण परिणमिय तत्तो से काले कालं कादूण देवसुप्पण्णस्स पढमसमए पयदुक्कस्सहाणिसामित्तं होइ, सव्वुक्कस्सगुणसंकमादो अधापवत्तसंकमेण परिणदम्मि तदविरोहादो ।

❀ उक्कस्सयमवट्ठाणमपच्चक्खाणावरणभंगो ।

§ ६५५. सुगममेदमप्पणासुत्तं ।

---

§ ६५१. यह सूत्र सुगम है ।

* सर्वसंक्रामक गुणितकर्मांशिक जीवके होती है ।

§ ६५२. क्योंकि गुणितकर्मांशिक लक्षणसे आकर और क्षपकश्रेणि पर आरोहण कर सर्वसंक्रमरूपसे परिणत होने पर सबसे उत्कृष्ट वृद्धिके सम्भव होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

* उत्कृष्ट हानि किसके होती है ?

§ ६५३. यह सूत्र सुगम है ।

*** जो गुणितकर्मांशिक जीव प्रथम बार कषायोंका उपशम करता हुआ भय और जुगुप्साका अन्तिम समयमें उपशम किये विना अनन्तर समयमें मरकर देव हो गया उस प्रथम समयवर्ती देवके उत्कृष्ट हानि होती है ।**

§ ६५४. गुणितकर्मांशिकलक्षणसे आकर और प्रथम बार कषायोंकी उपशामनाकी प्रस्थापना कर वहाँ भय और जुगुप्साके अन्तिम समयमें अनुपशान्त रहते हुए जो सर्वोत्कृष्ट गुणसंक्रमरूपसे परिणमन कर उसके बाद तदनन्तर समयमें मरकर देवोंमें उत्पन्न हुआ उसके प्रथम समयमें प्रकृत उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व होता है, क्योंकि सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रमके बाद अधःप्रवृत्तरूपसे परिणत होने पर उसके होनेमें कोई विरोध नहीं आता ।

*** उत्कृष्ट अवस्थानका भङ्ग अप्रत्याख्यानावरणके समान है ।**

§ ६५५. यह अर्पणा सूत्र सुगम है ।

⊛ एवमित्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं ।

§ ६५६. जहा भयदुगुंछाणमुक्कस्ससामित्तं परूविदं तहा एदेसिं पि परूवेयव्वं। संपहि एदेण सामण्णणिद्देसेणेदेसिं कम्माणमवट्ठाणसंकमस्स वि अत्थित्तप्पसंगे तण्णिवारणट्ठ-मुत्तरसुत्तं भणइ —

⊛ णवरि अवट्ठाणं णत्थि ।

§ ६५७. कुदो ? परावत्तणपयडीणमेदासिमवट्ठाणसंभवाभावादो । एवमोघेणुक्कस्स-सामित्तपरूवणा गया । एदीए दिसाए आदेसपरूवणा च विहासियव्वा ।

तदो उक्कस्ससामित्तं समत्तं ।

⊛ मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी कस्स ?

§ ६५८. सुगममेदं पुच्छासुत्तं । एवं पुच्छाविसयीकयसामित्तणिद्देसे कायव्वे तत्थ ताव सव्वकम्माणं साहारणभावेण जहण्णवड्ढिहाणि-अवट्ठाणाणं पमाणावहारणट्ठमट्ठपदं परूवेमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

⊛ जस्स कम्मस्स अवट्ठिदसंकमो अत्थि तस्स असंखेज्जा लोगपडि-भागा वड्ढी वा हाणी वा अवट्ठाणं वा होइ ।

*** इसी प्रकार स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोकका उत्कृष्ट स्वामित्व जानना चाहिए ।**

§ ६५६. जिस प्रकार भय और जुगुप्साके उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन किया उसी प्रकार इन प्रकृतियोंके उत्कृष्ट स्वामित्वका भी कथन करना चाहिए। अब इस सामान्य निर्देशसे इन कर्मोंके अवस्थान संक्रमका भी अस्तित्व प्राप्त होने पर उसका निवारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** किन्तु इतनी विशेषता है कि उक्त प्रकृतियोंका अवस्थान संक्रम नहीं है ।**

§ ६५७. क्योंकि परावर्तमान इन प्रकृतियोंका अवस्थान सम्भव नहीं है। इस प्रकार ओघसे उत्कृष्ट स्वामित्वका कथन समाप्त हुआ। इसी पद्धतिसे आदेश प्ररूपणाका व्याख्यान कर लेना चाहिए।

इस प्रकार उत्कृष्ट स्वामित्व समाप्त हुआ।

*** मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ?**

§ ६५८. यह पृच्छा सूत्र सुगम है। इस प्रकार पृच्छाके द्वारा विषय किये गये स्वामित्वका निर्देश करते समय उसमें सर्व प्रथम सब कर्मोंके साधारण भावसे जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके प्रमाणका अवधारण करनेके लिए अर्थपदका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** जिस कर्मका अवस्थित संक्रम होता है उस कर्मकी असंख्यात लोक प्रतिभाग रूपसे वृद्धि, हानि और अवस्थान होता है ।**

§ ६५६. एदस्स सुत्तस्सत्थो वुच्चदे—जस्स कम्मस्स णिरंतरबंधवसेणावट्ठिदसंकमो संभवइ तस्स जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणपमाणमसंखेज्जलोगपडिभागो होइ। किं कारणं ? अवट्ठाणसंकमपाओग्गपयडीसु एगेगसंतकम्मपक्खेवुत्तरकमेण संतकम्मवियप्पाणं पयदजहण्ण-वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणणिबंधणाणमुप्पत्तीए विरोहाभावादो। एत्थ विसेसणिण्णयमुवरिम-सामित्तणिद्देसे कस्सामो। तदो जेसिं कम्माणमवट्ठिदसंकमसंभवो अत्थि तेसिमसंखेज्जलोग-पडिभागेण जहण्णवड्ढिहाणिअवट्ठाणसामित्ताणुगमो कायव्वो त्ति सिद्धं। संपहि जेसि-मवट्ठाणसंभवो णत्थि तेसिमेस कमो ण संभवदि त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमोइण्णं—

❀ जस्स कम्मस्स अवट्ठिदसंकमो णत्थि तस्स वड्ढी वा हाणी वा असंखेज्जा लोगभागो ण लब्भइ।

§ ६६०. किं कारणं ? तत्थ तदुवलंभकारणसंतकम्मवियप्पाणमणुप्पत्तीदो। तदो तत्थागम-णिज्जरावसेण पलिदो० असंखे०भागपडिभागेण संतकम्मस्स वड्ढी वा हाणी वा होइ त्ति तदणुसारेणेव संकमपवुत्ती दट्ठव्वा।

❀ एसा परूवणा अट्ठपदभूदा जहण्णियाए वड्ढीए वा हाणीए वा अवट्ठाणस्स वा।

§ ६६१. एस अणंतरणिद्दिट्ठा परूवणा जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं सरूवावहारणट्ठ-

---

§ ६५६. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं— जिस कर्मका निरन्तर बन्ध होनेसे अवस्थित संक्रम सम्भव है उसकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानका प्रतिभाग असंख्यात लोकप्रमाण होता है, क्योंकि अवस्थानसंक्रमके योग्य प्रकृतियोंमें एक एक सत्कर्म प्रक्षेप अधिकके क्रमसे प्रकृत जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके कारणभूत सत्कर्म विकल्पोंकी उत्पत्ति होनेमें कोई विरोध नहीं आता। यहाँ पर विशेष निर्णय आगे स्वामित्वका निर्देश करते हुए करेंगे. इसलिए जिन कर्मोंका अवस्थित संक्रम सम्भव है उनकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वका अनुगम असंख्यात लोकको प्रतिभाग बना कर करना चाहिए यह सिद्ध हुआ। तत्काल जिनका अवस्थान संक्रम नहीं होता उनका यह क्रम सम्भव नहीं है यह बतलानेके लिए आगेका सूत्र आया है—

*** जिस कर्मका अवस्थितसंक्रम नहीं होता इस कर्मके असंख्यात लोक प्रतिभाग रूपसे वृद्धि और हानि नहीं उपलब्ध होता।**

§ ६६०. क्योंकि वहाँ पर उसकी उपलब्धिके कारणभूत सत्कर्म विकल्प नहीं उत्पन्न होते। इसलिए वहाँ पर आय और निर्जराके कारण पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण प्रतिभागरूपसे सत्कर्मकी वृद्धि और हानि होती है, अतएव तदनुसार ही संक्रमकी प्रवृत्ति जाननी चाहिए।

*** यह प्ररूपणा जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानकी अर्थपदभूत है।**

§ ६६१. यह अनन्तर पूर्व कही गई प्ररूपणा जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वरूपका निश्चय करनेके लिए अर्थपदभूत है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इस प्रकार कहे गये

मट्ठपदभूदा त्ति भणिदं होइ। संपहि एवं परूविदमट्ठपदमस्सिऊण पयदजहण्णसामित्त-विहासणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

॥ एदाए परूवणाए मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं वा कस्स ?

§ ६६२. सुगममेदं पुच्छासुत्तं। णेदमेत्थासंकणिज्जं, पुव्वमेव मिच्छत्तजहण्णवड्ढिसामित्त-विसयपुच्छाणिद्देसस्स कयत्तादो पुणरुत्तण्णासो णिरत्थओ त्ति। कुदो ? अत्थपरूवणाए अंतरिदस्स तस्सेव संभालणट्ठं पुणरुत्तण्णासे दोसाभावादो पुव्विल्लपुच्छाणिद्देसेणा-संगहियाणं हाणि-अवट्ठाणसामित्ताणमेत्थ संगहोवलंभादो च।

॥ जम्हि तप्पाओग्गजहण्णगेण संकमेण से काले अवट्ठिदसंकमो संभवदि तम्हि जहण्णिया वड्ढी वा हाणी वा से काले जहण्णयमवट्ठाणं।

§ ६६३. जम्हि विसए तप्पाओग्गजहण्णएण संकमेण परिणदस्स से काले अवट्ठिद-संकमपरिणामसंभवो तम्हि विसए पयदजहण्णसामित्तमणुगंतव्वं। कम्हि पुण विसये

अर्थपदका आश्रय कर प्रकृत जघन्य स्वामित्वका व्याख्यान करनेके लिए आगेका सूत्र प्रबन्ध कहते हैं—

*** इस प्ररूपणाके अनुसार मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान किसके होता है ?**

§ ६६२. यह पृच्छासूत्र सुगम है। यहाँ पर यह शंका नहीं करनी चाहिए कि मिथ्यात्वकी जघन्य वृद्धिके स्वामित्वसम्बन्धी पृच्छाका निर्देश पूर्वमें ही कर आये हैं, इसलिए उसका पुनः उपन्यास करना निरर्थक है, क्योंकि अर्थप्ररूपणाके द्वारा व्यवधानको प्राप्त हुए उक्त कथनकी सम्हाल करनेके लिए पुनः उपन्यास करनेमें कोई दोष नहीं है तथा पूर्वमें किये पृच्छानिर्देशके द्वारा संगृहीत नहीं किये गये हानि और अवस्थानसम्बन्धी स्वामित्वका यहाँ पर संग्रह उपलब्ध होता है, इसलिए भी कोई दोष नहीं है।

*** जहाँ पर तत्प्रायोग्य जघन्य संक्रमसे तदनन्तर समयमें अवस्थान संक्रम सम्भव है वहाँ पर जघन्य वृद्धि या जघन्य हानि तथा तदनन्तर समयमें जघन्य अवस्थान होता है।**

§ ६६३. जिस विषयमें तत्प्रायोग्य जघन्य संक्रमसे परिणत हुए जीवके तदनन्तर समयमें अवस्थित संक्रमके अनुरूप परिणामका संक्रम सम्भव है उस विषयमें प्रकृत जघन्य स्वामित्व जानना चाहिए।

शंका—तो किस विषयमें मिथ्यात्वका तत्प्रायोग्य जघन्य संक्रमरूपसे अवस्थान संक्रम सम्भव है ?

समाधान—कहते हैं—जो जीव क्षपितकर्मांशिक लक्षणसे आकर पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वको प्राप्त होकर तत्प्रायोग्य कालके द्वारा फिरसे वेदक सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है वह प्रथम आवलिके द्वितीयादि समयोंमें अवस्थित संक्रमके योग्य होता है, क्योंकि मिथ्यादृष्टिकी

मिच्छत्तस्स तप्पाओग्गजहण्णसंकमेणावट्ठाणसंभवो ? वुच्चदे—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पुव्वुप्पण्णसम्मत्तादो मिच्छत्तमुवणमिय तप्पाओग्गेण कालेण पुणो वि वेदगसम्मत्तं पडिवण्णस्स पढमावलियाए विदियादिसमएसु अवट्ठिदसंकमपाओग्गो होइ, मिच्छाइट्ठिचरिमावलियणवकबंधवसेण तत्थागम-णिज्जराणं सरिसीकरणसंभवादो। तदो तहाभूदसम्माइट्ठिपढमावलियावलंबणेण पयदसामित्तसमत्थणमेवं कायव्वं। तं जहा—तप्पाओग्गखविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पुव्वुप्पण्णसम्मत्तादो मिच्छत्तं गंतूण पुणो सम्मत्तं पडिवण्णस्स पढमसमए तप्पाओग्गजहण्णं मिच्छत्तस्स पदेससंतकम्मट्ठाणं होइ।

§ ६६४. संपहि एत्थ सम्माइट्ठिपढमसमए णिरुद्धसंतकम्मपडिबद्धसंकमट्ठाणाणं कारणभूदाणि असंखेज्जलोगमेत्तज्झवसाणट्ठाणाणि होंति। तत्थ जहण्णज्झवसाणट्ठाणेण संकामेमाणस्स जहण्णसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो तम्मि चेव जहण्णसंतकम्मम्मि असंखेज्जलोगभागवड्ढिहेदुविदियज्झवसाणट्ठाणेण परिणमिय संकामिज्जमाणे अण्णं संकमट्ठाणमपुणरुत्तमुप्पज्जदि। एवमेदेण कमेण तदियादिअज्झवसाणट्ठाणाणि वि जहाकमं परिणमिय संकामेमाणस्सासंखेज्जलोगभागुत्तरकमेणेगेगसंकमट्ठाणपक्खेववड्ढीए णिरुद्धजहण्णसंतकम्मट्ठाणम्मि असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणमपुणरुत्तणमुप्पत्ती वत्तव्वा।

§ ६६५. संपहि एदेसु संकमट्ठाणेसु सम्माइट्ठिपढमसमयम्मि जहण्णसंकमट्ठाणमवत्तव्वभावेण संकामिय पुणो सम्माइट्ठिविदियसमयम्मि विदियसंकमट्ठाणे संकामिदे जहण्णया वड्ढी होइ, परिणामविसेसमस्सिऊण तत्थासंखेज्जलोगपडिभागेण संकमस्स

अन्तिम आवलिमें हुए नवकबन्धके कारण वहाँ पर आय और निर्जराका समान होना सम्भव है। अतः उस प्रकारके सम्यग्दृष्टिकी प्रथम आवलिके अवलम्बन द्वारा प्रकृत स्वामित्वका समर्थन इस प्रकार करना चाहिए। यथा—जो जीव क्षपितकर्मांशिक लक्षणसे आकर और पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वमें जाकर पुनः सम्यक्त्वको प्राप्त हुआ है उसके प्रथम समयमें मिथ्यात्वका तत्प्रायोग्य जघन्य प्रदेशसंक्रमस्थान होता है।

§ ६६४. यहाँ पर सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें विवक्षित सत्कर्मसे सम्बन्ध रखनेवाले संक्रम स्थानोंके कारणभूत असंख्यात लोकप्रमाण अध्यवसानस्थान होते हैं। वहाँ पर जघन्य अध्यवसानके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके जघन्य संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। पुन असंख्यात लोकरूप भागवृद्धिके कारणभूत द्वितीय अध्यवसानरूपसे परिणमन कर उसी जघन्य सत्कर्मका संक्रम करने पर दूसरा अपुनरुक्त संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। इसी प्रकार इस क्रमसे तृतीय आदि अध्यवसान स्थानोंको भी परिणमाकर संक्रम करनेवाले जीवके असंख्यात लोक भाग अधिकके क्रमसे एक एक संक्रमस्थान प्रक्षेपवृद्धिके आश्रयसे विवक्षित जघन्य सत्कर्मस्थानमें असंख्यात लोकप्रमाण अपुनरुक्त संक्रमस्थानोंकी उत्पत्ति करनी चाहिए।

§ ६६५. अब इन संक्रमस्थानोंमेंसे सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें जघन्य संक्रमस्थानको अवक्तव्यरूपसे संक्रमाकर पुनः सम्यग्दृष्टिके दूसरे समयमें दूसरे संक्रमस्थानके संक्रमित कराने

वड्ढिदंसणादो। अध पढमसमयम्मि विदियसंकमट्ठाणं संकामिय पुणो विदियसमयम्मि जहण्णसंकमट्ठाणं[1] जइ संकामेदि तो जहण्णिया हाणी होइ, जहण्णवड्ढिमेत्तस्सेव तत्थ हाणिदंसणादो। अह जइ विदियसमयम्मि जहण्णभावाविरोहेण वड्ढिदूण हाइदूण वा पुणो तदियसमयम्मि आगमणिज्जरावसेण तत्तियं चेव संकामेदि तो तस्स जहण्णयमवट्ठाणं होइ, दोसु वि समएसु अवट्ठिदपरिणामेण परिणदम्मि तदविरोहादो। एवमेसा थूलसरूवेण जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं सामित्तपरूवणा कया।

§ ६६६. संपहि सुहुमत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—पुव्वुत्तजहण्णसंतकम्मट्ठाणम्मि एगपरमाणुम्मि वड्ढिदे सा चेव पुव्वपरूविदसंकमट्ठाणपरिवाडी उप्पज्जदि। एवं दो-तिण्णिआदिसंखेज्जासंखेज्जाणंतपरमाणुसु वड्ढिदेसु वि ताणि चेव संकमट्ठाणाणि उप्पज्जंति, तहाभूदसंतकम्मवियप्पाणं विसरिससंकमट्ठाणंतरुप्पत्तीए अणिमित्तत्तादो। पुणो केत्तियमेत्तपरमाणूणं वड्ढीए विसरिससंकमट्ठाणुप्पत्तिणिमित्तसंतकम्मवियप्पुप्पत्ती होइ त्ति वुत्ते वुच्चदे—जं जहण्णसंतकम्मट्ठाणम्मि पडिबद्धजहण्णसंकमट्ठाणं तं तस्सेव विदियसंकमट्ठाणादो सोहिय सुद्धसेसमसंखेज्जलोगेहि भागे हिदे तत्थ भागलद्धमेत्ते जहण्णसंतकम्मट्ठाणस्सुवरि वड्ढिदे पढमसंकमट्ठाणपरिवाडीए उवरि विदियसंकमट्ठाणपरिवाडिउप्पायणकारणभूदं विदियं संतकम्मट्ठाणमुप्पज्जदि। विज्झादभागहारमसंखेज्जलोगवग्गं च अण्णोण्ण-

पर जघन्य वृद्धि होती है, क्योंकि परिणामविशेषका आश्रय कर वहाँ असंख्यात लोक प्रतिभागसे संक्रमकी वृद्धि देखी जाती है। तथा प्रथम समयमें द्वितीय संक्रमस्थानको संक्रमाकर द्वितीय समयमें जघन्य संक्रमस्थानको यदि संक्रमित करता है तो जघन्य हानि होती है, क्योंकि वहाँ पर जघन्य वृद्धिमात्रकी ही हानि देखी जाती है। तथा यदि दूसरे समयमें जघन्यभावके अविरोध पूर्वक य वृद्धि या हानि करके पुनः तीसरे समयमें आय और व्ययके कारण उतनेका ही संक्रम करता है तो उसके जघन्य अवस्थान होता है, क्योंकि दोनों ही समयोंमें अवस्थित परिणाम रूपसे परिणत होने पर जघन्य अवस्थानके होनेमें कोई विरोध नहीं आता। इस प्रकार यह स्थूलरूपसे जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानकी स्वामित्व प्ररूपणा की।

§ ६६६. अब सूक्ष्म अर्थका कथन करते हैं। यथा—पूर्वोक्त जघन्य सत्कर्मस्थानमें एक परमाणुकी वृद्धि होने पर वही पहले कही गई संक्रमस्थान परिपाटी उत्पन्न होती है। इस प्रकार दो, तीन आदि संख्यात, असंख्यात और अनन्त परमाणुओंकी वृद्धि होने पर भी वे ही संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं, क्योंकि इस प्रकारके सत्कर्म विकल्प विसदृश दूसरे संक्रमस्थानकी उत्पत्तिमें निमित्त नहीं हैं। पुनः कितने परमाणुओंकी वृद्धि होने पर विसदृश संक्रमस्थानकी उत्पत्तिके कारणभूत सत्कर्म विकल्पकी उत्पत्ति होती है ऐसा पूछने पर कहते हैं—जघन्य सत्कर्मस्थानमें प्रतिबद्ध जो जघन्य संक्रमस्थान है उसे उसीके दूसरे संक्रमस्थानमेंसे घटाकर जो शेष बचे उसमें असंख्यात लोकका भाग देने पर जो भाग लब्ध आवे उसे जघन्य सत्कर्मस्थानके ऊपर बढ़ाने पर प्रथम संक्रमस्थानकी परिपाटीके उपर दूसरी संक्रमस्थान परिपाटीको उत्पन्न करनेका कारणभूत दूसरा

१. आ०प्रतौ पढमसयम्मि जहण्णसंकमाट्ठणं इति पाठः।

गुणं करिय जहण्णसंतकम्मट्ठाणे भागे हिदे तत्थ जं भागलद्धं तम्मि तत्थेव जहण्णसंतकम्मट्ठाणम्मि पडिरासिय पक्खित्ते बिदियसंतकम्मट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति वुत्तं होइ। कुदो एदं णव्वदे? उवरिमसंकमट्ठाणपरूवणाए णिबद्धचुण्णिसुत्तादो। एदिस्से संतकम्मवड्ढीए संतकम्मपक्खेवो त्ति सण्णा।

§ ६६७. संपहि एवंविहपक्खेवुत्तरसंतकम्मट्ठाणमस्सिऊण पयदजहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणमेवं सामित्तपरूवणा कायव्वा। तं जहा—जहण्णपरिणामट्ठाणेण परिणमिय संपहि णिरुद्धपक्खेवुत्तरसंतकम्मट्ठाणं संकामेमाणस्स एत्थतणजहण्णसंकमट्ठाणं होदि। होंतं वि जहण्णसंतकम्मट्ठाणपडिबद्धजहण्णसंकमट्ठाणादो असंखेज्जभागब्भहियं होदूण तस्सेव विदियसंकमट्ठाणादो वि असंखेज्जभागहीणं होदूण चेट्ठदि। किं कारणं? तत्थतण-संकमट्ठाणविसेसस्सासंखेज्जदिभागभूदसंतकम्मपक्खेवे विज्झादभागहारेण खंडिदे तत्थेय-खंडमेत्तेण पुव्विल्लजहण्णसंकमट्ठाणादो एदस्स बिदियपरिवाडिजहण्णसंकमट्ठाणस्स-ब्भहियत्तदंसणादो। एवं होइ त्ति कादूण सम्माइट्ठिपढमसमयम्मि पढमसंकमट्ठाणपरिवाडि-जहण्णसंकमट्ठाणमवत्तव्वभावेण संकामिय पुणो बिदियसमयम्मि विदियसंकमट्ठाणपरिवाडीए जहण्णसंकमट्ठाणे संकामिदे जहण्णिया वड्ढी होइ।

सत्कर्मस्थान उत्पन्न होता है। विध्यातभागहारको और असंख्यात लोकके वर्गको परस्पर गुणित कर उसका जघन्य सत्कर्मस्थानमें भाग देने पर वहाँ जो भाग लब्ध आवे उसे वहीं पर जघन्य सत्कर्मस्थानको प्रति राशिकर मिला देने पर दूसरा सत्कर्मस्थान उत्पन्न होता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—आगे संक्रमस्थान प्ररूपणामें निबद्ध चूर्णिसूत्रसे जाना जाता है।

इस सत्कर्म वृद्धिकी सत्कर्म प्रक्षेप यह संज्ञा है।

§ ६६७. अब इस प्रकार प्रक्षेप अधिक सत्कर्मस्थानका आश्रय लेकर प्रकृत जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वकी इस प्रकार प्ररूपणा करनी चाहिए। यथा—जघन्य परिणाम-स्थानरूपसे परिणमन कर अब विवक्षित प्रक्षेप अधिक सत्कर्मस्थानका संक्रम करनेवाले जीवके यहाँका जघन्य संक्रमस्थान होता है। जो होता हुआ भी जघन्य सत्कर्मस्थानसे प्रतिबद्ध जघन्य संक्रमस्थानसे असंख्यातवाँ भाग अधिक होकर तथा उसीके दूसरे संक्रमस्थानसे भी असंख्यातवाँ भाग हीन होकर स्थित है, क्योंकि वहाँके संक्रमस्थानविशेषके असंख्यातवें भागरूप सत्कर्म-प्रक्षेपमें विध्यातभागहारका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतनी पहलेके जघन्य संक्रम-स्थानसे दूसरी परिपाटीमें उत्पन्न इस जघन्य संक्रमस्थानकी अधिकता देखी जाती है। ऐसा होता है ऐसा करके सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें प्रथम संक्रमस्थान परिपाटीके जघन्य संक्रमस्थानको अवक्तव्यरूपसे संक्रमाकर पुनः दूसरे समयमें दूसरी संक्रमस्थान परिपाटीके जघन्य संक्रमस्थानके संक्रमित करनेपर जघन्य वृद्धि होती है।

§ ६६८. संपहि जहण्णहाणिसंकमे इच्छिज्जमाणे पढमसमयम्मि विदियसंकमट्ठाण-परिवाडीए पढमसंकमट्ठाणं संकामिय पुणो विदियसमयम्मि पढमसंकमट्ठाणपरिवाडीए जहण्णसंकमट्ठाणे संकामिदे जहण्णिया हाणी होइ त्ति वत्तव्वं। पुणो विदियसमयम्मि अणेण विहिणा वड्ढि-हाणीणमण्णदरपरिणामं गंतूण तदो तदियसमयम्मि आगम-णिज्जरा-वसेण तेत्तियं चेव संकामेमाणस्स जहण्णमवट्ठाणं होदि त्ति दट्ठव्वं। एदं च जहण्ण-वड्ढि-हाणि-अवट्ठाणदव्वं पुव्विल्लपरूवणाविसईकयजदण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणदव्वादो असंखेज्ज-गुणहीणं होदि। एदस्स कारणं सुगमं। तम्हा एदम्मि चेव गहिदे सव्वजहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणि होंति त्ति सिद्धं।

❀ सम्मत्तस्स जहण्णिया हाणी कस्स ?

§ ६६९. सुगमं।

❀ जो सम्माइट्ठी[1] तप्पाओग्गजहण्णएण कम्मेण सागरोवमवे छावट्ठीओ गालिदूण मिच्छत्तं गदो, सव्वमहंतउव्वेल्लणकालेण उव्वेल्ले-माणगस्स तस्स दुचरिमट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमए जहण्णिया हाणी।

§ ६७०. जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण सम्मत्तमुप्पाइय वेछावट्ठिसागरोपमाणि सम्मत्तमणुपालिय तदवसाणे परिणामपच्चएण मिच्छत्तमुवणमिय दीहुव्वेल्लण-कालेणुव्वेल्लेमाणयस्स दुचरिमट्ठिदिखंडयचरिमफालीए अंगुलस्सासंखेज्जभागपडिभागेणु-

§ ६६८. अब जघन्य हानि संक्रमके लानेकी इच्छा होनेपर प्रथम समयमें दूसरी संक्रमस्थान परिपाटीके प्रथम संक्रमस्थानको संक्रमाकर पुनः दूसरे समयमें प्रथम संक्रमस्थान परिपाटीके जघन्य संक्रमस्थानके संक्रमित करने पर जघन्य हानि होती है ऐसा कहना चाहिए। पुनः दूसरे समयमें इसी विधिसे वृद्धि और हानिसम्बन्धी अन्यतर परिणामको प्राप्त होकर तदनन्तर तीसरे समयमें आय-व्ययके कारण उतना ही संक्रम करनेवाले जीवके जघन्य अवस्थान होता है ऐसा जानना चाहिए। यह जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान द्रव्य पहली प्ररूपणामें विषय किये गये जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान द्रव्यसे असंख्यातगुणा हीन होता है। इसका कारण सुगम है, इसलिए इसीके ग्रहण करने पर सबसे जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होते हैं यह सिद्ध हुआ।

*** सम्यक्त्वकी जघन्य हानि किसके होती है ?**

§ ६६९. यह सूत्र सुगम है।

*** जो सम्यग्दृष्टि जीव तत्प्रायोग्य जघन्य कर्मके साथ दो छयासठ सागरप्रमाण काल बिताकर मिथ्यात्वको प्राप्त हुआ, सबसे बड़े उद्वेलनाकालके द्वारा उद्वेलना करनेवाले उस जीवके द्विचरम स्थितकाण्डकके अन्तिम समयमें जघन्य हानि होती है।**

§ ६७०. जघन्य स्वामित्व विधिसे आकर सम्यक्त्वको उत्पन्न कर तथा दो छयासठ सागर काल तक सम्यक्त्वका पालन कर उसके अन्तमें परिणामवश मिथ्यात्वको प्राप्त होकर दीर्घ उद्वेलना कालके द्वारा उद्वेलना करनेवाले जीवके द्विचरम स्थितिकाण्डककी अन्तिम फालिका अंगुलके

व्वेल्लणासंकमेण जहण्णहाणिसामित्तमेदं होइ त्ति सुत्तत्थो । दुचरिमट्ठिदिखंडयदुचरिमफालिदव्वादो तस्सेव चरिमफालिदव्वे सोहिदे सुद्धसेसमेत्तमेत्थ हाणिपमाणं होइ ।

❀ तस्सेव से काले जहण्णिया वड्ढी ।

§ ६७१. तस्सेव हाणिसामियस्स तदणंतरसमए जहण्णिया वड्ढी होइ । कुदो ? तत्थ पलिदोवमासंखेज्जभागपडिभागियगुणसंकमेण जहण्णभावाविरोहेण परिणदम्मि तदुवलद्धीदो ।

❀ एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि ।

§ ६७२. जहा सम्मत्तस्स दुविहा सामित्तपरूवणा कया एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि कायव्वा, विसेसाभावादो । णवरि जहण्णवड्ढिसामित्ते भण्णमाणे दुचरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालिमुव्वेल्लणभागहारेण संकामिय तदो उवरिमसमयम्मि सम्मत्तमुप्पाइय विज्झादसंकमेण संकामेमाणयस्स जहण्णिया वड्ढी दट्ठव्वा, गुणसंकमजणिदवड्ढीदो विज्झादसंकमजणिदवड्ढीए सुट्ठु जहण्णभावोववत्तीदो । तत्थ वि गुणसंकमो अत्थि त्ति णासंकणिज्जं, तत्थतणसम्मामिच्छत्तगुणसंकमभागहारस्स अंगुलस्सासंखेज्जभागपमाणत्तोवएसादो । ण च एसो अत्थो सुत्ते णत्थि, से काले जहण्णिया वड्ढी होइ त्ति सामण्णसरूवेण पयट्टसुत्तम्मि एदस्स अत्थविसेसस्स संभवोवलंभादो ।

असंख्यातवें भागरूप प्रतिभागके द्वारा उद्वलना संक्रम होनेसे यह जघन्य स्वामित्व होता है यह इस सूत्रका अर्थ है । द्विचरम स्थितिकाण्डकके द्विचरम फालि द्रव्यमेंसे उसीकी अन्तिम फालिके द्रव्यके घटाने पर जो शेष बचे उतना यहाँ पर जघन्य हानिका प्रमाण होता है ।

*** उसीके अनन्तर समयमें जघन्य वृद्धि होती है ।**

§ ६७१. जो जघन्य हानिका स्वामी है उसीके तदनन्तर समयमें जघन्य वृद्धि होती है, क्योंकि वहाँ पर जघन्यपनेके अविरोधी पल्यके असख्यातवें भागप्रमाण भागहाररूप गुणसंक्रमरूपसे परिणत होनेपर जघन्य वृद्धिकी उपलब्धि होती है ।

*** इसीप्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके भी जघन्य स्वामित्वकी प्ररूपणा करनी चाहिए ।**

§ ६७२. जिस प्रकार सम्यक्त्वके स्वामित्वकी दो प्रकारकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी भी करनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य वृद्धिके स्वामित्वका कथन करते समय द्विचरम उद्वेलनाकाण्डककी अन्तिम फालिको उद्वलनाभागहारके द्वारा संक्रमाकर अनन्तर अगले समयमें सम्यक्त्वको उत्पन्न कर विध्यातसंक्रमके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके जघन्य वृद्धि जाननी चाहिए, क्योंकि गुणसंक्रमसे उत्पन्न हुई वृद्धिकी अपेक्षा विध्यातसंक्रमसे उत्पन्न हुई वृद्धिका अच्छीतरह जघन्यपना बन जाता है । वहाँ पर भी गुणसंक्रम है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि वहाँ पर जो सम्यग्मिथ्यात्व का गुणसंक्रम भागहार होता है वह अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण ही होता है ऐसा उपदेश पाया जाता है । यह अर्थ सूत्रमें नहीं है यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि 'तदनन्तर समयमें जघन्य वृद्धि होती है' इस प्रकार सामान्यरूपसे प्रवृत्त हुए सूत्रमें इस अर्थविशेषकी सम्भावना उपलब्ध होती है ।

॥ अणंताणुबंधीणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ?

§ ६७३. सुगमं।

॥ जहण्णगेण एइंदियकम्मेण विसंजोएदूण संजोइदो, तदो ताव गालिदा जाव तेसिं गलिदसेसाणमधापवत्तणिज्जरा जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी जादा त्ति। केवचिरं पुण कालं गालिदस्स अणंताणुबंधीणमधापवत्तणिज्जरा जहण्णएण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी भवदि ? तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागकालं गालिदस्स जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसो णिज्जरा भवदि। जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी णिज्जरा आवलियाए समयुत्तराए एत्तिएण कालेण होहिदि त्ति तदो मदो एइंदियो जहण्णजोगो जादो। तस्स समयाहियावलियउववण्णस्स अणंताणुबंधीणं जहण्णिया वड्ढी वा हाणी वा अवट्ठाणं वा।

§ ६७४. एदस्स सुत्तस्सत्थपरूवणं कस्सामो। तं जहा—'जहण्णएण एइंदियकम्मेण' त्ति वुत्ते सुहुमेइंदिएसु खविदकम्मंसियलक्खणेण कम्मट्ठिदिमणुपालेमाणेण संचिदजहण्णदव्वस्स गहणं कायव्वं, तत्तो अण्णस्स एइंदियजहण्णकम्मस्साणुवलंभादो। तेण सह

---

* अनन्तानुबन्धियोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान किसके होता है ?

§ ६७३. यह सूत्र सुगम है।

* जो एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ अनन्तानुबन्धीकी विसंयोजना कर उससे संयुक्त हुआ। अनन्तर उसने गलित शेष उनकी निर्जराके एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य समयप्रबद्धके समान होने तक उन्हें गलाया। कितने समय तक गलाये गये अनन्तानुबन्धियोंकी अधःप्रवृत्त निर्जरा एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य समयप्रबद्धके सदृश होती है ? एकेन्द्रियोंमें आनेके बाद पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक गलाये गये अनन्तानुबन्धियोंकी निर्जरा एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य समयप्रबद्धके समान होती है। किन्तु एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य समयप्रबद्धके समान यह निर्जरा एक समय अधिक एक आवलि कालके बाद होगी कि वह मरा और जघन्य योगसे युक्त एकेन्द्रिय हो गया उसके उत्पन्न होनेके एक समय अधिक एक आवलिके बाद अनन्तानुबन्धियोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि या जघन्य अवस्थान होता है।

§ ६७४. अब इस सूत्रके अर्थका कथन करते हैं। यथा—'जहण्णएण एइंदियकम्मेण' ऐसा कहने पर सूक्ष्म एकेन्द्रियोंमें क्षपितकर्मांशिक लक्षणरूपसे कर्मस्थितिका पालन करनेवाले जीवके द्वारा संचित हुए जघन्य द्रव्यका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उसके सिवा अन्य जीवके एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य कर्म उपलब्ध नहीं होता। इस प्रकार उस द्रव्यके साथ आकर और

---

१. आप्रतौ वड्ढी कस्स ता०प्रतौ वड्ढी [हाणी अवट्ठाणं च] कस्स इति पाठः।

आगंतूण पंचिंदिए समयाविरोहेणुप्पज्जिय सव्वलहुं सम्मत्तं घेत्तूणाणंताणुबंधीणं विसंजोयणापुव्वमंतोमुहुत्तेण पुणो वि संजुत्तो जादो। किमट्ठमेत्थ विसंजोयणापुव्वं पुणो संजुत्तभावो कीरदे ? ण, अणंताणुबंधीणं विसंजोयणाए णिस्संतीभावं कादूण पुणो संजुत्तस्स थोवयरदव्वं घेत्तूण जहण्णसामित्तविहाणट्ठं तहाकरणादो। जइ एवं, एइंदियजहण्णसंतकम्मावलंबणमणत्थयं, विसंजोएदूण विणासिज्जमाणाणमणंताणुबंधीणं संतकम्मस्स जहण्णभावे फलविसेसाणुवलंभादो ? ण एस दोसो, सेसकसाएहिंतो अधापवत्तसंकमेण पडिच्छिज्जमाणदव्वस्स जहण्णभावविहाणट्ठमेइंदियजहण्णसंतकम्मावलंबणादो। 'तदो ताव गालिदा० सरिसी जादा' त्ति एदस्सत्थो—तदो विसंजोयणापुव्वसंजोगादो अणंतरमेइंदिएसु पविसिय ताव गालिदा अणंताणुबंधिणो जाव तेसिं गलिदावसिट्ठाणमधापवत्तणिज्जरा अधट्ठिदिणिज्जरा जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण जहण्णोववादजोगपडिबद्धेण समाणा जादा त्ति। एतदुक्तं भवति—विसंजोयणापुव्वसंजोगेणेइंदिएसु पविट्ठस्स अणंताणुबंधीणमधट्ठिदिणिज्जरा एइंदियसयपबद्धादो थोवयरा होंति ताव गालेयव्वा जाव पडिसमयमेइंदियसंचयवसेण अहिकयगोवुच्छाविसये जहण्णएण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसत्तं पत्ता

पञ्चेन्द्रियोंमें समयके अविरोध पूर्वक उत्पन्न होकर तथा अतिशीघ्र सम्यक्त्वको ग्रहण कर अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजनापूर्वक अन्तर्मुहूर्तमें पुनः उनसे संयुक्त हुआ।

शंका—यहाँ पर विसंयोजनापूर्वक पुनः संयुक्त किसलिए कराया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अनन्तानुबन्धियोंकी विसंयोजना द्वारा उन्हें निःसत्त्व करके पुनः संयुक्त हुए जीवके स्तोकतर द्रव्यको ग्रहण कर जघन्य स्वामित्वका विधान करनेके लिए इस प्रकार किया है।

शंका—यदि ऐसा है तो एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मका अवलम्बन करना निरर्थक है, क्योंकि विसंयोजना करके विनाशको प्राप्त होनेवाली अनन्तानुबन्धियोंके सत्कर्मके जघन्यपनेमें विशेष फल नहीं उपलब्ध होता ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि शेष कषायोंमेंसे अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा संक्रमित होनेवाले द्रव्यको जघन्य करनेके लिए एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मका अवलम्बन लिया है।

'तदो ताव गालिदा० सारिसी जादा' इसका अर्थ—'तदो' अर्थात् विसंयोजनापूर्वक संयोगके बाद एकेन्द्रियोंमें प्रवेश कराकर अनन्तानुबन्धियोंको तबतक गलाया जब जाकर गलितावशिष्ट उनकी अधःप्रवृत्त निर्जरा अर्थात् अधःस्थितिगलनरूप निर्जरा जघन्य उपपादयोगके सम्बन्धसे एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य समयप्रबद्धके समान हो गई। इसका यह तात्पर्य है कि विसंयोजनापूर्वक संयोगके बाद एकेन्द्रियोंमें प्रविष्ट हुए जीवके अनन्तानुबन्धियोंकी अधःस्थितिगलनरूप निर्जरा एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धसे स्तोकतर होती है, इसलिए उन्हें तब तक गलाना चाहिए जब जाकर प्रत्येक समयमें एकेन्द्रियोंमें हुए सञ्चयके कारण अधिकृत गोपुच्छाका आश्रय कर वह एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य समयप्रबद्धके समान हो जाती है।

त्ति । किमट्ठमेवं कीरदे चे ? ण, अण्णहा आगम-णिज्जराणं सरिसत्ताभावेण[1] पयदजहण्ण-सामित्तविहाणाणुववत्तीदो ।

§ ६७५. संपहि एइंदिएसु पइट्ठस्स केत्तिएण कालेण आगम-णिज्जराणं सरिसत्त-संभवो होइ ? एदिस्से पुच्छाए णिण्णयविहाणट्ठमुत्तरो सुत्तावयवो—'तदो पलिदोवमस्सा-संखेज्जदिभागकालं गालिदस्स इच्चादि । किं कारणं ? एइंदिएसु तप्पाओग्गपलिदो-वमासंखेज्जभागमेत्तकालावट्ठाणेण विणा आगम-णिज्जराणं सरिसत्तविहाणोवायाभावादो । तम्हा तेत्तियमेत्तं भुजगारकालं गालिय अप्पयरकालसंधीए वट्टमाणस्स अवट्ठिदपाओग्ग-विसए सामित्तविहाणमेदमविरुद्धं सिद्धं । एवमवट्ठिदपाओग्गं जहण्णसंतकम्मं कादूण तत्थ जहण्णसामित्ताणुगमे कीरमाणे एसो विसेसो अणुगंतव्वो त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तर सुत्तावयव-कलावो—'जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी णिज्जरा आवलियाए समयुत्तराए' इच्चादि । एदस्सावयवत्थो सुगमो । किमट्ठमेवं जहण्णोववादजोगेण परिणामिज्जदे ? ण, अण्णहा सामित्तसमयभाविणीए जहण्णणिज्जराए सह विवक्खियसमयपबद्धस्स सरिसभावा-णुववत्तीदो । ण च ताणं सव्वजहण्णभावेण सरिसत्ताभावे पयदजहण्णसामित्तविहाणसंभवो,

शंका—ऐसा किसलिए करते हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्यथा आय और व्ययके समान न होनेके कारण प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान नहीं बन सकता ।

§ ६७५. अब एकेन्द्रियोंमें प्रविष्ट हुए इस जीवके कितने कालके द्वारा आय और व्ययका सदृशपना सम्भव है ऐसी पृच्छा होने पर निर्णयका विधान करनेके लिए आगेका सूत्र अवयव आया है—'तदो पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागं कालं गालिदस्स' इत्यादि । क्योंकि एकेन्द्रियोंमें तत्प्रायोग्य पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक अवस्थान हुए बिना आय और व्ययके सदृशपनेके विधानका अन्य कोई उपाय नहीं पाया जाता । इसलिए उतने मात्र भुजगार कालतक गला कर अल्पतर कालकी सन्धिमें विद्यमान हुए जीवके अवस्थितपदके योग्य द्रव्यके होनेपर यह स्वामित्वका विधान अविरुद्ध सिद्ध होता है । इस प्रकार अवस्थितपदके योग्य जघन्य सत्कर्मको करके वहाँ पर जघन्य स्वामित्वका अनुगम करने पर यह विशेष जानने योग्य है यह कथन करनेके लिए आगेका सूत्रावयवकलाप आया है—'जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी णिज्जरा अवलियाए समयुत्तराए' इत्यादि । इस अवयवका अर्थ सुगम है ।

शंका—इस प्रकार जघन्य उपपाद योगरूपसे किसलिए परिणमाया जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्यथा स्वामित्वके समयमें होनेवाली जघन्य निर्जराके साथ विवक्षित समयप्रबद्धकी सदृशता नहीं बन सकती, इसलिए इस जीवको जघन्य उपपाद योगरूपसे परिणमाया है । यदि कहा जाय कि उनका सबसे जघन्यरूपसे सदृशपना नहीं होने पर भी प्रकृत जघन्य स्वामित्वका विधान सम्भव है सो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि इसका निषेध है ।

१. आ० प्रतौ सरिसत्ताभागेण ता० प्रतौ सरिसत्ताभागे (वे) ण इति पाठः ।

णिप्पडिसेहादो। तदो एवंविहेण पयत्तविसेसेण तत्थ बंधं कादूण बंधावलियादिक्कंतस्स पयदजहण्णसामित्तं होइ। संपहि कथमेत्थ जहण्णवड्डि-हाणि-अवट्ठाणाणि जादाणि त्ति एदस्स णिण्णयकरणट्ठमिदं वुच्चदे—एवमवट्ठिदसंकमपाओग्गे एदम्मि विसये जइ आगमदो णिज्जरा एगसंतकम्मपक्खेवेणूणा होइ तो जहण्णवड्ढिसामित्तमेत्थ होइ। जइ पुण आगमदो णिज्जरा एगसंतकम्मपक्खेवमेत्तेणब्भहिया होइ तो जहण्णिया हाणी जायदे। एवं वड्ढि-हाणीणमण्णदरपज्जाएण परिणदस्स से काले तत्तियं चेव संकामेमाणयस्स जहण्णयमवट्ठाणं होइ त्ति घेत्तव्वं। एत्थ संतकम्मपक्खेवपमाणं पुरदो भणिस्सामो। एवमणंताणुबंधीणं जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणसामित्तं परूविय संपहि अट्ठकसाय-भय-दुगुंछाणं तप्परूवणट्ठमुत्तरमुत्तपबंधमाह—

❀ अट्ठण्हं कसायाणं भय-दुगुंछाणं च जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ?

§ ६७६. सुगमं।

❀ एइंदियकम्मेण जहण्णेण संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो, तेणेव चत्तारि वारे कसायमुवसामिदा। तदो एइंदिए गदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागं कालमच्छिऊण उवसामयसमयपबद्धेसु गलिदेसु जाधे

इसलिए इस प्रकारके प्रयत्न विशेषसे वहाँ पर बन्ध करके बन्धावलिके बाद उसके प्रकृत जघन्य स्वामित्व होता है। अब यहाँ पर जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान कैसे हुए इस प्रकार इस बातका निर्णय करनेके लिए कहते हैं—इस प्रकार अवस्थित संक्रमके योग्य इस विषयमें यदि आयकी अपेक्षा निर्जरा एक सत्कर्म प्रक्षेप न्यून होती है तो यहाँ पर जघन्य वृद्धिका स्वामित्व होता है। यदि आयकी अपेक्षा निर्जरा एक सत्कर्म प्रक्षेपमात्र अधिक होती है तो जघन्य हानि उत्पन्न होती है। तथा इस प्रकार वृद्धि और हानिमेंसे किसी एक पर्यायसे परिणत हुए जीवके तदनन्तर समयमें उतना ही संक्रम करनेपर जघन्य अवस्थान होता है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए। यहाँ पर सत्कर्मके प्रक्षेपका जो प्रमाण है वह आगे कहेंगे। इस प्रकार अनन्तानुबन्धियों की जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानका कथन कर अब आठ कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानका कथन करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

*** आठ कषाय, भय और जुगुप्साकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान किसके होता है ?**

§ ६७६. यह सूत्र सुगम है

*** कोई एक जीव एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मके साथ संयमासंयम और संयमको बहुत बार प्राप्त हुआ। उसीने चार बार कषायोंका उपशम किया। तदनन्तर एकेन्द्रियोंमें गया और वहाँ पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक रहकर उपशामक**

बंधेण णिज्जरा सरिसो भवदि ताधे एदेसिं कम्माणं जहण्णिया वड्ढी च हाणी च अवट्ठाणं च।

§ ६७७. एदस्स सुत्तस्सत्थो। तं जहा—'जहण्णेणेइंदियकम्मेण' त्ति णिद्देसो खविदकम्मंसियलक्खणेणागदएइंदियस्स जहण्णसंतकम्मगहणफलो। 'संजमासंजमं च बहुसो गदो' त्ति वयणमेइंदिएसु खविदकम्मंसियलक्खणेण कम्मट्ठिदिमणुपालेदूण तत्तो णिस्सरिय तसेसुप्पण्णस्स सव्वुक्कस्ससंजमासंजम-संजमपरिणामणिबंधणगुणसेढिणिज्जराए जहण्णेइंदियसंतकम्मस्स सुट्ठु जहण्णीकरणट्ठमिदं दट्ठव्वं। एदेण पलिदोवमाणं असंखेज्ज-भागमेत्तसंजमासंजमकंडयाणं तप्पाओग्गसंखेज्जसंजमकंडयाणं च संभवो सूचिदो। एत्थ सम्मत्ताणंताणुबंधिविसंजोयणकंडयाणं पि अंतब्भावो वत्तव्वो। 'चत्तारि वारे कसाया उवसामिदा' त्ति णिद्देसेण उवसामयपरिणामणिबंधणबहुकम्मपोग्गलणिज्जराए संगहो कओ दट्ठव्वो। एवं पयदकम्माणं बहुपोग्गलगालणं कादूण तदो एइंदिए गदो। किमट्ठमेसो एइंदिएसु पवेसिदो? ण, तत्थ पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तअप्पयरकालब्भंतरे चिराणसंतकम्मेण सह उवसामग-समयपबद्धेसु अगालिदेसु जहण्णयरसंतकम्मस्सुप्पत्तीदो। एवमुवसामयसमयपबद्धे

अवस्थासम्बन्धी समयप्रबद्धके गला देनेपर जब बन्धसे निर्जरा समान होती है तब इन कर्मोंकी जघन्य वृद्धि, जघन्य हानि और जघन्य अवस्थान होता है।

§ ६७७. अब इस सूत्रका अर्थ कहते हैं। यथा—सूत्रमें 'जहण्णेणेइंदियकम्मेण' इस पदका निर्देश क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे आये हुए एकेन्द्रिय जीवके जघन्य सत्कर्मके ग्रहण करनेके लिए किया है। 'संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो' यह वचन एकेन्द्रिय जीवोंमें क्षपितकर्मांशिक लक्षणके साथ कर्मस्थितिका पालन कर फिर वहाँसे निकलकर त्रसोंमें उत्पन्न हुए जीवके सबसे उत्कृष्ट संयमासंयम और संयमरूप परिणामोंके निमित्तसे होनेवाली गुणश्रेणिनिर्जराके द्वारा एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य सत्कर्मको अच्छी तरह जघन्य करनेके लिए जानना चाहिए। इस वचनके द्वारा पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण संयमासंयमकाण्डक और तत्प्रायोग्य संख्यात संयमकाण्डक सम्भव हैं यह सूचित किया गया है। यहाँ पर सम्यक्त्वके काण्डकोंका और अनन्तानुबन्धीके विसंयोजनाकाण्डकोंका अन्तर्भाव कहना चाहिए। 'चत्तारि वारे कसाया उवसामिदा' इस वचन द्वारा उपशामक सम्बन्धी परिणामोंके कारण हुई बहुत कर्मोंकी निर्जराका संग्रह किया गया है ऐसा जानना चाहिए। इस प्रकार प्रकृत कर्मोंके बहुत पुद्गलोंको गलाकर उसके बाद एकेन्द्रियोंमें गया।

शंका—इसे एकेन्द्रियोंमें किसलिए प्रविष्ट कराया है?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रकृतमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अल्पतर कालके भीतर प्राचीन सत्कर्मके साथ उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंके अगालित रहने पर जघन्यतर

गालिय जत्थ जहण्णएण एइंदियसमयबद्धेण सरिसी णिज्जरा होइ तत्थ जहण्णसामित्त-विहासणट्ठमिदमाह—'जाधे बंधेण सरिसी णिज्जरा हवइ ताधे' इच्चादि। एदस्सत्थो—उवसामयसमयपबद्धेसु गलिदेसु जाधे सामित्तसमयादो समयुत्तरावलियमेत्तमोसक्किऊण बद्धतप्पाओग्गजहण्णेइंदियसमयपबद्धेण सामित्तसमकालभाविणी णिज्जरा सरिसी भवदि ताधे एदेसिं पयदकम्माणं जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणि होंति, एगसंतकम्मपक्खेव-णिबंधणजहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणमेत्थ दंसणादो।

❀ चदुसंजलणाणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ?

§ ६७८. सुगमं।

❀ कसाए अणुवसामेऊण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण एइंदिए गदो। जाधे बंधेण णिज्जरा तुल्ला ताधे चदुसंजलणस्स जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च।

§ ६७९. किमट्ठमेत्थ चदुक्खुत्तो कसायोवसामणं ण इच्छिज्जदे ? ण, उवसमसेढीए चदुसंजलणाणं बंधसंभवेण सेसाबज्झमाणपयडीणं गुणसंकमपडिग्गहे तत्थ पयदोवजोगि-

---

सत्कर्मकी उत्पत्ति नहीं हो सकती, इसलिए उक्त जीवको एकेन्द्रियोंमें प्रविष्ट कराया है।

इस प्रकार उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंको गला कर जहाँ पर एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य समयप्रबद्धके समान निर्जरा होती है वहाँ पर जघन्य स्वामित्वका व्याख्यान करनेके लिए यह वचन कहा है—'जाधे बंधेण सरिसी णिज्जरा हवइ ताधे, इत्यादि। इसका अर्थ—उपशामकसम्बन्धी समयप्रबद्धोंके गला देने पर जब स्वामित्वके समयसे एक समय अधिकआवलि मात्र पीछे जाकर बन्धको प्राप्त हुए एकेन्द्रिय सम्बन्धी तत्प्रायोग्य जघन्य समयप्रबद्धके समान स्वामित्वके कालमें होनेवाली निर्जरा होती है तब इन प्रकृत कर्मोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होते हैं, क्योंकि एक सत्कर्मप्रक्षेपनिमित्तक जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान यहाँ पर देखे जाते हैं।

*** चार संज्वलनोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान किसके होता है ?**

§ ६७८. यह सूत्र सुगम है।

*** कषायोंका उपशम किये बिना अनेक बार संयम और संयमासंयमको प्राप्त कर एकेन्द्रिय पर्यायमें मर कर उत्पन्न हुआ। वहाँ जब बन्धके समान निर्जरा होती है तब चार संज्वलनोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होता है।**

§ ६७९. शंका—यहाँ पर चार बार कषायोंकी उपशमक्रिया किसलिए स्वीकार नहीं की गई है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि उपशमश्रेणिमें चारों संज्वलनोंका बन्ध सम्भव होनेसे नहीं बँधनेवाली शेष प्रकृतियोंका गुणसंक्रमके द्वारा प्रतिग्रह होने पर वहाँ पर प्रकृतमें उपयोगी फलविशेष

फलविसेसाणुवलद्धीदो। ण तत्थ गुणसेढिणिज्जराए बहुदव्वविणासो आसंकणिज्जो, तत्तो गुणसंकमेण पडिच्छिज्जमाणदव्वस्सासंखेज्जगुणत्तदंसणादो। तदो सइं पि कसाए अणुवसामेदूण सेसगुणसेढिणिज्जराहिं बहुसो परिणामिऊण पुणो एइंदिएसु गदस्स खविदकम्मंसियस्स पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तकालेण गालिदासेसगुणसेढिणिज्जराकालब्भंतरसंगलिदसमयपबद्धस्स जाधे संकमपाओग्गभावेण ढुक्कमाणतप्पाओग्गजहण्णेइंदियसमयपबद्धेण सह सरिसी णिज्जरा जादा ताधे चदुण्हं संजलणाणं जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणसामित्ताहिसंबंधो त्ति सुसंबद्धमेदं सुत्तं।

❀ पुरिसवेदस्स जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ?

§ ६८०. सुगमं।

❀ जम्हि अवट्ठाणं तम्हि तप्पाओग्गजहण्णएण कम्मेण जहण्णिया वड्ढी वा हाणी वा अवट्ठाणं वा।

§ ६८१. जम्हि विसये पुरिसवेदपदेससंकमस्सावट्ठाणसंभवो तम्हि तप्पाओग्गजहण्णएण कम्मेण सह वट्टमाणयस्स पयदजहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणसामित्तसंबंधो दट्ठव्वो। किं कारणं ? अवट्ठिदपाओग्गविसये असंखेज्जलोगपडिभागेण जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणमुवलंभे विरोहाभावादो। सेसं सुगमं।

उपलब्ध नहीं होता और इसलिए वहाँ पर गुणश्रेणि निर्जराके द्वारा बहुत द्रव्यके विनाशकी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि उससे गुणसंक्रमके द्वारा प्रतिग्रहरूपसे प्राप्त होनेवाला द्रव्य असंख्यातगुणा देखा जाता है। इसलिए एक बार भी कषायोंको नहीं उपशमा कर तथा शेष द्रव्यको गुणश्रेणि निर्जराके द्वारा बहुत बार परिणमा कर पुनः एकेन्द्रियोंमें मर कर उत्पन्न हुए उस क्षपितकर्मांशिक जीवके पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालके द्वारा निर्जीर्ण की गई समस्त गुणश्रेणिनिर्जराओंके कालके भीतर समयप्रबद्धोंको निर्जीर्ण करने पर जब संक्रमके योग्यरूपसे प्राप्त होनेवाले तत्प्रायोग्य एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धके समान निर्जरा होती है तब चारों संज्वलनोंकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वका सम्बन्ध होता है इसलिए यह सूत्र सुसम्बद्ध है।

* पुरुषवेदकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान किसके होता है ?

§ ६८०. यह सूत्र सुगम है।

* जहाँ पर अवस्थान होता है वहाँ पर तत्प्रायोग्य जघन्य कर्मके साथ जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान होता है।

§ ६८१. जिस विषयमें पुरुषवेदके प्रदेशसंक्रमका अवस्थान सम्भव है वहाँ पर तत्प्रायोग्यजघन्य कर्मके साथ विद्यमान हुए जीवके प्रकृत जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके स्वामित्वका सम्बन्ध जान लेना चाहिए, क्योंकि अवस्थितपदके योग्य विषयमें असंख्यात लोकप्रमाण प्रतिभागके कारण जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानके प्राप्त होनेमें कोई विरोध नहीं आता। शेष कथन सुगम है।

❀ हस्स-रदीणं जहण्णिया वड्ढी कस्स ?

§ ६८२. सुगममेदं पुच्छावक्कं। णवरि हाणिविसया वि पुच्छा एत्थेव णिलीणा त्ति दट्ठव्वा, दोण्णमेगपघट्टएण सामित्तणिद्देसदंसणादो।

❀ एइंदियकम्मेण जहण्णएण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामेऊण एइंदिए गदो, तदो पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागं कालमच्छिऊण सण्णी जादो। सव्वमहंतिमरदि-सोगबंधगद्धं कादूण हस्स-रईओ पबद्धाओ पढमसमयहस्स-रइ-बंधगस्स तप्पाओग्गजहण्णओ बंधो च आगमो च, तस्स आवलियहस्स-रइबंधमाणयस्स जहण्णिया हाणी।

§ ६८३. एत्थ जहण्णेइंदियकम्मावलंबणे बहुसो संजमासंजमादिपडिलंभे चदुक्खुत्तो कसायोवसामणापरिणामे पुणो एइंदिएसु पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तप्पदर-कालावट्ठाणे च पुव्वं व १पयोजणुवण्णणं कायव्वं, विसेसाभावादो। तदो सण्णी जादो। किमट्ठमेसो पुणो वि सण्णीसुप्पाइदो ? ण, सव्वमहंत्तिं पडिवक्खबंधगद्धं तत्थ गालेदूण

---

* हास्य और रतिकी जघन्य वृद्धि किसके होती है ?

§ ६८२. यह पृच्छावचन सुगम है। किन्तु इतनी विशेषता है कि हानिविषयक पृच्छा भी इसी सूत्रमें गर्भित है ऐसा जानना चाहिए, क्योंकि दोनोंका एक ही रचना द्वारा स्वामित्वका निर्देश देखा जाता है।

* कोई एक जीव एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य कर्मके साथ संयमासंयम और संयमको बहुत बार प्राप्त कर तथा चार बार कषायोंको उपशमाकर एकेन्द्रिय पर्यायमें गया। तदनन्तर पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण कालतक रह कर संज्ञी हो गया। वहाँ अरति शोकके सबसे बड़े बन्धककालको करके हास्य-रतिका बन्ध किया। हास्य और रतिका बन्ध करनेवाले उसके प्रथम समयमें जघन्य बन्ध है और अन्य प्रकृतियोंमेंसे संक्रमित होनेवाले द्रव्यकी आय है। एक आवलि काल तक हास्य-रतिका बन्ध करनेवाले उस जीवके जघन्य हानि होती है।

§ ६८३. यहाँ पर एकेन्द्रियसम्बन्धी जघन्य कर्मका अवलम्बन करने पर उसने बहुत बार संयमासंयम आदि की प्राप्ति की, चारबार कषायोंका उपशम किया, पुनः एकेन्द्रियोंमें पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण अल्पतर कालतक अवस्थित रहा इन सबका पूर्वके समान वर्णन करना चाहिए, क्योंकि इसमें कोई विशेषता नहीं है। उसके बाद संज्ञी हो गया।

शंका—इसे पुनः संज्ञियोंमें किसलिए उत्पन्न कराया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि वहाँ पर सबसे बड़े प्रतिपक्ष बन्धक कालको गलाकर गलकर शप

---

१ आ॰प्रतौ पयोजणाणुव- ता॰ प्रतौ पयोज [णा] णुव इति पाठः।

गलिदावसेसजहण्णसंतकम्मावलंबणेण पयदसामित्तविहाणट्ठं तहा करणादो। एइंदिएसु चेव पडिवक्खबंधगद्धा किण्ण गालिदा? ण, एइंदियपडिवक्खबंधगद्धादो सण्णिपंचिंदिएसु पडिवक्खबंधगद्धाए संखेज्जगुणत्तुवलंभादो। कुदो एदमवगम्मदे? 'सव्वत्थोवा एइंदियाणमरदि-सोगबंधगद्धा। बीइंदिय० बंधगद्धा संखेज्जगुणा। एवं तीइंदिय०-चउरिंदिय०-असण्णि०-सण्णि० बंधगद्धाओ जहाकमं संखेज्जगुणाओ' त्ति एदम्हादो अप्पाबहुगादो। तदो एवंविहपडिवक्खबंधगद्धं गालेदूण सामित्तविहाणट्ठं सण्णीसुप्पाइदो त्ति दट्ठव्वं। तदेवाह—'सव्वमहंतिमरदि-सोगबंधगद्धं कादूणे' त्ति। सण्णीसु अरदि-सोगबंधगद्धा जहण्णा वि अत्थि उक्कस्सा वि अत्थि। तत्थ सव्वुक्कस्सियमरदि-सोगबंधगद्धं कादूण हस्स-रदीणं पदेसग्गमधट्ठिदीए गालदि त्ति वुत्तं होइ। एवं पडिवक्खबंधगद्धं गालिदूणावट्ठिदस्स पुणो वि सगबंधकालब्भंतरे आवलियमेत्तकालं गालणसंभवो त्ति पदुप्पायट्ठमाह—'हस्स-रदीओ पबद्धाओ' त्ति। हस्स-रदिबंधे पारद्धे णवकबंधवसेण संकमो बहुगो होदि त्ति णासंकणिज्जं, बंधावलियमेत्तकालब्भंतरे णवकबंधपदेसाणं संकमपाओग्गत्ताभावादो। ण च सगबंधपारंभे पडिच्छिज्जमाणदव्वस्स बहुत्तमासंकणिज्जं, तस्स वि आवलियमेत्तकालं संकमाभावदंसणादो। तदो

बचे हुए जघन्य सत्कर्मके अवलम्बन द्वारा प्रकृत स्वामित्वका विधान करनेके लिए उस प्रकारसे किया है।

शंका—एकेन्द्रियोंमें ही प्रतिपक्ष बन्धककालको क्यों नहीं गलाया ?

समाधान—नहीं, क्योंकि एकेन्द्रियोंके प्रतिपक्ष बन्धककालसे संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें प्रतिपक्ष बन्धककाल संख्यातगुणा उपलब्ध होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—एकेन्द्रियोंमें अरति—शोकका बन्धककाल सबसे स्तोक है। उससे द्वीन्द्रियोंमें बन्धककाल संख्यातगुणा है। इस प्रकार त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी जीवोंमें बन्धककाल क्रमसे संख्यातगुणे हैं। इस प्रकार कहे गये काल विषयक अल्पबहुत्वसे जाना जाता है।

इसलिए इस प्रकारके प्रतिपक्ष बन्धककालको गलाकर स्वामित्वका विधान करनेके लिए संज्ञियोंमें उत्पन्न कराया ऐसा जानना चाहिए। यही कहा है—'सव्वमहंतिमरदि-सोगबंधगद्धं कादूण'। संज्ञियोंमें अरति-शोकका बन्धककाल जघन्य भी है और उत्कृष्ट भी है। उसमेंसे अरति-शोकके सर्वोत्कृष्ट बन्धककालको करके हास्य-रतिके प्रदेशाग्रको अधःस्थितिके द्वारा गलाता है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार प्रतिपक्ष बन्धककालको गलाकर अवस्थित हुए जीवके फिर भी अपने बन्धककालके भीतर एक आवलिकाल तक गलना सम्भव है इस बातका कथन करनेके लिए कहा है—'हस्स-रदीओ पबद्धाओ।' हास्य-रतिका बन्ध प्रारम्भ होने पर नवकबन्धके कारण संक्रम बहुत होता है ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि बन्धावलिमात्र कालके भीतर नवकबन्धके प्रदेश संक्रमके योग्य नहीं होते। अपने बन्धका प्रारम्भ होने पर प्रतिग्राह्यमान द्रव्य बहुत होता है ऐसी भी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उसका भी एक आवलिकाल

सगबंधपारंभादो आवलियचरिमसमये वट्टमाणस्स जहण्णसामित्तविहाणमेदं[1] णिरवज्जं ।

§ ६८४. तत्थ वि पढमसमयहस्स-रदिबंधगम्मि को वि विसेसो अत्थि त्ति पदुप्पायणट्ठमाह—'पढमसमयहस्स-रदिबंधगस्स' इच्चादि । किमट्ठमेत्थतणबंधो अधापवत्त-संकमेण पडिच्छिज्जमाणसेसपयडिदव्वागमो च जहण्णो इच्छिज्जदे ? ण, अण्णहा वड्ढि-सामित्तस्स जहण्णभावाणुववत्तीदो । तदो वड्ढिसामित्तं पडुच्च वुत्तमेदं ति दट्ठव्वं । हाणिसामित्तविवक्खाए पुण तत्थतणबंधागमाणं जहण्णुक्कस्सभावेण किंचि पयदोवजोगफल-मत्थि, तब्बंधावलियचरिमसमए चेव हाणिसामित्तस्स जहण्णभावविहाणादो । यदाह—'तस्स आवलियहस्स-रदिबंधमाणगस्स जहण्णिया हाणि' त्ति । किं कारणं ? एत्तो उवरिमसग-बंधमाहप्पेण वड्ढिविसये हाणिसामित्तविहाणाणुववत्तीदो ।

❀ तस्सेव से काले जहण्णिया वड्ढी ।

§ ६८५. तस्सेवाणंतरणिद्दिट्ठहाणिसामियस्स तदणंतरसमए जहण्णिया वड्ढी होइ । किं कारणं ? पुव्वमाद्दिट्ठजहण्णबंधागमाणं ताधे संकमपाओग्गभावेण ढुक्कमाणंजहण्णवड्ढि-कारणत्तादो । तदो हाणिसामित्तसमयभाविसंकमदव्वे वड्ढिसामित्तसमयसंकमदव्वादो

तक संक्रम नहीं देखा जाता । इसलिए अपने बन्धके प्रारम्भसे लेकर एक आवलिकालके अन्तिम समयमें विद्यमान हुए जीवके यह जघन्य स्वामित्वका विधान निर्दोष है ।

§ ६८४. उसमें भी हास्य-रतिका प्रथम समयमें बन्ध करनेवाले जीवके कुछ विशेषता है इस बातका कथन करनेके लिए कहा है—'पढमसमयहस्स-रदिबंधगस्स' इत्यादि ।

शंका—यहाँ होनेवाला बन्ध और अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा प्रतिग्राह्यमान शेष प्रकृतियोंके द्रव्यका आगमन जघन्य क्यों स्वीकार किया गया है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि अन्यथा वृद्धिका स्वामित्व जघन्य नहीं बन सकता, इसलिए वृद्धिके स्वामित्वको लक्ष्य कर यह कहा है ऐसा जानना चाहिए ।

हानिके स्वामित्वकी विवक्षा होने पर तो वहाँ होनेवाले बन्ध और अधःप्रवृत्तसंक्रम द्वारा प्राप्त होनेवाली आयका जघन्य और उत्कृष्टपना प्रकृतमें कुछ भी उपयोगी फलवाला नहीं है, क्योंकि उसकी बन्धावलिके अन्तिम समयमें ही हानिके स्वामित्वके जघन्यपनेका विधान किया है । इसलिए कहा है—'तस्स आवलियहस्स-रदिबंधमाणगस्स जहण्णिया हाणी ।' क्योंकि इसके आगे अपने बन्धके माहात्म्यवश वृद्धिका स्थल प्राप्त होने पर हानिके स्वामित्वका विधान नहीं बन सकता ।

* उसीके तदनन्तर समयमें जघन्य वृद्धि होती है ।

§ ६८५. जो अनन्तर पूर्व हानिका स्वामी कह आये हैं उसीके तदनन्तर समयमें जघन्य वृद्धि होती है, क्योंकि पूर्वमें कहे गये जो बन्ध और आगम द्रव्य हैं जो कि संक्रम प्रायोग्यरूपसे प्राप्त होनेवाले हैं वे उस समय जघन्य वृद्धिके कारण हैं । इसलिए हानिके स्वामित्वके समयमें होनेवाले संक्रमद्रव्यको वृद्धिके स्वामित्वके समयके संक्रम द्रव्यमेंसे घटा देने पर जो शुद्ध शेष बचे

---

१. आ०प्रतौ मेत्त (दं) इति पाठः ।

सोहिदे सुद्धसेसमेत्तमेत्थ सामित्तविसईकयदव्वं होइ। एत्थ चोदगो भणदि-होउ णाम हाणिसामित्तं चेव, तत्थ पयारंतरासंभवादो। वड्ढिसामित्तं पुण एइंदिएसु सत्थाणे चेव पडिवक्खबंधगद्धं गालिय सगबंधपारंभादो आवलियादीदस्स कायव्वं, तत्थ संकमपाओग्गभावेण ढुक्कमाणतप्पाओग्गजहण्णेइंदियसमयपबद्धस्स पुव्विल्लसामित्तविसयपंचिंदियसमयपबद्धादो असंखेज्जगुणहीणस्स गहणे सुट्ठु जहण्णभावोववत्तीदो त्ति ? ण एस दोसो, परिणामविसेसमस्सिऊणेत्थतणसुद्धसेससंकमदव्वस्स थोवत्तब्भुवगमादो। तं कधं ? एइंदियसंकिलेसादो पंचिंदियस्स संकिलेसो अणंतगुणो होइ, तेण सामित्तसमयादो हेट्ठा समयाहियावलिमेत्तमोसरिदूण जहण्णजोगेण बंधमाणावत्थाए एइंदिएण पडिच्छिज्जमाणदव्वादो पंचिंदिएण पडिच्छिज्जमाणदव्वं थोवयरं चेव होदि त्ति तदणुसारेण सुद्धसेसवड्ढिदव्वं पि तत्थेव थोवयरं होइ। ण च णवकबंधस्सेत्थ पहाणभावो अत्थि, तत्तो असंखेज्जगुणं पडिच्छिज्जमाणदव्वं मोत्तूण तस्स पहाणत्ताणुवलंभादो। अहवा जहण्णहाणिविसयाचेव जहण्णवड्ढी सुत्तयारेणेत्थ विवक्खिया त्ति ण किं चि विरुज्झदे।

❀ अरदि-सोगाणमेवं चेव। णवरि पुव्वं हस्स-रदीओ बंधावेयव्वाओ।

उतना यहाँ पर स्वामित्वरूपसे विषय किया गया द्रव्य होता है।

शंका—यहाँ पर शंकाकार कहता है—हानिका स्वामित्व रहा आवे, क्योंकि वहाँ पर दूसरा प्रकार सम्भव नहीं है। वृद्धिका स्वामित्व तो एकेन्द्रियोंके स्वस्थानमें ही ऐसे जीवके करना चाहिए जिसने प्रतिपक्ष बन्धककालको गलाकर अपने बन्धके प्रारम्भ होनेसे लेकर एक आवलिकाल बिता दिया है, क्योंकि वहाँ पर संक्रमके योग्यरूपसे प्राप्त होनेवाला एकेन्द्रिय सम्बन्धी तत्प्रायोग्य जघन्य समयप्रबद्ध पूर्वमें कहे गये स्वामित्व विषयक पञ्चेन्द्रिय सम्बन्धी समयप्रबद्धसे असंख्यातगुणा हीन होता है, इसलिए उसके ग्रहण करने पर उसका अच्छी तरह जघन्यपना बन जाता है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि परिणाम विशेषका आश्रयकर यहाँ का शुद्ध शेष बचा हुआ संक्रमद्रव्य स्तोक है ऐसा स्वीकार किया गया है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि एकेन्द्रियजीवके संक्लेशसे पञ्चेन्द्रियजीवका संक्लेश अनन्तगुणा होता है, इसलिए स्वामित्व समयसे पूर्व एक समय अधिक एक आवलि पीछे सरक कर जघन्य योगके द्वारा बन्ध होनेकी अवस्थामें एकेन्द्रिय जीवके द्वारा प्रतिग्राह्यमान द्रव्यसे पञ्चेन्द्रिय जीवके द्वारा प्रतिग्राह्यमान द्रव्य स्तोकतर ही होता है अतएव उसके अनुसार शुद्ध शेष वृद्धिरूप द्रव्य भी उस पञ्चेन्द्रियजीवके स्तोकतर होता है और नवकबन्धकी यहाँ पर प्रधानता नहीं है, क्योंकि उससे असंख्यातगुणे प्रतिग्राह्यमान द्रव्यको छोड़कर उसकी प्रधानता नहीं उपलब्ध होती। अथवा सूत्रकारने जघन्य हानिविषयक ही जघन्य वृद्धि यहाँ पर विवक्षित की है इसलिए कुछ भी विरोध नहीं है।

*** अरति और शोक की जघन्य वृद्धि आदिका स्वामित्व इसी प्रकार है। किन्तु इतनी विशेषता है कि पहले हास्य और रतिका बन्ध करावे। तदनन्तर एक आवलि**

तदो आवलियअरदि-सोगबंधगस्स जहण्णिया हाणी । से काले जहण्णिया वड्डी ।

§ ६८६. जहा हस्स-रदीणं जहण्णवड्डि-हाणिसामित्तपरूवणा कया तहा अरदि-सोगाणं पि कायव्वा । णवरि पुव्वमेत्थ हस्स-रदीओ बंधाविय पडिवक्खबंधगद्धागालणं कादूण तदो आवलियअरदि-सोगबंधगद्धम्मि पयदकम्माणं जहण्णहाणिसामित्तं । से काले च पुव्वुत्तेणेव विहिणा जहण्णवड्डिसामित्तमिदि एसो विसेसो सुत्तेणेदेण णिद्दिट्ठो ।

⊛ एवमित्थिवेद-णवुंसयवेदाणं ।

§ ६८७. जहा हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं खविदकम्मंसियस्स पडिवक्खबंधगद्धा-गालणेण सामित्तविहाणं कयं, एवमेदेसिं पि दोण्हं कम्माणं कायव्वं,विसेसाभावादो । णवरि पडिवक्खबंधगद्धागालणाविसये दोण्हं कम्माणं कमविसेसो अत्थि त्ति तप्पदुप्पायणट्ठमुत्तर-सुत्तदयमाह—

⊛ णवरि जइ इत्थिवेदस्स इच्छसि, पुव्वं णवुंसयवेद-पुरिसवेदे बंधावेदूण पच्छा इत्थिवेदो बंधावेयव्वो । तदो आवलियइत्थिवेदबंध-माणयस्स इत्थिवेदस्स जहण्णिया हाणी । से काले जहण्णिया वड्ढी ।

काल तक अरति और शोकका बन्ध करनेवाले जीवके जघन्य हानि होती है और तदनन्तर समयमें जघन्य वृद्धि होती है ।

§ ६८६. जिस प्रकार हास्य और रतिकी जघन्य वृद्धि और हानिका कथन किया है उसी प्रकार अरति और शोकका भी कथन करना चाहिए । किन्तु इतनी विशेपता है कि पूर्वमें यहाँ पर हास्य और रतिका बन्ध कराकर तथा प्रतिपक्ष बन्ध कालको समाप्त कर तदनन्तर एक आवलि प्रमाण अरति और शोकके बन्धककालके अन्तमें प्रकृत कर्मोंकी जघन्य हानिका स्वामित्व होता है । और तदनन्तर समयमें पूर्वोक्त विधिसे ही जघन्य वृद्धिका स्वामित्व होता है इस प्रकार इतनी विशेपता इस सूत्रके द्वारा निदिष्ट की गई है ।

⁕ इसी प्रकार स्त्रीवेद और नपुंसकवेदके स्वामित्वका कथन करना चाहिए ।

§ ६८७. जिस प्रकार क्षपितकर्मांशिक जीवके प्रतिपक्ष बन्धककाल को बितानेके बाद हास्य-रति और अरति-शोकके स्वामित्वका विधान किया है इसी प्रकार इन दोनों कर्मोंका भी विधान करना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेपता नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रतिपक्ष बन्धककालके गलानेके विपयमें दोनों कर्मोंके क्रममें कुछ विशेषता है, इसलिए इसका कथन करनेके लिए आगेके दो सूत्र कहते हैं—

⁕ किन्तु इतनी विशेपता है कि यदि स्त्रीवेदके स्वामित्व कथनकी इच्छा हो तो पूर्वमें नपुंसकवेद और पुरुषवेदका बन्ध कराकर बादमें स्त्रीवेदका बन्ध करावे । इस प्रकार एक आवलिकाल तक स्त्रीवेदका बन्ध करनेवाले जीवके स्त्रीवेदकी जघन्य हानि होती है और तदनन्तर समयमें जघन्य वृद्धि होती है ।

***जदि णवुंसयवेदस्स इच्छसि, पुव्वमित्थिपुरिसवेदे बंधावेदूण पच्छा णवुंसयवेदो बंधावेयव्वो। तदो आवलियणवुंसयवेदबंधमाणयस्स णवुंसयवेदस्स जहण्णिया[1] हाणी से काले जहण्णिया वड्ढी।**

§ ६८८. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि। एत्थ चोदगो भणइ—होउ णाम जहण्णवड्ढिसामित्तमेवं चेव, तत्थ पयारंतरासंभवादो। किंतु जहण्णहाणिसामित्तमेदमित्थि-णवुंसयवेदपडिबद्धं ण घडदे। कुदो? खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण बेछावट्ठिसागरो-वमाणि तिपलिदोवमाहियबेछावट्ठिसागरोवमाणि च जहाकमेण गालिय गलिदसेसजहण्ण-संतकम्ममधापवत्तकरणचरिमसमयम्मि विज्झादसंकमेण संकामेमाणयम्मि सामित्तविहाणे हाणीए सुट्ठु जहण्णभावोवलद्धीदो? एत्थ परिहारो वुच्चदे—सच्चमेदं, ओघजहण्णसामित्ते विवक्खिए एवं चेव होदि त्ति इच्छिज्जमाणत्तादो। किंतु आदेसजहण्णसामित्तविवक्खाए पयट्टमेदं सुत्तमिदि ण किंचि विरुज्झदे, अप्पिदाणप्पिदसिद्धीए सव्वत्थ पडिसेहाभावादो। किमिदि तदविवक्खा चे? जहण्णवड्ढिसंभवविसये चेव जहण्णहाणिसामित्तविहाणाहिप्पाएण

* यदि नपुंसकवेदके जघन्य स्वामित्वको लानेकी इच्छा हो तो पहले स्त्रीवेद और पुरुषवेदका बन्ध कराकर बादमें नपुंसकवेदका बन्ध करावे। इस प्रकार एक आवलि काल तक नपुंसकवेदका बन्ध करनेवाले जीवके नपुंसकवेदकी जघन्य हानि होती है और तदनन्तर समयमें जघन्य वृद्धि होती है।

§ ६८८. ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं।

शंका—यहाँ पर शंकाकार कहता है कि जघन्य वृद्धिका स्वामित्व इसी प्रकार होओ, क्योंकि उस विषयमें अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। किन्तु स्त्रीवेद और नपुंसकवेदसे सम्बन्ध रखने वाला यह जघन्य हानिका स्वामित्व घटित नहीं होता, क्योंकि क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे आकर तथा क्रमसे दो छयासठ सागर और तीन पल्य अधिक दो छयासठ सागर कालको बिताकर गलाकर शेष बचे जघन्य सत्कर्मको अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विध्यातसंक्रमके द्वारा संक्रमित कराने पर स्वामित्वका विधान करने पर हानिका अच्छी तरह जघन्य स्वामित्व उपलब्ध होता है?

समाधान—यहाँ पर परिहारका कथन करते हैं—यह सत्य है, ओघ जघन्य स्वामित्वकी विवक्षा होने पर इसी प्रकार होता है, क्योंकि यह स्वीकार है। किन्तु आदेश जघन्य स्वामित्वकी विवक्षामें यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है, इसलिए कुछ भी विरोध नहीं है, क्योंकि अर्पित और अनर्पितकी सिद्धिका सभी जगह निषेध नहीं है।

१. आ०-दि०प्रत्योः माणयस्स जहण्णिया ता०प्रतौ माणयस्स [णवुंसयवेदस्स] जहण्णिया इति पाठः।

तव्विवक्खा ण कया सुत्तयारेण, सेससव्वकम्मेसु तहा चेव जहण्णसामित्तपवुत्तिदंसणादो। एवमोघेण सव्वकम्माणं जहण्णसामित्तं परूविदं। एत्तो आदेसपरूवणा च जाणिय कायव्वा।

तदो सामित्तं समत्तं।

❀ अप्पाबहुअं।

§ ६८९. अहियारपरामरसवक्कमेदं। तं पुण दुविहमप्पाबहुगं जहण्णुक्कस्सभेएण। तत्थुक्कस्सप्पाबहुगं ताव वत्तइस्सामो त्ति जाणावणट्ठमिदमाह —

❀ उक्कस्सयं ताव।

§ ६९०. जहण्णुक्कस्सप्पाबहुगाणमक्कमेण परूवणा ण संभवदि त्ति उक्कस्सप्पाबहुअपरूवणाविसयमेदं पइण्णावक्कं। तस्स दुविहो णिद्देसो ओघादेसभेएण। तत्थोघेण ताव सव्वकम्माणमप्पाबहुअपरूवणट्ठमुत्तरसुत्तपबंधमाह—

❀ मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवमुक्कस्सयमवट्ठाणं।

शंका—उसकी अविवक्षा यहाँ पर क्यों की गई है ?

समाधान—क्योंकि जघन्य वृद्धिके सम्भव स्थल पर ही जघन्य हानिके स्वामित्वके कथन करनेके अभिप्रायसे ही सूत्रकारने उसकी विवक्षा नहीं की है तथा शेष सब कर्मोंमें उसी प्रकारसे जघन्य स्वामित्वकी प्रवृत्ति देखी जाती है।

इस प्रकार ओघसे सब कर्मोंके जघन्य स्वामित्वका कथन किया। आगे आदेशप्ररूपणा जानकर लेनी चाहिए।

इसके बाद स्वामित्व समाप्त हुआ।

* अल्पबहुत्वका अधिकार है।

§ ६८९. अधिकारका परामर्श करानेवाला यह वचन सुगम है। जघन्य और उत्कृष्ट के भेदसे वह अल्पबहुत्व दो प्रकारका है। उनमेंसे सर्व प्रथम उत्कृष्ट अल्पबहुत्वको बतलावेंगे इस प्रकार इस बातका ज्ञान करानेके लिए यह वचन कहा है—

* सर्व प्रथम उत्कृष्ट अल्पबहुत्वका अधिकार है।

§ ६९०. जघन्य और उत्कृष्ट अल्पबहुत्वोंकी प्ररूपणा एक साथ करना सम्भव नहीं है, इसलिए उत्कृष्ट अल्पबहुत्वकी प्ररूपणाको विषय करनेवाला यह प्रतिज्ञावाक्य है। ओघ और आदेशके भेदसे उसका निर्देश दो प्रकारका है। उनमेंसे सर्व प्रथम ओघ अल्पबहुत्वका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र प्रबन्ध कहते हैं—

* मिथ्यात्वका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है।

§ ६६१. कुदो ? एयसमयपबद्धासंखेज्जदिभागपमाणत्तादो। तं जहा—गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागदपुव्वुप्पण्णसम्मत्तमिच्छाइट्ठिस्स सम्मत्तपडिवण्णस्स पढमावलियविदियसमये वट्टमाणस्स असंकमपाओग्गभावेणुदयावलियं पविसमाणगोवुच्छदव्वं पढमसमयविज्झादसंकमदव्वसहिदं थोवूणमेगसमयपबद्धमेत्तं होइ, तत्थेव संकमपाओग्गभावेण ढुक्कमाणं सयलेयसमयपबद्धमेत्तं होइ। एवं होइ त्ति कादूण संकमपाओग्गभावेण गददव्वमेत्तं संकमपाओग्गं होदूणागच्छमाणसमयपबद्धम्मि घेत्तूण चिराणसंतकम्मस्सुवरि पक्खिविय विज्झादभागहारेण भाजिदे भागलद्धं पढमसमयसंकामिददव्वमेत्तं चेव बिदियसमयसंकमदव्वं होइ। पुणो सेसमसंखेज्जदिभागं पि तेणेव भागहारेण संकामेदि त्ति विज्झादभागहारेण भाजिदे भागलद्धमसंखेज्जदिभागस्स वि असंखेज्जभागमेत्तं होदूण बिदियसमयवड्डिदव्वं होदि। एवं बिदियसमए वड्डिऊण पुणो तदियसमयम्मि तत्तियमेत्तं चेव संकामिदे वड्डिदव्वमेत्तं चेव उक्कस्सावट्ठाणविसेसिददव्वं होइ। तदो सव्वत्थोवमेदं ति सिद्धं।

§ ६६२. अहवा जइ वि एगसमयपबद्धस्सासंखेज्जाणं भागाणमसंखेज्जदिभागमेत्तमवट्ठिददव्वं होइ तो वि सव्वत्थोवत्तमेदस्स ण विरुज्झदे। तं कधं ? पुव्वुप्पण्ण-

§ ६६१. क्योंकि वह एक समयप्रबद्धका असंख्यातवें भागप्रमाण है। यथा—जो गुणित कर्मांशिकलक्षणसे आया है और जिसने पूर्वमें सम्यक्त्वको उत्पन्न किया है ऐसे मिथ्यादृष्टि जीवके सम्यक्त्वको प्राप्त होने पर प्रथम आवलिके दूसरे समयमें विद्यमान रहते हुए असंक्रमके योग्य उदयावलिमें प्रवेश करनेवाला गोपुच्छाका द्रव्य प्रथम समयमें विध्यातसंक्रमके द्रव्यसे युक्त होकर कुछ कम एक समयप्रबद्ध प्रमाण होता है। तथा वहीं पर संक्रमके योग्यरूपसे प्राप्त होनेवाला द्रव्य सकल एक समयप्रबद्धप्रमाण होता है। इस प्रकार होता है ऐसा समझकर संक्रमके प्रायोग्यभावसे गत द्रव्य प्रमाण संक्रमप्रायोग्य होकर आनेवाले समयप्रबद्धमेंसे ग्रहणकर प्राचीन सत्कर्मके ऊपर प्रक्षिप्त कर विध्यातभागहारके द्वारा भाजित करने पर जो भाग लब्ध आवे उतना प्रथम समयमें संक्रमित होनेवाला द्रव्य होता है और उतना ही दूसरे समयमें संक्रमित होनेवाला द्रव्य होता है। पुनः पुनः शेष असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्य भी उसी भागहारके आश्रयसे संक्रमित होता है इसलिए विध्यातभागहारके द्वारा भाजित करने पर जो भाग लब्ध आवे वह असंख्यातवें भागका भी असंख्यातवां भाग होकर दूसरे समयमें वृद्धि रूप द्रव्यका प्रमाण होता है। इस प्रकार दूसरे समयमें वृद्धि करके पुन तीसरे समयमे उतने ही द्रव्यके संक्रमित करने पर वृद्धि द्रव्यके बराबर ही उत्कृष्ट अवस्थानसे युक्त द्रव्य होता है, इसलिए यह सबसे स्तोक है यह सिद्ध हुआ।

§ ६६२. अथवा यद्यपि एक समय प्रबद्धके असंख्यात बहुभागोंके असंख्यातवें भागप्रमाण अवस्थित द्रव्य होता है तो भी यह सबसे स्तोक है यह बात विरोधको नहीं प्राप्त होती।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि पूर्वमें उत्पन्न हुए सम्यग्दृष्टिजीवके दूसरे समयमें असंक्रमप्रायोग्य

सम्माइट्ठिविदियसमए असंकमपाओग्गं होदूण गच्छमाणगोवुच्छदव्वमोकड्डुणादिवसेण एयसमयपबद्धस्सासंखेज्जदिभागमेत्तं होइ। संकमपाओग्गं होदूणागच्छमाणदव्वं पुण सयलमेयसमयपबद्धमेत्तं होइ। एवं होइ त्ति कट्टु असंकमपाओग्गभावेण गददव्वमेत्तं संकमपाओग्गभावेण ढुक्कमाणस्स समयपबद्धम्मि घेत्तूण चिराणसंतकम्मम्मि पक्खिविय भागे हिदे पुव्विल्लसमयसंकामिददव्वमेत्तं चेव विदियसमयसंकमदव्वं होइ। पुणो सेसअसंखेज्जभागा वि तेणेव भागहारेण संकामिज्जंति त्ति तेसु विज्झादभागहारेणोवट्टिदेसु समयपबद्धस्सासंखेज्जाणं भागाणमसंखे०भागमेत्तविदियसमयवड्डिदव्वं होइ। एवं वड्डिदूण तदियसमयम्मि तत्तियमेत्तं चेव संकामेमाणयस्सावट्ठिदसंकमो होइ त्ति समयपबद्धस्सासंखेज्जाणं भागाणमसंखेज्जदिभागो त्ति वुत्तं।

❀ हाणी असंखेज्जगुणा।

§ ६९३. किं कारणं? चरिमसमयसंकमादो विज्झादसंकमम्मि पदिदस्स पढमसमयअसंखेज्जसमयपबद्धे हाइदूण हाणी जादा। तेणेदं पदेसग्गमसंखेज्जगुणं भणिदं।

❀ वड्ढी असंखेज्जगुणा।

§ ६९४. कुदो? सव्वसंकमम्मि उक्कस्सवड्डिसामित्तावलंबणादो।

❀ एवं बारसकसाय-भय-दुगुंछाणं।

होकर जाता हुआ गोपुच्छाका द्रव्य अपकर्षण आदिके वशसे एक समयप्रबद्धके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है। परन्तु संक्रम प्रायोग्य होकर आनेवाला द्रव्य पूरा एक समयप्रबद्धप्रमाण होता है। इस प्रकार होता है ऐसा समझ कर असंक्रमप्रायोग्यभावसे जानेवाले द्रव्यप्रमाणको संक्रमप्रायोग्यभावसे प्राप्त होनेवाले द्रव्यके समयप्रबद्धमेंसे ग्रहण कर तथा प्राचीन सत्कर्ममें प्रक्षिप्त कर भाजित करने पर पहलेके समयमें संक्रम कराये गये द्रव्यके बराबर ही दूसरे समयका संक्रमद्रव्य होता है। पुनः शेष असंख्यात बहुभागप्रमाण द्रव्य भी उसी भागहारके द्वारा संक्रमित कराया जाता है, अतः उनके विध्यात भागहारके द्वारा भाजित करने पर समयप्रबद्धके असंख्यात बहुभागके वृद्धिद्रव्य होता है। इस प्रकार बढ़ाकर तीसरे समयमें उतने ही द्रव्यका संक्रम करानेवालेके असंख्यातवें भागप्रमाण दूसरे समयका अवस्थितसंक्रम होता है, इसलिए समयप्रबद्धके असंख्यात बहुभागका असंख्यातवां भाग ऐसा कहा है।

* उससे हानि असंख्यातगुणी होती है।

§ ६९३. क्योंकि अन्तिम समयमें हुए संक्रमसे विध्यातसंक्रममें पतित हुए जीवके प्रथम समयमें असंख्यात समयप्रबद्ध कम होकर हानि हो गई, इसलिए यह प्रदेशाग्र असंख्यात गुणा कहा है।

* उससे वृद्धि असंख्यातगुणी है।

§ ६९४. क्योंकि सर्वसंक्रममें उत्कृष्ट वृद्धिके स्वामित्वका अवलम्बन लिया है।

* इसी प्रकार बारह कषाय, भय और जुगुप्साका अल्पबहुत्व जानना चाहिए।

§ ६९५. जहा मिच्छत्तस्स पयदप्पाबहुअपरूवणा कया एवमेदेसि पि कम्माणं कायव्वा, अप्पाबहुआलावगयविसेसाभावादो। संपहि दव्वट्ठियणयमस्सिऊण पयट्टस्सेदस्स अप्पणासुत्तस्स पज्जवट्ठियणयपरूवणा कीरदे। तं जहा—अणंताणु०४ सव्वत्थोवमुक्कस्समवट्ठाणं। किं कारणं? एयसमयपबद्धासंखेज्जदिभागपमाणत्तादो। एत्थ अवट्ठिददव्वपमाणे ठविज्जमाणे एयसमयपबद्धं ठविय तप्पाओग्गपलिदोवमासंखेज्जभागेणोवट्टिदे सुद्धसेसदव्वपमाणमागच्छदि, आगमस्स णिज्जरादो असंखेज्जदिभागब्भहियत्तादो। पुणो तस्स अधापवत्तभागहारं भागहारत्तेण ठविदे तप्पाओग्गुक्कस्सएण अधापवत्तसंकमेण वड्ढिदूणावट्ठिददव्वं होदि त्ति वत्तव्वं। हाणी असंखेज्जगुणा। किं कारणं? असंखेज्जसमयपबद्धपमाणत्तादो। तं जहा—तप्पाओग्गुक्कस्सअधापवत्तसंकमादो सम्मत्तं पडिवज्जिय विज्झादसंकमेण पदिदस्स पढमसमयम्मि उक्कस्सहाणिसामित्तं जादं। तत्थ सामित्तविसईकयदव्वपमाणे ठविज्जमाणे दिवड्ढगुणहाणिगुणिदमुक्कस्ससमयपबद्धं ठविय अधापवत्तभागहारेणोवट्टिय तत्तो सम्मवइट्ठिपढमसमयविज्झादसंकमदव्वे अवणिदे उक्कस्सहाणिपमाणमागच्छइ। एदं च दव्वमसंखेज्जसमयपबद्धपमाणं, अधापवत्तभागहारादो दिवड्ढगुणहाणिगुणगारस्सासंखेज्जगुणत्तदंसणादो। वड्ढी असंखेज्जगुणा। किं कारणं? सव्वसंकमम्मि तदुक्कस्ससामित्तपडिलंभादो। एवमट्ठकसाय-भय-दुगुंछाणं पि वत्तव्वं, विसेसाभावादो। णवरि उवसामग-

---

§ ६९५. जिस प्रकार मिथ्यात्वके प्रकृत अल्पबहुत्वकी प्ररूपणा की उसी प्रकार इन कर्मोंकी भी करनी चाहिए, क्योंकि मिथ्यात्वसे इन कर्मोंमें अल्पबहुत्व आलापगत कोई विशेषता नहीं है। अब द्रव्यार्थिकनयका आश्रय लेकर प्रवृत्त हुए इस अर्पणासूत्रकी पर्यायार्थिकनय प्ररूपणा करते हैं। यथा—अनन्तानुबन्धीचतुष्कका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है, क्योंकि वह एक समयप्रबद्धका असंख्यातवें भागप्रमाण है। यहाँ पर अवस्थितद्रव्यके प्रमाणके स्थापित करने पर एक समयप्रबद्धको स्थापित कर तत्प्रायोग्य पल्यके असंख्यातवे भागसे भाजित करने पर शुद्ध शेष द्रव्यका प्रमाण आता है, क्योंकि आय निर्जरासे असंख्यातवें भाग प्रमाण अधिक है। पुनः उसका अधःप्रवृत्तभागहारको भागहाररूपसे स्थापित करने पर तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा बढ़ाने पर अवस्थित द्रव्य होता है ऐसा कहना चाहिए। उससे हानि असंख्यातगुणी होती है। क्योंकि उसका प्रमाण असंख्यात समयप्रबद्ध है। यथा—तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्त संक्रमके बाद सम्यक्त्वको प्राप्त होकर विध्यात संक्रमके प्राप्त होने पर प्रथम समयमें उत्कृष्ट हानिका स्वामित्व प्राप्त होता है। वहाँ स्वामित्वरूपसे विषय किये गये द्रव्यप्रमाणके स्थापित करने पर डेढ़ गुणहानिगुणित उत्कृष्ट समयप्रबद्धको स्थापित कर उसे अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा भाजित कर उसमेंसे सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें विध्यात संक्रमके द्रव्यके कम कर देने पर उत्कृष्ट हानिका प्रमाण आता है। यह द्रव्य असंख्यात समयप्रबद्ध प्रमाण है, क्योंकि अधःप्रवृत्त भागहारसे डेढ़ गुणहानिका गुणकार असंख्यातगुणा देखा जाता है। उससे वृद्धि असंख्यातगुणी है, क्योंकि सर्वसंक्रममें उसका उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होता है। इसी प्रकार आठ कषायों, भय और जुगुप्साका

चरिमसमयगुणसंकमादो कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमये उकस्सहाणिसंकमो होइ त्ति तदणुसारेण गुणगारपरूवणा कायव्वा ।

❀ सम्मत्तस्स सव्वत्थोवा उक्कस्सिया वड्ढी ।

§ ६६६. किं कारणं ? उव्वेल्लणकालब्भंतरे गलिदसेसदव्वस्स चरिमुव्वेल्लणकंडयचरिमफालीए लद्धुक्कस्सभावत्तादो । जइ वि सव्वत्थोवमेदं तो वि असंखेज्जसमयपबद्धपमाणमिदि घेत्तव्वं, गुणसंकमभागहारगुणिदुव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागण्णोण्णब्भत्थरासीदो समयपबद्धगुणगारभूददिवड्ढगुणहाणीए तंतजुत्तिबलेणासंखेज्जगुणत्तदंसणादो ।

❀ हाणी असंखेज्जगुणा ।

§ ६६७. कुदो ? मिच्छत्तं गयस्स बिदियसमयम्मि अधापवत्तसंकमेण पडिलद्धुक्कस्सभावत्तादो । अधापवत्तभागहारादो उव्वेल्लणकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागअण्णोण्णब्भंत्थरासीए असंखेज्जगुणत्तदंसणादो णेदमेत्थासंकणिज्जं, पढमसमयअधापवत्तसंकमादो बिदियसमयअधापवत्तदव्वे सोहिदे सुद्धसेसमेत्तमुक्कस्सहाणिसामित्तविसईकयदव्वं होइ । तं च सुद्धसेसदव्वमेत्तियमिदि परिप्फुडं ण णव्वदे । तदो असंखेज्जसमयपबद्धावच्छिण्णपमाणादो पुव्विल्लादो एदस्सासंखेज्जगुणत्तं संदिद्धमिदि । किं कारणं ? सुद्धसेसदव्वम्मि

भी कहना चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त कथनसे इसमें कोई विशेषता नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि उपशामक जीवके अन्तिम समयमें गुणसंक्रमके साथ मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें होता है, इसलिए उसके अनुसार गुणकारका कथन करना चाहिए ।

* सम्यक्त्वकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक होती है ।

§ ६६६. क्योंकि उद्वेलनाकालके भीतर गलकर शेष बचे हुए द्रव्यका अन्तिम उद्वेलना काण्डककी अन्तिम फालिमे प्राप्त हुआ उत्कृष्टपना प्राप्त होता है । यद्यपि यह सबसे स्तोक है तो भी यह असंख्यात समयप्रबद्धप्रमाण है ऐसा ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि गुणसंक्रमभागहार द्वारा गुणित उद्वेलना कालके भीतर नाना गुणहानि शलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिमें समयप्रबद्धकी गुणकारभूत डेढ़ गुणहानि आगम और युक्तिके बलसे असंख्यातगुणी देखी जाती है ।

* उससे हानि असंख्यातगुणी है ।

§ ६६७. क्योंकि मिथ्यात्वको प्राप्त हुए जीवके दूसरे समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा उत्कृष्टपना प्राप्त होता है । यदि कहो कि अधःप्रवृत्तसंक्रम भागहारसे उद्वेलनाकालके भीतर नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि असंख्यातगुणी देखी जाती है सो यहाँ पर ऐसी आशंका करना ठीक नहीं है, क्योंकि प्रथम समयके अधःप्रवृत्तसंक्रममेसे दूसरे समयके अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्रव्यके घटाने पर जो शुद्ध शेष रहे उतना उत्कृष्ट हानिके स्वामित्व द्वारा विषय किया गया द्रव्य है और वह शुद्ध शेष बचा हुआ द्रव्य इतना है यह स्पष्टरूपसे नहीं जाना जाता है । अतएव असंख्यात समयप्रबद्धरूपसे अवच्छिन्न प्रमाणवाले पहलेके द्रव्यसे यह असंख्यातगुणा

वि तत्तो असंखेज्जगुणाणमसंखेज्जसमयपबद्धाणं परिप्फुडमेवोवलंभादो। तं जहा—

§ ६९८. दिवड्ढगुणहाणिगुणिदसमयपबद्धमेगं ठविय गुणसंकमभागहारेण अधापवत्तभागहारेण च तम्मि ओवट्टिदे पढमसमयअधापवत्तसंकमो होइ। पुणो बिदियसमयअधापवत्तसंकमदव्वमिच्छिय तस्सेव असंखेज्जे भागे ठविय अधापवत्तभागहारेणोवट्टिदे बिदियसमयअधापवत्तसंकमदव्वमागच्छदि। एवं हिदि त्ति पुव्विल्लदव्वादो एदम्मि दव्वे सोहिदे सुद्धसेसमधापवत्तभागहारवग्गेण गुणसंकमभागहारेण च खंडिद दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धपमाणं होइ। जेणेसो अधापवत्तभागहारवग्गो उव्वेल्लणणाणागुणहाणिअण्णोण्णब्भत्थरासीदो असंखेज्जगुणहीणो तेणुक्कस्सवड्ढीदो उक्कस्सिया हाणी असंखेज्जगुणा त्ति ण विरुज्झदे। कथमधापवत्तभागहारवग्गादो उव्वेल्लणणाणागुणहाणिअण्णोण्णब्भत्थरासीए असंखेज्जगुणत्तावगमो त्ति णासंकणीयं, एदम्हादो चेव सुत्तादो तदवगमोववत्तीदो।

** सम्मामिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा उक्कस्सिया हाणी।**

§ ६९९. कुदो? अधापवत्तसंकमादो विज्झादसंकमे पदिदपढमसमयसम्माइट्ठिम्मि किंचूणअधापवत्तसंकमदव्वमेत्तकस्सहाणिभावेण परिग्गहादो।

है यह बात संदिग्ध है, क्योंकि शुद्ध शेष द्रव्यमें भी उससे असंख्यातगुणे असंख्यात समयप्रबद्धों की स्पष्टरूपसे उपलब्धि होती है। यथा—

§ ६९८. डेढ़ गुणहानिसे गुणित एक समयप्रबद्धको स्थापित कर गुणसंक्रमभागहार और अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा उसे भाजित करने पर प्रथम समयका अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्य होता है। पुनः द्वितीय समयके अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्यको लानेकी इच्छासे उसके असंख्यात बहुभागको स्थापित कर अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित करने पर द्वितीय समयसम्बन्धी अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्य आता है। इस प्रकार है, इसलिए पहलेके द्रव्यमेंसे इस द्रव्यके घटा देने पर जो शुद्ध रहे उसका प्रमाण अधःप्रवृत्तभागहारके वर्ग और गुणसंक्रम भागहारसे डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंके भाजित करने पर जो लब्ध आवे उतना होता है। यतः यह भागहारका वर्ग पहले की नाना गुणहानियोंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिसे असंख्यातगुणा हीन है, इसलिए उत्कृष्ट वृद्धिसे उत्कृष्ट हानि असंख्यातगुणी है यह बात विरोधको प्राप्त नहीं होती।

शंका—अधःप्रवृत्तभागहारके वर्गसे उद्वेलना सम्बन्धी नाना गुणहानियोंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यातगुणी है यह कैसे जाना जाता है?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इसी सूत्रसे उसका ज्ञान होता है।

*** सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है।**

§ ६९९. क्योंकि अधःप्रवृत्तसंक्रमसे विध्यातसंक्रमको प्राप्त हुए प्रथम समयवर्ती सम्यग्दृष्टि जीवके कुछ कम अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्यको उत्कृष्ट हानिरूपसे ग्रहण किया है।

** उक्कस्सिया वड्ढी असंखेज्जगुणा ।**

§ ७००. कुदो ? दंसणमोहक्खवणाए सव्वसंकमेण तदुक्कस्ससामित्तपडिलंभादो ।

** एवमित्थि-णवुंसयवेद-हस्स[1] -रइ-अरइ-सोगाणं ।**

§ ७०१. जहा सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सहाणि-वड्ढीणमप्पाबहुअं कयं एवमेदेसिं पि कम्माणं कायव्वं विसेसाभावादो । तं जहा—सव्वत्थोवा उक्कस्सिया हाणी । किं कारणं, उवसामगचरिमसमयगुणसंकमादो पढमसमयदेवस्स अधापवत्तसंकमदव्वे सोहिदे सुद्ध-सेसपमाणत्तादो । णवरि इत्थि-णवुंसयवेदाणं विज्झादसंकमदव्वं सोहेयव्वं । वड्ढी असंखे-ज्जगुणा । कुदो ? खवगचरिमफालीए सव्वसंकमेण तदुक्कस्ससामित्तपडिलंभादो ।

** कोहसंजलणस्स सव्वोत्थोवा उक्कस्सिया वड्ढी ।**

§ ७०२. तं जहा-चिराणसंतकम्मदुचरिमसमयअधापवत्तसंकमदव्वे सव्वसंकमदव्वादो सोहिदे सुद्धसेसमेत्तमुक्कस्सवड्ढिविसईकयदव्वं होइ । एदं सव्वत्थोवमिदि भणिदं ।

** हाणी अवट्ठाणं च विसेसाहियं ।**

---

* उससे उत्कृष्ट वृद्धि असंख्यातगुणी है ।

§ ७००. क्योंकि दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें सर्वसंक्रमके द्वारा उसका उत्कृष्ट स्वामित्व प्राप्त होता है ।

*** इसी प्रकार स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोकका अल्पबहुत्व जानना चाहिए ।**

§ ७०१. जिस प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानि और वृद्धि का अल्पबहुत्व किया है उसी प्रकार इन कर्मोंका भी करना चाहिए क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । यथा—उत्कृष्ट हानि सबसे स्तोक है, क्योंकि उपशामकके अन्तिम समय सम्बन्धी गुणसंक्रमद्रव्यमेंसे प्रथम समयवर्ती देवके अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्यके घटा देने पर जो शुद्ध शेष रहे उतना उसका प्रमाण है । किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्री और नपुंसकवेदकी अपेक्षा विध्यात संक्रमके द्रव्यको घटाना चाहिए । उससे वृद्धि असंख्यात गुणी होती है, क्योंकि क्षपककी अन्तिम फालिमें सर्व संक्रमके द्वारा उसका उत्कृष्ट स्वामित्व उपलब्ध होता है ।

*** क्रोधसंज्वलनकी उत्कृष्ट वृद्धि सबसे स्तोक होती है ।**

§ ७०२. यथा—प्राचीन सत्कर्ममेंसे द्विचरम समय सम्बन्धी अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्यको सर्वसंक्रामकद्रव्यमें से घटा देने पर जो शुद्ध शेष बचे उतना उत्कृष्ट वृद्धिके द्वारा विषय किया हुआ द्रव्य होता है । यह सबसे स्तोक है यह कहा है ।

*** उससे हानि और अवस्थान विशेष अधिक है ।**

---

१. दि०प्रतौ—वेदस्स हस्स-इति पाठः ।

§ ७०३. एत्थ कारणं वुच्चदे—सव्वसंकमादो तदणंतरसमयतप्पाओग्गजहण्ण-णवकबंधसंकमदव्वे सोहिदे सुद्धसेसमुक्कस्सहाणिपमाणं होइ। एदं चेवुक्कस्सावट्ठाणपमाणं पि, से काले तत्तियं चेव संकामेमाणयम्मि तदविरोहादो। एदं च पुव्विल्लदव्वादो विसेसाहियं, तत्थ सोहिज्जमाणदुचरिमसमयअधापवत्तसंकमदव्वादो[1] एत्थ सोहिज्जमाणणवकबंधसंकमस्स संखेज्जगुणहीणत्तदंसणादो।

※ एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं।

§ ७०४. सुगममेदमप्पणासुत्तं।

※ लोहसंजलणस्स सव्वत्थोवमुक्कस्समवट्ठाणं।

§ ७०५. किं पमाणमेदमवट्ठिददव्वं? असंखेज्जसमयपबद्धपमाणमेदं। किं कारणं? तप्पाओग्गुक्कस्सअधापवत्तसंकमेण वड्ढिदूणावट्ठिदम्मि वड्ढिणिमित्तमूलदव्वेण सहावट्ठाण-ब्भुवगमादो। तदो दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धाणमधापवत्तभागहारपडिभागेणासंखेज्जदिभागमेत्तं होदूण सव्वत्थोवमेदं ति घेत्तव्वं।

※ हाणी विसेसाहिया।

---

§ ७०३. यहाँ पर कारणका कथन करते हैं—सर्वसंक्रममें से तदनन्तर समयमें हुए तत्प्रायोग्य जघन्य नवकबन्ध सम्बन्धी संक्रमद्रव्यके घटाने पर जो शुद्ध शेष बचे उतनी उत्कृष्ट हानिका प्रमाण होता है और यही उत्कृष्ट अवस्थानका प्रमाण भी होता है, क्योंकि तदनन्तर समयमें उतने ही द्रव्यका संक्रम कराने पर अवस्थान द्रव्यके उतने ही प्राप्त होने में कोई विरोध नहीं आता। और यह पहलेके द्रव्यसे विशेष अधिक है, क्योंकि वहाँ पर घटाये गये द्विचरम समयसम्बन्धी अधःप्रवृत्तसंक्रमद्रव्यसे यहाँ पर घटाये जानेवाले नवकबन्धका संक्रम संख्यातगुणा हीन देखा जाता है।

* इसी प्रकार मानसंज्वलन, मायासंज्वलन और पुरुषवेदका अल्पबहुत्व जानना चाहिए।

§ ७०४. यह अर्पणासूत्र सुगम है।

* लोभसंज्वलनका उत्कृष्ट अवस्थान सबसे स्तोक है।

§ ७०५. शंका—इस अवस्थित द्रव्यका क्या प्रमाण है?

समाधान—इसका प्रमाण असंख्यात समयप्रबद्ध है, क्योंकि तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा वृद्धिकर अवस्थित होनेपर वृद्धिके निमित्तभूत मूलद्रव्यके साथ अवस्थान स्वीकार किया है। इसलिए डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंका अधःप्रवृत्त भागहार द्वारा प्रतिभागरूपसे असंख्यातवाँ भाग होकर यह सबसे स्तोक है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

* उससे हानि विशेष अधिक है।

---

१ आ. प्रतौ-संकमादो दव्वादो इति पाठः।

§ ७०६. किं कारणं ? उवसमसेढीए सव्वुक्कस्सगुणसंकमदव्वं पडिच्छिय कालं कादूण देवेसुववण्णस्स समयाहियावलियाए अणूणाहियतकालभावे अधापवत्तसंकमेण हाणिववहारब्भुवगमादो। हीयमाणसंकमदव्वे पमाणत्तेण घेप्पमाणे को एत्थ दोसो चे ? ण, तहावलंबिज्जमाणे पुव्विल्लावट्ठाणदव्वादो एदस्स विसेसाहियत्तं मोत्तूणासंखेज्जगुणहीणत्तप्पसंगादो। णेदमसिद्धं, हीयमाणदव्वागमणट्ठं दिवड्ढगुणहाणीए अधापवत्तभागहारवग्गस्स पडिभागदंसणादो। तं जहा—उवसामगचरिमसमयसव्वुक्कस्सगुणसंकमदव्वेण सह दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धे ठविय तेसिमधापवत्तभागहारेणोवट्टणाए कदाए आवलियोववण्णदेवस्स तप्पाओग्गुक्कस्सअधापवत्तसंकमदव्वमागच्छदि। पुणो तमेगभागं मोत्तूण सेसबहुभागे घेत्तूण अण्णेण अधापवत्तभागहारेण भागे हिदे भागलद्धमेत्तं समयाहियावलियदेवस्स हाणिसामित्तविसयमधापवत्तसंकममदव्वं होइ। पुणो पुव्विल्लदव्वादो कयसरिसच्छेदादो एदम्मि दव्वे सोहिदे सुद्धसेसदव्वमागच्छदि। तं पुण पुव्वसमयसंकमदव्वं अधापवत्तभागहारेण खंडिदे तत्थेयखंडमेत्तं होइ। तदो सुद्धसेसदव्वागमणट्ठं अधापवत्तभागहारवग्गो दिवड्ढगुणहाणीए पडिभागो त्ति सिद्धं। तम्हा सेसदव्वावलंबणे विसेसाहियत्तमेदस्स ण संभवदि त्ति अणूणाहियसामित्तसमयसंकमदव्वमेव घेत्तूण विसेसाहियत्तमेवमणुगंतव्वं। तं कधं ? अवट्ठाणसंकमो णाम सत्थाणगुणिदकम्मंसियस्स तप्पाओग्गुक्कस्स-

---

§ ७०६. क्योंकि उपशम श्रेणिमें सर्वोत्कृष्ट गुणसंक्रमद्रव्यको संक्रमित कर तथा मरकर देवोंमें उत्पन्न हुए जीवके एक समय अधिक एक आवलिकाल होने पर न्यूनाधिकतासे रहित अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा हानिव्यवहार स्वीकार किया है।

शंका—हीयमान द्रव्यको प्रमाणरूपसे ग्रहण करने पर यहाँ पर क्या दोष है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि प्रमाणके विषयरूपसे अवलम्बन करने पर पहलेके अवस्थानद्रव्यसे यह विशेषाधिक न होकर संख्यातगुणा हीन प्राप्त होता है। और यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि हीयमान द्रव्य लानेके लिए डेढ़ गुणहानि अधःप्रवृत्त भागहारके वर्गका प्रतिभाग देखा जाता है। यथा—उपशामकके अन्तिम समयमें सर्वोत्कृष्ट गुणसंक्रम द्रव्यके साथ डेढ़गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंको स्थापितकर उनके अधःप्रवृत्तसंक्रम भागहारसे भाजित करने पर देवोंमें उत्पन्न होनेके एक आवलिके अन्तमें तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्य आता है। पुनः उसमेंसे एक भागको छोड़कर शेष बहुभागको ग्रहणकर अन्य अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा भाजित करने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना देवके एक समय अधिक एक आवलिके अन्तमें हानिसम्बन्धी स्वामित्वविषयक अधःप्रवृत्तसंक्रम द्रव्य होता है। पुनः पहलेके द्रव्यमें से समान छेद करके इस द्रव्यके घटाने पर शुद्ध शेष द्रव्य आता है। परन्तु वह पूर्व समयके संक्रमद्रव्यको अधःप्रवृत्तभागहारके द्वारा भाजित करने पर वहाँ एक खण्डप्रमाण होता है, इसलिए शुद्ध शेष द्रव्यको लानेके लिए अधःप्रवृत्तभागहारका वर्ग डेढ़गुणहानिका प्रतिभाग होता है यह सिद्ध हुआ। इसलिए शेष द्रव्यका अवलम्बन करने पर इसका विशेष अधिकपना सम्भव नहीं है, अतः न्यूनाधिकतासे रहित स्वामित्व समयभावी संक्रमद्रव्यको ही ग्रहण कर विशेषाधिकपना ही जानना चाहिए।

संतकम्मविसयत्तेण पडिलद्धुक्कस्सभावो। हाणिसंकमो पुण गुणिदकम्मंसियसत्थाणुक्कस्स-संतकम्मादो गुणसंकमलाहत्तेण विसेसाहियउवसमसेढिणिबंधणुक्कस्ससंतकम्मपडिबद्धो। तेण विसेसाहियत्तमेदस्स तत्तो ण विरुज्झदे, विसेसाहियसंतकम्मविसयसंकमस्स वि तहाभावसिद्धीए विरोहाभावादो। तम्हा णिज्जरापरिसुद्धगुणसंकमलाहस्सासंखेज्जभागमेत्त-विसेसाहियपमाणमिदि घेत्तव्वं। संपहि एदमेव णयमस्सिऊण वड्ढीए विसेसाहियत्तपदुप्पा-यणट्ठमुत्तरसुत्तमाह।

* वड्ढी विसेसाहिया।

§ ७०७. केत्तियमेत्तो एत्थ विसेसो? खवगगुणसंकमलाहस्सासंखेज्जभागमेत्तो। किं कारणं? उभयत्थ अणूणाहियअधापवत्तसंकमेण सामित्तपडिलंभे समाणे संते उवसमसेढिगुणसंकमलाहादो असंखेज्जगुणखवगसंकमलाहमेत्तेणुक्कस्सवड्ढिविसयसंतकम्मस्स विसेसाहियत्तदंसणादो। ण च विसेसाहियसंतकम्मादो समुप्पण्णसंकमस्स विसेसाहियत्त-मसिद्धं, कारणाणुसारिकज्जपवुत्तीए सव्वत्थपडिबंधाभावादो। कारणे कज्जुवयारेणावट्ठा-णादिसंकमणिबंधणसंतकम्माणमेवेदमप्पाबहुअमिदि वा पयदत्थसमत्थणा कायव्वा, विरोहा-भावादो। सव्वत्थ सुद्धसेसदव्वालंबणेणाप्पाबहुअपरूवणं कादूण एत्थ पयारंतरावलंबणे

शंका—वह कैसे?

समाधान—स्वस्थान गुणितकर्मांशिक जीवके तत्प्रायोग्य उत्कृष्ट सत्कर्म विषयरूपसे जो उत्कृष्टता प्राप्त होती है वह अवस्थान संक्रम है। परन्तु गुणितकर्मांशिकके स्वस्थान उत्कृष्ट सत्कर्मकी अपेक्षा गुणसंक्रमरूप लाभके कारण उपशमश्रेणिनिमित्तक विशेष अधिक उत्कृष्ट सत्कर्मसे सम्बन्ध रखनेवाला हानिसंक्रम है, इसलिए उससे इसका विशेष अधिकपना विरोधको नहीं प्राप्त होता, क्योंकि विशेष अधिकसत्कर्मविषयक संक्रमके भी उस प्रकारसे सिद्ध होनेमें कोई विरोध नहीं आता। इसलिए निर्जरा परिशुद्ध गुणसंक्रम सम्बन्धी लाभके असंख्यातवें भागमात्र विशेषाधिकका प्रमाण है ऐसा यहाँ पर ग्रहण करना चाहिए। अब इसी नयका आश्रय लेकर वृद्धिके विशेष अधिक-पनेका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* उससे वृद्धि विशेष अधिक होती है।

§ ७०७. शंका—यहाँ पर विशेषका प्रमाण कितना है?

समाधान—क्षपकके गुणसंक्रम सम्बन्धी लाभके असंख्यातवें भाग प्रमाण है, क्योंकि उभयत्र न्यूनाधिकतासे रहित अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा स्वामित्वकी प्राप्ति समान होने पर उपशम श्रेणिमें प्राप्त हुए गुणसंक्रमविषयक लाभसे क्षपकसम्बन्धी असंख्यातगुणे संक्रमविषयक जो लाभ है उतनी वृद्धिविषयक सत्कर्ममें विशेषाधिकता देखी जाती है। और विशेष अधिक सत्कर्मसे उत्पन्न हुए संक्रमकी विशेष अधिकता असिद्ध है यह बात भी नहीं है, क्योंकि सर्वत्र कारणके अनुसार कार्यकी प्रवृत्ति होनेमें कोई रुकावट नहीं है। अथवा कारणमें कार्यका उपचार कर अवस्थानादि संक्रमकारणक सत्कर्मोंका ही यह अल्पबहुत्व है ऐसा प्रकृत अर्थका समर्थन करना चाहिए, क्योंकि ऐसा अर्थ करनेमें विरोधका अभाव है। सर्वत्र शुद्ध शेष द्रव्यका अवलम्बन कर अल्पबहुत्वका

पुव्वावरविरोहो होइ त्ति ण पच्चवट्ठेयं, जत्थ जहावलंबिज्जमाणे सुत्तविरोहो ण होइ, तत्थ तहा वक्खाणावलंबणादो। अधवा सुद्धसेसदव्वावलंबणे वि जहा विसेसाहियत्तं ण विरुज्झदे तहा वक्खाणेयव्वं, सुहुमदिट्ठीए णिहालिज्जमाणे तत्थ विसेसाहियत्तं मोत्तूण पयारंतराणुवलंभादो। एसो एत्थ[1] परमत्थो। एवमोघेणुक्कस्सप्पाबहुअं परूविदं। एदीए दिसाए आदेसपरूवणा वि कायव्वा।

तदो उक्कस्सप्पाबहुअं समत्तं।

❀ एत्तो जहण्णयं।

§ ७०८. एत्तो उवरि जहण्णयमप्पाबहुअं वत्तइस्सामो त्ति पइण्णावक्कमेदं। तस्स दुविहो णिद्देसो ओघादेसभेएण। तत्थोघपरूवणा ताव कीरदे, तत्तो चेव देसामासयभावेणादेसपरूवणावगयोववत्तीदो।

❀ **मिच्छत्त[2]-सोलसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तुल्लाणि।**

§ ७०९. कुदो? एदेसिं कम्माणमेगसंतकम्मपक्खेवावलंबणेण जहण्णवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं सामित्तपडिलंभादो।

कथन किया जाता है। किन्तु यहाँ पर प्रकारान्तरका अवलम्बन करने पर पूर्वापरका विरोध होता है सो ऐसा निश्चय नहीं करना चाहिए, क्योंकि जहाँ पर जिस प्रकारसे अवलम्बन करने पर सूत्र विरोध नहीं होता है वहाँ पर उस प्रकारके व्याख्यानका अवलम्बन लिया है। अथवा शुद्ध शेष द्रव्यका अवलम्बन करने पर भी जिस प्रकार विशेषाधिकपना विरोधको नहीं प्राप्त होवे उस प्रकार व्याख्यान करना चाहिए, क्योंकि सूक्ष्म दृष्टिसे देखने पर वहाँ पर विशेषाधिकपनेको छोड़कर दूसरा प्रकार उपलब्ध नहीं होता। यह यहाँ पर परमार्थ है। इस प्रकार ओघसे उत्कृष्ट अल्पबहुत्वका कथन किया। इसी पद्धतिसे आदेशप्ररूपणा भी करनी चाहिए।

इसके बाद उत्कृष्ट अल्पबहुत्व समाप्त हुआ।

❀ आगे जघन्य अल्पबहुत्वका प्रकरण है।

§ ७०८. इसके आगे जघन्य अल्पबहुत्वको बतलाते हैं इस प्रकार यह प्रतिज्ञावाक्य है। ओघ और आदेशके भेदसे उसका निर्देश दो प्रकारका है। उसमें सर्व प्रथम ओघप्ररूपणा करते हैं, क्योंकि उसीके द्वारा देशामर्षकभावसे आदेशप्ररूपणाका ज्ञान हो जाता है।

❀ **मिथ्यात्व, सोलह कषाय, पुरुषवेद, भय और जुगुप्साकी जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थान तुल्य है।**

§ ७०९. क्योंकि इन कर्मोंके एक सत्कर्म प्रक्षेपका अवलम्बन करनेसे जघन्य वृद्धि, हानि और अवस्थानका स्वामित्व प्राप्त होता है।

---

१ आ. प्रतौ एसोत्थ ता. प्रतौ, एसो [ए] त्थ इति पाठः। २. ता० प्रतौ मिच्छत्त [स्स] सोलस-दि० प्रतौ मिच्छत्तस्स सोलस-इति पाठः।

* सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी ।

§ ७१०. किं कारणं ? खविदकम्मंसियदुचरिमुव्वेल्लणखंडयं चरिमफालीए पडिलद्ध-जहण्णभावत्तादो ।

* वड्ढी असंखेज्जगुणा ।

§ ७११. कुदो ? सम्मत्तस्स चरिमुव्वेल्लणखंडयपढमफालीए गुणसंकमेण जहण्ण-भावपडिलंभादो । सम्मामिच्छत्तस्स वि दुचरिमुव्वेल्लणखंडयचरिमफालिं संकामिय सम्मत्तं पडिवण्णस्स पढमसमये विज्झादसंकमेण जहण्णसामित्तदंसणादो ।

* इत्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी ।

§ ७१२. किं कारणं ? खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण एइंदिएसु पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तकालं गालिय पुणो सण्णिपंचिंदिएसुप्पज्जिय पडिवक्खबंधगद्धं बोला-विय सगबंधपारंभादो आवलियचरिमसमये वट्टमाणस्स गलिदसेसजहण्णसंतकम्मविसय-अधापवत्तसंकमेण पडिलद्धजहण्णभावत्तादो ।

* वड्ढी विसेसाहिया ।

---

* सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी जघन्य हानि सबसे स्तोक है ।

§ ७१०. क्योंकि क्षपितकर्मांशिक जीवके द्विचरम उद्वेलना काण्डककी अन्तिम फालिसे सम्बन्ध रखनेवाला इनका जघन्यपना है ।

* उससे वृद्धि असंख्यातगुणी है ।

§ ७११. क्योंकि सम्यक्त्वके अन्तिम उद्वेलना काण्डककी प्रथम फालिका गुणसंक्रमके आश्रयसे जघन्यपना उपलब्ध होता है । तथा सम्यग्मिथ्यात्वके भी द्विचरम उद्वेलना काण्डककी अन्तिम फालिको संक्रमा कर सम्यक्त्वको प्राप्त हुए जीवके प्रथम समयमें विध्यात संक्रमके द्वारा जघन्यपना देखा जाता है ।

* स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोककी जघन्य हानि सबसे स्तोक है ।

§ ७१२. क्योंकि क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे आकर एकेन्द्रियोंमें पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण कालको गलाकर पुनः संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर प्रतिपक्ष बन्धककालको बिताकर अपने बन्धके प्रारम्भ होनेके बाद एक आवलिके अन्तिम समयमें विद्यमान हुए जीवके गलकर शेष बचे जघन्य सत्कर्मविषयक अधःप्रवृत्तसंक्रमके आश्रयसे जघन्यपनेका सम्बन्ध पाया जाता है ।

* उससे वृद्धि विशेष अधिक है ।

§ ७१३. किं कारणं ? पुव्वुत्तेणेव कमेणागंतूण सण्णिपंचिंदिएसु अप्पप्पणो पडिवक्खबंधगद्धं गालिय-सगबंधपारंभादो समयाहियावलियाए वट्टमाणस्स पुव्विल्लसंतादो विसेसाहियसंतकम्मविसयत्तेण पडिवण्णजहण्णभावत्तादो। एवमोघपरूवणा समत्ता एत्तो आदेसपरूवणा च विहासियव्वा।

तदो पदणिक्खेवो समत्तो।

❀ वड्ढीए तिण्णि अणियोगद्दाराणि समुक्कित्तणा सामित्तमप्पा-बहुअं च।

§ ७१४. एत्तो पदेससंकमस्स वड्ढी कायव्वा। तत्थ समुक्कित्तणादीणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि णादव्वाणि भवंति। अण्णत्थ वड्ढीए तेरस अणियोगद्दाराणि कथमेत्थ तेसिमंतब्भावो ? ण, देसामासयभावेणेत्थ तेसिमंतब्भावदंसणादो।

❀ समुक्कित्तणा।

§ ७१५. जुगमं वोत्तुमसत्तीदो पढमं ताव समुक्कित्तणा कायव्वा त्ति भणिदं होइ। तत्थोघादेसभेएण दुविहणिद्देससंभवे ओघसमुक्कित्तणं ताव कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ।

❀ मिच्छत्तस्स अत्थि असंखेज्जभागवड्ढिहाणी असंखेज्जगुणवड्ढिहाणी अवट्ठाणमवत्तव्वयं च।

---

§ ७१३. क्योंकि पूर्वोक्त क्रमसे ही आकर संज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें अपने अपने प्रतिपक्ष बन्धक कालको गलाकर अपने बन्धके प्रारम्भ होनेसे लेकर एक समय अधिक एक आवलिके अन्तमें विद्यमान हुए जीवके पहलेके सत्कर्मसे विशेष अधिक सत्कर्मके विषयरूपसे जघन्यपना प्राप्त होता है। इस प्रकार ओघप्ररूपणा समाप्त हुई। आगे आदेशप्ररूपणाका व्याख्यान करना चाहिए।

इसके बाद पदनिक्षेप समाप्त हुआ।

*** वृद्धिमें तीन अनुयोगद्वार हैं—समुत्कीर्तना, स्वामित्व और अल्पबहुत्व।**

§ ७१४. आगे प्रदेशसंक्रम वृद्धि करनी चाहिए। उसमें समुत्कीर्तना आदि तीन अनुयोगद्वार जानने चाहिए।

शंका—अन्यत्र वृद्धिके तेरह अनुयोगद्वार कहे हैं इनमें उनका अन्तर्भाव कैसे होता है ?

समाधान—देशामर्षकभावसे इनमें उनका अन्तर्भाव देखा जाता है।

*** समुत्कीर्तना करनी चाहिए।**

§ ७१५. एक साथ सबका कथन करना शक्य न होनेसे सर्व प्रथम समुत्कीर्तना करनी चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। उसका ओघ और आदेशसे दो प्रकारका निर्देश सम्भव है, उसमें सर्वप्रथम ओघ समुत्कीर्तना को करते हुए आगेके सूत्र प्रबन्धको कहते हैं—

*** मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थान और अवक्तव्यपद होते हैं।**

§ ७१६. मिच्छत्तपदेससंकमविसये एदाणि पदाणि संभवंति त्ति समुक्कित्तिदं होदि। संपहि एदेसिं पदाणं संभवविसयो वुच्चदे। तं जहा पुव्वुप्पण्णसम्मत्तपच्छायदमिच्छाइट्ठिणा वेदयसम्मत्ते पडिवण्णे तस्स पढमावलियाए अवत्तव्वपुरस्सरो असंखेज्जभागवड्ढिसंकमो होइ। अवट्ठाणं पि विसयंतरपरिहारेण तत्थेव दट्ठव्वं, मिच्छाइट्ठिचरिमावलियणवकबंधवसेण तत्थ तदुभयसंभवे विरोहाभावादो। पुणो सम्मत्तं घेत्तूण चिट्ठमाणस्स वेदयसम्मत्तकालब्भंतरे सव्वत्थेवासंखेज्जभागहाणी होदूण गच्छइ जाव दंसणमोहक्खवयअधापवत्तकरणचरिमसमयो त्ति। तदो अपुव्वाणियट्टिकरणेसु गुणसंकमवसेणासंखेज्जगुणवड्ढिसंकमो जायदे। अण्णं च उवसमसम्मत्तग्गहणपढमसमए अवत्तव्वसंकमो होदूण पुणो गुणसंकमकालब्भंतरे सव्वत्थेवासंखेज्जगुणवड्ढिसंकमो होइ, तत्थ पयारंतरासंभवादो। पुणो तत्थेव गुणसंकमादो विज्झादपदिदपढमसमयम्मि असंखेज्जगुणहाणी जायदे। तत्तो परमसंखेज्जभागहाणी चेव एवमेदेसिं संभवो अत्थि त्ति कादूण तेसिमेत्थ समुक्कित्तणा कदा।

❀ एवं बारसकसाय-भय-दुगुंछाणं।

§ ७१७. जहा मिच्छत्तस्स असंखेज्जभागवड्ढिहाणि-असंखेज्जगुणवड्ढिहाणिअवट्ठाणाणमवत्तव्वसहगयाणमत्थित्तं समुक्कित्तिदं एवमेदेसिं पि कम्माणं समुक्कित्तेयव्वं, विसेसा-

---

§ ७१६. मिथ्यात्वका प्रदेशसंक्रम होने पर ये पद सम्भव हैं यह कहा गया है। अब ये पद किस विषयमें सम्भव हैं यह कहते हैं। यथा—जो पहले सम्यक्त्वको उत्पन्न कर मिथ्यादृष्टि हुआ है उसके वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त करने पर उसकी प्रथम आवलिमें अवक्तव्य संक्रमपूर्वक असंख्यात भाग वृद्धि संक्रम होता है। विषयान्तरका परिहार कर अवस्थित पद भी वहीं पर जानना चाहिए, क्योंकि मिथ्यादृष्टिकी अन्तिम आवलिमें हुए नवकबन्धके कारण वहाँ पर उन दोनोंके सम्भव होनेमें विरोध नहीं है। पुनः सम्यक्त्वको ग्रहण कर ठहरे हुए जीवके वेदकसम्यक्त्वके कालके भीतर सर्वत्र असंख्यातभाग हानि होकर जाती है जो दर्शनमोहनीयकी क्षपणा के अन्तिम समय तक होती है। उसके बाद अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें गुणसंक्रमके कारण असंख्यातगुण वृद्धिसंक्रम होता है। दूसरे उपशम सम्यक्त्वको ग्रहण करनेके प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रम होकर पुनः गुणसंक्रमके कालके भीतर सभी जगह असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रम होता है, क्योंकि वहाँ पर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है। पुनः वहीं पर गुणसंक्रमसे विध्यातसंक्रममें आने पर उसके प्रथम समयमें असंख्यातगुणहानि संक्रम होता है। उसके बाद असंख्यातभाग हानिसंक्रम ही होता है। इस प्रकार ये संक्रम सम्भव हैं ऐसा करके उनकी यहाँ पर समुत्कीर्तना की है।

* इसी प्रकार बारह कषाय, भय और जुगुप्साके विषयमें जानना चाहिए।

§ ७१७. जिस प्रकार मिथ्यात्वकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि, अवस्थित और अवक्तव्यपदके साथ प्राप्त हुए संक्रमोंके अस्तित्वकी समुत्कीर्तना की उसी प्रकार इन कर्मोंके उक्त संक्रमोंकी समुत्कीर्तना करनी चाहिए, क्योंकि कोई

भावादो। णवरि तेसिं विसयविभागो एवमणुगंतव्वो। तं जहा—असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि अवट्ठाणाणि सत्थाणे सव्वत्थ चेव पयदकम्माणं होंति, तेसिं तत्थ पडिबंधाभावादो। अणंताणुबंधीणमसंखेज्जगुणवड्ढी विसंजोयणाए अपुव्वाणियट्टिकरणेसु होइ विज्झादसंकमादो मिच्छत्तं पडिवण्णपढमसमए वि असंखेज्जगुणवड्ढी लब्भदे, तेसिं चेवासंखेज्जगुणहाणी अधापवत्तसंकमादो सम्मत्तं घेत्तूण विज्झादसंकमे पदिदपढमसमये होइ, तत्थासंखेज्जगुण-हाणिं मोत्तूण पयारंतराणुवलंभादो। अवत्तव्वसंकमो वि तेसिं विसंजोयणापुव्वसंजोगादो आवलियादीदस्स पढमसमये होदि त्ति वत्तव्वं। अट्ठकसाय-भय-दुगुंछाणं चरित्तमोहक्खवणाए कसायोवसामणाए च गुणसंकमेण संकामेमाणस्स असंखेज्जगुणवड्ढी होइ। तेसिं चेव उवसमसेढीए गुणसंकमादो कालं कादूण देवेसुप्पण्णपढमसमये अधापवत्तसंकमेणा-संखेज्जगुणहाणी होइ। अण्णं च अट्ठकसायाणमधापवत्तसंकमादो संजमं संजमासंजमं वा पडिवज्जिय विज्झादसंकमे पदिदस्स पढमसमये असंखेज्जगुणहाणी होइ। एदेसिं चेव विज्झादसंकमादो हेट्ठिमगुणट्ठाणपडिवादेण अधापवत्तसंकमेण परिणदस्स पढमसमए असंखेज्जगुणवड्ढी होइ त्ति वत्तव्वं। अवत्तव्वसंकमो पुण सव्वेसिमेव सव्वोसामणपडिवाद-पढमसमए होइ त्ति घेत्तव्वं।

विशेषता नहीं है। किन्तु इतनी विशेषता है कि उनका विषयविभाग इस प्रकार जानना चाहिए। यथा—प्रकृत कर्मोंके असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यात भागहानि और अवस्थानसंक्रम स्वस्थानमें ही होते हैं, क्योंकि उनके वहाँ होनेमें कोई रुकावट नहीं है। अनन्तानुबन्धियोंका असंख्यातगुण-वृद्धिसंक्रम विसंयोजनाके समय अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें होता है। विध्यातसंक्रमसे मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले जीवके प्रथम समयमें भी असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रम प्राप्त होता है। तथा उन्हींका असंख्यातगुणहानिसंक्रम अधःप्रवृत्तसंक्रमके साथ सम्यक्त्वको ग्रहणकर विध्यातसंक्रमके प्राप्त होनेके प्रथम समयमें होता है, क्योंकि वहाँ पर असंख्यातगुणहानिको छोड़कर अन्य प्रकार नहीं उपलब्ध होता। अवक्तव्यसंक्रम भी उनका विसंयोजनापूर्वक संयोग होकर जिसका एक आवलिकाल गया है ऐसे जीवके प्रथम समयमें होता है ऐसा कहना चाहिए। आठ कषाय, भय और जुगुप्साका चारित्रमोहनीयकी क्षपणामें और कषायों की उपशामनामें गुणसंक्रमके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रम होता है। उन्हींका उपशमश्रेणिमें गुणसंक्रमके साथ मरकर देवोंमें उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा असंख्यातगुणहानिसंक्रम होता है। दूसरे अधःप्रवृत्तसंक्रमसे संयम और संयमासंयमको प्राप्त करके विध्यातसंक्रममें पड़े हुए जीवके प्रथम समयमें आठ कषायोंका असंख्यातगुणहानिसंक्रम होता है। तथा इन्हीं का विध्यातसंक्रमसे नीचेके गुणस्थानोंमें गिरनेसे अधःप्रवृत्तसंक्रमरूपके परिणत हुए जीवके प्रथम समयमें असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रम होता है ऐसा कहना चाहिए। परन्तु अवक्तव्यसंक्रम सभी कर्मों का सर्वोपशामनासे गिरनेके प्रथम समयमें होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

*** एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि, णवरि अवट्ठाणं णत्थि ।**

§ ७१८. सम्मामिच्छत्तस्स वि एवं चेव समुक्कित्तणा कायव्वा, असंखेज्जभाग-वड्ढि-हाणिआदिपदाणमत्थित्तं पडि विसेसाभावादो । विसेसो दु सम्मामिच्छत्तस्सावट्ठाण-संकमो णत्थि त्ति णायव्वो । संपहि एदेसिं पदाणं संभवविसयो परूविज्जदे । तं जहा—उवसमसम्माइट्ठिम्मि गुणसंकमादो विज्झादे पदिदम्मि तव्विदियसमयप्पहुडि जाव उवसमसम्मत्तकालो ताव णिरंतरमसंखेज्जभागवड्ढी चेव होइ । किं कारणं, वयादो तत्थाया-हियत्तदंसणादो । तं जहा—दिवड्ढगुणहाणिमेत्तसमयपबद्धेसु गुणसंकमभागहारेण विज्झाद-भागहारपदुप्पण्णेणोवट्टिदेसु सम्मामिच्छत्तादो ससम्मत्तं गच्छमाणदव्वं होइ । एसो सम्मामिच्छत्तस्स वयो । आयो पुण एत्तो असंखेज्जगुणो, विज्झादभागहारेण मिच्छत्तसयल-दव्वे खंडिदे तत्थेयखंडपमाणत्तादो । जदो एवं, तदो आयादो वये परिसोहिदे सुद्धसेस-मेत्तेण सगमूलदव्वस्सासंखेज्जदिभागभूदेण पडिसमयसम्मामिच्छत्तसंतकम्मस्स तत्थ वड्ढी होइ त्ति तदणुसारिणो संकमस्स वि तहाभावोववत्तीदो सिद्धमसंखेज्जभागवड्ढिविसयो एसो त्ति । जइ एवं भुजगाराणियोगद्दारे एसो वि विसयो भुजगारसंकमस्स कायव्वो । ण च सुत्ते तहा परूवणा अत्थि, उव्वेल्लणाचरिमखंडयसम्मत्तुप्पत्तिगुणसंकमदंसण-मोहक्खवगगुणसंकमविसयत्तेण तत्थ तिसु अद्धासु भुजगारसामित्तस्स णियामिदत्तादो ।

*** इसी प्रकार सम्यग्मिथ्यात्वके विषयमें भी जानना चाहिए । इतनी विशेषता है कि इसका अवस्थानसंक्रम नहीं होता ।**

§ ७१८. सम्यग्मिथ्यात्वकी भी इसी प्रकार समुत्कीर्तना करनी चाहिए क्योंकि असंख्यात-भागहानि और असंख्यातभागवृद्धि आदि पदों के अस्तित्वके प्रति कोई विशेषता नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि सम्यग्मिथ्यात्वका अवस्थानसंक्रम नहीं होता ऐसा जानना चाहिए । अब इन पदोंका सम्भव विषय कहते हैं । यथा—उपशमसम्यग्दृष्टि जीवके गुणसंक्रमसे विध्यातसंक्रममें आने पर उसके दूसरे समयसे लेकर उपशमसम्यक्त्वके कालतक निरन्तर असंख्यातभागवृद्धिसंक्रम ही होता है, क्योंकि व्ययकी अपेक्षा वहाँ पर आयकी अधिकता देखी जाती है । यथा-विध्यातसंक्रम-भागहारसे गुणित गुणसंक्रमभागहारके द्वारा डेढ़ गुणहानिप्रमाण समयप्रबद्धोंके भाजित करने पर सम्यग्मिथ्यात्वमेंसे वह सम्यक्त्वको प्राप्त होनेवाला द्रव्य होता है । यह सम्यग्मिथ्यात्वका व्यय है । परन्तु आय इससे असंख्यातगुणा है, क्योंकि विध्यातभागहारके द्वारा मिथ्यात्वके समस्त द्रव्यके भाजित करने पर वह एक खण्डप्रमाण होता है । यदि ऐसा है तो आयमेंसे व्ययके कम कर देने पर अपने मूल द्रव्यके असंख्यातवें भागप्रमाण शुद्ध शेष द्रव्यके आश्रयसे प्रत्येक समयमें वहाँ सम्यग्मिथ्यात्व सत्कर्मकी वृद्धि होती है, इसलिए उसका अनुसरण करनेवाला संक्रम भी उसी प्रकार बन जानेसे असंख्यातभागवृद्धिका विषयभूत यह सिद्ध हुआ ।

शंका—यदि ऐसा है तो भुजगार अनुयोगद्वारमें भुजगार संक्रमका यह विषय भी कहना चाहिए । परन्तु सूत्रमें उस प्रकारकी प्ररूपणा नहीं है, क्योंकि उद्वेलनाका अन्तिम खण्ड, सम्य-क्त्वकी उत्पत्ति के समय होनेवाला गुणसंक्रम और दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय होनेवाला

तदो पुव्वावरविरुद्धमेदं त्ति ? ण एस दोसो, असंखेज्जगुणवड्ढिभुजगारस्स तत्थ पहाणभावेण विवक्खियत्तादो। ण च एसो भुजगारविसयो तत्थ ण विवक्खिओ त्ति एदस्साभावो वोत्तुं सक्किज्जदे, अप्पिदाणप्पिदसिद्धीए सव्वत्थ पडिसेहाभावादो। अथवा एदम्मि विसये अप्पयरसंकमो चेव त्ति सुत्तयाराहिप्पाओ। कुदो एदं णव्वदे ? सम्मामिच्छत्तप्पयर-संकमस्स सादिरेयछावट्ठिसागरोवमकालपरूवयसुत्तादो। अण्णहा देसूणछावट्ठिसागरो-वमकालप्पसंगादो। एवं च संते सम्मामिच्छत्तस्सासंखेज्जभागवड्ढिविसओ का होइ त्ति पुच्छिदे मिच्छत्तं गंतूण अधापवत्तसंकमं कुणमाणस्स सम्मत्ताहिमुहावत्थाए अंतोमुहुत्तकाल-ब्भंतरे परिणामवसेण असंखेज्जभागवड्ढिविसयो घेत्तव्वो। तत्थासंखेज्जभागवड्ढी होइ त्ति कुदो णव्वदे ? सम्मामिच्छत्तक्कस्सहाणि सामित्तसुत्तादो। एवमेसो असंखेज्जभागवड्ढि-विसयो अणुमग्गिदो। असंखेज्जभागहाणि-अवत्तव्वविसयो पुण मिच्छत्तभंगेणावगंतव्वो, विसेसाभावादो। णवरि मिच्छाइट्ठिम्मि वि जाव उव्वेल्लण दुचरिमखंडयचरिमफालि त्ति ताव असंखेज्जभागहाणिविसयो वत्तव्वो।

गुणसंक्रम इन तीनोंके विषयरूपसे वहाँ पर तीनों कालोंमें भुजगारके स्वामित्वका नियम किया है। इसलिए यह पूर्वापर विरुद्ध है ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि वहाँ पर असंख्यातगुणवृद्धि भुजगारकी प्रधान रूपसे विवक्षा की है। यह भुजगारका विषय वहाँ पर विवक्षित नहीं है, इसलिए इसका अभाव कहना शक्य नहीं है, अर्पित और अनर्पित रूपसे सिद्धि होती है इसका सर्वत्र प्रतिषेधका अभाव है। अथवा इस विषयमें अल्पतरसंक्रम ही होता है ऐसा सूत्रकारका अभिप्राय है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—सम्यग्मिथ्यात्वके अल्पतरकाल साधिक छयासठ सागर प्रमाण कथन करने वाले सूत्रसे जाना जाता है। अन्यथा कुछ कम छयासठ सागर कालका प्रसंग प्राप्त होता है।

ऐसा होने पर सम्यग्मिथ्यात्वके असंख्यातभागवृद्धिसंक्रमका विषय क्या है ऐसा पूछने पर मिथ्यात्वमें जाकर अधःप्रवृत्तसंक्रम करनेवाले जीवके सम्यक्त्वके अभिमुख होने की अवस्था होने पर अन्तर्मुहूर्तकालके भीतर परिणामवश असंख्यातभागवृद्धिका विषय ग्रहण करना चाहिए।

शंका—वहाँ पर असंख्यातभागवृद्धिसंक्रम होता है यह किस प्रमाण से जाना जाता है ?

समाधान—सम्यग्मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट हानिका कथन करनेवाले स्वामित्वविषयक सूत्रसे जाना जाता है।

इस प्रकार यह असंख्यातभागवृद्धिका विषय जानना चाहिए। परन्तु असंख्यातभागहानि और अवक्तव्यसंक्रमका विषय मिथ्यात्वके भंगके समान जानना चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है। किन्तु मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमें भी जब तक उद्वेलना द्विचरम काण्डककी अन्तिम फालि है तब तक असंख्यातभागहानिका विषय कहना चाहिए।

§ ७१९. संपहि असंखेज्जगुणवड्ढिविसयो वुच्चदे। तं जहा—उव्वेल्लणसंकमादो वेदगसम्मत्तं पडिवण्णपढमसमये विज्झादसंकमादो मिच्छत्तं पडिवण्णसम्माइट्ठिपढमसमये वा सव्वं हि चेव चरिमुव्वेल्लणखंडए वा सम्मत्तुप्पत्तिगुणसंकमकालब्भंतरे दंसणमोहक्खवणगुणसंकमकालब्भंतरे वा असंखेज्जगुणवड्ढी होइ। गुणसंकमादो विज्झादसंकमे पदिदसम्माइट्ठिपढमसमए अधापवत्तसंकमादो विज्झादे पदिदसम्माइट्ठिपढमसमए उव्वेल्लणाए परिणदमिच्छाइट्ठिपढमसमए वा असंखेज्जगुणहाणिसंकमो होइ।

❀ सम्मत्तस्स असंखेज्जभागहाणि-असंखेज्जगुणवड्ढी हाणी अवत्तव्वयं च अत्थि।

§ ७२०. उव्वेल्लेमाणमिच्छाइट्ठिम्मि जाव दुचरिमट्ठिदिखंडयो त्ति ताव असंखेज्जभागहाणिसंकमो चरिमुव्वेल्लणखंडए असंखेज्जगुणवड्ढिसंकमो अधापवत्तसंकमादो उव्वेल्लणपरिणाममुवगयमिच्छाइट्ठिपढमसमए असंखेज्जगुणहाणिसंकमो सम्मत्तादो मिच्छत्तं पडिवण्णपढमसमए अवत्तव्वसंकमो त्ति चउण्हमेदेसिं पदाणमेत्थ संभवो ण विरुज्झदे।

❀ तिसंजलणपुरिसवेदाणमत्थि चत्तारि वड्ढी चत्तारि हाणीओ अवट्ठाणमवत्तव्वयं च।

---

§ ७१९. अब असंख्यातगुणवृद्धिका विषय कहते हैं। यथा—उद्वेलना संक्रमसे वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होनेके प्रथम समयमें अथवा विध्यातसंक्रमसे मिथ्यात्वको प्राप्त होनेवाले सम्यग्दृष्टि जीवके प्रथम समयमें अथवा सम्पूर्ण अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकमें, सम्यक्त्वकी उत्पत्ति होने पर गुणसंक्रम कालके भीतर अथवा दर्शनमोहनीयकी क्षपणामें गुणसंक्रम कालके भीतर असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रम होता है। तथा गुणसंक्रमसे विध्यातसंक्रममें आये हुए सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें, अधःप्रवृत्तसंक्रमसे विध्यातसंक्रममें आये हुए सम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें अथवा उद्वेलनासंक्रमरूपसे परिणत हुए मिथ्यादृष्टिके प्रथम समयमें असंख्यातगुणहानिसंक्रम होता है।

❀ सम्यक्त्वका असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यसंक्रम होता है।

§ ७२०. उद्वेलना करनेवाले मिथ्यादृष्टिके जब तक द्विचरम स्थितिकाण्डक है तब तक असंख्यातभागहानिसंक्रम, अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकमें असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रम, अधःप्रवृत्तसंक्रमसे उद्वेलनापरिणामको प्राप्त हुए मिथ्यादृष्टि जीवके प्रथम समयमें असंख्यातगुणहानिसंक्रम और सम्यक्त्वसे मिथ्यात्वको प्राप्त हुए जीवके प्रथम समयमें अवक्तव्यसंक्रम होता है इस प्रकार इन चारों पदोंका सम्भव यहाँ पर विरोधको प्राप्त नहीं होता।

❀ तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी चार वृद्धि, चार हानि, अवस्थित और अवक्तव्यसंक्रम होता है।

§ ७२१. एत्थ तिसंजलणग्गहणेण लोहसंजलणवज्जियाणं तिण्हं संजलणाणं गहणं कायव्वं, लोहसंजलणस्स उवरिमसुत्ते समुक्कित्तणादो। एदेसिं तिसंजलण-पुरिसवेदाणमत्थि चउव्विहाओ वड्ढी-हाणीओ अवट्ठाणमवत्तव्वयं च। कुदो ? संसारावत्थाए सव्वत्थासंखेज्ज-भागवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणमुवलंभादो। चिराणसंतकम्मचरिमफालीए तदणंतरसमयभावि-णवकबंधसंकमे च जहाकममसंखेज्जगुणवड्ढिहाणिसंकमाणमुवलंभादो। तत्थेव णवकबंध-संकमे वावदस्स जोगविसेसमस्सिऊण संखेज्जभागवड्ढि-हाणि-संखेज्जगुणवड्ढि-हाणीणं संभवो-वलंभादो। एत्थेव सेसवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणाणं पि संभवदंसणादो च। णवरि पुरिसवेदावट्ठा-णस्स भुजगारभंगो। सव्वोवसामणापडिवादे सव्वेसिमवत्तव्वसंभवो दट्ठव्वो।

*** लोहसंजलणस्स अत्थि असंखेज्जभागवड्ढी हाणी अवट्ठाणमव-त्तव्वयं च**

§ ७२२. कुदो ? सेसवड्ढि-हाणीणमेत्थासंभवो ? ण, लोहसंजलणविसये अधापवत्त-संकमं मोत्तूणण्णसंकमाभावेण सुद्धणवकबंधसंकमाभावेण च तदभावणिण्णयादो। तम्हा लोहसंजलणस्स असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-अवट्ठाणसंकमा चेव, णाण्णो संकमो त्ति सिद्धं। णवरि सव्वोवसामणापडिवादमस्सिऊणावत्तव्वसंकमो समुक्कित्तियव्वो।

---

§ ७२१. यहाँ पर तीन संज्वलनोंके ग्रहण करनेसे लोभसंज्वलनको छोड़कर शेष तीन संज्वल-नोंका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि लोभसंज्वलनकी आगेके सूत्रमें समुत्कीर्तना की है। इन तीन संज्वलन और पुरुषवेदकी चार प्रकारकी वृद्धियाँ, चार प्रकारकी हानियाँ, अवस्थान और अवक्तव्य-पद हैं, क्योंकि संसार अवस्थामें सर्वत्र असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि और अवस्थान संक्रम उपलब्ध होते हैं। तथा प्राचीन सत्कर्मकी अन्तिम फालिमें और तदनन्तर समयमें होनेवाले नवकबन्धसम्बन्धी संक्रममें क्रमसे असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रम और असंख्यातगुणहानिसंक्रम उपलब्ध होते हैं। तथा वहीं पर नवकबन्धके संक्रममें व्याप्त हुए जीवके योग विशेषका आश्रय कर संख्यातभागवृद्धि, संख्यातभागहानि, संख्यातगुणवृद्धि और संख्यातगुणहानिसंक्रम सम्भव रूपसे उपलब्ध होते हैं और वहींपर शेष वृद्धि, हानि और अवस्थान संक्रम सम्भव रूपसे देखे जाते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि पुरुष वेदके अवस्थान संक्रमका भंग भुजगारके समान जानना चाहिए। तब सर्वोपशामनासे गिरते समय सबका अवक्तव्यसंक्रम जानना चाहिए।

*** लोभसंज्वलनकी असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, अवस्थान और अवक्तव्यसंक्रम है।**

§ ७२२. शंका—यहाँ पर शेष वृद्धियाँ और हानियाँ असम्भव क्यों हैं ?

समाधान—नहीं, क्योंकि लोभसंज्वलनके विषयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमको छोड़कर अन्यसंक्रम सम्भव न होनेसे तथा शुद्ध नवकबन्धके संक्रमका अभाव होनेसे शेष वृद्धियों और हानियोंके अभाव का निर्णय होता है। इसलिए लोभसंज्वलनके असंख्यातभागवृद्धिसंक्रम, असंख्यातभागहानिसंक्रम और अवस्थानसंक्रम ही होते हैं, अन्यसंक्रम नहीं होता यह सिद्ध हुआ। किन्तु इतनी विशेषता है कि सर्वोपशामनासे प्रतिपातका आश्रयकर अवक्तव्यसंक्रमकी समुत्कीर्तना करनी चाहिए।

** इत्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमत्थि दो वड्ढी हाणीओ अवत्तव्वयं च ।**

§ ७२३. कुदो ? एदेसु कम्मेसु असंखेज्जभागवड्ढि-हाणि-असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणि-अवत्तव्वसंकमाणं चेव संभवदंसणादो । तं कधं, एदेसिं कम्माणं सगबंधकाले आवलिया-दीदस्स असंखेज्जभागवड्ढिसंकमो चेव जाव पडिवक्खबंधगद्धापढमावलियचरिमसमओ त्ति । पुणो पडिवक्खबंधकाले सव्वत्थासंखेज्जभागहाणिसंकमो चेव, तत्थ पयारंतरासंभवादो । खवगोवसमसेढीसु गुणसंकमवसेणासंखेज्जगुणवड्ढिसंकमो उवसामगस्स गुणसंकमादो कालं कादूण देवेसुप्पण्णस्स पढमसमए असंखेज्जगुणहाणिसंकमो होइ । णवरि इत्थि-णवुंसयवेदाण-मण्णत्थ वि असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणीओ संभवंति, सम्माइट्ठिम्मि मिच्छत्तं पडिवण्णे मिच्छाइट्ठिम्मि वि सम्मत्तगुणेण परिणदम्मि जहाकमं तदुभयसंभवदंसणादो । सव्वोव-सामणापडिवादे च सव्वेसिमवत्तव्वसंभवो दट्ठव्वो । एवं सव्वेसिं कम्माणमोघसमुक्कित्तणा गया । एत्तो आदेससमुक्कित्तणा च जाणिय णेयव्वा ।

तदो समुक्कित्तणा समत्ता ।

*** सामित्ते अप्पाबहुए च विहासिदे वड्ढी समत्ता भवदि ।**

*** स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, हास्य, रति, अरति और शोकके दो वृद्धि, दो हानि और अवक्तव्यसंक्रम होते हैं ।**

§ ७२३. क्योंकि इन कर्मोंमें असंख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागहानि, असंख्यातगुणवृद्धि, असंख्यातगुणहानि और अवक्तव्यसंक्रम ही सम्भव देखे जाते हैं ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि इन कर्मोंके नवकबन्धके कालमें एक आवलिके बाद असंख्यात-भागवृद्धिसंक्रम ही होता है जो प्रतिपक्षबन्धक कालकी प्रथम आवलिके अन्तिम समय तक होता है । पुनः प्रतिपक्ष बन्धक कालके भीतर सर्वत्र असंख्यातभागहानिसंक्रम ही होता है, क्योंकि वहाँ पर अन्य प्रकार सम्भव नहीं है । क्षपक और उपशमश्रेणियोंमें गुणसंक्रमके कारण असंख्यात गुणवृद्धिसंक्रम होता है । उपशामक जीवके गुणसंक्रमसे मरकर देवोंमें उत्पन्न होने पर प्रथम समयमें असंख्यातगुणहानिसंक्रम होता है । किन्तु इतनी विशेषता है कि स्त्रीवेद और नपुंसक वेदके अन्यत्र भी असंख्यातगुणवृद्धिसंक्रम और असंख्यातगुणहानिसंक्रम सम्भव हैं, क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीवके मिथ्यात्वको प्राप्त होनेपर तथा मिथ्यादृष्टि जीवके भी सम्यक्त्वगुणरूपसे परिणत होनेपर क्रमसे वे दोनों संक्रम सम्भव देखे जाते हैं । सर्वोपशामनासे गिरने पर सभी कर्मोंका अवक्तव्यसंक्रम सम्भव देखा जाता है । इस प्रकार सब कर्मोंकी ओघसमुत्कीर्तना समाप्त हुई । आगे आदेशसमु-त्कीर्तना जानकर कर लेनी चाहिए ।

इसके बाद समुत्कीर्तना समाप्त हुई ।

*** स्वामित्व और अल्पबहुत्वका व्याख्यान करने पर वृद्धि समाप्त होती है ।**

§ ७२४. एत्तो समुक्कित्तणाणुसारेण सामित्ते अप्पाबहुए च विहासिदे तदो वड्ढी समप्पदि त्ति भणिदं होइ। जेणेदं देसामासयसुत्तं तेणेत्थ कालादिअणियोगद्दाराणं पि विहासणा सुत्तणिबद्धा त्ति दट्ठव्वा। तदो दव्वट्ठियणयावलंबणेण पयट्टस्सेदस्स सुत्तस्स पज्जवट्ठिय परूवणा जाणिदूण णेदव्वा।

तिदो वड्ढी समत्ता।

* एत्तो ट्ठाणाणि।

§ ७२५. एत्तो उवरि पदेससंकमट्ठाणाणि परूवेयव्वाणि त्ति भणिदं होइ। संपहि तत्थ संभवंताणमणियोगद्दाराणमियत्तावहारणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ।

* पदेससंकमट्ठाणाणं परूवणा अप्पाबहुअं च।

§ ७२६. एवमेदाणि दोण्णि अणिओगद्दाराणि। पदेससंकमट्ठाणसरूवजाणावणट्ठमेत्थ परूवेयव्वाणि त्ति भणिदं होइ। समुक्कित्तणा परूवणापमाणमप्पाबहुअं चेदि चत्तारि अणियोगद्दाराणि किमेत्थ ण वुत्ताणि? ण, समुक्कित्तणाए परूवणंतब्भावादो। पमाणाणिओगद्दारस्स वि अप्पाबहुअंतब्भूदत्तादो। तत्थ परूवणा णाम सव्वकम्मेसु पदेससंकमट्ठाणाणमुप्पत्तिकमणिरूवणा। तेसिं चेव पमाणविसयणिण्णयजणणट्ठं थोवबहुत्तपरिक्खा अप्पाबहुअमिदि भण्णदे।

---

§ ७२४. आगे समुत्कीर्तनाके अनुसार स्वामित्व और अल्पबहुत्वका व्याख्यान करने पर इसके बाद वृद्धि समाप्त होती है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। यतः यह देशामर्षक सूत्र है अतः यहाँ पर कालादि अनुयोगद्वारोंका भी व्याख्यान सूत्र निबद्ध है ऐसा जानना चाहिए। इसलिए द्रव्यार्थिकनयका अवलम्बन कर प्रवृत्त हुए इस सूत्रकी पर्यायार्थिक प्ररूपणा जानकर ले जानी चाहिए।

इसके बाद वृद्धि समाप्त हुई।

* आगे संक्रमस्थानोंका प्रकरण है।

§ ७२५. इससे आगे प्रदेशसंक्रमस्थानोंका कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इस प्रकरणमें सम्भव अनुयोगद्वारोंके प्रमाणका निर्धारण करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* प्रदेश संक्रमस्थानोंके प्ररूपणा और अल्पबहुत्व इस प्रकार ये दो अनुयोगद्वार हैं।

§ ७२६. प्रदेशसंक्रमस्थानोंके स्वरूपका ज्ञान करानेके लिए यहाँ पर कथन करना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

शंका—समुत्कीर्तना, प्ररूपणा, प्रमाण और अल्पबहुत्व इस प्रकार चार अनुयोगद्वार यहाँ पर क्यों नहीं कहे?

समाधान—नहीं, क्योंकि समुत्कीर्तनाका प्ररूपणामें अन्तर्भाव हो जाता है। तथा प्रमाण अनुयोगद्वारका भी अल्पबहुत्वमें अन्तर्भाव हो गया है।

प्रकृतमें सब कर्मोंमें प्रदेश संक्रमस्थानोंकी उत्पत्तिके क्रमका निरूपण करना प्ररूपणा है। उन्हींके प्रमाणविषयक निर्णयका ज्ञान कराने के लिए थोड़े बहुतकी परीक्षा करना अल्पबहुत्व कहा जाता है।

❀ परूवणा जहा ।

§ ७२७. परूवणाणिओगद्दारं कथं होइ त्ति पुच्छा एदेण कदा होइ ।

❀ **मिच्छत्तस्स अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण जहण्णयं संकमट्ठाणं ।**

§ ७२८. एदेण सुत्तेण मिच्छत्तस्स जहण्णसंकमट्ठाणपरूवणा कदा । तं जहा—अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णकम्मेणे त्ति वुत्ते एइंदिएसु खविदकम्मंसियलक्खणेण कम्मट्ठिदिमच्छिऊण संचिदजहण्णसंतकम्मस्स गहणं कायव्वं, तत्तो अण्णस्स अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णसंतकम्मस्साणुवलद्धीदो । एदेण जहण्णकम्मेण सव्वजहण्णसंकमट्ठाणं समुप्पज्जदि त्ति एसो विसेसो एत्थाणुगंतव्वो । तं कधं ? एदेण जहण्णकम्मेणागंतूण असण्णिपंचिंदिएसुववज्जिय पज्जत्तयदो होदूण तत्थ देवाउअं बंधिय सव्वलहुं कालं कादूण देवेसुववज्जिय छहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तयदो होदूण पढमसम्मत्तमुप्पाइय तदो वेदयसम्मत्तं पडिवज्जिय वेछावट्ठिसागरोवमाणि सम्मत्तमणुपालिय तदवसाणे अंतोमुहुत्तसेसे दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिदो जो जीवो तस्स अधापवत्तकरणचरिमसमये वट्टमाणस्स जहण्णपरिणामणिबंधणविज्झादसंकमेण सव्वजहण्णपदेससंकमट्ठाणं होइ । कधमेसो विसेसो

✱ प्ररूपणा, यथा ।

§ ७२७. प्ररूपणा अनुयोगद्वार किस प्रकारका है यह पृच्छा इस सूत्र द्वारा की गई है ।

✱ **मिथ्यात्वका अभव्योंके योग्य जघन्य कर्मके आश्रयसे जघन्य संक्रमस्थान होता है ।**

§ ७२८. इस सूत्र द्वारा मिथ्यात्वके जघन्य संक्रमस्थानकी प्ररूपणा की गई है । यथा—अभव्योंके योग्य जघन्य कर्मके आश्रयसे ऐसा कहने पर एकेन्द्रियोंमें क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे कर्मस्थितिकाल तक अवस्थित रहकर सञ्चित हुए जघन्य सत्कर्मका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि उससे अन्य अभव्योंके योग्य जघन्य सत्कर्म नहीं उपलब्ध होता । इस जघन्य सत्कर्मके आश्रयसे सबसे जघन्य संक्रमस्थान उत्पन्न होता है इस प्रकार इतना विशेष यहाँ पर जान लेना चाहिए ।

शंका—यह कैसे ?

समाधान—इस जघन्य कर्मके साथ आकर, असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें उत्पन्न होकर तथा पर्याप्त होकर पुनः वहाँ देवायुका बन्धकर अतिशीघ्र मरकर और देवोंमें उत्पन्न होकर तथा छह पर्याप्तियोंसे पर्याप्त होकर इसके बाद प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न कर फिर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त कर दो छयासठ सागर कालतक सम्यक्त्वका पालन कर उसके अन्तमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर जो जीव दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हुआ है उसके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान होने पर जघन्य परिणामनिमित्तक विध्यातसंक्रमरूपसे सबसे जघन्य प्रदेश संक्रमस्थान होता है ।

सुत्तेणाणुवइट्ठो परिछिज्जदे ? ण, वक्खाणादो विसेसपडिवत्ती होइ त्ति णायबलेण तदुवलद्धीदो। अभवसिद्धियपाओग्गजहण्णकम्मेणे त्ति एदस्स विसेसणस्स उवलक्खणभावेण अवट्ठिदत्तादो च। तम्हा तहाभूदेण जहण्णसंतकम्मेणोवलक्खियस्स जीवस्स अधापवत्तकरण-चरिमसमयजहण्णपरिणामेण मिच्छत्तस्स जहण्णपदेससंकमट्ठाणं होइ त्ति सिद्धो सुत्तत्थो।

§ ७२९. संपहि एवंभूदजहण्णसंतकम्मपडिबद्धजहण्णसंकमट्ठाणस्स पुव्वमवहारिदसरूवस्साणुवादं कादूण एत्तो अजहण्णसंकमट्ठाणाणं परूवणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो।

*** अणंतम्हि चेव कम्मे असंखेज्जलोगभागुत्तरं संकमट्ठाणं होइ।**

§ ७३०. एत्थ ताव संकमट्ठाणाणं साहणट्ठं तक्कारणभूदपरिणामट्ठाणाणं परूवणं कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तकरणचरिमसमए असंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाणि अत्थि। ताणि च जहण्णपरिणामप्पहुडि जावुक्कस्सपरिणामो त्ति ताव छव्वड्ढिकमेणावट्ठिदाणि तेसिमादीदोप्पहुडि असंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाणि सव्वपरिणामट्ठाणपंतिआयामस्सासंखेज्जभागपमाणाणि परिणमिय जहण्णसंतकम्मं संकामेमाणस्स जहण्णसंकमट्ठाणमेवुप्पज्जदि, विसरिससंकमट्ठाणुप्पत्तीए तेसिमणिमित्तत्तादो। तदो एत्थ विदियादिपरिणामट्ठाणाणमवणयणं कादूण जहण्णपरिणामट्ठाणस्सेव गहणं कायव्वं। पुणो तदणंतरोवरिमपरिणामप्प-

---

शंका—सूत्रमें नहीं कहा गया यह विशेष कैसे जाना जाता है ?

समाधान—नहीं, क्योंकि व्याख्यानसे विशेष प्रतिपत्ति होती है इस न्यायके बलसे उसकी उपलब्धि होती है। तथा अभव्योंके योग्य जघन्य कर्मके आश्रयसे यह विशेषण उपलक्षणरूपसे अवस्थित है, इसलिए उक्त प्रकारके जघन्य सत्कर्मके युक्त जीवके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य परिणामसे मिथ्यात्वका जघन्य प्रदेशसंक्रमस्थान होता है यह सूत्रका अर्थ सिद्ध हुआ।

§ ७२९. अब जिसके स्वरूपका पहले अवधारण किया है ऐसे जघन्य सत्कर्मसे सम्बन्ध रखनेवाले जघन्य संक्रमस्थानका अनुवाद करके आगे अजघन्य संक्रमस्थानोंका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध आया है—

*** उसी कर्ममें असंख्यात लोक प्रतिभाग अधिक दूसरा संक्रमस्थान होता है।**

§ ७३०. यहाँ पर सर्व प्रथम संक्रमस्थानोंकी सिद्धि करनेके लिए उनके कारणभूत परिणामस्थानोंका कथन करेंगे। यथा—अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें असंख्यात लोकमात्र परिणामस्थान होते हैं। वे जघन्य परिणामसे लेकर उत्कृष्ट परिणाम तक छह वृद्धिक्रमसे अवस्थित हैं। उनके प्रारम्भसे लेकर जो असंख्यात लोकप्रमाण परिणामस्थान हैं जो कि सब परिणामस्थान पंक्तिके आयामके असंख्यातवें भागप्रमाण हैं उन्हें परिणमाकर जघन्य सत्कर्मका संक्रम करनेवाले जीवके जघन्य संक्रमस्थान ही उत्पन्न होता है, क्योंकि वे परिणाम विसदृश संक्रमस्थानकी उत्पत्ति निमित्त नहीं हैं। इसलिए यहाँ पर द्वितीय आदि परिणामस्थानोंका अपनयन कर जघन्य परिणाम स्थानका ही ग्रहण करना चाहिए। पुनः तदनन्तर उपरिम परिणामसे लेकर असंख्यात लोकमात्र

हुडि असंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणेहि परिणमिय संकामेमाणस्स अण्णमपुणरुत्तमसंखेज-लोगभागुत्तरसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति। एत्थ वि पुव्वं व बिदियादि-परिणामपरिचागेण जहण्णपरिणामट्ठाणस्सेव संगहो कायव्वो। णवरि पुव्विल्लजहण्णपरिणामट्ठाणादो संपहियजहण्णपरिणामट्ठाणमणंतगुणब्भहियमसंखेज्जलोगमेत्तछट्ठाणाणि, तत्तो समुल्लंघिय एदस्सावट्ठाणदंसणादो। एवमेदेण विहिणा सेसपरिणामट्ठाणेसु असंखेज्जलोगमेत्तद्धाणं गंतूण एगेगपरिणामट्ठाणपुणरुत्तसंकमट्ठाणुप्पत्तिणिमित्तमुवलब्भइ त्ति तहाभूदाणं चेव परिणामट्ठाणाणमुच्चिणिदूण गहणं कायव्वं जाव अधापवत्तकरणचरिमसमयसव्वपरिणाम-ट्ठाणाणि णिट्ठिदाणि त्ति। एवमुच्चिणिदूण गहिदासेसपरिणामट्ठाणाणमण्णोण्णं पेक्खिऊणाणंतगुणब्भहियकमेणावट्ठिदाणमवट्ठिदपक्खेवुत्तरकमेणासंखेज्जलोगभागुत्तरविसरिससंकम-ट्ठाणुप्पत्तिणिमित्तभूदाणं पमाणमसंखेज्जा लोगा।

§ ७३१. संपहि एदेसिं परिणामट्ठाणाणमधापवत्तकरणचरिमसमये कमेण रचणं कादूण णाणाकालमस्सिऊण णाणाजीवेहि परिवाडीए परिणमाविय सुत्ताणुसारेण पढम-संकमट्ठाणपरिवाडिपरूवणं कस्सामो। तं जहा—अधापवत्तकरणचरिमसमयम्मि सव्व-जहण्णपरिणामट्ठाणं परिणामिय पुव्वणिरुद्धजहण्णसंतकम्मं संकमेमाणस्स जहण्णसंकमट्ठाणं होइ। पुणो एदं चेव जहण्णसंतकम्ममधापवत्तकरणचरिमसमयबिदियपरिणामट्ठाणेण[1] परिणमिय

परिणाम स्थानोंरूपसे परिणमन कर संक्रम करनेवाले जीवके असंख्यात लोक भाग अधिक अन्य अपुनरुक्त स्थान उत्पन्न होता है। यहाँ पर भी पहलेके समान द्वितीयादि परिणामोंका त्यागकर जघन्य परिणामस्थानका ही ग्रहण करना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि पूर्वोक्त जघन्य परिणामस्थानसे साम्प्रतिक जघन्य परिणामस्थान अनन्तगुणा अधिक है, क्योंकि उससे असंख्यात लोकमात्र छह स्थानोंको उल्लंघन कर इस स्थानका अवस्थान देखा जाता है। इस प्रकार इस विधिसे शेष परिणामस्थानोंमें असंख्यात लोकमात्र अध्वान जाकर संक्रमस्थानकी उत्पत्तिका निमित्तभूत एक एक अपुनरुक्त परिणामस्थान उपलब्ध होता है, इसलिए अधःकरणके अन्तिम समयके सब परिणामस्थानोंके प्राप्त होने तक उस प्रकारके परिणामस्थानोंको ही संचय करके ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार एक दूसरेको देखते हुए जो कि अनन्तगुणे अधिकके क्रमसे अवस्थित हैं और जो अवस्थित प्रक्षेप अधिकके क्रमसे असंख्यात लोकभाग अधिक विसदृश संक्रमस्थानोंकी उत्पत्तिके निमित्तभूत हैं ऐसे उचलकर ग्रहण किये गये उन समस्त परिणामस्थानों का प्रमाण असंख्यात लोक है।

§ ७३१. अब इन परिणामस्थानोंकी अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें क्रमसे रचना करके नाना कालका आश्रय लेकर नाना जीवोंके द्वारा क्रमसे परिणमा कर सूत्रके अनुसार प्रथम संक्रमस्थानकी परिपाटीकी प्ररूपणा करेंगे। यथा—अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें सबसे जघन्य परिणामस्थानको परिणमा कर पूर्वमें विवक्षित हुए जघन्य सत्कर्मका संक्रम करनेवाले जीवके जघन्य संक्रमस्थान होता है। पुनः इसी जघन्य सत्कर्मको अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें दूसरे परिणामस्थानके द्वारा परिणमा कर पूर्वमें विवक्षित किये गये जघन्य सत्कर्मका

१. ता प्रतौ '-ट्ठा [णा] णं णा-' इति पाठः।

पुव्वणिरुद्धजहण्णसंतकम्मं संकामेमाणस्स बिदियमसंखेज्जलोगभागुत्तरं संकमट्ठाणं होदि, जहण्णसंकमट्ठाणमसंखेज्जलोगेहिं खंडेयूण एयखंडमेत्तेण तत्तो एदस्स अहियत्तदंसणादो। एदं च विदियसंकमट्ठाणमेदेण सुत्तेण णिद्दिट्ठमणंतम्हि चेव कम्मे असंखेज्जलोगभागुत्तर-संकमट्ठाणं होइ त्ति एदेण विधिणा तदियादिपरिणामट्ठाणाणि वि जहाकमं परिणमिय संकामेमाणाणमसंखेज्जलोगभागुत्तरकमेणासंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि समुप्पज्जंति त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तं भणइ—

❀ एवं जहण्णए कम्मे असंखेज्जा लोगा संकमट्ठाणाणि।

§ ७३२. कुदो? णाणाकालसंबंधिणाणाजीवेहि तदियादिपरिणामट्ठाणेहिं परि-वाडीए परिणमाविय तम्मि जहण्णसंतकम्मे संकामिज्जमाणे अवट्ठिदपक्खेवुत्तरकमेण पुव्व-विरचिदपरिणामट्ठाणमेत्ताणं चेव संकमट्ठाणाणमुप्पत्तीए परिप्फुडमुवलंभादो। एवं पढम-परिवाडीए संकमट्ठाणपरूवणा गया। संपहि विदियपरिवाडीए संकमट्ठाणाणं परूवणं कुणमाणो तत्थ ताव तण्णिबंधणसंतकम्मवियप्पगवेसणट्ठमुत्तरं सुत्तपबंधमाह—

❀ तदो पदेसुत्तरे दुपदेसुत्तरे वा एवमणंतभागुत्तरे वा जहण्णए संतकम्मे ताणि चेव संकमट्ठाणाणि।

संक्रम करनेवाले जीवके दूसरा असंख्यात लोक भाग अधिक संक्रमस्थान होता है, क्योंकि जघन्य संक्रमस्थानको असंख्यात लोकसे भाजित कर जो एक भाग लब्ध आवे उतना मात्र पूर्वोक्त स्थानमें यह संक्रमस्थान अधिक देखा जाता है। यह दूसरा संक्रमस्थान इस सूत्र द्वारा निर्दिष्ट किया गया है। पुनः उसी कर्ममें असंख्यात लोक प्रतिभाग अधिक अन्य संक्रमस्थान होता है इस प्रकार इस विधिसे तृतीय आदि परिणामस्थानोंको भी क्रमसे परिणमा कर संक्रम करनेवाले जीवके असंख्यात लोक भाग अधिकके क्रमसे असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं इस प्रकार यह बात बतलाने के लिए आगेका सूत्र कहते हैं —

*** इस प्रकार जघन्य कर्ममें असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान होते हैं।**

§ ७३२. क्योंकि नाना काल सम्बन्धी नाना जीवोंके द्वारा तृतीय आदि परिणामस्थानोंके आश्रयसे क्रमसे परिणमाकर उस जघन्य सत्कर्मके संक्रमित करने पर अवस्थित प्रक्षेप अधिकके क्रमसे पूर्वमें रचित परिणामस्थानप्रमाण ही संक्रमस्थानोंकी उत्पत्ति स्पष्टरूपसे उपलब्ध होती है। इस प्रकार प्रथम परिपाटीसे संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई। अब द्वितीय परिपाटीसे संक्रम-स्थानोंका कथन करते हुए वहाँ सर्व प्रथम उनके कारणभूत सत्कर्मके भेदोंका विचार करने के लिए आगे का सूत्रप्रबन्ध कहते हैं—

*** उससे जघन्य सत्कर्ममें एक प्रदेश अधिक या दो प्रदेश अधिक या इस प्रकार एक एक प्रदेश अधिक होते हुए अनन्त भाग अधिक होने पर वे ही संक्रमस्थान होते हैं।**

§ ७३३. तदो पुव्वणिरुद्धजहण्णसंतट्ठाणादो पदेसुत्तरे संतकम्मे जादे तत्थ वि ताणि चेव पढमपरिवाडीए परूविदाणि असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि समुप्पज्जंति। किं कारणं? तहाभूदसंतकम्मवियप्पस्स संकमट्ठाणंतरुप्पत्तीए अणिमित्तत्तादो। एवं दुपदेसुत्तरे वा तिपदेसुत्तरे वा चदुपदेसुत्तरे वा पंचपदेसुत्तरे वा संखेज्जपदेसुत्तरे वा असंखेज्जपदेसुत्तरे वा अणंतपदेसुत्तरे वा जहण्णए संतकम्मे ताणि चेव संकमट्ठाणाणि समुप्पज्जंति त्ति घेत्तव्वं। एवमणंतभागवड्ढीए गंतूण जहण्णसंतकम्मट्ठाणं जहण्णपरित्ताणंतेण खंडेऊण तत्थेयखंडमेत्त-परमाणुसु तत्थ वड्ढिदेसु वि ताणि चेव संकमट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि समुप्पज्जंति त्ति एसो एदस्स भावत्थो।

*** असंखेज्जलोगभागे पक्खित्ते विदियसंकमट्ठाणपरिवाडी होइ।**

§ ७३४. एतदुक्तं भवति—जहण्णसंतकम्मट्ठाणं तप्पा[1]ओग्गासंखेज्जलोगेहिं भागं घेत्तूण भागलद्धे तत्थेव पडिरासिय पक्खित्ते जं संतकम्मट्ठाणमुप्पज्जदि तत्तो परिणामट्ठाणाणि अस्सिऊण पढमसंजमट्ठाणपरिवाडी परिणामट्ठाणमेत्तायामा समुप्पज्जदि त्ति एदेण असंखेज्ज-भागवड्ढिविसए वि अणंताणि संतकम्मट्ठाणाणि उल्लंघिऊण तदित्थविसए पयदसंत-कम्मट्ठाणुप्पत्ती होदि त्ति जाणाविदं। संपहि 'असंखेज्जलोगभागे पक्खित्ते' इच्चेदेण सामण्ण-

§ ७३३. 'तदो' अर्थात् पूर्वमें विवक्षित जघन्य सत्कर्मस्थानसे एक प्रदेश अधिक सत्कर्मके होने पर वहाँ पर भी वे ही प्रथम परिपाटीमें कहे गये असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं, क्योंकि उस प्रकारके सत्कर्मके भेदमें अन्य संक्रमस्थानकी उत्पत्तिका नियम नहीं है। इस प्रकार दो प्रदेश अधिक, तीन प्रदेश अधिक, चार प्रदेश अधिक, पाँच प्रदेश अधिक, संख्यात प्रदेश अधिक, असंख्यात प्रदेश अधिक या अनन्त प्रदेश अधिक जघन्य सत्कर्ममें वे ही संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार अनन्त भागवृद्धिके साथ जाकर जघन्य सत्कर्मस्थानको जघन्य परीतानन्तसे भाजित कर वहाँ पर प्राप्त हुए एक खण्डमात्र परमाणु उस जघन्य सत्कर्ममें मिलाने पर भी वे ही पुनरुक्त संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं यह इस सूत्रका भावार्थ है।

*** असंख्यात लोकभाग प्रमाण द्रव्यके प्रक्षिप्त करने पर दूसरी संक्रमस्थान परिपाटी होती है।**

§ ७३४. यह तात्पर्य है कि जघन्य सत्कर्मस्थानमें तत्प्रायोग्य असंख्यात लोकका भाग देने पर जो एक भाग लब्ध आवे उसे उसी राशिमें प्रक्षिप्त करने पर जो सत्कर्मस्थान उत्पन्न होता है उससे परिणामस्थानोंका आश्रय लेकर प्रथम संक्रमस्थान परिपाटीके आगे परिणामस्थानप्रमाण आयामवाली दूसरी संक्रमस्थानपरिपाटी उत्पन्न होती है। इस प्रकार इस सूत्र द्वारा असंख्यात भागवृद्धिके विषयमें भी अनन्त सत्कर्मस्थानोंको उल्लंघन कर वहाँ प्राप्त हुए विषयमें प्रकृत सत्कर्मस्थानकी उत्पत्ति होती है यह ज्ञान कराया गया है। अब 'असंखेज्जलोगभागे पक्खित्ते' इस

[1] ता० प्रती '–ट्ठाणतप्पा–' इति पाठः।

वयणेण संतकम्मपक्खेवपमाणविसयो सम्ममवगमो ण जादो त्ति पुणो वि विसेसिऊण संतकम्मपक्खेवपमाणावहारणट्ठं उवरिमसुत्तावयारो—

✽ जो जहण्णगो पक्खेवो जहण्णए कम्मसरीरे तदो जो च जहण्णगे कम्मे विदियसंकमट्ठाणविसेसो सो असंखेज्जगुणो।

§ ७३५. एत्थ जहण्णए कम्मसरीरे त्ति वयणेण अधापवत्तकरणचरिमसमयजहण्ण-संतकम्मस्स गहणं कायव्वं। कम्मस्स सरीरं कम्मसरीरमिदि कम्मक्खंधस्सेव विवक्खिय-त्तादो। तत्थ जो जहण्णगो पक्खेवो त्ति वुत्ते विदियसंकमट्ठाणपरिवाडिणिबंधणसंतकम्म-पक्खेवस्स गहणं कायव्वं। किमेसो संतकम्मपक्खेवो बहुओ, किं वा जहण्णए चेव कम्मे जं विदियं संकमट्ठाणं तस्स विसेसो बहुगो त्ति एवंविहासंकाए णिरारेगीकरणट्ठमिदं वुच्चदे—'तदो जो च जहण्णए कम्मे' इच्चादि। एतदुक्तं भवति—तदो संतकम्मपक्खे-वादो जहण्णसंतकम्मस्सासंखेज्जलोगपडिभागियादो जो जहण्णए कम्मे संकामिज्जमाणे विदियसंकमट्ठाणस्स विसेसो सो असंखेज्जगुणो होइ त्ति। तं जहा—जहण्णसंकमट्ठाणमसंखेज्जलोगेहि खंडेऊणेगखंडे तत्थेव पडिरासिय पक्खित्ते पढमपरिवाडिविदियसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि। एत्थ पक्खित्तमेयखंडपमाणविदिय-संकमट्ठाणविसेसो णाम। एवंविहसंकमट्ठाणविसेसे पुणो वि तप्पाओग्गासंखेज्जलोगमेत्त-

---

सामान्य वचन द्वारा सत्कर्मके प्रक्षेपका प्रमाण कितना है यह ठीक तरहसे नहीं जाना जाता है इसलिए फिर भी विशेषरूपसे सत्कर्मके प्रक्षेप प्रमाणका निश्चय करने के लिए आगेके सूत्रका अवतार करते हैं—

जघन्य सत्कर्ममें जो जघन्य प्रक्षेप है, उससे जघन्य सत्कर्ममें जो दूसरा संक्रमस्थानविशेष है, वह असंख्यातगुणा है।

§ ७३५. यहाँ पर जघन्य कर्मशरीर इस वचनसे अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें प्राप्त हुए जघन्य सत्कर्मका ग्रहण करना चाहिए, क्योंकि कर्मका शरीर वह कर्मशरीर इस प्रकार इस पद द्वारा कर्मस्कन्ध ही विवक्षित किया गया है। उसमें जो जघन्य प्रक्षेप है ऐसा कहने पर द्वितीय संक्रमस्थान परिपाटीके कारणभूत सत्कर्मके प्रक्षेपका ग्रहण करना चाहिए। क्या यह संक्रमप्रक्षेप बहुत है या क्या जघन्य कर्ममें ही जो दूसरा संक्रमस्थान है उसका विशेष बहुत है इस प्रकारकी आशंका होने पर उसका निराकरण करनेके लिए यह कहते हैं—तदो जो च जहण्णए कम्मे इत्यादि। यह उक्त कथनका तात्पर्य है कि उस सत्कर्मप्रक्षेपसे, जघन्य सत्कर्मके असंख्यात लोक-भागवाँ अधिक जघन्य सत्कर्मके संक्रमित होने पर जो द्वितीय संक्रमस्थानका विशेष प्राप्त होता है, वह असंख्यातगुणा होता है। यथा—जघन्य संक्रमस्थानविशेषको असंख्यात लोकोंसे भाजित कर जो एक खण्ड प्राप्त हो उसे उसी जघन्य संक्रमस्थानमें मिला देने पर प्रथम परिपाटीका दूसरा संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। यहाँ पर मिलाया गया एक खण्डका प्रमाण द्वितीय संक्रमस्थानका विशेष है। इस प्रकारके संक्रमस्थान विशेषको फिर भी तत्प्रायोग्य असंख्यात लोकप्रमाण संख्यासे भाजित

रूवेहि भागे हिदे भागलद्धमेत्तो संतकम्मपक्खेवो त्ति भण्णदे। जइ वि बिदियसंकमट्ठाण-विसेसस्सासंखेज्जदिभागो त्ति सुत्ते सामण्णेण परूविदं तो वि तस्सासंखेज्जलोगपडिभागिओ त्ति णव्वदे वक्खाणादो।

§ ७३६. संपहि जहण्णसंतकम्ममस्सिऊण संतकम्मपक्खेवपमाणमाणिज्जदे। तं जहा-एगमेइंदियसमयपबद्धं ठविय दिवड्ढगुणहाणीए गुणिदे एइंदियजहण्णसंतकम्ममागच्छदि। पुणो अंतोमुहुत्तेणोवट्टिदोकड्डुक्कड्डणभागहारो तस्स भागहारत्तेण ठवेयव्वो। एवं ठविदे असण्णिपंचिंदिएसु देवेसु च उक्कड्डिददव्वमागच्छदि। एवमुक्कड्डिददव्वं बेछावट्ठिकालब्भंतरे गालेदि त्ति तक्कालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागाओ विरलिय विगं करिय अण्णोण्णब्भत्थ-रासिणा तम्मि ओवट्टिदे एत्तियमेत्तकालगलिदावसेसमधापवत्तकरणचरिमसमयजहण्णसंत-कम्ममागच्छदि। एत्तो अधापवत्तकरणचरिमसमए संकामिददव्वमिच्छामो त्ति अंगुलस्सा-संखेज्जभागमेत्तविज्झादभागहारेण तम्मि भागे हिदे जहण्णसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो तम्मि तप्पाओग्गासंखेज्जलोगमेत्तभागहारेणोवट्टिदे बिदियसंकमट्ठाणविसेसो होइ। पुणो अण्णेणासंखेज्जलोगभागहारेण तम्मि भाजिदे संतकम्मपक्खेवपमाणमागच्छदि त्ति णिच्छओ कायव्वो। तदो एवंविहसंतकम्मपक्खेवे पडिरासिदजहण्णसंतकम्मस्सुवरि पक्खित्ते बिदिय-संकमट्ठाणपरिवाडिणिमित्तभूदमसंखेज्जलोगभागुत्तरबिदियसंतकम्मट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति सिद्धं।

करने पर जो भाग लब्ध आवे तत्प्रमाण सत्कर्मप्रक्षेप कहा जाता है। यद्यपि वह द्वितीय संक्रम-स्थान विशेषका असंख्यातवां भागप्रमाण है ऐसा सूत्रमें सामान्य रूपसे कहा गया है तो भी वह असंख्यात लोकसे भाजित होकर एक भागप्रमाण है यह बात व्याख्यानसे जानी जाती है।

§ ७३६. अब जघन्य सत्कर्मका आश्रय लेकर सत्कर्मके प्रक्षेपका प्रमाण लाते हैं। यथा—एकेन्द्रियसम्बन्धी एक समयप्रबद्धको स्थापित कर द्वयर्ध गुणहानिसे गुणित करने पर एकेन्द्रिय सम्बन्धी सत्कर्म आता है। पुनः अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारको उसके भाग-हाररूपसे स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार स्थापित करने पर असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें और देवोंमें उत्कर्षणको प्राप्त हुआ द्रव्य आता है। इस प्रकार उत्कर्षित हुए द्रव्यको दो छयासठ सागर कालके भीतर गलाता है इसलिए उस कालके भीतर प्राप्त हुई नाना गुणहानिशलाकाओंका विरलन करके और विरलित राशिके प्रत्येक एकको दूना करके परस्पर गुणा करनेसे जो राशि उत्पन्न हो उससे उसके भाजित करने पर इतने कालके भीतर गलाकर जो राशि शेष बचती है तत्प्रमाण अधःप्रवृत्त-करणके अन्तिम समयमें जघन्य सत्कर्म आता है। अब इसमेंसे अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें संक्रमित होनेवाला द्रव्य लाना चाहते हैं इसलिए अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण विध्यात भाग-हारके द्वारा उसके भाजित करने पर जघन्य संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। पुनः उसमें तत्प्रायोग्य असंख्यात लोकप्रमाण भागहारका भाग देने पर द्वितीय संक्रमस्थानके विशेषका प्रमाण होता है। पुनः अन्य असंख्यात लोकप्रमाण भागहारका उसमें भाग देने पर सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण आता है ऐसा यहाँ निश्चय करना चाहिए। इस लिए इस प्रकारके सत्कर्मप्रक्षेपको प्रतिराशिभूत जघन्य सत्कर्मके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर द्वितीय संक्रमस्थान परिपाटीका निमित्तभूत असंख्यात लोकसे भाजित

संपहि एवं विहपक्खेवुत्तरजहण्णसंतकम्ममवलंबिय अधापवत्तकरणचरिमसमयजहण्णादि-परिणामट्ठाणेसु जहाकमं परिणदणाणाकालसंबंधिणाणाजीवसंकमवसेण विदियसंकम-ट्ठाणपरिवाडिपरूवणा पढमपरिवाडिभंगेणाणुगंतव्वा। णवरि पढमपरिवाडिजहण्णसंकम-ट्ठाणादो असंखेज्जलोगभागुत्तरं होदूण तत्थतणविदियसंकमट्ठाणादो विसेसहीणमसंखेज्ज-लोगपडिभागेण संपहियजहण्णसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि त्ति घेत्तव्वं। एवं विदियादो विदियं तदियादो तदियमिच्चादिकमेण सव्वत्थ णेदव्वं। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमुत्तर-सुत्तं भणइ—

❀ एत्थ वि असंखेज्जा लोगा संकमट्ठाणाणि।

§ ७३७. जहा जहण्णए संतकम्मट्ठाणे असंखेज्जलोगमेत्ताणि संकमट्ठाणाणि परूविदाणि एवमेत्थ वि पक्खेवुत्तरजहण्णसंतकम्मट्ठाणे तत्तियमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि णिरवसेसमणुगंतव्वाणि, विसेसाभावादो त्ति भणिदं होइ। एवं विदियपरिवाडीए संकम-ट्ठाणपरूवणा समत्ता। संपहि एदीए दिसाए तदियादिपरिवाडीणं पि परूवणा कायव्वा त्ति समप्पणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ एवं सव्वासु परिवाडीसु।

एक भाग अधिक द्वितीय सत्कर्मस्थान उत्पन्न होता है यह सिद्ध हुआ। यहाँ पर इस प्रकार एक प्रक्षेप अधिक जघन्य सत्कर्मका अवलम्बन लेकर अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयसम्बन्धी जघन्य आदि परिणामस्थानोंमें क्रमसे परिणत हुए नाना कालसम्बन्धी नाना जीवोंके संक्रमके वशसे द्वितीय संक्रमस्थानपरिपाटीकी प्ररूपणा प्रथम परिपाटीके समान जान लेना चाहिए। किन्तु इतनी विशेषता है कि प्रथम परिपाटीके जघन्य संक्रमस्थानमें असंख्यात लोकसे भाजित एक भाग अधिक होकर वहाँ सम्बन्धी द्वितीय संक्रमस्थानसे विशेष हीन असंख्यात भागरूपसे साम्प्रतिक जघन्य संक्रमस्थान उत्पन्न होता है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार दूसरेसे दूसरा और तीसरेसे तीसरा इत्यादि क्रमसे सर्वत्र जानना चाहिए। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए आगे का सूत्र कहते हैं—

*** यहाँ पर भी असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान होते हैं।**

§ ७३७. जिस प्रकार जघन्य सत्कर्मस्थानमें असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान कहे हैं उसी प्रकार यहाँ पर भी एक प्रक्षेप अधिक जघन्य सत्कर्मस्थानमें उतने ही संक्रमस्थान पूरे जानने चाहिए, क्योंकि यहाँ पर अन्य कोई विशेषता नहीं है यह उक्त कथनका तात्पर्य है। इस प्रकार दूसरी परिपाटीके अनुसार संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई। अब इसी पद्धतिसे तृतीयादि परिपाटियोंकी भी प्ररूपणा करनी चाहिए इस प्रकारके कथनकी मुख्यता करके आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इसी प्रकार सब परिपाटियोंमें जानना चाहिए।**

§ ७३८. संपहि एदेण सुत्तेण समप्पिदतदियादिपरिवाडीणं परूवणं वत्तइस्सामो। तं जहा—जहण्णसंतकम्मस्सुवरि दोसंतकम्मपक्खेवपमाणे वड्ढिदे तदियपरिवाडीए णिमित्तभूदमण्णं संतकम्मट्ठाणमुप्पज्जदि। पुणो एवंविहसंतकम्ममधापवत्तकरणचरिमसमये जहण्णपरिणामेण संकामेमाणस्स बिदियपरिवाडिजहण्णसंकमट्ठाणस्सुवरिमसंखेज्जलोगभागब्भहियं होदूण तदियसंकमट्ठाणपरिवाडीए पढमसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि। एवं बिदियादिपरिणामेहि मि परिणमिय संकामेमाणाणमवट्ठिदपक्खेवुत्तरकमेण परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि समुप्पाएयव्वाणि। एवमुप्पाइदे तदियपरिवाडीए संकमट्ठाणपरूवणा समत्ता होइ।

§ ७३९. संपहि चउत्थपरिवाडीए भण्णमाणाए जहण्णसंतकम्मस्सुवरि तिण्हं संतकम्मपक्खेवाणं वड्ढिं कादूणागदस्स अधापवत्तकरणचरिमसमयम्मि जहण्णपरिणामेण परिणमिय विज्झादसंकमभागहारेण संकामेमाणस्स तदियपरिवाडिजहण्णसंकमट्ठाणस्सुवरि विसेसाहियं होदूण चउत्थपरिवाडीए पढमं संकमट्ठाणमुप्पज्जदि। संपहि एदं संतकम्मं धुवं कादूण बिदियादिपरिणामेहि संकामेमाणणाणाजीवे अस्सिऊण असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि अवट्ठिदपक्खेवुत्तरकमेण पुव्वं व समुप्पाइय गेण्हिदव्वाणि। तदो चउत्थपरिवाडी समत्ता होइ। एवमेगेगसंतकम्मपक्खेवमणंतराणंतरसंतकम्मट्ठाणादो अहियं कादूण पंचमादिपरिवाडीओ वि णेदव्वाओ, जत्थ असंखेज्जलोगमेत्ताणमेत्थतणसव्वपरि-

---

§ ७३८. अब इस सूत्रके द्वारा विवक्षित की गई तृतीय आदि परिपाटियोंका कथन करते हैं। यथा—जघन्य सत्कर्मके ऊपर दो सत्कर्मप्रक्षेपके प्रमाणोंके बढ़ाने पर तीसरी परिपाटीका निमित्तभूत अन्य सत्कर्मस्थान उत्पन्न होता है। पुनः इस प्रकारके सत्कर्मका अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य परिणामके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके दूसरी परिपाटीसे उत्पन्न हुए जघन्य संक्रमस्थानके ऊपर असंख्यात लोक भाग अधिक होकर तृतीय संक्रमस्थान परिपाटीमें प्रथम संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। इसी प्रकार द्वितीय आदि परिणामोंके अवलम्बनसे भी परिणमा कर संक्रम करने वाले जीवोंके अवस्थित प्रक्षेप अधिकके क्रमसे परिणामस्थान मात्र ही संक्रमस्थान उत्पन्न करने चाहिए। इस प्रकार उत्पन्न करने पर तीसरी परिपाटी समाप्त होती है।

§ ७३९. अब चौथी परिपाटीका कथन करने पर जघन्य सत्कर्मके ऊपर तीन सत्कर्मप्रक्षेपोंकी वृद्धि करके प्राप्त हुए कर्मको अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें परिणमा कर विध्यातसंक्रमभागहारके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके तृतीय परिपाटीके जघन्य संक्रमस्थानके ऊपर एक विशेष अधिक होकर चतुर्थ परिपाटीके अनुसार प्रथम संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। अब इस सत्कर्मको ध्रुव करके द्वितीय आदि परिणामोंके आश्रयसे संक्रम करनेवाले नाना जीवोंका अवलम्बन लेकर उत्तरोत्तर अवस्थित प्रक्षेप अधिकके क्रमसे असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान पहलेके समान उत्पन्न करके ग्रहण करने चाहिए। तब जाकर चतुर्थ परिपाटी समाप्त होती है। इस प्रकार अनन्तर प्राप्त हुए सत्कर्मस्थानसे एक सत्कर्मप्रक्षेपको अधिक करके पाँचवी आदि परिपटियाँ भी ले आनी चाहिए।

वाडीगमसव्विमपरिवाडी परिणामट्ठाणमेत्तायामा समुप्पण्णा त्ति । तत्थ चरिमवियप्पं वत्तइस्सामो । तं जहा—

§ ७४०. एगो गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सत्तमपुढवीए उप्पज्जिय तत्थ मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं कादूण तत्तो णिप्पिदिय पुणो दो-तिण्णितिरिक्खभवग्गहणाणि अंतोमुहुत्तकालपडिवद्धाणि समणुपालिय तदो समयाविरोहेण देवेसुप्पज्जिय सव्वलहुं सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो सम्मत्तं घेत्तूण बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय तदवसाणे मणुसेसुववज्जिय गब्भादिअट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तकरणचरिमसमए णाणाजीवसंबंधिणाणापरिणामणिबंधणचरिमपरिवाडीए दुचरिमादिसव्ववियप्पे उक्कस्सपरिणामेण संकामेमाणो एत्थतणचरिमवियप्पसामिओ होइ । एवमुप्पण्णासेससंकमट्ठाणपरिवाडीओ असंखेज्जलोगमेत्तीओ होंति, जहण्णसंतकम्ममुक्कस्ससंतकम्मादो सोहिय सुद्धसेसम्मि संतकम्मपक्खेवपमाणेण कीरमाणे असंखेज्जलोगमेत्ताणं संतकम्मपक्खेवाणमुवलंभादो । तं जहा—

§ ७४१. जहण्णदव्वमिच्छिय दिवड्ढगुणहाणिगुणिदमेगमेइंदियसमयपबद्धं ठविय अंतोमुहुत्तोवट्टिदोकड्डुक्कड्डणभागहारपदुप्पण्णेण बेछावट्ठिसागरोवणाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा तम्मि ओवट्टिदे अधापवत्तकरणचरिमसमयजहण्णदव्वं होइ । पुणो

अब जहाँ पर असंख्यात लोकप्रमाण यहाँ सम्बन्धी सब परिपाटियोंकी अन्तिम परिपाटी परिणामस्थान मात्र आयामवाली उत्पन्न होती है वहाँ पर अन्तिम भेदको बतलाते हैं । यथा—

§ ७४०. गुणितकर्मांशिकलक्षणसे आकर कोई एक जीव सातवीं पृथिवीमें उत्पन्न हो, वहाँ मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट कर फिर वहाँसे निकल कर पुनः अन्तर्मुहूर्त कालके भीतर तिर्यञ्चोंके दो-तीन भव ग्रहण कर अनन्तर जिससे शास्त्रमें विरोध न आवे इस विधिसे देवोंमें उत्पन्न हो और अतिशीघ्र सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हो तथा सम्यक्त्वको ग्रहण कर दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर उसके अन्तमें मनुष्योंमें उत्पन्न हो गर्भसे लेकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें नाना जीवोंके सम्बन्धसे नाना परिणामनिमित्तक अन्तिम परिपाटीके द्विचरम आदि सब विकल्पोंको बिता कर उत्कृष्ट परिणामसे संक्रमण करनेवाला जीव यहाँके अन्तिम विकल्पका स्वामी होता है । इस प्रकार उत्पन्न हुई समस्त संक्रमस्थानोंकी परिपाटियाँ असंख्यात लोकप्रमाण होती हैं, क्योंकि जघन्य सत्कर्मको उत्कृष्ट सत्कर्ममेंसे घटा कर जो शेष बचे उसे सत्कर्मप्रक्षेपके प्रमाणसे करनेपर असंख्यात लोकप्रमाण सत्कर्मप्रक्षेप उपलब्ध होते हैं । यथा—

§ ७४१. जघन्य द्रव्यकी इच्छासे डेढ़ गुणहानिगुणित समयप्रबद्धको स्थापित कर अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहारसे उत्पन्न दो छयासठ सागर कालके भीतर प्राप्त नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे उसके भाजित करने पर अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य द्रव्य प्राप्त होता है । पुनः वहीं पर उत्कृष्ट द्रव्य लाना चाहते हैं इसलिए जघन्य द्रव्यके अपकर्षण-उत्कर्षणभागहारसे गुणित योगगुणकारके गुणकारभावसे स्थापित करने

तत्थेवुक्कस्सदव्वमिच्छामो त्ति जहण्णदव्वस्स ओकड्डुक्कड्डणभागहारगुणिदजोगगुणगारे गुणगारभावेण ठविदे गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तकरणचरिमसमए वट्टमाणस्स पयदुक्कस्सदव्वमागच्छदि । एवमेदाणि दोण्णि दव्वाणि ठविय एत्थ जहण्णदव्वेणुक्कस्सदव्वे ओवट्टिदे जोगगुणगारपदुप्पण्णोकड्डुक्कड्डणभागहारो आगच्छदि । पुणो एदेण भागलद्धेण जहण्णदव्वावणयणट्ठं रूवूणीकएण जहण्णदव्वे गुणिदे जहण्णदव्वे उक्कस्सदव्वादो सोहिदे सुद्धसेसदव्वमागच्छदि । संपहि एदं दव्वं संतकम्मपक्खेवपमाणेण कस्सामो तं कधमेदस्स हेट्ठा विज्झादभागहारं बेअसंखेज्जलोगे जोगगुणगारोकड्डुक्कड्डणभागहाराणं रूवूणण्णोण्णगुणिदरासिं च संवग्गिय विरलेऊण सुद्धसेसदव्वे समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स संतकम्मपक्खेवपमाणं पावइ । संपहि एदिस्से विरलणाए जत्तियाणि रूवाणि तत्तियाओ चेव एत्थुप्पण्णसंकमट्ठाणपरिवाडीओ हवंति, संतकम्मपक्खेवं पडि एक्किस्से चेव संकमट्ठाणपरिवाडीए समुप्पाइदत्तादो । एदिस्से च विरलणाए आयामो असंखेज्जलोगमेत्तो त्ति णत्थि संदेहो, पुव्वुत्तपंचभागहाराणमण्णोण्णसंवग्गेणुप्पण्णरासिस्स तप्पमाणत्ताविरोहादो । णवरि जहण्णसंतकम्मणिबंधणपढमपरिवाडिसंगहणट्ठमेसा विरलणा रूवाहिया कायव्वा । पुणो एदेणायामेण परिणामट्ठाणमेत्तविक्खंभे गुणिदे सव्वासिं

पर गुणितकर्मांशिकलक्षणसे आकर दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान जीवके प्रकृत उत्कृष्ट द्रव्य प्राप्त होता है । इस प्रकार इन दोनों द्रव्योंको स्थापित कर यहाँ पर जघन्य द्रव्यका उत्कृष्ट द्रव्यमें भाग देने पर योगगुणकारसे गुणित अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार आता है । पुनः जघन्य द्रव्यके घटानेके लिए इस भागलब्धको एक कम करके उससे जघन्य द्रव्यके गुणित करने पर तथा जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट द्रव्योंमेंसे घटाने पर शुद्ध शेष द्रव्य आता है । अब इस द्रव्यको सत्कर्म प्रक्षेपके प्रमाणसे करते हैं ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—इसके नीचे विध्यात भागहारको तथा दो असंख्यात लोक और योगगुणकार तथा अपकर्षण उत्कर्षणभागहारकी एक कम परस्पर गुणित राशिको परस्पर संवर्गित कर और विरलन कर उस विरलित राशिके प्रत्येक एक पर शुद्ध शेष द्रव्यको समान खण्ड कर देने पर एक एक रूपके प्रति सत्कर्म प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है । यहाँ पर इस विरलनके जितने रूप हैं उतनी ही यहाँ पर उत्पन्न हुई संक्रम परिपाटियाँ होती हैं, क्योंकि सत्कर्म प्रक्षेपके प्रति नियमसे एक एक संक्रमस्थान परिपाटी उत्पन्न की गई है । और इस विरलनका आयाम असंख्यात लोकप्रमाण है इसमें सन्देह नहीं, क्योंकि पूर्वोक्त पाँच भागहारोंके परस्पर गुणा करनेसे उत्पन्न हुई राशि तत्प्रमाण होनेमें कोई विरोध नहीं आता । किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य सत्कर्मनिमित्तक प्रथम परिपाटीका संग्रह करनेके लिए यह विरलन एक अधिक करना चाहिए । पुनः इस आयामसे परिणामस्थान मात्र

परिवाडीणं सव्वसंकमट्ठाणाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होंति। किमेत्थ संकमट्ठाणपरिवाडीण-मायामो बहुगो किं वा विक्खंभो त्ति पुच्छिदे विक्खंभादो आयामो असंखेज्जगुणो। कुदो एदमवगम्मदे? पढमपरिवाडिजहण्णसंकमट्ठाणादो तत्थेवुक्कस्ससंकमट्ठाणं विसेसाहियं इदि सुत्ताविरुद्धपुव्वाइरियवक्खाणादो। तदो एत्थुप्पण्णासेससंकमट्ठाणाणं पमाणमसंखेज्जा लोगा त्ति सिद्धं।

§ ७४२. संपहि एदं चरिमवियप्पपडिबद्धसंतकम्मं समऊणदुसमऊणादिकमेण बेछावट्ठिकालं सव्वमोदारिय गुणिदकम्मंसियस्स कालपरिहाणीए ठाणपरूवणं वत्तइस्सामो। तं जहा—एगो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीए मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं करेमाणो एयगोवुच्छ-मेत्तेणूणं काऊण तत्तो णिप्पिडिय दो-तिण्णितिरिक्खभवग्गहणाणि बोलाविय सव्वलहुं देवेसुप्पज्जिय सम्मत्तपडिलंभेण समऊणबेछावट्ठीओ भमियूण दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तकरणचरिमसमयम्मि वट्टमाणो सयलबेछावट्ठीओ भमिय अधापवत्त चरिमसमयम्मि पुव्वमुप्पाइदसंकमट्ठाणसंतकम्मिएण सरिसो- तं मोत्तूण इमं घेत्तूण अप्पणो ऊणीकयदव्वमेत्तमेत्थ वड्ढावेयव्वं। तं कधं वड्ढाविज्जदि त्ति वुत्ते वुच्चदे। ओकड्डुक्कड्डण-भागहारं जोगगुणगारं विज्झादसंकमभागहारं बेअसंखेज्जा लोगे च अण्णोण्णगुणे काऊण

विष्कम्भके गुणित करने पर सब परिपाटियोंके सब संक्रमस्थान असंख्यात लोकप्रमाण होते हैं। क्या यहाँ पर संक्रमस्थान परिपाटियोंका आयाम बहुत है या विष्कम्भ बहुत है ऐसा पूछने पर विष्कम्भसे आयाम असंख्यातगुणा है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है?

समाधान—प्रथम परिपाटीके जघन्य संक्रमस्थानसे वहीं पर उत्कृष्ट संक्रमस्थान विशेष अधिक है इस सूत्रके अविरुद्ध पूर्वाचार्यके व्याख्यानसे जाना जाता है।

इसलिए यहाँ पर उत्पन्न हुए समस्त संक्रमस्थानोंका प्रमाण असंख्यात लोक यह सिद्ध हुआ।

§ ७४२. अब अन्तिम विकल्पसे सम्बन्ध रखनेवाले इस सत्कर्मको एक समय कम, दो समय कम आदिके क्रमसे दो छयासठ सागरके सब कालको उतार कर गुणितकर्मांशिक जीवके काल परिहानिसे स्थान प्ररूपणाको बतलाते हैं। यथा—सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट कर तथा उसमेंसे एक गोपुच्छामात्र कम करके और वहाँसे निकल कर तथा दो-तीन तिर्यञ्च भवोंको बिताकर अतिशीघ्र देवोंमें उत्पन्न होकर सम्यक्त्वको प्राप्त कर एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर तथा दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान कोई एक गुणित कर्मांशिक जीव पूरे दो छयासठ सागर काल तक भ्रमण कर अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें पूर्वमें उत्पादित संक्रमस्थानसत्कर्मके समान है, इसलिए उसे छोड़ कर और इसे ग्रहण कर अपना कम किया गया मात्र द्रव्य यहाँ पर बढ़ाना चाहिए। वह कैसे बढ़ाया जाता है ऐसा पूछने पर कहते हैं—अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, योगगुणकार, विध्यात संक्रमभागहार और दो असंख्यात लोकोंको परस्पर गुणितकर तथा डेढ़ गुणहानिसे भाजित

दिवड्ढगुणहाणीए ओवट्टिय विरलिऊणेयगोवुच्छदव्वं समखंडं करिय दिण्णे तत्थेगेगरूवस्स एगेगसंतकम्मपक्खेवपमाणं पावइ। पुणो एत्थेगरूवधरिदं घेत्तूण पुव्विल्लसंतकम्मस्सुवरि पक्खित्ते अण्णमपुणरुत्तसंकमट्ठाणणिबंधणं संतकम्मट्ठाणमुप्पज्जदि। एदमस्सिदूण पुव्वुप्पण्ण-संकमट्ठाणाणमुवरि परिणामट्ठाणमेत्तविक्खंभेणासंखेज्जलोगभागवड्ढीए अण्णा अपुणरुत्त-संतकम्मट्ठाणपरिवाडी समुप्पाएयव्वा। एवमुप्पण्णुप्पण्णसंतकम्मस्सुवरि एगेगसंतकम्म-पक्खेवं पक्खिविय णेदव्वं जाव विरलणरासिमेत्ता संतकम्मपक्खेवा पइट्ठा त्ति। एवं पविट्ठे पुव्वुप्पण्णसंकमट्ठाणाणमुवरि विरलणरासिमेत्तीओ चेव अपुणरुत्तसंकमट्ठाण-परिवाडीओ समुप्पण्णाओ। एवं वड्ढाविदे समयूणवेछावट्ठिचरिमसमयअधापवत्तदव्वं पि उक्कस्सं जादं। णवरि एयसमयमोकड्डिऊण विणासिददव्वमेत्तमेगसमयविज्झादसंकम-दव्वमेत्तं च एत्थ अहियमत्थि। तं पि संतकम्मपक्खेवपमाणं कादूण जाणिय वड्ढावेयव्वं। एसो विसेसो उवरि वि सव्वत्थ वत्तव्वो।

§ ७४३. पुणो अण्णेगो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीए मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं करेमाणो तत्थेयगोवुच्छदव्वमेत्तेणूणं कादूण तत्तो णिस्सरिय पुव्वविहाणेण सव्वलहुं सम्मत्तमुप्पाइय दुसमऊणवेछावट्ठीओ परिभमिय दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय चरिम-समयअधापवत्तकरणो होदूण ट्ठिदो। एसो पुव्विल्लेण सरिसो। पुणो तप्परिहारेण इमं घेत्तूण पुव्वविहाणेण अप्पणो ऊणीकयदव्वमेत्तमेत्थ वड्ढाविय गेण्हिदव्वं। एदेण विहिणा

कर जो लब्ध आवे उसे विरलन कर उस पर एक गोपुच्छामात्र द्रव्यको समान खंड कर देने पर वहाँ एक एक विरलन अंकके प्रति एक एक सत्कर्म प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है। पुनः यहाँ पर एक विरलन अंकके प्रति प्राप्त द्रव्यको ग्रहण कर पहलेके सत्कर्मके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर अन्य अपुनरुक्त संक्रमस्थानका कारणभूत सत्कर्मस्थान उत्पन्न होता है। अब इसका आश्रय कर पूर्वमें उत्पन्न हुए संक्रमस्थानोंके ऊपर परिणामस्थानमात्र विष्कम्भके साथ असंख्यात लोक भागवृद्धिसे अन्य अपुनरुक्त सत्कर्मस्थान परिपाटी उत्पन्न करनी चाहिए। इस प्रकार पुनः उत्पन्न हुए सत्कर्मके ऊपर एक एक सत्कर्म प्रक्षेपको प्रक्षिप्त कर विरलन राशिके बराबर सत्कर्मप्रक्षेपोंके प्रविष्ट होने तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार प्रविष्ट होने पर पूर्वमें उत्पन्न हुए संक्रमस्थानोंके ऊपर विरलन राशि प्रमाण ही अपुनरुक्त संक्रमस्थान परिपाटियाँ उत्पन्न हुई हैं। इस प्रकार बढ़ाने पर एक समय कम दो छ्यासठ सागर कालके अन्तिम समयमें अधःप्रवृत्त द्रव्य भी उत्कृष्ट हो गया। किन्तु इतनी विशेषता है कि एक समयमें अपकर्षित होकर विनाशको प्राप्त होनेवाला द्रव्य तथा एक समयमें विध्यातसंक्रमद्रव्य यहाँ पर अधिक हैं, इसलिए उसे भी सत्कर्मप्रक्षेपप्रमाण करके जानकर बढ़ाना चाहिए। यह विशेष आगे भी सर्वत्र कहना चाहिए।

§ ७४३. पुनः सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करनेवाला अन्य एक गुणित कर्मांशिक जो जीव उसमें एक गोपुच्छामात्र द्रव्यसे न्यून करके और वहाँ से निकल कर पूर्वोक्त विधिसे अतिशीघ्र सम्यक्त्वको उत्पन्न कर दो समय कम दो छ्यासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो अन्तिम समयवर्ती अधःप्रवृत्तकरण होकर स्थित है वह पहलेके जीवके सदृश है। पुनः उसके परिहार द्वारा इसे ग्रहण कर पूर्व विधिसे अपने कम कि-

तिसमऊण-चदुसमऊण-पंचसमऊणादिकमेण बेछावट्ठिकालो सव्वो संधीओ जाणिऊणो-दारेयव्वो जाव चरिमवियप्पं पत्तो त्ति। तत्थ सव्वचरिमवियप्पे भण्णमाणे एगो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीए मिच्छत्तदव्वमोघुक्कस्सं कादूण दो-तिण्णिभवग्गहणाणि तिरिक्खेसु गमिय तदो मणुसेसुववज्जिय अट्ठवस्साणमंतोमुहुत्ताहियाणमुवरि उवसम-सम्मत्तं घेत्तूण तक्कालब्भंतरे चेवाणंताणुबंधिचउक्कं विसंजोइय तदो वेदयसम्मत्तं पडि-वज्जिय सव्वजहण्णंतोमुहुत्तकालेण दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तकरणचरिम-समए वट्टमाणो एत्थतणसव्वपच्छिमवियप्पसामिओ होइ।

§ ७४४. संपहि एवमुप्पण्णासेससंकमट्ठाणाणमायामविक्खंभपमाणं केत्तियमिदि भणिदे असंखेज्जलोगमेत्तं होइ। तं कथं ? खविदकम्मंसियजहण्णदव्वं गुणिदुक्कस्सदव्वादो सोहिय सुद्धसेसे जत्तिया संतकम्मपक्खेवा लब्भंति तत्तियमेत्तमेत्थायामपमाणं होइ। तम्मि आणिज्जमाणे जहण्णदव्वमिच्छिय दिवड्ढगुणहाणिगुणिदमेदमेइंदियसमयपबद्धं ठविय अंतोमुहुत्तोवट्टिदोकड्डुक्कड्डणभागहारेण बेछावट्ठिकालब्भंतरे णाणागुणहाणिसला-गाणमण्णोण्णब्भत्थरासिणा[1] तम्मि भागे हिदे अधापवत्तचरिमसमयजहण्णदव्वमागच्छदि। एदमेवं चेव ठविय उक्कस्सदव्वमिच्छामो त्ति दिवड्ढगुणहाणिगुणिदमेगमेइंदियसमयपबद्धं

गये द्रव्यमात्रको बढ़ा कर ग्रहण करना चाहिए। इस विधिसे तीन समय कम, चार समय कम और पाँच समय कम आदि क्रमसे पूरा दो छ्यासठ सागर काल सन्धियोंको जानकर अन्तिम विकल्पके प्राप्त होने तक उतारना चाहिए। वहाँ सबसे अन्तिम विकल्पका कथन करने पर जो कोई एक गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वके द्रव्यको ओघ उत्कृष्ट करके तथा तिर्यञ्चोंमें दो-तीन भव बिताकर अनन्तर मनुष्योंमें उत्पन्न होकर आठ वर्ष और अन्तर्मुहूर्तके बाद उपशम सम्यक्त्वको ग्रहण कर उस कालके भीतर ही अनन्तानुबन्धी चतुष्ककी विसंयोजना करके अनन्तर वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त होकर सबसे जघन्य अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत होकर अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान है वह यहाँके सबसे अन्तिम विकल्पका स्वामी होता है।

§ ७४४. अब इस प्रकार उत्पन्न हुए समस्त संक्रमस्थानोंके आयाम और विष्कम्भका प्रमाण कितना है ऐसा पूछने पर असंख्यात लोकप्रमाण है।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि क्षपित कर्मांशिक जीवके जघन्य द्रव्यको गुणितकर्मांशिक जीवके उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे घटा कर शेष बचे द्रव्यमें जितने सत्कर्मप्रक्षेप प्राप्त होते हैं उतना यहाँ पर आयाम का प्रमाण होता है। उसके लाने पर जघन्य द्रव्यके लानेकी इच्छासे डेढ़ गुणहानिसे गुणित एकेन्द्रिय सम्बन्धी एक समयप्रबद्धको स्थापित कर अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षणभाग-हारसे तथा दो छ्यासठ सागर कालके भीतर नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशिसे उसके भाजित करने पर अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य द्रव्य आता है। पुनः इसे इसी

---

१ आप्रतौ रासी च ताप्रतौ रासी (सिणा) इति पाठः।

ठविय जोगगुणगारेण गुणिदे पयदविसयुक्कस्सदव्वं होइ। एत्थ जहण्णदव्वेणुक्कस्सदव्वे भागे हिदे भागलद्धमोकड्डुक्कड्डणभागहार०—वेछावट्ठि० अण्णोण्णब्भत्थरासि-जोगगुणगाराण-मण्णोण्णसंवग्गमेत्तं होइ। पुणो एदेण भागलद्धेण रूवूणेण जहण्णदव्वे गुणिदे जहण्णदव्व-मुक्कस्सदव्वादो सोहिय सुद्धसेसदव्वमागच्छइ।

§ ७४५. संपहि एदं दव्वं संतकम्मपक्खेवपमाणेण कस्सामो। तं जहा—एय-जहण्णसंतकम्ममेत्तदव्वादो जइ विज्झादभागहारवेअसंखेज्जलोगाणमण्णोण्णब्भासजणिद-रासिमेत्ता संतकम्मपक्खेवा लब्भंति तो ओकड्डुक्कड्डण०भागहारवेछावट्ठि-अण्णोण्णब्भत्थ-रासि-जोगगुणगाराणमण्णोण्णसंवग्गजणिदरूवूणरासिमेत्तजहण्णसंतकम्मेसु केत्तियमेत्ते संतकम्मपक्खेवे लभामो त्ति पमाणेण फलगुणिदिच्छाए ओवट्टिदाए ओकड्डु०भागहारवे-छावट्ठिसागरोवमअण्णोण्णब्भत्थरासि-जोगगुणगार - विज्झादभागहार - वेअसंखेज्जलोगाण-मण्णोण्णसंवग्गमेत्ता संतकम्मपक्खेवा लद्धा हवंति। तदो इमे छब्भागहारे अण्णोण्ण-ब्भत्थसरूवे विरलेऊण पुव्विल्लसुद्धसेसदव्वं समखंडं करिय दिण्णे विरलणरूवं पडि एगेगसंतकम्मपक्खेवपमाणं पावेदि त्ति एत्थुप्पण्णासेससंतकम्मट्ठाणपरिवाडीणमायामो विरलणरासिमेत्तो चेव होइ। णवरि जहण्णसंतकम्मविसयजहण्णपरिवाडीसंगहणट्ठमेसा

प्रकार स्थापित कर उत्कृष्ट द्रव्य लानेकी इच्छासे डेढ़ गुणहानि से गुणित एकेन्द्रिय सम्बन्धी एक समय प्रबद्धको स्थापित कर योगगुणकारके द्वारा गुणित करने पर प्रकृत विषय सम्बन्धी उत्कृष्ट द्रव्य होता है। यहाँ पर जघन्य द्रव्यका उत्कृष्ट द्रव्यमें भाग देने पर जो लब्ध आवे वह अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्तराशि और योगगुणकारके परस्पर संवर्गित प्रमाण होता है। पुनः एक कम इस भाग लब्धसे जघन्य द्रव्यके गुणित करने पर जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे घटा कर शुद्ध शेष द्रव्य आता है।

§ ७४५. अब इस द्रव्यको सत्कर्म प्रक्षेप प्रमाण करते हैं। यथा—एक जघन्य सत्कर्ममात्र द्रव्यसे यदि विध्यातभागहार और दो असंख्यात लोकोंके परस्पर गुणा करनेसे उत्पन्न हुई राशि-प्रमाण सत्कर्म प्रक्षेप प्राप्त होते हैं तो अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, दो छयासठ सागरकी अन्यो-न्याभ्यस्त राशि और योगगुणकारके परस्पर संवर्गसे उत्पन्न हुई एक कम राशिप्रमाण जघन्य सत्कर्मोंमें कितने सत्कर्म प्रक्षेप प्राप्त होंगे इस प्रकार फल गुणित इच्छामें प्रमाणका भाग देने पर अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि, योगगुणकार, विध्यात भागहार और दो असंख्यात लोकोंके परस्पर संवर्गमात्र सत्कर्मप्रक्षेप प्राप्त होते हैं। इसलिए परस्पर गुणितरूप इन छह भागहारोंका विरलनकर पूर्वके शुद्ध शेष द्रव्यको समखण्ड करके देने पर प्रत्येक विरलनके प्रति एक एक सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है, इसलिए यहाँ पर उत्पन्न हुई समस्त सत्कर्मस्थान परिपाटियोंका आयाम विरलन राशिप्रमाण ही होता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि जघन्य सत्कर्मविषयक जघन्य परिपाटीका संग्रह करनेके लिए यह विरलन एक अधिक करना

विरलणा रूवाहिया कायव्वा। विक्खंभो पुण परिणामट्ठाणमेत्तो सव्वपरिवाडीसु, तस्सावट्ठिदसरूवेणु लंभादो। पुणो एदेसिं विक्खंभायामाणं संवग्गे कदे एत्थुप्पण्णासेस-परिवाडीणं सव्वसंकमट्ठाणाणि होंति। एवं गुणिद०कालपरिहाणीए संकमट्ठाणपरूवणा समत्ता।

§ ७४६. संपहि तस्सेव संतमस्सिऊण ट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—एगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण असण्णिपंचिंदिएसु देवेसु च कमेणुप्पज्जिय अंतोमुहुत्तेण सव्वविसुद्धो होदूण सम्मत्तुप्पायणट्ठं तिण्णि वि करणाणि कुणमाणो अधापवत्तकरणमणंतगुणाए विसोहीए बोलिय अपुव्वकरणं पविट्ठो तत्थ गुणसेढिमाढवेदि। तत्थापुव्वकरणपढमसमए असंखेज्जलोगमेत्ताणि गुणसेढिणिबंधणपरिणामट्ठाणाणि अत्थि। एवं बिदियादिसमएसु वि। तेसु पढमसमयजहण्णपरिणामादो तत्थेवुक्कस्सपरिणामट्ठाणमणंतगुणं, पढमसमयउक्कस्स-परिणामट्ठाणादो बिदियसमयजहण्णपरिणामट्ठाणमणंतगुणं, तत्तो तत्थेवुक्कस्सपरिणाम-ट्ठाणमणंतगुणं, बिदियसमयउक्कस्सपरिणामादो तदियसमयजहण्णपरिणामट्ठाणमणंतगुणं, तत्थेवुक्कस्सपरिणामट्ठाणमणंतगुणं। एवमंतोमुहुत्तकालं गच्छदि जाव अपुव्वकरणचरिमसमयो त्ति। एत्थुक्कस्सपरिणामेहि चेव गुणसेढिमेत्तो करावेयव्वो। किमट्ठमेवं कराविज्जदे? ण, अण्णहा मिच्छत्तदव्वस्स जहण्णभावाणुप्पत्तीदो।

चाहिए। परन्तु विष्कम्भ परिणामस्थान प्रमाण है, क्योंकि सब परिपाटियोंमें वह अवस्थित रूपसे उपलब्ध होता है। पुनः इन विष्कम्भों और आयामोंका परस्पर संवर्ग करने पर यहाँ पर उत्पन्न हुई सब परिपाटियोंके सब संक्रमस्थान होते हैं। इस प्रकार गुणितकर्मांशिक जीवके काल परि-हाणिका आश्रय लेकर संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ७४६. अब उसी जीवके सत्कर्मका आश्रय लेकर स्थानोंकी प्ररूपणा करते हैं। यथा—कोई एक जीव क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे आकर असंज्ञी पञ्चेन्द्रियोंमें और देवोंमें क्रमसे उत्पन्न होकर तथा अन्तर्मुहूर्तमें सर्व विशुद्ध होकर सम्यक्त्वको उत्पन्न करनेके लिए तीनों ही करणोंको करता हुआ अधःप्रवृत्तकरणको अनन्तगुणी विशुद्धिके साथ बिताकर अपूर्वकरणमें प्रविष्ट हुआ और वहाँ गुणश्रेणिरचनाका आरम्भ किया। वहाँ अपूर्वकरणके प्रथम समयमें असंख्यात लोकमात्र गुणश्रेणिके कारणभूत परिणामस्थान होते हैं। इसी प्रकार द्वितीयादि समयोंमें भी वे होते हैं। उनमें प्रथम समयके जघन्य परिणामसे वहां उत्कृष्ट परिणामस्थान अनन्तगुणा है। तथा प्रथम समयके उत्कृष्ट परिणामस्थानसे दूसरे समयका जघन्य परिणामस्थान अनन्तगुणा है और उससे वहीं पर उत्कृष्ट परिणामस्थान अनन्तगुणा है। दूसरे समयके उत्कृष्ट परिणामस्थानसे तीसरे समयका जघन्य परिणाम स्थान अनन्तगुणा है। वहीं पर उत्कृष्ट परिणामस्थान अनन्तगुणा है। इस प्रकार अपूर्वकरणका अन्तिम समय प्राप्त होने तक अन्तर्मुहूर्त काल चला जाता है। यहाँ पर उत्कृष्ट परिणामोंके द्वारा ही गुणश्रेणिकी रचना करनी चाहिए।

शंका—इस प्रकार किसलिए कराया जाता है?

समाधान—नहीं, क्योंकि ऐसा कराये बिना मिथ्यात्वके द्रव्यका जघन्यपना नहीं उत्पन्न हो सकता।

§ ७४७. तदो एदेण विहाणेणापुव्वकरणं समाणिय अणियट्टिकरणं पविट्ठो । एवं पविट्ठस्स असंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाणि णत्थि, अंतोमुहुत्तकालमेक्केक्को चेव अणियट्टिपरिणामो होइ । तदो एत्थ वि गुणसेढीए बहुदव्वगालणं कादूण चरिमसमयमिच्छाइट्ठी जादो । से काले उवसमसम्माइट्ठी होदूण तक्काले चेव सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणि गुणसंकमेण पूरेमाणो सव्वुक्कस्सगुणसंकमकालेण सव्वजहण्णगुणसंकमभागहारेण च पूरेदि त्ति वत्तव्वं मिच्छत्तदव्वस्स जहण्णीकरणट्ठं अण्णहा तदणुप्पत्तीदो । एदेण विहिणा गुणसंकमकालं वोलिय विज्झादसंकमे पडिय अंतोमुहुत्तेण वेदयसम्मत्तं पडिवण्णो वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय अंतोमुहुत्तावसेसे दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तकरणचरिमसमयम्मि जहण्णपरिणामणिबंधणविज्झादसंकमेण संकामेमाणो जहण्णसंकमट्ठाणसामिओ होइ । संपहि एदमादिं कादूण असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि पुव्वविहाणेणुप्पाइय णेदव्वाणि जाव एत्थतणदव्वमुक्कस्सं जादं ति ।

§ ७४८. तदो वेछावट्ठिकालं सव्वं संतकम्मे ओदारिज्जमाणे अण्णेगो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीए मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं करेमाणो तत्थेयगोवुच्छदव्वमेत्तमेयसमयमोकड्डणाए विणासिददव्वमेत्तमेयसमयविज्झादसंकमदव्वमेत्तं च ऊणीकरियागंतूण असण्णिपंचिंदिएसु देवेसु च जहाकममुप्पज्जिय सम्मत्तपडिलंभेण वेछावट्ठीओ भमिय दुचरिमसमय-

§ ७४७ इसलिए इस विधिसे अपूर्वकरणको समाप्त कर अनिवृत्तिकरणमें प्रविष्ट हुआ । इस प्रकार प्रविष्ट हुए जीवके असंख्यात लोकप्रमाण परिणामस्थान नहीं हैं, क्योंकि अन्तर्मुहूर्त कालतक एक एक ही अनिवृत्ति परिणाम होता है । इसलिए यहाँ पर भी गुणश्रेणिके द्वारा बहुत द्रव्यको गलाकर अन्तिम समयवर्ती मिथ्यादृष्टि हो गया । तथा अनन्तर समयमें उपशमसम्यग्दृष्टि होकर उसी समय सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वको गुणसंक्रमके द्वारा पूरता हुआ सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रमके कालके द्वारा और सबसे जघन्य गुणसंक्रमके भागहार द्वारा पूरता है ऐसा यहाँ पर मिथ्यात्वके द्रव्यको जघन्य करनेके लिए कहना चाहिए, अन्यथा वह जघन्य नहीं किया जा सकता । पुनः इस विधिसे गुणसंक्रमके कालको बिताकर विध्यातसंक्रममें गिरकर अन्तर्मुहूर्त कालके द्वारा वेदकसम्यक्त्वको प्राप्त हुआ । फिर छयासठ सागर कालतक परिभ्रमण करके अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत होकर अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य परिणामके कारणभूत विध्यातसंक्रमके द्वारा संक्रम करता हुआ जघन्य संक्रमस्थानका स्वामी होता है। अब इस स्थानसे लेकर यहाँका द्रव्य उत्कृष्ट होने तक असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान पूर्व विधिसे उत्पन्न करके ग्रहण करने चाहिए ।

§ ७४८. अनन्तर सम्पूर्ण दो छयासठ सागर कालतक सत्कर्मके उतारने पर जो अन्य एक गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करता हुआ वहाँ पर एक गोपुच्छामात्र द्रव्यको, एक समय तक अपकर्षणके द्वारा विनाशको प्राप्त हुए द्रव्यको तथा एक समय तक विध्यात संक्रम द्रव्यको कम करके आया और असंज्ञी पञ्चेन्द्रियों तथा देवोंमें क्रमसे उत्पन्न होकर सम्यक्त्वकी प्राप्तिके साथ दो छयासठ सागर कालतक परिभ्रमण कर द्विचरमसमयमें अधः-

अधापवत्तकरणो होदूण ट्ठिदो एसो पुव्विल्लेण सह सरिसो। संपहि इमं घेत्तूण इमेगूणीकयदव्वम्मि जात्तिया संतकम्मपक्खेवा संभवंति तात्तियमेत्तसंकमट्ठाणपरिवाडीओ समुप्पाएदव्वाओ। एत्थ संतकम्मपक्खेववड्ढणविहाणं जाणिय कायव्वं। एवमेदेण विहाणेण संधीओ जाणिऊण ओदारेदव्वं जाव बेछावट्ठीणमादीए आवलियवेदगसम्मादिट्ठि त्ति। तत्तो हेट्ठा ओदारिज्जमाणे मिच्छत्तस्स गोवुच्छदव्वं णत्थि त्ति विज्झादसंकमदव्वमेत्तेणूणं करियागंतूण हेट्ठिमाणंतरसमयम्मि ट्ठिदेण पुव्विल्लं सरिसं कादूण तदूणीकयदव्वं पुणो वि वड्ढाविय ओदारेयव्वं जाव उवसमसम्मत्तद्धाए संखेज्जे भागे ओयरिय विज्झादं पदिदपढमसमयं पत्तो त्ति। संपहि एत्तो हेट्ठा ओदारेदुं ण सक्कदे। किं कारणं? एत्थेव विज्झादसंकमो समत्तो। एत्तो हेट्ठा गुणसंकमविसयो तेणेदस्स सरिसकरणोवायाभावादो। एवं गुणिदकम्मंसियसंतमस्सिऊण ट्ठाणपरूवणा गया।

§ ७४६. संपहि खविदकम्मंसियस्स कालपरिहाणिं कादूणोदारिज्जमाणे गुणिदकम्मंसियभंगो चेव। णवरि जत्थ ऊणं कदं तत्थेगेगगोवुच्छदव्वमेत्तमेगसमयमोकड्डुणाए विणासिददव्वमेत्तं च विज्झादसंकमदव्वेण सह उवरिमसमयदव्वम्मि वड्ढाविय हेट्ठिमसमए दव्वेण सरिसं कादूण समऊणादिकमेण संधीओ जाणिऊण ओदारेदव्वं जाव अंतोमुहुत्तूणपढमछावट्ठिं सव्वमोइण्णो त्ति। पुणो तत्थ ट्ठविय चत्तारि पुरिसे अस्सिऊण वड्ढावेयव्वं

प्रवृत्तकरण होकर स्थित हुआ वह पहलेके जीवके समान है। अब इसे ग्रहण कर इसके द्वारा कम किये गये द्रव्यमें जितने सत्कर्मप्रक्षेप सम्भव हैं उतनी संक्रमस्थान परिपाटियाँ उत्पन्न करनी चाहिए। यहाँ पर सत्कर्मप्रक्षेपकी वृद्धिके विधानको जानकर करना चाहिए। इस प्रकार इस विधिसे सन्धियोंको जानकर दो छ्यासठ सागरके प्रारम्भमें वेदकसम्यग्दृष्टिके एक आवलिकालके होनेतक उतारना चाहिए। उससे नीचे उतारने पर मिथ्यात्वका गोपुच्छद्रव्य नहीं है इसलिए विध्यातसंक्रमप्रमाण द्रव्यसे न्यून कर आकर अनन्तर अधस्तन समयमें स्थित हुए जीवके द्वारा पहलेके द्रव्यको समान कर उस कम किये गये द्रव्यको फिर भी बढ़ा कर उपशमसम्यक्त्वके कालके संख्यात बहुभाग उतारकर विध्यातसंक्रमके प्रथम समयके प्राप्त होनेतक उतारना चाहिए। अब इससे नीचे उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि यहीं पर विध्यातसंक्रम समाप्त हो गया है। इससे नीचे गुणसंक्रमका विषय है, इसलिए इसके सदृश करनेका कोई उपाय नहीं है। इस प्रकार गुणित कर्मांशिक जीवके सत्कर्मका आश्रय कर स्थानप्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ७४६. अब क्षपितकर्मांशिक जीवके कालपरिहानिको करके उतारने पर गुणितकर्मांशिकके समान ही भंग होता है। किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ पर एक कम किया गया है वहाँपर एक एक गोपुच्छाप्रमाण द्रव्यका और एक समयमें अपकर्षणके द्वारा विनाशको प्राप्त हुए द्रव्यको विध्यातसंक्रमके द्रव्यके साथ अगले समयके द्रव्यमें बढ़ाकर अधस्तन समयमें स्थित द्रव्यके साथ समान करके एक समय न्यूनआदिके क्रमसे सन्धियोंको जानकर अन्तमुहूर्त कम प्रथम छ्यासठ सागरके सब द्रव्यके उतरने तक उतारना चाहिए। पुनः वहाँ पर स्थापित कर चार पुरुषोंका आश्रय कर गुणितकर्मांशिक जीवके अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयके योग्य उत्कृष्ट संक्रम द्रव्यके प्राप्त होने तक बढ़ाना

जाव गुणिदकम्मंसियअधापवत्तचरिमसमयपओगुक्कस्ससंकमदव्वं पत्तं ति । संपहि तस्सेव संतकम्मे ओदारिज्जमाणे गोवुच्छदव्वं विज्झादसंकमदव्वमेत्तं पुणो एगसमयमोकड्डणाए विणासिददव्वमेत्तं च वड्ढाविय ट्ठिदचरिमसमयअधापवत्तकरणो च अण्णेगो पुव्वविहाणेणागंतूण दुचरिमसमए ट्ठिदो च दो वि सरिसा । एवं जाणिऊणोदारेयव्वं जाव विज्झादसंकमपढमसमयो त्ति । एवमोदारिदे मिच्छत्तस्स विज्झादसंकममस्सिऊण ट्ठाणपरूवणा समत्ता होइ ।

§ ७५०. संपहि सुत्तसामित्तमस्सिऊण ट्ठाणपरूवणे कीरमाणे बेछावट्ठिसागरोवमाणि सागरोवमपुधत्तं च पयदपरूवणाए विसयो होइ ? तत्थ कालपरिहाणीए संतकम्मोदीरणाए च एसो चेव भंगो णिरवसेसमणुगंतव्वो, विसेसाभावादो । णवरि भज्ज-भागहारविसयं किंचि णाणत्तमत्थि त्ति तं जाणिय वत्तव्वं । एवमुप्पण्णासेससंकमट्ठाणाणमसंखेज्जलोगमेत्तविक्खंभायामाणं एगपदरागारेण रचणं कादूण एत्थ पुणरुत्तापुणरुत्तभावपरिक्खा कीरदे । तं जहा—

§ ७५१. पढमपरिवाडिजहण्णसंकमट्ठाणमसंखेज्जलोगेहिं खंडेऊण तत्थेयखंडे तम्मि चेव पडिरासिय पक्खित्ते तत्थेव विदियसंकमट्ठाणं होइ । पुणो एदेण असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणपरिवाडीओ समुल्लंघिऊणावट्ठिदसंकमट्ठाणपरिवाडीए पढमसंकमट्ठाणं च समाणं

चाहिए । अब उसीके सत्कर्मके उतारने पर विध्यातसंक्रमसम्बन्धी द्रव्यके बराबर गोपुच्छाके द्रव्यको और एक समयमें अपकर्षणके द्वारा विनाशको प्राप्त हुए द्रव्यको बढ़ाकर स्थित हुआ अन्तिम समयवर्ती अधःप्रवृत्तकरण जीव तथा पूर्वोक्त विधिसे आकर द्विचरम समयमें स्थित हुआ जीव ये दोनों समान हैं । इस प्रकार जानकर विध्यातसंक्रमके प्रथम समयके प्राप्त होनेतक उतारना चाहिए । इस प्रकार उतारने पर विध्यातसंक्रमके आश्रयसे मिथ्यात्वकी स्थानप्ररूपणा समाप्त होती है ।

§ ७५०. अब सूत्रमें निर्दिष्ट स्वामित्वका आश्रय लेकर हानि प्ररूपणाके करने पर दो छयासठ सागर और पृथक्त्व प्रमाणकाल प्रकृत प्ररूपणाका विषय होता है । यहाँ पर काल परिहानिके आश्रयसे और सत्कर्मकी उदीरणाके आश्रयसे यही भंग पूरी तरहसे जानना चाहिए, क्योंकि इसमें उससे कोई विशेषता नहीं है । किन्तु भज्यमान-भागहारविषयक कुछ भेद है सो उसे जानकर कहना चाहिए । इस प्रकार उत्पन्न हुए समस्त संक्रमस्थानोंके असंख्यात लोकप्रमाण विष्कम्भरूप आयामोंकी एक प्रतराकाररूपसे रचना करके यहाँ पर पुनरुक्त और अपुनरुक्तभावकी परीक्षा करते हैं । यथा—

§ ७५१. प्रथम परिपाटीसम्बन्धी जघन्य संक्रमस्थानको असंख्यात लोकोंसे भाजित कर उसमेंसे एक खण्डके उसीमें प्रतिराशि बनाकर प्रक्षिप्त करने पर वहीं पर दूसरा संक्रमस्थान होता है । पुनः असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान परिपाटियोंको उल्लंघन कर अवस्थित संक्रमस्थान परिपाटीका प्रथम संक्रमस्थान इसके समान होता है ।

शंका—वह कैसे ?

होइ । तं कथं ? संतकम्मपक्खेवागमणणिमित्तभूदमसंखेज्जलोगभागहारं विज्झादभागहारं च अण्णोण्णगुणं कादूण तत्थ जत्तियाणि रूवाणि तत्तियमेत्तसंतकम्मपक्खेवेसु पविट्ठेसु जा संकमट्ठाणपरिवाडी समुप्पज्जदि तिस्से पढमसंकमट्ठाणं पढमपरिवाडिविदियसंकमट्ठाणेण सह सरिसं होदि । किं कारणं ? तत्थ ट्ठिदसंतकम्मपक्खेवेसु विज्झादभागहारेणोवट्टिदेसु एगसंकमट्ठाणविसेसुप्पत्तीए परिप्फुडमुवलंभादो ।

§ ७५२. एदस्सेवद्धाणस्स णिरुत्तीकरणट्ठं भज्ज-भागहारमुहेण किंचि परूवणमेत्थ वत्तइस्सामो । तं जहा—जहण्णसंतकम्मठाणम्मि अंगुलस्सासंखेज्जदिभागभूदविज्झादभागहारेण भागे हिदे भागलद्धं पढमपरिवाडीए जहण्णसंकमट्ठाणं होइ । पुणो तम्मि चेव जहण्णसंतकम्मे जहण्णसंकमट्ठाणादो असंखेज्जलोगभागब्भहियसंकमट्ठाणागमणहेदुभूद-विज्झादभागहारेण भाजिदे तत्थेव विदियसंकमट्ठाणं होइ । संपहि एत्थ पढमसंकम-ट्ठाणादो अब्भहियविदियसंकमट्ठाणविसेसं घेत्तूण असंखेज्जलोगे विरलिय समखंडं कादूण दिण्णे विरलणरूवं पडि एगेगसंतकम्मपक्खेवपमाणं पावदि । तत्थ पढमरूवधरिदं घेत्तूण जहण्णसंतट्ठाणस्सुवरि पडिरासिय पक्खित्ते विदियसंकमट्ठाणपरिवाडीए णिमित्तभूदं विदियसंतकम्मट्ठाणमुप्पज्जदि । एत्थ जहण्णसंतट्ठाणादो अहियविदियसंतट्ठाणम्मि पक्खित्तसंतकम्मपक्खेवमवणेऊण पुध ट्ठविय पुणो सेसदव्वम्मि अंगुलस्सासंखे० भागेण

समाधान—क्योंकि सत्कर्मसम्बन्धी प्रक्षेपके लानेका निमित्तभूत असंख्यात लोकप्रमाण भागहारको और विध्यात संक्रमसम्बन्धी भागहारको परस्पर गुणित करके वहाँ जितने रूप प्राप्त हों तावन्मात्र सत्कर्मप्रक्षेपोंके प्रविष्ट होने पर जो संक्रमस्थानपरिपाटी उत्पन्न होती है उसकी प्रथम संक्रमस्थानसम्बन्धी परिपाटी दूसरे संक्रमस्थानके साथ समान होती है, क्योंकि वहाँ पर स्थित सत्कर्मप्रक्षेपोंके विध्यातसंक्रम भागहारके द्वारा भाजित करने पर एक संक्रमस्थान विशेषकी उत्पत्ति स्पष्टरूपसे उपलब्ध होती है ।

§ ७५२. अब इसी अध्वानकी निरुक्ति करनेके लिए भज्यमान भागहारके द्वारा कुछ प्ररूपणा यहाँ पर बतलाते हैं । यथा—जघन्य सत्कर्मस्थानके अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण भागहारके द्वारा भाजित करने पर जो भाग लब्ध आवे उतना प्रथम परिपाटीका जघन्य संक्रमस्थान होता है । पुनः उसी जघन्य सत्कर्ममें जघन्य संक्रमस्थानसे असंख्यात लोक भाग अधिक संक्रमस्थानके लानेके हेतुभूत विध्यातभागहारके द्वारा भाग देने पर वहीं पर दूसरा संक्रमस्थान होता है । अब यहाँ पर प्रथम संक्रमस्थानसे अधिक दूसरे संक्रमस्थान विशेषको ग्रहण कर उसे असंख्यात लोकका विरलन कर समान खण्ड करके देने पर एक-एक विरलन अंकके प्रति सत्कर्मका एक-एक प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है । उनमेंसे प्रथम अंकके प्रति प्राप्त प्रक्षेप द्रव्यको ग्रहण कर जघन्य सत्कर्म स्थानके ऊपर प्रतिराशि करके प्रक्षिप्त करने पर दूसरी संक्रमस्थान परिपाटीका निमित्तभूत दूसरा सत्कर्मस्थान उत्पन्न होता है । यहाँ पर जघन्य सत्कर्मस्थानसे अधिक दूसरे सत्कर्मस्थानमें प्रक्षिप्त किये गये सत्कर्मप्रक्षेपको घटा कर और अलग स्थापित कर पुनः शेष द्रव्यमें अंगुलके असंख्यातवें भागका भाग

भागे हिदे जं भागलद्धं जहण्णसंतट्ठाणं[1] जहण्णसंकमट्ठाणपमाणं होइ । एवं पुणो अवणेदूण ठुविदे अहियसंतकम्मपक्खेवस्स वि तेणेव भागहारेण भागो घेप्पदि त्ति अंगुलस्सासंखेज्जदिभागं हेट्ठा विरलिय अहियदव्वं समखंडं कादूण दिण्णे विरलणरूवं पडि संतकम्मपक्खेवस्सासंखेज्जदिभागो पावदि । तत्थेयखंडं घेत्तूण पुव्विल्लदव्वस्सुवरि पक्खित्ते जहण्णसंतट्ठाणं पढमसंकमट्ठाणादो असंखेज्जलोगभागुत्तरं होदूण तत्थेव विदियसंकमट्ठाणादो विसेसहीणमसंखेज्जलोगपडिभागेण विदियसंतट्ठाणस्स पढमसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि ।

§ ७५३. संपहि एवमुप्पण्णसंकमठाणम्मि संतकम्मपक्खेवमंगुलस्सासंखेज्जदिभागेण खंडेऊण तत्थेयखंडपमाणं पविट्ठं, तदियसंतट्ठाणपढमसंकमट्ठाणम्मि तारिसाणि दोण्णि खंडाणि पविट्ठाणि, चउत्थसंतट्ठाणपढमसंकमट्ठाणम्मि तारिसाणि तिण्णि खंडाणि पविट्ठाणि । एदेण कमेण अंगुलस्सासंखेज्जदिभागमेत्तद्धाणं गंतूण ट्ठिदसंतट्ठाणपढमसंकमट्ठाणम्मि तारिसाणि अंगुलस्सासंखेज्जदिभागमेत्तखंडाणि पविट्ठाणि । संपहि इमाणमंगुलस्सासंखेज्जदिभागमेत्तखंडाणं पमाणं केत्तियमिदि भणिदे जहण्णसंतट्ठाणपढमसंकमट्ठाणादो तस्सेव विदियसंकमट्ठाणम्मि अहियदव्वमसंखेज्जलोगेहिं खंडिदूणेयखंडमेत्तं होइ । उवरिमविरलणाए सयलेयरूवधरिदसंतकम्मपक्खेवमेत्तमेत्थ संकमसरूवेण पविट्ठमिदि भावत्थो ।

देने पर जो भाग लब्ध आवे उतना जघन्य सत्कर्मस्थानसम्बन्धी जघन्य संक्रमस्थानका प्रमाण होता है। इस प्रकार पुनः घटाकर स्थापित करने पर अधिक सत्कर्मप्रक्षेपका भी उसी भागहारके द्वारा भाग ग्रहण होता है, इसलिए अंगुलके असंख्यातवें भागको नीचे विरलन कर अधिक द्रव्यको समान खण्ड कर देने पर प्रत्येक विरलनरूपके प्रति सत्कर्मप्रक्षेपका असंख्यातवाँ भाग प्राप्त होता है। उनमेंसे एक खण्डको ग्रहण कर पूर्वोक्त द्रव्यके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर जघन्य सत्कर्मस्थान प्रथम संक्रमस्थानसे असंख्यात लोक भाग अधिक होकर वहीं पर दूसरे संक्रमस्थानसे विशेष हीन असंख्यात लोक प्रतिभागके आश्रयसे दूसरे सत्कर्मस्थानका प्रथम संक्रमस्थान उत्पन्न होता है।

§ ७५३. अब इस प्रकार उत्पन्न हुए संक्रमस्थानमें सत्कर्मप्रक्षेपका अंगुलके असंख्यातवें भागसे भाजित कर वहाँ पर एक खण्ड प्रमाण प्रविष्ट हुआ है। तीसरे सत्कर्मस्थानमें उस प्रकारके दो खण्ड प्रविष्ट हुए हैं और चौथे सत्कर्मस्थानके प्रथम संक्रमस्थानमें उसी प्रकारके तीन खण्ड प्रविष्ट हुए हैं। इस प्रकार इस क्रमसे अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण अध्वान जाकर स्थित हुए सत्कर्मस्थानके प्रथम संक्रमस्थानमें उस प्रकारके अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण खण्ड प्रविष्ट हुए हैं। अब अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण इन खण्डोंका प्रमाण कितना है ऐसा कहने पर जघन्य सत्कर्मस्थानके प्रथम संक्रमस्थानसे उसीके दूसरे संक्रमस्थानमें स्थित अधिक द्रव्यको असंख्यात लोकोंसे भाजित कर एक खण्ड प्रमाण होता है। उपरिम विरलनमें एक रूपके प्रति रखा गया समस्त सत्कर्मप्रक्षेप यहाँ पर संक्रमरूपसे प्रविष्ट हुआ है यह इसका भावार्थ है।

1 आ० प्रतौ संतट्ठाण ता०प्रतौ संत ट्ठाण (णं) इति पाठः

§ ७५४. संपहि जहण्णसंतट्ठाणप्पहुडि अंगुलस्सासंखेज्जदिभागमेत्तमुवरि चढिद-संतकम्मट्ठाणद्धाणमेगखंडयपमाणं करिय तदो एरिसाणि एक्क-दो-तिण्णिआदि जाव असंखेज्जलोगमेत्तखंडयाणि गंतूणावट्ठिदसंतट्ठाणम्मि पढमपरिवाडिपढमसंकमट्ठाणादो तत्थेव विदियसंकमट्ठाणविसेसमेत्तदव्वं पविट्ठं होइ। विज्झादभागहारेणुवरिमविरलण-मोवट्टिय तत्थ लद्धरूवमेत्तकंडएसु गदेसु जं संतकम्मट्ठाणं तत्थ संकमट्ठाणविसेसमेत्तदव्वं संतकम्मसरूवेण पविट्ठमिदि जं वुत्तं होइ।

§ ७५५. संपहि एत्तियमेत्तदव्वे पविट्ठे जं संतकम्मट्ठाणं तस्स जहण्णसंकमट्ठाणं जहण्णसंतट्ठाणविदियसंकमट्ठाणेण सह सरिसं होइ, आहो ण होदि त्ति पुच्छिदे ण होदि। किं कारणं? जहण्णसंतट्ठाणादो णिरुद्धसंतट्ठाणम्मि अहियदव्वमवणिय पुध ट्ठविदूण पुणो सेसदव्वम्मि अंगुलस्सासंखेज्जदिभागेण भागे हिदे भागलद्धं जहण्णसंतट्ठाणं पढमसंकमट्ठाणं च दो वि सरिसाणि। पुणो अवणिददव्वस्स वि तेणेव भागो घेप्पदि त्ति अंगुलस्सासंखेज्जदिभागमेत्तहेट्ठिमविरलणाए तम्मि दव्वे समखंडं करिय दिण्णे तत्थेयरूवधरिदमेत्तमेत्थ संकमसरूवेण वड्ढिददव्वं होइ। एदं घेत्तूण पडिरासिदजहण्ण-संकमट्ठाणम्मि पक्खित्ते णिरुद्धसंतट्ठाणपढमसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि। एदं च हेट्ठिमट्ठाणेसु केण वि सह सरिसं ण होदि, जहण्णसंकमट्ठाणादो संकमट्ठाणविसेसस्सासंखेज्जदिभागमेत्त-दव्वेणाब्भहियत्तादो।

§ ७५४. अब जघन्य सत्कर्मस्थानसे लेकर अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण ऊपर प्राप्त हुए सत्कर्मस्थानके अध्वानको एक खण्ड प्रमाण करके वहाँसे इसी प्रकारके एक, दो और तीन से लेकर असंख्यात लोकप्रमाण खण्ड जाकर स्थित हुए सत्कर्मस्थानमें प्रथम परिपाटीके प्रथम संक्रम-स्थानसे वहीं पर दूसरे संक्रमस्थानका विशेषमात्र द्रव्य प्रविष्ट होता है। विध्यात भागहारसे उपरिम विरलनको भाजित कर वहाँ पर जितने रूप प्राप्त हों उतने काण्डकोंके जाने पर जो सत्कर्म स्थान है उसमें संक्रमस्थान विशेषमात्र द्रव्य सत्कर्मरूपसे प्रविष्ट हुआ है यह उक्त कथनका तात्पर्य है।

§ ७५५. अब इतनेमात्र द्रव्यके प्रविष्ट होनेपर जो सत्कर्मस्थान है उसका जघन्य संक्रम-स्थान जघन्य सत्कर्मस्थानके दूसरे संक्रमस्थानके समान होता है या नहीं होता है ऐसा पूछने पर नहीं होता है, क्योंकि जघन्य सत्कर्मस्थानरूपसे विवक्षित सत्कर्मस्थानमेंसे अधिक द्रव्यको घटाकर और पृथक् स्थापित कर पुनः शेष द्रव्यमें अंगुलके असंख्यातवें भागका भाग देने पर जो भाग लब्ध आवे उतना जघन्य सत्कर्मस्थान और प्रथम संक्रमस्थान होता है, इसलिए ये दोनों समान हैं। पुनः घटाये गये द्रव्यका भी उसी प्रकार भागग्रहण करना चाहिए, इसलिए अंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण अधस्तन विरलनके ऊपर उसी द्रव्यको समान खण्ड करके देने पर वहाँ एक अंकके प्रति जितना द्रव्य प्राप्त हो उतना यहाँ पर संक्रमरूपसे वृद्धिको प्राप्त हुआ द्रव्य होता है। इसे ग्रहण कर प्रतिराशिरूप जघन्य संक्रमस्थानमें प्रक्षिप्त करने पर विवक्षित सत्कर्मस्थानका प्रथम संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। और यह अधस्तन स्थानोंमें किसीके भी साथ समान नहीं होता है, क्योंकि जघन्य संक्रमस्थानसे संक्रमस्थानविशेष असंख्यातवें भागप्रमाण द्रव्यरूपसे अधिक होता है।

§ ७५६. पुणो केत्तियमद्धाणं गंतूण सरिसं होदि त्ति भणिदे वुच्चदे—जहण्णसंतट्ठाणप्पहुडि असंखेज्जलोगमेत्तद्धाणमुवरि गंतूण ट्ठिदसंपहियणिरुद्धसंतकम्मट्ठाणादो उवरि सयलहेट्ठिमद्धाणपमाणमेयखंडयं कादूण तारिसाणि विज्झादभागहारमेत्तकंडयाणि गंतूण जं संतकम्मट्ठाणं तस्स पढमसंकमट्ठाणं जहण्णसंतट्ठाणविदियसंकमट्ठाणं च दो वि सरिसाणि, उवरिमविरलणरूवधरिदसव्वदव्वस्स संकमट्ठाणविसेसपमाणस्स णिरवसेसमेत्थ संकमसरूवेण पवेसदंसणादो । एदेण कारणेण विज्झादभागहारमसंखे०लोगभागहारं च अण्णोण्णगुणं कादूण चडिदद्धाणपरूवणा कया ।

§ ७५७. संपहि जहण्णसंतट्ठाणतदियसंकमट्ठाणमणंतरणिरुद्धसंतट्ठाणविदियसंकमट्ठाणेण सह सरिसं होइ । एदेण विहिणा णिरुद्धसंकमट्ठाणपरिवाडीए तदियादिसंकमट्ठाणाणि वि पढमपरिवाडिचउत्थादिसंकमट्ठाणेहिं सह पुणरुत्ताणि होदूण गच्छंति जाव पढमसंकमट्ठाणपरिवाडिचरिमसंकमट्ठाणेण सह एत्थतणदुचरिमसंकमट्ठाणं पुणरुत्तं होदूण णिट्ठिदं त्ति । पुणो एत्थतणचरिमसंकमट्ठाणं हेट्ठिमसंकमट्ठाणेण केण वि समाणं ण होदि त्ति तदो णियत्तिदूण विदियसंकमट्ठाणपरिवाडीए विदियसंकमट्ठाणं घेत्तूण तेण सह पुव्वुत्तसंतकम्मियपुणरुत्तसंकमट्ठाणपरिवाडीदो उवरिमपरिवाडीए पढमसंकमट्ठाणस्स पुणरुत्तभावो वत्तव्वो । पुणो विदियपरिवाडी तदियसंकमट्ठाणेण तत्थतणविदियसंकमट्ठाणं पुणरुत्तं होइ । एदेण विहिणा सेससंकमट्ठाणाणि वि पुणरुत्ताणि होदूण गच्छंति जाव

§ ७५६. पुनः कितना अध्वान जाकर सदृश होता है, ऐसा पूछने पर कहते हैं—जघन्य सत्कर्मस्थानसे लेकर असंख्यात लोकप्रमाण अध्वान ऊपर जाकर स्थित हुए साम्प्रतिक विवक्षित सत्कर्मस्थानसे ऊपर समस्त अधस्तन अध्वान प्रमाण एक खण्ड करके उसके समान विध्यातभागहारप्रमाण काण्डक जाकर जो सत्कर्मस्थान है उसका प्रथम संक्रमस्थान और जघन्य सत्कर्मस्थानका दूसरा संक्रमस्थान ये दोनों समान होते हैं, क्योंकि उपरिम विरलन रूपके प्रति रखे गये संक्रमस्थान विशेषप्रमाण सब द्रव्यका पूरी तरहसे यहाँ पर संक्रमरूपसे प्रवेश देखा जाता है। इसी कारणसे विध्यातभागहार और असंख्यात लोकप्रमाण भागहारको परस्पर गुणित कर ऊपर चढ़े हुए अध्वानकी प्ररूपणा की है।

§ ७५७. अब जघन्य सत्कर्मस्थानका तीसरा संक्रमस्थान अनन्तर विवक्षित सत्कर्मस्थानके दूसरे संक्रमस्थानके समान है। इस विधिसे विवक्षित संक्रमस्थान परिपाटीके तीसरे आदि संक्रमस्थान भी प्रथम परिपाटीके चौथे आदि संक्रमस्थानोंके साथ पुनरुक्त होकर तब तक जाते हैं जब तक प्रथम संक्रमस्थानकी परिपाटीके अन्तिम संक्रमस्थानके साथ यहाँका द्विचरम संक्रमस्थान पुनरुक्त होकर निष्पन्न हुआ है। पुनः यहाँका अन्तिम संक्रमस्थान किसी भी अन्तिम संक्रमस्थानके समान नहीं है, इसलिए उसमें लौटकर दूसरी संक्रमस्थानपरिपाटीके दूसरे संक्रमस्थानको ग्रहण कर उसके साथ पूर्वोक्त सत्कर्मसम्बन्धी पुनरुक्त संक्रमस्थानपरिपाटीसे उपरिम परिपाटीके प्रथम संक्रमस्थानका पुनरुक्तपना कहना चाहिए। पुनः दूसरी परिपाटीके तीसरे संक्रमस्थानके साथ वहाँ का दूसरा संक्रमस्थान पुनरुक्त है। इस विधिसे शेष संक्रमस्थान भी पुनरुक्त होकर तब तक जाते हैं जब तक दूसरी संक्रमस्थान

विदियसंकमट्ठाणपरिवाडीए चरिमसंकमट्ठाणेण पुव्वुत्तसंतकम्मियादो उवरिमसंकमट्ठाणपरिवाडीए दुचरिमसंकमट्ठाणं पुणरुत्तं होदूण पज्जवसिदं ति। एत्थ वि णिरुद्धपरिवाडीए चरिमसंकमट्ठाणं हेट्ठा केण वि सरिसं ण होइ त्ति तत्तो णियत्तिदूण पढमणिव्वग्गणकंडयतदियसंकमट्ठाणपरिवाडीए विदियसंकमट्ठाणं घेत्तूण तेण सह पुव्वुत्तसंतकम्मियादो उवरिमतदियसंकमट्ठाणपरिवाडीए पढमसंकमट्ठाणं सरिसं कादूण तदो पुव्वुत्तकमेण सेससंकमट्ठाणाणं पि पुणरुत्तभावो जोजेयव्वो जाव तत्थतणदुचरिमसंकमट्ठाणं हेट्ठिमतदियपरिवाडीए चरिमसंकमट्ठाणेण सरिसं होदूण परिसमत्तं ति। एत्थ वि चरिमसंकमट्ठाणं हेट्ठा केण वि सरिसं ण होदि त्ति वत्तव्वं।

§ ७५८. एवमेदेण कमेण पढमणिव्वग्गणकंडयचउत्थादिपरिवाडीणं पि विदियणिव्वग्गणकंडयचउत्थादिपरिवाडीहिं पुणरुत्तभावो अणुगंतव्वो जाव दोण्हं णिव्वग्गणकंडयाणं चरिमपरिवाडीओ त्ति। णवरि सव्वासिं परिवाडीणं पढमसंकमट्ठाणाणि ण पुणरुत्ताणि, तेसिं पुणरुत्तभावस्स कारणाणुवलंभादो। विदियणिव्वग्गणकंडयचरिमसंकमट्ठाणाणि वि अपुणरुत्ताणि णिव्वग्गणकंडयपमाणं पुण विज्झादभागहारं संतकम्मपक्खेवागमणहेदुभूदमसंखेज्जलोगभागहारं च अण्णोण्णगुणं कादूण तत्थ लद्धरूवमेत्तं होइ त्ति घेत्तव्वं। संपहि एत्थ पढमणिव्वग्गणकंडयसव्वपरिवाडीणं विदियादिसंकमट्ठाणाणि विदियणिव्वग्गणकंडयसंकमट्ठाणेहि पुणरुत्ताणि जादाणि त्ति तेसिमवणयणं कायव्वं।

परिपाटीके अन्तिम संक्रमस्थानके साथ पूर्वोक्त व सत्कर्मकी अपेक्षा उपरिम संक्रमस्थानपरिपाटी का द्विचरम संक्रमस्थान पुनरुक्त होकर अन्तको प्राप्त हुआ है। यहाँ पर भी विवक्षित परिपाटीका अन्तिम संक्रमस्थान नीचे किसीके साथ भी समान नहीं है इसलिए उससे लौटकर प्रथम निर्वर्गणाकाण्डककी तीसरी संक्रमस्थानपरिपाटीके दूसरे संक्रमस्थानको ग्रहण कर उसके साथ सत्कर्मकी अपेक्षा उपरिम तृतीय संक्रमस्थानपरिपाटीका प्रथम संक्रस्थान सदृश करके अनन्तर पूर्वोक्त क्रमसे शेष संक्रमस्थानोंका भी पुनरुक्तपना तब तक लगा लेना चाहिए जब तक अधस्तन तीसरी परिपाटीके अन्तिम संक्रमस्थानके साथ सदृश होकर परिसमाप्त होता है। यहाँ पर भी अन्तिम संक्रमस्थान नीचे किसीके साथ भी समान नहीं है ऐसा कहना चाहिए।

§ ७५८. इस प्रकार इस क्रमसे प्रथम निर्वर्गणाकाण्डककी चौथी आदि परिपाटियोंका भी दूसरे निर्वर्गणाकाण्डककी चौथी आदि परिपाटियोंके साथ पुनरुक्तपना तब तक जानना चाहिए जब तक दो निर्वर्गणाकाण्डकोंकी अन्तिम परिपाटी प्राप्त हो। किन्तु इतनी विशेषता है कि सब परिपाटियोंके प्रथम संक्रमस्थान पुनरुक्त नहीं हैं, क्योंकि उनके पुनरुक्तपनेका कारण नहीं उपलब्ध होता। दूसरे निर्वर्गणाकाण्डकके अन्तिम संक्रमस्थान भी अपुनरुक्त हैं। परन्तु निर्वर्गणाकाण्डकका प्रमाण विध्यातभागहारको तथा सत्कर्मके प्रक्षेपोंके आगमनके हेतुभूत असंख्यात लोकप्रमाण भागहारको परस्पर गुणित करके वहाँ जो लब्ध आवे उतना होता है ऐसा ग्रहण करना चाहिए। अब यहाँ पर प्रथम निर्वर्गणाकाण्डककी सब परिपाटियोंके दूसरे आदि संक्रमस्थान दूसरे निर्वर्गणाकाण्डकके संक्रमस्थानोंके साथ पुनरुक्त हो गये हैं, इसलिए उनको अलग कर देना चाहिए। जिस प्रकार

जहा पढम-बिदियणिव्वग्गणकंडयाणमण्णोण्णेण पुणरुत्तभावो परूविदो तहा बिदिय-तदिय-णिव्वग्गणकंडयाणं पि वत्तव्वं, विसेसाभावादो। एत्थ बिदियणिव्वग्गणकंडयसव्वपरिवाडीणं बिदियादिसंकमट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि त्ति अवणेयव्वाणि। एवमणंतरहेट्ठिमणिव्वग्गणकंडयसव्वपरिवाडीणं बिदियादिसंकमट्ठाणाणि अणंतरोवरिमणिव्वग्गणकंडयसव्वपरिवाडिसंकमट्ठाणेहिं जहाकमं पुणरुत्ताणि कादूण णेदव्वाणि जाव दुचरिमणिव्वग्गणकंडयसव्वपरिवाडीणं बिदियादिसंकमट्ठाणाणि चरिमणिव्वग्गणकंडयसंकमट्ठाणेहि सह पुणरुत्ताणि होदूण पयदपरूवणाए पज्जवसाणं पत्ताणि त्ति। एवं णीदे चरिमणिव्वग्गणकंडयं मोत्तूण दुचरिमादिहेट्ठिमासेसणिव्वग्गणकंडयाणं सव्वाणि चेव संकमट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि होदूण गदाणि। णवरि सव्वणिव्वग्गणकंडयसव्वपरिवाडीणं पढमसंकमट्ठाणाणि सव्वाणि चेवापुणरुत्ताणि होदूण चिट्ठंति।

§ ७५६. संपहि परिणामट्ठाणविक्खंभसंकमट्ठाणपरिवाडिमेत्तायामसव्वसंकमट्ठाणपदरादो पुणरुत्तसंकमट्ठाणेसु अवणिदेसु सेससंकमट्ठाणाणि अपुणरुत्तभावेण बीयणाकाराणि होदूण चेट्ठंति। तेसिमेसा ठवणा। एत्थ दंडपमाणमोकड्डुकड्डुणभागहारं विज्झादभागहारं वेछावट्ठि० अण्णोण्णब्भत्थरासिं वेअसंखेज्जा लोगे जोगगुणगारं च एवमेदे छब्भागहारे अण्णोण्णगुणे करिय लद्धरूवमेत्तं होइ, संकमट्ठाणपरिवाडीणमायामस्स णिरवसेसमेत्थ दंडभावेणावट्ठिदत्तादो। चरिमणिव्वग्गणकंडयसंकमट्ठाणाणि पुण

प्रथम और द्वितीय निर्वर्गणाकाण्डकोंका परस्पर पुनरुक्तपना कहा है उसी प्रकार दूसरे और तीसरे निर्वर्गणाकाण्डकोंका भी कहना चाहिए, क्योंकि उनसे इनमें कोई विशेषता नहीं है। यहाँ पर दूसरे निर्वर्गणाकाण्डककी सब परिपाटियोंके दूसरे आदि संक्रमस्थान पुनरुक्त हैं, इसलिए उन्हें अलग कर देना चाहिए। इसी प्रकार अनन्तर अधस्तन निर्वर्गणाकाण्डकोंकी सब परिपाटियोंके द्वितीय आदि संक्रमस्थानोंको अनन्तर उपरिम निर्वर्गणाकाण्डकोंकी सब परिपाटियोंके संक्रमस्थानोंके साथ क्रमसे पुनरुक्त करके तब तक ले जाना चाहिए जब तक द्विचरम निर्वर्गणाकाण्डकोंकी सब परिपाटियोंके द्वितीय आदि संक्रमस्थान अन्तिम निर्वर्गणाकाण्डकके संक्रमस्थानोंके साथ पुनरुक्त होकर प्रकृत प्ररूपणामें अन्तको प्राप्त होते हैं। इस प्रकार ले जाने पर अन्तिम निर्वर्गणाकाण्डक को छोड़कर द्विचरम आदि समस्त निर्वर्गणाकाण्डकोंके सभी संक्रमस्थान पुनरुक्त होकर जाते हैं। किन्तु इतनी विशेषता है कि सब निर्वर्गणाकाण्डकोंकी सब परिपाटियोंके सभी प्रथम संक्रमस्थान अपुनरुक्त होकर ही स्थित हैं।

§ ७५६. अब परिणामस्थानमात्र विष्कम्भयुक्त और संक्रमस्थान परिपाटीमात्र आयाम युक्त सर्व संक्रमस्थान प्रतरमेंसे पुनरुक्त संक्रमस्थानोंके घटा देने पर शेष संक्रमस्थान अपुनरुक्तरूपसे बीजनाकार रूप होकर स्थित होते हैं। उनकी यह स्थापना है। (स्थापना मूलमें देखो।) यहाँ पर

परिणामट्ठाणविक्खंभेण पुव्वपरूविदणिव्वग्गणकंडयायामेण च वीयणपदरागारेण त्ति दट्ठव्वाणि। एवं विज्झादसंकममस्सिऊण मिच्छत्तस्स संकमट्ठाणपरूवणा समत्ता।

§ ७६०. संपहि अपुव्वकरणम्मि गुणसंकममस्सिऊण मिच्छत्तस्स संकमट्ठाणपरूवणं कस्सामो। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पुव्वविहाणेण देवेसुप्पज्जिय सव्वलहुं सम्मत्तपढिलंभेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तकरणं वोलेदूणापुव्वकरणपढमसमयमहिट्ठियस्स तत्थतणजहण्णसंतकम्मं जहण्णपरिणामणिबंधणगुणसंकमभागहारेण संकामेमाणस्स गुणसंकममस्सिऊण जहण्णसंकमट्ठाणं होइ। एदं पुण विज्झादसंकमविसयसव्वुक्कस्ससंकमट्ठाणादो असंखेज्जगुणं। एत्थ वि जहण्णसंतकम्मस्स संकमपाओग्गाणि असंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाणि अत्थि तेसु सव्वाणि ण घेप्पंति, जहण्णपरिणामट्ठाणादो असंखेज्जलोगमेत्तद्धाणं गंतूण तत्थेगपरिणामट्ठाणमसंखेज्जलोगभागुत्तरपदेससंकमस्स कारणभूदमत्थि, तस्स गहणं कायव्वं। एवमवट्ठिदमसंखेज्जलोगमेत्तद्धाणं गंतूण एक्केक्कमपुणरुत्तसंकमट्ठाणणिबंधणपरिणामट्ठाणमुवलब्भइ त्ति तहाभूदपरिणामट्ठाणेसु सव्वेसु उच्चिणिदूण गहिदेसु एदाणि वि असंखेज्जलोगमेत्ताणि एक्कमेक्कदो अणंतगुणाहिय-

---

दण्डका प्रमाण अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, विध्यातभागहार, दो छयासठ सागरोंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि, दो असंख्यात लोक और योगगुणकार इन छह भागहारोंको परस्पर गुणित करने पर जो लब्ध आवे उतना है, क्योंकि संक्रमस्थानोंकी परिपाटियोंका आयाम यहाँ पर पूरी तरहसे दण्डरूपमे अवस्थित है। परन्तु अन्तिम निर्वर्गणाकाण्डकके संक्रमस्थान परिणामस्थानके विष्कम्भ और पहले कहे गये निर्वर्गणाकाण्डकके आयामरूप जो बीजनाका प्रतराकार उस रूपसे स्थित है ऐसा यहाँ पर जानना चाहिए। इस प्रकार विध्यातसंक्रमका आश्रय कर मिथ्यात्वके संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ७६०. अब अपूर्वकरणमें गुणसंक्रमका आश्रय लेकर मिथ्यात्वके संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा करेंगे। यथा—क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे आकर पूर्वोक्त विधिसे देवोंमें उत्पन्न होकर अतिशीघ्र सम्यक्त्वको प्राप्त करनेसे दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर तथा दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो अधःप्रवृत्तकरणको बिताकर जो अपूर्वकरणके प्रथम समयमें स्थित हो वहाँ जघन्य सत्कर्मको जघन्य परिणाम निमित्तक गुणसंक्रमभागहारके द्वारा संक्रम कर रहा है उसके गुणसंक्रमका आश्रय कर जघन्य संक्रमस्थान होता है। परन्तु यह संक्रमस्थान विध्यात संक्रमके विषयभूत सर्वोत्कृष्ट संक्रमस्थानसे असंख्यातगुणा होता है। यहाँ पर भी जघन्य सत्कर्मके योग्य जो असंख्यात लोकप्रमाण परिणामस्थान होते हैं उनमेंसे सबको ग्रहण नहीं करते हैं। किन्तु जघन्य परिणामस्थानसे असंख्यात लोकप्रमाण अध्वान जाकर वहाँ पर एक परिणामस्थान असंख्यात लोक भाग अधिक प्रदेशसंक्रमका कारणभूत है, इसलिए उसका ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार अवस्थित असंख्यात लोकप्रमाण अध्वान जाकर एक एक अपुनरुक्त संक्रमस्थानका कारणभूत परिणामस्थान उपलब्ध होता है, इसलिए उस प्रकारके सभी परिणामस्थानोंको उठा कर ग्रहण करने पर ये भी परस्पर अनन्तगुणे अधिक क्रमसे वृद्धिरूप होकर असंख्यात लोकप्रमाण

कमेण परिवड्ढिदसरूवाणि लद्धाणि भवंति, अधापवत्तचरिमसमयम्मि उच्चिणिदूण गहिद-परिणामपंतिआयामादो एत्थतणपरिणामट्ठाणपंतिआयामो उच्चिणिदूण रचिदसरूवो असंखेज्जगुणो ।

§ ७६१. संपहि एदस्स किंचि कारणं भणिस्सामो । तं जहा—अधापवत्तकरण-चरिमसमयम्मि जहण्णसंतकम्मं जहण्णपरिणामेण संकामेमाणस्स जहण्णसंकमट्ठाणादो तं चेव जहण्णदव्वमुक्कस्सपरिणामेण संकामेमाणस्स उक्कस्ससंकमट्ठाणमसंखेज्जलोगभागब्भहियं चेव होइ असंखेज्जगुणब्भहियमण्णं वा ण होइ त्ति एसो णियमो । कधमेदं परिच्छिण्णमिदि भण्णदे—मिच्छत्तस्स तिसु अद्धासु भुजगारो संकमो पदिदो । उवसम-सम्माइट्ठिस्स वा दंसणमोहक्खवणाए वा पुव्वुप्पण्णसम्मत्तमिच्छाइट्ठिणा वा अविणट्ठवेदग-पाओग्गेण कालेण सम्मत्ते गहिदे तस्स पढमावलियकालब्भंतरे भुजगारसंकमो होइ त्ति । एत्थ तदियपयारे मिच्छाइट्ठिचरिमावलियणवकबंधवसेण भुजगारप्पयरावट्ठिदाणं तिण्हं पि संभवो जोजिदो । तत्थ पढमावलियविदियादिसमएसु उदयावलियमणुप्पविसमाणगोवुच्छादो हेट्ठिमसमयम्मि विज्झादेण संकंतदव्वादो च संकमपाओग्गभावेण ढुक्कमाणणवकबंधस्स केत्तिएणावि बहुत्तसंभवमस्सिदूण भुजगारसंकमो परूविदो, सो च असंखेज्जभागवड्ढीए चेव होदि त्ति वुत्तं । जइ पुण विज्झादसंकमविसये वि असंखेज्जगुणवड्ढिणिमित्तपरिणामसंभवो

प्राप्त होते हैं, क्योंकि अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें उठा कर ग्रहण किये गये परिणामस्थानों की पंक्तिके आयामसे यहाँकी परिणामस्थानोंकी पंक्तिका आयाम उठाकर रचा गया असंख्यात-गुणा होता है ।

§ ७६१. अब इसके कुछ कारणको कहेंगे । यथा—अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें जघन्य सत्कर्मको जघन्य परिणामके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके जो जघन्य संक्रमस्थान होता है उससे उसी जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट परिणामके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके उत्कृष्ट संक्रमस्थान असंख्यात लोकका भाग देने पर मात्र एक भाग अधिक होता है । असंख्यातगुणा अधिक या अन्य नहीं होता यह नियम है ।

शंका—यह नियम किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—कहते हैं—मिथ्यात्वका तीन कालोंमें भुजगार संक्रम होता है—एक तो उपशम सम्यग्दृष्टिके, दूसरे दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके समय और तीसरे जिसने पहले सम्यक्त्वको उत्पन्न किया है ऐसे मिथ्यादृष्टिके द्वारा वेदक सम्यक्त्वके योग्य कालका नाश किये बिना सम्यक्त्व के ग्रहण करने पर उसके प्रथम आवलिरूप कालके भीतर भुजगार संक्रम होता है । इनमेंसे यहाँ पर तीसरे प्रकारमें मिथ्यादृष्टिकी अन्तिम आवलिमें हुए नवकबन्धके कारण भुजगार, अल्पतर और अवस्थित ये तीनों सम्भव हैं । उनमेंसे वहाँ प्रथम आवलिके द्वितीयादि समयोंमें उदयावलिमें प्रविष्ट होनेवाली गोपुच्छासे और अधस्तन समयमें विध्यातसंक्रमके द्वारा संक्रान्त हुए द्रव्यसे संक्रमके योग्यरूपसे प्राप्त हुए नवकबन्धका कितने ही द्रव्यके द्वारा बहुतपनेका आश्रय कर भुजगार

होज्ज तो असंखेज्जगुणवड्ढीए तत्थ भुजगारसंभवं परूवेज्ज । ण च तहा परूविदं, असंखेज्ज-भागवड्ढीए चेव पयदविसये भुजगारसंकमो त्ति णियमं कादूण तत्थ परूविदत्तादो । तेण जाणामो जहा अधापवत्तचरिमसमयम्मि जहण्णपरिणामेण संकामिदजहण्णदव्वादो तत्थेवुक्कस्सपरिणामेण संकामिददव्वं विसेसाहियं चेव होइ, दुगुणादिकमेणासंखेज्जगुणब्भहियं ण होइ त्ति ।

§ ७६२. अपुव्वकरणम्मि पुण जहण्णपरिणामेण संकामिदजहण्णसंतकम्मणिबंधण-जहण्णसंतकम्मट्ठाणादो तं चेव जहण्णसंतकम्ममुक्कस्सपरिणामेण संकामेमाणयस्स उक्कस्स-संकमदव्वमसंखेज्जगुणं होदि । कुदो एदं परिच्छिज्जदि त्ति चे ? सुत्ताविरुद्धपुव्वाइरिय-वक्खाणादो । तदो उच्चिणिदूण गहिदअधापवत्तचरिमसमयपरिणामट्ठाणेहिंतो अपुव्व-पढमसमयम्मि उच्चिणिदूण गहिदपरिणामट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि त्ति सिद्धं । होंताणि वि अधापवत्तचरिमसमयपरिणामट्ठाणाणि असंखेज्जलोगगुणगारेण गुणिदमेत्ताणि होंति त्ति घेत्तव्वं ।

§ ७६३. संपहि एवमुच्चिणिदूण गहिदपरिणामट्ठाणाणमपुव्वपढमसमए परिवाडीए रचणं कादूण जहण्णसंतकम्मं धुवभावेणावलंबिय परिणामट्ठाणमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि असंखेज्जलोगभागवड्ढीए समुप्पाएयव्वाणि । एवमुप्पाइदे पढमपरिवाडी समत्ता ।

संक्रम कहा है वह असंख्यात भागवृद्धिरूप ही होता है यह कहा है। यदि विध्यातसंक्रमके विषयमें भी असंख्यातगुणवृद्धिका निमित्तभूत परिणाम सम्भव होवे तो असंख्यातगुणवृद्धिके द्वारा वहाँ पर भुजगारसंक्रमकी प्ररूपणा की जाती। परन्तु वैसा नहीं कहा है, क्योंकि असंख्यातभागवृद्धि रूपसे ही प्रकृत विषयमें भुजगारसंक्रम होता है ऐसा नियम करके वहाँ पर प्ररूपणा की है। इससे हम जानते हैं कि अधःप्रवृत्तके अन्तिम समयमें जघन्य परिणामके द्वारा संक्रम कराये गये जघन्य द्रव्यसे वहीं पर उत्कृष्ट परिणामके द्वारा संक्रमित कराया गया द्रव्य विशेष अधिक ही होता है, द्विगुण आदि क्रमसे असंख्यातगुणा नहीं होता।

§ ७६२. अपूर्वकरणमें तो जघन्य परिणामके द्वारा संक्रमित कराये गये जघन्य सत्कर्म-निमित्तक जघन्य संक्रमस्थानसे उसी जघन्य सत्कर्मको उत्कृष्ट परिणामके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके उत्कृष्ट संक्रम द्रव्य असंख्यातगुणा होता है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—सूत्रके अविरुद्ध पूर्वाचार्योंके व्याख्यानसे जाना जाता है। इसलिए उठाकर ग्रहण किये गये अधःप्रवृत्तके अन्तिम समयसम्बन्धी परिणामस्थानोंसे अपूर्वकरणके समयमें उठाकर ग्रहण किये गये परिणामस्थान असंख्यातगुणे होते हैं यह सिद्ध हुआ। ऐसा होते हुए भी अधः-प्रवृत्तके अन्तिम समयमें जो परिणामस्थान होते हैं वे असंख्यात लोकप्रमाण गुणकारसे गुणित होते हैं ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए।

§ ७६३. अब इस प्रकार उठाकर ग्रहण किये गये परिणामस्थानोंकी अपूर्वकरणके प्रथम समयमें रचना करके तथा जघन्य सत्कर्मका ध्रुवरूपसे अवलम्बन करके परिणामस्थानप्रमाण ही संक्रमस्थानोंको असंख्यात लोक भागवृद्धिके द्वारा उत्पन्न करना चाहिए। इस प्रकार उत्पन्न करने पर प्रथम परिपाटी समाप्त हुई।

§ ७६४. संपहि जहण्णदव्वादो एयसंतकम्मपक्खेवमहियं कादूणागदस्स विदिय-परिवाडी होदि । एत्थ ताव संतकम्मपक्खेवपमाणाणुगमो कीरदे—अपुव्वकरणपढमसमय-जहण्णदव्वपडिबद्धजहण्णसंकमट्ठाणे तस्सेव विदियसंकमट्ठाणादो सोहिदे सुद्धसेसो संकम-ट्ठाणविसेसो णाम । एसो च जहण्णसंकमट्ठाणस्सासंखेज्जलोगपडिभागिओ । एदम्मि संकमट्ठाणविसेसे अण्णेणासंखेज्जलोगभागहारेणोवट्टिदे भागलद्धमेत्तमेत्थ संतकम्मपक्खेव-पमाणं होइ । जहण्णदव्वे सव्वुक्कस्सगुणसंकमभागहारेण बेअसंखेज्जलोगाहिएण भागे हिदे भागलद्धमेत्तमेत्थतणसंतकम्मपक्खेवपमाणमिदि वुत्तं होइ । एवंविहपक्खेवुत्तरजहण्ण-संतकम्ममस्सिऊण परिणामट्ठाणमेत्तसंकमट्ठाणेसु णाणाकालसंबंधिणाणाजीवे अस्सिऊण समुप्पाइदेसु विदियसंकमट्ठाणपरिवाडी समप्पदि । एदेण विहिणा एगेगसंतकम्मपक्खेवं पक्खिविय तदियादिसंकमट्ठाणपरिवाडीओ च उप्पाइय णेदव्वं जाव गुणिदकम्मंसियुक्कस्स-दव्वं पाविदूण पढमसमये अपुव्वकरणसंकमट्ठाणपरिवाडीणमपच्छिमवियप्पो समुप्पण्णो त्ति । एत्थ सेसविही जहा अधापवत्तकरणचरिमसमए भणिदो तहा वत्तव्वो, विसेसा-भावादो । णवरि जत्थ विज्झादभागहारो तत्थ गुणसंकमभागहारो वत्तव्वो ।

§ ७६५. संपहि अपुव्वकरणस्स संतमोदारेदुं ण सक्किज्जदि । किं कारणं ? अधा-पवत्तचरिमसमयट्ठिदेण सह सरिसं कादूणोदारिज्जमाणे अपुव्वकरणसंकमट्ठाणपरूवणपइण्णाए

§ ७६४. अब जघन्य द्रव्यसे एक सत्कर्मप्रक्षेप अधिक करके आये हुए जीवके दूसरी परिपाटी होती है । यहाँ पर सर्व प्रथम सत्कर्मके प्रक्षेपके प्रमाणका अनुगम करते हैं—अपूर्वकरणके प्रथम समयसम्बन्धी जघन्य द्रव्यसे सम्बन्धित जघन्य संक्रमस्थानको उसीके दूसरे संक्रम-स्थानमेंसे घटा देने पर जो शुद्ध शेष रहे वह संक्रमस्थान विशेष कहलाता है । और यह जघन्य संक्रमस्थानका असंख्यात लोक प्रतिभागी है । इस संक्रमस्थान विशेषके अन्य असंख्यात लोक प्रमाण भागहारके द्वारा भाजित करने पर जो एक भाग लब्ध आवे उतना यहाँ पर सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण है । जघन्य द्रव्यके दो असंख्यात लोक भाग अधिक सर्वोत्कृष्ट गुणसंक्रमभागहारके द्वारा भाजित करने पर जो भाग लब्ध आवे उतना सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण है यह उक्त कथनका तात्पर्य है । इस प्रकार एक प्रक्षेप अधिक जघन्य सत्कर्मका आश्रय कर परिणामस्थानप्रमाण संक्रम-स्थानोंके नाना कालसम्बन्धी नाना जीवोंके आश्रयसे उत्पन्न करने पर दूसरी संक्रमस्थान परिपाटी समाप्त होती है । इस विधिसे एक एक सत्कर्म प्रक्षेपको प्रक्षिप्त कर तृतीय आदि संक्रमस्थान परिपाटियोंको उत्पन्न कर गुणितकर्मांशिक जीवके उत्कृष्ट द्रव्यको प्राप्त कराकर प्रथम समयवर्ती अपूर्व-करणसम्बन्धी संक्रमस्थान परिपाटियोंके अन्तिम विकल्पके उत्पन्न होने तक ले जाना चाहिए । यहाँ पर शेष विधि जिस प्रकार अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें कही है उस प्रकार कहनी चाहिए, क्योंकि उससे इसमें कोई विशेषता नहीं है । किन्तु इतनी विशेषता है कि जहाँ पर विध्यात-भागहार कहा है वहाँ पर गुणसंक्रमभागहार कहना चाहिए ।

§ ७६५. अब अपूर्वकरणके सत्त्वको उतारना शक्य नहीं है, क्योंकि अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें स्थित हुए द्रव्यके साथ समानता करके उतारने पर अपूर्वकरणसम्बन्धी संक्रम-स्थानोंकी प्ररूपणाको प्रतिज्ञा विनाशको प्राप्त होती है । तथा प्रथम समयवर्ती अपूर्वकरण और

विणासप्पसंगादो पढमसमयापुव्वचरिमसमयाधापवत्तकरणाणं संकमदव्वस्स सरिसीकरणो-वायाभावादो च । कालपरिहाणीए खविदगुणिदकम्मंसियाणं ठाणपरूवणे कीरमाणे जहा अधापवत्तकरणचरिमसमयं णिरुंभिदूण परूविदं तहा परूवेयव्वं ।

§ ७६६. संपहि एवमुप्पण्णासेससंकमट्ठाणाणमेयपदरायारेण रचणं कादूण पुण-रुत्तापुणरुत्तपरूवणा अणंतरपरूविदविहाणेणेव कायव्वा । णवरि एत्थ सरिसत्ते कीरमाणे गुणसंकमभागहारं संतकम्मपक्खेवागमणणिमित्तभूदमसंखेज्जलोगभागहारं च अण्णोण्ण-गुणं कादूण तत्थ लद्धरूवमेत्तद्धाणं गंतूण तदित्थसंतकम्मपढमसंकमट्ठाणं जहण्णसंत-कम्मियविदियसंकमट्ठाणं च दो वि सरिसाणि त्ति वत्तव्वं । एवमेत्तियमेत्तं णिव्वग्गण-कंडयमवट्ठिदं गंतूण सरिसत्तं करिय णेदव्वं जाव अपुव्वकरणपढमसमयसंकमट्ठाणाणि समत्ताणि त्ति । एत्थ पुणरुत्ताणमवणयणे कदे सेसाणमपुणरुत्तसंकमट्ठाणाणमवट्ठाणं पुव्वं व वीयणाकारेण दट्ठव्वं । तत्थ वीयणपदरायामो गुणसंकमभागहारसंतकम्मपक्खेवागमण-णिमित्तभूदासंखेज्जलोगभागहारअण्णोण्णसंवग्गमेत्तो होइ, विक्खंभो पुण परिणामट्ठाणमेत्तो चेव,तत्थ पयारंतरासंभवादो । दंडायामपमाणं पुण ओकड्डुक्कड्डणभागहारवेछावट्ठिसागरोवम-अण्णोण्णब्भत्थरासिगुणसंकमभागहारवेअसंखेज्जलोगजोगगुणगाराणमण्णोण्णसंवग्गजणिदमेत्तं गुणसंकमभागहारो होइ त्ति घेत्तव्वं । एवमपुव्वकरणपढमसमए संकमट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

अन्तिम समयवर्ती अधःप्रवृत्तकरणके संक्रमद्रव्यको सदृश करनेका कोई उपाय नहीं है । काल परिहानिके आश्रयसे क्षपितकर्मांशिक और गुणितकर्मांशिक जीवोंके स्थानोंकी प्ररूपणा करने पर जिस प्रकार अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयको विवक्षित कर प्ररूपणा की है उस प्रकार यहाँ पर करनी चाहिए ।

§ ७६६. अब इस प्रकार उत्पन्न हुए समस्त संक्रमस्थानोंकी एक प्रतराकाररूपसे रचना करके पुनरुक्त और अपुनरुक्त प्ररूपणा अनन्तर कही गई विधिसे ही करनी चाहिए । इतनी विशेषता है कि यहाँ पर सदृशता करने पर गुणसंक्रम भागहारको और सत्कर्मप्रक्षेपको लानेमें निमित्तभूत असंख्यात लोक भागहारको परस्पर गुणा करके उससे जितना लब्ध आवे उतने स्थान जाकर वहाँका सत्कर्मसम्बन्धी प्रथम संक्रमस्थान और जघन्य सत्कर्मवाले जीवका द्वितीय संक्रमस्थान ये दोनों ही स्थान समान होते हैं ऐसा कथन करना चाहिए । इसप्रकार इतने मात्रके निर्वर्गणा काण्डक अवस्थित जाकर सदृश करके अपूर्वकरणके प्रथम समयसम्बन्धी संक्रमस्थानोंके समाप्त होने तक लेजाना चाहिए । यहाँ पर पुनरुक्त स्थानोंका अपनयन करनेपर शेष अपुनरुक्त संक्रमस्थानोंका अवस्थान पहलेके समान वीजनाकार जानना चाहिए । वहाँ वीजनाका प्रतरायाम गुणसंक्रम भागहार और सत्कर्मप्रक्षेपको लानेमें निमित्तभूत असंख्यात लोक भागहारके परस्पर संवर्गमात्र है । विष्कम्भ तो परिणामस्थान मात्र ही है, क्योंकि उसमें प्रकारान्तर सम्भव नहीं है । दण्डायामका प्रमाण भी अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, दो छयासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्तराशि, गुणसंक्रमभागहार, दो असंख्यात लोक और योगगुणकारके परस्पर संवर्गसे उत्पन्न हुई राशिप्रमाण गुणसंक्रमभागहार है ऐसा ग्रहण करना चाहिए । इस प्रकार अपूर्वकरणके प्रथम समयमें संक्रमस्थान प्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ७६७. अपुव्वकरणबिदियादिसमएसु वि एवं चेव परूवणा कायव्वा जाव अपुव्वकरणचरिमसमओ त्ति, सव्वत्थ जहावुत्तविक्खंभायामेहि संकमट्ठाणपदरुप्पत्तिं पडि विसेसाभावादो। संपहि पढमसमयापुव्वकरणो बिदियसमयापुव्वकरणो च दो वि सरिसाणि कायव्वाणि। तेसिमोवट्टणामुहेण सरिसत्तविहाणं वुच्चदे। तं कधं? दिवड्ढगुणहाणिगुणिदमेगमेइंदियसमयपबद्धं ठविय अंतोमुहुत्तोवट्टिदोकड्डुक्कड्डणभागहारपदुप्पण्णवेछावट्ठिसागरोवममण्णोण्णब्भत्थरासिणा पढमसमयगुणसंकमभागहारेण च तम्मि ओवट्टिदे पढमसमयापुव्वकरणस्स जहण्णसंकमट्ठाणं होइ। बिदियसमयापुव्वकरणजहण्णभागहारे वि एसा चेव ठवणा कायव्वा। णवरि पुव्विल्लगुणसंकमभागहारादो संपहियगुणसंकमभागहारो असंखेज्जगुणहीणो। एवं ठविय एत्थ हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासिम्मि ओवट्टिज्जमाणे गुणगार-भागहारं सरिसम णिय बिदियसमयगुणसंकमभागहारेण पढमसमयगुणसंकमभागहारे भागे हिदे भागलद्धं पलिदोवमस्स असंखे०भागमेत्तं होइ।

§ ७६८. पुणो एदेण गुणिदजहण्णदव्वमेत्तं वड्ढिदूण ट्ठिदपढमसमयापुव्वजहण्णसंकमट्ठाणं जहण्णसंतकम्मियबिदियसमयापुव्वकरण० जहण्णसंकमट्ठाणं च दो वि सरिसाणि। णवरि एत्थ पढमसमयापुव्वकरणवड्ढिददव्वं संतकम्मपक्खेवपमाणेण कादूण चढिद-

---

§ ७६७. अपूर्वकरणके द्वितीयादि समयोंमें भी अपूर्वकरणके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक इसीप्रकार प्ररूपणा करनी चाहिए, क्योंकि सर्वत्र पूर्वोक्त विष्कम्भ और आयामके द्वारा संक्रमस्थान प्रतर की उत्पत्तिके प्रति कोई विशेषता नहीं है। अब प्रथम समयका अपूर्वकरण और दूसरे समयका अपूर्वकरण इन दोनोंको ही सदृश करना चाहिए, इसलिए उनका अपवर्तना द्वारा सदृशत्वका विधान करते हैं।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—डेढ़ गुणहानि गुणित एकेन्द्रियसम्बन्धी एक समयप्रबद्धको स्थापित कर उसमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण उत्कर्षण भागहार द्वारा प्रत्युत्पन्न दो छ्यासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशिका और प्रथम समयसम्बन्धी गुणसंक्रम भागहारका भाग देने पर प्रथम समयसम्बन्धी अपूर्वकरणका जघन्य संक्रमस्थान होता है। द्वितीय समयसम्बन्धी अपूर्वकरणके जघन्य भागहारमें भी यही स्थापना करनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि पूर्वके गुणसंक्रम भागहारसे साम्प्रतिक गुणसंक्रमभागहार असंख्यातगुणा हीन है। इस प्रकार स्थापित करके यहाँ पर अधस्तन राशिद्वारा उपरिम राशिके भाजित करनेपर गुणकार और भागहारको एक समान निकाल कर द्वितीय समयके गुणसंक्रम भागहारका प्रथम समयके गुणसंक्रम भागहारमें भाग देने पर भाग लब्ध पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होता है।

§ ७६८. पुनः इसके द्वारा गुणित जघन्य द्रव्यमात्रको बढ़ाकर स्थित प्रथम समयसम्बन्धी अपूर्वकरणका जघन्य संक्रमस्थान और जघन्य सत्कर्मवालेका द्वितीय समयसम्बन्धी अपूर्वकरणका जघन्य संक्रमस्थान ये दोनों ही समान हैं। इतनी विशेषता है कि यहाँ पर प्रथम समयसम्बन्धी

ट्ठाणपरूवणा कायव्वा। एत्तो उवरिमसव्वसंकमट्ठाणाणि पढमसमयापुव्वपडिबद्धाणि विदियसमयापुव्वकरणसंकमट्ठाणेहिं जहाकमं सरिसाणि होदूण गच्छंति जाव विदियसमयापुव्वकरणस्स चरिमपरिवाडीदो हेट्ठा पुव्विल्लचडिदद्धाणमेत्तमोसरिदूण ट्ठिदसंकमट्ठाणपरिवाडी त्ति। एत्तो उवरिमाणि विदियसमयापुव्वकरणसंकमट्ठाणाणि पढमसमयापुव्वकरणसंकमट्ठाणेहिं ण पुणरुत्ताणि। कुदो? पढमसमयापुव्वकरणसंकमट्ठाणाणमेत्थेव णिट्ठिदत्तादो।

§ ७६९. संपहि पढमसमयापुव्वकरणो विदियसमयापुव्वकरणो च तदियसमयापुव्वकरणेण सह सरिससंकमपज्जाया अत्थि तेसिमोवट्टणाविहाणं पुव्वं व कादूण सरिसभावो दट्ठव्वो। णवरि पढमसमयापुव्वकरणो जेणद्धाणेण तदियसमयापुव्वकरणेण सरिसो होदि तत्तो विदियसमयापुव्वकरणस्स चडिदद्धाणमसंखेज्जगुणहीणं होइ। अणुकट्टिपज्जवसाणं पि ण दोण्हमक्कमेण होदि त्ति दट्ठव्वं। एत्थ कारणं सुगमं।

§ ७७०. एदमेदेण बीजपदेण उवरि वि सरिसत्तं कादूण णेदव्वं जाव अपुव्वकरणचरिमसमयो त्ति। एवं कादूण जोइदे विदियसमयापुव्वकरणमादिं कादूण जाव दुचरिमसमयापुव्वकरणो त्ति ताव समुप्पण्णासेससंकमट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि जादाणि। किं कारणमिदि चे? पढमसमयापुव्वकरणसंकमट्ठाणेहिं चरिमसमयापुव्वसंकमट्ठाणेहिं य

अपूर्वकरणके बढ़े हुए द्रव्यको सत्कर्मप्रक्षेपके प्रमाणमे करके जितने स्थान आगे गये हैं उनकी प्ररूपणा करनी चाहिए। इससे आगे प्रथम समयसम्बन्धी अपूर्वकरणमे सम्बन्ध रखनेवाले उपरिम सब संक्रमस्थान द्वितीय समयसम्बन्धी अपूर्वकरणके संक्रमस्थानोंके साथ यथाक्रम सदृश होकर द्वितीय समयसम्बन्धी अपूर्वकरणकी अन्तिम परिपाटीमे नीचे पूर्वके चढ़े हुए अध्वानमात्र सरक कर स्थित संक्रमस्थान परिपाटीके प्राप्त होने तक जाते हैं। यहाँ से आगेके द्वितीय समयसम्बन्धी अपूर्वकरणके संक्रमस्थान प्रथम समयसम्बन्धी अपूर्वकरणके संक्रमस्थानोंसे पुनरुक्त नहीं हैं, क्योंकि प्रथम समयसम्बन्धी अपूर्वकरणके संक्रमस्थानोंका इन्हींमें निर्देश किया है।

§ ७६९. अब प्रथम समयका अपूर्वकरण और दूसरे समयका अपूर्वकरण तीसरे समयके अपूर्वकरणके साथ सदृश संक्रम पर्यायवाला है, इसलिए उनके अपवर्तना विधानको पहलेके समान करके सदृशभाव जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि प्रथम समयका अपूर्वकरण जिस अध्वानसे तृतीय समयके अपूर्वकरणके साथ सदृश होता है उससे द्वितीय समयके अपूर्वकरणका चढ़ा हुआ अध्वान असंख्यातगुणा हीन है। अनुकृष्टिका अन्त भी दोनोंका युगपत् नहीं होता ऐसा जानना चाहिए। यहाँ पर कारण सुगम है।

§ ७७०. इस प्रकार इस बीजपदके अनुसार ऊपर भी सदृशता करके अपूर्वकरणके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिए। ऐसा करके योजित करने पर द्वितीय समयके अपूर्वकरणसे लेकर द्विचरम समयके अपूर्वकरणके प्राप्त होने तक उत्पन्न हुए समस्त संक्रमस्थान पुनरुक्त हो जाते हैं।

शंका—क्या कारण है ?

जहासंभवं तेसिं सरिसभावदंसणादो। तेणेदेसिं गहणं ण कायव्वं।

§ ७७१. संपहि पढमसमयापुव्वचरिमसमयापुव्वाणं पि सरिसीकरणट्ठमोवट्टण-विहाणं वुच्चदे। तं जहा—पढमसमयापुव्वकरणदव्वमिच्छिय दिवड्ढगुणहाणिगुणि-देगेइंदियसमयपबद्धस्स अंतोमुहुत्तोवट्टिदोकड्डुक्कड्डणभागहार०बेछावट्ठिसागरोवमअण्णोण्ण-ब्भत्थरासिपढमसमयगुणसंकमभागहारेहि ओवट्टणाए कदाए अपुव्वकरणपढमसमय-जहण्णसंकमदव्वं होइ। पुणो अपुव्वकरणचरिमसमयजहण्णदव्वमिच्छामो त्ति एवं चेव भज्ज-भागहारविण्णासो कायव्वो। णवरि पुव्विल्लगुणसंकमभागहारादो असंखेज्जगुणहीणो चरिमसमयगुणसंकमभागहारो एत्थ ठवेयव्वो। एवं ठविय हेट्ठिमरासिणा उवरिमरासि-मोवट्टिय तत्थ भागलद्धपलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तगुणगारेण गुणिदजहण्णदव्वमेत्तं वड्ढिऊण ट्ठिदपढमसमयापुव्वकरणपढमसंकमट्ठाणं जहण्णसंतकम्मियचरिमसमयापुव्व-करणजहण्णसंकमट्ठाणं च दो वि सरिसाणि। एत्तो उवरिमपढमसमयापुव्वकरणसंकम-ट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि चेव होदूण गच्छंति, तेणेदेसिं पि गहणं ण कायव्वं। तदो अपुव्वपढमसमयम्मि समुप्पण्णासंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणं हेट्ठिमासंखेज्जभागविसयसंकम-ट्ठाणाणि चरिमसमयापुव्वसव्वसंकमट्ठाणाणि च अपुणरुत्ताणि होदूण चिट्ठंति। णवरि

समाधान—क्योंकि प्रथम समय सम्बन्धी अपूर्वकरणके संक्रमस्थानोंके साथ और अन्तिम समयसम्बन्धी अपूर्वकरणके संक्रमस्थानोंके साथ यथा सम्भव उनकी सदृशता देखी जाती है। इसलिए इनका ग्रहण नहीं करना चाहिए।

§ ७७१. अब प्रथम समयके अपूर्वकरणके और अन्तिम समयके अपूर्वकरणके भी सदृश करनेके लिए अपवर्तना विधानको कहते हैं। यथा—प्रथम समयवर्ती अपूर्वकरणके द्रव्यको लानेकी इच्छासे डेढ़ गुणहानि गुणित एकेन्द्रियसम्बन्धी समयप्रबद्धमें अन्तर्मुहूर्तसे भाजित अपकर्षण-उत्कर्षण भागहार, दो छ्यासठ सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि और प्रथम समयके गुणसंक्रम भागहारका भाग देने पर अपूर्वकरणके प्रथम समयका जघन्य संक्रम द्रव्य होता है। पुनः अपूर्व-करणके अन्तिम समयका द्रव्य लाना इष्ट है, इसलिए इसीप्रकार भाज्य भाजकका विन्यास करना चाहिए। इतनी विशेषता है कि पूर्वके गुणसंक्रमभागहारसे अन्तिम समयका गुणसंक्रम भागहार असंख्यातगुणा हीन यहाँ पर स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार स्थापित कर अधस्तन राशिसे उपरिम राशिको अपवर्तितकर वहाँ पर भागलब्ध पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण गुणकारसे गुणित जघन्य द्रव्यमात्रको बढ़ाकर स्थित जीवके प्रथम समयके अपूर्वकरणके प्रथम संक्रमस्थान और जघन्य सत्कर्मवालेके अन्तिम समयसम्बन्धी अपूर्वकरणका जघन्य संक्रमस्थान दोनों ही समान हैं। इससे उपरिम प्रथम समयसम्बन्धी अपूर्वकरणके संक्रमस्थान पुनरुक्त ही होकर जाते हैं, इसलिए इनका भी ग्रहण नहीं करना चाहिए। अतः अपूर्वकरणके प्रथम समयमें उत्पन्न हुए असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थानोंके अधस्तन असंख्यातवें भागके विषयभूत संक्रमस्थान और अन्तिम समयवर्ती अपूर्वकरणके सब संक्रमस्थान अपुनरुक्त होकर स्थित हैं। इतनी विशेषता

सत्थाणे तेसिं पुणरुत्तभावो अत्थि त्ति तत्थ पुव्वविहाणेण पुणरुत्ताणमवणयणं कादूणा-पुणरुत्ताणं चेव गहणं कायव्वं। एवमपुव्वकरणमस्सिऊण संकमट्ठाणपरूवणा समत्ता।

§ ७७२. संपहि अणियट्टिकरणमस्सिऊण संकमट्ठाणपरूवणे कीरमाणे अणियट्टि-कालब्भंतरे थोवयराणि चेव संकमट्ठाणाणि लब्भंति। किं कारणं? अणियट्टिपरिणामो समयं पडि एक्केको चेव होदि त्ति परमगुरूवएसादो। तं जहा—खविदकम्मंसिय-लक्खणेणागंतूण पढमसम्मत्तमुप्पाइय वेदयसम्मत्तपडिवत्तिपुरस्सरं वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तापुव्वकरणाणि जहाकमेण बोलाविय अणियट्टिकरणं पविट्ठस्स पढमसमए जहण्णसंतकम्मणिबंधणगुणसंकममस्सिऊण जहण्णसंकमट्ठाणमेक्कं चेव समुप्पज्जदि। एवं बिदियादिसमएसु वि जहण्णसंतकम्म-मस्सिऊण एक्केक्कं चेव संकमट्ठाणमुप्पाइय णेदव्वं जाव अणियट्टिकरणचरिमसमयो त्ति। एवमुप्पाइदे जहण्णसंतकम्ममस्सिऊणाणियट्टिअद्धामेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि अण्णोण्णं पेक्खिऊणासंखेज्जगुणवड्ढीए समुप्पण्णाणि। तदो पढमपरिवाडी समत्ता।

§ ७७३. संपहि एदम्हादो जहण्णसंतकम्मादो एगसंतकम्मपक्खेवमेत्तमहियं कादूणागदस्स अणियट्टिपढमसमए अण्णमपुणरुत्तसंकमट्ठाणमसंखेज्जलोगभागब्भहिय-मुप्पज्जदि। पुणो एदस्स चेव बिदियसमए असंखेज्जगुणवड्ढीए बिदियसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि।

है कि स्वस्थानमें उनका पुनरुक्त भाव है इसलिए वहाँ पर पूर्व विधिसे पुनरुक्त संक्रमस्थानोंका अपनयन करके अपुनरुक्त संक्रमस्थानोंका ही ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार अपूर्वकरणका आश्रय कर संक्रमस्थान प्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ७७२. अब अनिवृत्तिकरणका आश्रय कर संक्रमस्थानोंका कथन करने पर अनिवृत्ति-करणके कालके भीतर स्तोकतर ही संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं, क्योंकि अनिवृत्तिकरणका परिणाम प्रत्येक समयमें एक एक ही होता है ऐसा परम गुरुका उपदेश है। यथा—क्षपित कर्मांशिकलक्षणसे आकर और प्रथम सम्यक्त्वको उत्पन्न कर वेदकसम्यक्त्वकी प्राप्ति पूर्वक दो छ्यासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर तथा दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो अधःप्रवृत्तकरण और अपूर्वकरणको क्रमसे बिताकर अनिवृत्तिकरणमें प्रविष्ट हुए जीवके प्रथम समयमें जघन्य सत्कर्म निबन्धन गुणसंक्रमका आश्रयकर एक ही जघन्य संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। इसी प्रकार द्वितीयादि समयोंमें भी जघन्य सत्कर्मका आश्रयकर एक एक ही संक्रमस्थानको उत्पन्न कराकर अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार उत्पन्न कराने पर जघन्य सत्कर्मका आश्रय कर अनिवृत्तिकरणके कालप्रमाण ही संक्रमस्थान परस्परको देखते हुए असंख्यात गुणी वृद्धिरूपसे उत्पन्न होते हैं। इससे प्रथम परिपाटी समाप्त हुई।

§ ७७३. अब इस जघन्य सत्कर्मसे एक सत्कर्मप्रक्षेपमात्रको अधिक कर आये हुए जीवके अनिवृत्तिकरणके प्रथम समयमें असंख्यात लोकभाग अधिक अन्य अपुनरुक्त संक्रमस्थान उत्पन्न होता है। पुनः इसीके दूसरे समयमें असंख्यातगुणी वृद्धिरूपसे दूसरा संक्रमस्थान उत्पन्न होता

एवं तदियादिसमएसु वि णेदव्वं जाव अणियट्टिचरिमसमयो त्ति। तदो एत्थ वि अणियट्टिपरिणाममेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि। एवं तदियादिपरिवाडीओ वि णेदव्वाओ जाव असंखेज्जलोगमेत्तपरिवाडीणं चरिमपरिवाडि त्ति।

§ ७७४. तत्थ चरिमवियप्पो वुच्चदे—गुणिदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण सव्वलहुं दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय अधापवत्तापुव्वकरणाणि कमेण वोलाविऊण अणियट्टिकरणं पविट्ठस्स सगद्धामेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि लद्धाणि भवंति। एत्थ सव्वत्थ अणियट्टिचरिमसमयो त्ति वुत्ते ओघचरिमसमयो ण घेत्तव्वो। किंतु मिच्छत्तक्खवणवावदाणियट्टिचरिमसमयो गहेयव्वो, तेणेत्थ पयदत्तादो।

§ ७७५. संपहि एवमुप्पण्णासेससंकमट्ठाणाणमुड्ढविक्खंभो अणियट्टिअद्धामेत्तो। तिरिच्छायामो पुण जहण्णदव्वमुक्कस्सदव्वादो सोहिय सुद्धसेसदव्वम्मि संतकम्मपक्खेवपमाणेण कीरमाणे जत्तियमेत्ता संतकम्मपक्खेवा अत्थि तत्तियमेत्तो होइ। संपहि एत्थ पुणरुत्तापुणरुत्तपरूवणा इत्थमणुगंतव्वा। तं जहा—अणियट्टिविदियसमयगुणसंकमभागहारेण पढमसमयगुणसंकमभागहारमोवट्टिय तत्थ लद्धासंखेज्जरूवेहिं गुणिदजहण्णदव्वमेत्तं वड्ढाविऊण ट्ठिदपढमसमयाणियट्टिसंकमट्ठाणं जहण्णसंतकम्मियविदियसमयाणियट्टिपढम-

है। इसी प्रकार तृतीयादि समयोंमें भी अनिवृत्तिकरणके अन्तिम समय तक ले जाना चाहिए। इसलिए यहाँ पर भी अनिवृत्तिकरणके जितने समय हैं तत्प्रमाण ही संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं। इसीप्रकार तृतीयादि परिपाटियोंको भी असंख्यात लोकप्रमाण परिपाटियोंमें अन्तिम परिपाटीके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए।

§ ७७४. वहाँ अन्तिम विकल्पको कहते हैं—गुणितकर्मांशिक लक्षणसे आकर अतिशीघ्र दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो अधःप्रवृत्तकरण और अपूर्वकरणको क्रमसे विताकर अनिवृत्तिकरणमें प्रविष्ट हुए जीवके अनिवृत्तिकरणके कालप्रमाण ही संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं। यहाँ सर्वत्र अनिवृत्तिकरणका अन्तिम समय ऐसा कहने पर ओघ अन्तिम समय नहीं लेना चाहिए। किन्तु मिथ्यात्वकी क्षपणामें व्यापृत अन्तिम समय लेना चाहिए, क्योंकि उससे यहाँ प्रयोजन है।

§ ७७५. अब इस प्रकार उत्पन्न हुए समस्त संक्रमस्थानोंका ऊर्ध्व विष्कम्भ अनिवृत्तिकरणके कालप्रमाण है। तिर्यक् आयाम तो जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे घटा कर शुद्ध शेष द्रव्यको सत्कर्मके प्रक्षेपप्रमाण करने पर जितने सत्कर्मके प्रक्षेप हैं उतना होता है। अब यहाँ पर पुनरुक्त-अपुनरुक्त प्ररूपणा इस प्रकार जाननी चाहिए। यथा—अनिवृत्तिकरणके द्वितीय समयसम्बन्धी गुणसंक्रम भागहारका प्रथम समयसम्बन्धी गुणसंक्रम भागहारमें भाग देने पर वहाँ लब्ध असंख्यात रूपोंसे गुणित जघन्य द्रव्यमात्रको बढ़ाकर स्थित प्रथम समयसम्बन्धी अनिवृत्तिकरणका संक्रमस्थान और जघन्य सत्कर्मवालेके द्वितीय समयसम्बन्धी अनिवृत्तिकरणका प्रथम संक्रमस्थान दोनों ही समान है। इसी प्रकार द्वितीय, तृतीय समयसम्बन्धी अनिवृत्तिकरणके संक्रमस्थानोंका

संकमट्ठाणं च दो वि सरिसाणि । एवं विदियतदियसमयाणियट्टीणं पि सरिसत्तं कादूण गेण्हियव्वं । एदेण विधिणागंतूण दुचरिमचरिमसमयाणियट्टीणं पि सरिसभावो जोजेयव्वो । एत्थ सरिसाणमवणयणं कादूण विसरिसाणं चेव गहणे कीरमाणे चरिमसमयाणियट्टि-सव्वसंकमट्ठाणाणि दुचरिमादिसमयाणियट्टिसंकमट्ठाणाणमादीदो प्पहुडि असंखेज्जदि-भागं च मोत्तूण सेसासेससंकमट्ठाणाणि पुणरुत्ताणि जादाणि त्ति तेसिमवणयणं कायव्वं । तदो अणियट्टिकरणमस्सिऊण मिच्छत्तस्स संकमट्ठाणपरूवणा समत्ता ।

§ ७७६. संपहि मिच्छत्तस्स अण्णो वि गुणसंकमविसयो अत्थि—उवसमसम्मा-इट्ठिपढमसमयप्पहुडि अंतोमुहुत्तकालं सव्वमेयंताणुवड्ढिपरिणामेहि मिच्छत्तपदेसग्गस्स सम्मत्तसम्मामिच्छत्तेसु गुणसंकमेण संकंतिदंसणादो । तत्थ वि गुणसंकमपढमसमयप्पहुडि जाव चरिमसमयो त्ति संकमट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए अपुव्वकरणपरूवणादो ण किंचि णाणत्तमत्थि तदो तेसु सवित्थरं परूविय समत्तेसु गुणसंकममस्सिऊण मिच्छत्तस्स संकमट्ठाणपरूवणा समत्ता । तदो एवं सव्वासु परिवाडीसु त्ति एदस्स सुत्तस्स अत्थ-परूवणा समत्ता भवदि ।

§ ७७७. संपहि एदेण सुत्तेण सव्वसंकमट्ठाणपरिवाडीसु असंखेज्जलोगमेत्ताणं चेव संकमट्ठाणाणमुवएसादो एत्तो अब्भहियाणि संकमट्ठाणाणि ण संभवंति चेव त्ति विप्पडिवण्णस्स सिस्सस्स तहाविहविप्पडिवत्तिणिरायरणमुहेण सव्वसंकममस्सिऊणाणंताणं संकमट्ठाणाणं संभवपदुप्पायणट्ठमुत्तरमुत्तमोइण्णं—

भी सदृशपना करके ग्रहण करना चाहिए। तथा इसी विधिसे आकर द्विचरम समय और चरम समयके अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी संक्रमस्थानोंका भी सदृशपना लगा लेना चाहिए। यहाँ पर सदृश संक्रमस्थानोंका अपनयन करके विसदृशोंका ही ग्रहण करने पर अन्तिम समयके अनिवृत्ति-करणसम्बन्धी सब संक्रमस्थानोंको और द्विचरम आदि समयके अनिवृत्तिकरणसम्बन्धी संक्रमस्थानोंके आदिसे लेकर असंख्यातवें भागको छोड़कर शेष सब संक्रमस्थान पुनरुक्त हो गये हैं, इसलिए उनका अपनयन करना चाहिए। इसके बाद अनिवृत्तिकरणका आश्रयकर मिथ्यात्वके संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा समाप्त हुई।

§ ७७६. अब मिथ्यात्वका अन्य भी गुणसंक्रम विषय है, क्योंकि उपशम सम्यग्दृष्टि जीवके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त काल तक एकान्तानुवृद्धिरूप परिणामोंके द्वारा मिथ्यात्वके प्रदेशोंका सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वमें गुणसंक्रमरूपसे संक्रम देखा जाता है। वहाँ भी गुण-संक्रमके प्रथम समयसे ले कर अन्तिम समय तक संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा करने पर अपूर्वकरणकी प्ररूपणासे कुछ भी नानात्व नहीं है, इसलिए उनके विस्तारके साथ प्ररूपणा करके समाप्त होने पर गुणसंक्रमका आश्रय कर मिथ्यात्वकी संक्रमस्थानप्ररूपणा समाप्त हुई। इसलिए 'इस प्रकार सब परिपाटियोंमें, इस सूत्रकी अर्थप्ररूपणा समाप्त होती है।

§ ७७७. अब इस सूत्रसे सर्वसंक्रमस्थानोंकी परिपाटियोंमें असंख्यात लोकप्रमाण ही संक्रमस्थानोंका उपदेश होनेसे इनसे अधिक संक्रमस्थान सम्भव नहीं ही हैं इस प्रकार विवादापन्न शिष्यकी उस प्रकारकी विप्रतिपत्तिके निराकरण द्वारा सर्वसंक्रमका आश्रयकर अनन्त संक्रमस्थान सम्भव हैं इसका कथन करने के लिए आगेका सूत्र अवतीर्ण हुआ है—

*** णवरि सव्वसंकमे अणंताणि संकमट्ठाणाणि ।**

§ ७७८. ण केवलमसंखेज्जलोगमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि, किंतु सव्वसंकमविसए अणंताणि संकमट्ठाणाणि अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणसिद्धाणंतिमभागमेत्ताणि लब्भंति त्ति भणिदं होदि । संपहि एदेण सुत्तेण सूचिदाणं सव्वसंकमविसयसंकमट्ठाणाणं परूवणं वत्तइस्सामो । तं जहा—एगो खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण पुव्वुत्तेण कमेण सम्मत्तं पडिवज्जिय बेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिदूण दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय जहाकममधापवत्तकरणमपुव्वकरणं च वोलिय अणियट्टिकरणद्धाए संखेज्जेसु भागेसु गदेसु तत्थ मिच्छत्तचरिमफालिं सव्वसंकमेण सम्मामिच्छत्तस्सुवरि पक्खिवमाणो सव्वसंकममस्सिऊण मिच्छत्तजहण्णसंकमट्ठाणसामिओ होइ । पुणो एदम्हादो उवरि परमोणुत्तरदुपरमाणुत्तरादिकमेण खविदकम्मंसियस्स दोवड्ढीहिं खविदगुणिदघोलमाणाणं पंचवड्ढीहिं गुणिदकम्मंसियस्स वि दुविहाए वड्ढीए वड्ढाविय णेदव्वं जाव एत्थतणचरिमवियप्पो त्ति ।

§ ७७९. तत्थ सव्वपच्छिमवियप्पो वुच्चदे—एक्को गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीए मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं करिय तत्तो णिस्सरिऊण तिरिक्खेसु दो-तिण्णिभवग्गहणाणि गमिय समयाविरोहेण देवेसुववज्जिय अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवज्जिय बेछावट्ठिसागरोवमाणि

---

* इतनी विशेषता है कि सर्वसंक्रममें अनन्त संक्रमस्थान हैं ।

§ ७७८. केवल असंख्यात लोकमात्र ही संक्रमस्थान नहीं हैं, किन्तु सर्वसंक्रममें अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण अनन्त संक्रमस्थान प्राप्त होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है । अब इस सूत्र द्वारा सूचित हुए सर्वसंक्रमविषयक संक्रमस्थानोंका कथन करेंगे । यथा कोई एक जीव क्षपितकर्मांशिक लक्षणसे आकर पूर्वोक्त क्रमसे सम्यक्त्वको प्राप्तकर तथा दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो क्रमसे अधःप्रवृत्तकरण और अपूर्वकरणको विताकर अनिवृत्तिकरणके संख्यात बहुभागके जाने पर वहाँ मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको सर्वसंक्रमके द्वारा सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर प्रक्षिप्त करता हुआ सर्वसंक्रमका आश्रय कर मिथ्यात्वके जघन्य संक्रमस्थानका स्वामी होता है । पुनः इसके ऊपर एक परमाणु अधिक, दो परमाणु अधिक आदिके क्रमसे क्षपितकर्मांशिकको दो वृद्धियोंके द्वारा क्षपित-गुणित-घोलमान जीवोंको पाँच वृद्धियोंके द्वारा तथा गुणितकर्मांशिक जीवको भी दो वृद्धियोंके द्वारा बढ़ाकर यहाँके अन्तिम विकल्पके प्राप्त होने तक ले जाना चाहिए ।

§ ७७९. वहाँ सबसे अन्तिम विकल्प कहते हैं—एक गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करके फिर वहाँ से निकल कर तिर्यञ्चोंमें दो-तीन भवोंको विताकर यथाशास्त्र देवोंमें उत्पन्न हो अन्तर्मुहूर्तमें सम्यक्त्वको प्राप्त कर दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाका प्रस्थापन कर सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर मिथ्यात्वकी

परिभमिय दंसणमोहक्खवणं पट्ठविय सम्मामिच्छत्तस्सुवरि मिच्छत्तचरिमफालिं कमेण संछुहिदूण ट्ठिदो तस्स पयदविसयचरिमवियप्पो होइ। संपहि चरिमफालिदव्वमेदं समऊण-विसमऊणादिकमेण वेछावट्ठिकालं सव्वमोदारिय गहेयव्वं। तं कधमोदारिज्जदि त्ति भणिदे एगो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमपुढवीए मिच्छत्तदव्वमुक्कस्सं करेमाणो तत्थेयगोवुच्छमेत्तेणूणं करियागंतूण समऊणवेछावट्ठीओ परिभमिय दंसणमोहक्खवणाए अब्भुट्ठिय मिच्छत्तचरिमफालिं संछुहमाणो पुव्विल्लेण समाणो होइ। एसो परमाणुत्तरकमेण अप्पणो ऊणीकयदव्वमेत्तं वड्ढावेयव्वो। एवमेदीए दिसाए वेछावट्ठिकालो सव्वो परिहावेयव्वो जाव चरिमवियप्पं पत्तो त्ति।

§ ७८०. तत्थ चरिमवियप्पो—जो गुणिदकम्मंसिओ सत्तमाए पुढवीए मिच्छत्तदव्वमोघुक्कस्सं करियागंतूण दो-तिण्णिभवग्गहणाणि तिरिक्खेसु गमिय तदो मणुस्सेसुववज्जिय गब्भादिअट्ठवस्साणमंतोमुहुत्तब्भहियाणमुवरि दंसणमोहणीयं खवेमाणो मिच्छत्तचरिमफालिं सम्मामिच्छत्तस्सुवरि संकामेदूण ट्ठिदो सो सव्वसंकममस्सिऊण मिच्छत्तस्स सव्वपच्छिमवियप्पसामिओ होइ। खविदकम्मंसियस्स वि कालपरिहाणिं कादूणेवं चेव परूवणा कायव्वा। णवरि एयगोवुच्छमेत्तमहियं कादूणागदेण हेट्ठिमसमयट्ठिदो सरिसो त्ति वत्तव्वं। ओदारिय चरिमफालिदव्वं वड्ढाविदे इमाणि सव्वसंकमविसये अणंताणि

अन्तिम फालिको क्रमसे संक्रमित कर स्थित है उसके प्रकृत सर्वसंक्रमविषयक अन्तिम विकल्प होता है। अब इस अन्तिम फालिके द्रव्यको एक समय कम, दो समय कम आदिके क्रमसे सम्पूर्ण दो छयासठ सागर प्रमाण कालको उतार कर ग्रहण करना चाहिए। उसे कैसे उतारा जाय ऐसा पूछने पर कहते हैं—एक गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वके द्रव्यको उत्कृष्ट करता हुआ वहाँ एक गोपुच्छामात्र न्यून करके और आकर एक समय कम दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर दर्शनमोहनीयकी क्षपणाके लिए उद्यत हो मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिका संक्रम करता हुआ पूर्वके जीवके समान है। यह एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे अपने कम किये गये द्रव्यमात्रको बढ़ावे। इस प्रकार इस दिशासे अन्तिम विकल्पके प्राप्त होने तक समस्त दो छयासठ सागर काल घटाना चाहिए।

§ ७८०. अब वहाँ अन्तिम विकल्पको बतलाते हैं- जो गुणितकर्मांशिक जीव सातवीं पृथिवीमें मिथ्यात्वके द्रव्यको ओघ उत्कृष्ट करके और आकर दो-तीन भव तिर्यञ्चोंमें बिताकर अनन्तर मनुष्योंमें उत्पन्न हो गर्भसे लेकर अन्तर्मुहूर्त अधिक आठ वर्षके बाद दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करता हुआ मिथ्यात्वकी अन्तिम फालिको सम्यग्मिथ्यात्वके ऊपर संक्रमण कर स्थित है वह सर्वसंक्रमकी अपेक्षा मिथ्यात्वके सबसे अन्तिम विकल्पका स्वामी होता है। क्षपितकर्मांशिककी भी कालकी परिहानि करके इसी प्रकार प्ररूपणा करनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि एक गोपुच्छमात्र द्रव्यको अधिक कर आये हुए जीवके साथ अधस्तन समयमें स्थित जीव समान होता है ऐसा कहना चाहिए। उतार कर अन्तिम फालिके द्रव्यके बढ़ाने पर सर्वसंक्रमकी अपेक्षा ये अनन्त

संकमट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि हवंति । होंताणि वि खविदजहण्णदव्वे गुणिदुक्कस्सदव्वादो सोहिदे सुद्धसेसे रूवाहियम्मि जत्तिया परमाणू अत्थि तत्तियमेत्ता चेव संकमट्ठाणवियप्पा सव्वसंकममस्सिऊण समुप्पण्णा हवंति ।

§ ७८१. एवमेत्तिएण पबंधेण मिच्छत्तस्स संकमट्ठाणपरूवणं कादूण संपहि एदेणेव गयत्थाणं सेसकम्माणं पि पयदत्थसमप्पणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ एवं सव्वकम्माणं ।

§ ७८२. जहा मिच्छत्तस्स संकमट्ठाणपरूवणं कयं तहा सेसकम्माणं पि कायव्वं । कुदो ? सव्वसंकमे अणंताणि संकमट्ठाणाणि तदो अण्णत्थासंखेज्जलोगा संकमट्ठाणाणि होंति, एदेण भेदाभावादो । संपहि एदेण सामण्णणिद्देसेण लोहसंजलणस्स वि सव्वसंकमविसयाण-मणंताणं संकमट्ठाणाणमत्थित्ताइप्पसंगे तप्पडिसेहदुवारेणासंखेज्जलोगमेत्ताणं चेव संकम-ट्ठाणाणं तत्थ संभवं पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ णवरि लोहसंजलणस्स सव्वसंकमो णत्थि ।

§ ७८३. किं कारणं ? परपयडिसंछोहणेण विणा खविदत्तादो । तम्हा लोहसंजलण-स्सासंखेज्जलोगमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि अधापवत्तसंकममस्सिऊण परूवेयव्वाणि त्ति

संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं । होते हुए भी क्षपित कर्मांशिकके जघन्य द्रव्यको गुणित कर्मांशिकके उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे कम करने पर एक अधिक शुद्ध शेषमें जितने परमाणु हैं उतने ही संक्रमस्थानके विकल्प सर्वसंक्रमके आश्रयसे उत्पन्न होते हैं ।

§ ७८१. इस प्रकार इतने प्रबन्धके द्वारा मिथ्यात्वके संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा करके अब इसी पद्धतिसे ही गतार्थ शेष कर्मोंके भी प्रकृत अर्थका समर्पण करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इसी प्रकार सब कर्मोंके संक्रमस्थान जानने चाहिए ।

§ ७८२. जिस प्रकार मिथ्यात्वके संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा की है उसी प्रकार शेष कर्मोंके संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा भी करनी चाहिए, क्योंकि सर्वसंक्रममें अनन्त संक्रमस्थान होते हैं और उससे अन्यत्र असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान होते हैं इस अपेक्षासे कोई भेद नहीं है । अब इस सामान्य निर्देशसे लोभसंज्वलनके भी सर्वसंक्रमविषयक अनन्त संक्रमस्थानोंके प्राप्त होने पर उनके प्रतिषेध द्वारा असंख्यात लोकमात्र ही संक्रमस्थान वहाँ सम्भव हैं ऐसा कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इतनी विशेषता है कि लोभसंज्वलनका सर्वसंक्रम नहीं होता ।

§ ७८३ क्योंकि पर प्रकृतिमें संक्रमण हुए बिना उसका क्षय होता है । इसलिए अधः-प्रवृत्तसंक्रमके आश्रयसे लोभसंज्वलनके असंख्यात लोकमात्र ही संक्रमस्थान कहने चाहिए यह उक्त कथनका भावार्थ है । अब इन दोनों ही सूत्रों द्वारा प्रगट किये गये अर्थका स्पष्टीकरण करनेके

भावत्थो । संपहि एदेहिं दोहिं वि सुत्तेहिं समप्पिदत्थस्स फुडीकरणट्ठमेत्थ किंचि परूवणं कस्सामो । तं जहा—बारसकसाय-इत्थि-णवुंसय०—अरदि-सोगाणमप्पप्पणो जहण्ण-सामित्तविहाणेणागंतूण अधापवत्तकरणचरिमसमए वट्टमाणस्स जहण्णसंतकम्मेण जहण्ण-परिणामणिबंधणविज्झादसंकममस्सिऊण जहण्णसंकमट्ठाणमुप्पज्जदि । पुणो तम्मि चेव असंखेज्जलोगभागुत्तरं संकमट्ठाणं होदि । एवं जहण्णए कम्मे असंखेज्जा लोगा संकम-ट्ठाणाणि होंति । तदो पदेसुत्तरे दुपदेसुत्तरे वा एवमणंतभागुत्तरे वा जहण्णसंतकम्मे ताणि चेव संकमट्ठाणाणि ? कुदो तारिससंतकम्मवियप्पाणमपुणरुत्तसंकमट्ठाणंतरुप्पत्तीए अणि-मित्तभावादो । तदो असंखेज्जलोगभागे पक्खित्ते विदियसंकमट्ठाणपरिवाडी होइ, एग-संतकम्मपक्खेवमेत्ते जहण्णसंतकम्मादो वड्ढिदे वि सरिससंकमट्ठाणंतरुप्पत्तीए णिव्वाह-मुवलंभादो । एवं सव्वासु परिवाडीसु सेसं मिच्छादिमिच्छत्तभंगेण सव्वमणुगंतव्वं । णवरि अधापवत्तसंकमविसए वि एदेसिं कम्माणमसंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि अत्थि, तेसिं पि परूवणा जाणिय कायव्वा ।

§ ७८४. एवं हस्स-रइ-भय-दुगुंछाणं पि वत्तव्वं । णवरि अपुव्वकरणावलिय-पविट्ठचरिमसमए अधापवत्तसंकमेण जहण्णसामित्तमेदेसिं जादमिदि अधापवत्तसंकम-णिबंधणाणि असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि तत्थुप्पाइय गेण्हियव्वाणि । तदो अणियट्टि-

लिए यहाँ पर कुछ प्ररूपणा करेंगे । यथा—नपुंसकवेद, अरति और शोकका अपना अपना जो जघन्य स्वामित्व है उस विधिसे आकर अधःप्रवृत्तकरणके अन्तिम समयमें विद्यमान जीवके जघन्य सत्कर्मके साथ जघन्य परिणाम निमित्तक विध्यातसंक्रमका आश्रय कर जघन्य संक्रमस्थान उत्पन्न होता है । पुनः उसीमें ही असंख्यात लोक भाग अधिक संक्रम स्थान उत्पन्न होता है । इस प्रकार जघन्य कर्ममें असंख्यात लोकमात्र संक्रमस्थान होते हैं । इसके बाद एक प्रदेश अधिक, दो प्रदेश अधिक इस प्रकार अनन्तभाग अधिक जघन्य सत्कर्ममें वे ही संक्रमस्थान होते हैं, क्योंकि उस प्रकारके सत्कर्म विकल्प अपुनरुक्त संक्रमस्थानोंकी अनन्तर उत्पत्तिमें निमित्त नहीं हैं । इसके बाद असंख्यात लोक भागके प्रक्षिप्त करने पर दूसरी संक्रमस्थान परिपाटी होती है, क्योंकि जघन्य सत्कर्मसे एक सत्कर्म प्रक्षेपमात्र बढ़ाने पर भी सदृश संक्रमस्थानकी अनन्तर उत्पत्ति निर्बाध उपलब्ध होती है । 'इस प्रकार सब परिपाटियोंमें ले जाना चाहिए' इत्यादि मिथ्यात्वके भंगसे सब जान लेना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अधःप्रवृत्तसंक्रमके विषयमें भी इन कर्मोंके असंख्यात लोकमात्र संक्रमस्थान हैं, इसलिए उनकी भी प्ररूपणा जानकर करनी चाहिए ।

§ ७८४. इसी प्रकार हास्य, रति, भय और जुगुप्साका भी कथन करना चाहिए । इतनी विशेषता है कि अपूर्वकरणके आवलि प्रविष्ट अन्तिम समयमें अधःप्रवृत्तसंक्रमके द्वारा इनका जघन्य स्वामित्व हो गया है, इसलिए अधःप्रवृत्तसंक्रमनिमित्तक असंख्यात लोकमात्र संक्रमस्थानोंको वहाँ उत्पन्न करा कर ग्रहण करना चाहिए । इसके बाद अनिवृत्तिकरणमें संक्रमस्थानोंके उत्पन्न

करणम्मि संकमट्ठाणुप्पायणे मिच्छत्तादो णत्थि किं पि णाणत्तं, तत्थेदेसिं गुणसंकमसंभवं पडि भेदाभावादो। सव्वसंकमे वि ण किंचि णाणत्तमत्थि। एवं लोहसंजलणस्स वि। णवरि सव्वसंकमो गुणसंकमो च णत्थि। अपुव्वकरणावलियपविट्ठचरिमसमयजहण्णसंकमट्ठाणमादिं कादूण जावुक्कस्ससंकमट्ठाणे त्ति ताव अधापवत्तसंकममस्सिऊणासंखेज्जलोगमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि लोहसंजलणस्स समुप्पाइय गेण्हिदव्वाणि।

§ ७८५. पुरिसवेद-कोह माण-मायासंजलणाणमुवसमसेढीए चिराणसंतकम्मं सव्वमुवसामिय णवकबंधोवसामणाए वावदस्स चरिमसमए जहण्णसामित्तं होइ त्ति तत्थतणाणियट्टिपरिणाममेयवियप्पमस्सिदूण सेढीए असंखे०भागमेत्तसंतवियप्पेहिं सेढीए असंखे०भागमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि समुप्पाइय गेण्हियव्वाणि। एवं दुचरिमादिसमएसु वि विसेसाहियकमेण संकमट्ठाणाणि उप्पाइय ओदारेयव्वं जाव णवकबंधोवसामणाए पढमसमयो त्ति।

§ ७८६. एवमुप्पाइदं जोगट्ठाणद्धाणायामेण समयूणदोआवलियविक्खंभेण पयदकम्माणं संकमट्ठाणपदरमुप्पण्णं होइ। एत्थ सेसो विधी पदेसविहत्तिभंगेण वत्तव्वो। हेट्ठा वि अधापवत्तसंकममस्सिऊणेदेसिं लोभसंजलणभंगेण ट्ठाणपरूवणा कायव्वा। खवग-

करानेमें मिथ्यात्वसे कुछ भी भेद नहीं है, क्योंकि वहाँ इनका गुणसंक्रम सम्भव होनेके प्रति भेद नहीं पाया जाता। सर्वसंक्रममें भी कुछ भेद नहीं है। इसी प्रकार लोभसंज्वलनके विषयमें भी जानना चाहिए। इतनी विशेषता है कि इसका सर्वसंक्रम और गुणसंक्रम नहीं है। अपूर्वकरणके आवलिप्रविष्ट अन्तिम समयमें जघन्य संक्रमस्थानसे लेकर उत्कृष्ट संक्रमस्थानके प्राप्त होने तक अधःप्रवृत्तसंक्रमका आश्रय कर असंख्यात लोकमात्र ही संक्रमस्थान लोभसंज्वलनके उत्पन्न कर ग्रहण करने चाहिए।

§ ७८५. पुरुषवेद, क्रोधसंज्वलन, मानसंज्वलन और मायासंज्वलनके उपशमश्रेणिमें समस्त प्राचीन सत्कर्मको उपशमा कर नवकबन्धकी उपशामनामें व्यापृत हुए जीवके अन्तिम समयमें जघन्य स्वामित्व होता है, इसलिए वहाँके एक विकल्परूप अनिवृत्तिकरणके परिणामका आश्रय कर जगश्रेणिके असंख्यातवें भागमात्र सत्कर्म विकल्पोंसे जगश्रेणिके असंख्यातवें भागमात्र ही संक्रमस्थानोंको उत्पन्न कर ग्रहण करना चाहिए। इसी प्रकार द्विचरम आदि समयोंमें भी विशेष अधिकके क्रमसे संक्रमस्थानोंको उत्पन्न कर नवकबन्धकी उपशामनाके प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारना चाहिए।

§ ७८६. इस प्रकार उत्पन्न कराने पर प्रकृत कर्मोंका संक्रमस्थानप्रतर योगस्थानोंके अध्वानके बराबर आयामवाला और एक समय कम दो आवलिप्रमाण विष्कम्भवाला उत्पन्न होता है। यहाँ पर शेष विधि प्रदेशविभक्तिके समान कहनी चाहिए। नीचे भी अधःप्रवृत्तसंक्रमका आश्रयकर इनकी लोभसंज्वलनके समान स्थानप्ररूपणा करनी चाहिए। क्षपकश्रेणिमें भी नवक-

सेढीए त्ति णवकबंधचरिमादिफालीओ संछुहमाणयस्स विहत्तिभंगाणुसारेण संकमट्ठाणपरूवणा णिव्वामोहमणुगंतव्वा । सव्वसंकमे च पदेसविहत्तिभंगो ।

§ ७८७. संपहि सम्मत्तसम्मामिच्छत्ताणमप्पप्पणो जहण्णसामित्तविहाणेणागंतूण उव्वेल्लणदुचरिमकंडयचरिमसमयम्मि उव्वेल्लणसंकमेण संकामेमाणस्स जहण्णसंकमट्ठाणं होइ । एवमादिं[1] कादूण पक्खेवुत्तरकमेण संतकम्मं वड्ढाविय असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि तण्णिबंधणाणि समुप्पाइय गहेयव्वाणि । सेसो विही जहा मिच्छत्तस्स भणिदो तहा वत्तव्वो । णवरि जम्हि विज्झादभागहारो तम्हि उव्वेल्लणभागहारो उव्वेल्लण०-णाणागुणहाणिसलागाणमण्णोण्णब्भत्थरासी च भागहारो ठवेयव्वो । संतकम्मपक्खेव पमाणं च अप्पणो जहण्णदव्वादो साहेयव्वं । पुणो कालपरिहाणीए संतकम्मोदारणाए च मिच्छत्तभंगमणुसंभरिय ओदारेयव्वं जाव सगगालणकालं सव्वमोइण्णस्स उव्वेल्लणा-पारंभपढमसमयो त्ति । एवमोदारिदे उव्वेल्लणसंकममस्सिऊण सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण-मसंखेज्जलोगमेत्ताणि संकमट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि भवंति । एत्थ पुणरुत्तापुणरुत्ताणुगमे मिच्छत्तविज्झादसंकमभंगो ।

§ ७८८. पुणो चरिमुव्वेल्लणकंडयम्मि दोण्हमेदेसिं कम्माणं गुणसंकमसंभवो त्ति । तत्थापुव्वकरणम्मि मिच्छत्तस्स जहा संकमट्ठाणपरूवणा कया तहा कायव्वा । तत्थेव

बन्धकी अन्तिम आदि फालियोंका संक्रमण करनेवाले जीवकी विभक्तिभंगके अनुसार संक्रमस्थान प्ररूपणा बिना व्यामोहके करनी चाहिए । सर्वसंक्रममें प्रदेशविभक्तिके समान भंग है ।

§ ७८७. अब सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वकी अपेक्षा विचार करने पर अपने अपने जघन्य स्वामित्वकी विधिसे आकर उद्वेलनाके द्विचरम काण्डकके अन्तिम समयमें उद्वेलनासंक्रमके द्वारा संक्रम करनेवाले जीवके जघन्य संक्रमस्थान होता है । आगे इसे आदि करके प्रक्षेपोत्तरके क्रमसे सत्कर्मको बढ़ाकर तन्निमित्तक असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थानोंको उत्पन्न करके ग्रहण करना चाहिए । शेष विधि जिस प्रकार मिथ्यात्वकी कही है उस प्रकार कहनी चाहिए । इतनी विशेषता है कि जहाँ विध्यातभागहार कहा है वहाँ उद्वेलनभागहार और उद्वेलनासंक्रमकी नाना गुणहानि शलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्तराशि भागहार स्थापित करना चाहिए । तथा सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण अपने जघन्य द्रव्यके अनुसार साध लेना चाहिए । पुनः कालपरिहानि और सत्कर्मके उतारनेमें मिथ्यात्वके भंगका स्मरण कर पूरा अपने गालन का काल उतरे हुए जीवके उद्वेलनाके प्रारम्भ होनेके प्रथम समयके प्राप्त होने तक उतारना चाहिए । इस प्रकार उतारने पर उद्वेलनासंक्रमका आश्रय कर सम्यक्त्व और सम्यग्मिथ्यात्वके असंख्यात लोकमात्र संक्रमस्थान उत्पन्न होते हैं । यहाँ पर पुनरुक्त और अपुनरुक्तके अनुगममें मिथ्यात्वके विध्यातसंक्रमके समान भंग है ।

§ ७८८. पुनः अन्तिम उद्वेलनाकाण्डकमें इन दोनों कर्मोंका गुणसंक्रम सम्भव है । सो वहाँ अपूर्वकरणमें मिथ्यात्वकी जिस प्रकार प्ररूपणा की है उस प्रकार करनी चाहिए । वहीं पर अन्तिम

१. ता० प्रतौ एव (द) मादिं इति पाठः ।

चरिमफालिं संकामेमाणस्स सव्वसंकमो होदि त्ति तत्थ अणंताणं संकमट्ठाणाणं परूवणा जाणिय कायव्वा । अण्णं च मिच्छत्तं पडिवण्णस्स जाव उव्वेल्लणसंकमपारंभो ण होइ ताव अंतोमुहुत्तकालमधापवत्तसंकमो होइ त्ति । एत्थ वि अधापवत्तसंकमचरिमसमयमादिं कादूण जाव अधापवत्तसंकमपढमसमयो त्ति ताव समयं पडि पादेक्कमसंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि संतकम्मभेदं परिणामभेदं च णिबंधणं कादूण परूवेयव्वाणि । सम्मामिच्छत्तस्स विज्झादसंकमेण दंसणमोहक्खवयापुव्वाणियट्टिगुणसंकमेण तत्थतणसव्वसंकमेण उवसमसम्माइट्ठिम्मि गुणसंकमेण च ट्ठाणपरूवणाए कीरमाणाए मिच्छत्तभंगो । एवमोघेण सव्वकम्माणं ठाणपरूवणा समत्ता ।

§ ७८९. आदेसेण मणुसतियम्मि एवं चेव वत्तव्वं । णवरि मणुसिणीसु पुरिसवेदस्स अपुव्वकरणावलियपविट्ठचरिमसमयम्मि जहण्णसामित्तं होइ त्ति तमादिं कादूण परूवणा कायव्वा । सेसमग्गणासु जाणिदूण णेदव्वं जाव अणाहारए त्ति । एवं सगंतोक्खित्तपमाणाणुगमं परूवणाणिओगद्दारं समत्तं ।

§ ७९०. संपहि एवं परूविदसंकमट्ठाणाणं पमाणविसयणिण्णयुप्पायणट्ठमप्पाबहुअपरूवणं कुणमाणो सुत्तपबंधमुत्तरं भणइ—

❀ अप्पाबहुअं ।

फालिका संक्रम करनेवाले जीवके सर्वसंक्रम होता है इसलिए वहाँ पर अनन्त संक्रमस्थानोंकी प्ररूपणा जानकर करनी चाहिए । और भी मिथ्यात्वको प्राप्त हुए जीवके जब तक उद्वेलनासंक्रमका प्रारम्भ नहीं होता तब अन्तर्मुहूर्त काल तक अधःप्रवृत्तसंक्रम होता है । यहाँ पर भी अधःप्रवृत्तसंक्रमके अन्तिम समयसे लेकर अधःप्रवृत्तसंक्रमके प्रथम समय तक प्रत्येक समयमें अलग अलग असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान सत्कर्मके भेदको और परिणामभेदको निमित्त कर कहने चाहिए । सम्यग्मिथ्यात्वकी विध्यातसंक्रमके आश्रयसे दर्शनमोहनीयकी क्षपणा करनेवाले जीवके अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरणमें गुणसंक्रमके आश्रयसे, वहाँ सर्वसंक्रमके आश्रयसे और उपशम श्रेणिमें गुणसंक्रमके आश्रयसे स्थानप्ररूपणा करने पर उसका भंग मिथ्यात्वके समान है । इस प्रकार ओघसे सब कर्मोंकी स्थानप्ररूपणा समाप्त हुई ।

§ ७८९. आदेशसे मनुष्यत्रिकमें इसी प्रकार कहनी चाहिए । इतनी विशेषता है कि मनुष्यिनियोंमें पुरुषवेदका अपूर्वकरणके आवलिप्रविष्ट अन्तिम समयमें जघन्य स्वामित्व होता है, इस लिए उससे लेकर प्ररूपणा करनी चाहिए । शेष मार्गणाओंमें अनाहारक मार्गणातक जानकर प्ररूपणा करनी चाहिए । इसप्रकार जिसके भीतर प्रमाणानुगम अन्तर्लीन है ऐसा प्ररूपणानुयोगद्वार समाप्त हुआ ।

§ ७९०. अब इसप्रकार कहे गये संक्रमस्थानोंका प्रमाणविषयक निर्णय करनेके लिए अल्पबहुत्वका कथन करते हुए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* अल्पबहुत्वका अधिकार है ।

§ ७६१. सुगममेदमहियारसंभालणवक्कं ।

※ सव्वत्थोवाणि लोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि ।

§ ७६२. कुदो ? लोहसंजलणस्स सव्वसंकमाभावेणासंखेज्जलोगमेत्ताणं चेव संकमट्ठाणाणमुवलंभादो ।

※ सम्मत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि ।

§ ७६३. किं कारणं ? अभवसिद्धिएहिंतो अणंतगुणसिद्धाणमणंतभागपमाणत्तादो । णेदमसिद्धं, उव्वेल्लणचरिमफालीए सव्वसंकममस्सिऊण तेत्तियमेत्तसंकमट्ठाणाणं णिप्पडिबद्धमुवलंभादो ।

※ अपच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि[१] ।

§ ७६४. किं कारणं ? सम्मत्तस्स चरिमुव्वेल्लणकंडयजहण्णफालीए तस्सेवुक्कस्सचरिमफालीदो सोहिदाए सुद्धसेसमेत्ता संकमट्ठाणवियप्पा होंति । अपच्चक्खाणमाणस्स वि सगसव्वजहण्णचरिमफालीए अप्पणो उक्कस्सचरिमफालीदो सोहिदाए सुद्धसेसमेत्ता संकमट्ठाणवियप्पा सव्वसंकमणिबंधणा होंति । होंता वि सम्मत्तसुद्धसेसट्ठाणवियप्पेहिंतो असंखेज्जगुणा, मिच्छत्तादो गुणसंकमेण पडिच्छिददव्वस्स उव्वेल्लणकालब्भंतरगलिदावसिट्ठस्स सम्मत्तचरिमफालिसरूवेणुवलंभादो । अपच्चक्खाणमाणस्स पुण अणूणाहियकम्मट्ठिदिसंचएण मिच्छत्तुक्कस्सदव्वादो विसेसहीणेण खवणाए अब्भुट्ठिदस्स सव्वुक्कस्स-

§ ७६१. अधिकारकी सम्हाल करनेवाला यह वाक्य सुगम है।

※ लोभसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान सबसे थोड़े हैं ।

§ ७६२. क्योंकि लोभसंज्वलनका सर्वसंक्रम नहीं होनेसे असंख्यात लोकमात्र ही संक्रमस्थान उपलब्ध होते हैं ।

※ उनसे सम्यक्त्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान अनन्तगुणे हैं ।

§ ७६३. क्योंकि ये अभव्योंसे अनन्तगुणे और सिद्धोंके अनन्तवें भागप्रमाण हैं । यह असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि उद्वेलनाकी अन्तिम फालिके सर्वसंक्रमके आश्रयसे उतने संक्रमस्थान बिना बाधाके उपलब्ध होते हैं ।

※ उनसे अप्रत्याख्यानमानमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं ।

§ ७६४. क्योंकि सम्यक्त्वके अन्तिम उद्वेलनाकाण्डककी जघन्य फालिको उसीके उत्कृष्ट अन्तिम फालिमेंसे घटा देने पर शुद्ध शेषमात्र संक्रमस्थान विकल्प होते है । अप्रत्याख्यानावरण मानके भी अपनी सबसे जघन्य अन्तिम फालिको अपनी उत्कृष्ट अन्तिम फालिमेंसे घटा देने पर शुद्ध शेषमात्र सर्वसंक्रमनिमित्तक संक्रमस्थान विकल्प होते हैं । होते हुए भी सम्यक्त्वके शुद्धशेष स्थानविकल्पोंसे असंख्यातगुणे होते हैं, क्योंकि मिथ्यात्वमेंसे गुणसंक्रमके द्वारा प्राप्त हुए तथा उद्वेलना कालके भीतर गलकर अवशिष्ट रहे द्रव्यको सम्यक्त्वकी अन्तिम फालिरूपसे उपलब्धि होती है । परन्तु क्षपणाके लिए उद्यत हुए जीवके अप्रत्याख्यानावरण मानकी सबसे उत्कृष्ट फालि न्यूनाधिकतासे रहित कर्मस्थितिके संचयप्रमाण तथा मिथ्यात्वके उत्कृष्ट द्रव्यसे विशेष हीन होता

चरिमफाली होइ त्ति । एदेण कारणेणासंखेज्जगुणत्तमेदेसिं ण विरुज्झदे ।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ७६५. केत्तियमेत्तो विसेसो ? अपच्चक्खाणमाणपदेससंकमट्ठाणाणि आवलियाए असंखेज्जभागेण खंडेऊण तत्थेयखंडमेत्तो । तं जहा—अपच्चक्खाणमाणुक्कस्ससव्वसंकम-दव्वमपच्चक्खाणकोहस्स सव्वसंकमुक्कस्सदव्वादो सोहिय सुद्धसेसमेत्तपयडिविसेसदव्व-मवणिय पुध ठवेयव्वं । एवं पुध ट्ठविदे सेसदव्वं दोण्हं पि समाणं होइ । एदम्हादो समुप्पण्णासेसहेट्ठिमसंकमट्ठाणाणि दोण्हं पि सरिसाणि होंति जइ दोण्हं पि चरिम-फालीओ जहण्णीओ सरिसीओ होज्ज । णवरि जहण्णचरिमफालीओ दोण्हं पि सरिसीओ ण होंति, माणजहण्णचरिमफालीदो कोहजहण्णचरिमफालीए पयडिविसेसमेत्तेण सादिरेयत्तदंसणादो । एदेण कारणेण हेट्ठिमसंकमट्ठाणेसु अपच्चक्खाणमाणेण लद्धसंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि भवंति, जहण्णचरिमफालिविसेसमेत्ताणं चेव संकम-ट्ठाणाणमेत्थाहियाणमुवलंभादो । तदो पुव्वमवणेदूण पुध ट्ठविदपयडिविसेसमेत्तुक्कस्स-चरिमफालिविसेसादो एदम्मि जहण्णफालिविसेसे सोहिदे सुद्धसेसम्मि जत्तिया परमाणू, तेत्तियमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि अपच्चक्खाणकोहेणुवरिमपुव्वाणि लद्धाणि, तेणेत्तिय-मेत्तसंकमट्ठाणेहि विसेसाहियत्तमेत्थ दट्ठव्वं । एसो अत्थो उवरि पयडिविसेसेण

है । इस कारण इनका असंख्यातगुणापन विरोधको नहीं प्राप्त होता ।

❀ उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ७६५. **शंका**—विशेषका प्रमाण क्या है ?

समाधान—अप्रत्यख्यानावरण मानके प्रदेशसंक्रमस्थानोंको आवलिके असंख्यातवें भागसे भाजित कर वहाँ जो एक भाग लब्ध आवे उतना विशेषका प्रमाण है । यथा—अप्रत्याख्यान मानके उत्कृष्ट सर्वसंक्रमद्रव्यको अप्रत्याख्यान क्रोधके सर्वसंक्रमसम्बन्धी उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे घटाकर शुद्ध शेषमात्र प्रकृति विशेषके द्रव्यको पृथक् स्थापित करना चाहिए । इस प्रकार पृथक् स्थापित करने पर शेष द्रव्य दोनोंका ही समान होता है तथा इससे उत्पन्न हुए अशेष अधस्तन संक्रम-स्थान दोनोंके ही समान होते हैं, यदि दोनोंकी ही जघन्य अन्तिम फालियाँ सदृश होवें । परन्तु इतनी विशेषता है कि दोनोंकी जघन्य अन्तिम फालियाँ सदृश नहीं होतीं, क्योंकि मानकी जघन्य अन्तिम फालिसे क्रोधकी जघन्य अन्तिम फालि प्रकृति विशेषमात्र अधिक देखी जाती है । इस कारणसे अधस्तन संक्रमस्थानोंमें अप्रत्याख्यान मानकी अपेक्षा अप्रत्याख्यान क्रोधके प्राप्त हुए संक्रमस्थान विशेष अधिक होते हैं, क्योंकि जघन्य अन्तिम फालिमें विशेषका जितना प्रमाण है उतने ही संक्रमस्थान यहाँ पर अधिक उपलब्ध होते हैं । इसलिए पूर्वके द्रव्यको घटाकर पृथक् स्थापित प्रकृतिके विशेष प्रमाण उत्कृष्ट अन्तिम फालिसम्बन्धी विशेषमेंसे इस जघन्य फालि सम्बन्धी विशेषको घटा देने पर शुद्ध शेषमें जितने परमाणु होते हैं उतने ही संक्रमस्थान अप्रत्याख्यान क्रोधके आश्रयसे उपरिम पूर्व होकर प्राप्त होते हैं, इसलिए इतने मात्र संक्रमस्थान विशेष अधिक

विसेसाहियसव्वपयडीसु जोजेयव्वो ।

§ ७९६. अण्णं च दोण्हमेदेसिं जहण्णदव्वाणि उक्कस्सदव्वेसु सोहिय सुद्धसेसादो अहियदव्वमवणिय सेसदव्वं विज्झादभागहारवेअसंखेज्जालोगजोगगुणगाराणमण्णोण्णब्भत्थरासिं विलेऊण समखंडं करिय दिण्णे विरलणरूवं पडि एगेगसंतकम्मपक्खेवपमाणं पावदि । पुणो एत्तियमेत्तसंतकम्मपक्खेवेसु जहण्णदव्वस्सुवरि परिवाडीए पवेसिदेसु एत्थुप्पण्णासेससंकमट्ठाणाणि संतकम्मपक्खेवं पडि असंखेज्जलोगमेत्ताणि दोण्हं पि सरिसाणि भवंति । पुणो पुव्वमवणेदूण पुध ट्ठविददव्वे वि संतकम्मपक्खेवपमाणेण कदे असंखेज्जलोगमेत्ता संतकम्मपक्खेवा होंति त्ति । तत्थ वि असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि अपच्चक्खाणकोहस्स विज्झादसंकममस्सिऊण अब्भहियाणि लब्भंति । एवमधापवत्तगुणसंकमे वि अस्सिऊण अहियत्तं वत्तव्वं । तदो एदेहि मि विसेसाहियत्तमेत्थ दट्ठव्वं ।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ पच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

यहाँ पर जानने चाहिए । यह अर्थ आगे प्रकृति विशेषकी अपेक्षा विशेषाधिक सब प्रकृतियोंमें लगाना चाहिए ।

§ ७९६. और भी—इन दोनोंके जघन्य द्रव्योंको उत्कृष्ट द्रव्योंमेंसे घटाकर शुद्ध शेषमेंसे अधिक द्रव्यको कम कर शेष द्रव्यके विध्यातभागहार, दो असंख्यात लोक और योग गुणकारोंकी अन्योन्याभ्यस्तराशिको विरलन कर उसके ऊपर समान खण्ड करके देने पर एक एक विरलनके प्रति सत्कर्मसम्बन्धी एक एक प्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है । पुनः इतने मात्र सत्कर्म प्रक्षेपोंके जघन्य द्रव्यके ऊपर परिपाटीसे प्रविष्ट करा देने पर यहाँ पर उत्पन्न हुए समस्त संक्रमस्थान सत्कर्मप्रक्षेपके प्रति असंख्यात लोकमात्र होते हुए दोनोंके ही समान होते हैं । पुनः पूर्वके द्रव्यको अलगकर पृथक् स्थापित द्रव्यके भी सत्कर्मप्रक्षेपके प्रमाणसे करने पर असंख्यात लोकमात्र सत्कर्मप्रक्षेप होते हैं । वहाँ पर भी अप्रत्याख्यान क्रोधके विध्यातसंक्रमके आश्रयसे असंख्यात लोकमात्र संक्रमस्थान अधिक उपलब्ध होते हैं । इसी प्रकार अधःप्रवृत्त और गुणसंक्रमके आश्रयसे भी अधिकपनेका कथन करना चाहिए । इसलिए इनकी अपेक्षा भी विशेषाधिकता यहाँ जाननी चाहिए ।

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे प्रत्याख्यानमानमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ अणंताणुबंधिमाणस्स पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ मिच्छत्तस्स पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ७६७. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि, पयडिविसेसमेत्तकारणावेक्खित्तादो ।

❀ सम्मामिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ७६८. किं कारणं ? मिच्छत्तजहण्णचरिमफालिमुक्कस्सचरिमफालीदो सोहिय सुद्धसेसदव्वादो सम्मामिच्छत्तसुद्धसेसचरिमफालिदव्वस्स गुणसंकमभागहारेण खंडदेयखंडमेत्तेण अहियत्तदंसणादो । मिच्छाइट्ठिम्मि वि सम्मामिच्छत्तस्स अणंताणं संकमट्ठाणाणमहियाणमुवलंभादो च ।

❀ हस्से पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि ।

§ ७६६. कुदो ? देसघाइत्तादो ।

---

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे अनन्तानुबन्धी मानमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे मिथ्यात्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ७६७. ये सूत्र सुगम हैं, क्योंकि यहाँ प्रकृति विशेषमात्र कारणकी अपेक्षा है ।

* उनसे सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ७६८. क्योंकि मिथ्यात्वकी जघन्य अन्तिम फालिको उसकी उत्कृष्ट अन्तिम फालिमेंसे घटा कर जो द्रव्य शुद्ध शेष रहे उससे सम्यग्मिथ्यात्वकी शुद्ध शेष अन्तिमफालिका द्रव्य गुणसंक्रमभागहारसे खण्डित करने पर एक खण्डमात्र अधिक देखा जाता है । तथा मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें भी सम्यग्मिथ्यात्वके अनन्त संक्रमस्थान अधिक उपलब्ध होते हैं ।

* उनसे हास्यमें प्रदेशसंक्रमस्थान अनन्तगुणे हैं ।

§ ७६६. क्योंकि यह देशघाति प्रकृति है ।

❀ रदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८००. कुदो ? पयडिविसेसादो ।

❀ इत्थिवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि ।

§ ८०१. कुदो ? बंधगद्धापाहम्मादो ।

❀ सोगे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८०२. एत्थ बंधगद्धाविसेसमस्सिऊण संखेज्जभागाहियत्तं दट्ठव्वं ।

❀ अरदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८०३. कुदो ? पयडिविसेसादो ।

❀ णवुंसयवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८०४. एत्थ वि बंधगद्धाविसेसमस्सिऊण विसेसाहियत्तमणुगंतव्वं ।

❀ दुगुंछाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८०५. कुदो ? धुवबंधित्तेणित्थि-पुरिसवेदबंधगद्धासु वि संचयोवलंभादो ।

❀ भए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८०६. पयडिविसेसमेत्तेण ।

---

* उनसे रतिमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८००. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है ।

* उनसे स्त्रीवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान संख्यातगुणे हैं ।

§ ८०१. क्योंकि इसका बन्धक काल बड़ा है ।

* उनसे शोकमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८०२. यहाँ पर भी बन्धक काल विशेषका आश्रय कर संख्यातवां भाग अधिक जानना चाहिए।

* उनसे अरतिमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८०३. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है ।

* उनसे नपुंसकवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८०४. यहाँ पर भी बन्धककाल विशेषका आश्रय कर विशेषाधिकता जाननी चाहिए ।

* उनसे जुगुप्सामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८०५. क्योंकि यह ध्रुवबन्धिनी प्रकृति होनेसे स्त्रीवेद और पुरुषवेदके बन्धककालोंमें भी इसका संचय उपलब्ध होता है ।

* उनसे भयमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८०६. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है ।

❀ पुरिसवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८०७. कुदो ? पयडिविसेसादो ।

❀ कोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि ।

§ ८०८ कुदो ? कसायचउब्भागेण सह णोकसायभागस्स सव्वस्सेव कोहसंजलण-चरिमफालीए सव्वसंकमसरूवेण परिणदस्सुवलंभादो ।

❀ माणसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ मायासंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८०९. एदाणि दो वि सुत्ताणि सुगमाणि, विहत्तीए परूविदकारणत्तादो ।

एवमोघो समत्तो ।

§ ८१०. एत्तो आदेसपरूवणट्ठमुत्तरो सुत्तपबंधो—

❀ णिरयगईए सव्वत्थोवाणि अपच्चक्खाणमाणे पदेससंकम-ट्ठाणाणि ।

§ ८११. एदाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होदूण सेससव्वपयडिपदेससंकमट्ठाणेहिंतो थोवाणि त्ति भणिदं होइ ।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

---

* उनसे पुरुषवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८०७. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है ।

* उनसे क्रोधसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान संख्यातगुणे हैं ।

§ ८०८. क्योंकि कषायके चतुर्थभागके साथ नोकषायोंका भाग पूरा ही क्रोधसंज्वलनकी अन्तिम फालिमें सर्वसंक्रमरूपसे परिणत होकर उपलब्ध होता है ।

* उनसे मानसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे मायासंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८०९. ये दोनों ही सूत्र सुगम हैं, विभक्तिमें इसका कारण कह आये हैं ।

इस प्रकार ओघ समाप्त हुआ ।

§ ८१०. अब आदेशका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध बतलाते हैं—

* नरकगतिमें अप्रत्याख्यानमानमें प्रदेशसंक्रमस्थान सबसे स्तोक हैं ।

§ ८११. ये असंख्यात लोकमात्र होकर शेष सब प्रकृतियोंके प्रदेशसंक्रमस्थानोंसे स्तोक होते हैं यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

* उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

❀ लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ पच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

§ ८१२. एदाणि सुत्ताणि पयडिविसेसमेत्तकारणपडिबद्धाणि सुगमाणि ।

❀ मिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।

§ ८१३ तं जहा—पच्चक्खाणलोभस्स ताव णिरयगइपडिबद्धाणि असंखेज्ज-लोगमेत्ताणि संकमट्ठाणाणि भवंति । तं कधं ? खविदकम्मंसियलक्खणेणागदासण्णिपच्छा-यदणेरइयपढमसमयम्मि सव्वजहण्णसंकमपाओग्गं पच्चक्खाणलोभजहण्णसंतकम्मट्ठाणं होइ पुणो एदम्हादो उवरि परमाणुत्तरादिकमेण संतकम्मे वड्ढाविज्जमाणे जाव गुणिदकम्मं-सियस्स पच्चक्खाणलोभसंकमपाओग्गुक्कस्ससंतकम्मट्ठाणे त्ति ताव चत्तारि पुरिसे अस्सिऊण वड्ढिदुं संभवो अत्थि त्ति जहण्णसंतट्ठाणमुक्कस्ससंतकम्मट्ठाणादो सोहिय सुद्धसेसदव्वं विरलियसंतकम्मपक्खेवभागहारस्स समखंडं कादूण दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्स सव्वकम्मपक्खेव-

---

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे प्रत्याख्यानमानमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

§ ८१२. प्रकृति विशेषमात्र कारणसे सम्बन्ध रखनेवाले ये सूत्र सुगम हैं ।

* उनसे मिथ्यात्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं ।

§ ८१३. यथा—प्रत्याख्यान लोभके तो नरकगतिसम्बन्धी संक्रमस्थान असंख्यात लोक-मात्र होते हैं ।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्षपितकर्मांशिकलक्षणके साथ असंज्ञियोंमेंसे आये हुए नारकीके प्रथम समयमें सबसे जघन्य संक्रमके योग्य प्रत्याख्यान लोभका जघन्य सत्कर्मस्थान होता है । पुनः इससे ऊपर एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे सत्कर्मके बढ़ाने पर गुणितकर्मांशिक जीवके प्रत्याख्यान लोभके संक्रमके योग्य उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानके प्राप्त होने तक चार पुरुषोंका आश्रय कर वृद्धि करना सम्भव है, इसलिए जघन्य सत्कर्मस्थानको उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानमेंसे घटाकर शुद्ध शेष द्रव्यका विरलन कर उसके ऊपर सत्कर्मप्रक्षेपभागहारके समान खण्ड कर देयरूपसे देने पर एक एक रूपके प्रति सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है । सत्कर्मप्रक्षेपभागहार तो असंख्यात लोकप्रमाण है,

पमाणं पावइ। संकमभागहारो पुण असंखेज्जलोगमेत्तो, अधापवत्तभागहार-वे-असंखेज्जलोग-रूवणजोगगुणगाराणमण्णोण्णसंवग्गजणिदरासिपमाणत्तादो। पुणो एदेसु विरलणरासिमेत्तसंतकम्मपक्खेवेसु पढमरूवधरिदसंतकम्मपक्खेवपमाणं घेत्तूण पडिरासीकयजहण्णसंतकम्मट्ठाणस्सुवरि पक्खित्ते विदियं संतकम्मट्ठाणमसंखेज्जलोगभागुत्तरमुप्पज्जदि। पुणो विदियरूवोवरि ट्ठिदसंतकम्मपक्खेवे विदियसंकमट्ठाणं पडिरासिय पक्खित्ते तदियसंतकम्मट्ठाणं होइ। एवमेदेण विधिणा असंखेज्जलोगमेत्तसंतकम्मपक्खेवे घेत्तूणुप्पण्णुक्कस्ससंतकम्मं पडिरासिय परिवाडीए पक्खित्ते पच्चक्खाणलोहस्सासंखेज्जलोगमेत्तसंतकम्मट्ठाणाणि समुप्पण्णाणि भवंति। एदेण कमेणुप्पण्णासंखेज्जलोगमेत्तसंतकम्मट्ठाणाणमेगेगसंतकम्मम्मि पादेक्कमसंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि भवंति, सत्थाणमिच्छाइट्ठिम्मि अधापवत्तसंकमपाओग्गाणमसंखेज्जलोगमेत्तपरिणामट्ठाणाणमत्थित्ते पडिसेहाभावादो। तदो णिरयगदीए एत्तियमेत्तसंकमट्ठाणाणि पचक्खाणलोभपडिबद्धाणि होंति त्ति सिद्धं।

§ ८१४. संपहि मिच्छत्तस्स वि णिरयगइपडिबद्धाणि असंखेज्जलोगमेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि होंति। तं जहा—खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण वेछावट्ठीओ भमिय मिच्छत्तं गंतूण समयाविरोहेण णेरइएसुववज्जिय अंतोमुहुत्तेण पुणो वि सम्मत्तं घेत्तूण तदो अंतोमुहुत्तूणतेत्तीसंसागरोवमाणि तत्थ भवट्ठिदिमणुपालिय अंतोमुत्तसेसे सगाउए

क्योंकि वह अधःप्रवृत्तभागहार, दो असंख्यात लोक और एक कम योगगुणकारके परस्पर संवर्गसे उत्पन्न हुई राशिप्रमाण है। पुनः इन विरलन राशिप्रमाण सत्कर्मप्रक्षेपोंमेंसे प्रथम रूपके प्रति प्राप्त सत्कर्मप्रक्षेपके प्रमाणको ग्रहण कर प्रतिराशिकृत जघन्य सत्कर्मस्थानके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर असंख्यात लोक भाग अधिक दूसरा सत्कर्मस्थान उत्पन्न होता है। पुनः विरलनके दूसरे रूपके ऊपर स्थित सत्कर्मप्रक्षेपको दूसरे सत्कर्मस्थानको प्रतिराशि करके उसके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर तीसरा सत्कर्मस्थान होता है। इस प्रकार इस विधिसे असंख्यात लोकप्रमाण सत्कर्मप्रक्षेपोंको ग्रहण कर उत्पन्न हुए उत्कृष्ट सत्कर्मको प्रतिराशि कर क्रमसे प्रक्षिप्त करने पर प्रत्याख्यान लोभके असंख्यात लोकप्रमाण सत्कर्मस्थान उत्पन्न होते हैं, इस क्रमसे उत्पन्न हुए असंख्यात लोकप्रमाण सत्कर्मस्थानोंमेंसे एक एक सत्कर्ममें अलग अलग असंख्यात लोकप्रमाण सत्कर्मस्थान होते हैं, क्योंकि स्वस्थान मिथ्यादृष्टिके अधःप्रवृत्तसंकमके योग्य असंख्यात लोकप्रमाण परिणामस्थानोंके अस्तित्वमें कोई प्रतिषेध नहीं है। इसलिए नरकगतिमें प्रत्याख्यान लोभसे सम्बन्ध रखनेवाले इतने संक्रमस्थान होते हैं यह सिद्ध हुआ।

§ ८१४ अब मिथ्यात्वके भी नरकगतिसे सम्बन्ध रखनेवाले असंख्यात लोक प्रमाण ही संक्रमस्थान होते हैं। यथा—क्षपितकर्मांशिक लक्षणसे आकर तथा दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर मिथ्यात्वको प्राप्त हो समयके अविरोध पूर्वक नारकियोंमें उत्पन्न हो अन्तर्मुहूर्तमें फिर भी सम्यक्त्वको ग्रहण कर फिर अन्तर्मुहूर्त कम तेतीस सागर काल तक वह भवस्थितिका पालन कर अपनी आयुमें अन्तर्मुहूर्त काल शेष रहने पर सम्यक्त्वके अन्तिम समयमें विद्यमान

सम्माइट्ठिचरिमसमयम्मि वट्टमाणस्स मिच्छत्तजहण्णसंकमपाओग्गं जहण्णसंतकम्मट्ठाणं होदि। एदम्हादो उवरि परमाणुत्तरादिकमेण जाव मिच्छत्तसंकमपाओग्गुक्कस्ससंतकम्मट्ठाणं पावदि ताव वड्ढिदुं संभवो त्ति जहण्णदव्वमुक्कस्सदव्वादो सोहिय सुद्धसेसम्मि संतकम्मपक्खेवपमाणाणुगमं कस्सामो। तं जहा—

§ ८१५. सुद्धसेसदव्वमोकड्डुक्कड्डणभागहार-वेछावट्ठिसागरोवमकालब्भंतरणाणागुणहाणिसलागण्णोण्णब्भत्थरासि-तेत्तीस०अण्णोण्णब्भत्थरासि-विज्झादभागहार-वेअसंखेज्जलो०-जोगगुणगाराणमेदेसिं सत्तण्हं रासीणमण्णोण्णसंवग्गजणिदरासिमसंखेज्जलोगपमाणं विरलिय समखंडं कादूण दादव्वं। एवं दिण्णे एक्केकस्स रूवस्स एगेगसंतकम्मपक्खेवपमाणं पावदि।

§ ८१६. संपहि एदे विरलणरासिमेत्तसंतकम्मपक्खेवे घेत्तूण मिच्छत्तजहण्णसंतट्ठाणं पडिरासिय परिवाडीए पक्खित्ते असंखेज्जलोगमेत्ताणि चेव संतकम्मट्ठाणाणि मिच्छत्तपडिबद्धाणि भवंति। एदेहिंतो समुप्पज्जमाणसंकमट्ठाणाणि वि असंखेज्जलोगमेत्ताणि होदूण पच्चक्खाणलोभसंकमट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणहीणाणि होंति। तत्थतणसंकमपाओग्गसंतकम्मवियप्पेहिंतो एत्थतणसंकमपाओग्गसंतकम्मवियप्पाणमसंखेज्जगुणत्ते संते कुदो एस संभवो त्ति णासंकणिज्जं, संतकम्माणं तहाभावे विज्झादसंकमणिबंधणपरिणामट्ठाणेहिंतो अधापवत्तसंकमणिबंधणपरिणामट्ठाणाणमसंखेज्जगुणाहियत्तब्भुवगमादो। णाब्भुवगममेत्त-

उसके मिथ्यात्वका जघन्य संक्रमके योग्य जघन्य सत्कर्मस्थान होता है। इसके ऊपर एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे मिथ्यात्वके संक्रमके योग्य उत्कृष्ट सत्कर्मस्थानके प्राप्त होने तक बढ़ाना सम्भव है, इसलिए जघन्य द्रव्यको उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे घटाकर जो शुद्ध शेष रहे उसमें सत्कर्मप्रक्षेपके प्रमाणका अनुगम करेंगे। यथा—

§ ८१५. शुद्ध शेष द्रव्यका अपकर्षण-उत्कर्षणभागहार, दो छयासठ सागर कालके भीतर उत्पन्न हुई नाना गुणहानिशलाकाओंकी अन्योन्याभ्यस्त राशि, तेतीस सागरकी अन्योन्याभ्यस्त राशि, विध्यातभागहार, दो असंख्यात लोक और योगगुणकार इन सात राशियोंके परस्पर संवर्गसे उत्पन्न हुई असंख्यात लोकप्रमाण राशिका विरलन कर उस पर समखण्ड करके देना चाहिए। इस प्रकार देने पर एक एक रूपके प्रति एक एक सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है।

§ ८१६. अब इन विरलन राशिप्रमाण सत्कर्मप्रक्षेपोंको ग्रहण कर मिथ्यात्वके जघन्य सत्कर्मस्थानको प्रतिराशि कर क्रमसे प्रक्षिप्त करने पर असंख्यात लोकप्रमाण ही मिथ्यात्वसे सम्बन्ध रखनेवाले सत्कर्मस्थान होते हैं। तथा इनसे उत्पन्न हुए संक्रमस्थान भी असंख्यात लोकप्रमाण होकर प्रत्याख्यान लोभके संक्रमस्थानोंसे असंख्यातगुणे हीन होते हैं।

शंका—वहाँके संक्रमप्रायोग्य सत्कर्मविकल्पोंसे यहाँके संक्रमप्रायोग्य सत्कर्मविकल्प असंख्यातगुणे होने पर यह सम्भव कैसे है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि संक्रमस्थानोंके वैसा होने पर विध्यातसंक्रमके कारणभूत परिणामस्थानोंसे अधःप्रवृत्तसंक्रमके कारणभूत परिणामस्थान असंख्यात-

मेवेदं, परमगुरुपरंपरागयविसिट्ठोवएसणिबंधणत्तादो। केरिसो सो गुरूवएसो त्ति चे ? वुच्चदे—सव्वत्थोवाणि उव्वेल्लणसंकमणिबंधणपरिणामट्ठाणाणि, विज्झादसंकमणिबंधणपरिणामट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि, अधापवत्तसंकमणिबंधणपरिणामट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि, गुणसंकमणिबंधणपरिणामट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। गुणगारो सव्वत्थासंखेज्जा लोगा। तदो संतकम्मट्ठाणगुणगारादो परिणामगुणगारस्सासंखेज्जगुणत्तेण मिच्छत्तविज्झादसंकमट्ठाणेहिंतो पच्चक्खाणलोभस्स अधापवत्तसंकमट्ठाणाणमसंखेज्जगुणत्तमिदि घेत्तव्वं। जइ एवं; मिच्छत्तसंकमट्ठाणाणमसंखेज्जगुणत्तमेदं कधं पयदि त्ति णासंकणिज्जं, गुणसंकममाहप्पेण तेसिं तहाभावसमत्थणादो। तं जहा—

§ ८१७. पुव्वुत्तमिच्छत्तजहण्णसंतकम्मट्ठाणमादिं कादूण जाव तस्सेवुक्कस्ससंकमट्ठाणे त्ति ताव एदेसिमसंखेज्जलोगमेत्तसंतकम्मट्ठाणाणमेगसेढिआयारेण परिवाडीए रचणं कादूण पुणो एत्थ गुणसंकमपाओग्गजहण्णसंतकम्मगवेसणं कस्सामो। तं कधं ? ण ताव एत्थतणसव्वजहण्णसंतकम्मट्ठाणेण गुणसंकमसंभवो, खविदकम्मंसियलक्खणेणागंतूण वेछावट्ठिसागरोवमाणि परिभमिय मिच्छत्तं गंतूण णेरइएसुववज्जिय सव्वलहुं सम्मत्तं

गुणे अधिक स्वीकार किये हैं। और यह माननामात्र नहीं है, क्योंकि परम गुरुका परम्परासे आया हुआ उपदेश इसका कारण है।

शंका—वह गुरुका उपदेश किस प्रकार का है ?

समाधान—कहते हैं, उद्वेलनासंक्रमके कारणभूत परिणामस्थान सबसे थोड़े हैं। उनसे विध्यातसंक्रमके कारणभूत परिणामस्थान असंख्यातगुणे हैं। उनसे अधःप्रवृत्तसंक्रमके कारणभूत परिणामस्थान असंख्यातगुणे हैं। उनसे गुणसंक्रमके कारणभूत परिणामस्थान असंख्यातगुणे हैं। गुणकार सर्वत्र असंख्यात लोक है। इसलिए सत्कर्मस्थानोंके गुणकारसे परिणामस्थानोंका गुणकार असंख्यातगुणा होनेसे मिथ्यात्वके विध्यातसंक्रमस्थानोंसे प्रत्याख्यान लोभके अधःप्रवृत्तसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं ऐसा ग्रहण करना चाहिए।

शंका—यदि ऐसा है तो मिथ्यात्वके संक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं यह कैसे कहा गया है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि गुणसंक्रमके माहात्म्यवश उनका इस रूपसे समर्थन किया है। यथा—

§ ८१७. पूर्वोक्त मिथ्यात्वके जघन्य सत्कर्मस्थानसे लेकर उसीके उत्कृष्ट सत्कर्मस्थान तक इन असंख्यात लोकप्रमाण सत्कर्मस्थानोंकी एक श्रेणिके आकारसे क्रमसे रचना करके पुनः यहाँ गुणसंक्रमके योग्य जघन्य सत्कर्मकी गवेषणा करते हैं।

शंका—वह कैसे ?

समाधान—क्योंकि यहाँके सबसे जघन्य सत्कर्मस्थानके आश्रयसे गुणसंक्रम सम्भव नहीं है, क्योंकि क्षपितकर्मांशिकलक्षणसे आकर दो छयासठ सागर काल तक परिभ्रमण कर मिथ्यात्वमें जाकर नारकियोंमें उत्पन्न हो अतिशीघ्र ही सम्यक्त्वको प्राप्त कर उसके साथ अन्त-

पडिलंभेण तेत्तीसं सागरोवमाणि अंतोमुहुत्तूणाणि गालिय समुप्पाइदजहण्णसंतकम्मेण सह वट्टमाणचरिमसमए वेदयसम्माइट्ठिम्मि उवसमसम्मत्तग्गहणसंभवादो । तदो एवंभूद-जहण्णसंतकम्मेण णिरयादो उव्वट्टिऊण तप्पाओग्गेण पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तकालेण वेदयपाओग्गभावं बोलिय तक्कालब्भंतरसंचिदपलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तसमयपबद्ध-पडिबद्धदव्वमेत्तेण जहण्णदव्वमहियं कादूणागदस्स णेरइएसु अंतोमुहुत्तोववण्णल्लयस्स गुणसंकमपाओग्गजहण्णसंतकम्मं होदि । एदं च सव्वजहण्णमिच्छत्तसंतकम्मादो असंखेज्ज-भागब्भहियं, पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्ताणं समयपबद्धाणमेत्थब्भहियाणमुवलंभादो । संचयमाहप्पादो तत्तो असंखेज्जगुणब्भहियमेदं किण्ण होदि त्ति ? णासंकणिज्जं, पुव्वुत्तकालब्भंतरे एक्किस्से वि गुणहाणीए वि असंभवणियमादो । कुदो एदमवगम्मदे ? परमगुरूवएसादो । पुव्वुत्तसव्वजहण्णमिच्छत्तसंतकम्मादो पक्खेवुत्तरकमेणासंखेज्जलोगमेत्त-संतकम्मवियप्पे समुल्लंघिऊण समुप्पण्णमेदं ति दट्ठव्वं, एक्कम्मि वि समयपबद्धे संतकम्म-पक्खेवपमाणेण कीरमाणे असंखेज्जलोगमेत्तसंतकम्मपक्खेवाणमुवलद्धीदो ।

मुहूर्त कम तेतीस सागर काल बिता कर उत्पन्न किये गये जघन्य सत्कर्मके साथ जो वेदक-सम्यग्दृष्टि अन्तिम समयमें स्थित है उसके उपशमसम्यक्त्वका ग्रहण सम्भव है। इसके बाद इस प्रकारके जघन्य सत्कर्मके साथ नरकसे निकल कर तत्प्रायोग्य पल्यके असंख्यातवें भाग कालके द्वारा वेदकप्रायोग्यभावको बिताकर उस कालके भीतर संचित पल्यके असंख्यातवें भाग-प्रमाण समयप्रबद्धोंसे प्रतिबद्ध द्रव्यसे जघन्य द्रव्यको अधिक कर जो आया है और जिसे नारकियोंमें उत्पन्न हुए अन्तर्मुहूर्त हुआ है उसके गुणसंक्रमके योग्य जघन्य सत्कर्म होता है। और यह सबसे जघन्य मिथ्यात्वके सत्कर्मसे असंख्यातवाँ भाग अधिक होता है, क्योंकि इसमें पल्यके असंख्यातवें भागमात्र समयप्रबद्ध संचयके माहात्म्यवश अधिक उपलब्ध होते हैं।

शंका—उससे यह असंख्यातगुणा अधिक क्यों नहीं होता ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त कालके भीतर एक भी गुणहानि सम्भव नहीं है ऐसा नियम है।

शंका—यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान—परम गुरुके उपदेशसे यह जाना जाता है ।

पूर्वोक्त सबसे जघन्य मिथ्यात्वके सत्कर्मसे एक प्रक्षेप अधिकके क्रमसे असंख्यात लोकमात्र सत्कर्म विकल्पोंको उल्लंघन कर यह उत्पन्न हुआ है ऐसा यहाँ जानना चाहिए, क्योंकि एक भी समयप्रबद्धको सत्कर्मप्रक्षेपके प्रमाणसे करने पर असंख्यात लोकमात्र सत्कर्म प्रक्षेपोंकी उपलब्धि होती है।

§ ८१८. संपहि एवं विहाणेण परूविदतप्पाओग्गजहण्णसंतकम्मेण णेरइएसुप्पज्जिय अंतोमुहुत्तेण पज्जत्तीओ समाणिय उवसमसम्मत्तुप्पायणपढमसमए जहण्णपरिणामेण संकामेमाणस्स गुणसंकममस्सिऊण सव्वजहण्णसंकमट्ठाणं होइ। एदं च विज्झादसंकममस्सिऊण पुव्वमुप्पण्णसंकमट्ठाणेसु केण वि सह सरिसं ण होदि। किं कारणं ? तत्थुप्पण्णसव्वुक्कस्ससंकमट्ठाणादो वि एदस्स गुणसंकमभागहारमाहप्पेणासंखेज्जगुणब्भहियत्तदंसणादो। पुणो एदं चेव णिरुद्धजहण्णसंतकम्मट्ठाणं बिदियपरिणामट्ठाणेण संकामेमाणस्स असंखेज्जलोगभागवड्ढीए बिदियसंकमट्ठाणं होदि। एत्थ परिणामट्ठाणाणमपुव्वकरणभंगेणाणुगमो कायव्वो। एवमेदेण कमेण तदियादिपरिणामे वि णाणाकालसंबंधेण णाणाजीवेहिं परिणमाविय उवसमसम्माइट्ठिपढमसमए जहण्णसंतकम्ममेदं धुवं कादूणासंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि समुप्पाएयव्वाणि। एवं पढमपरिवाडी समत्ता।

§ ८१९. संपहि एदं संतकम्ममस्सिऊण पढमसमयम्मि अण्णाणि संकमट्ठाणाणि ण उप्पज्जंति त्ति एत्तो पक्खेवुत्तरसंतकम्मं घेत्तूण एवं चेव परिणामट्ठाणमेत्तायामेण बिदियपरिवाडीए संकमट्ठाणाणमुप्पत्ती वत्तव्वा। पुव्वुत्तकालब्भंतरे एगसंतकम्मपक्खेवमेत्तेणब्भहियजहण्णदव्वसंचयं कादूणागदस्स उवसमसम्मत्तग्गहणपढमसमए वट्टमाणस्स तदुप्पत्तिदंसणादो। एदेण बीजपदेणेगेगसंतकम्मपक्खेवेणाहियं संचयं कराविय उवसमसम्माइट्ठिपढमसमयम्मि संतकम्मपक्खेवं पडि असंखेज्जलोगमेत्तसंकमट्ठाणाणि णिव्वामोहमुप्पा-

§ ८१८. अब इस विधिसे तत्प्रायोग्य जघन्य सत्कर्मके साथ नारकियोंमें उत्पन्न होकर अन्तमुहूर्तमें पर्याप्तियोंमें पूराकर उपशमसम्यक्त्वको उत्पन्न करनेके प्रथम समयमें जघन्य परिणामसे संक्रमण करनेवाले जीवके गुणसंकमका आश्रयकर सबसे जघन्य संक्रमस्थान होता है। और यह विध्यातसंक्रमका आश्रय कर पूर्वमें उत्पन्न हुए संक्रमस्थानोंमेंसे किसी भी संक्रमस्थानके साथ सदृश नहीं होता, क्योंकि वहाँ पर उत्पन्न हुए सबसे उत्कृष्ट संक्रमस्थानसे भी यह गुणसंक्रमके भागहारके माहात्म्यवश असंख्यातगुणा अधिक देखा जाता है। पुनः इसी विवक्षित जघन्य सत्कर्मस्थानका दूसरे परिणाम स्थानके निमित्तसे संक्रम करनेवाले जीवका असंख्यात लोक भागवृद्धिके साथ दूसरा संक्रमस्थान होता है। यहाँ पर परिणामस्थानोंका अपूर्वकरणके भंगके अनुसार अनुगम करना चाहिए। इस प्रकार इस क्रमसे तृतीय आदि परिणामोंको भी नानाकालके सम्बन्धसे नानाजीवोंके द्वारा परिणमा कर उपशमसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें इस जघन्य सत्कर्मको ध्रुव करके असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान उत्पन्न कराने चाहिए। इसप्रकार प्रथम परिपाटी समाप्त हुई।

§ ८१९. अब इस सत्कर्मका आश्रय कर प्रथम समयमें अन्य संक्रमस्थान नहीं उत्पन्न होते, इसलिए एक प्रक्षेप अधिक सत्कर्मको ग्रहण कर इसी प्रकार परिणामस्थानप्रमाण आयामसे दूसरी परिपाटीसे संक्रमस्थानोंकी उत्पत्ति कहनी चाहिए, क्योंकि पूर्वोक्त कालके भीतर एक सत्कर्मप्रक्षेपमात्रसे अधिक जघन्य द्रव्यका संचय करके आये हुए जीवके उपशमसम्यक्त्वको ग्रहण करनेके प्रथम समयमें विद्यमान रहते हुए उसकी उत्पत्ति देखी जाती है। इस बीजपदके अनुसार एक एक सत्कर्मप्रक्षेपसे अधिक संचय कराकर उपशमसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें सत्कर्मप्रक्षेपके

एयन्भाणि जाव गुणिदकम्मंसियस्स सव्वुक्कस्सगुणसंकमट्ठाणे त्ति । एवमुवसमसम्माइट्ठि-पढमसमयम्मि समुप्पण्णसंकमट्ठाणाणं विक्खंभायामपमाणाणुगमो सुगमो । उवसमसम्माइट्ठिबिदियादिसमएसु वि एवं चेवासंखेज्जलोगविक्खंभायामेण संकमट्ठाणपदरुप्पत्ती वत्तव्वा जाव गुणसंकमचरिमसमयो त्ति । णवरि सव्वत्थ अधापवत्तपरिणामपंति-आयामादो एत्थतणपरिणामपंतिआयामो असंखेज्जगुणो, पुव्वुत्तप्पाबहुअबलेण तहाभाव-सिद्धीदो ।

§ ८२०. एवमुप्पण्णासेसमिच्छत्तगुणसंकमट्ठाणाणि पच्चक्खाणलोभसयलसंकम-ट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणाणि । गुणगारो पलिदो० असंखे०भागो असंखेज्जा लोगा च अण्णोण्णगुणिदमेत्तो । किं कारणं ? आयामादो आयामस्स पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्ते गुणगारे संते विक्खंभादो वि विक्खंभस्सासंखेज्जलोगमेत्तगुणगारदंसणादो । अहवा जइ वि एत्थ आयामगुणगारो पलिदोवमासंखेज्जभागमेत्तो णाब्भुवगम्मदे, पच्चक्खाण-लोभसंकमट्ठाणपरिवाडीणं चेवायामो अधापवत्तभागहारमाहप्पेणासंखेज्जगुणो त्ति इच्छिज्जदे तो वि असंखेज्जगुणत्तमेदं ण विरुज्झदे, आयामगुणगारादो परिणामट्ठाणगुण-गारस्सासंखेज्जलोगपमाणस्सासंखेज्जगुणत्ते संसयाभावादो । जइ वि उहयत्थ विक्खं-भायामा सरिसा त्ति घेप्पंति तो वि णासंखेज्जगुणपदुप्पायणमेदं बाहिज्जदे, तहाब्भुवगमे

प्रति असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थान गुणितकर्मांशिक जीवके सबसे उत्कृष्ट गुणसंक्रमस्थानके प्राप्त होने तक व्यामोहके बिना उत्पन्न कराने चाहिए। इसप्रकार उपशमसम्यग्दृष्टिके प्रथम समयमें उत्पन्न हुए संक्रमस्थानोंका विष्कम्भ और आयामके प्रमाणका अनुगम सुगम है। उपशमसम्यग्दृष्टिके द्वितीयादि समयोंमें भी इसीप्रकार असंख्यात लोक विष्कम्भ-आयामरूपसे संक्रमस्थानोंके प्रतरकी उत्पत्ति गुणसंक्रमके अन्तिम समयके प्राप्त होने तक कहनी चाहिए। इतनी विशेषता है कि सर्वत्र अधःप्रवृत्त परिणामपंक्ति आयामसे यहाँका परिणामपंक्ति आयाम असंख्यातगुणा है, क्योंकि पूर्वोक्त अल्पबहुत्वके बलसे यह बात सिद्ध होती है।

§ ८२०. इसप्रकार मिथ्यात्वके उत्पन्न हुए समस्त गुणसंक्रमस्थान प्रत्याख्यान लोभके समस्त संक्रमस्थानोंसे असंख्यातगुणे हैं। गुणकार पल्यका असंख्यातवां भाग और परस्पर गुणित असंख्यात लोक है, क्योंकि आयामसे आयामका गुणकार पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण होने पर विष्कम्भसे भी विष्कम्भका गुणकार असंख्यात लोकप्रमाण देखा जाता है। अथवा यद्यपि यहाँ पर आयामका गुणकार पल्यके असंख्यातवें भागप्रमाण नहीं स्वीकार किया जाता है। किन्तु प्रत्याख्यान लोभकी संक्रमस्थान परिपाटियोंका ही आयाम अधःप्रवृत्त भागहारके माहात्म्यवश असंख्यातगुणा स्वीकार किया जाता है तो भी इसका असंख्यातगुणा होना विरोधको प्राप्त नहीं होता, क्योंकि आयामके गुणकारसे परिणामस्थानोंके असंख्यात लोकप्रमाण गुणकारके असंख्यात-गुणे होनेमें कोई संशय नहीं है। यद्यपि दोनों जगह विष्कम्भ और आयाम सदृश ग्रहण किये जाते हैं तो भी यह असंख्यातगुणरूप कथन बाधित नहीं होता, क्योंकि इस प्रकार स्वीकार करने

वि मिच्छत्तस्स गुणसंकमकालावलंबणेण अंतोमुहुत्तमेत्तगुणगारुप्पत्तीए परिप्फुडमुवलंभादो।

⊛ हस्से पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।

§ ८२१. कुदो ? देसघादिपाहम्मादो। कधं पुण देसघादित्तमाहप्पेणाणंतगुणत्त-संभवपाओग्गविसए असंखेज्जगुणत्तमेदं घडदि त्ति णासंकणिज्जं, सव्वघादीसु देसघादीसु च सव्वसंकमादो अण्णत्थासंखेज्जलोगमेत्ताणं चेव संकमट्ठाणाणं संभवब्भुवगमादो। कुदो एवं चेव ? सव्वघादिसंतकम्मपक्खेवादो देसघादिसंतकम्मपक्खेवस्साणंतगुणत्तब्भु-वगमादो। जइ एवं, उहयत्थ संकमट्ठाणविक्खंभायामाणमसंखेज्जलोगपमाणत्ते समाणत्ते संते कथमेदेसिमसंखेज्जगुणत्तं जुज्जदि त्ति ? ण एस दोसो, तत्थतणविक्खंभायामेहिंतो एत्थतणविक्खंभायामाणं देसघादिपाहम्मेणासंखेज्जगुणत्तावलंबणादो। तं जहा—

§ ८२२. गुणसंकमभागहारपुव्वुत्तण्णोण्णब्भत्थरासि-बेअसंखेज्जलोग-जोगगुणगाराण-मण्णोण्णसंवग्गमेत्तो मिच्छत्तगुणसंकमट्ठाणपरिवाडीणमायामो होइ। एत्थतणो पुण अधापवत्तभागहार-बेअसंखेज्जलोगगुणगाराणमण्णोण्णसंवग्गजणिदरासिपमाणो होइ। होंतो वि पुव्विल्लादो एसो असंखेज्जगुणो, तत्थतणासंखेज्जलोगभागहारादो एत्थतणा-

---

पर भी मिथ्यात्वके गुणसंक्रमकालके अवलम्बन द्वारा अन्तर्मुहूर्तमात्र गुणकारकी उत्पत्ति परिस्फुट उपलब्ध होती है।

*** उनसे हास्यमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं।**

§ ८२१. क्योंकि यह देशघाति प्रकृति है। उसके माहात्म्यवश ऐसा है।

शंका—देशघातिके माहात्म्यवश अनन्तगुणे होना सम्भव है, ऐसा होते हुए भी यह असंख्यातगुणा होना कैसे बनता है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि सर्वघाति और देशघाति प्रकृतियोंमें सर्वसंक्रमके सिवा अन्यत्र असंख्यात लोकप्रमाण ही संक्रमस्थानोंकी उत्पत्ति स्वीकार की गई है।

शंका—ऐसा ही कैसे है ?

समाधान—क्योंकि सर्वघाति सत्कर्मप्रक्षेपसे देशघातिका सत्कर्मप्रक्षेप अनन्तगुणा स्वीकार किया गया है।

शंका—यदि ऐसा है तो उभयत्र संक्रमस्थानोंका विष्कम्भ और आयाम असंख्यात लोकप्रमाण समान होने पर ये असंख्यातगुणे कैसे बन सकते हैं ?

समाधान—यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि वहांके विष्कम्भ और आयामसे यहाँका विष्कम्भ और आयाम देशघातिके माहात्म्यवश असंख्यातगुणा स्वीकार किया है। यथा—

§ ८२२. गुणसंक्रमभागहार, पूर्वोक्त अन्योन्याभ्यस्तराशि, दो असंख्यात लोक और योग गुणकारका परस्पर संवर्गमात्र मिथ्यात्वके गुणसंक्रमस्थानसम्बन्धी परिपाटियोंका आयाम होता है। परन्तु यहाँ का आयाम अधःप्रवृत्तभागहार, दो असंख्यात लोक गुणकारके परस्पर संवर्गमे उत्पन्न हुई राशिप्रमाण है। ऐसा होता हुआ भी पहलेके आयामसे यह असंख्यातगुणा है,

संखेज्जलोगभागहारस्स देसघादिविसयत्तेणासंखेज्जगुणत्तब्भुवगमादो। एवं विक्खंभादो वि विक्खंभस्सासंखेज्जगुणत्तं वत्तव्वं। कथं पुण गुणसंकमपरिणामेहिंतो अधापवत्तसंकम-परिणामट्ठाणाणमायामस्सासंखेज्जगुणत्तसंभवो त्ति णासंका कायव्वा, सव्वघादिविसय-गुणसंकमपरिणामट्ठाणेहिंतो वि देसघादीणमधापवत्तपरिणामपंतीए असंखेज्जगुणत्ता-वलंबणादो। ण च पुव्वपरूविदप्पाबहुएण सह विरोहो, तस्स सजादीयपयडिविसए पडिबद्धत्तादो। अहवा जइ वि एत्थतणपरिणामपंतिआयामो असंखेज्जगुणहीणो होइ तो वि देसघादिपडिबद्धसंतकम्मपक्खेवभागहारमाहप्पेणासंखेज्जगुणत्तमेदमविरुद्धं दट्ठव्वं।

❀ रदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि

§ ८२३. कुदो ? पयडिविसेसादो।

❀ इत्थिवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि।

§ ८२४. सुगममेदं ? ओघम्मि परूविदकारणत्तादो। णवरि विज्झादसंकम-ट्ठाणाणि अस्सिऊणासंखेज्जगुणत्तसंभवासंकाए मिच्छत्तभंगाणुसारेण परिहारो वत्तव्वो।

❀ सोगे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

क्योंकि वहाँके असंख्यात लोक भागहारसे यहाँका असंख्यात लोक भागहार देशघातिका विषय होनेसे असंख्यातगुणा स्वीकार किया है। इसी प्रकार विष्कम्भसे भी विष्कम्भ को असंख्यातगुणा कहना चाहिए।

शंका—गुणसंक्रमके परिणामोंसे अधःप्रवृत्तसंक्रमके परिणामस्थानोंका आयाम असंख्यातगुणा कैसे सम्भव है ?

समाधान—ऐसी आशंका नहीं करनी चाहिए, क्योंकि सर्वघातिविषयक गुणसंक्रमके परिणामस्थानोंसे भी देशघातियोंके अधःप्रवृत्त परिणामपंक्तिके असंख्यात गुणपनका अवलम्बन लिया गया है। ऐसा मानने पर पूर्वमें कहे गये अल्पबहुत्वके साथ विरोध होगा यह भी नहीं है, क्योंकि वह सजातीय प्रकृतियोंके विषयमें प्रतिबद्ध है। अथवा यद्यपि यहाँ का परिणामपंक्ति आयाम असंख्यातगुणा हीन है तो भी देशघातिसम्बन्धी सत्कर्मप्रक्षेपके भागहारके माहात्म्यवश यह असंख्यातगुणा अविरुद्ध जानना चाहिए।

*** उनसे रतिमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।**

§ ८२३. क्योंकि यह प्रकृतिविशेष है।

*** उनसे स्त्रीवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान संख्यातगुणे हैं।**

§ ८२४. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि ओघमें इसका कारण कह आये हैं। इतनी विशेषता है कि विध्यातसंक्रमस्थानोंका आश्रय कर असंख्यातगुणत्व कैसे सम्भव है ऐसी आशंका होने पर मिथ्यात्वके भंगके अनुसार परिहार कहना चाहिए।

*** उनसे शोकमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।**

❀ अरदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ णवुंसयवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ दुगुंछाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ भए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ पुरिसवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ माणसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ कोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ मायासंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ लोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

§ ८२५. एदाणि सुत्ताणि सुगमाणि।

❀ सम्मत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि।

§ ८२६. कुदो? उव्वेल्लणचरिमफालीए सव्वसंकममस्सियूणाणंताणं संकमट्ठाणाणमेत्थ संभवादो।

❀ सम्मामिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।

---

* उनसे अरतिमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे नपुंसकवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे जुगुप्सामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे भयमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे पुरुषवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे मानसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे क्रोधसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे मायासंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे लोभसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

§ ८२५. ये सूत्र सुगम हैं।

* उनसे सम्यक्त्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान अनन्तगुणे हैं।

§ ८२६. क्योंकि उद्वेलनाकी अन्तिम फालिमें सर्वसंक्रमका आश्रय कर अनन्त संक्रमस्थान यहाँ सम्भव हैं।

* उनसे सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं।

§ ८२७. किं कारणं ? दोण्णं उव्वेल्लणचरिमफालीए सव्वसंकमेणाणंतसंकमट्ठाणसंभवाविसेसे वि दव्वविसेसमस्सिऊण तहाभावोववत्तीदो।

❀ अणंताणुबंधिमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।

§ ८२८. कुदो ? विसंजोयणाचरिमफालीए सव्वसंकमेण समुप्पण्णाणंतसंकमट्ठाणाणं दव्वमाहप्पेण पुव्विल्लसंकमट्ठाणेहिंतो असंखेज्जगुणत्तदंसणादो। एत्थ गुणगारो उव्वेल्लणकालण्णाण्णब्भत्थरासी गुणसंकमभागहारो च अण्णोण्णगुणिदमेत्तो।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

❀ लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

§ ८२९. एदाणि तिण्णि वि सुत्ताणि पयडिविसेसमेत्तकारणगब्भाणि सुगमाणि।

एवं णिरयोघो समत्तो।

§ ८३०. एवं चेव सत्तसु पुढवीसु णेयव्वं, विसेसाभावादो। एत्तमेत्तिएण पबंधेण णिरयगइअप्पाबहुअं समाणिय संपहि तिरिक्ख-देवगईणं पि एसो चेव अप्पाबहुआलावो कायव्वो त्ति समप्पणं कुणमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ एवं तिरिक्खगइ-देवगईसु वि।

---

§ ८२७. क्योंकि दोनोंकी उद्वेलनाकी अन्तिम फालिमें सर्वसंक्रमके आश्रयसे अनन्त संक्रमस्थान सम्भव हैं, इसलिए इस दृष्टिसे कोई विशेषता नहीं है तो भी द्रव्य विशेषका आश्रय कर यहाँ असंख्यातगुणापना वन जाता है।

* उनसे अनन्तानुबन्धी मानमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं।

§ ८२८. क्योंकि विसंयोजनाकी अन्तिम फालिमें सर्वसंक्रमसे उत्पन्न हुए अनन्त संक्रमस्थान द्रव्यके माहात्म्यवश पूर्वके संक्रमस्थानोंसे असंख्यातगुणे देखे जाते हैं। यहाँ पर गुणकार उद्वेलना कालकी अन्योन्याभ्यस्तराशि और गुणसंक्रमभागहार इन दोनोंको परस्पर गुणा करने पर जो राशि लब्ध आवे उतना है।

* उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।

§ ८२९. प्रकृति विशेषमात्र कारण अन्तर्गर्भ ये तीनों सूत्र सुगम हैं।

इस प्रकार नरकौघ समाप्त हुआ।

§ ८३०. इसी प्रकार सातों पृथिवियोंमें जानना चाहिए, क्योंकि वहाँ पर इससे अन्य कोई विशेषता नहीं है। इस प्रकार इस प्रबन्ध द्वारा नरकगतिसम्बन्धी अल्पबहुत्वको समाप्त कर अब तिर्यञ्चगति और देवगतिका भी यही अल्पबहुत्वालाप करना चाहिए ऐसा समर्पण करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

* इसी प्रकार तिर्यञ्चगति और देवगतिमें भी जानना चाहिए।

८३१. सुगममेदमप्पणासुत्तं, विसेसाभावमस्सिऊण पयट्टत्तादो। णिरयगइअप्पाबहुअं णिरवयवमेत्थाणुगंतव्वं। णवरि अणुद्दिसादि जाव सव्वट्ठे त्ति सम्मत्तपदेससंकमट्ठाणाणि णत्थि। सम्मामिच्छत्तपदेससंकमट्ठाणाणि च सव्वत्थोवाणि कायव्वाणि। तदो मिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। तत्तो अपच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। तत्तो विसेसाहियकमेण णेदव्वं जाव पच्चक्खाणलोभपदेससंकमट्ठाणाणि त्ति। तदो इत्थि०पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। णवुंसय०पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि। हस्से पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। रदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। एवं जाव० लोहसंजलणे त्ति णेदव्वं। तदो अणंताणु०माणे पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि। कोह-माया-लोहेसु जहाकमं विसेसाहियाणि त्ति एसो विसेसो सुत्ते ण विवक्खिओ, गइसामण्णप्पणाए भेदाभावमस्सिऊण सुत्तस्स पयट्टत्तादो। तिरिक्खगईए णत्थि किंचि णाणत्तं। णवरि पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तएसु उवरि भण्णमाणएइंदियप्पाबहुअभंगो।

❀ मणुसगईए ओघभंगो।

८३२. सुगममेदं, मणुसगइसामण्णप्पणाए पज्जत्तमणुसिणिविवक्खाए च ओघभंगादो भेदाणुवलंभादो। मणुसअपज्जत्तएसु पंचिंदियतिरिक्खअपज्जत्तभंगो।

एवं गइमग्गणा समत्ता।

---

§ ८३१. यह अर्पणासूत्र सुगम है, क्योंकि विशेषाभावका आश्रय कर यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है। नरकगतिसम्बन्धी यह अल्पबहुत्व समस्त यहाँ जान लेना चाहिए। इतनी विशेषता है कि अनुदिशसे लेकर सर्वार्थसिद्धि तकके देवोंमें सम्यक्त्वके प्रदेशसंक्रमस्थान नहीं है। सम्यग्मिथ्यात्वके प्रदेशसंक्रमस्थान सबसे स्तोक करने चाहिए। उनसे मिथ्यात्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं। उनसे अप्रत्याख्यान मानमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं। इससे आगे प्रत्याख्यान लोभके प्रदेशसंक्रमस्थानोंके प्राप्त होने तक विशेष अधिकके क्रमसे ले जाना चाहिए। उनसे स्त्रीवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं। उनसे नपुंसकवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान संख्यातगुणे हैं। उनसे हास्यमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं। उनसे रतिमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं। इसी प्रकार लोभसंज्वलन तक ले जाना चाहिए। उनसे अनन्तानुबन्धी मानमें प्रदेशसंक्रमस्थान अनन्तगुणे हैं। उनसे अनन्तानुबन्धी क्रोध, माया और लोभमें क्रमसे विशेष अधिक हैं। यह विशेष सूत्रमें विवक्षित नहीं है, क्योंकि गति सामान्यकी मुख्यतासे भेदाभावका आश्रय कर सूत्रकी प्रवृत्ति हुई है। तिर्यञ्चगतिमें कुछ भेद नहीं है। इतनी विशेषता है कि पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंमें आगे कहे जानेवाले एकेन्द्रिय सम्बन्धी अल्पबहुत्वके समान भंग है।

❀ मनुष्यगतिमें ओघके समान भंग है।

§ ८३२. यह सूत्र सुगम है, क्योंकि मनुष्यगति सामान्यकी विवक्षामें तथा मनुष्य पर्याप्त और मनुष्यनियोंकी विवक्षामें ओघभंगसे भेद नहीं उपलब्ध होता। मनुष्य अपर्याप्तकोंमें पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अपर्याप्तकोंके समान भंग है।

इस प्रकार गतिमार्गणा समाप्त हुई।

८३३. संपहि सेसमग्गणाणं देसामासियभावेण इंदियमग्गणावयवभूदेइंदिएसु पयदप्पाबहुअगवेसणट्ठमुवरिमसुत्तपबंधमाह—

❀ एइंदिएसु सव्वत्थोवाणि अपच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि ।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ पच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ लोभे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ अणंताणुबंधिमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेस हियाणि ।

❀ कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

❀ हस्से पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि[1] ।

---

§ ८३३. अब शेष मार्गणाओंके देशामर्षकभावसे इन्द्रिय मार्गणाके अवयवभूत एकेन्द्रियोंमें प्रकृत अल्पबहुत्वकी गवेषणा करनेके लिए आगेके सूत्रप्रबन्धको कहते हैं—

* एकेन्द्रियोंमें अप्रत्याख्यान मानमें प्रदेशसंक्रमस्थान सबसे थोड़े हैं ।

* उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे प्रत्याख्यान मानमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे अनन्तानुबन्धी मानमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं

* उनसे क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे मायामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे लोभमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।

* उनसे हास्यमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं ।

---

१. ता० प्रतौ० संखेज्जगुणाणि इति पाठः ।

❀ रदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ इत्थिवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि ।
❀ सोगे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ अरदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ णवुंसयवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ दुगुंछाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ भए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ पुरिसवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ माणसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ कोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ मायासंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ लोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।
❀ सम्मत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि ।
❀ सम्मामिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।

* उनसे रतिमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे स्त्रीवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान संख्यातगुणे हैं ।
* उनसे शोकमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे अरतिमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे नपुंसकवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे जुगुप्सामें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे भयमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे पुरुषवेदमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे मानसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे क्रोधसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे मायासंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे लोभसंज्वलनमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं ।
* उनसे सम्यक्त्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान अनन्तगुणे हैं ।
* उनसे सम्यग्मिथ्यात्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं ।

§ ८३४. सुगमत्तादो ण एत्थ किंचि वत्तव्वमत्थि। एवमेइंदिएसु समत्तमप्पाबहुअं। बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदिएसु वि एवं चेव वत्तव्वं, अविसेसादो। पंचिंदिय-पंचिंदियपज्जत्तएसु ओघभंगो। पंचिंदियअपज्जत्तएसु एइंदियभंगो। एवं जाणिऊण णेदव्वं जाव अणाहारए त्ति। एवमेदमप्पाबहुअं समाणिय संपहि णिरयगइपडिबद्धप्पाबहुए केसु वि पदेसु कारणपरूवणट्ठमुवरिमपबंधमाह—

❀ केन कारणेण णिरयगईए पच्चक्खाणकसायलोभपदेससंकमट्ठाणेहिंतो मिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।

§ ८३५. एवं पुच्छंतस्सायमहिप्पाओ, पच्चक्खाणलोभपदेसग्गादो मिच्छत्तस्स पदेसग्गं विसेसाहियं चेव, तत्तो समुप्पज्जमाणसंकमट्ठाणाणं पि तहाभावं मोत्तूण कथमसंखेज्जगुणत्तं घडदि त्ति। संपहि एवंविहासंकाए णिरारेगीकरणट्ठमुत्तरमुत्तमोइण्णं—

❀ मिच्छत्तस्स गुणसंकमो अत्थि। पच्चक्खाणकसायलोहस्स गुणसंकमो णत्थि। एदेण कारणेण णिरयगईए पच्चक्खाणकसायलोहपदेससंकमट्ठाणेहिंतो मिच्छत्तस्स पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि।

§ ८३६. गयत्थमेदं सुत्तं, अधापवत्तसंकमपरिणामट्ठाणेहिंतो गुणसंकमपरिणामट्ठाणाणमसंखेज्जगुणत्तमस्सिऊण पुव्वमेव समत्थियत्तादो। ण च परिणामट्ठाणाणं तहाभावो

---

§ ८३४. सुगम होनेसे यहाँ कुछ वक्तव्य नहीं है। इस प्रकार एकेन्द्रियोंमें अल्पबहुत्व समाप्त हुआ। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रियोंमें भी इसी प्रकार कहना चाहिए, क्योंकि कोई विशेषता नहीं है। पञ्चेन्द्रिय और पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तकोंमें ओघके समान भंग है। पञ्चेन्द्रिय अपर्याप्तकोंमें एकेन्द्रियोंके समान भंग है। इस प्रकार जानकर अनाहारक मार्गणा तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार इस अल्पबहुत्वको समाप्त कर अब नरक- गतिसे प्रतिबद्ध अल्पबहुत्वके किन्हीं पदोंमें कारणका कथन करनेके लिए आगेके प्रबन्धको कहते हैं—

*** नरकगतिमें प्रत्याख्यानकषायके लोभसम्बन्धी प्रदेशसंक्रमस्थानोंसे मिथ्यात्वमें प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे किस कारणसे हैं।**

§ ८३५. इस प्रकार पूछनेवालेका यह अभिप्राय है कि प्रत्याख्यान लोभके प्रदेशोंसे मिथ्यात्वके प्रदेश विशेष अधिक ही हैं, इसलिए उनसे उत्पन्न हुए संक्रमस्थान भी उसी प्रकारके न होकर असंख्यातगुणे कैसे घटित होते हैं। अब इस प्रकारकी शंकाको निराकरण करनेके लिए आगेका सूत्र अवतीर्ण हुआ है—

*** मिथ्यात्वका गुणसंक्रम है, प्रत्याख्यान लोभ कषायका गुणसंक्रम नहीं है। इस कारणसे नरकगतिमें प्रत्याख्यान लोभकषायके प्रदेशसंक्रमस्थानोंसे मिथ्यात्वके प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं।**

§ ८३६. यह सूत्र गतार्थ है, क्योंकि अधःप्रवृत्तसंक्रमके परिणामस्थानोंसे गुणसंक्रमके परिणामस्थान असंख्यातगुणे हैं इस बातका आश्रय कर पूर्वमें ही इसका समर्थन कर आये हैं।

असिद्धो, एदम्हादो चेव सुत्तादो तेसिं तहाभावोवगमादो। एवमेदं परूविय संपहि अण्णं पि पयदप्पाबहुअविसयमत्थपदं परूवेमाणो सुत्तमुत्तरं भणइ—

❀ जस्स कम्मस्स सव्वसंकमो णत्थि तस्स कम्मस्स असंखेज्जाणि पदेससंकमट्ठाणाणि। जस्स कम्मस्स सव्वसंकमो अत्थि तस्स कम्मस्स अणंताणि पदेससंकमट्ठाणाणि।

§ ८३७. णिरयगदीए सव्वघादिमिच्छत्तपदेससंकमट्ठाणेहिंतो देसघादिहस्सपदेससंकमट्ठाणाणमसंखेज्जगुणत्तं। तत्थ जइ को वि देसघादिपाहम्ममस्सिऊणाणंतगुणत्तं किण्ण होदि त्ति भणेज्ज तदो तस्स तहाविहविप्पडिवत्तिणिरायरणमुहेण देसघादीणं सव्वघादीणं च सव्वसंकमादो अण्णत्थासंखेज्जालोगमेत्ताणं चेव संकमट्ठाणाणं संभवपदुप्पायणट्ठमिदं सुत्तमोइण्णं। ण चासंखेज्जलोगमेत्तेसु संकमट्ठाणेसु अणंतगुणत्तसंभवो अत्थि विप्पडिसेहादो। असंखेज्जगुणत्तं पुण पुव्वुत्तेण कमेणाणुगंतव्वमिदि।

§ ८३८. अहवा देसघादिलोहसंजलणपदेससंकमट्ठाणेहिंतो सव्वघादिमिच्छत्तस्सासंखेज्जदिभागभूदसम्मत्तपदेससंकमट्ठाणाणमोघपरूवणाए णिरयादिसु चाणंतगुणत्तं परूविदं, कधमेदं जुज्जदि त्ति विप्पडिवण्णस्स सिस्सस्स तहाविहविप्पडिवत्तिणिरायरणदुवारेण तव्विसयणिच्छयसमुप्पायणट्ठमेदमोइण्णमिदि। एदस्स सुत्तस्सावयारो परूवेयव्वो,

---

परिणामस्थानोंका इस प्रकारका होना असिद्ध भी नहीं है, क्योंकि इसी सूत्रसे उनका उस प्रकारका होना जाना जाता है। इस प्रकार इसका प्ररूपण कर अब अन्य भी प्रकृत अल्पबहुत्व विषयक अर्थपदका कथन करते हुए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** जिस कर्मका सर्वसंक्रम नहीं है उस कर्मके असंख्यात प्रदेशसंक्रमस्थान होते हैं। जिस कर्मका सर्वसंक्रम है उस कर्मके अनन्त प्रदेशसंक्रमस्थान होते हैं।**

§ ८३७. नरकगतिमें सर्वघाति मिथ्यात्वके प्रदेशसंक्रमस्थानोंसे देशघाति हास्यके प्रदेशसंक्रमस्थान असंख्यातगुणे हैं। वहाँपर यदि कोई भी देशघातिके माहात्म्यका आश्रय कर अनन्तगुणे क्यों नहीं होते ऐसा कहे तो उसकी उस प्रकारकी शंकाके निराकरण द्वारा देशघाति और सर्वघातियोंके सर्वसंक्रमके सिवा अन्यत्र असंख्यात लोकमात्र ही संक्रमस्थान सम्भव हैं यह कथन करनेके लिए यह सूत्र आया है। और असंख्यात लोकप्रमाण संक्रमस्थानोंमें अनन्तगुणेपनेकी उत्पत्ति नहीं होती, क्योंकि इसका निषेध है। असंख्यात गुणापना तो पूर्वोक्त क्रमसे जान लेना चाहिए।

§ ८३८. अथवा देशघाति लोभसंज्वलनके प्रदेशसंक्रमस्थानोंसे सर्वघाति मिथ्यात्वके असंख्यातवें भागभूत सम्यक्त्वके प्रदेशसंक्रमस्थान ओघप्ररूपणामें और नरकादि गतियोंमें अनन्तगुणे कहे हैं सो यह कैसे बन सकता है इस प्रकार शंकाशील शिष्यकी उस प्रकारकी शंकाके निराकरण द्वारा तद्विषयक निश्चयको उत्पन्न करनेके लिए यह सूत्र आया है। इस प्रकार इस

तदो सव्वसंकमविसए परमाणुत्तरकमेण वड्ढी लब्भदि त्ति । तत्थाणंताणि संकमट्ठाणाणि जादाणि, तत्तो अण्णत्थ पुण असंखेज्जलोगपडिभागेणेव वड्ढिदंसणादो । असंखेज्जलोग-मेत्ताणि चेव संकमट्ठाणाणि होंति त्ति एसो एदस्स भावत्थो । संपहि पयडिविसेसेण विसेसाहियपयडीसु संकमट्ठाणाणं विसेसाहियत्ते कारणपरूवणट्ठमुवरिमं सुत्तपबंधमाह—

❀ माणस्स जहण्णए संतकम्मट्ठाणे असंखेज्जा लोगा पदेससंकम-ट्ठाणाणि ।

§ ८३९. सुगमं ।

❀ तम्हि चेव जहण्णए माणसंतकम्मे विदियसंकमट्ठाणविसेसस्स असंखेज्जलोगभागमेत्ते पक्खित्ते माणस्स बिदियसंकमट्ठाणपरिवाडी ।

§ ८४०. माणजहण्णसंतकम्मे अधापवत्तभागहारेणोवट्टिदे माणजहण्णसंकमट्ठाणं होइ । पुणो तम्मि असंखेज्जलोगमेत्तभागहारेण भागे हिदे विदियसंकमट्ठाणविसेसो आगच्छइ । तम्मि अण्णेणासंखेज्जलोगभागहारेण भाजिदे माणस्स संतकम्मपक्खेवपमाणं होइ । एदं घेत्तूण पडिरासिदजहण्णसंतकम्मट्ठाणस्सुवरि पक्खित्ते माणस्स बिदियसंकम-ट्ठाणपरिवाडी होइ, पक्खेवुत्तरजहण्णसंतकम्मादो परिणामट्ठाणमेत्ताणं चेव संकमट्ठाणाण-मुप्पत्तीए णिव्वाहमुवलंभादो त्ति एसो अत्थो एदेण सुत्तेण परूविदो । एदम्मेदेण

सूत्र का अवतार कहना चाहिए । अतएव सर्वसंक्रमके विषयमें एक परमाणु अधिक आदिके क्रमसे वृद्धि प्राप्त होती है, इसलिए उसमें अनन्त प्रदेशसंक्रमस्थान प्राप्त हो जाते हैं । उससे अन्यत्र तो असंख्यात लोक प्रमाण प्रतिभागमें ही वृद्धि देखी जाती है, इसलिए असंख्यात लोक-प्रमाण ही संक्रमस्थान होते हैं इस प्रकार यह इसका भावार्थ है । अब प्रकृति विशेषसे विशेष अधिक रूप प्रकृतियोंमें संक्रमस्थानोंके विशेष अधिकपनेमें कारणका कथन करनेके लिए आगेका सूत्रप्रबन्ध कहते हैं—

*** मानके जघन्य सत्कर्ममें असंख्यात लोक प्रदेशसंक्रमस्थान होते हैं ।**

§ ८३९. यह सूत्र सुगम है ।

*** उसी जघन्य मानसत्कर्ममें दूसरे संक्रमस्थानका विशेष असंख्यात लोकभाग-मात्र प्रक्षिप्त करने पर मानकी दूसरी संक्रमस्थान परिपाटी होती है ।**

§ ८४० मानके जघन्य सत्कर्मको अधःप्रवृत्तभागहारसे भाजित करने पर मानका जघन्य संक्रमस्थान होता है । पुनः उसमें असंख्यात लोकमात्र भागहारका भाग देने पर दूसरे संक्रम-स्थानका विशेष आता है । उसमें अन्य असंख्यात लोकप्रमाण भागहारका भाग देने पर मानके सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण आता है । इसे ग्रहण कर प्रतिराशिरूपसे स्थापित जघन्य सत्कर्मस्थानके ऊपर प्रक्षिप्त करने पर मानकी दूसरी संक्रमस्थान परिपाटी होती है क्योंकि एक प्रक्षेप अधिक जघन्य सत्कर्मसे परिणाममात्र ही संक्रमस्थानोंकी उत्पत्ति निर्बाधरूपसे उपलब्ध होती है । इस प्रकार यह अर्थ इस सूत्र द्वारा कहा गया है । इस प्रकार इस सूत्रसे मानसत्कर्मके प्रक्षेपका प्रमाण

सुत्तेण माणसंतकम्मपक्खेवपमाणं जाणाविय संपहि कोहस्स वि संतकम्मपक्खेवो एत्तिओ चेव होदि त्ति जाणावणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

*** तत्तिमेत्ते चेव पदेसग्गे कोहस्स जहण्णसंतकम्मट्ठाणे पक्खित्ते कोहस्स बिदियसंकमट्ठाणपरिवाडी ।**

§ ८४१. एदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे—कोहसंतकम्मपक्खेवे समुप्पाइज्जमाणे माणविदियसंकमट्ठाणविसेसस्सासंखेज्जलोगपडिभागिओ त्ति पुव्वसुत्ते जो परूविदो सो चेवाणूणाहिओ एत्थ वि अवलंबेयव्वो, पयडिविसेसेण विसेसाहियकसायणोकसाय-पयडिसुत्तस्सावट्ठिदभावब्भुवगमादो । अणवट्ठिदसंतकम्मपक्खेवब्भुवगमे तत्थतणसंकम-ट्ठाणाणं विसेसाहियभावाणुववत्तीदो । तम्हा अवट्ठिदसंतकम्मपक्खेवावलंबणेण तेसिं विसेसाहियत्तमेवमणुगंतव्वं । तं जहा—अपच्चक्खाणमाणकोहाणं दोण्हं पि जहण्णसंतकम्म-मप्पप्पणो उक्कस्सदव्वादो सोहिदसुद्धसेसदव्वम्मि कोहपयडिविसेसमेत्तदव्वमवणिय पुध ट्ठवेयव्वं । एवं पुध ट्ठविदे सुद्धसेसदव्वं दोण्हं पि समाणं होइ । पुणो एदं दव्वमसंखेज्ज-लोगमेत्तभागहारमवट्ठिदपमाणं दोसु उद्देसेसु विरलिय समखंडं कादूण दिण्णे दोण्हं पि संतकम्मपक्खेवा सरिसा होदूण विरलणरूवं पडि पावेंति । एत्थेगेगसंतकम्मपक्खेवं घेत्तूण अप्पप्पणो पडिरासिदजहण्णसंतकम्मप्पहुडि परिवाडीए पक्खिविज्जमाणे दोण्हं पि

जानकर अब क्रोधका भी सत्कर्म प्रक्षेप इतना ही होता है यह जतानेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** उतने ही प्रदेश क्रोधके जघन्य सत्कर्मस्थानमें प्रक्षिप्त करनेके लिए क्रोधकी दूसरी संक्रमस्थान परिपाटी होती है ।**

§ ८३१. इस सूत्रका अर्थ कहते हैं—क्रोध सत्कर्मके प्रक्षेपके उत्पन्न करने पर मानके द्वितीय संक्रमस्थान विशेषका असंख्यात लोक प्रतिभाग सम्बन्धी पूर्व सूत्रमें जो कहा है उसीका न्यूना-धिकतासे रहित यहाँ पर भी अवलम्बन करना चाहिए, क्योंकि प्रकृत सूत्र प्रकृतिविशेषपनाके कारण विशेषाधिकरूपसे कषाय और नोकषायोंके अवस्थितरूपको स्वीकार करता है । अनवस्थित सत्कर्मप्रक्षेपके स्वीकार करने पर वहाँके संक्रमस्थानोंमें विशेषाधिकपना नहीं बन सकता । इसलिए अवस्थित सत्कर्म प्रक्षेपका अवलम्बन करनेसे उनका विशेषाधिकपना ही स्वीकार करना चाहिए । यथा—अप्रत्याख्यान मान और क्रोध इन दोनोंके भी जघन्य सत्कर्मको अपने अपने द्रव्यमेंसे घटाकर जो शुद्ध शेष द्रव्य हो उसमेंसे क्रोध प्रकृतिके विशेषमात्र द्रव्यको निकालकर पृथक् स्थापित करना चाहिए । इस प्रकार पृथक् स्थापित करने पर शुद्ध शेष द्रव्य दोनोंका ही समान होता है । पुनः इस द्रव्यको, अवस्थित प्रमाण असंख्यात लोकमात्र भागहारको दो स्थानों पर विरलन कर उस पर समान खण्ड करके देनेपर प्रत्येक विरलनके प्रति दोनोंके सत्कर्मप्रक्षेप सदृश होकर प्राप्त होते हैं । यहाँ एक एक सत्कर्मप्रक्षेपको ग्रहण कर अपने अपने प्रतिराशिरूप जघन्य सत्कर्मसे लेकर क्रमसे प्रक्षिप्त करने

संकमपाओग्गसंतकम्मट्ठाणाणि सरिसाणि होदूण लद्धाणि भवंति। पुणो एत्थेव माणस्स संतकम्मट्ठाणाणि समत्ताणि। कोहस्स पुण ण समप्पंति, पुव्वमवणेऊण पुधट्ठविदपयडिविसेसमेत्तदव्वस्स बहिब्भावदंसणादो। तेण तं पि दव्वं माणसंतकम्मपक्खेवपमाणेण कस्सामो त्ति पुव्वविरलणाए पासे अण्णो असंखेज्जलोगभागहारो विरलेयव्वो। एदस्स पमाणं केत्तियं? पुव्विल्लविरलणरासीए असंखेज्जदिभागमेत्तं। तस्स को पडिभागो? आवलियाए असंखेज्जदिभागो। तदो एवंभूदसंपहियविरलणाए पयडिविसेसदव्वं समखंडं करिय दिण्णे एक्केक्कस्स रूवस्साणंतरपरूविदसंतकम्मपक्खेवपमाणं पावदि। एत्थेगेगरूवधरिदं घेत्तूणमणुक्कस्ससंतकम्मट्ठाणसमाणकोहसंकमट्ठाणप्पहुडि परिवाडीए पक्खिविय णेदव्वं जाव संपहिय विरलणरूवमेत्ता संतकम्मपक्खेवा णिट्ठिदा त्ति। एवं णीदे माणसंतकम्मट्ठाणेहिंतो कोहसंकमट्ठाणाणि संपहिय विरलणमेत्तसंतकम्मट्ठाणेहि विसेसाहियाणि जादाणि त्ति, एदेहिंतो समुप्पज्जमाणसंतकम्मट्ठाणाणि विसेसाहियाणि जादाणि। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमिदमाह—

*** एदेण कारणेण माणपदेससंकमट्ठाणाणि थोवाणि।**

*** कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।**

पर दोनोंके ही सक्रमके योग्य सत्कर्मस्थान सदृश होकर प्राप्त होते है। पुनः यहीं पर मानके सत्कर्मस्थान समाप्त हो गये. परन्तु क्रोधके समाप्त नहीं हुए, क्योंकि पहले निकाल कर पृथक स्थापित प्रकृतिविशेष मात्र पृथक् देखा जाता है। इसलिए उस द्रव्यको भी मानसत्कर्मप्रक्षेपके प्रमाणसे करते हैं, इसलिए पूर्व विरलनके पासमें अन्य असंख्यात लोक भागहारका विरलन करना चाहिए।

शंका—इसका प्रमाण कितना है?

समाधान—पहलेकी विरलन राशिका असंख्यातवां भागमात्र है।

शंका—उसका प्रतिभाग क्या है?

समाधान—आवलिका असंख्यातवां भाग प्रतिभाग हैं।

अतः इस प्रकारके साम्प्रतिक विरलनके ऊपर प्रकृतिविशेषद्रव्यको समखण्ड करके देने पर एक एक रूपके प्रति अनन्तर कहे गये सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण प्राप्त होता है। यहाँ पर एक एक रूपके प्रति प्राप्त द्रव्यको ग्रहण कर अनुत्कृष्ट सत्कर्मस्थानके समान क्रोधसंक्रमस्थानसे लेकर क्रमसे प्रक्षिप्त करके साम्प्रतिक विरलन रूपमात्र सत्कर्मप्रक्षेप समाप्त होने तक ले जाना चाहिए। इस प्रकार ले जाने पर मान सत्कर्मस्थानोंसे क्रोध संक्रमस्थान साम्प्रतिक विरलन मात्र सत्कर्मस्थानोंसे विशेष अधिक हो जाते हैं, इसलिए इनसे उत्पन्न होनेवाले सत्कर्मस्थान विशेष अधिक हो जाते हैं। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए यह सूत्र कहते हैं—

*** इस कारणसे मानप्रदेश संक्रमस्थान थोड़े हैं।**

*** क्रोधमें प्रदेशसंक्रमस्थान विशेष अधिक हैं।**

§ ८४२. जेण कारणेण दोण्हं पि संतकम्मपक्खेवपमाणं सरिसं तेण कारणेण माणसंकमट्ठाणेहिंतो कोहसंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि जादाणि त्ति भणिदं होदि। संपहि सेसाणं पि कम्माणमेवं चेव कारणपरूवणा कायव्वा त्ति पदुप्पायणट्ठमुत्तरसुत्तमाह—

❀ एवं सेसेसु वि कम्मेसु वि णेदव्वाणि।

§ ८४३. जहा कोह-माणाणमेसो कारणणिद्देसो कओ तहा सेसकम्माणं पि णेदव्वो त्ति भणिदं होइ। संपहि एदस्सेवत्थस्स फुडीकरणट्ठमेदं संदिट्ठीपरूवणं कस्सामो। तं जहा— णिरयगईए माणादीणं जहण्णसंतकम्मेनियमेत्तमिदि घेत्तव्वं ४, ५, ६, ७। तेसिं चेवुक्कस्ससंतकम्मपमाणमेदं २०, २५, ३०, ३५। एत्थुक्कस्सदव्वादो जहण्णदव्वे सोहिदे सुद्धसेसदव्वपमाणमेत्तियं होइ १६, २०, २४, २८। सव्वेसिं संतकम्मपक्खेवपमाणं दोरूवमेत्तमिदि घेत्तव्वं २। एदेण पमाणेण अप्पप्पणो जहण्णदव्वादो उवरि कमेण सुद्धसेसदव्वे पवेसिज्जमाणे तत्थ समुप्पण्णमाणपरिवाडीओ एदाओ ९। कोहपरिवाडीओ ११। मायापरिवाडीओ १३। लोहपरिवाडीओ एदाओ १५। एवमेत्थ दोसंदिट्ठीए च माणादिसंकमट्ठाणेहिंतो कोहादिसंकमट्ठाणाणि विसेसाहियत्तमसंदिद्धं सिद्धं। एवमप्पाबहुए समत्ते संकमट्ठाणपरूवणा समत्ता तदो पदेससंकमो समत्तो। एवं गुणहीणं वा गुणविसिट्ठमिदि पदस्स अत्थविहासाए समत्ताए तदो पंचमीए मूलगाहाए अत्थपरूवणा समत्ता

§ ८४२. जिस कारणसे दोनोंके ही सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण समान है इस कारणसे मानके संक्रमस्थानोंसे क्रोधके संक्रमस्थान विशेष अधिक हो जाते हैं यह उक्त कथन का तात्पर्य है। अब शेष कर्मोंकी भी इसी प्रकार कारण प्ररूपणा करनी चाहिए इस बातका कथन करनेके लिए आगेका सूत्र कहते हैं—

*** इस प्रकार शेष कर्मों में भी ले जाना चाहिए।**

§ ८४३. जिस प्रकार क्रोध और मानके इस कारणका निर्देश किया उसी प्रकार शेष कर्मोंका भी जानना चाहिए यह उक्त कथनका तात्पर्य है। अब इसी अर्थको स्पष्ट करनेके लिए इस संदृष्टिका कथन करेंगे। यथा - नरकगतिमें मानादिकका जघन्य सत्कर्म इतना है ऐसा यहाँ ग्रहण करना चाहिए ४, ५, ६, ७। उन्हींके उत्कृष्ट सत्कर्मका प्रमाण इतना है—२०, २५, ३०, ३५। यहाँ उत्कृष्ट द्रव्यमेंसे जघन्य द्रव्यके घटा देने पर शुद्ध शेष द्रव्यका प्रमाण इतना होता है— १६, २०, २४, २८। सबके सत्कर्मप्रक्षेपका प्रमाण दो अंक प्रमाण है ऐसा ग्रहण करना चाहिए-२। इस प्रमाणसे अपने अपने जघन्य द्रव्यके ऊपर क्रमसे शुद्ध शेष द्रव्यको प्रविष्ट कराने पर वहाँ पर मानपरिपाटिया इतना ९ उत्पन्न होती हैं, क्रोध परिपाटियाँ ११ उत्पन्न होती हैं, माया परिपाटियाँ १३ उत्पन्न होती हैं और लोभपरिपाटियाँ इतनी १५ उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार यहाँ पर दो संदृष्टियोंके द्वारा मानादिकके संक्रमस्थानोंसे क्रोधादिकके संक्रमस्थान विशेष अधिक असंदिग्धरूपसे सिद्ध होते हैं। इस प्रकार अल्पबहुत्वके समाप्त होने पर संक्रमस्थान प्ररूपणा समाप्त हुई।

इसके बाद प्रदेशसंक्रम समाप्त हुआ।

इस प्रकार 'गुणहीणं वा गुणविसिट्ठं' इस पदकी अर्थ विभाषा समाप्त होने पर पाँचवीं मूलगाथाकी अर्थप्ररूपणा समाप्त हुई।

१. बंधगयगाहा-चुण्णिसुत्ताणि

चु० सु०—[1] बंधगे त्ति एदस्स वे अणियोगद्दाराणि। तं जहा—बंधो च संकमो च। [2]एत्थ सुत्तगाहा।

(५) कदि पयडीओ बंधदि ट्ठिदि-अणुभागे जहण्णमुक्कस्सं।
संकामेइ कदिं वा गुणहीणं वा गुणविसिट्ठं ॥ २३ ॥

चु० सु०— [3]एदीए गाहाए बंधो च संकमो च सूचिदो होइ। पदच्छेदो। तं जहा। कदि पयडीओ बंधइ त्ति पयडिबंधो। ट्ठिदि अणुभागे त्ति ट्ठिदिबंधो अणुभागबंधो च। [4]जहण्णमुक्कस्सं त्ति पदेसबंधो। संकामेदि कदिं वा त्ति पयडिसंकमो च ट्ठिदिसंकमो च अणुभागसंकमो च गहेयव्वो। गुणहीणं वा गुणविसिट्ठं ति पदेससंकमो सूचिओ। सो पुण पयडि-ट्ठिदि-अणुभाग-पदेसबंधो बहुसो परूविदो।

संकमे पयदं। [6]संकमस्स पंचविहो उवक्कमो— आणुपुव्वी णामं पमाणं वत्तव्वदा अत्थाहियारो चेदि। [7]एत्थ णिक्खेवो कायव्वो। णामसंकमो ट्ठवणसंकमो दव्वसंकमो खेत्तसंकमो कालसंकमो भावसंकमो चेदि। णेगमो सव्वे संकमे इच्छइ। [8]संगह-ववहारा कालसंकममवणेंति। उजुसुदो एदं च ट्ठवणं च अवणेइ। [9]सद्दस्स णामं भावो य।

[10]णोआगमदो दव्वसंकमो ट्ठवणिज्जो। खेत्तसंकमो जहा उड्ढलोगो संकंतो। कालसंकमो जहा संकंतो हेमंतो। [11]भावसंकमो जहा संकंतं पेम्मं। जो सो णोआगमदो दव्वसंकमो सो दुविहो—कम्मसंकमो च णोकम्मसंकमो च। णोकम्मसंकमो जहा कट्ठसंकमो। [12]कम्मसंकमो चउव्विहो। तं जहा—पयडिसंकमो ट्ठिदिसंकमो अणुभागसंकमो पदेससंकमो चेदि। [13]पयडिसंकमो दुविहो। तं जहा-एगेगपयडिसंकमो पयडिट्ठाणसंकमो च। पयडिसंकमे पयदं। [14]तत्थ तिण्णि सुत्तगाहाओ हवंति। तं जहा।

संकम-उवक्कमविहो पंचविहो चउव्विहो य णिक्खेवो।
णयविही पयदं पयदे च णिग्गमो होइ अट्ठविहो ॥२४॥

---

(१) पृ० २। (२) पृ० ३। (३) पृ० ४। (४) पृ० ५। (५) पृ० ६। (६) पृ० ७। (७) पृ० ८। (८) पृ० ९। (९) पृ० १०। (१०) पृ० ११। (११) पृ० १२। (१२) पृ० १४। (१३) पृ० १५। (१४) पृ० १६।

एक्केक्काए संकमो दुविहो संकमविही य पयडीए ।
संकमपडिग्गहविही पडिग्गहो उत्तम जहण्णो ॥२५॥
[1]पयडि-पयडिट्ठाणेसु संकमो असंकमो तहा दुविहो ।
दुविहो पडिग्गहविही दुविहो अपडिग्गहविही य । २६ ॥

चु० सु०— [2]एदाओ तिण्णि गाहाओ पयडिसंकमे। एदासिं गाहाणं पदच्छेदो। तं जहा। संकम-उवक्कमविही पंचविहो त्ति एदस्स पदस्स अत्थो— पंचविहो उवक्कमो, आणुपुव्वी णामं पमाणं वत्तव्वदा अत्थाहियारो चेदि। [3]चउव्विहो य णिक्खेवो त्ति णामं ट्ठवणं वज्जं दव्वं खेत्तं कालो भावो च। [4]णयविहि पयदं त्ति एत्थ णओ वत्तव्वो। पयदे च णिग्गमो होइ अट्ठविहो त्ति पयडिसंकमो पयडिअसंकमो पयडिट्ठाणसंकमो पयडिट्ठाणअसंकमो पयडिपडिग्गहो पयडिअपडिग्गहो पयडिट्ठाणपडिग्गहो पयडिट्ठाण-अपडिग्गहो त्ति एसो णिग्गमो अट्ठविहो। [5]एक्केक्काए संकमो दुविहो संकमविही य पयडीए त्ति पदस्स अत्थो कायव्वो। [6]एक्केक्काए त्ति एगेगपयडिसंकमो, संकमो दुविहो त्ति दुविहो संकमो त्ति भणिदं होइ, संकमविही य त्ति पयडिट्ठाणसंकमो, पयडीए त्ति पयडिसंकमो त्ति भणियं होइ। [7]संकम-पडिग्गहविहि त्ति संकमे पयडिपडिग्गहो। पडिग्गहो उत्तम जहण्णो त्ति पयडिट्ठाणपडिग्गहो। पयडि-पयडिट्ठाणेसु संकमो त्ति पयडिसंकमो पयडिट्ठाणसंकमो च। [8]असंकमो तहा दुविहो त्ति पयडिअसंकमो पयडिट्ठाणअसंकमो च। दुविहो पडिग्गहविहि त्ति पयडिपडिग्गहो पयडिट्ठाणपडिग्गहो च। [9]एस सुत्तफासो।

एगेगपयडिसंकमे पयदं। [10]एत्थ सामित्तं। [11]मिच्छत्तस्स संकामओ को होइ? णियमा सम्माइट्ठी। वेदगसम्माइट्ठी सव्वो। उवसामगो च णिरासाणो। [12]सम्मत्तस्स संकामओ को होइ? णियमा मिच्छाइट्ठी सम्मत्तसंतकम्मिओ। [13]णवरि आवलिय-पविट्ठसम्मत्तसंतकम्मियं वज्ज। सम्मामिच्छत्तस्स संकामओ को होइ? मिच्छाइट्ठी उव्वेल्लमाणओ। [14]सम्माइट्ठी वा णिरासाणो। मोत्तूण पढमसमयं सम्मामिच्छत्तसंत-कम्मियं। [15]दंसणमोहणीयं चरित्तमोहणीए ण संकमइ। चरित्तमोहणीयं पि दंसणमोहणीए ण संकमइ। अणंताणुबंधी जत्तियाओ बंज्झंति चरित्तमोहणीयपयडीओ तासु सव्वासु संकमइ। एवं सव्वाओ चरित्तमोहणीयपयडीओ। [16]ताओ पणुवीसं पि चरित्तमोहणीय-पयडीओ अण्णदरस्स संकमंति।

---

(१) पृ० १७। (२) पृ० १८। (३) पृ० १९। (४) पृ० २०। (५) पृ० २२। (६) पृ० २३। (७) पृ० २४। (८) पृ० २५। (९) पृ० २६। (१०) पृ० २८। (११) पृ० २९। (१२) पृ० ३०। (१३) पृ० ३१। (१४) पृ० ३२। (१५) पृ० ३३। (१६) पृ० ३४।

एयजीवेण कालो। मिच्छत्तस्स संकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। [2]सम्मत्तस्स संकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। सम्मामिच्छत्तस्स संकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [3]उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। सेसाणं पि पणुवीसंपयडीणं संकामयस्स तिण्णि भंगा। [4]तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढ-पोग्गलपरियट्टं।

[5]एयजीवेण अंतरं। मिच्छत्त-सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं संकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [6]उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। णवरि सम्मामिच्छत्तस्स संकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ। [7]अणंताणुबंधीणं संकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण बेछावट्ठिसागरोवमाणि सादि-रेयाणि। [8]सेसाणमेक्कवीसाए पयडीणं संकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

[9]णाणाजीवेहि भंगविचओ। जेसिं पयडीणं संतकम्ममत्थि तेसु पयदं। [10] मिच्छत्त-सम्मत्ताणं सव्वजीवा णियमा संकामया च असंकामया च। सम्मामिच्छत्त-सोलसकसाय-णवणोकसायाणं च तिण्णि भंगा कायव्वा।

[11]णाणाजीवेहि कालो। सव्वकम्माणं संकामया केवचिरं कालादो होंति ? [12]सव्वद्धा। [13]णाणाजीवेहि अंतरं। सव्वकम्मसंकामयाणं णत्थि अंतरं।

[14]सण्णियासो। मिच्छत्तस्स संकामओ सम्मामिच्छत्तस्स सिया संकामओ सिया असंकामओ। [15]सम्मत्तस्स असंकामओ। अणंताणुबंधीणं सिया कम्मंसिओ सिया अकम्मंसिओ। जदि कम्मंसिओ सिया संकामओ सिया असंकामओ। सेसाणमेक्कवीसाए कम्माणं सिया संकामओ सिया असंकामओ। [16]एवं सण्णियासो कायव्वो।

[17]अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवा सम्मत्तस्स संकामया। [18]मिच्छत्तस्स संकामया असंखेज्जगुणा। सम्मामिच्छत्तस्स संकामया विसेसाहिया। अणंताणुबंधीणं संकामया अणंतगुणा। अट्ठकसायाणं संकामया विसेसाहिया। लोहसंजलणस्स संकामया विसेसाहिया। [19]णवुंसयवेदस्स संकामया विसेसाहिया। इत्थिवेदस्स संकामया विसेसाहिया।

(१) पृ० ३५। (२) पृ० ३७। (३) पृ० ३८। (४) पृ० ३९। (५) पृ० ४६। (६) पृ० ४७। (७) पृ० ४८। (८) पृ० ४९। (९) पृ० ५२। (१०) पृ० ५३। (११) पृ० ५९। (१२) पृ० ६०। (१३) पृ० ६२। (१४) पृ० ६३। (१५) पृ० ६४। (१६) पृ० ६५। (१७) पृ० ७३। (१८) पृ० ७४। (१९) पृ० ७५।

छण्णोकसायाणं संकामया विसेसाहिया। पुरिसवेदस्स संकामया विसेसाहिया। कोहसंकलणस्स संकामया विसेसाहिया। [1]माणसंजलणस्स संकामया विसेसाहिया। मायासंजलणस्स संकामया विसेसाहिया।

णिरयगदीए सव्वत्थोवा सम्मत्तसंकामया। मिच्छत्तस्स संकामया असंखेज्जगुणा। सम्मामिच्छत्तस्स संकामया विसेसाहिया। [2]अणंताणुबंधीणं संकामया असंखेज्जगुणा। सेसाणं कम्माणं संकामया तुल्ला विसेसाहिया। एवं देवगदीए। [3]तिरिक्खगईए सव्वत्थोवा सम्मत्तस्स संकामया। मिच्छत्तस्स संकामया असंखेज्जगुणा। सम्मामिच्छत्तस्स संकामया विसेसाहिया। अणंताणुबंधीणं संकामया अणंतगुणा। सेसाणं कम्माणं संकामया तुल्ला विसेसाहिया। पंचिंदियतिरिक्खतिए णारयभंगो। [4]मणुसगईए सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स संकामया। सम्मत्तस्स संकामया असंखेज्जगुणा। सम्मामिच्छत्तस्स संकामया विसेसाहिया। अणंताणुबंधीणं संकामया असंखेज्जगुणा। सेसाणं कम्माणं संकामया ओघो। [5]एइंदिएसु सव्वत्थोवा सम्मत्तस्स संकामया। सम्मामिच्छत्तस्स संकामया विसेसहिया ? सेसाणं कम्माणं संकामया तुल्ला अणंतगुणा।

[6]एत्तो पयडिट्ठाणसंकमो। तत्थ पुव्वं गमणिज्जा सुत्तसमुक्कित्तणा। तं जहा।

अट्ठावीस चउवीस सत्तरस सोलसेव पण्णरसा।
एदे खलु मोत्तूणं सेसाणं संकमो होइ॥ २७॥
सोलसग बारसट्ठग वीसं वीसं तिगादिगधिगा य।
एदे खलु मोत्तूणं सेसाणि पडिग्गहा होंति॥ २८॥
छव्वीस सत्तावीसा य संकमो णियम चदुसु ट्ठाणेसु।
बावीस पण्णरसगे एक्कारस ऊणवीसाए॥ २९॥
[7]सत्तारसेगवीसासु संकमो णियम पंचवीसाए।
णियमा चदुसु गदीसु य णियमा दिट्ठीगए तिविहे॥ ३०॥
बावीस पण्णरसगे सत्तग एक्कारसूणवीसाए।
तेवीस संकमो पुण पंचसु पंचिंदिएसु हवे॥ ३१॥
चोद्दसग दसग सत्तग अट्ठारसगे च णियम बावीसा।
णियमा मणुसगईए विरदे मिस्से अविरदे य॥ ३२॥
तेरसय णवय सत्तय सत्तारग पणय एक्कवीसाए।
एगाधिगाए वीसाए संकमो छप्पि सम्मत्ते॥ ३३॥

(१ पृ० ७६। (२) पृ० ७७। (३) पृ० ७८। (४) पृ० ७९। (५) पृ० ८०। (६) पृ० ८१। (७) पृ० ८२।

एत्तो अवसेसा संजमम्हि उवसामगे च खवगे च ।
वीसा य संकम दुगे छक्के पणए च बोद्धव्वा ॥ ३४ ॥
[1]पंचसु च ऊणवीसा अट्ठारस चदुसु होंति बोद्धव्वा ।
चोद्दस छसु पयडीसु य तेरसयं छक्क-पणगम्हि ॥ ३५ ॥
पंच-चउक्के बारस एक्कारस पंचगे तिग चउक्के ।
दसगं चउक्क-पणगे णवगं च तिगम्हि बोद्धव्वा ॥ ३६ ॥
अट्ठ दुग तिग चउक्के सत्त चउक्के तिगे च बोद्धव्वा ।
छक्कं दुगम्हि णियमा पंच तिगे एक्कग दुगे वा ॥ ३७ ॥
चत्तारि तिग चदुक्के तिण्णि तिगे एक्कगे च बोद्धव्वा ।
दो दुसु एगाए वा एगा एगाए बोद्धव्वा ॥३८॥
[2]अणुपुव्वमणणुपुव्वं झीणमझीणं च दंसणे मोहे ।
उवसामगे च खवगे च संकमे मग्गणोवाया ॥३९॥
एक्केक्कम्हि य ट्ठाणे पडिग्गहे संकमे तदुभए च ।
भविया वाऽभविया वा जीवा वा केसु ठाणेसु ॥ ४० ॥
कदि कम्हि होंति ठाणा पचविहे भवविधिविसेसम्हि ।
संकम पडिग्गहो वा समाणणा वाध केवचिरं ॥ ४१ ॥
णिरयगइ-अमर-पंचिंदिएसु पंचेव संकमट्ठाणा ।
सव्वे मणुसगईए सेसेसु तिगं असण्णीसु ॥ ४२ ॥
चदुर दुगं तेवीसा मिच्छत्ते मिस्सगे य सम्मत्ते ।
वावीस पणय छक्कं विरदे मिस्से अविरदे य ॥ ४३ ॥
तेवीस सुक्कलेस्से छक्कं पुण तेउ-पम्मलेस्सासु ।
पणयं पुण काऊए णीलाए किण्हलेस्साए ॥ ४४ ॥
[3]अवगयवेद-णवुंसय-इत्थी-पुरिसेसु चाणुपुव्वीए ।
अट्ठारसयं णवय एक्कारसय च तेरसया ॥ ४५ ॥
कोहादी उवजोगे चदुसु कसाएसु चाणुपुव्वीए ।
सोलस य ऊणवीसा तेवीसा चेव तेवीसा ॥ ४६ ॥
णाणम्हि य तेवीसा तिविहे एक्कम्हि एक्कवीसा य ।
अण्णाणम्हि य तिविहे पंचेव य संकमट्ठाणा ॥ ४७ ॥

---

(१) पृ० ८३ । (२) पृ० ८४ । (३) पृ० ८५ ।

आहारय-भविएसु य तेवीसं होंति संकमट्ठाणा।
अणाहारएसु पंच य एक्कं ट्ठाणं अभविएसु ॥ ४८ ॥
छव्वीस सत्तवीसा तेवीसा पंचवीस बावीसा।
एदे सुण्णट्ठाणा अवगदवेदस्स जीवस्स ॥ ४९ ॥
उगुवीसट्ठारसयं चोद्दस एक्कारसादिया सेसा।
एदे सुण्णट्ठाणा णवुंसए चोद्दसा होंति ॥ ५० ॥
अट्ठारस चोद्दसयं ट्ठाणा सेसा य दसगमादीया।
एदे सुण्णट्ठाणा बारस इत्थीसु बोद्धव्वा ॥ ५१ ॥
[1]चोद्दसग-णवगमादी हवंति उवसामगे च खवगे च।
एदे सुण्णट्ठाणा दस वि य पुरिसेसु बोद्धव्वा ॥ ५२ ॥
णव अट्ठ सत्त छक्कं पणग दुगं एक्कयं च बोद्धव्वा।
एदे सुण्णट्ठाणा पढमकसायोवजुत्तेसु ॥ ५३ ॥
सत्त य छक्कं पणगं च एक्कयं चेव आणुपुव्वीए।
एदे सुण्णट्ठाणा विदियकसाओवजुत्तेसु ॥ ५४ ॥
दिट्ठे सुण्णासुण्णे वेद-कसाएसु चेव ट्ठाणेसु।
मग्गणगवेसणाए दु संकमो आणुपुव्वीए ॥ ५५ ॥
कम्मंसियट्ठाणेसु य बंधट्ठाणेसु संकमट्ठाणे।
एक्केक्केण समाणय बंधेण य संकमट्ठाणे ॥ ५६ ॥
सादि य जहण्ण संकम कदिखुत्तो होइ ताव एक्केक्के।
अविरहिद सांतरं केवचिरं कदिभाग परिमाणं ॥ ५७ ॥
एवं दव्वे खेत्ते काले भावे य सण्णिवादे य।
संकमणयं णयविदू णेया सुददेसिदमुदारं ॥ ५८ ॥

चु० सु०— [2]सुत्तसमुक्कित्तणाए समत्ताए इमे अणियोगद्दारा। तं जहा। ठाणसमुक्कित्तणा सव्वसंकमो णोसव्वसंकमो उक्कस्ससंकमो [3]अणुक्कस्ससंकमो जहण्णसंकमो अजहण्णसंकमो सादियसंकमो अणादियसंकमो धुवसंकमो अद्धुवसंकमो एगजीवेण सामित्तं कालो अंतरं णाणाजीवेहि भंगविचओ कालो अंतरं सण्णियासो अप्पाबहुगं भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढि त्ति। ठाणसमुक्कित्तणा त्ति जं पदं तस्स विहासा जत्थ एया गाहा।

[4]अट्ठावीस चउवीस सत्तरस सोलसेव पण्णरसा।
एदे खलु मोत्तूणं सेसाणं संकमो होइ ॥ २७ ॥

(१) पृ० ८६। (२) पृ० ८८। (३) पृ० ८९। (४) पृ० ९०।

चु० सु०—एवमेदाणि पंचट्ठाणाणि मोत्तूण सेसाणि तेवीस संकमट्ठाणाणि। [1]एत्थ पयडिणिद्देसो कायव्वो। अट्ठावीसं केण कारणेण ण संकमइ? दंसण-मोहणीय-चरित्तमोहणीयाणि एक्केक्कम्मि ण संकमंति। तदो चरित्तमोहणीयस्स जाओ पयडीओ बज्झंति तत्थ पणुवीसं वि संकमंति। दंसणमोहणीयस्स उक्कस्सेण दो पयडीओ संकमंति। [2] एदेण कारणेण अट्ठावीसाए णत्थि संकमो। सत्तावीसाए काओ पयडीओ? पणुवीसं चरित्तमोहणीयाओ दोण्णि दंसणमोहणीयाओ। छव्वीसाए[3] सम्मत्ते उव्वेल्लिदे। अहवा पढमसमयसम्मत्ते उप्पाइदे। [4]पणुवीसाए सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तेहि विणा सेसाओ। चउवीसाए किं कारणं णत्थि? [5]अणंताणुबंधिणो सव्वे अवणिज्जंति। एदेण कारणेण चउवीसाए णत्थि। तेवीसाए अणंताणुबंधीसु अवगदेसु। बावीसाए मिच्छत्ते खविदे सम्मामिच्छत्ते सेसे। [6]अहवा चउवीसदिसंतकम्मियस्स आणुपुव्वीसंकमे कदे जाव णवुंसयवेदो अणुवसंतो। [7]एक्कवीसाए खीणदंसणमोहणीयस्स अक्खवग-अणुवसामगस्स। चउवीसदिसंतकम्मियस्स वा णउंसयवेदे उवसंते इत्थिवेदे अणुवसंते। [8]वीसाए एगवीसदि-संतकम्मियस्स आणुपुव्वीसंकमे कदे जाव णवुंसयवेदो अणुवसंतो। चउवीसदिसंत-कम्मियस्स वा आणुपुव्वीसंकमे कदे इत्थिवेदे उवसंते छसु कम्मेसु अणुवसंतेसु। [9]एगुणवीसाए एक्कवीसदिसंतकम्मियस्स णवुंसयवेदे उवसंते इत्थिवेदे अणुवसंते। अट्ठा-रस[10]हमेक्कवीसदिकम्मंसियस्स इत्थिवेदे उवसंते जाव छण्णोकसाया अणुवसंता। [10]सत्ता-रसण्हं केण कारणेण णत्थि संकमो? खवगो एक्कावीसादो एक्कपहारेण अट्ठ कसाए अवणेदि। तदो अट्ठकसाएसु अवणिदेसु तेरसण्हं संकमो होइ। [11]उवसामगस्स वि एक्कावीसदिकम्मंसियस्स छसु कम्मेसु उवसंतेसु बारसण्हं संकमो भवदि। चउवीसदि-कम्मंसियस्स छसु कम्मेसु उवसंतेसु चोद्दसण्हं संकमो भवदि। एदेण कारणेण सत्तारसण्हं वा सोलसण्हं वा पण्णारसण्हं वा संकमो णत्थि। [12]चोद्दसण्हं चउवीसदिकम्मंसियस्स छसु कम्मेसु उवसामिदेसु पुरिसवेदे अणुवसंते। [13]तेरसण्हं चउवीसदिकम्मंसियस्स पुरिसवेदे उवसंते कसाएसु अणुवसंतेसु। खवगस्स वा अट्ठ-कसाएसु खविदेसु जाव अणाणुपुव्वीसंकमो। [14]बारसण्हं खवगस्स आणुपुव्वीसंकमो आढत्तो जाव णवुंसयवेदो अक्खीणो। एक्कावीसदिकम्मंसियस्स वा छसु कम्मेसु उवसंतेसु पुरिसवेदे अणुवसंते। [15]एक्कारसण्हं खवगस्स णउंसयवेदे खविदे इत्थिवेदे अक्खीणे।

---

(१) पृ० ९१। (२) पृ० ९२। (३) पृ० ९३। (४) पृ० ९४। (५) पृ० ९५। (६) पृ० ९६। (७) पृ० ९७। (८) पृ० ९९। (९) पृ० १००। (१०) पृ० १०१। (११) पृ० १०२। (१२) पृ० १०३ (१३) पृ० १०४। (१४) पृ० १०५। (१५) पृ० १०६।

अहवा एक्कावीसदिकम्मंसियस्स पुरिसवेदे उवसंते अणुवसंतेसु कसाएसु। चउवीसदि-कम्मंसियस्स वा दुविहे कोहे उवसंते कोहसंजलणे अणुवसंते। [1]दसण्हं खवगस्स इत्थिवेदे खीणे छसु कम्मंसेसु अक्खीणेसु। अथवा चउवीसदिकम्मंसियस्स कोधसंजलणे उवसंते सेसेसु कसाएसु अणुवसंतेसु। [2]णवण्हं एक्कावीसदिकम्मंसियस्स दुविहे कोहे उवसंते कोहसंजलणे अणुवसंते। चउवीसदिकम्मंसियस्स खगवस्स च णत्थि। [3]अट्ठण्हं एक्कावीसदिकम्मंसियस्स तिविहे कोहे उवसंते सेसेसु कसाएसु अणुवसंतेसु। अहवा चउवीसदिकम्मंसियस्स दुविहे माणे उवसंते माणसंजलणे अणुवसंते। [4]सत्तण्हं चउवीसदिकम्मंसियस्स तिविहे माणे उवसंते सेसेसु कसाएसु अणुवसंतेसु। [5]छण्हमेक्कावीसदिकम्मंसियस्स दुविहे माणे उवसंते सेसेसु कसाएसु अणुवसंतेसु। पंचण्हमेक्कावीसदिकम्मंसियस्स तिविहे माणे उवसंते सेसकसाएसु अणुवसंतेसु। अथवा चउवीसदिकम्मंसियस्स दुविहाए मायाए उवसंताए सेसेसु अणुवसंतेसु। [6]चउण्हं खवगस्स छसु कम्मेसु खीणेसु पुरिसवेदे अक्खीणे। अहवा चउवीसदिकम्मंसियस्स तिविहाए मायाए उवसंताए सेसेसु अणुवसंतेसु। तिण्हं खवगस्स पुरिसवेदे खीणे सेसेसु अक्खीणेसु। [7]अथवा एक्कावीसदिकम्मंसियस्स दुविहाए मायाए उवसंताए सेसेसु अणुवसंतेसु। दोण्हं खवगस्स कोहे खविदे सेसेसु अक्खीणेसु। अहवा एक्कावीसदिकम्मंसियस्स तिविहाए मायाए उवसंताए सेसेसु अणुवसंतेसु। अहवा चउवीसदिकम्मंसियस्स दुविहे लोहे उवसंते। [8]सुहुमसांपराइयउवसामयस्स वा उवसंत-कसायस्स वा। एक्किस्से संकमो खवगस्स माणे खविदे मायाए अक्खीणाए।

[9]एत्तो पदाणुमाणियं सामित्तं णेयव्वं।

[10]एयजीवेण कालो। सत्तावीसाए संकामओ केवचिरं कालादो होइ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि तिपलिदोवमस्स [11]असंखे-ज्जदिभागेण। छव्वीससंकामओ केवचिरं कालादो होइ? जहण्णेण एगसमओ [12]उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। पणुवीसाए संकामए तिण्णि भंगा। [13]तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। [14]तेवीसाए संकामओ केवचिरं कालादो होइ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं एयसमओ वा। [15]उक्कस्सेण छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। वावीसाए वीसाए एगूणवीसाए अट्ठारसण्हं तेरसण्हं

(१) पृ० १०७। (२) पृ० १०८। (३) पृ० १०९। (४) पृ० ११०। (५) पृ० १११। (६) पृ० ११२। (७) पृ० ११३। (८) पृ० ११४। (९) पृ० १७९। (१०) पृ० १८१। (११) पृ० १८२। (१२) पृ० १८३। (१३) पृ० १८४। (१४) पृ० १८५। (१५) पृ० १८६।

बारसण्हं एक्कारसण्हं दसण्हं अट्ठण्हं सत्तण्हं पंचण्हं चउण्हं तिण्हं दोण्हं पि कालो जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। [1]एक्कवीसाए संकामओ केवचिरं कालादो होइ? जहण्णेणेयसमओ। [2]उक्कस्सेण तेत्तीससागरोवमाणि सादिरेयाणि। चोद्दसण्हं णवण्हं छण्हं पि कालो जहण्णेणेयसमओ। [3]उक्कस्सेण दो आवलियाओ समयूणाओ। अथवा उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ओयरमाणस्स लब्भइ। एक्किस्से संकामओ केवचिरं कालादो होइ? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

[4]एत्तो एयजीवेण अंतरं। सत्तावीस-छव्वीस-तेवीस-इगिवीससंकामगंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। [5]पणुवीससंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। [6]बावीस-वीस-चोद्दस-तेरस-एक्कारस-दस-अट्ठ सत्त-पंच-चदु-दोण्णिसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। [7]एक्किस्से संकामयस्स णत्थि अंतरं। सेसाणं संकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होइ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण तेत्तीसं सागरोवमाणि सादिरेयाणि।

[8]णाणाजीवेहि भंगविचओ। जेसिं पयडीओ अत्थि तेसु पयदं। सव्वजीवा सत्तावीसाए छव्वीसाए पणुवीसाए तेवीसाए एक्कवीसाए एदेसु पंचसु संकमट्ठाणेसु णियमा संकामगा। [9]सेसेसु अट्ठारससु संकमट्ठाणेसु भजियव्वा।

[10]णाणाजीवेहि कालो। पंचण्हं ट्ठाणाणं संकामया सव्वद्धा। [11]सेसाणं ट्ठाणाणं संकामया जहण्णेण एगसमओ, उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। णवरि एक्किस्से संकामया जहण्णुक्कस्सेणंतोमुहुत्तं।

[12]णाणाजीवेहि अंतरं। बावीसाए तेरसण्हं बारसण्हं एक्कारसण्हं दसण्हं चदुण्हं तिण्हं दोण्हमेक्किस्से एदेसिं णवण्हं ठाणाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण छम्मासा। [13]सेसाणं णवण्हं संकमट्ठाणाणमंतरं केवचिरं कालादो होइ? जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण संखेज्जाणि वस्साणि। [14]जेसिमविरहिदकालो तेसिं णत्थि अंतरं।

सण्णियासो णत्थि।

---

(१) पृ० १९१। (२) पृ० १९२। (३) पृ० १९३। (४) पृ० १९४। (१६) पृ० १९८। (५) पृ० २०२। (६) पृ० २०३। (७) पृ० २०६। (८) पृ० २१०। (९) पृ० २११। (१०) पृ० २१६। (११) पृ० २१७। (१२) पृ० २१८। (१३) पृ० २२०। (१४) पृ० २२१।

[1]अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवा णवण्हं संकामया। छण्हं संकामया तत्तिया चेव। चोद्दसण्हं संकामया संखेज्जगुणा। [2]पंचण्हं संकामया संखेज्जगुणा। अट्ठण्हं संकामया विसेसाहिया। अट्ठारसण्हं संकामया विसेसाहिया। एगूणवीसाए संकामया विसेसाहिया। [3]चउण्हं संकामया संखेज्जगुणा। सत्तण्हं संकामया विसेसाहिया। वीसाए संकामया विसेसाहिया। एक्किस्से संकामया संखेज्जगुणा। [4]दोण्हं संकामया विसेसाहिया। दसण्हं संकामया विसेसाहिया। एक्कारसण्हं संकामया विसेसाहिया। बारसण्हं संकामया विसेसाहिया। तिण्हं संकामया संखेज्जगुणा। तेरसण्हं संकामया संखेज्जगुणा। [5]बावीस-संकामया संखेज्जगुणा। छव्वीसाए संकामया असंखेज्जगुणा। एक्कवीसाए संकामया असंखेज्जगुणा। तेवीसाए संकामया असंखेज्जगुणा। [6]सत्तावीसाए संकामया असंखेज्ज-गुणा। पणुवीससंकामया अणंतगुणा।

२ ट्ठिदिसंकमो अत्थाहियारो

[7]ट्ठिदिसंकमो दुविहो—मूलपयडिट्ठिदिसंकमो उत्तरपयडिट्ठिदिसंकमो च। तत्थ अट्ठपदं—जा ट्ठिदी ओकड्डिज्जदि वा उक्कड्डिज्जदि वा अण्णपयडिं संकामिज्जइ वा सो ट्ठिदिसंकमो। सेसो ट्ठिदिअसंकमो। [8]ओकड्डिता कधं णिक्खिवदि ट्ठिदिं? उदयावलिय-चरमसमयअपविट्ठा जा ट्ठिदी सा कधमोकड्डिज्जइ? तिस्से उदयादि जाव आवलियतिभागे ताव णिक्खेवो, आवलियाए वेतिभागा अइच्छावणा। [9]उदए बहुअं पदेसग्गं दिज्जइ। तेण परं विसेसहीणं जाव आवलियतिभागो त्ति। तदो जा विदिया ट्ठिदी तिस्से वि तत्तिगो चेव णिक्खेवो। अइच्छावणा समयुत्तरा। [10]एवमइच्छावणा समयुत्तरा। णिक्खेवो तत्तिगो चेव उदयावलियबाहिरादो आवलियतिभागंतिमट्ठिदि त्ति। [11]तेण परं णिक्खेवो वड्ढइ। अइच्छावणा आवलिया चेव। [12]वाघादेण अइच्छावणा एक्का जेणावलिया अदिरित्ता होइ। तं जहा। ट्ठिदिघादं करेंतेण खंडयमागाइदं। [13]तत्थ जं पढमसमए उक्कीरदि पदेसग्गं तस्स पदेसग्गस्स आवलियाए अइच्छावणा। एवं जाव दुचरिमसमय-अणुक्किण्णखंडगं ति। चरिमसमए जो खंडयस्स अग्गट्ठिदी तिस्से अइच्छावणा खंडयं समयूणं। [14]एसा उक्कस्सिया अइच्छावणा वाघादे। [15]तदो सव्वत्थोवो जहण्णओ णिक्खेवो। जहण्णिया अइच्छावणा दुसमयूणा दुगुणा। [16]णिव्वाघादेण उक्कस्सिया अइच्छावणा

(१) पृ० २२२। (२) पृ० २२३। (३) पृ० २२४। (४) पृ० २२५। (५) पृ० २२६। (६) पृ० २२७। (७) पृ० २४२। (८) पृ० २४३। (९) पृ० २४४। (१०) पृ० २४५। (११) पृ० २४६। (१२) पृ० २४८। (१३) पृ० २४९। (१४) पृ० २५०। (१५) पृ० २५१। (१६) पृ० २५२।

विसेसाहिया। वाघादेण उक्कस्सिया अइच्छावणा असंखेज्जगुणा। उक्कस्सयं ट्ठिदिखंडयं विसेसाहियं। उक्कस्सओ णिक्खेवो विसेसाहिओ। उक्कस्सओ ट्ठिदिबंधो विसेसाहिओ।

[1]जाओ बज्झंति ट्ठिदीओ तासिं ट्ठिदीणं पुव्वणिबद्धट्ठिदिमहिकिच्च णिव्वाघादेण उक्कड्डणाए अइच्छावणा आवलिया। [2]एदिस्से अइच्छावणाए आवलियाए असंखेज्जदिभागमादिं कादूण जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति णिरंतरं णिक्खेवट्ठाणाणि। [3]उक्कस्सओ पुण णिक्खेवो केत्तिओ? जत्तिया उक्कस्सिया कम्मट्ठिदी उक्कस्सियाए आबाहाए समयुत्तरावलियाए च ऊणा तत्तिओ उक्कस्सओ णिक्खेवो। [4]वाघादेण कधं? जइ संतकम्मादो बंधो समयुत्तरो तिस्से ट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। [5]जइ संतकम्मादो बंधो दुसमयुत्तरो तिस्से वि संतकम्मअग्गट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। एत्थ आवलियाए असंखेज्जदिभागो जहण्णिया अइच्छावणा। जदि जत्तिया जहण्णिया अइच्छावणा तत्तिएण अब्भहिओ संतकम्मादो बंधो तिस्से वि संतकम्मअग्गट्ठिदीए णत्थि उक्कड्डणा। अण्णो आवलियाए असंखेज्जदिभागो जहण्णओ णिक्खेवो। [6]जइ जहण्णियाए अइच्छावणाए जहण्णएण च णिक्खेवेण एत्तियमेत्तेण संतकम्मादो अदिरित्तो बंधो सा संतकम्मअग्गट्ठिदी उक्कड्डिज्जदि। तदो समयुत्तरे बंधे णिक्खेवो तत्तिओ चेव, अइच्छावणा वड्ढदि। एवं ताव अइच्छावणा वड्ढइ जाव अइच्छावणा आवलिया जादा त्ति। [7]तेण परं णिक्खेवो वड्ढइ जाव उक्कस्सओ णिक्खेवो त्ति। उक्कस्सओ णिक्खेवो को होइ? जो उक्कस्सियं ठिदिं बंधियूणावलियमदिक्कंतो तमुक्कस्सयट्ठिदिमोकड्डियूण उदयावलिय-बाहिराए विदियाए ठिदीए णिक्खिवदि। [8]पुण से काले उदयावलियबाहिरे अणंतरठिदिं पावेहिदि त्ति तं पदेसग्गमुक्कड्डियूण समयाहियाए आवलियाए ऊणियाए अग्गट्ठिदीए णिक्खिवदि। एस उक्कस्सओ णिक्खेवो। [9]एवमोकड्डुक्कड्डणाणमट्ठपदं समत्तं।

एत्तो अद्धाछेदो। जहा उक्कस्सियाए ट्ठिदीए उदीरणा तहा उक्कस्सओ ट्ठिदिसंकमो।

[10]एत्तो जहण्णयं वत्तइस्सामो। [11]मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-बारसकसाय-इत्थि-णवुंसयवेदाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। सम्मत्त-लोहसंजलणाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो एया ट्ठिदी। कोहसंजलणस्स जण्णट्ठिदिसंकमो बे मासा अंतोमुहुत्तूणा। [12]माणसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो मासो अंतोमुहुत्तूणो। मायासंजलणस्स

(१) पृ० २५३। (२) पृ० २५५। (३) पृ० २५६। (४) पृ० २५७। (५) पृ० २५८। (६) पृ० २५९। (७) पृ० २६०। (८) पृ० २६१। (९) पृ० २६२। (१०) पृ० ३०५। (११) पृ० ३०६। (१२) पृ० ३०७।

जहण्णट्ठिदिसंकमो अद्धमासो अंतोमुहुत्तूणो। पुरिसवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो अट्ठवस्साणि अंतोमुहुत्तूणाणि। छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो संखेज्जाणि वस्साणि। गदीसु अणुमग्गियव्वो।

[1]सामित्तं। उक्कस्सट्ठिदिसंकामयस्स सामित्तं जहा उक्कस्सियाए ट्ठिदीए उदीरणा तहा णेदव्वं। [2]जहण्णयमेयजीवेण सामित्तं कायव्वं। मिच्छत्तस्स जहण्णओ ट्ठिदिसंकमो कस्स? मिच्छत्तं खवेमाणयस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयचरिमसमयसंकामयस्स तस्स जहण्णयं। [3]सम्मत्तस्स जहण्णयट्ठिदिसंकमो कस्स? समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीयस्स। सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स? अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स जहण्णयं। अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स०? विसंजोएंतस्स तेसिं चेव अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंकामयस्स। [4]अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स? खवयस्स तेसिं चेव अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स जहण्णयं। कोहसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स? खवयस्स कोहसंजलणस्स अपच्छिमट्ठिदिबंधचरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स जहण्णयं। [5]एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं। लोहसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स? आवलियसमयाहियसकसायस्स खवयस्स। [6]इत्थिवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स। इत्थिवेदोदयक्खवयस्स तस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुहमाणयस्स तस्स जहण्णयं। [7]णवुंसयवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स? णवुंसयवेदोदयक्खवयस्स तस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुहमाणयस्स तस्स जहण्णयं। [8]छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो कस्स? खवयस्स तेसिमपच्छिमट्ठिदिखंडयं संछुहमाणयस्स तस्स जहण्णयं।

[9]एयजीवेण कालो। जहा उक्कस्सिया ट्ठिदिउदीरणा तहा उक्कस्सओ ट्ठिदिसंकमो। [10]एत्तो जहण्णट्ठिदिसंकमकालो। [11]अट्ठावीसाए पयडीणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। णवरि इत्थि-णवुंसयवेद-छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमकालो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

[12]एत्तो अंतरं। उक्कस्सयट्ठिदिसंकामयंतरं जहा उक्कस्सट्ठिदिउदीरणाए अंतरं तहा कायव्वं। [13]एत्तो जहण्णयंतरं। [14]सव्वासिं पयडीणं णत्थि अंतरं। णवरि अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकामयंतरं जहण्णेण अंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

---

(१) पृ० ३११। (२) पृ० ३१२। (३) पृ० ३१३। (४) पृ० ३१४। (५) पृ० ३१६। (६) पृ० ३१७। (७) पृ० ३१८। (८) पृ० ३१९। (९) पृ० ३२३। (१०) पृ० ३२६। (११) पृ० ३२७। (१२) पृ० ३३२। (१३) पृ० ३३३। (१४) पृ० ३३४।

[1]णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो—उक्कस्सपदभंगविचओ च जहण्णपदभंगविचओ च। तेसिमट्ठपदं काऊण उक्कस्सओ जहा उक्कस्सट्ठिदिउदीरणा तहा कायव्वा। [2]एत्तो जहण्णपदभंगविचओ। सव्वासिं पयडीणं जहण्णट्ठिदिसंकामयस्स सिया सव्वे जीवा असंकामया, सिया असंकामया च संकामओ च, सिया असंकामया च संकामया च। [3]सेसं विहत्तिभंगो।

णाणाजीवेहि कालो। सव्वासिं पयडीणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होइ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। [4]णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो। एत्तो जहण्णयं। सव्वासिं पयडीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेण संखेज्जा समया। [5]णवरि अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो। इत्थि-णवुंसयवेद-छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेणंतोमुहुत्तं।

[6]एत्थ सण्णियासो कायव्वो।

[7]अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवो णवणोकसायाणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो। सोलसकसायाणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। [8]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सट्ठिदिसंकमो तुल्लो विसेसाहिओ। मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। एवं सव्वासु गईसु। [9]एत्तो जहण्णयं। सव्वत्थोवो सम्मत्त-लोहसंजलणाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो। जट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो। मायाए जहण्णट्ठिदिसंकमो संखेज्जगुणो। जट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। माणसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। जट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। [10]कोहसंजलणस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। जट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। पुरिसवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो संखेज्जगुणो। जट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। छण्णोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो संखेज्जगुणो। इत्थि-णवुंसयवेदाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो तुल्लो असंखेज्जगुणो। अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो। [11]सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो। मिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो। अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो।

[12]णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो। जट्ठिदिसंकमो असंखेज्ज-

(१) पृ० ३३६। (२) पृ० ३३७। (३) पृ० ३३८। (४) पृ० ३३९। (५) पृ० ३४०। (६) पृ० ३४२। (७) पृ० ३४६। (८) पृ० ३४७। (९) पृ० ३४८। (१०) पृ० ३४९ (११) पृ० ३५०। (१२) पृ० ३५१।

गुणो। अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो। सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो। पुरिसवेदस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो [1]इत्थिवेदे जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। हस्स-रईणं जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। [2]णवुंसयवेदजहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। अरइ-सोगाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। भय-दुगुंछाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। बारसकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। [3]मिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। [4]विदियाए सव्वत्थोवो अणंताणुबंधीणं जहण्णट्ठिदिसंकमो। सम्मत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो असंखेज्जगुणो। सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ। [5]बारसकसाय-णवणोकसायाणं जहण्णट्ठिदिसंकमो तुल्लो असंखेज्जगुणो। मिच्छत्तस्स जहण्णट्ठिदिसंकमो विसेसाहिओ।

[6]भुजगारसंकमस्स अट्ठपदं काऊण सामित्तं कायव्वं। [7]मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामओ को होदि? अण्णदरो। [8]अवत्तव्वसंकामओ णत्थि। एवं सेसाणं पयडीणं। णवरि अवत्तव्वया अत्थि।

[9]कालो। मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण चत्तारि समया। [10]अप्पदरसंकामगो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। [11]अवट्ठिदसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेणंतोमुहुत्तं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकामया केवचिरं कालादो होंति? जहण्णुक्कस्सेणेयसमओ। [12]अप्पदरसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेणंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। [13]सेसाणं कम्माणं भुजगारसंकामगो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेण एगूणवीससमया। [14]सेसपदाणि मिच्छत्तभंगो। [15]णवरि अवत्तव्वसंकामया जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ।

[16]एत्तो अंतरं। [17]मिच्छत्तस्स भुजगार-अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। एवं सेसाणं कम्माणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं। [18]णवरि अणंताणुबंधीणमप्पयरसंकामयंतरं जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। सव्वेसिमवत्तव्वसंकामयंतरं

(१) पृ० ३५२। (२) पृ० ३५३। (३) पृ० ३५५। (४) पृ० ३५६। (५) पृ० ३५७। (६) पृ० ३५६। (७) पृ० ३६०। (८) पृ० ३६१। (६) पृ० ३६२। (१०) पृ० ३६३। (११) पृ० ३६६। (१२) पृ० ३६७। (१३) पृ० ३६८। (१४) पृ० ३६६। (१५) पृ० ३७०। (१६) पृ० ३७२। (१७) पृ० ३७३। (१८) पृ० ३७४।

केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणंतोमुहुत्तं, उक्कस्सेण अद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणंतोमुहुत्तं। [१]अप्पयरसंकामयंतरं जहण्णेणेयसमयो। अवत्तव्वसंकामयंतरं जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। उक्कस्सेण सव्वेसिमद्धपोग्गलपरियट्टं देसूणं।

[२]णाणाजीवेहि भंगविचओ। मिच्छत्तस्स सव्वजीवा भुजगारसंकामगा च अप्पयरसंकामया च अवट्ठिदसंकामया च। [३]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सत्तावीस भंगा। सेसाणं मिच्छत्तभंगो। णवरि अवत्तव्वसंकामया भजियव्वा।

[४]णाणाजीवेहि कालो। मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसंकामया केवचिरं कालादो होंति ? सव्वद्धा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकामया केवचिरं कालादो होंति ? जहण्णेणेयसमओ। उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो। [५]अप्पदरसंकामया सव्वद्धा। सेसाणं कम्माणं भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामया केवचिरं कालादो होंति ? सव्वद्धा। अवत्तव्वसंकामया केवचिरं कालादो होंति ? जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेण संखेज्जा समया। णवरि अणंताणुबंधीणमवत्तव्वसंकामयाणं सम्मत्तभंगो।

[६]णाणाजीवेहि अंतरं। मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? णत्थि अंतरं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगार-अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ। [७]उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेये। अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? णत्थि अंतरं। अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ। उक्कस्सेण अंगुलस्स असंखेज्जदिभागो। [८]अणंताणुबंधीणमवत्तव्वसंकामयंतरं जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेये। सेसाणं कम्माणमवत्तव्वसंकामयंतरं जहण्णेणेयसमओ, उक्कस्सेण संखेज्जाणि वस्ससहस्साणि। [९]सोलसकसाय-णवणोकसायाणं भुजगार-अप्पदर- अवट्ठिदसंकामयाणं णत्थि अंतरं,

अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवा मिच्छत्तभुजगारसंकामया। अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा। अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा। [१०]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवट्ठिदसंकामया। भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा। [११]अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा। अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा। अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया।

(१) पृ० ३७५। (२) पृ० ३७६। (३) पृ० ३७७। (४) पृ० ३७६। (५) पृ० ३८०। (६) पृ० ३८१। (७) पृ० ३८२। (८) पृ० ३८३। (९) पृ० ३८४। (१०) पृ० ३८५। (११) पृ० ३८६।

भुजगारसंकामया अणंतगुणा। अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा। अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा। [1]एवं सेसाणं कम्माणं।

[2]पदणिक्खेवे तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं च। तत्थ समुक्कित्तणा सव्वासिं पयडीणमुक्कस्सिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च अत्थि। एवं जहण्णयस्स वि णेदव्वं।

[3]सामित्तं। मिच्छत्त-सोलसकसायाणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स? जो चउट्ठाणियजवमज्झस्स उवरि अंतोकोडाकोडिट्ठिदिमंतोमुहुत्तसंकामेमाणो सो सव्वमहंतं दाहं गदो तदो उक्कस्सट्ठिदिं पबद्धो तस्सावलियादीदस्स तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। [4]तस्सेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। [5]उक्कस्सिया हाणी कस्स? जेण उक्कस्सट्ठिदिखंडयं घादिदं तस्स उक्कस्सिया हाणी। जं उक्कस्सट्ठिदिखंडयं तं थोवं। जं सव्वमहंतं दाहं गदो त्ति भणिदं तं विसेसाहियं। [6]एदमप्पाबहुअस्स साहणं। एवं णवणोकसायाणं। णवरि कसायाणमावलियूणमुक्कस्सट्ठिदिपडिच्छिदूणावलियादीदस्स तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं। [7]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स? वेदगसम्मत्तपाओग्गजहण्णगट्ठिदिसंतकम्मियो मिच्छत्तस्स उक्कस्सट्ठिदिं बंधियूण ट्ठिदिघादमकाऊण अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स विदियसमयसम्माइट्ठिस्स उक्कस्सिया वड्ढी। [8]हाणी मिच्छत्तभंगो। उक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स? पुव्वुप्पण्णादो सम्मत्तादो समयुत्तरमिच्छत्तट्ठिदिसंतकम्मिओ सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स विदियसमयसम्माइट्ठिस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं।

[9]एत्तो जहण्णियाए। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं जहण्णिया वड्ढी कस्स? अप्पप्पणो समयूणादो उक्कस्सट्ठिदिसंकमादो उक्कस्सट्ठिदिसंकामेमाणयस्स तस्स जहण्णिया वड्ढी। [10]जहण्णिया हाणी कस्स? तप्पाओग्गसमयुत्तरजहण्णट्ठिदिसंकमादो तप्पाओग्गजहण्णगट्ठिदिं संकामेमाणयस्स तस्स जहण्णिया हाणी। एयदरत्थमवट्ठाणं। [11]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णिया वड्ढी कस्स? पुव्वुप्पणसमत्तादो दुसमयुत्तरमिच्छत्तसंतकम्मिओ सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स विदियसमयसम्माइट्ठिस्स जहण्णिया वड्ढी। हाणी सेसकम्मभंगो। अवट्ठाणमुक्कस्सभंगो।

[12]अप्पाबहुअं। मिच्छत्त-सोलसकसाय-इत्थि-पुरिसवेद-हस्स-रदीणं सव्वत्थोवा उक्कसिया हाणी। वड्ढी अवट्ठाणं च दो वि तुल्लाणि विसेसाहियाणि। सम्मत्त-सम्मा-

(१) पृ० ३८७। (२) पृ० ३८८। (३) पृ० ३८६। (४) पृ० ३६०। (५) पृ० ३६१। (६) पृ० ३६२। (७) पृ० ३६३। (८) पृ० ३६४। (६) पृ० ३६५ (१०) पृ० ३६६। (११) पृ० ३६७। (१२) पृ० ४००।

मिच्छत्ताणं सव्वत्थोवो अवट्ठाणसंकमो। हाणिसंकमो असंखेज्जगुणो। [1]वड्ढिसंकमो विसेसाहिओ। णवुंसयवेद-अरइ-सोग-भय-दुगुंछाणं सव्वत्थोवा उक्कस्सिया वड्ढी अवट्ठाणं च। हाणिसंकमो विसेसाहिओ। एत्तो जहण्णयं। सव्वासिं पयडीणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं ट्ठिदिसंकमो तुल्लो।

वड्ढीए तिण्णि अणिओगद्दाराणि। [2]समुक्कित्तणा परूवणा अप्पाबहुए त्ति। तत्थ समुक्कित्तणा। तं जहा— [3]मिच्छत्तस्स असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जभागवड्ढि-हाणी संखेज्जगुणवड्ढि-हाणी असंखेज्जगुणहाणी अवट्ठाणं च। [4]अवत्तव्वं णत्थि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं चउव्विहा वड्ढी चउव्विहा हाणी अवट्ठाणमवत्तव्वयं च। [5]सेसकम्माणं मिच्छत्तभंगो। [6]णवरि अवत्तव्वयमत्थि।

[7]परूवणा। एदासिं विधिं पुध पुध उवसंदरिसणा परूवणा णाम।

[8]अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स असंखेज्जगुणहाणिसंकामया। संखेज्जगुण-हाणिसंकामया असंखेज्जगुणा। संखेज्जभागहाणिसंकामया संखेज्जगुणा। संखेज्जगुणवड्ढि-संकामया असंखेज्जगुणा। [9]संखेज्जभागवड्ढिसंकामया संखेज्जगुणा। [10]असंखेज्जभाग-वड्ढिसंकामया अणंतगुणा। अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा। असंखेज्जभागहाणिसंकामया संखेज्जगुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा असंखेज्जगुणहाणिसंकामया। अवट्ठिद-संकामया असंखेज्जगुणा। [11]असंखेज्जभागवड्ढिसंकामया असंखेज्जगुणा। असंखेज्जगुण-वड्ढिसंकामया असंखेज्जगुणा। संखेज्जभागवड्ढिसंकामया असंखेज्जगुणा। [12]संखेज्जगुणवड्ढि-संकामया संखेज्जगुणा। संखेज्जगुणहाणिसंकामया संखेज्जगुणा। [13]संखेज्जभागहाणि-संकामया संखेज्जगुणा। अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा। असंखेज्जभागहाणिसंकामया असंखेज्जगुणा। [14]सेसाणं कम्माणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। असंखेज्जगुणहाणि-संकामया संखेज्जगुणा। सेससंकामया मिच्छत्तभंगो।

३. अणुभागसंकमो अत्थाहियारो

[15]अणुभागसंकमो दुविहो—मूलपयडिअणुभागसंकमो च उत्तरपयडिअणुभागसंकमो च। [16]तत्थ अट्ठपदं। अणुभागो ओकड्ढिदो वि संकमो, उक्कड्ढिदो वि संकमो, अण्ण-पयडिं णीदो वि संकमो। [17]ओकड्डणाए परूवणा। पढमफद्दयं ण ओकड्ढिज्जदि। विदियफद्दयं ण ओकड्ढिज्जदि। एवमणंताणि फद्दयाणि जहण्णिया अइच्छावणा, तत्ति-

(१) पृ० ४०१। (२) पृ० ४०२। (३) पृ० ४०३। (४) पृ० ४०५। (५) पृ० ४०८। (६) पृ० ४०९। (७) पृ० ४१०। (८) पृ० ४२०। (९) पृ० ४२१। (१०) पृ० ४२२। (११) पृ० ४२३। (१२) पृ० ४२४। (१३) पृ० ४२५। (१४) पृ० ४२६। (१५) पृ० २। (१६) पृ० ३। (१७) पृ० ४।

याणि फद्दयाणि ण ओकड्डिज्जंति । [1]अण्णाणि अणंताणि फद्दयाणि जहण्णणिक्खेव-मेत्ताणि च ण ओकड्डिज्जंति । जहण्णओ णिक्खेवो जहण्णिया अइच्छावणा च तेत्तिय-मेत्ताणि फद्दयाणि आदीदो अधिच्छिदूण तदित्थफद्दयमोकड्डिज्जइ । [2]तेण परं सव्वाणि फद्दयाणि ओकड्डिज्जंति । एत्थ अप्पाबहुअं । [3]सव्वत्थोवाणि पदेसगुणहाणिट्ठाणंतर-फद्दयाणि । जहण्णओ णिक्खेवो अंणतगुणो । जहण्णिया अइच्छावणा अणंतगुणा । उक्कस्सयमणुभागकंडयमणंतगुणं । उक्कस्सिया अइच्छावणा एगाए वग्गणाए ऊणिया । [4]उक्कस्सणिक्खेवो विसेसाहियो । [5]उक्कस्सो बंधो विसेसाहिओ ।

[6]उक्कड्डणाए परूवणा । चरिमफद्दयं ण उक्कड्डिज्जदि । दुचरिमफद्दयं ण उक्कड्डिज्जदि । एवमणंताणि फद्दयाणि ओसक्किऊण तं फद्दयमुक्कड्डिज्जदि । सव्वत्थोवो जहण्णओ णिक्खेवो । जहण्णिया अइच्छावणा अणंतगुणा । उक्कस्सओ णिक्खेवो अणंतगुणो । उक्कस्सओ बंधो विसेसाहिओ । [7]ओकड्डणादो उक्कड्डणादो च जहण्णिया अइच्छावणा तुल्ला । जहण्णओ णिक्खवो तुल्लो ।

एदेण अट्ठपदेण मूलपयडिअणुभागसंकमो । तत्थ च तेवीसमणिओगद्दाराणि सण्णा जाव अप्पाबहुए त्ति २३ । भुजगारो पदणिक्खेवो वड्ढि त्ति भाणिदव्वो ।

[8]तदो उत्तरपयडिअणुभागसंकमं चउवीसअणिओगद्दारेहि वत्तइस्सामो । [9]तत्थ पुव्वं गमणिज्जा घादिसण्णा च ट्ठाणसण्णा च । सम्मत्त-चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं मोत्तूण सेसाणं कम्माणमणुभागसंकमो णियमा सव्वघादी वेट्ठाणिओ वा तिट्ठाणिओ वा चउट्ठाणिओ वा । [10]णवरि सम्मामिच्छत्तस्स वेट्ठाणिओ चेव । अक्खवग-अणुवसामगस्स चदुसंजलण-पुरिसवेदाणमणुभागसंकमो मिच्छत्तभंगो । [11]खवगुवसामगाणमणुभागसंकमो सव्वघादी वा देसघादी वा वेट्ठाणिओ वा एयट्ठाणिओ वा । सम्मत्तस्स अणुभागसंकमो णियमा देसघादी । [12]एयट्ठाणिओ वेट्ठाणिओ वा ।

[13]सामित्तं । मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकमो कस्स ? उक्कस्साणुभागं बंधिदूणाव-लियपडिभग्गस्स अण्णदरस्स । [14]एवं सव्वकम्माणं । णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण-मुक्कस्साणुभागसंकमो कस्स ? [15]दंसणमोहणीयक्खवयं मोत्तूण जस्स संतकम्ममत्थि तस्स उक्कस्सोणुभागसंकमो ।

---

(१) पृ० ५। (२) पृ० ६। (३) पृ० ७। (४) पृ० ८। (५) पृ० ९। (६) पृ० १०। (७) पृ० ११। (८) पृ० २०। (९) पृ०२१। (१०)१३ पृ० २२। (११) पृ० २३। (१२ पृ० (२४। (१३) पृ० २७। (१४) पृ० २८। (१५) पृ० २९।

[1]एत्तो जहण्णयं। मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ? सुहुमस्स हद-समुप्पत्तियकम्मेण अण्णदरो। [2]एइंदिओ वा बेइंदिओ वा तेइंदिओ वा चउरिंदिओ वा पंचिंदिओ वा। [3]एवमट्ठण्णं कसायाणं। सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ? समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोहणीओ। [4]सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ? चरिमाणुभागखंडयं संछुहमाणओ। अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ? विसंजोएदूण पुणो तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेण संजोएदूणावलियादीदो। [5]कोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ? चरिमाणुभागबंधस्स चरिमसमयअणि-ल्लेवगो। एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं। [6]लोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ? समयाहियावलियचरिमसमयसकसाओ खवगो। इत्थिवेदस्स जहण्णाणुभाग-संकामओ को होइ? इत्थिवेदक्खवगो तस्सेव चरिमाणुभागखंडए वट्टमाणओ। [7]णवुंसय-वेदस्स जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ? णवुंसयवेदक्खवगो तस्सेव चरिमे अणुभाग-खंडए वट्टमाणओ। छण्णोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामओ को होइ? खवगो तेसिं चेव छण्णोकसायवेदणीयाणं चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणओ।

[8]एयजीवेण कालो। मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अणुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? [9]जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। एवं सोलस-कसाय-णवणोकसायाणं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [10]उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। अणु-क्कस्साणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

[11]एत्तो एयजीवेण कालो जहण्णओ। मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। [12]अजहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा। एवमट्ठ-कसायाणं। सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? [13]जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। अजहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। एवं सम्मामिच्छत्तस्स। [14]णवरि जहण्णाणु-भागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। अजह-

---

(१) पृ० ३०। (२) पृ० ३१। (३) पृ० ३२। (४) पृ० ३३। (५) पृ० ३५। (६) पृ० ३६। (७) पृ० ३७। (८) पृ० ३९। (९) पृ० ४०। (१०) पृ० ४१। (११) पृ० ४२। (१२) पृ० ४३। (१३) पृ० ४४। (१४) पृ० ४५।

ण्णाणुभागसंकामयस्स तिण्णि भंगा। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो सो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [1]उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णाणुभाग-संकामओ केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। अजहण्णाणुभागसंकामओ अणंताणुबंधीणं भंगो। इत्थि-णवुंसयवेद-छण्णोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामओ केवचिरं कालादो होदि? [2]जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अजहण्णाणुभागसंकामयस्स तिण्णि भंगा। तत्थ जो सो सादिओ सपज्जवसिदो सो जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढ-पोग्गलपरियट्टं।

[3]एत्तो एयजीवेण अंतरं। [4]मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण असंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। अणुक्क-स्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। [5]एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं। णवरि बारसकसाय-णवणोकसायाणमणुक्कस्साणुभाग-संकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ। अणंताणुबंधीणमणुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [6]उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण-मुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेणेयसमओ। [7]उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अणुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? णत्थि अंतरं।

एत्तो जहण्णयंतरं। [8]मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा। अजहण्णाणुभागसंकाम-यंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। [9]एवमट्ठकसायाणं। णवरि अजहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? णत्थि अंतरं। अजहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। [10]अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अजहण्णाणुभागसंकाम-यंतरं केवचिरं कालादो होदि? [11]जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। सेसाणं कम्माणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? णत्थि अंतरं। अजहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। [12]उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

---

(१) पृ० ४६। (२) पृ० ४७। (३) पृ० ४८। (४) पृ० ४९। (५) पृ० ५०। (६) पृ० ५१। (७) पृ० ५२। (८) पृ० ५३ (९) पृ० ५४। (१०) पृ० ५५। (११) पृ० ५६। (१२) पृ० ५७।

सण्णियासो मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागं संकामेंतो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जइ संकामओ णियमा उक्कस्सयं संकामेदि। सेसाणं कम्माणं उक्कस्सं वा अणुक्कस्सं वा संकामेदि। उक्कस्सादो अणुक्कस्सं छट्ठाणपदिदं। एवं सेसाणं कम्माणं णादूण णेदव्वं।

[1]जहण्णओ सण्णियासो। मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागं संकामेंतो सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जइ संकामओ णियमा अजहण्णाणुभागं संकामेदि। जहण्णादो अजहण्णमणंतगुणब्भहियं। अट्ठण्णं कम्माणं जहण्णं वा अजहण्णं वा संकामेदि। [2]जहण्णादो अजहण्णं छट्ठाणपदिदं। सेसाणं कम्माणं णियमा अजहण्णं। जहण्णादो अजहण्णमणंतगुणब्भहियं। [3]एवमट्ठकसायाणं। सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागं संकामेंतो मिच्छत्त-सम्मामिच्छत्त-अणंताणुबंधीणमकम्मंसिओ। सेसाणं कम्माणं णियमा अजहण्णं संकामेदि। जहण्णादो अजहण्णमणंतगुणब्भहियं। [4]एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि। णवरि सम्मत्तं विज्जमाणेहि भणियव्वं। पुरिसवेदस्स जहण्णाणुभागं संकामेंतो चदुण्हं कसायाणं णियमा अजहण्णमणंतगुणब्भहियं। कोधादितिए उवरिल्लाणं संकामओ णियमा अजहण्णमणंतगुणब्भहियं। [5]लोहसंजलणे णिरुद्धे णत्थि सण्णियासो।

[6]णाणाजीवेहि भंगविचओ दुविहो—उक्कस्सपदभंगविचओ जहण्णपदभंगविचओ च। तेसिमट्ठपदं काऊण। [7]मिच्छत्तस्स सव्वे जीवा उक्कस्साणुभागस्स असंकामया। सिया असंकामया च संकामओ च। सिया असंकामया च संकामया च। एवं सेसाणं कम्माणं। [8]णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं संकामगा पुव्वं ति भाणिदव्वं।

जहण्णाणुभागसंकमभंगविचओ। मिच्छत्त-अट्ठकसायाणं जहण्णाणुभागस्स संकामया च असंकामया च। [9]सेसाणं कम्माणं जहण्णाणुभागस्स सव्वे जीवा सिया असंकामया। सिया असंकामया च संकामया च।

[10]णाणाजीवेहि कालो। मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति। जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। [11]अणुक्कस्साणुभागसंकामया सव्वद्धा। एवं सेसाणं कम्माणं। णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामया सव्वद्धा। अणुक्कस्साणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं।

[12]एत्तो जहण्णकालो। मिच्छत्त-अट्ठकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति? सव्वद्धा। सम्मत्त-चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति? जहण्णेणेयसमओ। [13]उक्कस्सेण संखेज्जा समया। सम्मा-

(१) पृ० ६१। (२) पृ० ६२। (३) पृ० ६३। (४) पृ० ६४। (५) पृ० ६५। (६) पृ० ६८। (७) पृ० ६६। (८) पृ० ७०। (९) पृ० ७१। (१०) पृ० ७३। (११) पृ० ७४। (१२) पृ० ७५। (१३) पृ० ७६।

मिच्छत्त-अट्ठणोकसायाणं जहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति ? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभागसंकामया केवचिरं कालादो होंति ? जहण्णेण एयसमओ । [1]उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो । एदेसिं कम्माणमजण्णाणुभाग-संकामया केवचिरं कालादो होंति ? सव्वद्धा ।

[2]णाणाजीवेहि अंतरं । मिच्छत्तस्स उक्कस्साणुभागसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ । उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा । अणुक्कस्साणुभागसंकामयाण-मंतरं केवचिरं कालादो होदि ? णत्थि अंतरं । एवं सेसाणं कम्माणं । [3]णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्साणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? णत्थि अंतरं । अणुक्कस्साणुभागसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण छम्मासा । एत्तो जहण्णयंतरं । [4]मिच्छत्तस्स अट्ठकसायस्स जहण्णाणुभाग-संकामयाणं केवचिरं अंतरं ? णत्थि अंतरं । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-चदुसंजलण-णवणो-कसायाणं जहण्णाणुभागसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ । उक्कस्सेण छम्मासा । णवरि तिण्णिसंजलण-पुरिसवेदाणमुक्कस्सेण वासं सादिरेयं । [5]णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकामयंतरमुक्कस्सेण संखेज्जाणि वासाणि । अणंताणुबंधीणं जहण्णाणुभाग-संकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा ।

[6]एदेसिं सव्वेसिमजहण्णाणुभागस्स केवचिरमंतरं ? णत्थि अंतरं ।

[7]अप्पाबहुअं । जहा उक्कस्साणुभागविहत्ती तहा उक्कस्साणुभागसंकमो । एत्तो जहण्णयं । सव्वत्थोवो लोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो । मायासंजलणस्स जहण्णाणु-भागसंकमो अणंतगुणो । [8]माणसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । कोह-संजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंत-गुणो । पुरिसवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभाग-संकमो अणंतगुणो । [9]अणंताणुबंधिमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । कोधस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ । मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ । लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ । हस्सस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । [10]रदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । दुगुंछाए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । भयस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । सोगस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । अरदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । इत्थिवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो । [11]अपच्चक्खाणमाणस्स जहण्णाणु-

(१) पृ० ७७ । (२) पृ० ७८ । (३) पृ० ७९ । (४) पृ० ८० । (५) पृ० ८१ । (६) पृ० ८२ । (७) पृ० ८३ । (८) पृ० ८४ । (९) पृ० ८५ । (१०) पृ० ८६ । (११) पृ० ८७ ।

भागसंकमो अणंतगुणो। कोहस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। पच्चक्खाणमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। कोहस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। [1]मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो।

णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो। सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। अणंताणुबंधिमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। कोहस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। [2]मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। हस्सस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। रदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। पुरिसवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। इत्थिवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। [3]दुगुंछाए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। भयस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। सोगस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। अरदीए जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। णवुंसयवेदस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। अपच्चक्खाणमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। कोधस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। [4]पच्चक्खाणमाणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। कोहस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। लोभस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। माणसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। कोहसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। मायासंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। लोभसंजलणस्स जहण्णाणुभागसंकमो विसेसाहिओ। मिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। [5]जहा णिरयगदीए तहा सेसासु गदीसु।

एइंदिएसु सव्वत्थोवो सम्मत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो। सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। [6]हस्सस्स जहण्णाणुभागसंकमो अणंतगुणो। सेसाणं जहा सम्माइट्ठिबंधे तहा कायव्वो।

[7]भुजगारे त्ति तेरस अणिओगद्दाराणि। तत्थ अट्ठपदं। [8]तं जहा। जाणि एण्हिं फद्दयाणि संकामेदि अणंतरोसक्काविदे अप्पदरसंकमादो बहुगाणि त्ति एस भुजगारो। ओसक्काविदे बहुदरादो एण्हिमप्पदराणि संकामेदि त्ति एस अप्पदरो। [9]ओसक्काविदे एण्हिं च तत्तियाणि संकामेदि त्ति एस अवट्ठिदसंकमो। ओसक्काविदे असंकमादो एण्हिं संकामेदि त्ति एस अवत्तव्वसंकमो। एदेण अट्ठपदेण सामित्तं। [10]मिच्छत्तस्स भुजगार-

(१) पृ० ८८। (२) पृ० ८९। (३) पृ० ९०। (४) पृ० ९१। (५) पृ० ९२। (६) पृ० ९३। (७) पृ० ९४। (८) पृ० ९५। (९) पृ० ९६। (१०) पृ० ९७।

संकामगो को होइ ? मिच्छाइट्ठी अण्णदरो। अप्पदर-अवट्ठिदसंकामओ को होइ ? [1]अण्णदरो। अवत्तव्वसंकामओ णत्थि। एवं सेसाणं कम्माणं सम्मत्त-सम्मामिच्छत्तवज्जाणं। णवरि अवत्तव्वगो च अत्थि। [2]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगारसंकामओ णत्थि। अप्पदर-अवत्तव्वसंकामगो को होइ ? सम्माइट्ठी अण्णदरो। अवट्ठिदसंकामओ को होइ ? [3]अण्णदरो।

एत्तो एयजीवेण कालो। मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। [4]उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अप्पयरसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। अवट्ठिदसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण एयसमओ। [5]उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। सम्मत्तस्स अप्पयरसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ? [6]जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अवट्ठिद-संकामओ केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरो-वमाणि सादिरेयाणि। [7]अवत्तव्वसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। सम्मामिच्छत्तस्स अप्पयर-अवत्तव्वसंकामओ केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमयं। [8]अवट्ठिदसंकामओ केविचरं कालादो होइ ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। सेसाणं कम्माणं भुजगारं जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अप्पयरसंकामओ केविचिरं कालादो होइ ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। [9]णवरि पुरिसवेदस्स उक्कस्सेण दोआवलियाओ समऊणाओ। चदुण्हं संजलणाणमुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अवट्ठिदं जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। अवत्तव्वं जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ।

[10]एत्तो एयजीवेण अंतरं। मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवमसदं सादिरेयं। [11]अप्पयर-संकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण तेवट्ठिसागरोवम-सदं सादिरेयं। अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। [12]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णुक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। [13]अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं।

(१) पृ० ९८। (२) पृ० ९९। (३) पृ० १००। (४) पृ० १०१। (५) पृ० १०२। (६) पृ० १०३। (७) पृ० १०४। (८) पृ० १०५। (९) पृ० १०६। (१०) पृ० १०७। (११) पृ० १०८। (१२) पृ० १०९। (१३) पृ० ११०।

सेसाणं कम्माणं मिच्छत्तभंगो । [1]णवरि अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं । उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । [2]अणंताणुबंधीणमवट्ठिदसंकाम-यंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि ।

णाणाजीवेहि भंगविचओ । मिच्छत्तस्स सव्वे जीवा भुजगारसंकामया च अप्पयर-संकामया च अवट्ठिदसंकामया च । [3]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णव भंगा । सेसाणं कम्माणं सव्वजीवा भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामया । सिया एदे च अवत्तव्वसंकामओ च, सिया एदे च अवत्तव्वसंकामया च ।

[4]णाणाजीवेहि कालो । मिच्छत्तस्स सव्वे संकामया सव्वद्धा । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताण-मप्पयरसंकामया केवचिरं कालादो होंति ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण संखेज्जा समया । [5]णवरि सम्मत्तस्स उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । अवट्ठिदसंकामया सव्वद्धा । अवत्तव्व-संकामया केवचिरं कालादो होंति ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो । अणंताणुबंधीणं भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामया सव्वद्धा । [6]अवत्तव्व संकामया केवचिरं कालादो होंति ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण आवलियाए असंखेज्जदिभागो । एवं सेसाणं कम्माणं । णवरि अवत्तव्वसंकामयाणमुक्कस्सेण संखेज्जा समया ।

एत्तो अंतरं । [7]मिच्छत्तस्स णाणाजीवेहि भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामयाणं णत्थि अंतरं । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होइ ? जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण छम्मासा । अवट्ठिदसंकामयाणं णत्थि अंतरं । अवत्तव्वसंकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ, उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे । [8]अणंताणुबंधीणं भुजगार-अप्पयर-अवट्ठिदसंकामयाणं णत्थि अंतरं । अवत्तव्वसंकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेये । एवं सेसाणं कम्माणं । णवरि अवत्तव्वसंकामयाण-मंतरमुक्कस्सेण संखेज्जाणि वस्साणि ।

[9]अप्पाबहुअं । सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स अप्पयरसंकामया । भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा । अवट्ठिदसंकामया संखेज्जगुणा । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अप्पयरसंकामया । अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा ।[10]अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा । सेसाणं कम्माणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया । अप्पयरसंकामया अणंतगुणा । भुजगार-संकामया असंखेज्जगुणा । अवट्ठिदसंकामया संखेज्जगुणा ।

---

(१) पृ० १११ । (२) पृ० ११२ । (३) पृ० ११३ । (४) पृ० ११४ । (५) पृ० ११५ । (६) पृ० ११६ । (७) पृ० ११७ । (८) पृ० ११८ । (९) पृ० ११९ (१०) पृ० १२० ।

[1]पदणिक्खेवे त्ति तिण्णि अणियोगद्दाराणि । तं जहा । परूवणा सामित्तमप्पाबहुअं च । [2]परूवणाए सव्वेसिं कम्माणमत्थि उक्कस्सिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं । जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं । णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं व ी णत्थि ।

सामित्तं । मिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ? [3]सण्णिपाओग्गजहण्णएण अणुभाग-संकमेण अच्छिदो उक्कस्ससंकिलेसं गदो तदो उक्कस्सयमणुभागं पबद्धो तस्स आवलिया-दीदस्स उक्कस्सिया वड्ढी । [4]तस्स चेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं । उक्कस्सिया हाणी कस्स ? जस्स उक्कस्सयमणुभागसंतकम्मं तेण उक्कस्सयमणुभागखंडयमागाइदं तम्मि खंडये घादिदे तस्स उक्कस्सिया हाणी । [5]तप्पाओग्गजहण्णाणुभागसंकमादो उक्कस्ससंकिलेसं गंतूण जं बंधदि सो बंधो बहुगो । जमणुभागखंडयं गेण्हइ तं विसेसहीणं । एदमप्पाबहुअस्स साहणं । एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिया हाणी कस्स ? [6]दंसणमोहणीयक्खवयस्स विदियअणुभागखंडयपढमसमयसंकामयस्स तस्स उक्कस्सिया हाणी । तस्स चेव से काले उक्कस्सयमवट्ठाणं ।

[7]मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी कस्स ? सुहुमेइंदियकम्मेण जहण्णएण जो अणंत-भागेण वड्ढिदो तस्स जहण्णिया वड्ढी । [8]जहण्णिया हाणी कस्स ? जो वड्ढाविदो तम्मि घादिदे तस्स जहण्णिया हाणी । एगदरत्थमवट्ठाणं । एवमट्ठकसायाणं । [9]सम्मत्तस्स जहण्णिया हाणी कस्स ? दंसणमोहणीयक्खवयस्स समयाहियावलियअक्खीणदंसणमोह-णीयस्स तस्स जहण्णिया हाणी । जहण्णयमवट्ठाणं कस्स ? तस्स चेव दुचरिमे अणुभाग-खंडए हदे चरिमअणुभागखंडए वट्टमाणक्खवयस्स । सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णिया हाणी कस्स ? [10]दंसणमोहणीयक्खवयस्स दुचरिमे अणुभागखंडए हदे तस्स जहण्णिया हाणी । तस्स चेव से काले जहण्णयमवट्ठाणं । अणंताणुबंधीणं जहण्णिया वड्ढी कस्स ? विसंजो-एदूण पुणो मिच्छत्तं गंतूण तप्पाओग्गविसुद्धपरिणामेण विदियसमए तप्पाओग्गजहण्णाणु-भागं बंधिऊण आवलियादीदस्स तस्स जहण्णिया वड्ढी । [11]जहण्णिया हाणी कस्स ? विसंजोएऊण पुणो मिच्छत्तं गंतूण अंतोमुहुत्तसंजुत्ते त्ति तस्स सुहुमस्स हेट्ठदो संतकम्मं । [12]तदो जो अंतोमुहुत्तसंजुत्तो जाव सुहुमकम्मं जहण्णयं ण पावदि ताव घादं करेज्ज । [13]तदो सव्वत्थोवाणुभागे घादिज्जमाणे तस्स जहण्णिया हाणी । तस्सेव से काले जहण्णय-मवट्ठाणं । कोहसंजलणस्स जहण्णिया वड्ढी मिच्छत्तभंगो । जहण्णिया हाणी कस्स ? [14]खवयस्स चरिमसमयबंधचरिमसमयसंकामयस्स । जहण्णयमवट्ठाणं कस्स ? तस्सेव चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणयस्स । [15]एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं । लोह-

(१) पृ० १२१ । (२) १२२ । (३) पृ० १२३ । (४) पृ० १२४ । (५) पृ० १२५ । (६) पृ० १२६ । (७) पृ० १२७ । (८) पृ० १२८ । (९) पृ० १२९ । (१०) पृ० १३० । (११) पृ० १३१ । (१२) पृ० १३२ । (१३) पृ० १३३ । (१४) पृ० १३४ । (१५) पृ० १३५ ।

संजलणस्स जहण्णिया वड्ढी मिच्छत्तभंगो। जहण्णिया हाणी कस्स? खवयस्स समयाहियावलियसकसायस्स। जहण्णयमवट्ठाणं कस्स? दुचरिमे अणुभागखंडए हदे चरिमे अणुभागखंडए वट्टमाणयस्स। इत्थिवेदस्स जहण्णिया वड्ढी मिच्छत्तभंगो। जहण्णिया हाणी कस्स? चरिमे अणुभागखंडए पढमसमयसंकामिदे तस्स जहण्णिया हाणी। तस्सेव विदियसमए जहण्णयमवट्ठाणं। [1]एवं णवुंसयवेद-छण्णोकसायाणं।

[2]अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स उक्कस्सिया हाणी। [3]वड्ढी अवट्ठाणं च विसेसाहियं। एवं सोलसकसाय-णवणोकसायाणं। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमुक्कस्सिया हाणी अवट्ठाणं च सरिसं। [4]जहण्णयं। मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणसंकमो च तुल्लो। एवमट्ठकसायाणं। सम्मत्तस्स सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी। जहण्णयमवट्ठाणमणंतगुणं। [5]सम्मामिच्छत्तस्स जहण्णिया हाणी अवट्ठाणसंकमो च तुल्लो। अणंताणुबंधीणं सव्वत्थोवा जहण्णिया वड्ढी। जहण्णिया हाणी अवट्ठाणसंकमो च अणंतगुणो। चदुसंजलण-पुरिसवेदाणं सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी। जहण्णयमवट्ठाणं अणंतगुणं। [6]जहण्णिया वड्ढी अणंतगुणा। अट्ठणोकसायाणं जहण्णिया हाणी अवट्ठाणसंकमो च तुल्लो थोवो। जहण्णिया वड्ढी अणंतगुणा।

[7]वड्ढीए तिण्णि अणिओगद्दाराणि—समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं च। समुक्कित्तणा। मिच्छत्तस्स अत्थि छव्विहा वड्ढी छव्विहा हाणी अवट्ठाणं च। [8]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमत्थि अणंतगुणहाणी अवट्ठाणमवत्तव्वयं च। [9]अणंताणुबंधीणमत्थि छव्विहा वड्ढी छव्विहा हाणी अवट्ठाणमवत्तव्वयं च। एवं सेसाणं कम्माणं।

[10]सामित्तं। मिच्छत्तस्स छव्विहा वड्ढी पंचविहा हाणी कस्स? मिच्छाइट्ठिस्स अण्णयरस्स। अणंतगुणहाणी अवट्ठिदसंकमो कस्स? [11]अण्णयरस्स। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणमणंतगुणहाणिसंकमो कस्स? दंसणमोहणीयं खवेंतस्स। अवट्ठाणसंकमो कस्स? अण्णदरस्स। अवत्तव्वसंकमो कस्स? विदियसमयउवसमसम्माइट्ठिस्स। [12]सेसाणं कम्माणं मिच्छत्तभंगो। णवरि अणंताणुबंधीणमवत्तव्वं विसंजोएदूण पुणो मिच्छत्तं गंतूण आवलियादीदस्स। सेसाणं कम्माणमवत्तव्वमुवसामेदूण परिवदमाणस्स।

[13]अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स अणंतभागहाणिसंकामया। [14]असंखेज्जभागहाणिसंकामया असंखेज्जगुणा। संखेज्जभागहाणिसंकामया संखेज्जगुणा। संखेज्जगुण-

---

(१) पृ० १३७। (२) पृ० १३८। (३) पृ० १३९। (४) पृ० १४०। (५) पृ० १४१। (६) पृ० १४२। (७) पृ० १४३। (८) पृ० १४५। (९) पृ० १४६। (१०) पृ० १४७। (११) पृ० १४८। (१२) पृ० १४९। (१३) पृ० १५०। (१४) पृ० १५१।

हाणिसंकामया संखेज्जगुणा । [1]असंखेज्जगुणहाणिसंकामया असंखेज्जगुणा । अणंत-भागवड्डिसंकामया असंखेज्जगुणा । असंखेज्जभागवड्डिसंकामया असंखेज्जगुणा । [2]संखेज्ज-भागवड्डिसंकामया संखेज्जगुणा । संखेज्जगुणवड्डिसंकामया संखेज्जगुणा । असंखेज्ज-गुणवड्डिसंकामया असंखेज्जगुणा । अणंतगुणहाणिसंकामया असंखेज्जगुणा । [3]अणंतगुणवड्डिसंकामया असंखेज्जगुणा । अवट्ठिदसंकामया संखेज्जगुणा । सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अणंतगुणहाणिसंकामया । अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा । अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा । [4]सेसाणं कम्माणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया । अणंतभागहाणिसंकामया अणंतगुणा । सेसाणं संकामया मिच्छत्तभंगो ।

[5]एत्तो ट्ठाणाणि कायव्वाणि । जहा संतकम्मट्ठाणाणि तहा संकमट्ठाणाणि । तहा वि परूवणा कायव्वा । [6]उक्कस्सए अणुभागबंधट्ठाणे एगं संतकम्मं तमेगं संकमट्ठाणं । दुचरिमे अणुभागबंधट्ठाणे एवमेव । एवं ताव जाव पच्छाणुपुव्वीए पढममणंतगुणहीण-बंधट्ठाणमपत्तो त्ति । [7]पुव्वाणुपुव्वीए गणिज्जमाणे जं चरिममणंतगुणं बंधट्ठाणं तस्स हेट्ठा अणंतरमणंतगुणहीणमेदम्मि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । [8]ताणि संतकम्म-ट्ठाणाणि ताणि चेव संकमट्ठाणाणि । तदो पुणो बंधट्ठाणाणि संकमट्ठाणाणि च ताव तुल्लाणि जाव पच्छाणुपुव्वीए विदियमणंतगुणहीणबंधट्ठाणं । [9]विदियअणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्सुवरिल्ले अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । एवमणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्सुवरि अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि । [10]एवमणंतगुणहीणबंधट्ठाणस्स उवरिल्ले अंतरे असंखेज्जलोगमेत्ताणि घादट्ठाणाणि भवंति णत्थि अण्णम्मि । एवं जाणि बंधट्ठाणाणि ताणि णियमा संकमट्ठाणाणि । जाणि संकमट्ठाणाणि ताणि बंधट्ठाणाणि वा ण वा । [11]तदो बंधट्ठाणाणि थोवाणि । संतकम्मट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । जाणि च संतकम्मट्ठाणाणि ताणि संकमट्ठाणाणि । अप्पाबहुअं जहा सम्माइट्ठिगे बंधे तहा ।

पदेससंकमो अत्थाहियारो

[12]पदेससंकमो । तं जहा । मूलपदेससंकमो णत्थि । उत्तरपयडिपदेससंकमो । अट्ठपदं । [13]जं पदेसग्गमण्णपयडिं णिज्जदे जत्तो पयडीदो तं पदेसग्गं णिज्जदि तिस्से पयडीए सो पदेससंकमो । जहा मिच्छत्तस्स पदेसग्गं सम्मत्ते संछुहदि तं पदेसग्गं मिच्छत्तस्स पदेस-संकमो । एवं सव्वत्थ । [14]एदेण अट्ठपदेण तत्थ पंचविहो संकमो । तं जहा । उव्वेल्लण-

---

(१) पृ० १५२ । (२) पृ० १५३ । (३) पृ० १५४ । (४) पृ० १५५ । (५) पृ० १५६ । (६) पृ० १५७ । (७) पृ० १५८ । (८) पृ० १५९ । (९) पृ० १६० । (१०) पृ० १६१ । (११) पृ० १६२ । (१२) पृ० १६८ । (१३) पृ० १६९ । (१४) पृ० १७० ।

संकमो विज्झादसंकमो अधापवत्तसंकमो गुणसंकमो सव्वसंकमो च । [1]उव्वेल्लणसंकमे पदेसग्गं थोवं । [2]विज्झादसंकमे पदेसग्गमसंखेज्जगुणं । अधापवत्तसंकमे पदेसग्गमसंखेज्ज-गुणं । गुणसंकमे पदेसग्गमसंखेज्जगुणं । सव्वसंकमे पदेसग्गमसंखेज्जगुणं ।

[3]एत्तो सामित्तं । [4]मिच्छत्तस्स उक्कस्सयपदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ सत्तमादो पुढवीदो उव्वट्टिदो । दो तिण्णि भवग्गहणाणि पंचिंदियतिरिक्खपज्जत्तएसु उववण्णो । [5]अंतोमुहुत्तेण मणुसेसु आगदो । सव्वलहुं दंसणमोहणीयं खवेदुमाढत्तो । जाधे मिच्छत्तं सम्मामिच्छत्ते सव्वं संछुभमाणं संछुद्धं ताधे तस्स मिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो । सम्मत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? [6]गुणिदकम्मंसिएण सत्तमाए पुढवीए णेरइएण मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंतकम्ममंतोमुहुत्तेण होहिदि त्ति सम्मत्तमुप्पाइदं, सव्वुक्कस्सियाए पूरणाए सम्मत्तं पूरिदं, तदो उवसंतद्धाए पुण्णाए मिच्छत्तमुदीरयमाणस्स पढमसमयमिच्छाइट्ठिस्स तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो । [7]सो पुण अधापवत्तसंकमो । [8]सम्मा-मिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? जेण मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेसग्गं सम्मामिच्छत्ते पक्खित्तं तेणेव जाधे सम्मामिच्छत्तं सम्मत्ते संपक्खित्तं ताधे तस्स सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो । अणंताणुबंधीणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? [9]सो चेव सत्तमाए पुढवीए णेरइयो गुणिदकम्मंसिओ अंतोमुहुत्तेणेव तेसिं चेव उक्कस्सपदेससंतकम्मं होहिदि त्ति उक्कस्सजोगेण उक्कस्ससंकिलेसेण च णीदो, तदो तेण रहस्सकाले सेसे सम्मत्तमुप्पाइयं । पुणो सो चेव सव्वलहुमणंताणुबंधीणं विसंजोएदुमाढत्तो तस्स चरिमट्ठिदिखंडयं चरिम-समयसंछुहमाणयस्स तेसिमुक्कस्सओ पदेससंकमो । [10]अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ सव्वलहुं मणुसगइमागदो, अट्ठवस्सिओ खवणाए अब्भुट्ठिदो, तदो अट्ठण्हं कसायाणमपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सओ पदेससंकमो । एवं छण्णोकसायाणं । [11]इत्थिवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मंसिओ असंखेज्जवस्साउएसु इत्थिवेदं पूरेदूण तदो कमेण पूरिदकम्मंसिओ खवणाए अब्भुट्ठिदो, तदो चरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स इत्थिवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो । [12]पुरिसवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? गुणिदकम्मसिओ इत्थि-पुरिस-णवुंसयवेदे पूरेदूण तदो सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो पुरिसवेदस्स अपच्छिम-ट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स पुरिसवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो । णवुंसय-वेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स ? [13]गुणिदकम्मंसिओ ईसाणादो आगदो सव्वलहुं

(१) पृ० १७२ । (२) पृ० १७३ । (३) पृ० १७६ (४) पृ० १७७ । (५) पृ० १७८ । (६) पृ० १७६ । (७) पृ० १८० । (८) पृ० १८१ । (९) पृ० १८२ (१०) पृ० १८३ । (११) पृ० १८४ । (१२) पृ० १८५ । (१३) पृ० १८६ ।

खवेदुमाढत्तो, तदो णवुंसयवेदस्स अपच्छिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयसंछुहमाणयस्स तस्स णवुंसयवेदस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। कोहसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? जेण पुरिसवेदो उक्कस्सओ संछुद्धो कोधे तेणेव जाधे माणे कोधो सव्वसंकमेण संछुभदि ताधे तस्स कोधस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो। [1]एदस्स चेव माणसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कायव्वो। णवरि जाधे माणसंजलणो मायासंजलणे संछुभइ ताधे। एदस्स चेव मायासंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कायव्वो। णवरि जाधे मायासंजलणो लोभसंजलणे संछुब्भइ ताधे। लोभसंजलणस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो कस्स? [2]गुणिद-कम्मंसिओ सव्वलहुं खवणाए अब्भुट्ठिदो अंतरं से काले कादूण लोहस्स असंकामगो होहिदि त्ति तस्स लोहस्स उक्कस्सओ पदेससंकमो।

[3]एत्तो जहण्णयं? मिच्छत्तस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स? [4]खविदकम्मंसिओ एइंदियकम्मेण जहण्णएण मणुसेसु आगदो, सव्वलहुं चेव सम्मत्तं पडिवण्णो, संजमं संजमासंजमं च बहुसो लभिदाउगो, चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता वेछावट्ठिसागरो० सादिरेयाणि सम्मत्तमणुपालिदं, तदो मिच्छत्तं गदो, अंतोमुहुत्तेण पुणो तेण सम्मत्तं लद्धं, पुणो सागरोवमपुधत्तं सम्मत्तमणुपालिदं, तदो दंसणमोहणीयक्खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स चरिमसमयअधापवत्तकरणस्स मिच्छत्तस्स जहण्णओ पदेससंकमो। [5]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स? एसो चेव जीवो मिच्छत्तं गदो, तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागं [6]गंतूण अप्पप्पणो दुचरिमट्ठिदिखंडयं चरिमसमयउव्वेल्लमाणयस्स तस्स जहण्णओ पदेससंकमो। [7]अणंताणुबंधीणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो, संजमं संजमासंजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो एइंदिएसु पलिदोवमस्स असंखे०भागमच्छिदो जाव उवसामय-समयपबद्धा णिग्गलिदा त्ति। तदो पुणो तसेसु आगदो, सव्वलहुं सम्मत्तं लद्धं, अणंताणु-बंधिणो च विसंजोइदा, पुणो मिच्छत्तं गंतूण अंतोमुहुत्तं संजोएदूण पुणो तेण सम्मत्तं [8]लद्धं, तदो सागरोवमवेछावट्ठीओ अणुपालिदं, तदो विसंजोएदुमाढत्तो तस्स अधापवत्त-करणचरिमसमए अणंताणुबंधीणं जहण्णओ पदेससंकमो। [9]अट्ठण्हं कसायाणं जहण्णओ पदेससंकमो कस्स? [10]एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो, संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो, चत्तारि वारे कसाए उवसामित्ता तदो एइंदिएसु गदो, असंखेज्जाणि वस्साणि अच्छिदो जाव उवसामयसमयपबद्धा णिग्गलंति। तदो तसेसु आगदो, संजमं सव्वलहुं लद्धो, पुणो कसायक्खवणाए उवट्ठिदो तस्स अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए अट्ठण्हं

---

(१) पृ० १८७। (२) पृ० १८८। (३) पृ० १९४। (४) पृ० १९५। (५) पृ० १९८। (६) पृ० १९९। (७) पृ० २००। (८) पृ० २०१। (९) पृ० २०२। (१०) पृ० २०३।

कसायाणं जहण्णओ पदेससंकमो । [1]एवमरइ-सोगाणं । हस्स-रइ-भय-दुगुंछाणं पि एवं चेव । णवरि अपुव्वकरणस्सावलियपविट्ठस्स । [2]कोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? उवसामयस्स चरिमसमयपबद्धो जाधे उवसामिज्जमाणो उवसंतो ताधे तस्स कोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो । एवं माणमायासंजलण-पुरिसवेदाणं ।[3] लोह-संजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो, संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण कसाएसु किं पि णोउवसामेदि । दीहं संजमद्धमणुपालिदूण खवणाए अब्भुट्ठिदो तस्स अपुव्वकरणस्स आवलियपविट्ठस्स लोहसंजलणस्स जहण्णओ पदेससंकमो । [4]णवुंसयवेदस्स जहण्णओ पदेससंकमो कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण तसेसु आगदो, तिपलिदोवमिएसु उववण्णो, तिपलिदोवमे अंतोमुहुत्त सेसे सम्मत्तमुप्पाइदं तदो पाए सम्मत्तेण अपडिवदिदेण सागरोवमछावट्ठिमणुपालिदेण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धो, चत्तारि वारे कसाए उवसामिदा । तदो सम्मामिच्छत्तं गंतूण पुणो अंतोमुहुत्तेण सम्मत्तं घेत्तूण सागरो मछावट्ठिमणुपालिण मणुसभवग्गहणे सव्वचिरं संजममणुपालिदूण खवणाए उवट्ठिदो तस्स अधापवत्तकरणस्स चरिमसमए णवुंसयवेदस्स जहण्णओ पदेससंकमो । [5]एवं चेव इत्थिवेदस्स वि । णवरि तिपलिदोवमिएसु ण अच्छिदाउगो ।

[6]एयजीवेण कालो । [7]सव्वेसिं कम्माणं जहण्णुक्कस्सपदेससंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ ।

[8]अंतरं । सव्वेसिं कम्माणमुक्कस्सपदेससंकामयस्स णत्थि अंतरं । [9]अथवा सम्मत्ताणंताणुबंधीणं उक्कस्ससंकामयस्स अंतरं केवचिरं ? जहण्णेण असंखेज्जा लोगा ।[10]उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं ।[11]एत्तो जहण्णयं । कोहसंजलण-माणसंजलण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं जहण्णपदेससंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? [12]जहण्णेण अंतोमुहुत्तं । उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं । सेसाणं कम्माणं जाणिऊण णेदव्वं ।

[13]सण्णियासो । मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंकामओ सम्मत्ताणंताणुबंधीणमसंकामओ । सम्मामिच्छत्तस्स णियमा अणुक्कस्सं पदेसं संकामेदि । उक्कस्सादो अणुक्कस्समसंखेज्जगुणहीणं । [14]सेसाणं कम्माणं संकामओ णियमा अणुक्कस्सं संकामेदि । उक्कस्सादो अणुक्कस्सं णियमा असंखेज्जगुणहीणं । णवरि लोभसंजलणं विसेसहीणं संकामेदि । सेसाणं कम्माणं साहेयव्वं । [15]सव्वेसिं कम्माणं जहण्णसण्णियासो वि साहेयव्वो ।

---

(१) पृ० २०४ । (२) पृ० २०५ । (३) पृ० २०६ । (४) पृ० २०७ । (५) पृ० २०८ । (६) पृ० २११ । (७) पृ० २१२ । (८) पृ० २२३ । (९) पृ० २२४ । (१०) पृ० २२५ । (११) पृ० २३० । (१२) पृ० २३१ । (१३) पृ० २३७ । (१४) पृ० २३८ । (१५) पृ० २४३ ।

[1]अप्पाबहुअं । सव्वत्थोवो सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंकमो । अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सओ पदेससंकमो असंखेज्जगुणो । कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । मायाए उक्कस्स-पदेससंकमो विसेसाहिओ । लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । [2]मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । अणंताणुबंधि-माणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । मिच्छत्तस्स उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । लोभ-संजलणे उक्कस्सपदेससंकमो अणंतगुणो । [3]हस्से उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो । रदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंकमो संखेज्जगुणो । सोगे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । अरदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । [4]दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । भए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । कोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो संखेज्जगुणो । माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । [5]मायासंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ ।

णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंकमो , सम्मामिच्छत्ते उक्कस्सपदेस-संकमो असंखेज्जगुणो । अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो । [6]कोधे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । लोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । लोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । मिच्छत्ते उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो । अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो । कोधे उक्कस्सपदेससंकमो विसे-साहिओ । मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । [7]लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । हस्से उक्कस्सपदेससंकमो अणंतगुणो । रदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसा-हिओ । इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंकमो संखेज्जगुणो । सोगे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । अरदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेस-संकमो विसेसाहिओ । दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । भए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ । [8]माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो

---

(१) पृ० २६५ । (२) पृ० २६६ । (३) पृ० २६७ । (४) पृ० २६८ । (५) पृ० २६९ । (६) पृ० २७० । (७) पृ० २७१ । (८) पृ० २७२ ।

विसेसाहिओ। कोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायासंजलणे उक्कस्सपदेस-संकमो विसेसाहिओ। लोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। एवं सेसासु गदीसु णेदव्वं।

[1]तदो एइंदिएसु सव्वत्थोवो सम्मत्ते उक्कस्सपदेससंकमो। सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्स-पदेससंकमो असंखेज्जगुणो। अपच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोहे उक्कस्स-पदेससंकमो विसेसाहिओ। पच्चक्खाणमाणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। [2]मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। अणंताणुबंधिमाणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। कोहे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। हस्से उक्कस्सपदेससंकमो अणंतगुणो। रदीए उक्कस्स-पदेससंकमो विसेसाहिओ। इत्थिवेदे उक्कस्सपदेससंकमो संखेज्जगुणो। सोगे उक्कस्स-पदेससंकमो विसेसाहिओ। अरदीए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। णवुंसयवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। दुगुंछाए उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। भए उक्कस्स-पदेससंकमो विसेसाहिओ। पुरिसवेदे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। [3]माणसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। कोहसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायासंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभसंजलणे उक्कस्सपदेससंकमो विसेसाहिओ।

एत्तो जहण्णपदेससंकमदंडओ। सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णपदेससंकमो। सम्मा-मिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। [4]अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। [5]अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। कोहे जहण्ण-पदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोहे जहण्णपदेस-संकमो विसेसाहिओ। पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। कोहे जहण्ण-पदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभे जहण्णपदेस-संकमो विसेसाहिओ। णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंकमो अणंतगुणो। इत्थिवेदे जहण्णपदेस-संकमो असंखेज्जगुणो। [6]सोगे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। अरदीए जहण्णपदेस-

(१) पृ० २७३। (२) पृ० २७४। (३) पृ० २७५। (४) पृ० २७६। (५) पृ० २७८। (६) पृ० २७९।

संकमो विसेसाहिओ। कोहसंजलणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। माणसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। पुरिसवेदे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। [1]मायासंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। हस्से जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। रदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। दुगुंछाए जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो। भए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

[2]णिरयगईए सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णपदेससंकमो। सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। [3]अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। इत्थिवेदे जहण्णपदेससंकमो अणंतगुणो। [4]णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो। पुरिसवेदे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। हस्से जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो। रदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। सोगे जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो। अरदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। दुगुंछाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। [5]भए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। माणसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। कोहसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायासंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोहसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। जहा णिरयगईए तहा तिरिक्खगईए। [6]देवगईए णाणत्तं, णवुंसयवेदादो इत्थिवेदो असंखेज्जगुणो।

एइंदिएसु सव्वत्थोवो सम्मत्ते जहण्णपदेससंकमो। [7]सम्मामिच्छत्ते जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। अणंताणुबंधिमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। अपच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो असंखेज्जगुणो। [8]कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। पच्चक्खाणमाणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोभे जहण्णपदेससंकमो

(१) पृ० २८०। (२) पृ० २८१। (३) पृ० २८२। (४) पृ० २८३। (५) पृ० २८४। (६) पृ० २८५। (७) पृ० २८६। (८) पृ० २८७।

विसेसाहिओ। पुरिसवेदे जहण्णपदेससंकमो अणंतगुणो। इत्थिवेदे जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो। हस्से जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो। रदीए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। [1]सोगे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। अरदीए जहण्णपदेससंकमो संखेज्जगुणो। णवुंसयवेदे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। दुगुंछाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। भए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। माणसंजलणे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। कोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। [2]मायाए जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ। लोहे जहण्णपदेससंकमो विसेसाहिओ।

भुजगारस्स अट्ठपदं। एण्हिं पदेसे बहुदरगे संकामेदि त्ति उस्सक्काविदो अप्पदरसंकमादो एसो भुजगारसंकमो। [3]एण्हिं पदेसअप्पदरगे संकामेदि ओसक्काविदे बहुदरपदेससंकमादो एस अप्पयरसंकमो। ओसक्काविदे एण्हिं च तत्तिगे चेव पदेसे संकामेदि त्ति एस अवट्ठिदसंकमो। असंकमादो संकामेदि त्ति अवत्तव्वसंकमो। [4]एदेण अट्ठपदेण तत्थ समुक्कित्तणा। मिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिद-अवत्तव्वसंकामया अत्थि। [5]एवं सोलसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं। एवं चेव सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-इत्थिवेद-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं। णवरि अवट्ठिदसंकामगा णत्थि।

[6]सामित्तं। मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामओ को होइ? पढमसम्मत्तमुप्पादयमाणगो पढमसमए अवत्तव्वसंकामगो। सेसेसु समएसु जाव गुणसंकमो ताव भुजगारसंकामगो। [7]जो वि दंसणमोहणीयक्खवगो अपुव्वकरणस्स पढमसमयमादिं कादूण जाव मिच्छत्तं सव्वसंकमेण संछुहदि त्ति ताव मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो। जो वि पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो सम्मत्तमागदो तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स जं बंधादो आवलियादीदं मिच्छत्तस्स पदेसग्गं तं विज्झादसंकमेण संकामेदि। आवलियचरिमसमयमिच्छाइट्ठिमादिं कादूण [8]जाव चरिमसमयमिच्छाइट्ठि त्ति एत्थ जे समयपबद्धा ते समयपबद्धे पढमसमयसम्माइट्ठि त्ति ण संकामेइ। सेकालप्पहुडि जस्स जस्स बंधावलिया पुण्णा तदो तदो सो संकामिज्जदि। एवं पुव्वुप्पाइदेण सम्मत्तेण जो सम्मत्तं पडिवज्जइ तं दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति ताव मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो होज्ज। [9]णाहु सव्वत्थ आवलियाए भुजगारसंकमो जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेणावलिया समयूणा। [10]एवं तिसु कालेसु मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो। तं जहा। उवसामगदुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव गुणसंकमो त्ति ताव णिरंतरं भुजगारसंकमो। खवगस्स वा जाव

(१) पृ० २८८। (२) पृ० २८६। (३) पृ० २६०। (४) पृ० २६१। (५) पृ० २६२ (६) पृ० २६४। (७) पृ० २६५। (८) पृ० २६६। (९) पृ० २६७। (१०) पृ० २६८।

गुणसंकमेण खविज्जदि मिच्छत्तं ताव णिरंतरं भुजगारसंकमो। पुव्वुप्पादिदेण वा सम्मत्तेण जो सम्मत्तं पडिवज्जदि तं दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति एत्थ जत्थ वा तत्थ वा जहण्णेण एयसमयं, उक्कस्सेण आवलिया [१]समयूणा भुजगारसंकमो होज्ज। एवमेदेसु तिसु कालेसु मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो। सेसेसु समएसु जइ संकामगो अप्पयरसंकामगो वा अवत्तव्वसंकामगो वा। अवट्ठिदसंकामगो मिच्छत्तस्स को होइ? पुव्वुप्पादिदेण सम्मत्तेण जो सम्मत्तं पडिवज्जदि जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति एत्थ होज्ज अवट्ठिदसंकामगो अण्णम्मि णत्थि। [२]सम्मत्तस्स भुजगारसंकामगो को होदि? सम्मत्तमुव्वेल्लमाणयस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए सव्वम्हि चेव भुजगारसंकामगो। तव्वदिरित्तो जो संकामगो सो अप्पयरसंकामगो वा अवत्तव्वसंकामगो वा। सम्मामिच्छत्तस्स भुजगारसंकामगो को होइ? उव्वेल्लमाणयस्स अपच्छिमे ट्ठिदिखंडए सव्वम्हि चेव। [३]खवगस्स वा जाव गुणसंकमेण संछुहदि सम्मामिच्छत्तं ताव भुजगारसंकामगो। पढमसम्मत्तमुप्पादयमाणयस्स वा तदियसमयप्पहुडि जाव विज्झादसंकमपढमसमयादो त्ति। [४]तव्वदिरित्तो जो संकामगो सो अप्पदरसंकामगो वा अवत्तव्वसंकामगो वा। सोलसकसायाणं भुजगारसंकामगो अप्पदरसंकामगो अवट्ठिदसंकामगो अवत्तव्वसंकामगो को होदि? अण्णदरो। [५]एवं पुरिसवेदभय-दुगुंछाणं। [५]णवरि पुरिसवेदअवट्ठिदसंकामगो णियमा सम्माइट्ठी। [६]इत्थि-णवुंसयवेदहस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुजगार-अप्पदर-अवत्तव्वसंकमो कस्स? अण्णदरस्स।

[७]कालो एयजीवस्स। मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि? [८]जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण आवलिया समयूणा। [९]अथवा अंतोमुहुत्तं। अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि? एक्को वा समओ जाव आवलिया दुसमयूणा। [१०]अथवा अंतोमुहुत्तं। तदो समयुत्तरो जाव छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। [११]अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण संखेज्जा समया। [१२]अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। सम्मत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि? [१३]जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। सम्मा-

---

(१) पृ० २९९ (२) पृ० ३००। (३) पृ० ३०१। (४) पृ०३०२। (५) पृ० ३०३। (६) पृ० ३०४। (७) पृ० ३०६। (८) पृ० ३०७। (९) पृ० ३०८। (१०) पृ० ३०९। (११) पृ० ३१०। (१२) पृ० ३११। (१३) पृ० ३१२।

मिच्छत्तस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? एको वा दो वा समया एवं समयुत्तरो उक्कस्सेण जाव चरिमुव्वेल्लणकंडयुक्कीरणा त्ति। [1]अथवा सम्मत्तमुप्पादेमाणयस्स वा तदो खवेमाणयस्स वा जो गुणसंकमकालो सो वि भुजगारसंकामयस्स कायव्वो। अप्पदरसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [2]एयसमयो वा। उक्कस्सेण छावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। [3]अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। अणंताणुबंधीणं भुजगारसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। [4]अप्पदरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। [5]उक्कस्सेण संखेज्जा समया। अवत्तव्वसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। बारसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं भुजगार-अप्पदरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। [6]अवट्ठिदसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण संखेज्जा समया। अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। इत्थिवेदस्स भुजगारसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? [7]जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अप्पयरसंकमं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एगसमओ। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि संखेज्जवस्सब्भहियाणि। [8]अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। णवुंसयवेदस्स अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? [9]जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि। सेसाणि इत्थिवेदभंगो। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुजगार-अप्पयरसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। [10]उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अवत्तव्वसंकमो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णुक्कस्सेण एयसमओ। एवं चदुगदीसु ओघेण साधेदूण णेदव्वो।

[11]एइंदिएसु सव्वेसिं कम्माणमवत्तव्वसंकमो णत्थि। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं भुजगारसंकामओ केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। [12]उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अप्पदरसंकामगो केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणमोघअपच्चक्खाणावरणभंगो। [13]सत्तणोकसायाणं ओघहस्स-रदीणं भंगो।

(१) पृ० ३१३। (२) पृ० ३१४। (३) पृ० ३१५। (४) पृ० ३१६। (५) पृ० ३१७। (६) पृ० ३१८। (७) पृ० ३१९। (८) पृ० ३२०। (९) पृ० ३२१। (१०) पृ० ३२२। (११) पृ० ३२६। (१२) पृ० ३२७। (१३) पृ० ३२८।

एयजीवेण अंतरं। मिच्छत्तस्स भुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ वा दुसमओ वा, एवं णिरंतरं जाव तिसमयूणावलिया। [1]अथवा जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [2]उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। एवमप्पदरावट्ठिदसंकामयंतरं। [3]अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। सम्मत्तस्स भुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागो। [4]उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अप्पदरावत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। [5]उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। सम्मामिच्छत्तस्स भुजगार-अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? [6]जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? [7]जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। अणंताणुबंधीणं भुजगार-अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि सादिरेयाणि। [8]अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ। [9]उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। [10]बारसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं भुजगारप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो। अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। [11]उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा। णवरि पुरिसवेदस्स उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। सव्वेसिमवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। [12]इत्थिवेदस्स भुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि संखेज्जवस्सब्भहियाणि। अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेणेयसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? [13]जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। णवुंसयवेदभुजगारसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण वेछावट्ठिसागरोवमाणि तिण्णि पलिदोवमाणि सादिरेयाणि। अप्पयरसंकामयंतरं केविचरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं। अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचितरं कालादो होदि ? [14]जहण्णेण अंतोमुहुत्तं। उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गलपरियट्टं। हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं भुजगार-अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ?

---

(१) पृ० ३२६। (२) पृ० ३३०। (३) पृ० ३३१। (४) पृ० ३३२। (५) पृ० ३३३। (६) पृ० ३३४। (७) पृ० ३३५। (८) पृ० ३३६ (९) पृ० ३३७। (१०) पृ० ३३८। (११) पृ० ३३९। (१२) पृ० ३४०। (१३) पृ० ३४१। (१४) पृ० ३४२।

जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं । कधं ताव हस्स-रइ-अरदि-सोगाणमेयसमय-मंतरं ? [1]हस्स-रदि-भुजगारसंकामयंतरं जइ इच्छसि अरदि-सोगाणमेयसमयं बंधावेदव्वो। जइ अप्पयरसंकामयंतरमिच्छसि हस्स-रदीओ एयसमयं बंधावेयव्वाओ। अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? [2]जहण्णेण अंतोमुहुत्तं । उक्कस्सेण उवड्ढपोग्गल-परियट्टं । गदीसु च साहेयव्वं ।

[3]एइंदिएसु सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं णत्थि किंचि वि अंतरं । सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणं भुजगार-अप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो । [4]अवट्ठिदसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण अणंतकालमसंखेज्जा पोग्गलपरियट्टा । सेसाणं सत्तणोकसायाणं भुजगारअप्पयरसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण अंतोमुहुत्तं ।

[5]णाणाजीवेहि भंगविचयो । अट्ठपदं कायव्वं । जा जेसु पयडी अत्थि तेसु पयदं । सव्वजीवा मिच्छत्तस्स सिया अप्पयरसंकामया च असंकामया च । [6]सिया एदे च भुजगारसंकामओ च अवट्ठिदसंकामओ च अवत्तव्वसंकामगो च । एवं सत्तावीसभंगा । समत्तस्स सिया अप्पयरसंकामया च असंकामया च णियमा । [7]सेससंकामया भजियव्वा । सम्मामिच्छत्तस्स अप्पयरसंकामया णियमा । सेससंकामया भजियव्वा । सेसाणं कम्माणं अवत्तव्वसंकामगा च असंकामगा च भजिदव्वा । [8]सेसा णियमा । णवरि पुरिसवेदस्स-वट्ठिदसंकामया भजियव्वा । [9]णाणाजीवेहि कालो एदाणुमाणिय णेदव्वो ।

[10]णाणाजीवेहि अंतरं । [11]मिच्छत्तस्स भुजगार-अवत्तव्वसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण सत्त रादिंदियाणि । अप्पयरसंकामयाण-मंतरं केवचिरं कालादो होदि ? णत्थि अंतरं । [12]अवट्ठिदसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा । सम्मत्तस्स भुजगारसंकामयाणमंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । [13]उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेये । अप्पयरसंकामयाणं णत्थि अंतरं । अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ । उक्कस्सेण सत्त रादिंदियाणि । [14]सम्मामिच्छ-त्तस्स भुजगार-अवत्तव्वसंकामयंतरं केवचिरं कालादो होदि ? जहण्णेण एयसमओ ।

---

(१) पृ० ३४३ । (२) पृ० ३४४ । (३) पृ० ३४९ (४) पृ० ३५० । (५) पृ० ३५१ । (६) पृ० ३५२ । (७) पृ० ३५३ । (८) पृ० ३५४ । (९) पृ० ३५६ । (१०) पृ० ३६४ । (११) पृ० ३६५ । (१२) पृ० ३६६ । (१३) पृ० ३६७ । (१४) पृ० ३६८ ।

उक्कस्सेण सत्त रादिंदियाणि। णवरि अवत्तव्वसंकामयाणमुक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेये। [1]अप्पयरसंकामयाणं णत्थि अंतरं। अणंताणुबंधीणं भुजगार-अप्पदर-अवट्ठिदसंकामयंतरं णत्थि। अवत्तव्वसंकामयाणमंतरं केवचिरं? जहण्णेण एयसमओ। [2]उक्कस्सेण चउवीसमहोरत्ते सादिरेगे। एवं सेसाणं कम्माणं। णवरि अवत्तव्वसंकामयाणमुक्कस्सेण वासपुधत्तं। पुरिसवेदस्स अवट्ठिदसंकामयंतरं जहण्णेण एयसमओ। उक्कस्सेण असंखेज्जा लोगा।

[3]अप्पाबहुअं। सव्वत्थोवा मिच्छत्तस्स अवट्ठिदसंकामया अवत्तव्वसंकामया असंखेज्जगुणा। भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा। [4]अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा। सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। भुजगारसंकामया असंखेज्जगुणा। अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा। सोलसकसाय-भय-दुगुंछाणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। अवट्ठिदसंकामया अणंतगुणा। [5]अप्पयरसंकामया असंखेज्जगुणा। भुजगारसंकामया संखेज्जगुणा। इत्थिवेद-हस्स-रदीणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। भुजगारसंकामया अणंतगुणा। अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा। [6]पुरिसवेदस्स सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। अवट्ठिदसंकामया असंखेज्जगुणा। भुजगारसंकामया अणंतगुणा। अप्पयरसंकामया संखेज्जगुणा। णवुंसयवेद-अरइ-सोगाणं सव्वत्थोवा अवत्तव्वसंकामया। अप्पयरसंकामया अणंतगुणा। भुजगारसंकामया संखेज्जगुणा।

[7]एत्तो पदणिक्खेवो। तत्थ इमाणि तिण्णि अणियोगद्दाराणि। परूवणा सामित्तमप्पाबहुगं च। [8]परूवणा। सव्वासिं पयडीणमुक्कस्सिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च अत्थि। एवं जहण्णयस्स वि णेदव्वं। णवरि सम्मत्त-सम्मामिच्छत्त-इत्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमवट्ठाणं णत्थि।

[9]सामित्तं। मिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स मिच्छत्तक्खवयस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कस्सिया हाणी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सम्मत्तमुप्पाएदूण गुणसंकमेण संकामिदूण [10]पढमसमयविज्झादसंकामयस्स। उक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स? गुणिदकम्मंसिओ पुव्वुप्पण्णेण सम्मत्तेण मिच्छत्तादो सम्मत्तं गदो, तं दुसमयसम्माइट्ठिमादिं कादूण जाव आवलियसम्माइट्ठि त्ति एत्थ अण्णदरम्हि समये तप्पाओग्गउक्कस्सेण वड्ढिं कादूण से काले तत्तियं संकममाणयस्स तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं। [11]सम्मत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? उव्वेल्लमाणयस्स चरिमसमए। [12]उक्कस्सिया हाणी कस्स?

(१) पृ० ३६६। (२) पृ० ३७०। (३) पृ० ३७३। (४) पृ० ३७४। (५) पृ० ३७५। (६) पृ० ३७६। (७) पृ० ३७९। (८) पृ० ३८०। (९) पृ० ३८१। (१०) पृ० ३८२। (११) पृ० ३८३। (१२) पृ० ३८४।

गुणिदकम्मंसियो सम्मत्तमुप्पाएदूण लहुं मिच्छत्तं गओ तस्स मिच्छाइट्ठिस्स पढमसमए अवत्तव्वसंकमो। विदियसमये उक्कस्सिया हाणी।

[1]सम्मामिच्छत्तस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कस्सिया हाणी कस्स? उप्पादिदे सम्मत्ते सम्मामिच्छत्तादो सम्मत्ते जं संकामेदि तं पदेसग्गमंगुलस्सासंखेज्जभागपडिभागं। तदो उक्कस्सिया हाणी ण होदि त्ति। [2]गुणिद-कम्मंसिओ सम्मत्तमुप्पाएदूण लहुं चेव मिच्छत्तं गदो, जहण्णियाए मिच्छत्तद्धाए पुण्णाए सम्मत्तं पडिवण्णो तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स उक्कस्सिया हाणी।

[3]अणंताणुबंधीणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कस्सिया हाणी कस्स? [4]गुणिदकम्मंसिओ तप्पाओग्गउक्कस्सियादो अधापवत्तसंकमादो सम्मत्तं पडिवज्जिऊण विज्झादसंकामगो जादो तस्स पढमसमयसम्माइट्ठिस्स उक्कस्सिया हाणी। उक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स? जो अधापवत्तसंकमेण तप्पाओग्गुक्कस्सएण वड्ढिदूण अवट्ठिदो तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं।

[5]अट्ठकसायाणमुक्कसिया वड्ढी कस्स? गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कस्सिया हाणी कस्स? गुणिदकम्मंसियो पढमदाए कसायउवसामणद्धाए जाधे दुविहस्स कोहस्स चरिमसमयसंकामगो जादो, तदो से काले मदो देवो जादो तस्स पढमसमय-देवस्स उक्कस्सिया हाणी। [6]एवं दुविहमाण-दुविहमाया-दुविहलोहाणं। [7]णवरि अप्पप्पणो चरिमसमयसंकामगो होदूण से काले मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्कस्सिया हाणी।

अट्ठण्हं कसायाणमुक्कस्सयमवट्ठाणं कस्स? अधापवत्तसंकमेण तप्पाओग्गउक्कस्सएण वड्ढिदूण से काले अवट्ठिदसंकामगो जादो तस्स उक्कस्सयमवट्ठाणं। कोहसंजलणस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स? जस्स उक्कस्सओ सव्वसंकमो तस्स उक्कस्सिया वड्ढी। [8]तस्सेव से काले उक्कस्सिया हाणी। णवरि से काले संकमपाओग्गा समयपबद्धा जहण्णा कायव्वा। तं जहा। [9]जेसिं से काले आवलियमेत्ताणं समयपबद्धाणं पदेसग्गं संकामिज्जहिदि ते समयपबद्धा तप्पाओग्गजहण्णा। एदीए परूवणाए सव्वसंकमं संछुहिदूण जस्स से काले पुव्वपरूविदो संकमो तस्स उक्कस्सिया हाणी कोहसंजलणस्स। तस्सेव से काले उक्कस्सय-मवट्ठाणं। जहा कोहसंजलणस्स तहा माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं।

---

(१) पृ० ३८५। (२) पृ० ३८६। (३) पृ० ३८७। (४) पृ० ३८८। (५) पृ० ३८९। (६) पृ० ३९०। (७) पृ० ३९१ (८) पृ० ३९२। (९) पृ० ३९३।

[1]लोहसंजलणस्स उक्कस्सिया वड्ढी कस्स ? गुणिदकम्मंसिएण लहुं चत्तारि वारे कसाया उवसामिदा, अपच्छिमे भवे दो वारे कसाए उवसामेऊण खवणाए अब्भुट्ठिदो जाधे चरिमसमए अंतरमकदं ताधे उक्कस्सिया वड्ढी। उक्कस्सिया हाणी कस्स ? [2]गुणिदकम्मंसियो तिण्णि वारे कसाए उवसामेऊण चउत्थीए उवसामणाए उवसामेमाणो अंतरे चरिमसमयअकदे से काले मदो देवो जादो तस्स समयाहियावलियउववण्णयस्स उक्कस्सियो हाणी। उक्कस्सयमवट्ठाणमपच्चक्खाणावरणभंगो। भय-दुगुंछाणमुक्कस्सिया वड्ढी कस्स ? [3]गुणिदकम्मंसियस्स सव्वसंकामयस्स। उक्कसिया हाणी कस्स। गुणिदकम्मंसिओ पढमदाए कसाए उवसामेमाणो भय-दुगुंछासु चरिमसमयअणुवसंतासु से काले मदो देवो जादो तस्स पढमसमयदेवस्स उक्कस्सिया हाणी। उक्कस्सयमवट्ठाणमपच्चक्खाणभंगो। [4]एवमित्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं। णवरि अवट्ठाणं णत्थि।

मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी कस्स ? जस्स कम्मस्स अवट्ठिदसंकमो अत्थि तस्स असंखेज्जा लोगपडिभागो वड्ढी वा हाणी वा अवट्ठाणं वा होइ। [5]जस्स कम्मस्स अवट्ठिदसंकमो णत्थि तस्स वड्ढी वा हाणी वा असंखेज्जा लोगभागो ण लब्भइ। एसा परूवणा अट्ठपदभूदा जहण्णियाए वड्ढीए वा हाणीए वा अवट्ठाणस्स वा। [6]एदाए परूवणाए मिच्छत्तस्स जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं वा कस्स ? जम्हि तप्पाओग्गजहण्णगेण संकमेण से काले अवट्ठिदसंकमो संभवदि तम्हि जहण्णिया वड्ढी वा हाणी वा से काले जहण्णयमवट्ठाणं।

[7]सम्मत्तस्स जहण्णिया हाणी कस्स ? जो सम्माइट्ठी तप्पाओग्गजहण्णएण कम्मेण सागरोवमवेछावट्ठीओ गालिदूण मिच्छत्तं गदो, सव्वमहंतउव्वेलणकालेण उव्वेल्लेमाणगस्स तस्स दुचरिमट्ठिदिखंडयस्स चरिमसमए जहण्णिया हाणी। [8]तस्सेव से काले जहण्णिया वड्ढी। एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि। [9]अणंताणुबंधीणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ? जहण्णगेण एइंदियकम्मेण विसंजोएदूण संजोइदो, तदो ताव गालिदा जाव तेसिं गलिदसेसाणमधापवत्तणिज्जरा जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी जादा त्ति। केवचिरं पुण कालं गालिदस्स अणंताणुबंधीणमधापवत्तणिज्जरा जहण्णएण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी भवदि ? तदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागकालं गालिदस्स जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी णिज्जरा भवदि। जहण्णेण एइंदियसमयपबद्धेण सरिसी णिज्जरा आवलियाए समयुत्तराए एत्तिएण कालेण होहिदि त्ति तदो मदो एइंदियो जहण्णजोगी जादो तस्स समयाहियावलियउववण्णस्स अणंताणुबंधीणं जहण्णिया वड्ढी वा हाणी वा अवट्ठाणं वा।

(१) पृ० ३९४। (२) पृ० ३९५। (३) पृ० ३९६। (४) पृ० ३९७। (५) पृ० ३९८। (६) पृ० ३९९। (७) पृ० ४०३। (८) पृ० ४०४। (९) पृ० ४०५।

[1]अट्ठण्हं कसायाणं भय-दुगुंछाणं च जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णेण संजमासंजमं संजमं च बहुसो गदो, तेणेव चत्तारि वारे कसाय-मुवसामिदा। तदो एइंदिए गदो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागं कालमच्छिऊण उवसामयसमयपबद्धेसु गलिदेसु जाधे [2]बंधेण णिज्जरा सरिसी भवदि ताधे एदेसिं कम्माणं जहण्णिया वड्ढी च हाणी च अवट्ठाणं च। [3]चदुसंजलणाणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ? कसाए अणुवसामेऊण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण एइंदिए गदो। जाधे बंधेण णिज्जरा तुल्ला ताधे चदुसंजलणस्स जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च।

[4]पुरिसवेदस्स जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च कस्स ? जम्हि अवट्ठाणं तम्हि तप्पाओग्गजहण्णएण कम्मेण जहण्णिया वड्ढी वा हाणी वा अवट्ठाणं वा। [5]हस्स-रदीणं जहण्णिया वड्ढी कस्स ? एइंदियकम्मेण जहण्णएण संजमासंजमं संजमं च बहुसो लद्धूण चत्तारि वारे कसाए उवसामेऊण एइंदिए गदो, तदो पलिदोवमस्सासंखेज्जदिभागं काल-मच्छिऊण सण्णी जादो। सव्वमहंतिमरदिसोगबंधगद्धं कादूण हस्स-रईओ पबद्धाओ, पढमसमयहस्स-रइबंधगस्स तप्पाओग्गजहण्णओ बंधो च आगमो च तस्स आवलिय-हस्स-रइ-बंधयमाणयस्स जहण्णिया हाणी। [6]तस्सेव से काले जहण्णिया वड्ढी। [7]अरदि-सोगाणमेवं चेव। णवरि पुव्वं हस्स-रईओ बंधावेयव्वाओ। [8]तदो आवलिय-अरदि-सोगबंधगस्स जहण्णिया हाणी। से काले जहण्णिया वड्ढी। एवमित्थिवेद-णवुंसयवेदाणं। णवरि जइ इत्थिवेदस्स इच्छिसि, पुव्वं णवुंसयवेद-पुरिसवेदे बंधावेदूण पच्छा इत्थिवेदो बंधावेयव्वो। तदो आवलियइत्थिवेदबंधमाणयस्स इत्थिवेदस्स जहण्णिया हाणी। से काले जहण्णिया वड्ढी। [9]जदि णवुंसयवेदस्स इच्छसि पुव्वमित्थि-पुरिसवेदे बंधावेदूण पच्छा णवुंसयवेदो बंधावेयव्वो। तदो आवलियणवुंसयवेदबंधमाणयस्स णवुंसयवेदस्स जहण्णिया हाणी। से काले जहण्णिया वड्ढी।

[10]अप्पाबहुअं। उक्कस्सयं ताव। मिच्छत्तस्स सव्वत्थोवमुक्कस्सयमवट्ठाणं। [11]हाणी असंखेज्जगुणा। वड्ढी असंखेज्जगुणा। एवं बारसकसाय-भय-दुगुंछाणं। [12]सम्मत्तस्स सव्वत्थोवा उक्कस्सिया वड्ढी। हाणी असंखेज्जगुणा। [13]सम्मामिच्छत्तस्स सव्वत्थोवा उक्कस्सिया हाणी। [14]उक्कस्सिया वड्ढी असंखेज्जगुणा। एवमित्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-

---

(१) पृ० ४०८। (२) पृ० ४०६। (३) पृ० ४१०। (४) पृ० ४११। (५) पृ० ४१२। (६) पृ० ४१४। (७) पृ० ४१५। (८) पृ० ४१६। (६) पृ० ४१७। (१०) पृ० ४१८। (११) पृ० ४२०। (१२) पृ० ४२२। (१३) पृ० ४२३। (१४) पृ० ४२४।

अरइ-सोगाणं । कोहसंजलणस्स सव्वत्थोवा उक्कस्सिया वड्ढी । हाणी अवट्ठाणं च विसेसाहियं । [1]एवं माण-मायासंजलण-पुरिसवेदाणं । लोहसंजलणस्स सव्वत्थोवमुक्कस्समवट्ठाणं । हाणी विसेसाहिया । [2]वड्ढी विसेसाहिया ।

[3]एत्तो जहण्णयं । मिच्छत्तस्स सोलसकसाय-पुरिसवेद-भय-दुगुंछाणं जहण्णिया वड्ढी हाणी अवट्ठाणं च तुल्लाणि । [4]सम्मत्त-सम्मामिच्छत्ताणं सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी । वड्ढी असंखेज्जगुणा । इत्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणं सव्वत्थोवा जहण्णिया हाणी । वड्ढी विसेसाहिया ।

[5]वड्ढीए तिण्णि अणिओगद्दाराणि समुक्कित्तणा सामित्तमप्पाबहुअं च । समुक्कित्तणा । मिच्छत्तस्स अत्थि असंखेज्जभागवड्ढि-हाणी असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी अवट्ठाणमवत्तव्वयं च । [6]एवं बारसकसाय-भय-दुगुंछाणं । [7]एवं सम्मामिच्छत्तस्स वि । णवरि अवट्ठाणं णत्थि । [8]सम्मत्तस्स असंखेज्जभागहाणी असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणी अवत्तव्वयं च अत्थि । तिसंजलण-पुरिसवेदाणमत्थि चत्तारि वड्ढी चत्तारि हाणीओ अवट्ठाणमवत्तव्वयं च । [9]लोहसंजलणस्स अत्थि असंखेज्जभागवड्ढी हाणी अवट्ठाणमवत्तव्वयं च । [10]इत्थि-णवुंसयवेद-हस्स-रइ-अरइ-सोगाणमत्थि दो वड्ढी हाणीओ अवत्तव्वयं च ।

सामित्ते अप्पाबहुए च विहासिदे वड्ढी समत्ता भवदि ।

[11]एत्तो ट्ठाणाणि । पदेससंकमट्ठाणं परूवणा अप्पाबहुअं च । [12]परूवणा जहा । मिच्छत्तस्स अभवसिद्धियपाओग्गेण जहण्णएण कम्मेण जहण्णयं संकमट्ठाणं । [13]अण्णं तम्हि चेव कम्मे असंखेज्जलोगभागुत्तरं संकमट्ठाणं होइ । [14]एवं जहण्णए कम्मे असंखेज्जा लोगा संकमट्ठाणाणि । तदो पदेसुत्तरे दुपदेसुत्तरे वा एवमणंतभागुत्तरे वा जहण्णए संतकम्मे ताणि चेव संकमट्ठाणाणि । [15]असंखेज्जलोगभागे पक्खित्ते विदियसंकमट्ठाणपरिवाडी होइ । [16]जो जहण्णगो पक्खेवो जहण्णए कम्मसरीरे तदो जो च जहण्णगे कम्मे विदियसंकमट्ठाणविसेसो सो असंखेज्जगुणो । [17]एत्थ वि असंखेज्जा लोगा संकमट्ठाणाणि । एवं सव्वासु परिवाडीसु । [18]णवरि सव्वसंकमे अणंताणि संकमट्ठाणाणि । [19]एवं सव्वकम्माणं । णवरि लोहसंजलणस्स सव्वसंकमो णत्थि ।

---

(१) पृ० ४२५ । (२) पृ० ४२७ । (३) पृ० ४२८ । (४) पृ० ४२९ (५) पृ० ४३० । (६) पृ० ४३१ । (७) पृ० ४३३ । (८) पृ० ४३५ । (९) पृ० ४३६ । (१०) पृ० ४३७ । (११) पृ० ४३८ । (१२) पृ० ४३९ । (१३) पृ० ४४० । (१४) पृ० ४४२ । (१५) पृ० ४४३ । (१६) पृ० ४४४ । (१७) पृ० ४४६ । (१८) पृ० ४७५ । (१९) पृ० ४७७ ।

[1]अप्पाबहुअं। [2]सव्वत्थोवाणि लोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि। सम्मत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि। अपच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। [3]कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [4]मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। पच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [5]मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। अणंताणुबंधिमाणस्स पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। लोभे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

मिच्छत्तस्स पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। सम्मामिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। हस्से पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि। [6]रदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। इत्थिवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि। सोगे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। अरदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। णवुंसयवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। दुगुंछाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। भए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [7]पुरिसवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। कोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि। माणसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। मायासंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

णिरयगईए सव्वत्थोवाणि अपच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि। कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [8]लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। पच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

मिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। [9]हस्से पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि। [10]रदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। इत्थिवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि। सोगे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। [11]अरदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। णवुंसयवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। दुगुंछाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। भए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि। पुरिसवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि।

---

(१) पृ० ४८१। (२) पृ० ४८२। (३) पृ० ४८३। (४) पृ० ४८४। (५) पृ० ४८५। (६) पृ० ४८६। (७) पृ० ४८७। (८) पृ० ४८८ (९) पृ० ४९५। (१०) पृ० ४९६। (११) पृ० ४४७।

माणसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । कोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । मायासंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । लोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । सम्मत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि । सम्मामिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । [१]अणंताणुबंधिमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

एवं तिरिक्खगइ-देवगईसु वि । [२]मणुसगई ओघमंगो । [३]एइंदिएसु सव्वत्थोवाणि अपच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि । कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । पच्चक्खाणमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । अणंताणुबंधिमाणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । मायाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । लोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि ।

हस्से पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । [४]रदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । इत्थिवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि संखेज्जगुणाणि । सोगे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । अरदीए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । णवुंसयवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । दुगुंछाए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । भए पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । पुरिसवेदे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । माणसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । कोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । मायासंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । लोहसंजलणे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । सम्मत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि अणंतगुणाणि । सम्मामिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।

[५]केण कारणेण णिरयगईए पच्चक्खाणकसायलोभपदेससंकमट्ठाणेहिंतो मिच्छत्ते पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । मिच्छत्तस्स गुणसंकमो अत्थि । पच्चक्खाणकसायलोहस्स गुणसंकमो णत्थि । एदेण कारणेण णिरयगईए पच्चक्खाणकसायलोहपदेससंकमट्ठाणेहिंतो मिच्छत्तस्स पदेससंकमट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि ।

[६]जस्स कम्मस्स सव्वसंकमो णत्थि तस्स कम्मस्स असंखेज्जाणि पदेससंकमट्ठाणाणि । जस्स कम्मस्स सव्वसंकमो अत्थि तस्स कम्मस्स अणंताणि पदेससंकमट्ठाणाणि ।

(१) पृ० ४९८ । (२) पृ० ४९९ । (३) पृ० ५०० । (४) पृ० ५०१ । (५) पृ० ५०२ (६) ५०३ ।

[1]माणस्स जहण्णए संतकम्मट्ठाणे असंखेज्जा लोगा पदेससंकमट्ठाणाणि । तम्मि चेव जहण्णए माणसंतकम्मे विदियसंकमट्ठाणविसेसस्स असंखेज्जलोगभागमेत्ते पक्खित्ते माणस्स विदियसंकमट्ठाणपरिवाडी । [2]तत्तियमेत्ते चेव पदेसग्गे कोहस्स जहण्णसंतकम्मट्ठाणे पक्खित्ते कोहस्स विदियसंकमट्ठाणपरिवाडी । [3]एदेण कारणेण माणपदेससंकमट्ठाणाणि थोवाणि । कोहे पदेससंकमट्ठाणाणि विसेसाहियाणि । [4]एवं सेसेसु कम्मेसु वि णेदव्वाणि ।

एवं गुणहीणं वा गुणविसिट्ठमिदि अत्थविहासाए समत्ताए पंचमीए मूलगाहाए अत्थपरूवणा समत्ता । तदो पदेससंकमो समत्तो ।

(१) पृ० ५०४ । (२) पृ० ५०५ । (३) पृ० ५०६ । (४) पृ० ५०७ ।

२. कषायप्राभृतगाथानुक्रमणिका

पुस्तक ८

३. अवतरणसूची

पुस्तक ८

४. ऐतिहासिकनामसूची

पुस्तक ८

पुस्तक ९

४. ग्रन्थनामोल्लेख

पुस्तक ८

पुस्तक ९

५ गाथा-चूर्णिसूत्रगतशब्दसूची

पुस्तक ८

पुस्तक ९

६ जयधवलागतविशेषशब्दसूची

पुस्तक ८

पुस्तक ६

———